भा० दि० जैनसंघ-ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमालाका उद्देश्य

प्राकृत संस्कृत आदि भाषा में निबद्ध दि० जैनागम,
दर्शन, साहित्य, पुराण आदिको यथासम्भव
हिन्दी अनुवाद सहित प्रकाशित करना



सञ्चालक

भा० दि० जैनसंघ

ग्रन्थाङ्क १-६

प्राप्तिस्थान
मैनेजर
भा० दि० जैन संघ
चौरासी, मथुरा

मुद्रक—कैलाश प्रेस, बी० ७/९२ हाड़ाबाग (सोनारपुरा) वाराणसी।

स्थापनाब्द] प्रति ८०० [वी० नि० सं० २४६८

Sri Dig. Jain Sangha Granthamala No 1-VI

KASAYA-PAHUDAM
VI
PRADESHAVIBHAKTI

BY

GUNADHARACHARYA

WITH

CHURNI SUTRA OF YATIVRASHABHACHARYA

AND

THE JAYADHAVALA COMMENTARY OF
VIRASENACHARYA THERE-UPON

EDITED BY

Pandit Phulachandra Siddhantashastri
EDITOR MAHABANDHA
JOINT EDITOR DHAVALA,

Pandit Kailashachandra Siddhantashastri,
Nyayatirtha, Siddhantaratna,
Pradhanadhyapak, Syadvada Digambara Jain
Vidyalaya, Varanasi.

PUBLISAED BY
THE SECRETARY PUBLICATION DEPARTMENT.
THE ALL-INDIA DIGAMBAR JAIN SANGHA
CHAURASI, MATHURA.

VIRA-SAMVAT 2484) VIKRAMA S. 2015 (1958 A. C.

Sri Dig. Jain Sangha GranthaMala

Foundation year—] [—Vira Niravan Samvat 2468

Aim of the Series :—

Publication of Digambara Jain Siddhanta, Darsana, Purana, Sahitya and other works in Prakrit, Sanskrit etc. possibly with Hindi Commentary and Translation

DIRECTOR :—

SRI BHARATAVARSIYA DIGAMBARA JAIN SANGHA

NO. 1. VOL. VI.

To be had from :—

THE MANAGER
SRI DIG. JAIN SANGHA,
CHAURASI. MATHURA,
U. P. (INDIA)

Printed by
KANHAIYALAL GUPTA
At The Kailash Press, Sonarpura Varanasi.

800 Copies, Price Rs. Twelve only

प्रकाशक की ओर से

कसायपाहुडके छठे भाग प्रदेशविभक्तिको पाठकोंके हाथोंमें देते हुए हमें हर्ष होता है। इस भागमें प्रदेशविभक्तिका स्वामित्व अनुयोगद्वारपर्यन्त भाग है। शेष भाग, स्थितिक तथा झीणाझीण अधिकार सातवें भागमें मुद्रित होगा। इस तरह प्रदेशविभक्ति अधिकार दो भागों में समाप्त होगा। सातवां भाग भी छप रहा है और उसके भी शीघ्र ही छपकर तैयार हो जाने की पूर्ण आशा है।

इस प्रगतिका श्रेय मूलतः दो महानुभावोंको है। कसायपाहुडके सम्पादन प्रकाशन आदिका पूरा व्ययभार डोंगरगढ़के दानवीर सेठ भागचन्द्रजीने उठाया हुआ है। पिछली बार संघके कुण्डलपुर अधिवेशनके अवसर पर आपने इस सत्कार्यके लिये ग्यारह हजार रुपये प्रदान किये थे और इस वर्ष बामोरा अधिवेशनके अवसर पर पाँच हजार रुपये पुनः प्रदान किये हैं। आपकी दानशीला धर्मपत्नी श्रीमती नर्वदाबाई जी भी सेठ साहबकी तरह ही उदार हैं और इस तरह इस दम्पतीकी उदारताके कारण इस महान् ग्रन्थराजके प्रकाशनका कार्य निर्बाध गतिसे चल रहा है।

सम्पादन और मुद्रणका एक तरहसे पूरा दायित्व पं० फूलचन्द्रजी सिद्धान्तशास्त्रीने वहन किया हुआ है। इस तरह उक्त दोनों महानुभावोंके कारण कसायपाहुडका प्रकाशन कार्य प्रशस्त रूपमें चालू है। इसके लिये मैं सेठ साहब, उनकी धर्मपत्नी तथा पण्डितजीका हृदयसे आभारी हूँ।

काशीमें गङ्गा तट पर स्थित स्व० बाबू छेदीलाल जी के जिन मन्दिरके नीचेके भागमें जयधवला कार्यालय अपने जन्म कालसे ही स्थित है और यह सब स्व० बाबू छेदीलालजीके पुत्र स्व० बाबू गणेशदास जी तथा पौत्र बा० सालिगरामजी और बा० ऋषभदासजीके सौजन्य तथा धर्मप्रेमका परिचायक है। अतः मैं उनका भी आभारी हूँ।

ऐसे महान् ग्रन्थराजका प्रकाशन पुनः होना संभव नहीं है। अतः जिनवाणीके भक्तोंका यह कर्त्तव्य है कि इसकी एक एक प्रति खरीद कर जिनमन्दिरोंके शास्त्र भण्डारोंमें विराजमान करें। जिनबिम्ब और जिनवाणी दोनोंके विराजमान करनेमें समान पुण्य होता है। अतः जिनबिम्बकी तरह जिनवाणीको भी विराजमान करना चाहिये।

जयधवला कार्यालय
भदैनी, काशी
वीरजयन्ती—२४८४

कैलाशचन्द्र शास्त्री
मंत्री साहित्य विभाग
भा० दि० जैन संघ

विषय-सूची

कसायपाहुडस्स

प दे स वि ह त्ती

पंचमो अत्थाहियारो



सिरि-जइवसहाइरियविरइय-चुण्णिसुत्तसमण्णिदं

सिरि-भगवंतगुणहरभडारओवइट्ठं

क सा य पा हु डं

तस्स

सिरि-वीरसेणाइरियविरइया टीका

जयधवला

तत्थ

पदेसविहत्ती णाम पंचमो अत्थाहियारो

णमियूण अणंतजिणं अणंतणाणेण दिट्ठसव्वट्ठं।
कम्मपदेसविहत्तिं वोच्छामि जहागमं पयदो ॥ १ ॥

अनन्त ज्ञानके द्वारा जिन्होंने सब पदार्थोंको जान लिया है उन अनन्तनाथ जिनको नमस्कार करके कर्मप्रदेशविभक्तिको आगमके अनुसार सावधान होकर करता हूँ ॥ १ ॥

§ १. 'पयडीए मोहणिज्जा०' एदिस्से विदियमूलगाहाए पुरिमद्धम्मि[1] णिलीण-पयडि-ट्ठिदि-अणुभागविहत्तीओ परूविय संपहि तिस्से चेव गाहाए पच्छिमद्धम्मि[2] अवट्ठिदउक्कस्समणुक्कस्सं ति पदेण सूचिदपदेसविहत्तिं भणिस्सामो। एदेण पदेण पदेसविहत्ती कथं सूचिदा ? उच्चदे—उक्कस्सं ति पदेण उक्कस्सपदेसविहत्ती परूविदा। अणुक्कस्सं ति पदेण वि अणुक्कस्सविहत्ती जाणाविदा। जेणेदाणि वि दो वि पदाणि देसामासियाणि तेण एत्थ मूलुत्तरपयडिपदेसविहत्तिगब्भा पदेसविहत्ती णिलीणा त्ति दट्ठव्वं। तत्थ–

❀ पदेसविहत्ती दुविहा–मूलपयडिपदेसविहत्ती च उत्तर[3]पयडिपदेसविहत्ती च।

§ २. एवं पदेसविहत्ती दुविहा चेव होदि, तदियादिपदेसविहत्तीणमसंभवादो। एत्थतण 'च' सद्दो उत्तसमुच्चयट्ठो त्ति दट्ठव्वो। ण विदिओ 'च' सद्दो अणत्थओ, दुविहणयाणुग्गहट्ठमवट्ठिदाणं दोण्हं 'च' सद्दाणमेयत्थत्ताभावादो[4]।

❀ तत्थ मूलपयडिपदेसविहत्तीए गदाए।

---

§ १. 'पयडीए मोहणिज्जा०' इस दूसरी मूल गाथाके पूर्वार्धमें समाविष्ट प्रकृतिविभक्ति, स्थितिविभक्ति और अनुभागविभक्तिका कथन करके अब उसी गाथाके उत्तरार्धमें आये हुए 'उक्कस्समणुक्कस्सं' पदके द्वारा सूचित होनेवाली प्रदेशविभक्तिको कहेंगे।

शंका—'उक्कस्समणुक्कस्सं' इस पदसे प्रदेशविभक्ति कैसे सूचित हुई ?

समाधान—'उक्कस्सं' इस पदके द्वारा उत्कृष्ट प्रदेशबिभक्ति कही गई है और 'अणुक्कस्सं' इस पदके द्वारा अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति कही गई है। यतः ये दोनों पद देशामर्षक हैं अतः यहाँ मूलप्रकृतिप्रदेशविभक्ति और उत्तरप्रकृतिप्रदेशविभक्तिरूप प्रदेशविभक्ति गर्भित है, ऐसा जानना चाहिये। वहाँ—

❀ प्रदेशविभक्ति दो प्रकारकी है—मूलप्रकृतिप्रदेशविभक्ति और उत्तरप्रकृतिप्रदेशविभक्ति।

§ २. इस प्रकार प्रदेशविभक्ति दो प्रकारकी ही होती है, क्योंकि तीसरी आदि प्रदेशविभक्तियाँ संभव नहीं हैं। यहाँ पर जो 'च' शब्द आया है वह उक्त अर्थका समुच्चय करनेके लिये है ऐसा समझना चाहिये। यदि कहा जाय कि उक्तका समुच्चय एक ही 'च' शब्दसे हो जाता है अतः चूर्णिसूत्रमें आया हुआ दूसरा 'च' शब्द व्यर्थ है सो भी कहना ठीक नहीं है, क्योंकि दो 'च' शब्द द्रव्यार्थिक और पर्यायार्थिक नयकी अनुकूलता बतलानेके लिये दिये गये हैं, अतः वे दोनों एकार्थक नहीं हैं।

❀ उनमेंसे मूलप्रकृतिप्रदेशविभक्तिके समाप्त होने पर।

---

१. आ०प्रतौ 'पुरिमत्थम्मि' इति पाठः। २. आ०प्रतौ 'पच्छिमत्थम्मि' इति पाठः। ३. आ०प्रतौ '–पदेसविहत्ती उत्तर–' इति पाठः। ४. ता०प्रतौ 'चसद्दाणमेयत्तत्थाभावादो' इति पाठः।

§ ३. मूलपयडिपदेसविहत्तीए परूविदाए पच्छा उत्तरपयडिपदेसविहत्ती परूविदव्वा त्ति एदेण वयणेण जाणाविदं। तेणेदं देसामासियं सुत्तं। एदस्स विवरणट्ठं परूविदउच्चारणमेत्थ भणिस्सामो—

§ ४. पदेसविहत्ती दुविहा—मूलपयडिपदेसविहत्ती उत्तरपयडिपदेसविहत्ती चेव। मूलपयडिपदेसविहत्तीए तत्थ इमाणि बावीस अणिओगद्दाराणि णादव्वाणि भवंति। तं जहा—भागाभागं १ सव्वपदेसविहत्ती २ णोसव्वपदेसविहत्ती ३ उक्कस्सपदेसविहत्ती ४ अणुक्कस्सपदेसविहत्ती ५ जहण्णपदेसविहत्ती ६ अजहण्णपदेसविहत्ती ७ सादियपदेसविहत्ती ८ अणादियपदेसविहत्ती ९ धुवपदेसविहत्ती १० अद्धुवपदेसविहत्ती ११ एगजीवेण सामित्तं १२ कालो १३ अंतरं १४ णाणाजीवेहि भंगविचओ १५ परिमाणं १६ खेत्तं १७ पोसणं १८ कालो १९ अंतरं २० भावो २१ अप्पाबहुअं २२ चेदि। पुणो भुजगार-पदणिक्खेव-वड्ढि-ट्ठाणाणि त्ति।

§ ५. संपहि भागाभागं दुविहं—जीवभागाभागं पदेसभागाभागं चेदि। तत्थ जीवभागाभागं दुविहं–जहण्णमुक्कस्सं०। उक्कस्से पयदं। दुविहो णिद्देसो–ओघेण आदेसेण य। ओघेण मोह० उक्कस्सपदेसविहत्तिया[1] जीवा सव्वजीवाणं केवडिओ भागो? अणंतिमभागो। अणुक्कस्सपदेस० जीवा सव्वजी० अणंता भागा[2]। एवं तिरिक्खोघं।

---

§ ३. मूलप्रकृतिप्रदेशविभक्तिका कथन करके पीछे उत्तरप्रकृतिप्रदेशविभक्ति कहनी चाहिये यह इस चूर्णिसूत्रके द्वारा जताया गया है। अतः यह सूत्र देशामर्षक है, इसलिए इसका व्याख्यान करनेके लिये कही गई उच्चारणावृत्तिको यहाँ कहते हैं—

§ ४. प्रदेशविभक्ति दो प्रकारकी है—मूलप्रकृतिप्रदेशविभक्ति और उत्तरप्रकृतिप्रदेशविभक्ति। उनमेंसे मूलप्रकृतिप्रदेशविभक्तिमें ये बाईस अनुयोगद्वार जानने योग्य हैं। वे इस प्रकार हैं—भागाभाग १, सर्वप्रदेशविभक्ति २, नोसर्वप्रदेशविभक्ति ३, उत्कृष्टप्रदेशविभक्ति ३, अनुत्कृष्टप्रदेशविभक्ति ५, जघन्यप्रदेशविभक्ति ६, अजघन्यप्रदेशविभक्ति ७, सादिप्रदेशविभक्ति ८, अनादिप्रदेशविभक्ति ९, ध्रुवप्रदेशविभक्ति १०, अध्रुवप्रदेशविभक्ति ११, एक जीवकी अपेक्षा स्वामित्व १२, काल १३, अन्तर १४, नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचय १५, परिमाण १६, क्षेत्र १७, स्पर्शन १८, काल १९, अन्तर २०, भाव २१ और अल्पबहुत्व २२। इनके सिवा भुजगार, पदनिक्षेप, वृद्धि और स्थान ये अनुयोगद्वार और भी हैं।

§ ५. अब भागाभागको कहते हैं। वह दो प्रकारका है—जीवभागाभाग और प्रदेशभागाभाग। उनमेंसे जीवभागाभाग दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं? अनन्तवें भागप्रमाण हैं। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके अनन्त बहुभागप्रमाण हैं। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए।

---

१. आ०प्रतौ 'मोह० उक्कस्सिये पदेविहत्तिया' इति पाठः। २. आ०प्रतौ 'अणंता भागं' इति पाठः।

§ ६. आदेसेण णिरय० णेरइएसु मोह० उक्क० पदेस० सव्वजी० केव० ? असंखे०भागो। अणुक्क० असंखेज्जा भागा। एवं सव्वणेरइय-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-मणुस्स-मणुसअपज्ज०-देव-भवणादि जाव अवराइदो त्ति। मणुसपज्ज०-मणुसिणी०-सव्वट्ठसिद्धि० उक्क० पदेसवि० सव्व० केवडि० ? संखे०भागो। अणुक्कस्स० संखेज्जा भागा। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

§ ७. जहण्णए पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदे०। ओघेण मोह० जहण्णाजहण्ण० उक्कस्साणुक्कस्स०भंगो। एवं सव्वमग्गणासु णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

§ ८. पदेसभागाभागाणुगमेण दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मोह० भागाभागो णत्थि, मूलपयडिअप्पणाए पदभेदाभावादो[1]। अथवा मोहणीय-सव्वपदेसा सेससंतकम्मपदेसेहिंतो किं सरिसा असरिसा त्ति संदेहेण विणडिय[2]-

§ ६. आदेशसे नरकगतिमें नारकियोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव सब नारकी जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं। इसी प्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, सामान्य मनुष्य, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव और भवनवासियोंसे लेकर अपराजित विमान तकके देवोंमें जानना चाहिए। मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? संख्यातवें भागप्रमाण हैं। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

§ ७. जघन्यसे प्रयोजन है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकर्मकी जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिवालोंका भागाभाग उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवालोंके भागाभाग की तरह होता है। इस प्रकार अनाहारीपर्यन्त सर्व मार्गणाओंमें ले जाना चाहिये।

विशेषार्थ—जिन जीवोंकी संख्या अनन्त है उनमें अनन्तैकभाग जीव उत्कृष्ट प्रदेश विभक्तिवाले होते हैं और अनन्त बहुभाग जीव अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले होते हैं। जिनकी संख्या असंख्यात है उनमें असंख्यातैकभाग जीव उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले और असंख्यात बहुभाग जीव अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले होते हैं। तथा जिनकी संख्या संख्यात है उनमें संख्यातैकभाग जीव उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले और संख्यातबहुभाग जीव अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले होते हैं। इसी प्रकार जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिवालोंका भागाभाग होता है, क्योंकि उत्कृष्ट प्रदेशसंचय और जघन्य प्रदेशसंचयकी सामग्री सुलभ नहीं है जैसा कि आगे स्वामित्वानुगमसे ज्ञात होगा।

§ ८. प्रदेशभागाभागानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयका भागाभाग नहीं है, क्योंकि मूलप्रकृतिविभक्तिकी अपेक्षा पदभेद नहीं है। अथवा मोहनीयकर्मके सब प्रदेश शेष सत्कर्मप्रदेशोंके समान होते हैं अथवा असमान होते हैं इस सन्देहसे व्याकुल शिष्यकी बुद्धिकी व्याकुलताको दूर करनेके

१. ता०प्रतौ 'पदेसभेदाभावादो' इति पाठः। २. ता०प्रतौ 'विगडिय' इति पाठः।

सिस्सस्स बुद्धिवाउलविणासणट्ठमिमा परूवणा एत्थ असंबद्धा वि कीरदे। तं जहा— जोगवसेण कम्मसरूवेण परिणदकम्मइयवग्गणक्खंधे पुंजिय पुणो आवलियाए असंखे०-भागेण भागं घेत्तूण लद्धं पुध ट्ठविय पुणो सेसदव्वं सरिसअट्ठभागे कादूण[1] एवं ठवेदव्वं—∘∘∘∘∘। पुणो आवलियाए असंखे०भागं विरलिय पुव्वमवणिदभागं समखंडं कादूण दिण्णे तत्थेगखंडं मोत्तूण बहुखंडेसु पढमपुंजे पक्खित्तेसु वेदणीयभागो होदि। पुणो सेसेगरूवधरिदमवट्ठिदविरलणाए समखंडं करिय दादूण तत्थेगरूवधरिदं मोत्तूण सेससव्व-रूवधरिदखंडेसु विदियपुंजे पक्खित्तेसु मोहणीयभागो होदि। पुणो सेसेगरूवधरिद-मवट्ठिदविरलणाए समखंडं-करिय दादूण तत्थेगभागं मोत्तूण सेसबहुभागेसु सरिस-तिण्णिभागे करिय मज्झिल्लतिसु पुंजेसु[2] पुध पुध पक्खित्तेसु णाणावरणीय-दंसणा-वरणीय-अंतराइयाणं भागा होंति। पुणो सेसेगरूवधरिदमवट्ठिदविरलणाए समखंडं करिय दादूण पुणो तत्थेगरूवधरिदं मोत्तूण सेससव्वरूवधरिदेसु सरिसवेभागे कादूण चउत्थपुंजे पक्खित्तेसु णामा-गोदभागा होंति। पुणो सेसेगरूवधरिदे पंचमपुंजे पक्खित्ते आउअभागो होदि। सव्वत्थोवो आउअभागो। णामा-गोदभागा दो वि सरिसा विसेसाहिया। णाण-दंसणावरण-अंतराइयाणं भागा तिण्णि वि सरिसा विसेसाहिया।

लिये असम्बद्ध होने पर भी यह कथन यहाँ किया जाता है। जो इस प्रकार है— योगके वशसे कर्मरूपसे परिणत हुए कार्मणवर्गणा स्कन्धको एकत्र करके उसमें आवलिके असंख्यातवें भागका भाग देकर जो लब्ध आवे उसे पृथक् स्थापित कर और शेष द्रव्यके समान आठ भाग करके इस प्रकार स्थापित करे—∘∘∘∘∘। फिर आवलिके असंख्यातवें भागका विरलन करके पहले अलग किये गये भागके समान खण्ड करके विरलित राशिपर देनेपर वहाँ एक खण्डको छोड़कर शेष सब खण्डोंको प्रथम पुंजमें मिलाने पर वेदनीयकर्मका भाग होता है। फिर एक विरलन अंकके प्रति प्राप्त शेष द्रव्यको अवस्थित विरलनके ऊपर समान खण्ड करके देनेपर वहाँ एक अंकके प्रति प्राप्त द्रव्यको छोड़कर शेष सब विरलित रूपोंपर दिये गये खण्डोंको दूसरे पुंजमें मिला देनेपर मोहनीयकर्मका भाग होता है। पुनः एक विरलन अंकके प्रति प्राप्त शेष द्रव्यको अवस्थित विरलनके ऊपर समान खण्ड करके देकर उनमेंसे एक भागको छोड़कर शेष बहुभागोंके समान तीन भाग करके मध्यके तीन पुंजोंमेंसे प्रत्येकमें एक एक भागके मिलाने पर ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय और अन्तरायकर्मके भाग होते हैं। पुनः एक विरलन अंकके प्रति प्राप्त शेष द्रव्यको अवस्थित विरलनके ऊपर समान खण्ड करके देकर उनमेंसे एक विरलित रूपपर दिये गये खण्डको छोड़कर शेष सब रूपोंपर दिये गये खण्डोंके दो समान भाग करके चौथे पुंजमें मिलानेपर नामकर्म और गोत्रकर्मके भाग होते हैं। पुनः शेष बचे एक खण्डको पञ्चम पुंजमें मिलानेपर आयुकर्मका भाग होता है। अतः आयुकर्मका भाग सबसे थोड़ा है। नामकर्म और गोत्रकर्मके दोनों भाग समान हैं, किन्तु आयुकर्मके भागसे विशेष अधिक हैं। ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तराय कर्मके तीनों भाग समान हैं, किन्तु नामकर्म और गोत्र-

---

१. ता०प्रतौ 'अट्ठभागं कादूण' इति पाठः। २. ता०प्रतौ 'तिपुंजेसु' इति पाठः।

मोहणीयभागो विसेसाहिओ। वेयणीयभागो विसेसाहिओ। जहा बंधमस्सिदूण अट्ठण्णं कम्माणं पदेसभागाभागपरूवणा कदा तहा संतमस्सिदूण वि कायव्वा, विसेसाभावादो। णवरि अट्ठण्हं कम्माणं सव्वदव्वस्स असंखे०भागो आउअदव्वं। णाणावरण-दंसणावरण-मोह-णाम-गोदंतरायाणं दव्वं पादेक्कं सव्वदव्वस्स सत्तमभागो देसूणो। वेयणीयस्स सत्तमभागो सादिरेयो। एवं चदुसु वि गदीसु बंध-संते[1] अस्सिदूण पदेसभागाभाग-परूवणा अट्ठण्हं पि कम्माणं कायव्वा। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

कर्मके भागसे विशेष अधिक हैं। मोहनीयकर्मका भाग उक्त कर्मोंके भागसे विशेष अधिक है और वेदनीयकर्मका भाग मोहनीयकर्मके भागसे विशेष अधिक है। जैसे बंधको लेकर आठों कर्मोंके प्रदेशोंके भागाभागका कथन किया है वैसे ही सत्ताकी अपेक्षासे भी करना चाहिये, दोनोंमें कोई अन्तर नहीं है। इतनी विशेषता है कि आठों कर्मोंका जो सब द्रव्य है उसके असंख्यातवें भागप्रमाण आयुकर्मका द्रव्य है। ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय, नाम, गोत्र और अन्तराय कर्मोंमें से प्रत्येक का द्रव्य सर्व द्रव्यके कुछ कम सातवें भागप्रमाण है और वेदनीयकर्मका द्रव्य कुछ अधिक सातवें भागप्रमाण है। इस प्रकार चारों ही गतियोंमें बंध और सत्ताकी अपेक्षा आठों कर्मोंके प्रदेशोंके भागाभागका कथन करना चाहिये। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

विशेषार्थ—जीव प्रतिसमय एक समयप्रबद्धका बंध करता है। यदि उत्कृष्ट योग आदि उत्कृष्ट प्रदेशबन्धकी सामग्री होती है तो उत्कृष्ट समयप्रबद्धका बंध करता है अन्यथा अनुत्कृष्ट समयप्रबद्धका बंध करता है। इसी प्रकार जघन्य और अजघन्य समयप्रबद्धके बन्धके विषयमें भी जानना चाहिये। बन्ध होते ही वह समयप्रबद्ध आठ भागोंमें विभाजित हो जाता है। उसके विभाजित होनेका जो क्रम मूलमें बतलाया है उसे अंकसंदृष्टिके रूपमें इस प्रकार समझना चाहिए—कल्पना कीजिये कि समयप्रबद्धके परमाणुओंका परिमाण ६५५३६ है और आवलिके असंख्यातवें भागका प्रमाण ४ है। अतः ६५५३६ में ४ से भाग देने पर लब्ध १६३८४ आता है। इस एक भागको जुदा रखकर बहुभाग ६५५३६—१६३८४=४९१५२ के आठ समान भाग करने पर प्रत्येक भागका प्रमाण ६१४४ होता है। इसमेंसे प्रत्येक कर्मको एक एक भाग दे दो। फिर आवलिके असंख्यातवें भाग ४ का विरलन करके १ १ १ १ और शेष बचे एक भाग १६३८४ के चार समान भाग करके प्रत्येक एक पर दो। आजकलकी रीतिके अनुसार इसी बातको कहना होगा कि ४ का भाग १६३८४ में दो और लब्ध एक भाग ४०९६ को जुदा रखकर शेष बहुभाग १६३८४—४०९६=१२२८८ वेदनीयको दो। जुदे रखे एक भाग ४७९६ में फिर ४ से भाग दो। लब्ध एक भाग १०२४ को जुदा रखकर शेष बहुभाग ४०९६—१०२४=३०७२ मोहनीयको दो। शेष बचे एक भाग १०२४ में फिर ४ से भाग दो। लब्ध एक भाग २५६ को जुदा रखकर शेष बहुभाग १०२४—२५६=७६८ के तीन समान भाग करके ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तरायको दो। शेष एक भाग २५६ में पुनः ४ का भाग देकर लब्ध एक भाग ६४ को जुदा रखो और शेष बहुभाग २५६—६४=१९२ के दो समान भाग करके नाम और गोत्रको एक-एक भाग दो। बाकी बचा एक भाग ६४ आयुकर्मको दो। ऐसा करनेसे प्रत्येक कर्मको इस प्रकार द्रव्य मिला—

---

1. ता०प्रतौ 'बंधे संते' इति पाठः।

§ ९. जहण्णए पयदं। दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण जहण्णसमयपबद्धमस्सिदूण अट्ठण्णं कम्माणं पदेसवंटणविहाणस्स उक्कस्ससमयपबद्ध-वंटणविधाणभंगो। जहण्णसंतमस्सिदूण अट्ठण्हं पि कम्माणं पदेसवंटणस्स उक्कस्स-संतकम्मपदेसवंटणभंगो। एवं जाणिदूण णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

वेदनीय	मोहनीय	ज्ञानावरण	दर्शनावरण	अन्तराय
६१४४	६१४४	६१४४	६१४४	६१४४
१२२८८	३०७२	२५६	२५६	२५६
१८४३२	९२१६	६४००	६४००	६४००

नाम	गोत्र	आयु
६१४४	६१४४	६१४४
९६	९६	६४
६२४०	६२४०	६२०८

अतः सबसे कम भाग आयुको मिला। उससे अधिक भाग नाम और गोत्रको मिला। नाम और गोत्रसे अधिक भाग ज्ञानावरण आदिको मिला। उनसे अधिक भाग मोहनीयको और मोहनीयसे अधिक भाग वेदनीयको मिला। यह बटवारा बंधकी अपेक्षासे बतलाया है। पूर्वमें बन्धकी अपेक्षा जो आठों कर्मोंका बटवारा किया है उसी प्रकार सत्त्वकी अपेक्षा भी जानना चाहिये। किन्तु जिस प्रकार सात कर्मोंका बन्ध निरन्तर होता है उस प्रकार आयु-कर्मका बन्ध निरन्तर नहीं होता। अतः बन्धकी अपेक्षा आठ कर्मोंका जो भाग पहले बतलाया है वह सत्त्वकी अपेक्षा नहीं प्राप्त होता। किन्तु आठों कर्मोंका जो समुदित द्रव्य है आयुकर्मका द्रव्य उसके असंख्यातवें भागप्रमाण ही प्राप्त होता है, अतः वेदनीयको छोड़कर शेष छह कर्मोंमेंसे प्रत्येकका द्रव्य कुछ कम सातवें भाग और वेदनीयका द्रव्य साधिक सातवें भागप्रमाण प्राप्त होता है। इस प्रकार बन्धकी अपेक्षा सत्तामें स्थित द्रव्यमें इतनी विशेषता है। इस विशेषताके अनुसार सब द्रव्यका असंख्यातवाँ भाग सबसे पहले अलग करदे। यह आयुकर्मका भाग होगा। शेष असंख्यात बहुभागका सात कर्मोंमें उसी क्रमसे बटवारा कर ले जिस क्रमसे बन्धकी अपेक्षा किया है। तात्पर्य यह है कि सत्त्वकी अपेक्षा बटवारा करते समय आयुके बिना सात कर्मोंमें ही 'बहुभागे समभागो' इत्यादि नियमके अनुसार बटवारा करना चाहिये और आयुकर्मको अलग सब संचित द्रव्यका असंख्यातवाँ भाग दे देना चाहिये। मान लीजिये सब संचित द्रव्यका प्रमाण ६५५३५ है और असंख्यातका प्रमाण ३२ है तो ६५५३६ में ३२ का भाग देने पर २०४८ प्राप्त होते हैं। इस प्रकार सब द्रव्यका यह जो असंख्यातवाँ भाग प्राप्त हुआ वह आयु-कर्मका हिस्सा है। अब शेष रहा ६३४८८ सो इसका पूर्वोक्त विधानसे शेष सात कर्मोंमें बटवारा कर लेना चाहिये।

§ ९. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे जघन्य समयप्रबद्धकी अपेक्षा आठों कर्मोंके प्रदेशोंके बँटवारेका विधान उत्कृष्ट समयप्रबद्धके बँटवारे-के विधानकी तरह है। तथा जघन्यप्रदेशसत्त्वकी अपेक्षा आठों ही कर्मोंके प्रदेशोंका बँटवारा उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मके बँटवारेके समान होता है। इस प्रकार जानकर अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

§ १०. सव्वविहत्ति-णोसव्वविहत्तीणं दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मोह० सव्वपदेसा सव्वविहत्ती। तदूणो णोसव्वविहत्ती। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

§ ११. उक्कस्स-अणुक्कस्सविहत्ती० दुविहो णि०-ओघे० आदेसे०। ओघेण मोह० सव्वुक्कस्सदव्वं उक्कस्सविहत्ती। तदूणमणुक्कस्सविहत्ती। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

§ १२. जहण्णाजहण्णविहत्ति० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० सव्वजहण्णं पदेसग्गं जहण्णविहत्ती। तदुवरि अजहण्णविहत्ती। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

§ १३. सादि-अणादि-धुव-अद्धुवाणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० उक्क० अणुक्क० जहण्ण० किं सादिया किमणादिया किं धुवा किमद्धुवा ? सादि-अद्धुवा। अज० किं सादिया ४ ? अणादिया धुवा अद्धुवा वा। आदेसेण सव्वासु गदीसु सव्वपदाणि सादि-अद्धुवाणि। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

---

§ १०. सर्वविभक्ति और नोसर्वविभक्तिका निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयके सब प्रदेशोंको सर्वविभक्ति कहते हैं और उन से न्यून प्रदेशोंको नोसर्वविभक्ति कहते हैं। अर्थात् यदि सब प्रदेशोंमें से एक भी प्रदेशको कम कर दिया जाय तो वे प्रदेश नोसर्वविभक्ति कहे जाते हैं। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

§ ११. उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयके सर्वोत्कृष्ट द्रव्यको उत्कृष्ट विभक्ति कहते हैं और उससे न्यून द्रव्यको अनुत्कृष्टविभक्ति कहते हैं। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

§ १२. जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिका निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयके सबसे जघन्य प्रदेशोंको जघन्य प्रदेशविभक्ति कहते हैं और उससे ऊपरके प्रदेशोंको अजघन्य प्रदेशविभक्ति कहते हैं। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

§ १३. सादि, अनादि, ध्रुव और अध्रुव अनुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति, अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति और जघन्य प्रदेशविभक्ति क्या सादि है, अनादि है, ध्रुव है अथवा अध्रुव है ? सादि और अध्रुव है। अजघन्य प्रदेशविभक्ति क्या सादि है, अनादि है, ध्रुव है अथवा अध्रुव है ? अनादि, ध्रुव और अध्रुव है। आदेशसे सब गतियोंमें सब पद सादि और अध्रुव होते हैं। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

विशेषार्थ—मोहनीयकर्मके क्षय होनेके अन्तिम समयमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म होता है और इससे अतिरिक्त सब अजघन्य प्रदेश सत्कर्म है, अतः अजघन्य प्रदेश सत्कर्ममें सादि विकल्प सम्भव नहीं, शेष तीन अनादि, ध्रुव और अध्रुव सम्भव हैं। अनादिका खुलाशा तो पहले किया ही है। तथा भव्योंकी अपेक्षा अध्रुव और अभव्योंकी अपेक्षा ध्रुव विकल्प होता है। अब रहे उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट और जघन्य प्रदेशसत्कर्म सो इन तीनोंमें सादि और अध्रुव

§ १४. सामित्तं दुविहं—जहण्णमुक्कस्सं च । उक्कस्सए पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० उक्कस्सिया पदेसविहत्ती कस्स? जो जीवो बादरपुढविकाइएसु वेहि सागरोवमसहस्सेहि सादिरेएहि ऊणियं कम्मट्ठिदिमच्छिदाउओ० .एवं वेयणाए वुत्तविहाणेण संसरिदूण अधो सत्तमाए पुढवीए णेरइएसु तेत्तीसंसागरोवमाउट्ठिदीएसु उववण्णो ? तदो उव्वट्टिदसमाणो पंचिंदिएसु अंतोमुहुत्तमच्छिय पुणो तेत्तीससागरोवमाउ-ट्ठिदिएसु णेरइएसु उववण्णो । पुणो तत्थ अपच्छिमतेत्तीससागरोवमाउणिरयभवग्गहण-अंतोमुहुत्तचरिमसमए वट्टमाणस्स मोहणीयस्स उक्कस्सपदेसविहत्ती । एत्थ उवसंहारस्स वेदणाभंगो ।

ये दो ही विकल्प सम्भव हैं । जघन्य प्रदेशसत्कर्म तो क्षय होनेके अन्तिम समयमें होता है इसलिये उसमें सादि और अध्रुव ये दो ही विकल्प सम्भव हैं यह स्पष्ट ही है । इसी प्रकार उत्कृष्ट और उसके पश्चात् होनेवाला अनुत्कृष्ट भी कादाचित्क है, इसलिये इनमें भी सादि और अध्रुव ये दो विकल्प ही सम्भव हैं । यह तो ओघसे विचार हुआ । आदेशसे विचार करने पर चारों गतियाँ अलग-अलग जीवोंकी अपेक्षा कादाचित्क हैं, इसलिए इनमें उत्कृष्ट आदि चारों पद सादि और अध्रुव होते हैं । अन्य मार्गणाओंमें अपनी अपनी विशेषता जानकर उत्कृष्ट आदिके सादि आदि पदोंकी योजना कर लेनी चाहिये ।

§ १४. स्वामित्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति किसके होती है ? जो जीव बादर पृथिवीकायिकोंमें कुछ अधिक दो हजार सागर कम कर्मस्थितिप्रमाण काल तक रहा । इस प्रकार वेदना अनुयोगद्वारमें कहे गये विधानके अनुसार भ्रमण करके नीचे सातवीं पृथिवीके तेतीस सागरकी आयुवाले नारकियोंमें उत्पन्न हुआ । उसके बाद वहाँसे निकल कर पञ्चेन्द्रियोंमें अन्तर्मुहूर्त काल तक रह कर पुनः तेतीस सागरकी स्थितिवाले नारकियोंमें उत्पन्न हुआ । इस प्रकार तेतीस सागरकी आयुवाले नरकमें अन्तिम भव ग्रहण करके जब वह जीव उस भवके अन्तिम अन्तर्मुहूर्तमें वर्तमान होता है तो उसके चरिम समयमें मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है । यहाँ उपसंहार वेदनाअनुयोगद्वारके समान जानना चाहिये ।

विशेषार्थ—उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका स्वामी वही जीव हो सकता है जिसके अधिकसे अधिक कर्मप्रदेशोंका संचय हो । ऐसा संचय जिस जीवको हो सकता है उसीका कथन यहाँ किया गया है । खुलासा इस प्रकार है—जो जीव बादर पृथिवीकायिकोंमें त्रस पर्यायकी उत्कृष्ट स्थिति कुछ अधिक दो हजार सागर कम कर्मस्थितिप्रमाण काल तक रहा । वहाँ रहते हुए बहुत बार पर्याप्त हुआ और थोड़ी बार अपर्याप्त हुआ । तथा जब पर्याप्त हुआ तो दीर्घायु-वाला ही हुआ और जब अपर्याप्त हुआ तो अल्पायुवाला ही हुआ । ये दोनों बातें बतलानेका कारण यह है कि अपर्याप्तके योगसे पर्याप्तका योग असंख्यातगुणा होता है और योगके असंख्यातगुणा होनेसे पर्याप्तके बहुत प्रदेशबंध होता है । तथा जब जब आयुबंध किया तब तब उसके योग्य जघन्य योगसे किया, जिससे मोहनीयके लिये अधिक द्रव्यका संचय हो सके । तथा बारम्बार उत्कृष्ट योगस्थान हुआ और बारम्बार विशेष संक्लिष्ट परिणाम हुए । इस प्रकार बादर पृथिवीकायिकोंमें भ्रमण करके बादर त्रस पर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुआ । यद्यपि स्थावर पर्यायका निषेध कर देने से ही सूक्ष्मत्वका निषेध हो जाता है क्योंकि स्थावर पर्यायके सिवा अन्यत्र

§ १५. आदेसेण णेरइएसु ओघं। एवं सत्तमाए पुढवीए। णेरइयाणं पढमाए

सूक्ष्मता नहीं पाई जाती। फिर भी विग्रहगतिमें वर्तमान त्रसोंको सूक्ष्म नामकर्मका उदय न होते हुए भी सूक्ष्म माना जाता है, क्योंकि वे अनन्तानन्त विस्रसोपचयोंसे उपचित औदारिक नोकर्मस्कन्धोंसे विनिर्मित देहसे रहित होते हैं। इसीलिये यहाँ त्रस पर्यायके साथ बादर शब्दका प्रयोग किया है। बादर त्रस पर्याप्तकोंमें भ्रमण करते हुए भी पर्याप्तके भव बहुत धारण करता है और अपर्याप्तके भव कम धारण करता है आदि बातें लगा लेनी चाहिये जैसे कि बादर पृथिवीकायिकोंमें भ्रमण करते हुए बतलाई थीं। इस प्रकार बादर त्रस पर्याप्तकोंमें भ्रमण करके अन्तिम भवमें सातवें नरकके नारकियोंमें उत्पन्न हुआ। नरकमें उत्कृष्ट संक्लेश होनेसे उत्कृष्ट स्थितिबन्ध होता है, इसलिये अन्तिम भवमें नरकमें उत्पन्न कराया है। शायद कहा जाय कि यदि ऐसा है तो बारम्बार नरकमें ही उत्पन्न क्यों नहीं कराया सो इसका उत्तर यह है कि वह जीव नरकमें ही बारम्बार उत्पन्न होता है। किन्तु लगातार नरकमें उत्पन्न होना संभव न होनेसे उसे अन्यत्र उत्पन्न कराया गया है। नरकमें भी उत्पन्न होता हुआ सातवें नरकमें ही बहुत बार उत्पन्न होता है, क्योंकि अन्य नरकोंमें तीव्र संक्लेश और इतनी लम्बी आयु वगैरह नहीं होती। आशय यह है कि बादर त्रसकायकी स्थिति पूर्वकोटि पृथक्त्व अधिक दो हजार सागर है। इतने काल तक बादर त्रसपर्यायमें भ्रमण करते हुए जितनी बार सातवें नरकमें जानेमें समर्थ होता है उतनी बार जाकर जब अन्तिम बार सातवें नरकमें जन्म लेता है तो उस अन्तिम भवके अन्तिम समयमें उस जीवके मोहनीयकर्मका उत्कृष्ट प्रदेशसंचय होता है, अतः वह जीव उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका स्वामी है। सारांश यह है कि उत्कृष्ट प्रदेशसंचयके लिए छ वस्तुएँ आवश्यक हैं—एक तो लम्बी भवस्थिति, दूसरे लम्बी आयु, तीसरे योगकी उत्कृष्टता, चौथे उत्कृष्ट संक्लेश, पाँचवें उत्कर्षण और छठा अपकर्षण। लम्बी भवस्थिति और लम्बी आयुके होनेसे बिना किसी विच्छेदके बहुत कर्मपुद्गलोंका ग्रहण होता रहता है, अन्यथा निरन्तर उत्पन्न होने और मरने पर बहुतसे कर्मपुद्गलोंकी निर्जरा हो जाती हैं। तथा उत्कृष्ट योगस्थानके रहने पर बहुत कर्मपरमाणुओंका बन्ध होता है और उत्कृष्ट संक्लेश परिणामके होने पर उत्कृष्ट स्थितिबन्ध होता है जिससे कर्मनिषेकोंकी जल्दी निर्जरा नहीं होती। इसी तरह उत्कर्षणके द्वारा नीचेके निषेकोंमें स्थित बहुतसे परमाणुओंकी स्थितिको बढ़ाकर ऊपरके निषेकोंमें उनका निक्षेपण करता है और अपकर्षणके द्वारा ऊपरके निषेकोंमें स्थित थोड़े परमाणुओंकी स्थितिको घटाकर नीचेके निषेकोंमें उनका स्थापन करता है। अनुभागविभक्तिमें यह बतला ही आये हैं कि निषेक रचनामें नीचे नीचे परमाणुओंकी संख्या अधिक होती है और ऊपर ऊपर वह कमती होती जाती है। अतः उत्कर्षण अपकर्षणके द्वारा नीचे तो थोड़े परमाणुओंका निक्षेपण होता है, किन्तु ऊपर अधिक परमाणुओंका निक्षेपण करता है और ऐसा होनेसे प्रदेशसंचयमें वृद्धि ही होती है। इन्हीं बातोंको लक्ष्यमें रखकर उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके स्वामीका कथन किया है। बादर पृथिवीकायिकोंमें ही क्यों उत्पन्न कराया गया आदि प्रश्नोंका समाधान आगे उत्तरप्रदेशविभक्तिमें ग्रन्थकार स्वयं करेंगे, अतः यहाँ नहीं लिखा है। इस प्रकार यद्यपि अन्य सब ग्रन्थोंमें अन्तिम समयमें ही उत्कृष्ट प्रदेशसंचय बतलाया गया है, किन्तु आगे जयधवलाकारने यह बतलाया है कि किसी किसी उच्चारणामें नरकसम्बन्धी चरिम समयसे नीचे अन्तर्मुहूर्तकाल उतरकर उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका स्वामित्व होता है, क्योंकि आयुके बंधकालमें मोहनीयका क्षय होनेसे बादको जो संचय होता है वह बहुत नहीं होता।

§ १५. आदेशसे नारकियोंमें ओघकी तरह जानना चाहिए। इसी प्रकार सातवीं

जाव छट्टि त्ति मोह० उक्क० पदेस० कस्स ? जो गुणिदकम्मंसिओ सत्तमादो पुढवीदो उव्वट्टिदो तिरिक्खेसु उववण्णो तत्थ संखेज्जाणि अंतोमुहुत्तियतिरिक्खभवग्गहणाणि भमिदूण लहुमेव अप्पप्पणो णेरइएसु उववण्णो तस्स पढमसमयणेरइयस्स उक्कस्सपदेसविहत्ती।

§ १६. तिरिक्खगदीए तिरिक्खचउक्कम्मि मोह० उक्क० पदेस० कस्स ? जो गुणिदकम्मंसिओ सत्तमादो पुढवीदो उव्वट्टिदो संतो अप्पप्पणो तिरिक्खेसु उववण्णो तस्स पढमसमयउववण्णस्स उक्कस्सिया पदेसविहत्ती। पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज० मोह० उक्क० पदेस० कस्स ? जो गुणिदकम्मंसिओ सत्तमादो पुढवीदो उव्वट्टिदो पंचिंदियतिरिक्खपज्जत्तएसु उववण्णो तत्थ दो-तिण्णिभवग्गहणाणि भमिदूण पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तएसु उववण्णो तस्स पढमसमयउववण्णस्स उक्कस्सिया पदेसविहत्ती। एवं मणुस्सचउक्क-देव-भवणादि जाव सहस्सारो त्ति।

§ १७. आणदादि जाव णवगेवज्जा त्ति मोह० उक्क० पदेस० कस्स ? जो गुणिदकम्मंसिओ सत्तमादो पुढवीदो उव्वट्टिदसमाणो दो-तिण्णिभवग्गहणाणि [illegible] उववज्जिय मणुस्सेसु उववण्णो सव्वलहुं जोणिणिक्खमणजम्मणेण जादो [illegible]हीन सत्तर-

[illegible]रण किये और

पृथिवीमें जानना चाहिए। पहलीसे लेकर छठी पृथिवी तकके नारकियोंमें मोह[illegible]ल थोड़ा रहा। प्रदेशविभक्ति किसके होती है ? जो गुणितकर्मांशवाला जीव सातवीं पृथि[illegible]ण और उत्कर्षण तिर्यञ्चोंमें उत्पन्न हुआ। वहाँ अन्तर्मुहूर्तकी आयुवाले तिर्यञ्चोंके संख्यात भ[illegible]चेके निषेकोंमें क्षेपण ही अपने अपने योग्य प्रथमादि नरकोंमें उत्पन्न हुआ। प्रथम समयव[illegible] स्थितिवाले निषेकोंमें प्रदेशविभक्ति होती है। [illegible] किया। तथा अधिकतर

विशेषार्थ—यद्यपि मोहनीयकर्मका उत्कृष्ट प्रदेशसंचय सात सारांश यह है कि गुणित- होता है। किन्तु यहाँ प्रथमादि नरकोंमें उसे प्राप्त करना है, इसलि[illegible]धक न हो सके। इस प्रकार उत्पन्न करावे और अन्तर्मुहूर्तके भीतर जितने भव सम्भव हों [illegible]कोंमें उत्पन्न हुआ। जलकायिक जिस नरकमें उत्कृष्ट प्रदेशसंचय प्राप्त करना हो उस नरकमें उत्प है वह जल्दी संयमादि ग्रहण होनेके पहले समयमें उस उस नरकमें मोहनीयका उत्कृष्ट प्रदेशसं कराया है। सबसे छोटे अन्त-

§ १६. तिर्यञ्चगतिमें चार प्रकारके तिर्यञ्चोंमें मोहनीय[illegible]छोटे अन्तर्मुहूर्तकालमें पर्याप्तियोंको होती है ? गुणितकर्मांशवाला जो जीव सातवीं पृथिवीसे[illegible] होता है और ऐसा होनेसे कर्म- तिर्यञ्चोंमें उत्पन्न हुआ उसके उत्पन्न होनेके प्रथम सम[illegible] पूर्वकोटिकी आयुवाले मनुष्योंमें है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेश[illegible]तरा हो सके इसलिये एक पूर्वकोटिकी कर्मांशवाला जो जीव सातवीं पृथिवीसे निकलकर पञ्चेन्द्रि[illegible] अर्थात् सातवें माहमें गर्भसे निकला और वहाँ दो तीन भवग्रहण तक भ्रमण करके पञ्चेन्द्रिय ति[illegible] एक पूर्वकोटि तक संयमका पालन उसके उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होत[illegible] गया। मिथ्यात्वमें मरण करके दस मनुष्य, सामान्य देव और भवनवासीसे लेकर सहस्रार स्वर्ग त[illegible]अन्तर्मुहूर्तकालमें पर्याप्त हो गया।

§ १७. आनतसे लेकर नवग्रैवेयक तकके देवोंमें मोह[illegible]र वर्षतक सम्यक्त्वके साथ रहकर होती है ? गुणितकर्मांशवाला जो जीव सातवीं पृथिवीसे [illegible] पृथिवीकायिक पर्याप्तकोंमें उत्पन्न भवग्रहण करके मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ और जल्दीसे जल्दी य[illegible]न्तर्मुहूर्त पश्चात् मरकर सूक्ष्म

§ १९. आदेसेण णेरइएसु जो जीवो खविदकम्मंसिओ अंतोमुहुत्तेण कम्मक्खयं काहदि त्ति विवरीयं गंतूण णेरइएसु उववण्णो तस्स पढमसमयणेरइयस्स मोह० जहण्णपदेसविहत्ती। एवं सत्तसु पुढवीसु सव्वतिरिक्ख-मणुस्सअपज्ज०-सव्वदेवा त्ति। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

§ २०. कालाणुगमो दुविहो—जहण्णओ उक्कस्सओ चेदि। उक्कस्सए पयदं। दुविहो णिद्देसो-ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० उक्क० पदेस० केवचिरं कालादो

निगोदिया पर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुआ। पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितिकाण्डक घातके द्वारा पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कालमें कर्मको हतसमुत्पत्तिक करके फिर भी बादर पृथिवीकायिक पर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुआ। इस प्रकार नाना भव धारण करके बत्तीस बार संयम धारण करके, चार बार कषायोंका उपशम करके, पल्यके असंख्यातवें भाग बार संयम, संयमासंयम और सम्यक्त्वका पालन करके अन्तिम भवमें एक पूर्वकोटिकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ। सातवें मासमें योनिसे निकला और आठ वर्षका होने पर संयमको धारण किया। कुछ कम एक पूर्वकोटि काल तक संयमका पालन करके जब थोड़ी आयु बाकी रही तो मोहनीयका क्षपण करनेके लिये उद्यत हुआ। इस प्रकार जब वह दसवें गुणस्थानके अन्तिम समयमें पहुँचता है तो उस जीवके मोहनीयकर्मकी जघन्य प्रदेशविभक्ति होती है। इसी प्रकार सामान्य मनुष्य, मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें भी उक्त क्षपितकर्मांशवाले जीवके दसवें गुणस्थानके अन्तिम समयमें मोहनीयकी जघन्य प्रदेशविभक्ति जाननी चाहिए।

§ १९. आदेशसे नारकियोंमें क्षपितकर्मांशवाला जो जीव अन्तर्मुहूर्तके द्वारा कर्मक्षय करेगा ऐसा वह जीव उलटा जाकर नारकियोंमें उत्पन्न हुआ, उस प्रथम समयवर्ती नारकीके मोहनीयकी जघन्य प्रदेशविभक्ति होती है। इसी प्रकार सातों नरकों, सब तिर्यञ्च, मनुष्य-अपर्याप्त और सब देवोंमें जानना चाहिये। तथा इसी प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

विशेषार्थ—आदेशसे जघन्य प्रदेशसत्कर्मका विचार करते समय ओघसे जो क्षपित कर्मांशवालेकी विधि पीछे बतला आये हैं वह सब विधि यहाँ भी जाननी चाहिये। अन्तर केवल इतना है कि ओघसे जहाँ अन्तर्मुहूर्तमें दसवें गुणस्थानके अन्त समयको प्राप्त होनेवाला था वहाँ अन्तर्मुहूर्त पहले यह उस मार्गणाको प्राप्त कर लेता है जिस मार्गणामें जघन्य प्रदेशसत्कर्म प्राप्त करना है। उदाहरणार्थ कोई ऐसा क्षपितकर्मांशवाला जीव है जो तदनन्तर क्षपकश्रेणि पर ही चढ़ता पर इकदम परिणाम बदल जानेसे वही तत्काल मिथ्यात्वमें जाता है और मरकर नरकमें उत्पन्न होनेके पहले समयमें जघन्य प्रदेशसत्कर्मका स्वामी होता है। इसी प्रकार यथायोग्य विचारकर शेष सब मार्गणाओंमें जघन्य प्रदेशसत्कर्मका स्वामी कहना चाहिये जिससे कर्मोंका संचय बहुत अधिक न होने पावे। यहाँ मूलमें जो यह कहा है कि जो अन्तर्मुहूर्तमें कर्मोंका क्षय करेगा किन्तु वैसा न करके जो लौट जाता है सो यह योग्यताकी अपेक्षा कहा है। अर्थात् क्षपितकर्मांशवालेके क्षपकश्रेणिपर चढ़नेके पूर्व समयमें जितना द्रव्य सत्त्वमें रहता है उतना जिसका द्रव्य सत्त्वमें हो गया है। अब यदि उससे कम द्रव्य प्राप्त करना है तो वह क्षपकश्रेणिमें ही प्राप्त हो सकता है। ऐसी योग्यतावाला जीव यहाँ विवक्षित है।

§ २०. कालानुगम दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका कितना काल

होदि ? जहण्णुक्क० एगस० । अणुक्क० ज० वासपुधत्तं, उक्क० अणंतकालं । आदेसेण णेरइएसु मोह० उक्क० केवचिरं ? जहण्णुक्क० एगस० । अणुक्क० ज० अंतोमुहुत्तं, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि । एवं सत्तमाए । पढमादि जाव छट्टि त्ति मोह० उक्क० ओघं । अणुक्क० जह० जहण्णट्ठिदी समऊणा, उक्क० सगसगुक्कस्सट्ठिदीओ । तिरिक्ख० उक्क० ओघं । अणुक्क० जहण्ण० खुद्दाभवग्गहणं, उक्क० अणंतकाल० । पंचिंदियतिरिक्ख-तियम्मि उक्क० ओघं । अणुक्क० जहण्णुक्कस्सट्ठिदीओ । पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज० उक्क० ओघं । अणुक्क० ज० खुद्दाभवग्गहणं समयूणं, उक्क० अंतोमु० । एवं मणुसअपज्ज० । मणुसतियम्मि मोह० उक्क० ओघं । अणुक्क० जह० खुद्दाभ० अंतोमु० समयूणं, उक्क० सगट्ठिदी । देवेसु मोह० उक्क० ओघं । अणुक्क० ज० दसवस्ससहस्साणि समऊणाणि, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि। एवं सव्वदेवाणं । णवरि अणुक्क० ज० सगसगजहण्णट्ठिदी[1] समऊणा, उक्क० उक्कस्सट्ठिदी संपुण्णा । एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति ।

है ? जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल वर्ष-पृथक्त्व और उत्कृष्ट काल अनन्तकाल है। आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेश-विभक्तिका कितना काल है ? जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल तेतीससागर है। इसी प्रकार सातवीं पृथिवीमें जानना चाहिये। पहलीसे लेकर छठी पृथिवी तक मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका काल ओघकी तरह जानना चाहिए। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कम अपनी अपनी जघन्य स्थितिप्रमाण है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण जानना चाहिए। तिर्यञ्चोंमें उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका काल ओघकी तरह जानना चाहिए। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल क्षुद्रभवग्रहणप्रमाण है और उत्कृष्ट काल अनन्तकाल है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च पर्याप्त और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च योनिनी जीवोंमें उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका काल ओघकी तरह है और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल जघन्य स्थितिप्रमाण और उत्कृष्ट काल उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका काल ओघकी तरह है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कम क्षुद्रभवग्रहणप्रमाण और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्तकोंमें जानना चाहिए। शेष तीन प्रकारके मनुष्योंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका काल ओघकी तरह है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल सामान्य मनुष्योंमें एक समय कम क्षुद्रभवग्रहण प्रमाण और मनुष्य पर्याप्त तथा मनुष्यिनियोंमें एक समय कम अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। देवोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेश-विभक्तिका काल ओघकी तरह है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कम दस हजार वर्ष और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। इसी प्रकार सब देवोंमें जानना चाहिए। इतना विशेष है कि अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कम अपनी अपनी जघन्य स्थितिप्रमाण है और उत्कृष्ट काल सम्पूर्ण उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

१. आ०प्रतौ 'ज० एगस० जहण्णट्ठिदी' इति पाठः ।

विशेषार्थ—ओघसे और आदेशसे मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल सर्वत्र एक समय कहनेका कारण यह है कि सर्वत्र एक समयके लिये ही उत्कृष्ट प्रदेशसंचय होता है। जिसने मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिको प्राप्त करनेके बाद नरकसे निकलकर और अन्तर्मुहूर्तके भीतर तिर्यञ्च पर्यायके दो तीन भव लेकर अनन्तर मनुष्य पर्याय प्राप्त की है वह यदि आठ वर्षका होनेके बाद ही क्षपकश्रेणीपर चढ़कर मोहनीयका नाश कर देता है तो उसके अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका वर्षपृथक्त्व काल पाया जाता है। यह अनुत्कृष्टका सबसे कम काल है, क्योंकि इसका इससे और कम काल नहीं बनता, इसलिये अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल वर्षपृथक्त्व कहा। तथा इसका ओघसे उत्कृष्ट अनन्त काल कहनेका कारण यह है कि अधिकसे अधिक इतने काल तक घूमनेके बाद यह जीव नियमसे उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिको प्राप्त कर लेता है। उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके विषयमें दो मत हैं—एक यह कि गुणितकर्मांशवाले नारकीके अपनी आयुके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है और दूसरा यह कि मरनेके अन्तर्मुहूर्त पहले होती है। प्रथम मतके अनुसार सामान्यसे नरकमें अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति का जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त नहीं प्राप्त होता, क्योंकि उत्कृष्टके बाद अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति प्राप्त होते समय वह जीव अन्य गतिवाला हो जाता है। हाँ दूसरे मतके अनुसार अन्तर्मुहूर्त काल प्राप्त होता है। यही कारण है कि नरकमें अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त कहा है। तथा उत्कृष्ट काल तेतीस सागर स्पष्ट ही है। यही व्यवस्था सातवें नरकमें है। प्रथमादि नरकोंमें अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल जो अपनी अपनी जघन्य स्थितिमेंसे एक एक समय कम कहा है सो इसका कारण यह है कि इन नरकोंमें उत्पन्न होनेके पहले समयमें उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति सम्भव है, अतः एक समय कम किया है। तथा उत्कृष्ट काल जो अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण बतलाया है वह स्पष्ट ही है। तिर्यञ्चोंमें अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल जो खुद्दाभवग्रहणप्रमाण बतलाया है सो इसका कारण यह है कि तिर्यञ्चसामान्यके उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति लब्ध्यपर्याप्त तिर्यञ्चके नहीं होती, अतः पूराका पूरा खुद्दाभवग्रहणप्रमाण काल अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल बन जाता है। तथा उत्कृष्ट काल जो अनन्तकाल बतलाया है सो स्पष्ट ही है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकके अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल जो अपनी अपनी जघन्य स्थितिप्रमाण बतलाया है सो इसका कारण यह है कि यद्यपि इनके भवके प्रथम समयमें उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति सम्भव है इसलिये जघन्य आयुमेंसे एक समय कम हो जाना चाहिये पर जो जीव नरकसे निकलता है उसके सबसे जघन्य आयु नहीं पाई जाती, अतः अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल जघन्य आयुप्रमाण कहा और उत्कृष्ट काल उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है यह स्पष्ट ही है। यहाँ उत्कृष्ट-स्थितिसे अपनी अपनी उत्कृष्ट कायस्थिति ले लेनी चाहिये। पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्त तिर्यञ्चके जो अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल खुद्दाभवग्रहणमेंसे एक समय कम बतलाया है सो यह एक समय उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका है। इसे कम कर देने पर अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य-काल आ जाता है। तथा पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्त तिर्यञ्चकी उत्कृष्ट कायस्थिति अन्तर्मुहूर्त है, अतः इनके अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त बतलाया है। इसी प्रकार लब्ध्य-पर्याप्त मनुष्यके अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल घटित कर लेना चाहिये। शेष तीन प्रकारके मनुष्योंमें सामान्य मनुष्यकी जघन्य स्थिति खुद्दाभवग्रहणप्रमाण है और शेष दो की अन्तर्मुहूर्त है। सामान्य मनुष्यकी तो जो एक समय कम जघन्य स्थिति है वही अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल प्राप्त होता है, क्योंकि इसके इस आयुमें उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका एक समय सम्मिलित है। तथा शेष दोके जघन्य आयु अन्तर्मुहूर्तमेंसे एक समय कम कर देना चाहिये,

§ २१. जहण्णए पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० जहण्ण० जहण्णुक्क० एगस० । अज० अणादिओ अपज्जवसिदो अणादिओ सपज्जवसिदो । आदेसे० णेरइएसु मोह० ज० जहण्णुक्क० एगस० । अज० ज० दसवस्ससहस्साणि समऊणाणि, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि संपुण्णाणि । पढमादि जाव सत्तमि त्ति ज० ओघं । अज० सगसगजहण्णट्ठिदी समऊणा, उक्क० उक्कस्सट्ठिदी संपुण्णा । तिरिक्खपंचयम्मि मोह० ज० ओघं । अज० ज० सगसगजहण्णट्ठिदी समऊणा, उक्क० उक्कस्सट्ठिदी[1] संपुण्णा । एवं मणुसचउक्कम्मि । देवाणं णेरइयभंगो । एवं भवणादि जाव सव्वट्ठसिद्धि त्ति । णवरि अज० ज० जहण्णट्ठिदी समयूणा, उक्क० उक्कस्सट्ठिदी संपुण्णा । एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति ।

क्योंकि यह एक समय उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका है। तथा इन तीनों प्रकारके मनुष्योंके अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जो उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण बतलाया है सो यहाँ स्थितिसे अपनी अपनी कायस्थिति लेनी चाहिये। इसी प्रकार देवोंमें सर्वत्र अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी जघन्य और उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण घटित कर लेना चाहिये। किन्तु जघन्य काल कहते समय जघन्य स्थितिमेंसे एक समय कम कर देना चाहिये, क्योंकि यह एक समय उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिसम्बन्धी है। आगे अनाहारक मार्गणा तक यही क्रम जानना चाहिये।

§ २१. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका काल अनादि अनन्त और अनादि सान्त है। आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समयकम दस हजार वर्ष है और उत्कृष्ट काल सम्पूर्ण तेतीस सागर है। पहलेसे लेकर सातवें नरक तक जघन्य प्रदेशविभक्तिका काल ओघकी तरह है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समयकम अपनी अपनी जघन्य स्थितिप्रमाण है और उत्कृष्ट काल सम्पूर्ण उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। पाँचों प्रकारके तिर्यञ्चोंमें मोहनीयको जघन्य प्रदेशविभक्तिका काल ओघकी तरह है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समयकम अपनी अपनी जघन्य स्थितिप्रमाण है और उत्कृष्ट काल सम्पूर्ण उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। इसी प्रकार चार प्रकारके मनुष्योंमें जानना चाहिए। सामान्य देवोंमें नारकियोंके समान भंग है। इसी प्रकार भवनवासियोंसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें जानना चाहिए। इतना विशेष है कि अजघन्य विभक्ति का जघन्य काल एक समय कम अपनी अपनी जघन्य स्थितिप्रमाण है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी सम्पूर्ण उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

विशेषार्थ—ओघसे और आदेशसे सर्वत्र मोहनीयकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है, क्योंकि स्वामित्वानुगमके अनुसार बतलाये हुए क्रमसे सर्वत्र एक समयके लिये ही जघन्य प्रदेशसंचय होता है। ओघसे अजघन्य विभक्तिका काल भव्यकी अपेक्षा अनादि-सान्त है और अभव्यकी अपेक्षा अनादि-अनन्त है, क्योंकि अभव्यके कभी जघन्य प्रदेशविभक्ति नहीं होती। आदेशसे सब गतियोंमें अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य-

---

1. आ०प्रतौ 'समऊणा उक्क० ट्ठिदी' इति पाठः।

§ २२. अंतरं दुविहं—जहण्णमुक्कस्सं चेदि । उक्कस्से पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० उक्क० पदेसविहत्तीए अंतरं केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णुक्क० अणंतकालं । अथवा जहण्णेण असंखेज्जा लोगा, गुणिदपरिणामेहिंतो पुधभूदपरिणामेसु असंखेज्जलोगमेत्तेसु जहण्णेण संचरणकालस्स असंखे०लोगपमाणत्तादो । अणुक्क० जहण्णुक्क० एगसमओ । आदेसेण णेरइएसु मोह० उक्क० णत्थि अंतरं । अणुक्क० जहण्णुक्क० एगस० । एवं सत्तमाए । पढमादि जाव छट्ठि त्ति मोह० उक्कस्साणुक्क० णत्थि अंतरं । एवं सव्वतिरिक्ख-सव्वमणुस्स-सव्वदेवे त्ति । एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति ।

काल एक समय कम अपनी अपनी जघन्य स्थितिप्रमाण है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी सम्पूर्ण उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है ।

§ २२. अन्तर दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टसे प्रयोजन है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तर काल कितना है ? जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल अनन्तकाल है । अथवा जघन्य अन्तरकाल असंख्यात लोकप्रमाण है, क्योंकि गुणितकर्मांशके कारणभूत परिणामोंसे भिन्न परिणामोंमें संचरण करनेका जघन्य काल असंख्यात लोकप्रमाण है । अनुत्कृष्टविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय है । आदेशसे नारकियोंमें मोहकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तर नहीं है । अनुत्कृष्ट विभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है । इसी प्रकार सातवें नरकमें जानना चाहिये । पहलेसे लेकर छठे नरक तक मोहनीयकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट विभक्तिका अन्तर नहीं है । इसी प्रकार सब तिर्यञ्च, सब मनुष्य और सब देवोंमें जानना चाहिये । इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त जानना चाहिये ।

विशेषार्थ—ओघसे उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल अनन्तकाल है, क्योंकि उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति गुणितकर्मांशिक जीवके होती है और एक बार उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होकर पुनः इसे प्राप्त करनेमें अनन्तकाल लगता है । अथवा उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तरकाल असंख्यात लोक है । कारणका निर्देश मूलमें किया ही है । और उत्कृष्ट अन्तरकाल अनन्त काल है यह स्पष्ट ही है । तथा उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका काल एक समय है, अतः अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय कहा है, क्योंकि अनुत्कृष्ट विभक्तिके बीचमें एक समयके लिये उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके हो जानेसे एक समयका अन्तर पड़ता है । आदेशसे सामान्य नारकियोंमें उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तर नहीं है, क्योंकि अन्तर तब हो सकता है जब उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके बाद अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होकर पुनः उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति हो, किन्तु ऐसा किसी भी गतिमें नहीं होता, क्योंकि उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके अन्तरको प्राप्त करनेके लिये विविध गतियोंका आश्रय लेना पड़ता है । अतः किसी भी गतिमें उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तर काल नहीं है । सामान्य नारकियोंमें अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय है, क्योंकि सातवें नरकमें अन्तिम अन्तर्मुहूर्तके प्रथम समयमें उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति मानी गई है । किन्तु जिनके मतसे अन्तिम समयमें उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है उसके अनुसार यह अन्तर नहीं बनता । इसी प्रकार सातवें नरकमें समझना चाहिये । पहलीसे लेकर छठी पृथिवी तक तथा तिर्यञ्च, मनुष्य और देवोंमें सर्वप्रथम जन्म लेनेवाले गुणितकर्मांश जीवके जन्म लेनेके प्रथम समयमें ही उत्कृष्ट

§ २३. जहण्णए पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० जहण्णाजहण्ण० पदेसविहत्तीणं णत्थि अंतरं। एवं चउगईसु। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

§ २४. णाणाजीवेहि भंगविचओ दुविहो-जहण्णओ[1] उक्कस्सओ चेदि। उक्कस्से पयदं। तत्थ अट्ठपदं—जे उक्कस्सपदेसविहत्तिया ते अणुक्कस्सपदेसस्स अविहत्तिया। जे अणुक्कस्सपदेसविहत्तिया ते उक्क०पदेसस्स अविहत्तिया। एदेण अट्ठपदेण दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० उक्कस्सियाए पदेसविहत्तीए सिया सव्वे जीवा अविहत्तिया १। सिया अविहत्तिया च विहत्तिओ च २। सिया अविहत्तिया च विहत्तिया च ३। अणुक्कस्सस्स वि विहत्तिपुव्वा तिण्णि भंगा वत्तव्वा। एवं सव्वणेरइय-सव्वतिरिक्ख-मणुस्सतिय-सव्वदेवे त्ति। मणुसअपज्जत्ताणमुक्क० अणुक्क० अट्ठभंगा। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

विभक्ति होती है, अतः वहाँ न उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तर होता है और न अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तर होता है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक अन्तरकाल घटित कर लेना चाहिये।

§ २३. अब जघन्यसे प्रयोजन है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। इसी प्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिए। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

विशेषार्थ—ओघसे क्षपित कर्मांशवाले जीवके दसवें गुणस्थानके अन्तमें मोहनीयकी जघन्य प्रदेशविभक्ति होती है। उसके बाद मोहका सद्भाव नहीं रहता, अतः न जघन्य-प्रदेशविभक्तिका अन्तर प्राप्त है और न अजघन्य विभक्तिका अन्तर प्राप्त होता है। आदेशसे जिन गतियोंमें क्षपक सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानकी प्राप्ति सम्भव नहीं है उनमें क्षपित कर्मांशवाला जीव मोहका क्षपण न करके उसके पूर्व ही लौटकर जिस जिस गतिमें जन्म लेता है उसके प्रथम समयमें ही जघन्य प्रदेशविभक्ति होती है। अन्यथा नहीं होती, अतः आदेशसे भी दोनों विभक्तियोंका अन्तर नहीं होता। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणातक जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल क्यों सम्भव नहीं है इस बातको उक्त विधिसे घटित करके जान लेना चाहिए।

§ २४. नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचय दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टसे प्रयोजन है। उसमें अर्थपद है—जो उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव हैं वे अनुत्कृष्ट प्रदेशोंकी अविभक्तिवाले होते हैं और जो अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव हैं वे उत्कृष्ट प्रदेशोंकी अविभक्तिवाले होते हैं। इस अर्थपदके अनुसार निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिकी अपेक्षा कदाचित् सब जीव अविभक्तिवाले होते हैं १। कदाचित् अनेक जीव अविभक्तिवाले और एक जीव विभक्तिवाला होता है २। कदाचित् अनेक जीव अविभक्तिवाले और अनेक जीव विभक्तिवाले होते हैं ३। अनुत्कृष्टके भी विभक्तिको पूर्वमें रखकर तीन भंग होते हैं। तात्पर्य यह है अनुत्कृष्ट विभक्तिकी अपेक्षा भंग कहते समय

---

१. आ०प्रतौ 'दुविहो णि० जहण्णओ' इति पाठः।

§ २५. जहण्णए पयदं। तं चेव अट्ठपदं कादूण पुणो एदेण अट्ठपदेण उक्कस्स-भंगो। एवं सव्वमग्गणासु णेदव्वं।

जहाँ अविभक्तिपद रखा है वहाँ अनुत्कृष्टकी अपेक्षा विभक्ति शब्द रखना चाहिये। इसी प्रकार सब नारकी, सब तिर्यञ्च, तीन प्रकारके मनुष्य और सब देवोंमें जानना चाहिये। मनुष्य-अपर्याप्तकोंमें उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिमेंसे प्रत्येककी अपेक्षा आठ आठ भंग होते हैं। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

विशेषार्थ—जिनके उत्कृष्ट प्रदेशसंचय होता है उनके उस समय अनुत्कृष्ट प्रदेशसंचय नहीं होता और जिनके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंचय होता है उनके उस समय उत्कृष्ट प्रदेशसंचय नहीं होता। यह अर्थपद है, इसको आधार बनाकर उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिकी अपेक्षासे तीन और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिकी अपेक्षासे तीन कुल प्रत्येककी अपेक्षा तीन तीन भंग मूलमें बतलाये गये हैं। उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव कम होते हैं और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले अधिक होते हैं। तथा ऐसा भी समय होता है जब उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाला एक भी जीव नहीं होता। अतः जब सब जीव मोहकी उत्कृष्ट विभक्तिवाले नहीं होते तब सब जीव मोहकी अनुत्कृष्ट विभक्तिवाले होते हैं। और जब एक जीव मोहकी उत्कृष्ट विभक्तिवाला होता है तब शेष जीव मोहकी अनुत्कृष्ट विभक्तिवाले होते हैं। तथा जब अनेक जीव मोहकी उत्कृष्ट विभक्तिवाले होते हैं तब अनेक शेष जीव अनुत्कृष्ट विभक्तिवाले होते हैं, इस प्रकार उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट की विभक्ति और अविभक्तिकी अपेक्षा तीन तीन भंग होते हैं किन्तु मनुष्य अपर्याप्तक चूँकि सान्तर-मार्गणा है, अतः उसमें उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिकी अपेक्षा आठ और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिकी अपेक्षा आठ भंग प्राप्त होते हैं। यथा—कदाचित् सब लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्य उत्कृष्ट प्रदेश-अविभक्तिवाले होते हैं १। कदाचित् सब उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले होते हैं २। कदाचित् एक उत्कृष्ट प्रदेशअविभक्तिवाला होता है ३। कदाचित् एक उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाला होता है ४। ये चार एक संयोगी भंग हैं। दो संयोगी भंग भी इतने ही होते हैं। इस प्रकार ये सब आठ भंग हुए। अनुत्कृष्टकी अपेक्षा भी इतने ही भंग जानने चाहिये। इस प्रकार सान्तर और निरन्तर मार्गणाओंका ख्याल करके जहाँ जो व्यवस्था लागू हो वहाँ उसके अनुसार भंग ले आने चाहिये।

§ २५. जघन्यसे प्रयोजन है। उत्कृष्टमें कहे गये पदको ही अर्थपद करके फिर उस अर्थपदके अनुसार जघन्यमें भी उत्कृष्टके समान भंग होते हैं। इस प्रकार सब मार्गणाओंमें ले जाना चाहिये।

विशेषार्थ—जिसके जघन्य प्रदेशविभक्ति होती है उसके अजघन्य प्रदेशविभक्ति नहीं होती और जिसके अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है उसके जघन्य प्रदेशविभक्ति नहीं होती। यह अर्थपद है। इसको लेकर उत्कृष्ट और अनुत्कृष्टकी तरह ही भंग योजना कर लेनी चाहिये। अर्थात् कदाचित् सब जीव मोहकी जघन्य प्रदेशविभक्ति वाले नहीं होते १। कदाचित् अनेक जीव अविभक्तिवाले और एक जीव विभक्तिवाला होता है २। कदाचित् अनेक जीव विभक्ति-वाले और अनेक जीव अविभक्तिवाले होते हैं ३। इसी प्रकार अविभक्तिके स्थानमें विभक्ति करके अजघन्यके भी तीन भंग होते हैं—कदाचित् सब जीव मोहकी अजघन्य प्रदेशविभक्ति-वाले होते हैं १। कदाचित् अनेक जीव विभक्तिवाले और एक जीव अविभक्तिवाला होता है २। कदाचित् अनेक जीव विभक्तिवाले और अनेक जीव अविभक्तिवाले होते हैं ३। ये तीन तीन भंग

§ २६. परिमाणं दुविहं—जहण्णमुक्कस्सं च। उक्कस्से पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० उक्कस्सपदेसवि० के० ? असंखेज्जा आवलि० असंखे०-भागमेत्ता। अणुक्क० विह० अणंता। एवं तिरिक्खोघं। आदेसेण णेरइएसु मोह० उक्क० अणुक्क० असंखेज्जा। एवं सव्वणेरइय-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-मणुस्स—मणुस्स-अपज्ज० देव—भवणादि जाव सहस्सारो त्ति। मणुस्सपज्ज०-मणुसिणी० सव्वट्ठसिद्धिम्हि उक्कस्साणुक्क० संखेज्जा। आणदादि जाव अवराइदो त्ति उक्क० संखेज्जा। अणुक्क० असंखेज्जा। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

§ २७. जहण्णए पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० ज० वि० केत्ति० ? संखेज्जा। अज० अणंता०। एवं तिरिक्खोघं। आदेसे० णेरइएसु मोह० जह० ओघं। अज० असंखेज्जा। एवं सव्वणेरइय—सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-मणुस-मणुस-

---

सब गतियोंमें होते हैं। मात्र मनुष्य अपर्याप्तकोंमें जघन्यकी अपेक्षा आठ और अजघन्यकी अपेक्षा आठ भंग होते हैं। इन भंगोंका नामनिर्देश उत्कृष्टके समान कर लेना चाहिये। इस प्रकार आगे भी निरन्तर और सान्तर मार्गणाओंका ख्याल करके जहाँ जो व्यवस्था सम्भव हो उसे वहाँ लगा लेनी चाहिये।

§ २६. परिमाण दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टसे प्रयोजन है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं, अर्थात् आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। अनुत्कृष्ट विभक्तिवाले अनन्त हैं। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिये। आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले असंख्यात हैं। इस प्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय-तिर्यञ्च, सामान्य मनुष्य, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव और भवनवासीसे लेकर सहस्रार स्वर्ग तकके देवोंमें जानना चाहिये। मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट विभक्तिवाले जीव संख्यात हैं। आनत स्वर्गसे लेकर अपराजित विमान तकके देवोंमें उत्कृष्ट विभक्तिवाले संख्यात हैं और अनुत्कृष्ट विभक्तिवाले असंख्यात हैं। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

विशेषार्थ—जो राशियाँ अनन्त हैं उनमें आवलिके असंख्यातवें भाग जीव उत्कृष्ट विभक्तिवाले और शेष अनन्त जीव अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले होते हैं। जो राशियाँ असंख्यात हैं उनमें दोनों विभक्तिवालोंका प्रमाण असंख्यात असंख्यात होता है। किन्तु आनतसे लेकर अपराजित विमान पर्यन्त उत्कृष्ट विभक्तिवालोंको प्रमाण संख्यात और अनुत्कृष्ट विभक्तिवालोंका प्रमाण असंख्यात है, क्योंकि उत्कृष्ट विभक्तिवाले आनतादिकमें पर्याप्त मनुष्य ही जाकर पैदा होते हैं और ये संख्यात हैं। तथा जो राशियाँ संख्यात हैं उनमें दोनों विभक्तिवालोंका प्रमाण संख्यात है।

§ २७. जघन्यसे प्रयोजन है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले कितने हैं ? संख्यात हैं। अजघन्य प्रदेशविभक्तिवाले अनन्त हैं। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी जघन्य विभक्तिवाले ओघकी तरह हैं। अजघन्य विभक्तिवाले असंख्यात हैं। इसी प्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, सामान्य मनुष्य, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव और

अपज्ज०देव-भवणादि जाव अवराइदो त्ति। मणुसपज्ज०-मणुसिणी०-सव्वट्ठसिद्धिम्हि जहण्णाजहण्णपदेस० संखेज्जा। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

§ २८. खेत्तं दुविहं—जहण्णमुक्कस्सं च। उक्कस्से पयदं। दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० उक्कस्सपदेसवि० केवडि खेत्ते? लोगस्स असंखे०भागे। अणुक्क० सव्वलोगे। एवं तिरिक्खोघं। सेसमग्गणासु उक्कस्साणुक्क० लोग० असंखे०-भागे। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

§ २९. जहण्णए पयदं। जहण्णाजहण्णपदेस० उक्कस्साणुक्कस्सभंगो।

§ ३०. पोसणं दुविहं—जहण्णमुक्कस्सं च। उक्कस्से पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मोह० उक्क०-अणुक्क० खेत्तभंगो। एवं तिरिक्खोघं।

भवनवासीसे लेकर अपराजित तकके देवोंमें जानना चाहिये। मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिमें जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिवाले संख्यात हैं। इस प्रकार अनाहारीपर्यन्त जानना चाहिये।

विशेषार्थ—जघन्य प्रदेशविभक्तिवालोंका प्रमाण ओघसे और आदेशसे भी संख्यात ही होता है, क्योंकि क्षपितकर्मांश ऐसे जीवोंका परिमाण संख्यात ही होता है और अजघन्य विभक्तिवालोंका प रमाण अपनी अपनी राशिके अनुसार अनन्त, असंख्यात और संख्यात होता है।

§ २८. क्षेत्र दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंका कितना क्षेत्र है? लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र है। अनुत्कृष्ट विभक्तिवाले जीवोंका सब लोक क्षेत्र है। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिये। शेष मार्गणाओंमें उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट विभक्तिवाले जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसी प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

§ २९. जघन्यसे प्रयोजन है। जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिवालोंका क्षेत्र उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवालोंके समान है।

विशेषार्थ—ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं, अतः इनका वर्तमान क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होनेसे वह उक्त प्रमाण कहा है। तथा अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले शेष सब जीव हैं और ये सब लोकमें पाये जाते हैं, इसलिये इनका क्षेत्र सर्वलोक कहा है। सामान्य तिर्यञ्चोंमें इसी प्रकार क्षेत्र घटित कर लेना चाहिये। शेष गतियोंमें क्षेत्र ही लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिए उनमें दोनों विभक्तियोंकी अपेक्षा लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र कहा है। तथा आगे एकेन्द्रिय आदि व दूसरी मार्गणाओंमें अपने अपने क्षेत्रको देखकर वह घटित कर लेना चाहिये। जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिवालोंमें भी इसी प्रकार क्षेत्र घटित कर लेना चाहिए।

§ ३०. स्पर्शन दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट विभक्तिवालोंका स्पर्शन क्षेत्रकी तरह है। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। आदेशसे नारकियोंमें

आदेसेण० णेरइएसु मोह० उक्क० खेत्तभंगो। अणुक्क० लोग० असंखे०भागो छ चोद्दस० देसूणा। एवं सत्तमाए। पढमपुढवीए खेत्तं। विदियादि जाव छट्ठि त्ति मोह० उक्क० खेत्तभंगो। अणुक्क० सगपोसणं। सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-सव्वमणुस्स मोह० उक्क० खेत्तभंगो। अणुक्क० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा। देवेसु मोह० उक्क० खेत्तं। अणुक्क० लोग० असंखे०भागो अट्ठ-णव चोद्दस० देसूणा। भवणादि जाव अच्चुदा त्ति उक्क० खेत्तभंगो। अणुक्क० सग-सगपोसणं। उवरि उक्कस्साणुक्क० खेत्तभंगो। एवं णेदव्वं जाव अणाहारो त्ति।

§ ३१. जहण्णए पयदं। दुविहो णि०–ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० जहण्णाजहण्णपदेसविह० उक्कस्साणुक्कस्स०भंगो। एवं सव्वमग्गणासु णेदव्वं जाव अणाहारो त्ति।

मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवालोंका स्पर्शन क्षेत्रकी तरह है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवालों का स्पर्शन लोकका असंख्यातवाँ भाग और त्रसनालीके कुछ कम छ बटे चौदह भागप्रमाण है। इसी प्रकार सातवीं पृथिवीमें जानना चाहिये। पहली पृथिवीमें क्षेत्रके समान स्पर्शन है। दूसरीसे लेकर छठी पृथिवी पर्यन्त मोहकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवालोंका स्पर्शन क्षेत्रकी तरह है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवालोंका अपना अपना स्पर्शन कहना चाहिये। सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च और सब मनुष्योंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट विभक्तिवालोंका स्पर्शन क्षेत्रकी तरह है। अनुत्कृष्ट विभक्तिवालोंका स्पर्शन लोकका असंख्यातवाँ भाग और सर्वलोक है। देवोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट विभक्तिवालोंका स्पर्शन क्षेत्रकी तरह है। अनुत्कृष्ट विभक्तिवालोंका स्पर्शन लोकका असंख्यातवाँ भाग और त्रसनालीके कुछ कम आठ व कुछ कम नौ बटे चौदह भागप्रमाण है। भवनवासीसे लेकर अच्युत स्वर्ग तकके देवोंमें उत्कृष्ट विभक्तिवालोंका स्पर्शन क्षेत्रकी तरह है। अनुत्कृष्ट विभक्तिवालोंका अपना अपना स्पर्शन है। अच्युत स्वर्गसे ऊपर उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट विभक्तिवालोंका स्पर्शन क्षेत्रकी तरह है। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

§ ३१. जघन्यसे प्रयोजन है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवालोंका स्पर्शन उत्कृष्ट विभक्तिवालोंके स्पर्शनकी तरह है। और अजघन्य विभक्तिवालोंका स्पर्शन अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवालोंकी तरह है। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त सब मार्गणाओंमें ले जाना चाहिए।

विशेषार्थ—उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका काल एक समय कहा है और वह विभक्ति सातवें नरकमें तो अन्तिम अन्तर्मुहूर्तके अन्तिम समयमें या प्रथम समयमें होती है और अन्यत्र जन्म लेनेके प्रथम समयमें होती है, अतः ओघसे और आदेशसे उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवालोंका जो क्षेत्र है वही स्पर्शन भी है। अर्थात् लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र और स्पर्शन दोनों हैं। किन्तु अनुत्कृष्ट विभक्ति एकेन्द्रियादि सब जीवोंके पाई जाती है अतः ओघसे अनुत्कृष्ट विभक्तिवालोंका स्पर्शन क्षेत्रकी ही तरह सर्वलोक है क्योंकि सर्वलोकमें वे पाये जाते हैं। तथा आदेशसे नारकियोंमें वर्तमान कालकी अपेक्षा लोकका असंख्यातवाँ भाग स्पर्शन है और अतीतकालकी अपेक्षा स्वस्थानस्वस्थान, विहारवत्स्वस्थान, वेदना, कषाय और विक्रियाके द्वारा लोकका असंख्यातवाँ भाग स्पर्शन है। तथा मारणान्तिक और उपपादपदके द्वारा त्रसनालीके

कुछ कम छै बटे चौदह भागप्रमाण स्पर्शन है। प्रथम नरकमें क्षेत्रकी ही तरह लोकका असंख्यातवाँ भाग स्पर्शन है। दूसरे नरकसे लेकर छठे नरक तक वर्तमानकालकी अपेक्षा लोकका असंख्यातवाँ भाग स्पर्शन है। तथा अतीतकालकी अपेक्षा स्वस्थानस्वस्थान, विहारवत्स्वस्थान, वेदना, कषाय और विक्रिया पदके द्वारा लोकका असंख्यातवाँ भाग स्पर्शन है और मारणान्तिक तथा उपपादके द्वारा त्रसनालीकी अपेक्षा दूसरी पृथिवीमें कुछ कम एक बटे चौदह भागप्रमाण, तीसरीमें कुछ कम दो बटे चौदह भागप्रमाण, चौथीमें कुछ कम तीन बटे चौदह भागप्रमाण, पाँचवीमें कुछ कम चार बटे चौदह भागप्रमाण और छठीमें कुछ कम पाँच बटे चौदह भागप्रमाण स्पर्शन है। सामान्य देवोंमें वर्तमानकी अपेक्षा लोकका असंख्यातवाँ भाग स्पर्शन है और अतीत कालकी अपेक्षा विहारवत्स्वस्थान, वेदना, कषाय और विक्रियापदके द्वारा त्रसनालीका कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण स्पर्शन है, क्योंकि तीसरी पृथिवीसे नीचे देव नहीं जा सकते। तथा मारणान्तिकपदके द्वारा त्रसनालीका कुछ कम नौ बटे चौदह भागप्रमाण स्पर्शन है, क्योंकि नीचे दो राजू और ऊपर सात राजू इस तरह कुछ कम नौ राजू क्षेत्रको मारणान्तिकसमुद्घात करनेवाले देव स्पृष्ट करते हैं। भवनवासी आदि सब देवोंमें वर्तमानकालकी अपेक्षा लोकका असंख्यातवाँ भाग स्पर्शन है और अतीतकालकी अपेक्षा भवनत्रिकमें विहारवत्स्वस्थान, वेदना, कषाय और विक्रियापदके द्वारा त्रसनालीका कुछ कम साढ़े तीन बटे चौदह भागप्रमाण अथवा कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण स्पर्शन है, क्योंकि मन्दरतलसे नीचे दो राजू और ऊपर सौधर्म कल्पके विमानके ध्वजदण्ड तक डेढ़ राजू इस तरह कुछ कम साढ़े तीन राजूमें तो स्वयं ही विहार कर सकते हैं और ऊपरके देवोंके ले जानेसे कुछ कम आठ राजू तक विहार कर सकते हैं। तथा मारणान्तिक समुद्घातके द्वारा त्रसनालीका कुछ कम नौ बटे चौदह भागप्रमाण स्पर्शन है, क्योंकि मन्दराचलसे नीचे कुछ कम दो राजू और ऊपर सात राजू इस तरह नौ राजू होते हैं। उसमें तीसरी पृथिवीके नीचेका कुछ भाग छूट जाता है जहाँ देव नहीं जाते। सौधर्मसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंने अतीतकालमें विहारवत्स्वस्थान, वेदना, कषाय और विक्रियापदके द्वारा त्रसनालीका कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्र स्पर्श किया है। मारणान्तिकपदके द्वारा सौधर्म-ईशान कल्पके देवोंने त्रसनालीका कुछ कम नौ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्र स्पर्श किया है और सानत्कुमारसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंने त्रसनालीका कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्र स्पर्श किया है। उपपादपदके द्वारा सौधर्म ईशान कल्पके देवोंने त्रसनालीका कुछ कम डेढ़ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्र स्पर्श किया है, क्योंकि सौधर्मकल्प पृथिवीतलसे डेढ़ राजू के भीतर है। तथा उपपादपदके द्वारा सानत्कुमार-माहेन्द्रकल्पके देवोंने त्रसनालीका कुछ कम तीन बटे चौदह, ब्रह्म-ब्रह्मोतर कल्पवालोंने कुछ कम साढ़े तीन बटे चौदह, लान्तव-कापिष्ठ कल्पवालोंने कुछ कम चार बटे चौदह, शुक्र-महाशुक्रवालोंने कुछ कम साढ़े चार बटे चौदह और शतार-सहस्रार कल्पवालोंने कुछ कम पाँच बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्र स्पर्श किया है। स्वस्थानस्वस्थानकी अपेक्षा सर्वत्र लोकका असंख्यातवाँ भाग स्पर्श किया है। आनतसे लेकर अच्युत कल्प तकके देवोंने अतीतकालमें विहारवत्स्वस्थान, वेदना, कषाय विक्रिया और मारणान्तिकपदके द्वारा त्रसनालीका कुछ कम छै बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्र स्पर्श किया है, क्योंकि चित्रा पृथिवीके ऊपरके तलसे नीचे इन देवोंका गमन नहीं होता ऐसी आगमग्रन्थोंकी मान्यता है। इस प्रकार सर्वत्र अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवालोंका स्पर्शन जानना चाहिये। अच्युत स्वर्गसे ऊपर अनुत्कृष्ट विभक्तिवालोंका भी स्पर्शन लोकका असंख्यातवाँ भाग ही है। तथा इन सबमें उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवालोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है यह स्पष्ट ही है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा

§ ३२. कालो दुविहो—जहण्णओ उक्कस्सओ चेदि । उक्कस्सए पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० उक्क० पदेस० जह० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। अणुक्क० सव्वद्धा। एवं सव्वणेरइय-सव्वतिरिक्ख-मणुस्स-देव-भवणादि जाव सहस्सारो त्ति । मणुसपज्ज०-मणुसिणीसु मोह० उ० जह० एगसमओ, उक्क० संखेज्जा समया। अणुक्क० सव्वद्धा। एवमाणदादि जाव सव्वट्ठसिद्धि त्ति । मणुसअपज्ज० मोह० उक्क० ओघं। अणुक्क० जह० खुद्दाभवग्गहणं समऊणं, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति ।

तक अपने अपने स्पर्शनको जानकर स्पर्शन घटित कर लेना चाहिये। जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिकी अपेक्षा भी इसी प्रकार स्पर्शन जान लेना चाहिये।

§ ३२. काल दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टसे प्रयोजन है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवालोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अनुत्कृष्ट विभक्तिवालोंका काल सर्वदा है। इसी प्रकार, सब नारकी, सब तिर्यञ्च, सामान्य मनुष्य, सामान्य देव और भवनवासी से लेकर सहस्रार स्वर्गतकके देवोंमें जानना चाहिए। मनुष्यपर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवालोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। अनुत्कृष्ट विभक्तिवालोंका काल सर्वदा है। इसी प्रकार आनतसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें जानना चाहिए। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट विभक्तिवालोंका काल ओघकी तरह है। अनुत्कृष्ट विभक्तिवालोंका जघन्य काल एक समय कम क्षुद्रभवग्रहणप्रमाण है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

विशेषार्थ—पहले एक जीवकी अपेक्षा कालका निरूपण किया है। अब नाना जीवोंकी अपेक्षा काल बतलाते हैं। यदि ओघसे उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव एक समय तक होकर द्वितीयादिक समयोंमें नहीं हुए तो उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय प्राप्त होता है और यदि उपक्रमण काल तक निरन्तर उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव होते रहे तो उत्कृष्ट काल आवलीके असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होता है। तथा ओघसे अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव सदा पाये जाते हैं। ऐसा कोई समय नहीं है जब अनुत्कृष्ट विभक्तिवाले जीव न हों, क्योंकि सभी संसारी जीव मोहसे बद्ध हैं। मूलमें सब नारकी आदि और जितनी मार्गणाएँ गिनाई हैं उनमें भी यह ओघव्यवस्था घट जाती है, अतः उनके कथनको ओघके समान कहा। मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनी संख्यात हैं, अतः यहाँ उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट काल संख्यात समय कहा। सर्वार्थसिद्धिमें भी यही व्यवस्था जाननी चाहिये। आनतादिकमें यद्यपि असंख्यात जीव हैं तो भी यहाँ मनुष्य ही उत्पन्न होते हैं, अतः यहाँ भी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट काल संख्यात समय प्राप्त होता है। मनुष्य अपर्याप्त सान्तर मार्गणा है और उसका जघन्य काल क्षुद्र भवग्रहण और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अतः उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले कुछ जीव मनुष्य अपर्याप्तक हुए और एक समय तक उत्कृष्ट विभक्तिके साथ रहकर अनुत्कृष्ट विभक्तिवाले हो गये। तथा क्षुद्र भवग्रहण काल तक रहकर मरकर अन्य पर्यायमें चले गये तो मनुष्य अपर्याप्त उत्कृष्ट विभक्तिवालोंका जघन्य काल एक समय और अनुत्कृष्टविभक्तिवालोंका जघन्य

§ ३३. जहण्णए पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० जह० पदेसवि० ज० एगस०, उक्क० संखेज्जा समया । अज० सव्वद्धा । एवं सव्वमग्गणासु णेदव्वं । णवरि मणुस्सअपज्ज० अज० अणुक्क०भंगो । एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति ।

§ ३४. अंतरं दुविहं—जहण्णमुक्कस्सं चेदि । उक्कस्से पयदं । दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० उक्क०पदेसवि० अंतरं केव० कालादो होदि ? जह० एगसमओ, उक्क० अणंतकालं । अणुक्क० णत्थि अंतरं । एवं सव्वमग्गणासु । णवरि मणुस्सअपज्ज० अणुक्क० ज० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति ।

काल एक समय कम क्षुद्रभवग्रहणप्रमाण प्राप्त होता है । तथा उत्कृष्ट काल क्रमशः आवलिके असंख्यातवें भाग और पल्यके असंख्यातवें भाग होता है, क्योंकि मनुष्य अपर्याप्त मार्गणाका उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग है । उतने काल तक उसमें अनुत्कृष्ट विभक्तिवाले रहे फिर एक भी जीव उस मार्गणामें नहीं रहा । आगे अनाहारक मार्गणा तक अपनी अपनी मार्गणाकी विशेषता जानकर पूर्वोक्त विधिसे कालका कथन करना चाहिये । जो सान्तर मार्गणाएँ हों उनमें लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्योंके समान उनके अन्तर कालका विचार कर कथन करना चाहिये और निरन्तर मार्गणाओंमें जहाँ जितना काल सम्भव हो इसका विचार करके कालका कथन करना चाहिये ।

§ ३३. जघन्य से प्रयोजन है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवालोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है । अजघन्य विभक्तिवालोंका काल सर्वदा है । इसी प्रकार सब मार्गणाओंमें ले जाना चाहिये । इतना विशेष है कि मनुष्य अपर्याप्तकोंमें अजघन्य विभक्तिवालोंका काल अनुत्कृष्ट विभक्तिवालोंकी तरह जानना चाहिए । इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये ।

विशेषार्थ—ओघसे और आदेशसे अजघन्य विभक्तिवाले जीव अनुत्कृष्ट विभक्तिवालोंकी तरह सदा पाये जाते हैं और जघन्य प्रदेशविभक्तिवालोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है, क्योंकि क्षपकश्रेणीके निरन्तर आरोहणका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय ही है । इसी प्रकार निरन्तर सब मार्गणाओंमें यथायोग्य जानना चाहिये। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें अजघन्य विभक्तिवालोंका काल अनुत्कृष्ट विभक्तिवालोंकी ही तरह जघन्यसे एक समय कम क्षुद्र भवग्रहणप्रमाण और उत्कृष्टसे पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण होता है उसका कारण पूर्वमें बतलाया है । इसी प्रकार यथायोग्य अन्य सान्तर मार्गणाओंमें जानना चाहिये ।

§ ३४. अन्तर दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टसे प्रयोजन है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवालोंका अन्तरकाल कितना है ? जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल है । अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवालोंका अन्तर नहीं है । इसी प्रकार सब मार्गणाओंमें जानना चाहिए । इतना विशेष है कि मनुष्य अपर्याप्तकोंमें अनुत्कृष्ट विभक्तिवालोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्य के असंख्यातवें भागप्रमाण है । इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये ।

§ ३५. जहण्णए पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० ज० अज० उक्कस्साणुक्कस्सभंगो । एवं सव्वमग्गणासु णेदव्वं ।

§ ३६. भावो सव्वत्थ ओदइओ भावो । एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

§ ३७. अप्पाबहुगं दुविहं—जहण्णमुक्कस्सं चेदि । उक्कस्सए पयदं । दुविहो णि०–ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० सव्वत्थोवा उक्क०पदेसविहत्तिया जीवा। अणुक्क०पदेसवि० जीवा अणंतगुणा । एवं तिरिक्खोघं । आदेसेण णेरइएसु सव्वत्थोवा मोह० उक्क०पदेसवि० जीवा। अणुक्क०पदेसवि० जीवा असंखे०गुणा। एवं सव्वणेरइय-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-मणुस्स-मणुस्सअपज्ज०-देव-भवणादि जाव अवराइद त्ति। मणुसपज्ज०-मणुसिणी-सव्वट्ठसिद्धि० सव्वत्थोवा मोह० उक्क०पदेसवि० जीवा। अणुक्क०पदेसवि० जीवा संखेज्जगुणा । एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति । एवं जहण्णप्पाबहुअं वत्तव्वं । णवरि जहण्णाजहण्णणिद्देसो कायव्वो ।

एवं बावीसअणिओगद्दाराणि समत्ताणि ।

---

§ ३५. जघन्यसे प्रयोजन है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी जघन्य विभक्तिवालोंका अन्तर उत्कृष्ट विभक्तिवालोंके अन्तरके समान है और अजघन्य विभक्तिवालोंका अन्तर अनुत्कृष्ट विभक्तिवालोंके अन्तरके समान है। इस प्रकार सब मार्गणाओंमें जानना चाहिये ।

विशेषार्थ—चूँकि अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले सदा पाये जाते हैं अतः उनके अन्तरका कोई प्रश्न ही नहीं है। किन्तु मनुष्य अपर्याप्त मार्गणा चूँकि सान्तर मार्गणा है और उसका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भाग होता है अतः उसमें अनुत्कृष्ट विभक्तिवालोंका भी जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर उतना ही कहा है। इसी प्रकार अन्य सान्तर मार्गणाओंमें यथायोग्य जानना चाहिये। उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवालोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अनन्तकाल है। अर्थात् यदि उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाला एक भी जीव न हो तो कमसे कम एक समय तक और अधिकसे अधिक अनन्तकाल तक नहीं होता। इसी तरह जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिवालोंका भी अन्तर होता है।

§ ३६. भावकी अपेक्षा सर्वत्र औदयिक भाव है। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त जानना चाहिये ।

§ ३७. अल्पबहुत्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टसे प्रयोजन है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघ से मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव सब से थोड़े हैं। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव अनन्तगुणे हैं। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव सबसे थोड़े हैं। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, सामान्य मनुष्य, मनुष्यअपर्याप्त, सामान्य देव और भवनवासीसे लेकर अपराजितविमान पर्यन्तके देवोंमें जानना चाहिए। मनुष्यपर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव सबसे थोड़े हैं। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये। इसी प्रकार जघन्य अल्पबहुत्व कहना चाहिये। इतना विशेष है कि उत्कृष्ट और अनुत्कृष्टके स्थानमें जघन्य और अजघन्य कहना चाहिये।

§ ३८. भुजगारविहत्तीए तत्थ इमाणि तेरस अणिओगद्दाराणि—समुक्कित्तणादि जाव अप्पाबहुए त्ति। तत्थ समुक्कित्तणाणुगमेण दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण अत्थि० मोह० भुज०-अप्पदर-अवट्ठिदविहत्तिया जीवा। एवं सव्व-मग्गणासु णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

§ ३९. सामित्ताणु० दुविहो णिद्देसो–ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० भुज०-अप्प०-अवट्ठिदाणि[1] कस्स? मिच्छादिट्ठिस्स सम्मादिट्ठिस्स वा। एवं सव्वणेरइय-तिरिक्खचउक्क०–मणुस्सतिय-देव०-भवणादि जाव उवरिमगेवज्जा त्ति। पंचिंदिय-तिरिक्खअपज्ज० मोह० भुज०-अप्पद०-अवट्ठि० कस्स? अण्णदरस्स मिच्छादिट्ठिस्स। एवं मणुसअपज्ज०। अणुद्दिसादि जाव सव्वट्ठसिद्धि त्ति एवं चेव। णवरि सम्मादिट्ठिस्से

विशेषार्थ—ओघसे और आदेशसे उत्कृष्ट विभक्तिवाले जीव सबसे थोड़े हैं। जो राशियाँ अनन्त हैं उनमें उत्कृष्ट विभक्तिवालोंसे अनुत्कृष्ट विभक्तिवाले अनन्तगुणे हैं। जिनकी राशि असंख्यात हैं उनमें उत्कृष्ट विभक्तिवालोंसे अनुत्कृष्ट विभक्तिवाले असंख्यातगुणे हैं और जिनकी राशि संख्यात हैं उनमें उत्कृष्ट विभक्तिवालोंसे अनुत्कृष्ट विभक्तिवाले संख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले सबसे कम हैं और उनसे अजघन्य प्रदेशविभक्तिवाले अपनी अपनी राशिके अनुसार अनन्तगुणे, असंख्यातगुणे या संख्यातगुणे हैं।

इस प्रकार बाईस अनुयोगद्वार समाप्त हुए।

§ ३८. भुजकारविभक्तिका कथन करते हैं। उसमें समुत्कीर्तनासे लेकर अल्पबहुत्वपर्यन्त तेरह अनुयोगद्वार होते हैं। उनमें समुत्कीर्तनानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थित विभक्तिवाले जीव हैं। इसी प्रकार सब मार्गणाओंमें जानना चाहिये। अर्थात् सभी मार्गणाओंमें मोहनीयकी उक्त तीनों विभक्तिवाले जीव पाये जाते हैं।

विशेषार्थ—ओघसे और आदेशसे मोहनीयकर्मकी मूलप्रकृतिमें भुजगार, अल्पतर और अवस्थित ये तीन ही विभक्तियाँ होती हैं, चौथी अवक्तव्य विभक्ति नहीं होती, क्योंकि मोह-नीयकी सत्ता न रहकर यदि पुनः उसकी सत्ता हो तो अवक्तव्य विभक्ति हो सकती थी, किन्तु ऐसा संभव नहीं है, क्योंकि दसवें गुणस्थानके अन्तमें मोहनीयकी सत्त्वव्युच्छित्ति करके जीव क्षीणकषाय हो जाता है, फिर वह लौटकर नीचे नहीं आता, अतः अवक्तव्यविभक्ति नहीं होती।

§ ३९. स्वामित्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थित विभक्तियाँ किसके होती हैं? मिथ्यादृष्टि अथवा सम्यग्दृष्टिके होती हैं। इसी प्रकार सब नारकी, चार प्रकारके तिर्यञ्च, तीन प्रकारके मनुष्य, सामान्य देव, और भवनवासीसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिये। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें मोहनीयकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थित विभक्तियां किसके होती हैं? किसी भी मिथ्यादृष्टि जीवके होती हैं। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्तकोंमें जानना चाहिये। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें इसी प्रकार जानना चाहिये। इतना विशेष है कि

---

१. आ०प्रतौ 'भुज०अवट्ठिदाणि' इति पाठः।

त्ति वत्तव्वं । एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति ।

§ ४०. कालाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण । ओघेण मोह० भुज०-अप्पद० ज० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । अवट्ठि० ज० एगसमओ, उक्क० संखेज्जा समया । एवं सव्वणेरइय-सव्वतिरिक्ख-सव्वमणुस्स-सव्वदेवे त्ति । णवरि पंचिं०तिरि०-अपज्ज० मोह० भुज०-अप्प० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु० । एवं मणुसअपज्ज० । एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति ।

सम्यग्दृष्टिके कहना चाहिये । इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये ।

विशेषार्थ—यह प्रदेशसत्कर्मविभक्तिका प्रकरण है, अतः यहाँ सत्तामें स्थित मोहनीयके कर्मप्रदेशोंके बढ़ानेको भुजगारविभक्ति कहते हैं, घटानेको अल्पतर विभक्ति कहते हैं और उतनेके उतने ही रहनेको अवस्थितविभक्ति कहते हैं । ओघसे और आदेशसे ये तीनों ही विभक्तियाँ मिथ्यादृष्टिके भी होती हैं और सम्यग्दृष्टि के भी होती हैं, क्योंकि बन्ध और निर्जरावश दोनों ही के सत्कर्मप्रदेशोंमें वृद्धि भी होती है, हानि भी होती है और वृद्धि-हानिके बिना तदवस्थता भी रहती है । किन्तु पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त तथा मनुष्य अपर्याप्त सम्यग्दृष्टि नहीं होते, अतः उनमें तीनों विभक्तियोंका स्वामी मिथ्यादृष्टि जीव ही होता है । इसी प्रकार अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके सब देव सम्यग्दृष्टि ही होते हैं, अतः उनमें सब विभक्तियोंका स्वामी सम्यग्दृष्टि ही होता है । अन्य मार्गणाओंमें इसी प्रकार अपनी अपनी विशेषता जानकर घटित कर लेना चाहिये ।

§ ४०. कालानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी भुजगार और अल्पतरविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है । इस प्रकार सब नारकी, सब तिर्यञ्च, सब मनुष्य और सब देवोंमें जानना चाहिये । इतना विशेष है कि पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें मोहनीयकी भुजगार और अल्पतर विभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्तकोंमें जानना चाहिये । इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये ।

विशेषार्थ—ओघसे और आदेशसे भी तीनों विभक्तियोंका जघन्य काल एक समय है, क्योंकि विवक्षित समयमें किसी जीवने भुजगार, अल्पतर या अवस्थित विभक्ति की तो दूसरे समयमें उससे भिन्न दूसरी विभक्ति उसके हो सकती है तथा ओघसे और आदेशसे भुजगार और अल्पतर विभक्तिका उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है, क्योंकि भुजगार और अल्पतर विभक्तियाँ अधिकसे अधिक पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण काल तक पाई जाती हैं आगे नहीं । अवस्थित विभक्तिका जघन्य काल एक समय तो पूर्ववत् ही है । तथा उत्कृष्ट काल जो संख्यात समय कहा है सो अवस्थितके कालको देखकर यह प्ररूपणा की है । नारकी आदि अन्य मार्गणाओंमें भी यह व्यवस्था बन जाती है, इसलिये इनके कथनको ओघके समान कहा है । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च लब्ध्यपर्याप्त तथा मनुष्य लब्ध्यपर्याप्तकी उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त है, अतः इनके भुजगार और अल्पतर प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा है । अन्य मार्गणाओंमें अपनी अपनी विशेषता जानकर यह काल घटित करना चाहिए ।

§ ४१. अंतराणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण। ओघेण मोह० भुज०-अप्प० अंतरं ज० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० असंखेज्जा लोगा। एवं तिरिक्खोघे। आदेसेण णेरइएसु भुज०-अप्पद० अंतरमोघं। अवट्ठिद० ज० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि। एवं सव्वणेरइय-पंचिं०तिरि०तिय-मणुसतिय-देव-भवणादि जाव सव्वट्ठसिद्धि त्ति। णवरि अवट्ठिदस्स सगसगट्ठिदी देसूणा। पंचिं०तिरि०अपज्ज० मोह० तिण्हं पदाणं ज० एगस०, उक्क० अंतोमु०। एवं मणुसअपज्ज०। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

---

§ ४१. अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी भुजगार और अल्पतर विभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोकप्रमाण है। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। आदेशसे नारकियोंमें भुजगार और अल्पतरविभक्तिका अन्तर ओघकी तरह है। अवस्थित-विभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। इसी प्रकार सब नारकी, तीन प्रकारके पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, तीन प्रकार के मनुष्य, सामान्य देव और भवनवासीसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें जानना चाहिये। इतना विशेष है कि अवस्थितका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी अपनी स्थितिप्रमाण है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें मोहनीय-की तीनों विभक्तियोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्तकोंमें जानना चाहिए। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

विशेषार्थ—ओघसे भुजगार और अल्पतर प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तरकाल एक समय है, क्योंकि एक समय तक विवक्षित विभक्ति रहकर दूसरे समयमें अन्य विभक्तिके हो जानेसे जघन्य अन्तरकाल एक समय प्राप्त होता है। तथा उत्कृष्ट अन्तरकाल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है, क्योंकि, भुजगार या अल्पतर प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट-काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिये उक्तप्रमाण अन्तरकाल प्राप्त हो जाता है। अवस्थित विभक्तिका जघन्य अन्तरकाल एक समय पूर्ववत् ही है। तथा उत्कृष्ट अन्तरकाल असंख्यात लोकप्रमाण है, क्योंकि क्षपित कर्मांशरूप परिणाम असंख्यात लोकप्रमाण हैं, इसलिये इतने काल तक अवस्थित प्रदेशविभक्ति न हो यह सम्भव है। समान्य तिर्यञ्चोंमें यह अन्तर-काल बन जाता है, इसलिये इसके कथनको ओघके समान कहा है। नारकियोंमें अवस्थित विभक्तिके उत्कृष्ट अन्तरको छोड़कर शेष सब अन्तरकाल ओघके समान है, इसलिये यह सब अन्तरकाल ओघके समान कहा है। नरककी ओघस्थिति तेतीस सागर है, इसलिये अवस्थितका उत्कृष्ट अन्तर तेतीस सागरसे कुछ कम प्राप्त होता है, क्योंकि नरकमें उत्पन्न होनेके प्रारम्भमें और अन्तमें जिसने अवस्थितविभक्ति की और मध्यमें अल्पतर या भुजगार करता रहा उसके अवस्थित प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर बन जाता है। मूलमें जो अन्य मार्गणाएँ गिनाई हैं उनमें भी अवस्थित विभक्तिके उत्कृष्ट अन्तरकालको छोड़कर पूर्वोक्त व्यवस्था बन जाती है। तथा जिस मार्गणाका जितना उत्कृष्ट काल है उसमेंसे कुछ कम कर देने पर उस उस मार्गणामें अवस्थित विभक्तिका उत्कृष्ट अन्तर काल बन जाता है। पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च लब्ध्यपर्याप्त व मनुष्य लब्ध्यपर्याप्तकी उत्कृष्ट कायस्थिति अन्तर्मुहूर्त है, इसलिये इनमें सब

§ ४२. णाणाजीवेहि भंगविचयाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण भुज०-अप्पद०-अवट्ठि० णियमा अत्थि । एवं तिरिक्खोघे । आदेसेण णेरइएसु मोह० भुज०-अप्पद० णियमा अत्थि । सिया एदे च अवट्ठिदविहत्तिओ च १ । सिया एदे च अवट्ठिदविहत्तिया च २ । धुवेण[1] सह तिण्णि ३ । एवं सव्वणेरइय-सव्वपंचिंदिय-तिरिक्ख-मणुसतिय-देव-भवणादि जाव सव्वट्ठसिद्धि त्ति । मणुसअपज्ज० मोह० तिण्णि पदा भयणिज्जा । भंगा २६ । एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति ।

पदोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय व उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त कहा है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक अपनी अपनी स्थितिका विचार करके तीनों पदोंका अन्तरकाल जान लेना चाहिये ।

§ ४२. नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचय अनुगमसे निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे भुजगार, अल्पतर और अवस्थितविभक्तिवाले जीव नियमसे हैं । इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए । आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी भुजगार और अल्पतर विभक्तिवाले जीव नियमसे हैं । कदाचित् अनेक जीव भुजगार और अल्पतरविभक्तिवाले हैं और एक जीव अवस्थित विभक्तिवाला है १ । कदाचित् अनेक जीव भुजगार और अल्पतर-विभक्तिवाले हैं और अनेक जीव अवस्थितविभक्तिवाले हैं २ । ध्रुव भंगके मिलानेसे ये तीन भंग होते हैं । इसी प्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, तीन प्रकारके मनुष्य, सामान्य देव और भवनवासीसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें जानना चाहिए । मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मोहनीयके तीनों पद भजनीय हैं । भंग छब्बीस होते हैं । इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये ।

विशेषार्थ—ओघसे तीनों विभक्तिवाले नाना जीव सदा पाये जाते हैं, इसलिये अन्य किसी भंगको स्थान ही नहीं है । सामान्य तिर्यञ्चोंमें भी तीनों विभक्तिवाले सदा पाये जाते हैं, इसलिये इनकी प्ररूपणा ओघके समान है । नारकियोंमें मोहनीयकी भुजगार और अल्पतर विभक्तिवाले जीव नियमसे होते हैं और अवस्थित विभक्तिवाले विकल्पसे होते हैं, अतः मोहनीयकी भुजगार और अल्पतर विभक्तिवाले नियमसे हैं यह एक ध्रुव भंग होता है जो कि सदा रहता है । इसके सिवा दो भंग होते हैं जो मूलमें बतलाये हैं । सब गतियोंमें ये ही तीन भंग होते हैं । केवल मनुष्य अपर्याप्तकोंमें अपवाद है । चूँकि मनुष्य अपर्याप्त सान्तर मार्गणा है अतः उसमें तीनों विभक्तियाँ विकल्पसे होती हैं और इस तरह २६ भंग होते हैं । वे इस प्रकार है—कदाचित् भुजकार विभक्तिवाला एक जीव होता है १ । कदाचित् अनेक जीव होते हैं २ । कदाचित् अल्पतर विभक्तिवाला एक जीव होता है ३ । कदाचित् अनेक जीव होते हैं ४ । कदाचित् अवस्थितविभक्तिवाला एक जीव होता है ५ । कदाचित् अनेक जीव होते हैं ६ । कदाचित् भुजगारवाला एक जीव और अल्पतरवाला एक जीव होता है ७ । कदाचित् भुजगारवाले अनेक जीव और अल्पतरवाला एक जीव होता है ८ । कदाचित् भुजगारवाला एक जीव और अल्पतरवाले अनेक जीव होते हैं ९ । कदाचित् भुजगारवाले अनेक जीव और अल्पतरवाले अनेक जीव होते हैं १० । कदाचित् भुजगारवाला एक जीव और अवस्थितवाला एक जीव होता है ११ । कदाचित् भुजगारवाले अनेक जीव और अवस्थित-

---

१. ता०प्रतौ 'दुवेण' इति पाठः ।

§ ४३. भागाभागाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० भुज० संखेज्जा भागा । अप्प० संखे०भागो । अवट्ठि० असंखे०भागो । एवं सव्वणेरइय-सव्वतिरिक्ख-मणुस-मणुसअपज्ज०-देव-भवणादि जाव अवराइद त्ति । मणुसपज्ज०-मणुसिणी-सव्वट्ठसिद्धी० एवं चेव । णवरि अवट्ठिद० संखे०भागो । एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति ।

वाला एक जीव होता है १२ । कदाचित् भुजगारवाला एक जीव और अवस्थितवाले अनेक जीव होते हैं १३ । कदाचित् भुजगारवाले अनेक जीव और अवस्थितवाले अनेक जीव होते हैं १४ । कदाचित् अल्पतरवाला एक जीव और अवस्थितवाला एक जीव होता है १५ । कदाचित् अल्पतरवाले अनेक जीव और अवस्थितवाला एक जीव होता है १६ । कदाचित् अल्पतरवाला एक जीव और अवस्थितवाले अनेक जीव होते हैं १७ । कदाचित् अल्पतरवाले अनेक जीव और अवस्थितवाले अनेक जीव होते हैं १८ । कदाचित् भुजगारवाला एक जीव, अल्पतरवाला वाला एक जीव और अवस्थित वाला एक जीव होता है १९ । कदाचित् भुजगारवाले अनेक जीव, अल्पतरवाला एक जीव और अवस्थितवाला एक जीव होता है २० । कदाचित् भुजगार वाला एक जीव, अल्पतरवाला एक जीव और अवस्थितवाले अनेक जीव होते हैं २१ । कदाचित् भुजगारवाला एक जीव, अल्पतरवाले अनेक जीव और अवस्थितवाला एक जीव होता है २२ । कदाचित् भुजगारवाला एक जीव, अल्पतरवाले अनेक जीव और अवस्थित-वाले अनेक जीव होते हैं २३ । कदाचित् भुजगारवाले अनेक जीव, अल्पतरवाला एक जीव और अवस्थितवाले अनेक जीव होते हैं २४ । कदाचित् भुजगारवाले अनेक जीव, अल्पतरवाले अनेक जीव और अवस्थितवाला एक जीव होता है २५ । कदाचित् भुजगारवाले अनेक जीव अल्पतरवाले अनेक जीव और अवस्थितवाले अनेक जीव होते हैं २६ । इस प्रकार ६ भंग एक संयोगी, १२ भंग द्विसंयोगी और ८ भंग त्रिसंयोगी होते हैं । कुल मिलाकर २६ भंग होते हैं । सान्तर और निरन्तर मार्गणाओंकी अपेक्षा गतिमार्गणामें जो भंगोंकी प्रक्रिया बतलाई है आगेकी मार्गणाओंमें भी उसी प्रकार यथायोग्य घटित कर लेना चाहिये ।

§ ४३. भागाभागानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी भुजगारविभक्तिवाले जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं, अल्पतरविभक्तिवाले जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं और अवस्थितविभक्तिवाले जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं । इसी प्रकार सब नारकी, सब तिर्यञ्च, सामान्य मनुष्य, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव और भवनवासी-से लेकर अपराजित विमानतकके देवोंमें जानना चाहिए । मनुष्यपर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें इसी प्रकार जानना चाहिए । इतना विशेष है कि अवस्थित विभक्तिवाले जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं । इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये ।

विशेषार्थ—भागाभागानुगमसे यह बतलाया गया है कि विवक्षित राशिमें अमुक अमुक विभक्तिवाले कितने भागप्रमाण हैं ? और परिमाणानुगमसे उनका परिमाण अर्थात् संख्या बतला दी गई है । जैसे ओघसे मोहनीयकी प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंमें संख्यात बहु-भाग भुजगारविभक्तिवाले जीव होते हैं, संख्यातैक भागप्रमाण अल्पतर विभक्तिवाले जीव होते हैं और असंख्यातवें भागप्रमाण अवस्थित विभक्तिवाले जीव होते हैं । फिर भी इन तीनों विभक्तिवालोंकी संख्या अनन्त है । मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी, और सर्वार्थसिद्धि-वालोंका प्रमाण चूँकि संख्यात है, अतः उनमें अवस्थित विभक्तिवाले भी संख्यातवें भागप्रमाण कहे हैं । शेष कथन स्पष्ट ही है ।

§ ४४. परिमाणाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० भुज०-अप्पद०-अवट्ठि० दव्वपमाणेण केत्तिया ? अणंता । एवं तिरिक्खोघं । सेसमग्गणासु सव्वपदा असंखेज्जा । णवरि मणुसपज्ज०-मणुसिणी-सव्वट्ठसिद्धि० तिण्णि पदा संखेज्जा । एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति ।

§ ४५. खेत्ताणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मोह० भुज०-अप्पद०-अवट्ठि० केवडि खेत्ते ? सव्वलोगे । एवं तिरिक्खोघं । सेसमग्गणासु मोह० तिण्णि पदा० लोग० असंखे०भागे० । एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति ।

§ ४६. पोसणाणुगमेण दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण० मोह० भुज०-अप्पद०-अवट्ठि० केवडियं खेत्तं पोसिदं ? सव्वलोगो । एवं तिरिक्खोघं । आदेसेण णेरइएसु मोह० तिण्णिपद० लोग० असंखे०भागो छ चोद्दस० देसूणा । पढमपुढवि० खेत्तं । विदियादि जाव सत्तमपुढवि-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-सव्वमणुस-सव्वदेव मोह० तिण्हं पदाणं सगसगपोसणं जाणिदूण वत्तव्वं । एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति ।

---

§ ४४. परिमाणानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थितविभक्तिवाले जीव द्रव्यप्रमाणसे कितने हैं ? अनन्त हैं । इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए । शेष मार्गणाओंमें सब पदवाले जीव असंख्यात हैं । इतना विशेष है कि मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिमें तीनों विभक्तिवालोंका परिमाण संख्यात है । इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये ।

§ ४५. क्षेत्रानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंका कितना क्षेत्र है ? सर्वलोक क्षेत्र है । इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिये । शेष मार्गणाओंमें मोहनीयकी तीनों विभक्तिवाले जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है । इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये ।

§ ४६. स्पर्शनानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थित विभक्तिवालोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? सर्वलोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिये । आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी तीनों विभक्तिवालोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका और त्रसनालीके कुछ कम छै बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । पहली पृथिवीमें क्षेत्रकी तरह स्पर्शन जानना चाहिये । दूसरीसे लेकर सातवीं पृथिवी तकके नारकी, सब पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च, सब मनुष्य और सब देवोंमें मोहनीयकी तीनों विभक्तिवालोंका अपना अपना स्पर्शन जानकर कहना चाहिये । इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये ।

विशेषार्थ—तीनों विभक्तिवालोंका क्षेत्र और स्पर्शन जैसे पहले मोहनीयकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट विभक्तिवालोंका क्षेत्र और स्पर्शन घटित करके बतलाया है वैसे ही जानना चाहिये ।

§ ४७. कालाणुगमेण दुविहो णि०—ओघेण आदे० । ओघेण मोह० तिण्णिपद-वि० केवचिरं० कालादो होंति ? सव्वद्धा । एवं तिरिक्खोघं । आदेसेण णेरइएसु मोह० भुज०-अप्पद० ओघं । अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो । एवं सव्वणेरइय-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-मणुस्स-देव-भवणादि जाव अवराइदं ति । एवं मणुसपज्ज० मणुसिणीसु । णवरि अवट्ठि० ज० एगसमओ, उक्क० संखेज्जा समया । एवं सव्वट्ठसिद्धि० । मणुसअपज्ज० भुज०-अप्प० ज० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०-भागो । अवट्ठि० णेरइयभंगो । एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति ।

§ ४८. अंतराणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० तिण्हं

---

§ ४७. कालानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी तीनों विभक्तिवाले जीवोंका कितना काल है ? सर्वदा है। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिये। आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी भुजगार और अल्पतरविभक्ति-वालोंका काल ओघकी तरह है। अवस्थित विभक्तिवालोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसी प्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, सामान्य मनुष्य, सामान्य देव और भवनवासीसे लेकर अपराजित विमानतकके देवोंमें जानना चाहिये। मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें भी इसी प्रकार जानना चाहिये। इतना विशेष है कि अवस्थितविभक्तिवालोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। इसी प्रकार सर्वार्थसिद्धिमें जानना चाहिये। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें भुजगार और अल्पतर विभक्तिवालोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थितविभक्तिवालोंका काल नारकियोंकी तरह जानना चाहिये। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

विशेषार्थ—मोहनीयकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थित प्रदेशविभक्तिको करनेवाले नाना जीव सदा पाये जाते हैं, इसलिये इनका काल सदा कहा। सामान्य तिर्यञ्चोंमें भी यह व्यवस्था घट जाती है इसलिये उनमें भी उक्त विभक्तियोंका काल सदा कहा। नारकियोंमें यद्यपि भुजगार और अल्पतरका काल सदा है पर अवस्थितके कालमें फरक है। बात यह है कि नाना जीव अवस्थितविभक्तिको एक समय तक करके द्वितीयादि समयोंमें अन्य विभक्तिको भी प्राप्त हो सकते हैं और तब अवस्थित विभक्तिवाला एक भी जीव नहीं रहता है, इसलिए इसका जघन्य काल एक समय है। अब यदि नाना जीव निरन्तर अवस्थित प्रदेशविभक्तिको करते हैं तो उपक्रम कालके अनुसार आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण काल तक ही कर सकते हैं, इसलिये अवस्थित प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट काल आवलीके असंख्यातवें भागप्रमाण बतलाया है। मूलमें और जितनी मार्गणाएं बतलाई हैं उनमें भी इसी प्रकार जानना चाहिये। किन्तु मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनी संख्यात हैं, इसलिये इनमें अव-स्थित विभक्तिका उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। सर्वार्थसिद्धिमें मनुष्य पर्याप्तकोंके समान काल घटित कर लेना चाहिये। लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्य सान्तर मार्गणा है। इस मार्गणाका उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिये इसमें भुजगार और अल्पतरका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। पर अवस्थित विभक्तिका उत्कृष्ट काल पूर्वोक्त विधिसे आवलीके असंख्यातवें भागप्रमाण ही प्राप्त होता है।

§ ४८. अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे

पदाणं विहत्तियाणं णत्थि अंतरं । एवं तिरिक्खोघं । आदेसेण णेरइएसु भुज०-अप्प० णत्थि अंतरं । अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० असंखेज्जा लोगा । एवं सव्वणेरइय-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-मणुस्सतिय-सव्वदेवा त्ति । मणुसअपज्ज० भुज०-अप्पद० ज० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । अवट्ठि० णेरइयभंगो । एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति ।

§ ४९. भावो सव्वत्थ ओदइओ भावो ।

§ ५०. अप्पाबहुअं दुविहं—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० सव्वत्थोवा अवट्ठिदविहत्तिया जीवा । अप्पदरविहत्ति० जीवा असंखे०गुणा । भुज०विहत्ति० संखे०गुणा । एवं सव्वणेरइय-सव्वतिरिक्ख-मणुस-मणुसअपज्ज०-देव-भवणादि जाव अवराइदो त्ति । मणुसपज्ज०[१] -मणुसिणी-सव्वट्ठसिद्धि० सव्वत्थोवा मोह० अवट्ठि०-

मोहनीयकी तीनों पदविभक्तियोंका अन्तर नहीं है। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिये। आदेशसे नारकियोंमें भुजगार और अल्पतर विभक्तिवालोंका अन्तर नहीं है। अवस्थितविभक्तिवालोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोकप्रमाण है। इसी प्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, तीन प्रकारके मनुष्य और सब देवोंमें जानना चाहिये। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें भुजगार और अल्पतर विभक्तिवालोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्य के असंख्यातवें भाग प्रमाण है। अवस्थितविभक्तिवालों का अन्तर नारकियों के समान है। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

विशेषार्थ—ओघसे तथा सामान्य तिर्यञ्चोंमें तीनों विभक्तिवाले जीव सदा पाये जाते हैं, इसलिये उनका अन्तरकाल नहीं है। आदेशसे भी सामान्य नारकियोंमें भुजगार और अल्पतर विभक्तिवाले जीव सदा पाये जाते हैं, इसलिये उनमें अन्तरकाल नहीं है। हाँ अवस्थितविभक्तिवाले जीव कमसे कम एक समय तक और अधिकसे अधिक आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण काल तक पाये जाते हैं अतः उनमें अन्तर होता है और अन्तरका जघन्य-प्रमाण एक समय और उत्कृष्ट प्रमाण असंख्यात लोक प्रमाण है। अर्थात् इतने काल तक नारकियोंमें अवस्थितविभक्तिवाले जीव नहीं पाये जावे यह सम्भव है। उसके बाद कोई न कोई जीव अवस्थित विभक्तिवाला अवश्य होता है। सब नारकी आदि अन्य गतियोंमें अन्तरकी यही व्यवस्था है। मात्र मनुष्य अपर्याप्त इसके अपवाद हैं। सो जानकर उनमें अन्तरकाल घटित कर लेना चाहिये।

§ ४९. भावानुगम की अपेक्षा सर्वत्र औदयिकभाव होता है।

§ ५०. अल्पबहुत्व दो प्रकार का है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी अवस्थित विभक्तिवाले जीव सबसे थोड़े हैं। अल्पतर विभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। भुजगार विभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इस प्रकार सब नारकी, सब तिर्यञ्च, सामान्य मनुष्य, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव और भवनवासीसे लेकर अपराजित विमान तक के देवोंमें जानना चाहिये। मनुष्यपर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें मोहनीयकी अवस्थित

१. आ०प्रतौ 'मणुसअपज्ज०' इति पाठः।

विहत्ति० जीवा। अप्प०विहत्ति० संखे०गुणा। भुज० संखेज्जगुणा। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

§ ५१. पदणिक्खेवे त्ति तत्थ इमाणि तिण्णि अणियोगद्दाराणि—समुक्कित्तणा सामित्तमप्पाबहुअं चेदि। तत्थ समुक्कित्तणं दुविहं—जह० उक्क०। उक्क० पय०। दुविहो णि०—ओघेण आदे०। ओघेण मोह० अत्थि उक्क० वड्ढी हाणी अवट्ठाणं च। एवं सव्वत्थ गइमग्गणाए। एवं जाव अणाहारे त्ति। एवं जहण्णयं पि णेदव्वं।

§ ५२. सामित्तं दुविहं—ज० उक्क०। उक्क० पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० उक्क० वड्ढी कस्स? अण्णद० एइंदियस्स हदसमुप्पत्तियकम्मस्स जो सण्णिपंचिंदियपज्जत्तएसु उववण्णल्लग्गो अंतोमुहुत्तमेगंताणुवड्ढीए वड्ढियूण तदो परिणामजोगं पदिदो तस्स उक्कस्सपरिणामजोगे वट्टमाणस्स उक्क० वड्ढी। तस्सेव से काले उक्कस्समवट्ठाणं। उक्क० हाणी कस्स? अण्णदरस्स खवगस्स सुहुमसांपराइयस्स चरिमसमए वट्टमाणयस्स।

§ ५३. आदेसेण णेरइएसु मोह० उक्क० वड्ढी कस्स? अण्णद० असण्णिस्स हदसमुप्पत्तियकम्मेण णेरइएसु उववण्णल्लग्गस्स अंतोमुहुत्तमेयंताणुवड्ढीए वड्ढियूण

विभक्तिवाले जीव सबसे थोड़े हैं। अल्पतर विभक्तिवाले उनसे संख्यातगुणे हैं और भुजगार विभक्तिवाले जीव उनसे भी संख्यातगुणे हैं। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

विशेषार्थ—ओघसे और आदेशसे अवस्थितविभक्तिवाले जीव सबसे थोड़े हैं। अल्पतर विभक्तिवाले उनसे अधिक होते हैं और भुजगार विभक्तिवाले उनसे भी अधिक होते हैं। कहाँ कितने अधिक होते हैं इसका प्रमाण मूलमें बतलाया ही है।

§ ५१. अब पदनिक्षेपका कथन करते हैं। उसमें ये तीन अनुयोगद्वार होते हैं—समुत्कीर्तना, स्वामित्व और अल्पबहुत्व। उसमें में समुत्कीर्तना के दो भेद हैं—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्ट से प्रयोजन है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीय की प्रदेशविभक्तिमें उत्कृष्ट वृद्धि, उत्कृष्ट हानि और उत्कृष्ट अवस्थान होते हैं। इसी प्रकार सर्वत्र गतिमार्गणामें जानना चाहिए। इस प्रकार अनाहारकपर्यन्त ले जाना चाहिए। इसी प्रकार जघन्यका भी कथन करके ले जाना चाहिये।

§ ५२. स्वामित्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्ट से प्रयोजन है। निर्देश दो प्रकार का है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीय की उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है? हत-समुत्पत्तिक कर्मवाला जो एकेन्द्रिय जीव संज्ञी पञ्चेन्द्रिय पर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुआ और अन्तर्मुहूर्त पर्यन्त एकान्तानुवृद्धि योगसे वृद्धिको प्राप्त होकर परिणामयोगस्थानको प्राप्त हुआ। उत्कृष्ट परिणाम योगस्थानमें वर्तमान उस जीवके उत्कृष्ट वृद्धि होती है। उसी जीवके अनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थान होता है। उत्कृष्ट हानि किसके होती है? सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानके अन्तिम समयमें वर्तमान क्षपकके उत्कृष्ट हानि होती है।

§ ५३. आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति किसके होती है? जो असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय जीव हतसमुत्पत्तिक कर्मके साथ नारकियोंमें उत्पन्न हुआ और अन्तर्मुहूर्त

परिणामजोगेण पदिदस्स तस्स उक्क० वड्ढी । तस्सेव से काले उक्कस्सयमवट्ठाणं । उक्क० हाणी कस्स ? अण्णदरस्स असंजदसम्माइट्ठिस्स अणंताणुबंधिविसंजोएंतस्स अंतोमुहुत्तं गंतूण विसंजोयणगुणसेढीसीसए उदिण्णे उक्क० हाणी । अधवा कदकरणिज्जभावेण तत्थुप्पण्णस्स जाधे गुणसेढीसीसयमुदयमागदं ताधे उक्क० हाणी । एवं पढमाए । भवण०-वाण० एवं चेव । णवरि हाणीए कदकरणिज्जसामित्तं णत्थि । विदियादि जाव सत्तमा त्ति मोह० उक्क० वड्ढी कस्स ? अण्णद० सम्माइट्ठिस्स मिच्छाइट्ठिस्स वा तप्पाओग्गसंतकम्मादो उवरि वड्ढावेंतस्स । तस्सेव से काले उक्क० अवट्ठाणं । उक्क० हाणी पढमपुढविभंगो । णवरि कदकरणिज्जसामित्तं णत्थि । एवं जोदिसिएसु ।

§ ५४. तिरिक्खगदीए तिरिक्खाणमुक्कस्सवड्ढी अवट्ठाणमोघं । उक्क० हाणी कस्स ? अण्णद० संजदासंजदस्स अणंताणु०विसंजोजयस्स विसंजोयणगुणसेढीसीसए उदिण्णे तस्स उक्क० हाणी । अथवा उक्क० हाणी कदकरणिज्जस्स कायव्वा । एवं पंचिंदियतिरिक्खतिए । णवरि जोणिणीसु कदकरणिज्जसंभवो णत्थि । पंचिं०तिरिक्ख-अपज्ज० मोह० उक्क० वड्ढी कस्स ? अण्ण० एइंदियस्स हदसमुप्पत्तियकम्मंसियस्स

पर्यन्त एकान्तानुवृद्धि योगसे वृद्धिको प्राप्त होकर परिणाम योगस्थानको प्राप्त हुआ उसके उत्कृष्ट वृद्धि होती है और उसीके अनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थान होता है। उत्कृष्ट हानि किसके होती है ? अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करनेवाले अन्यतर असंयतसम्यग्दृष्टिके अन्तर्मुहूर्त काल बिताकर विसंयोजनाकी गुणश्रेणिके शीर्षभागकी उदीरणा होनेपर उत्कृष्ट हानि होती है। अथवा जो कृतकृत्य वेदकसम्यग्दृष्टि नरकमें उत्पन्न हुआ उसके जब गुणश्रेणिका शीर्ष उदयमें आता है तब उत्कृष्ट हानि होती है। इसी प्रकार प्रथम नरकमें जानना चाहिए। भवनवासी और व्यन्तरोंमें भी इसी प्रकार जानना चाहिये। इतना विशेष है कि हानिकी अपेक्षा जो कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टिको हानिका स्वामी बतलाया है वह भवनवासी और व्यन्तरोंमें नहीं होता। दूसरी से लेकर सातवीं पृथ्वी तक मोहनीयकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है ? अपने योग्य प्रदेशसत्कर्मको आगे बढ़ानेवाले किसी भी सम्यग्दृष्टि अथवा मिथ्यादृष्टि जीवके उत्कृष्ट वृद्धि होती है। तथा उसीके अनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थान होता है। उत्कृष्ट हानिका स्वामी पहली पृथ्वीकी तरह जानना चाहिये। इतना विशेष है कि इनमें कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टिकी अपेक्षा हानिका स्वामित्व नहीं होता। इसी प्रकार ज्योतिषी देवोंमें जानना चाहिये।

§ ५४. तिर्यञ्चगतिमें सामान्य तिर्यञ्चोंमें उत्कृष्ट वृद्धि और उत्कृष्ट अवस्थानका स्वामी ओघकी तरह जानना चाहिये। उत्कृष्ट हानि किसके होती है ? अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करनेवाले अन्यतर संयतासंयतगुणस्थानवर्ती तिर्यञ्चके विसंयोजनाकी गुणश्रेणिके शीर्षभागकी उदीरणा होनेपर उत्कृष्ट हानि होती है। अथवा तिर्यञ्चोंमें उत्पन्न होनेवाले कृतकृत्य वेदकसम्यग्दृष्टिके उत्कृष्ट हानि करनी चाहिये। इसी प्रकार तीनों प्रकारके पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिये। इतना विशेष है कि पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च योनिनियोंमें कृतकृत्य-वेदक सम्यग्दृष्टि उत्पन्न नहीं होता अतः उनमें कृतकृत्यकी अपेक्षा उत्कृष्ट हानि नहीं कहना चाहिये। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है ? जो हत-समुत्पत्तिक कर्मकी सत्तावाला अन्यतर एकेन्द्रिय जीव पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें उत्पन्न

पंचिं०तिरि०अपज्ज० उववज्जिय अंतोमुहुत्तमेयंताणुवड्ढीए वड्ढिदूण परिणामजोगे पदिदस्स तस्स उक्क० वड्ढी। तस्सेव से काले उक्क० अवट्ठाणं। उक्क० हाणी कस्स? अण्णद० जो संजमासंजम-संजमगुणसेढीओ कादूण मिच्छत्तं गदो अविणट्ठासु गुणसेढीसु पंचिं०तिरिक्खअपज्ज० उववण्णो तस्स जाधे गुणसेढीसीसयाणि उदयमागदाणि ताधे मोह० उक्क० हाणी। एवं मणुसअपज्ज०। मणुस०मणुसपज्ज०-मणुसिणीसु[1] ओघं। सोहम्मादि जाव उवरिमगेवज्जा त्ति विदियपुढविभंगो। णवरि उक्क० हाणी उवसामय-पच्छायदस्स कायव्वा। अणुद्दिसादि जाव सव्वट्ठा त्ति मोह० उक्क० वड्ढी० कस्स? अण्णद० सम्माइट्ठिस्स तप्पाओग्गसंतकम्मादो उवरि वड्ढावेंतस्स तस्स उक्क० वड्ढी। तस्सेव से काले उक्क० अवट्ठाणं। उक्क० हाणी सोहम्मभंगो। एवं जाव अणाहारि त्ति।

होकर अन्तर्मुहूर्त पर्यन्त एकान्तानुवृद्धि योगके द्वारा वृद्धिको प्राप्त होकर परिणाम योगस्थानको प्राप्त होता है उसके उत्कृष्ट वृद्धि होती है। तथा उसीके अनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थान होता है। उत्कृष्ट हानि किसके होती है? जो जीव संयमासंयम और संयमकी गुणश्रेणि रचनाको करके मिथ्यात्वमें गिरकर गुणश्रेणिके नष्ट न होते हुए ही पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुआ है उस जीवके जब गुणश्रेणिका शीर्षभाग उदयमें आता है तब मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशहानि होती है। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्तकोंमें जानना चाहिये। मनुष्य, मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें ओघकी तरह जानना चाहिये। सौधर्म स्वर्गसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंमें दूसरी पृथिवीकी तरह भंग है। इतना विशेष है कि जो उपशामक देवपर्यायमें आकर उत्पन्न होता है उसके उत्कृष्ट हानि कहनी चाहिये। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशवृद्धि किसके होती है? जो अन्यतर सम्यग्दृष्टि अपने योग्य सत्तामें स्थित प्रदेशसत्कर्मको ऊपर बढ़ाता है उसके उत्कृष्ट वृद्धि होती है। तथा उसीके तदनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थान होता है। उत्कृष्ट हानिका स्वामी सौधर्मकी तरह जानना चाहिये। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

विशेषार्थ—कर्मप्रदेशोंकी सत्तावाला जीव जब अधिकसे अधिक प्रदेशोंकी वृद्धि करता है तब उत्कृष्ट वृद्धि होती है और जब कोई जीव अधिकसे अधिक कर्मप्रदेशोंकी निर्जरा करता है तब उत्कृष्ट हानि होती है। इन्हीं दोनों बातोंको लक्ष्यमें रखकर मूलमें ओघसे और आदेशसे उत्कृष्ट वृद्धि और उत्कृष्ट हानिका स्वामित्व बतलाया गया है। कोई एकेन्द्रिय जीव पहले सत्तामें स्थित कर्मप्रदेशोंका घात करके थोड़े कर्मप्रदेशवाला होकर पीछे संज्ञी पञ्चेन्द्रिय पर्याप्तकोंमें जन्म ले। वहाँ अपर्याप्त कालमें उसके एकान्तानुवृद्धि योगस्थान होता है जो कि क्रमशः बढ़ता हुआ होता है। एक अन्तर्मुहूर्तकाल तक इस योगके साथ रहकर पर्याप्त होने पर परिणाम योगस्थानवाला हुआ। पीछे जब वह उत्कृष्ट परिमाणयोगस्थानमें वर्तमान रहता है तब वह जीव उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी होता है। योगस्थानके अनुसार ही कर्मप्रदेशोंका प्रदेशबन्ध होता है और संज्ञी पञ्चेन्द्रिय पर्याप्तकके ही सर्वोत्कृष्ट योगस्थान होता है अतः एकेन्द्रिय जीवको हतसमुत्पत्तिककर्मवाला करके पीछे संज्ञी पञ्चेन्द्रिय पर्याप्तकमें उत्पन्न

---

१. आ० प्रतौ 'मणुसपज्ज०मणुसिणीसु' इति पाठः।

कराया है और वहाँ उसके उत्कृष्ट योगस्थान बतलाया है ताकि कर्मप्रदेशोंका अधिकसे अधिक बन्ध होनेसे पूर्व सत्त्वसे सबसे अधिक वृद्धिको लिये हुए सत्त्व हो। इसी प्रकार दसवें गुणस्थानवर्ती क्षपकके दसवें गुणस्थानके अन्तिम समयमें मोहनीयके अवशिष्ट बचे सब निषेकोंकी सत्त्वव्युच्छित्ति हो जानेसे उत्कृष्ट हानि होती है। यह तो हुआ ओघसे। आदेशसे सामान्य नारकियोंमें, प्रथम नरकमें, भवनवासी और व्यन्तर देवोंमें जब हतसमुत्पत्तिककर्मवाला असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय जीव जन्म लेता है तब उसके उत्कृष्ट वृद्धि बतलाई है जो ओघके समान ही है। केवल एकेन्द्रियके स्थानमें असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय कर दिया है, क्योंकि एकेन्द्रिय जीव उक्त स्थानोंमें जन्म नहीं ले सकता। इन स्थानोंमें उत्कृष्ट हानिका स्वामी अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करनेवाले असंयतसम्यग्दृष्टिको उस समय बतलाया है जब अनन्तानुबन्धीकी गुणश्रेणी रचनाका शीर्ष भाग निर्जीर्ण होता है। आशय यह है कि अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनाके लिये अधःकरण, अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण ये तीन करण जीव करता है। इनमेंसे अपूर्वकरणके प्रथम समयसे ही स्थितिघात, अनुभागघात, गुणश्रेणी और गुणसंक्रम ये चार कार्य होने लगते हैं। स्थितिघातके द्वारा स्थितिसत्कर्मका घात करता है। अनुभागघातके द्वारा अनुभागसत्कर्मका घात करता है। तथा गुणश्रेणी करता है जिसका क्रम इस प्रकार है—अनन्तानुबन्धीके सर्वनिषेक सम्बन्धी सब कर्मपरमाणुओंमें अपकर्षण भागहारका भाग देकर एक भागप्रमाण द्रव्यका निक्षेपण उदयावलिमें करता है और अवशेष बहुभागप्रमाण कर्म परमाणुओंका निक्षेपण उदयावलीसे बाहर करता है। विवक्षित वर्तमान समयसे लेकर आवलीमात्र समयसम्बन्धी निषेकोंको उदयावली कहते हैं। उनमें जो एक भागप्रमाण द्रव्य दिया जाता है सो प्रत्येक निषेकमें एक एक चय घटते क्रमसे दिया जाता है। तथा उदयावलीसे ऊपरके अन्तर्मुहूर्तके समय प्रमाण जो निषेक होते हैं उन्हें गुणश्रेणी निक्षेप कहते हैं, इस गुणश्रेणी निक्षेपमें उत्तरोत्तर असंख्यातगुणे असंख्यातगुणे द्रव्यका निक्षेपण करता है, अर्थात् उदयावलीसे बाहरकी अनन्तरवर्ती स्थितिमें असंख्यात समयप्रबद्धप्रमाण द्रव्यका निक्षेपण करता है। उससे ऊपरकी स्थितिमें उससे भी असंख्यातगुणे द्रव्यका निक्षेपण करता है। इस प्रकार गुणश्रेणी आयाम शीर्षपर्यन्त असंख्यातगुणे असंख्यातगुणे निषेकोंका निक्षेपण करता है। इस गुणश्रेणी आयामके अन्तिम निषेकोंको गुणश्रेणी शीर्ष कहते हैं—अर्थात् गुणश्रेणि रचनाका सिरो भाग गुणश्रेणि शीर्ष कहलाता है। यह गुणश्रेणिशीर्ष जब निर्जीर्ण होता है तो उत्कृष्ट हानि होती है। अथवा जैसे अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनाके समय अधःकरण आदि तीन परिणाम होते हैं वैसे ही दर्शनमोहकी क्षपणाके समय भी ये तीनों परिणाम और उनमें होनेवाला स्थितिघात, अनुभागघात और गुणश्रेणि आदि कार्य होता है। विशेष बात यह है कि अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनामें जो गुणश्रेणि रचना होती है उससे दर्शनमोहकी क्षपणामें होनेवाली गुणश्रेणिका काल थोड़ा है तथा निक्षिप्यमाण द्रव्य उससे असंख्यातगुणा असंख्यातगुणा है, अतः अनन्तानुबन्धीके गुणश्रेणिशीर्षके द्रव्यसे दर्शनमोहके गुणश्रेणिशीर्षका द्रव्य असंख्यातगुणा है, अतः कृतकृत्यवेदकसम्यग्दृष्टि मनुष्य मरकर यदि नरकमें उत्पन्न होता है तो उस जीवके गुणश्रेणिशीर्षका उदय होता है तब भी उत्कृष्ट हानि होती है। किन्तु यतः ऐसा मनुष्य यदि नरकमें उत्पन्न हो तो पहलेमें ही उत्पन्न होता है, न द्वितीयादि नरकोंमें उत्पन्न होता है और न भवनत्रिकमें ही उत्पन्न होता है, अतः प्रथम नरकमें उसीके उत्कृष्ट हानि होती है और शेष नरकोंमें तथा भवनत्रिकमें विसंयोजनावालेके गुणश्रेणिशीर्षकी निर्जरा होने पर उत्कृष्ट हानि होती है। तिर्यञ्चगतिमें तिर्यञ्चोंमें उत्कृष्ट वृद्धि तो ओघकी तरह हतसमुत्पत्तिककर्म करनेवाले एकेन्द्रिय जीवके संज्ञी पञ्चेन्द्रिय-

§ ५५. जहण्णए पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदे०। ओघेण मोह० जह० वड्डी हाणी अवट्ठाणं च कस्स ? अण्णद० जो संतकम्मादो जहण्णाविरोहिणा असंखे०-भागेण वड्डिदो तस्स जह० वड्डी हाइदे हाणी एगदरत्थावट्ठाणं। एवं सव्वणेरइय-सव्वतिरिक्ख-सव्वमणुस्स-सव्वदेवा त्ति। एवं जाव अणाहारि त्ति।

पर्याप्तकोंमें जन्म लेने पर और वहाँ पहले कहे गये क्रमसे उत्कृष्ट परिणामयोगस्थानमें वर्तमान होने पर होती है तथा उत्कृष्ट हानि भोगभूमिकी अपेक्षा तो उत्कृष्ट भोगभूमिमें जन्म लेनेवाले कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टिके जब दर्शनमोहके गुणश्रेणिशीर्षका उदय होता है तब होती है और कर्मभूमिया संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चके जब यह पञ्चमगुणस्थानमें वर्तमान होते हुए भी अनन्तानुबन्धीकी पूर्वोक्त क्रमसे विसंयोजना करता हुआ अनन्तानुबन्धीकी गुणश्रेणि रचना करके उसके गुणश्रेणिशीर्षकी निर्जरा करता है तब उत्कृष्ट हानि होती है। यहाँ सम्यग्दृष्टिके न बताकर संयतासंयतके बतलानेका कारण यह है कि अविरतसम्यग्दृष्टिसे संयतासंयतके असंख्यातगुणी निर्जरा बतलाई है और गुणश्रेणिका काल थोड़ा बतलाया है, अतः अविरत-सम्यग्दृष्टिके गुणश्रेणिशीर्षके द्रव्यसे संयतासंयतके गुणश्रेणिशीर्षके द्रव्यका प्रमाण असंख्यात-गुणा होनेसे हानिका परिणाम भी अधिक होता है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें इतनी विशेषता है कि वहाँ उत्कृष्ट वृद्धिके लिये हतसमुत्पत्तिक एकेन्द्रिय जीवको संज्ञी पञ्चेन्द्रिय-तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें उत्पन्न कराना चाहिये। तथा उत्कृष्ट हानिके लिये संयमासंयम अथवा संयम धारण करके और गुणश्रेणि रचनाको करके मिथ्यात्वमें गिरकर तिर्यञ्चायुका बन्ध करके पंचेन्द्रिय अपर्याप्तकोंमें जन्म लेनेवाले जीवके जब संयमासंयम अथवा संयम धारण कालमें की हुई गुणश्रेणिका शीर्ष भाग उदयमें आता है तब उत्कृष्ट हानि होती है। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्तकोंमें जानना चाहिये। शेष मनुष्योंमें ओघकी तरह समझना चाहिये। सौधर्म आदिके देवोंमें जो सम्यग्दृष्टि अथवा मिथ्यादृष्टि देव सत्तामें स्थित कर्मप्रदेशोंको अधिक बढ़ाता है उसीके उत्कृष्ट वृद्धि होती है और मनुष्यपर्यायमें जो जीव उपशमश्रेणि पर चढ़कर गुण-श्रेणि रचना करके मरकर सौधर्मादिकमें जन्म लेता है उसके जब गुणश्रेणिका शीर्ष उदयमें आता है तो उत्कृष्ट हानि होती है। सर्वत्र अवस्थानका विचार मूलमें बतलाई गई विधिके अनुसार जानना चाहिये।

§ ५५. जघन्यसे प्रयोजन है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी जघन्य वृद्धि, जघन्य हानि और जघन्य अवस्थान किसके होता है ? जो सत्तामें स्थित कर्मप्रदेशोंको जघन्यके अविरोधी असंख्यातवें भाग रूपमें बढ़ाता है उसके जघन्य वृद्धि होती है तथा उतनी ही हानि होने पर जघन्य हानि होती है और दोनोंमेंसे किसी एकके जघन्य अवस्थान होता है। इसी प्रकार सब नारकी, सब तिर्यञ्च, सब मनुष्य और सब देवोंमें जानना चाहिये। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

विशेषार्थ—जो जीव सत्तामें स्थित कर्मप्रदेशोंको असंख्यातवें भागप्रमाण घटाता है उसके जघन्य हानि होती है। जो असंख्यातवें भागप्रमाण बढ़ाता है उसके जघन्य वृद्धि होती है। किन्तु यह घटाया हुआ व बढ़ाया हुआ असंख्यातवाँ भाग ऐसा होना चाहिये जिसे जघन्य कहनेमें कोई विरोध न आ सके। ओघसे व आदेशसे जघन्य हानिमें सर्वत्र असंख्यातभाग-हानि होती है तथा जघन्य वृद्धिमें सर्वत्र असंख्यातभागवृद्धि होती है, अतः शेष सब मार्ग-णाओंका कथन ओघके समान कहा। तथा जघन्य वृद्धि या हानिके बाद जो अवस्थान होता है वह सर्वत्र जघन्य अवस्थान है यह कहा। इसके सिवा अवस्थान और किसी भी प्रकारसे जघन्य बन नहीं सकता।

§ ५६. अप्पाबहुअं दुविहं—जह० उक्क० । उक्क० पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण सव्वत्थोवा मोह० उक्क० वड्ढी अवट्ठाणं च । हाणी असंखे०-गुणा । एवं सव्वगइमग्गणासु । एवं जाव अणाहारि त्ति ।

§ ५७. जह० पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० जह० वड्ढी हाणी अवट्ठाणं च तिण्णि वि सरिसाणि । एवं जाव अणाहारि त्ति ।

§ ५८. वड्ढिविहत्तीए तत्थ इमाणि तेरस अणियोगद्दाराणि—समुक्कित्तणा जाव अप्पाबहुए त्ति । समुक्कित्तणाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० अत्थि असंखे०भागवड्ढी हाणी अवट्ठिदाणि । एवं सव्वत्थ णेदव्वं ।

§ ५९. सामित्ताणु० दुविहो णि०—ओघेण आदे० । ओघेण मोह० असंखे०-भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठिदाणि कस्स ? अण्णदरस्स सम्माइट्ठिस्स मिच्छाइट्ठिस्स वा । एवं सव्वणेरइय-तिरिक्ख-पंचिं०तिरि०तिय-मणुस्सतिय-देवा भवणादि जाव उवरिम-गेवज्जा त्ति । पंचिं०तिरि०अपज्ज०[१]-मणुसअपज्ज०-अणुद्दिसादि जाव सव्वट्ठा त्ति असंखेज्जभागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि०विह० को होइ ? अण्ण० । एवं जाव अणाहारि त्ति ।

§ ६०. कालाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० असंखे०-

§ ५६. अल्पबहुत्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टसे प्रयोजन है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट वृद्धि और उत्कृष्ट अवस्थान सबसे थोड़े हैं और उत्कृष्ट हानि असंख्यातगुणी है । इस प्रकार सब गति मार्गणाओंमें जानना चाहिए । इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये ।

§ ५७. जघन्यसे प्रयोजन है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी जघन्य वृद्धि, जघन्य हानि और जघन्य अवस्थान तीनों ही समान हैं । इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त जानना चाहिए ।

§ ५८. अब वृद्धिविभक्तिका कथन करते हैं । उसमें समुत्कीर्तनासे लेकर अल्पबहुत्व पर्यन्त तेरह अनुयोगद्वार होते हैं । समुत्कीर्तनानुगम दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयमें असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थान होते हैं । इसी प्रकार सर्वत्र जानना चाहिये ।

§ ५९. स्वामित्वानुगमसे निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थान किसके होते हैं ? किसी भी सम्यग्दृष्टि या मिथ्यादृष्टि जीवके होते हैं । इस प्रकार सब नारकी, सामान्य तिर्यञ्च, तीन प्रकारके पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, तीन प्रकारके मनुष्य, सामान्य देव और भवनवासीसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त, मनुष्य अपर्याप्त और अनुदिश-से लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थित विभक्तिका स्वामी कौन होता है ? उक्त अपर्याप्तोंमें कोई भी मिथ्यादृष्टि और उक्त देवोंमें कोई भी सम्यग्दृष्टि जीव स्वामी होता है । इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त जानना चाहिये ।

§ ६०. कालानुगमसे निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । [ओघसे मोहनीयकी

१. आ०प्रतौ 'पंचितिरि-अप्पद०' इति पाठः ।

भागवड्ढि-हाणि० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० सत्तट्ठसमया। अथवा अंतोमुहुत्तं सव्वोवसामणाए। एवं मणुसतिए। एवं चेव सव्वणेरइय-तिरिक्ख-पंचिंदियतिरिक्खतिय० देवगदी० देवा जाव सव्वट्ठ-सिद्धि त्ति। णवरि अवट्ठि० अंतोमु० णत्थि, तत्थ सव्वोवसमाभावादो। पंचिं०तिरि०-अपज्ज० असंखे०भागवड्ढि-हाणि० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० सत्तट्ठस०। एवं मणुसअपज्ज०। एवं जाव अणाहारि त्ति।

असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सात-आठ समय है। अथवा सर्वोपशमनाकी अपेक्षा अन्तर्मुहूर्त है। तीन प्रकारके मनुष्योंमें भी इसी प्रकार जानना चाहिए। सब नारकी, सामान्य तिर्यञ्च, तीन प्रकारके पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, देवगतिमें सामान्य देव और सर्वार्थसिद्धितकके प्रत्येक देवोंमें इसी प्रकार जानना चाहिए। इतना विशेष है कि इन नारकी आदिमें अवस्थितविभक्तिका अन्तर्मुहूर्त काल नहीं होता, क्योंकि उनमें मोहनीयकी सर्वोपशमना नहीं होती। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तोंमें असंख्यात भागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सात आठ समय है। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्तकोंमें जानना चाहिए। इसी प्रकार अनाहारी पर्यन्त जानना चाहिये।

विशेषार्थ—पहले वृद्धि और हानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण घटित करके बतला आये हैं, असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यात भागहानिका भी उतना ही काल प्राप्त होता है, अतः इनका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा। भुजगारविभक्तिमें अवस्थितका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय घटित करके बतला आये हैं उसी प्रकार यहाँ भी जानना चाहिये। विशेष बात इतनी है कि वहाँ संख्यात समयका प्रमाण नहीं खोला है किन्तु यहाँ उसका खुलासा कर दिया है। मालूम होता है एक परिणाम योग-स्थानका उत्कृष्ट काल सात आठ समय है इसीलिये यहाँ अवस्थितविभक्तिका उत्कृष्ट काल सात आठ समय कहा है। अथवा उपशमश्रेणिमें मोहनीयका सर्वोपशम करके जीव जब उप-शान्तमोह गुणस्थानमें जाता है तो वहाँ अन्तर्मुहूर्तकाल तक एक भी परमाणु निर्जीर्ण नहीं होता और वहाँ न नये कर्मका बन्ध ही होता है। इस तरह वहाँ वृद्धि और हानि न होकर अन्तर्मुहूर्त काल तक अवस्थान ही रहता है। यही कारण है कि सर्वोपशामनाकी अपेक्षा अवस्थितप्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा। सामान्य मनुष्य, मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यनी इनके उक्त व्यवस्था अविकल बन जाती है, इसलिये उनमें सब कथन ओघके समान कहा। आगे सब नारकी आदि कुछ और मार्गणाएँ भी गिनाई हैं जिनमें अवस्थित-विभक्तिके अन्तर्मुहूर्त कालको छोड़कर शेष सब व्यवस्था बन जाती है, इसलिये वहाँ भी इसके कथनको छोड़कर शेष सब कथन ओघके समान कहा। परन्तु इन मार्गणाओंमें उपशम-श्रेणिपर आरोहण नहीं होता, अतः सर्वोपशमना न बननेसे अवस्थितविभक्तिका उत्कृष्ट-काल अन्तर्मुहूर्त नहीं प्राप्त होता, अतः इसका निषेध किया। पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च लब्ध्यपर्याप्तके और मनुष्य लब्ध्यपर्याप्तके असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल जो अन्तर्मुहूर्त बतलाया सो इसका कारण यह है कि इस मार्गणावाले एक जीवका

§ ६१. अंतराणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० असंखे०-भागवड्ढि-हाणि० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० असंखेज्जा लोगा । आदेसेण णेरइएसु मोह० असंखे०भागवड्ढि-हाणि० ओघं । अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि । एवं सव्वणेरइय० । णवरि अवट्ठि० उक्क० सगट्ठिदी देसूणा । तिरिक्खेसु मोह० असंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० ओघभंगो । एवं पंचिं०तिरिक्खतिए । णवरि अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० सगट्ठिदी देसूणा । एवं मणुसतिए । पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज० मोह० असंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु० । एवं मणुसअपज्ज० । देवगदीए देवेसु मोह० असंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० णेरइयभंगो । एवं भवणादि जाव सव्वट्ठा त्ति । णवरि अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० सगट्ठिदी देसूणा । एवं जाव अणाहारि त्ति ।

उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । शेष कथन सुगम है । आगे अनाहारक मार्गणा तक भी यथायोग्य बिचार कर यह काल जानना चाहिये ।

§ ६१. अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोकप्रमाण है । आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी असंख्यात भागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका अन्तर ओघकी तरह है । अवस्थितका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है । इसीप्रकार सब नारकियोंमें जानना चाहिए । इतना विशेष है कि अवस्थितका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है । तिर्यञ्चोंमें मोहनीयकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितका अन्तर ओघकी तरह है । इसी प्रकार तीन प्रकारके पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए । इतना विशेष है कि अवस्थितका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है । इसी प्रकार तीन प्रकारके मनुष्योंमें जानना चाहिए । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें मोहनीयकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्तकोंमें जानना चाहिए । देवगतिमें देवोंमें मोहनीयकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितका अन्तर नारकियोंके समान है । इसी प्रकार भवनवासीसे लेकर सर्वार्थसिद्धि पर्यन्त जानना चाहिये । इतना विशेष है कि अवस्थितका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी अपनी स्थितिप्रमाण है । इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त जानना चाहिये ।

विशेषार्थ—भुजगार प्रदेशविभक्तिका कथन करते समय भुजगार, अल्पतर और अवस्थितप्रदेशविभक्तिका जिस प्रकार एक जीवकी अपेक्षा अन्तरकाल बतला आये हैं उसी प्रकार यहाँ भी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितप्रदेशविभक्तिका ओघ व आदेशसे एक जीवकी अपेक्षा अन्तरकाल जानना चाहिये । उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है, इसलिये यहाँ पृथक् पृथक् घटित करके नहीं लिखा ।

§ ६२. णाणाजीवेहि भंगविचयाणु० दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० असंखे०भागवड्ढि-हा०-अवट्ठि० णियमा अत्थि । एवं तिरिक्खा० । आदेसे० णेरइय० मोह० असंखे०भागवड्ढि-हा० णियमा अत्थि । सिया एदे च अवट्ठिदो च । सिया एदे च अवट्ठिदा च । एवं सव्वणिरय-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-मणुसतिय-देवा भवणादि जाव सव्वट्ठा त्ति । मणुसअपज्ज० मोह० सव्वपदा भयणिज्जा । एवं जाव अणाहारि त्ति ।

§ ६३ भागाभागाणुगमेण[1] दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० अवट्ठि० सव्वजी० केवडिओ भागो ? असंखे०भागो । असंखे०भागवड्ढि० सव्वजी० के० ? संखे०भागो । असंखे०भागहा० सव्वजी० केव० भागो ? संखेज्जा भागा । अधवा

§ ६२. नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचयानुगमसे निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवाले जीव नियमसे पाये जाते हैं । इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए । आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिवाले जीव नियमसे होते हैं । कदाचित् अनेक जीव हानि और वृद्धिवाले और एक जीव अवस्थितविभक्तिवाला होता है । कदाचित् अनेक जीव हानि और वृद्धिवाले और अनेक जीव अवस्थितविभक्तिवाले होते हैं । इसी प्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, तीन प्रकारके मनुष्य, सामान्य देव और भवनवासीसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें जानना चाहिए । मनुष्य अपर्याप्तकोंमें उक्त सब पद विकल्पसे होते हैं । इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त जानना चाहिये ।

विशेषार्थ—ओघसे तीनों प्रदेशविभक्तिवाले नाना जीव सदा हैं, अतः असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवाले जीव नियमसे हैं यह कहा । सामान्य तिर्यञ्चोंमें भी ओघ प्ररूपणा अविकल बन जाती है, इसलिये उनके कथनको ओघके समान कहा । नारकियोंमें असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिवाले जीव सभी नियमसे हैं । केवल अवस्थित विभक्तिवाले जीव कभी नहीं होते, कभी एक होता है और कभी अनेक होते हैं, इसलिये तीन भंग हो जाते हैं । आगे और भी मार्गणाएँ गिनाई हैं उनमें भी यह व्यवस्था बन जाती है, इसलिये उनमें भी सामान्य नारकियोंके समान तीन भंग कहे हैं । मनुष्य लब्ध्यपर्याप्त यह सान्तर मार्गणा है, अतः इसमें तीनों पद भजनीय हैं । इनके कुल भंग २६ होते हैं । खुलासा अनेक बार किया है उसी प्रकार यहाँ भी कर लेना चाहिये । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक अपने अपने पदोंके अनुसार और सान्तर निरन्तर मार्गणाओंके अनुसार जहाँ जितने भंग संभव हों घटित करके जान लेना चाहिये ।

§ ६३. भागाभागानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी अवस्थितविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? असंख्यातवें भागप्रमाण हैं । असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? संख्यातवें भागप्रमाण हैं । असंख्यातभामहानिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? संख्यात बहुभागप्रमाण हैं । अथवा असंख्यातभागहानिवाले जीव कितने भागप्रमाण हैं ? संख्यातवें भागप्रमाण हैं और

1. ता०आ०प्रत्योः 'भागाभागभंगविचयाणुगमेण' इति पाठः ।

असंखे०भागहाणि० केव० ? संखे०भागो। असंखे०भागवड्डि० संखेज्जा भागा। एसो मूलुच्चारणापाढो[1]। एदेसिं दोण्हं पाढाणमविरोहो[2] जाणिय घडावेयव्वो। एवं सव्वत्थ। एवं सव्वणेरइय-सव्वतिरिक्ख-मणुस-मणुसअपज्ज०-देवा भवणादि जाव अवराजिदा त्ति। मणुसपज्ज०-मणुसिणीसु मोह० असंखे०भागहाणि-अवट्ठि० सव्वजी० केव० ? संखे० भागो। असंखे०भागवड्डि० सव्वजी० केव० ? संखेज्जा भागा। वड्डि-हाणीणं विवज्जासो वि। एवं सव्वट्ठे। एवं जाव अणाहारि त्ति।

§ ६४. परिमाणाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० असंखे०-

असंख्यातभागवृद्धिवाले संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। यह मूल उच्चारणाका पाठ है। इन दोनों पाठोंमें जानकर अविरोधको घटित कर लेना चाहिये। इसी प्रकार सर्वत्र समझना चाहिए। इस प्रकार सब नारकी, सब तिर्यञ्च, सामान्य मनुष्य, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव और भवनवासीसे लेकर अपराजिततकके देवोंमें जानना चाहिए। मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें मोहनीयकी असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? संख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। वृद्धि और हानिमें विपर्यास भी है अर्थात् दूसरे पाठके अनुसार असंख्यातभागहानिवाले जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं और असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। इसी प्रकार सर्वार्थसिद्धिमें जानना चाहिए। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त जानना चाहिये।

विशेषार्थ—राशियाँ तीन हैं असंख्यातभागवृद्धि प्रदेशविभक्तिवाले, असंख्यातभागहानि प्रदेशविभक्तिवाले और अवस्थितप्रदेशविभक्तिवाले। इनमेंसे कौन कितने भागप्रमाण हैं इसमें मतभेद है। एक उच्चारणके अनुसार तो असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव थोड़े हैं और असंख्यातभागहानिवाले जीव अधिक हैं और मूल उच्चारणाके अनुसार असंख्यातभागहानिवाले जीव थोड़े हैं और असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव बहुत हैं। वीरसेन स्वामी कहते हैं कि जिससे इन दोनों पाठोंमें विरोध न रहे इस प्रकार इसकी संगति बिठानी चाहिये। हमारा ख्याल है कि कभी क्षपितकर्मांशवाले जीव अधिक हो जाते होंगे और कभी गुणित कर्मांशवाले जीव थोड़े रह जाते होंगे। तथा कभी इससे उलटी स्थिति भी हो जाती होगी। मालूम होता है कि इसी कारणसे दो उच्चारणाओंमें दो पाठ हो गये होंगे। वास्तवमें देखा जाय तो वे दोनों पाठ एक दूसरेके पूरक ही हैं। परन्तु इन दोनों दृष्टियोंसे कथन करते समय अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंके कथनमें अन्तर नहीं पड़ता। वे दोनों अवस्थाओंमें एकसे रहते हैं। आगे सब नारकी आदि जो और मार्गणाऐं गिनाई हैं उनमें भी इसी प्रकार जानना चाहिये, इसलिये उनके कथनको ओघके समान कहा है। परन्तु मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देव संख्यात हैं, इसलिये वहाँ अवस्थितविभक्तिवाले भी सब जीवोंके संख्यातवें भागप्रमाण कहे हैं। शेष कथन पूर्ववत् है। इसी प्रकार आगेकी मार्गणाओंमें भी यथायोग्य व्यवस्था जानकर भागाभाग कहना चाहिये।

§ ६४. परिमाणानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवाले जीव कितने

१. ता०प्रतौ '-पाठो' इति पाठः। २. ता०प्रतौ 'पाठाणमविरोहो' इति पाठः।

भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० केत्तिया ? अणंता। एवं तिरिक्खा०। आदेसेण णेरइएसु मोह० असंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० केत्ति० ? असंखेज्जा। एवं सव्वणेरइय-सव्वपंचिंदिय-तिरिक्ख-मणुस-मणुसअपज्ज०-देवा भवणादि जाव अवराइदा त्ति। मणुसपज्जत्त-मणुसिणीसु मोह० असंखे०भागवड्ढि-हा०-अवट्ठि केत्ति० ? संखेज्जा। एवं सव्वट्ठे। एवं जाव अणाहारि त्ति।

§ ६५. खेत्ताणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० असंखे०भागवड्ढि-हा०-अवट्ठि० केव० खेत्ते ? सव्वलोगे। एवं तिरिक्खा०। आदेसेण णेरइए० मोह० असंखे०भागवड्ढि-हाणि- अवट्ठि० केव० खेत्ते ? लोग० असंखे०भागे। एवं सव्वणेरइय-सव्वपंचिं०तिरिक्ख-सव्वमणुस-सव्वदेवा त्ति। एवं जाव अणाहारि त्ति।

§ ६६. पोसणाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० असंखे०भागवड्ढि-हा०-अवट्ठि०विह० के० खेत्तं पोसिदं ? सव्वलोगो। एवं तिरिक्खा०। आदेसेण णेरइए० मोह० असंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० केव० खेत्तं० ? लोगस्स असंखे० भागो

हैं ? अनन्त हैं। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। इसी प्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, सामान्य मनुष्य, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव और भवनवासीसे लेकर अपराजित तकके देवोंमें जानना चाहिए। मनुष्यपर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें मोहनीयकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थित विभक्तिवाले जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। इसी प्रकार सर्वार्थसिद्धिमें जानना चाहिए। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त जानना चाहिये।

विशेषार्थ—परिमाणाणुगममें ज्ञातव्य बात इतनी ही है कि ओघसे तो तीनों विभक्तिवाले अनन्त हैं। यही बात सामान्य तिर्यञ्चोंकी है। आदेशसे जिस गतिकी जितनी संख्या है उसी हिसाबसे वहाँ तीनों विभक्तिवाले जीव हैं।

§ ६५. क्षेत्रानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंका कितना क्षेत्र है ? सर्व लोक क्षेत्र है। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंका कितना क्षेत्र है ? लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र है। इसी प्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, सब मनुष्य और सब देवोंमें जानना चाहिए। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

§ ६६. स्पर्शानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवालोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? सर्वलोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिये। आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवालोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग और

छचोद्दसभागा देसूणा। पढमाए खेत्तं। विदियादि जाव सत्तमा त्ति असंखे०भागवड्ढि-हा०-अवट्ठि० सगपोसणं कायव्वं। सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-सव्वमणुस० असंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा। देवेसु असंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठिदाणि लोग० असंखे०भागो अट्ठ णव चोद्दसभागा देसूणा। एवं सोहम्मीसाण०। भवण-वाणवें०-जोदिसि० असंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० लोग० असंखे०भागो अद्भुट्ठा वा अट्ठ णव चो०भागा। उवरि सगपोसणं णेदव्वं। एवं जाव अणाहारि त्ति।

§ ६७. णाणाजीवेहि कालाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० असंखे०भागवड्ढि-हा०-अवट्ठि० केवचिरं? सव्वद्धा। एवं तिरिक्खा०। आदेसेण णेरइय० मोह० असंखे०भागवड्ढि-हाणि० केव०? सव्वद्धा। अवट्ठि० केव० ? जह० एगस०, उक्क० आवलि०असंखे० भागो। एवं सव्वणेरइय-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-मणुस-देवा भवणादि जाव अवराइदा त्ति। मणुसपज्जत्त- मणुसिणीसु असंखे०भागवड्ढि-हा० सव्वद्धा। अवट्ठि०

त्रसनालीके कुछ कम छ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। पहली पृथिवीमें स्पर्शन क्षेत्रकी तरह है। दूसरीसे लेकर सातवीं पृथिवी पर्यन्त असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यात-भागहानि और अवस्थितविभक्तिवालोंका अपना अपना स्पर्शन करना चाहिये। सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च और सब मनुष्योंमें असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्ति-वालोंका स्पर्शन लोकका असंख्यातवां भाग और सर्वलोक है। देवोंमें असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवालोंका स्पर्शन लोकका असंख्यातवां भाग और त्रसनालीके कुछ कम आठ तथा कुछ कम नौ बटे चौदह भागप्रमाण है। इसी प्रकार सौधर्म, ईशान स्वर्गके देवोंमें जानना चाहिए। भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवालोंका स्पर्शन लोकका असंख्यातवां भाग और चौदह राजुओंमेंसे कुछ कम साढ़े तीन भाग, कुछ कम आठ भाग और कुछ कम नौ भाग है। ऊपरके देवोंमें अपना अपना स्पर्शन कहना चाहिये। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

विशेषार्थ—ओघ और आदेशसे जिनका जितना क्षेत्र है तीनों विभक्तिवालोंका वहाँ उतना ही क्षेत्र है यह पूर्वोक्त कथनका तात्पर्य है। सो ही बात स्पर्शनानुगमकी समझनी चाहिये। ओघसे जो स्पर्शन है वह यहाँ तीनों विभक्तिवालोंका ओघसे स्पर्शन प्राप्त होता है और प्रत्येक मार्गणाका जो स्पर्शन है वह यहाँ उस उस मार्गणामें तीनों विभक्ति-वालोंका प्राप्त होता है, इसलिये अलग-अलग प्रत्येकका खुलासा नहीं किया।

§ ६७. नाना जीवोंकी अपेक्षा कालानुगमसे निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवालोंका कितना काल है? सर्वदा है। इसी प्रकार तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिवाले जीवोंका कितना काल है? सर्वदा है। अवस्थितविभक्तिवालोंका कितना काल है? जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसी प्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, सामान्य मनुष्य, सामान्य देव और भवनवासीसे लेकर अपराजित विमानतकके देवोंमें जानना चाहिए। मनुष्यपर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिवालोंका काल

जह० एगस०, उक्क० संखेज्जा समया। अथवा मणुसतिए अवट्ठि० उक्क० अंतोमु०। एवं सव्वट्ठे। णवरि अवट्ठि० अंतोमुहुत्तं णत्थि। मणुसअपज्ज० असंखे०भागवड्ढि-हा० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। एवं जाव अणाहारि त्ति।

§ ६८. अंतराणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० असंखे०-भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० णत्थि अंतरं। एवं तिरिक्खा०। आदेसेण णेरइय० मोह० असंखे०भागवड्ढि-हा० णत्थि अंतरं। अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० असंखेज्जा लोगा। एवं सव्वणेरइय-सव्वपंचिं०तिरिक्ख-मणुसतिय-सव्वदेवा त्ति। णवरि मणुसतिए अवट्ठि उक्क० वासपुधत्तं। मणुसअपज्ज० असंखे०भागवड्ढि-हा० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० असंखेज्जा लोगा। एवं जाव अणाहारि त्ति।

सर्वदा है। अवस्थितविभक्तिवालोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। अथवा तीन प्रकारके मनुष्योंमें अवस्थितविभक्तिवालोंका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार सर्वार्थसिद्धिमें जानना चाहिये। इतना विशेष है कि सर्वार्थसिद्धिमें अवस्थित-विभक्तिवालोंका अन्तर्मुहूर्त काल नहीं है। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मोहनीयकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिवालोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थितविभक्तिवालोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलि-के असंख्यातवें भागप्रमाण है। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

विशेषार्थ—भुजगारविभक्तिमें ओघ और आदेशसे भुजगार, अल्पतर और अवस्थित का नाना जीवोंकी अपेक्षा जो काल घटित करके बतला आये हैं वही यहाँ क्रमसे असंख्यात-भागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितका काल ओघ और आदेशसे घटित कर लेना चाहिये। उससे इसमें कोई अन्तर नहीं है, अतः यहाँ पुनः नहीं लिखा। केवल यहाँ सामान्य मनुष्य, मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंके अवस्थितविभक्तिका उत्कृष्ट काल विकल्पसे जो अन्तर्मुहूर्त बतलाया है सो यह सर्वोपशमनाकी अपेक्षा बतलाया है और भुजगारविभक्तिमें इसके कथनकी विवक्षा नहीं की गई है वैसे यह काल वहाँ भी बन जाता है।

§ ६८. अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवालोंका अन्तर नहीं है। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिये। आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिवालोंका अन्तर नहीं है। अवस्थितविभक्तिवालोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोकप्रमाण है। इसी प्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, तीन प्रकारके मनुष्य और सब देवोंमें जानना चाहिये। इतना विशेष है कि तीन प्रकारके मनुष्योंमें अवस्थितविभक्तिवालोंका उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिवालोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थितविभक्तिवालोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोकप्रमाण है। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त जानना चाहिये।

§ ६९. भावाणु० सव्वत्थ ओदइओ भावो।

§ ७०. अप्पाबहुआणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० सव्वत्थोवा अवट्ठि०। असंखे०भागवड्ढी० असंखे०गुणा। असंखे०भागहाणी संखे०गुणा। अधवा हाणीए उवरि वड्ढी संखे०गुणा। एवं सव्वणेरइय०-सव्वतिरिक्ख-मणुस०-मणुसअपज्ज०-देवा भवणादि० अवराजिदा त्ति। मणुसपज्जत्त-मणुसिणीसु सव्वत्थोवा अवट्ठि०। असंखे०भागवड्ढी० संखे०गुणा। असंखे०भागहाणी संखे०गुणा। वड्ढि-हाणीणं विवज्जासो वा। एवं सव्वट्ठे। एवं जाव अणाहारि त्ति।

वड्ढी समत्ता।

७१. एत्तो ट्ठाणपरूवणा जाणिय वत्तव्वा।

एवमेदेसु पदणिक्खेव-वड्ढि-ट्ठाणेसु परूविदेसु
मूलपयडिपदेसविहत्ती समत्ता होदि।

विशेषार्थ—पहले कालानुगमके विषयमें जो लिख आये हैं वही अन्तरानुगमके विषयमें जानना चाहिये। अर्थात् भुजगारविभक्तिमें नाना जीवोंकी अपेक्षा तीनों पदोंका जो अन्तर काल बतलाया है वही यहाँ भी तीनों पदोंकी अपेक्षा सर्वत्र जानना चाहिये। खुलासा वहाँ कर आये हैं इसलिये यहाँ नहीं किया है। केवल यहाँ मनुष्यत्रिकमें अवस्थितविभक्तिका उत्कृष्ट अन्तर जो वर्षपृथक्त्व बतलाया है सो यह उपशमश्रेणिके उत्कृष्ट अन्तरकालकी अपेक्षा कहा है। भुजगारविभक्तिमें भी अवस्थितविभक्तिका यह अन्तर काल सम्भव है पर वहाँ इसकी विवक्षा नहीं की गई है, वैसे यह अन्तरकाल वहाँ भी बन जाता है।

§ ६९. भावानुगमकी अपेक्षा सर्वत्र औदायिक भाव होता है।

§ ७०. अल्पबहुत्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है-ओघ और आदेश। ओघसे अवस्थितप्रदेशविभक्तिवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे असंख्यातभागवृद्धिप्रदेशविभक्ति वाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागहानिप्रदेशविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। अथवा हानिसे वृद्धि संख्यातगुणी है। अर्थात् अवस्थितविभक्तिवालोंसे असंख्यातभाग-हानिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं और इनसे असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार सब नारकी, सब तिर्यंच, सामान्य मनुष्य, मनुष्य अपर्याप्त, देव और भवनवासियोंसे लेकर अपराजित तकके देवोंमें जानना चाहिये। मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यनियोंमें अवस्थित-विभक्तिवाले सबसे थोड़े हैं। इनसे असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागहानिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। अथवा वृद्धि और हानियोंका विपर्यय भी है। अर्थात् अवस्थितविभक्तिवालोंसे असंख्यातभागहानिवाले जीव संख्यातगुणे हैं और इनसे संख्यातभागवृद्धिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार सर्वार्थसिद्धिमें है। तथा इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये।

इस प्रकार वृद्धि अनुयोगद्वार समाप्त हुआ।

§ ७१. इसके पश्चात् स्थानोंका कथन जानकर करना चाहिये।

इस प्रकार इन पदनिक्षेप वृद्धि और स्थानोंका कथनकर चुकनेपर
मूलप्रकृति प्रदेशविभक्ति समाप्त होती है।

❀ उत्तरपयडिपदेसविहत्तीए एगजीवेण सामित्तं ।

§ ७२. संपहि एत्थ उत्तरपयडिपदेसविहत्तीए भागाभागो सव्वपदेसविहत्ती णोसव्वपदेसविहत्ती उक्कस्सपदेसवि० अणुक्कस्सपदेसवि० जहण्णपदेसवि० अजहण्णपदेसवि० सादियपदेसवि० अणादियपदेसवि० धुवपदेसवि० अद्धुवपदेसवि० एगजीवेण सामित्तं कालो अंतरं णाणाजीवेहि भंगविचओ परिमाणं खेत्तं पोसणं कालो अंतरं सण्णियासो भावो अप्पाबहुअं चेदि तेवीस अणियोगद्दाराणि । पुणो भुजगारो पदणिक्खेवो वड्ढी ट्ठाणाणि त्ति अण्णाणि चत्तारि अणियोगद्दाराणि । एत्थ आदिल्लाणि एक्कारस अणियोगद्दाराणि मोत्तूण पढमं सामित्ताणिओगद्दारं चेव किमट्ठं परूविदं ? ण, तेसिमेक्कारसण्हमेत्थेवुवलंभादो ।

§ ७३. संपहि एदेण सामित्तसुत्तेण सूचिदाणमेक्कारसण्हमणिओगद्दाराणं ताव परूवणं कस्सामो । तं जहा—एत्थ भागाभागो दुविहो—जीवभागाभागो पदेसभागाभागो चेदि । तत्थ जीवभागाभागमुवरि कस्सामो, णाणाजीवविसयस्स तस्स एगजीवेण सामित्तादिसु अपरूविदेसु परूवणोवायाभावादो । तदो थप्पमेदं कादूण उत्तरपयडिपदेसभागाभागं ताव वत्तइस्सामो, तस्स सव्वाणियोगद्दाराणं जोणीभूदस्स पुव्वपरूवणाजोगत्तादो । तं जहा—उत्तरपयडिपदेसभागा० दुविहो—जह० उक्क० । उक्क० पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । तत्थ ओघेण मोह० सव्वपदेसपिंडं गुणिदकम्मंसिय-

---

❀ उत्तरप्रकृतिप्रदेशविभक्तिमें एक जीवकी अपेक्षा स्वामित्वको कहते हैं ।

§ ७२. अब यहाँ उत्तरप्रकृतिप्रदेशविभक्तिमें भागाभाग, सर्वप्रदेशविभक्ति, नोसर्वप्रदेशविभक्ति, उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति, जघन्य प्रदेशविभक्ति, अजघन्य प्रदेशविभक्ति, सादि प्रदेशविभक्ति, अनादि प्रदेशविभक्ति, ध्रुव प्रदेशविभक्ति, अध्रुव प्रदेशविभक्ति, एक जीवकी अपेक्षा स्वामित्व, काल, अन्तर, नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचय, परिमाण, क्षेत्र, स्पर्शन, काल, अन्तर, सन्निकर्ष, भाव, और अल्पबहुत्व ये तेईस अनुयोगद्वार होते हैं । इनके सिवा भुजगार, पदनिक्षेप, वृद्धि और स्थान ये चार अनुयोगद्वार और होते हैं ।

शंका—यहाँ आदिके ग्यारह अनुयोगद्वारोंको छोड़कर पहले स्वामित्वानुयोगद्वार ही क्यों कहा ?

समाधान—नहीं, क्योंकि वे ग्यारह अनुयोगद्वार इसी स्वामित्वानुयोगद्वारमें गर्भित पाये जाते हैं, इसलिए पहले स्वामित्वानुयोगद्वारका ही कथन किया है ।

§ ७३. अब इस स्वामित्वका कथन करनेवाले सूत्रसे सूचित होनेवाले ग्यारह अनुयोगद्वारोंका कथन करते हैं । वह इस प्रकार है—यहाँ भागाभाग दो प्रकारका है—जीव भागाभाग और प्रदेशभागाभाग । उनमें जीव भागाभागको आगे कहेंगे, क्योंकि जीव भागाभाग नाना जीवविषयक है, अतः एक जीवकी अपेक्षा स्वामित्व आदिका कथन किये बिना उसके कथन करनेका कोई उपाय नहीं है । अतः उसे रोककर उत्तरप्रकृतिप्रदेशविषयक भागाभागको कहते हैं, क्योंकि वह सब अनियोगद्वारोंका उत्पत्तिस्थान होनेसे पहले कहे जानेके योग्य है । उसका कथन इसप्रकार है—उत्तरप्रकृतिप्रदेशभागाभाग दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टसे प्रयोजन है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश उनमें ।

विसयकम्मट्ठिदिसंचिदणाणासमयपबद्धप्पयं घेत्तूण बुद्धीए पुंजं कादूण ठविय पुणो एदस्सणंतखंडं कादूणेयखंडं सव्वघादिभागो त्ति पुध ट्ठविय सेसबहुभागदव्वमावलि० असंखे०भागेण खंडेऊणेयखंडं पि पुध ट्ठविय सेसदव्वं सरिसवेभागे काऊण पुणो पुव्वमवणिय पुध ट्ठविदआवलि० असंखे०भागेण खंडेदूणेयखंडमेत्तदव्वमाणेयूण सरिसीकदवेभागेसु तत्थ पढमभागे पक्खित्ते कसायभागो होदि। इदरो वि णोकसाय-भागो। संपहि णोकसायभागं घेत्तूणेदमावलि० असंखे०भागेण खंडिदूणेयखंडमवणिय पुध ट्ठवेयव्वं। पुणो सेसदव्वं पंचसमभागे कादूण पुणो आवलि० असंखे०भागं विरलिय पुव्वमवणिय पुध ट्ठविददव्वं समखंडे करिय दादूण तत्थेयखंडं मोत्तूण सेससव्वखंड-समूहं घेत्तूण पढमपुंजे पक्खित्ते वेदभागो होदि। तिण्हं वेदाणमव्वोगाढसरूवेण विवक्खियत्तादो। पुणो सेसेगखंडमेदिस्से चेव विरलणाए उवरिमसमखंडं कादूण तत्थेगखंडपरिहारेण सेससव्वखंडे घेत्तूण विदियपुंजे पक्खित्ते रदि-अरदीणमव्वोगाढ-भागो होदि। पुणो सेसेगरूवधरिदमवट्ठिदविरलणाए समखंडं कादूण तत्थेगरूवधरिदं मोत्तूण सेससव्वरूवधरिदाणि घेत्तूण तदियपुंजे पक्खित्ते हस्स-सोगभागो होदि। पुणो सेसेगरूवधरिदमवट्ठिदविरलणाए समपविभागेण दादूण तत्थेयखंडं परिवज्जणेण सेस-

---

से ओघसे गुणितकर्मांशको विषय करनेवाली कर्मस्थितिके भीतर संचित हुए नाना समय-प्रबद्धात्मक समस्त प्रदेशपिंडको लेकर बुद्धिके द्वारा उसका एक पुंज करके स्थापित करो। पुनः उसके अनन्त खण्ड करो। उनमेंसे एक खण्ड सर्वघाति प्रकृतियोंका भाग है। उसे पृथक् स्थापित करो। शेष बहु भाग द्रव्यको आवलिके असंख्यातवें भागसे भाजित करके एक भागको भी पृथक् स्थापित करो। शेष द्रव्यके समान दो भाग करके पुनः पहले निकालकर पृथक् स्थापित किये गये एक भागमें आवलिके असंख्यातवें भागका भाग देकर एक भाग प्रमाण द्रव्यको अलग करके शेष सब द्रव्यको समान दो भागोंमेंसे प्रथम भागमें मिलाने पर कषायोंका भाग होता है। तथा इतर भाग भी नोकषायोंका भाग होता है। अब नोकषायोंके भागको लेकर उसमें आवलिके असंख्यातवें भागसे भाग दो और एक भागको अलग करके पृथक् स्थापित करो। फिर शेष द्रव्यको समान पांच भागोंमें विभा-जित करके पुनः आवलिके असंख्यातवें भागको विरलन करके, पहले घटा करके पृथक् स्थापित किये गये द्रव्यके समान खण्ड करके विरलित राशि पर दो। उनमेंसे एक खण्डको छोड़कर शेष सब खण्डोंके समूहको लेकर प्रथम पुंजमें जोड़ देनेपर वेदका भाग होता है, क्योंकि यहांपर तीनों वेदोंकी अभेद रूपसे विवक्षा है। पुनः शेष बचे एक खण्डको आवलिके असंख्यातवें भाग रूप विरलन राशिके ऊपर समान खण्ड करके दो। उनमेंसे एक खण्डको छोड़कर शेष सब खण्डोंको लेकर दूसरे पुंजमें जोड़ देनेपर रति और अरतिका मिला हुआ भाग होता है। पुनः शेष एक विरलन अंकके प्रति प्राप्त हुए द्रव्यको अवस्थित विरलनके ऊपर समान खण्ड करके दो। उनमेंसे एक विरलन अंक पर दिये गये एक खण्डको छोड़कर शेष सब विरलित रूपों पर दिये गये खण्डोंको लेकर तीसरे पुंजमें जोड़ देने पर हास्य और शोकका भाग होता है। फिर शेष एक विरलन अंकके प्रति प्राप्त हुए द्रव्यको अवस्थित विरलनके ऊपर समान भाग करके दो। उनमेंसे एक खण्डको छोड़कर शेष बचे हुए बहुत खण्डोंको

बहुखंडेसु चउत्थपुंजे पक्खित्तेसु भयभागो होदि। पुणो सेसेगरूवधरिदे पंचमपुंजे पक्खित्ते दुगुंछाभागो होइ। तदो एत्थेसो आलावो कायव्वो—सव्वत्थोवो दुगुंछाभागो। भयभागो विसेसाहिओ। हस्स-सोगभागो विसे०। रदि-अरदिभागो विसे०। वेदभागो विसेसाहिओ त्ति।

§ ७४. अधवा णोकसायसयलदव्वं घेत्तूण पंचसमपुंजे कादूण पुणो पढमपुंजम्मि आवलि० असंखे०भागेण खंडेदूणेयखंडमवणिय पुध ट्ठवेयव्वं। पुणो एदं चेव भागहारं जहाकमं विसेसाहियं कादूण विदिय-तदिय-चउत्थपुंजेसु भागं घेत्तूण पुणो एवं गहिद-सव्वदव्वे पंचमपुंजे[१] पक्खित्ते वेदभागो होदि। हेट्ठिमा च जहाकमं दुगुंछा-भय-हस्स-सोग-रदि-अरदीणं भागा होंति त्ति वत्तव्वं। एत्थ वि सो चेवालावो कायव्वो, विसेसा-भावादो।

चौथे पुंजमें जोड़ देने पर भयनोकषायका भाग होता है। फिर शेष एक विरलन अंकके प्रति प्राप्त हुए द्रव्यको पाँचवें पुंजमें जोड़ देने पर जुगुप्साका भाग होता है। अतः यहां ऐसा आलाप करना चाहिए—जुगुप्साका भाग सबसे थोड़ा है। उससे भयका भाग विशेष अधिक है। उससे हास्य-शोकका भाग विशेष अधिक है। उससे रति-अरतिका भाग विशेष अधिक है और उससे वेदका भाग विशेष अधिक है।

§ ७४. अथवा, नोकषायके समस्त द्रव्यको लेकर उसके पांच समान पुञ्ज करो। फिर पहले पुञ्जमें अवलिके असंख्यातवें भागसे भाग देकर एक खण्डको घटाकर पृथक् स्थापित करो। पुनः इसी भागहारको क्रमानुसार विशेष अधिक विशेष अधिक करके उससे दूसरे, तीसरे और चौथे पुंजमें भाग देकर इस प्रकार गृहीत सब द्रव्यको पांचवें पुंजमें जोड़ देने पर वेद का भाग होता है और नीचेके भाग क्रमशः जुगुप्सा, भय, हास्य-शोक और रति-अरतिके भाग होते हैं ऐसा कहना चाहिये। यहां पर भी वही आलाप कहना चाहिये, क्योंकि दोनों में कोई भेद नहीं है।

विशेषार्थ—मोहनीयकी उत्तरप्रकृतियोंमें भागाभागके दो भेद करके पहले प्रदेश भागाभागका कथन किया है। प्रदेशभागाभागके द्वारा यह बतलाया जाता है कि उत्तर प्रकृतियोंमें किस प्रकृतिको कितना द्रव्य मिलता है। अर्थात् प्रति समय बंधनेवाले समय प्रबद्धमेंसे मोहनीय-को जो भाग मिलता है वह उसकी उत्तरप्रकृतियोंमें तत्काल विभाजित हो जाता है। इस प्रकार संचित होते होते मोहनीयकी उत्तर प्रकृतियोंमें जिस क्रमसे संचित द्रव्य रहता है उसका विभागक्रम यहाँ बतलाया है। चूँकि इस ग्रन्थमें प्रकृति आदि सभी विभक्तियोंका कथन सत्तामें स्थित द्रव्यको लेकर ही किया है, अन्यथा बध्यमान समयप्रबद्धका विभाग तो तत्काल हो जाता है जैसा कि पहले हमने लिखा है। विभागका जो क्रम बतलाया है उसका खुलासा इस प्रकार है—मोहनीयकर्मका जो संचित द्रव्य है उसमें अनन्तका भाग दो। एक भागप्रमाण सर्वघाति द्रव्य होता है और शेष बहुभागप्रमाण द्रव्य देशघाती होता है। एक भागप्रमाण सर्वघाति द्रव्यको अलग रख दो, उसका बँटवारा बादको करेंगे। पहले बहुभागप्रमाण देशघाती द्रव्य लो। उसमें आवलिके असंख्यातवें भागसे भाग दो। लब्ध एक भागको जुदा रखकर शेष बहुभागके दो समान भाग करो। उन दो भागोंमेंसे एक भागमें अलग रखे हुए एक भागमें आवलिके असंख्यातवें भागका भाग देकर बहुभागको मिला दो। यह भाग कषायका होता है,

---

१. ता०प्रतौ 'गहिदसव्वपुंजे पंचपुंजे' इति पाठः।

और शेष एक भाग सहित दूसरा भाग नोकषायका होता है। जैसे यदि मोहनीय कर्मके संचित द्रव्यका प्रमाण ६५५३६ कल्पित किया जावे और अनन्तका प्रमाण १६ कल्पित किया जावे तो ६५५३६ में १६ का भाग देनेसे लब्ध एक भाग ४०९६ आता है। यह सर्वघाती द्रव्य है और शेष ६५५३६–४०९६=६१४४० देशघाती द्रव्य है। देशघाती द्रव्यका बटवारा देशघाती प्रकृतियोंमें ही होता है। अतः इस देशघाती द्रव्य ६१४४० में आवलिके असंख्यातवें भागके कल्पित प्रमाण ४ से भाग देने पर लब्ध एक भाग १५३६० आता है। इस एक भागको जुदा रखनेसे शेष बहुभाग ६१४४०–१५३६०=४६०८० रहता है। इस बहुभागके दो समान भाग करनेसे प्रत्येक भागका प्रमाण २३०४० होता है। इसमें जुदा रखे हुए एक भाग १५३६० के बहुभाग ११५२० मिला देनेसे २३०४०+११५२०=३४५६० संज्वलन कषायका द्रव्य होता है और बचे हुए एक भाग ३८४० सहित दूसरा समान भाग २३०४० अर्थात् २३०४०+३८४०=२६८८० नोकषायका द्रव्य होता है। नोकषाय नौ हैं, किन्तु उनमेंसे एक समयमें पाँचका ही बन्ध होता है—तीनों वेदोंमेंसे एक वेद, रति-अरतिमेंसे एक, हास्य शोकमेंसे एक और भय तथा जुगुप्सा। अतः तीनों वेदों, रति-अरति और हास्य-शोकमें अभेद विवक्षा करके संचित द्रव्यका बटवारा भी उसी रूपसे बतलाया है। इसलिये नोकषायको जो द्रव्य मिलता है वह पाँच जगह विभाजित हो जाता है। उसके विभागका क्रम इस प्रकार है—नोकषायके द्रव्यमें आवलिके असंख्यातवें भागका भाग देकर लब्ध एक भागको जुदा रखो और शेष बहुभागके पाँच समान भाग करो। फिर जुदे रखे हुए एक भागमें आवलिके असंख्यातवें भागसे भाग दो। लब्ध एक भागको जुदा रखकर शेष बहुभागको पाँच समान भागोंमेंसे पहले भागमें जोड़ देनेसे जो द्रव्य होता है वह द्रव्य वेदका होता है। फिर जुदे रखे हुए एक भागमें आवलिके असंख्यातवें भागसे भाग देकर लब्ध एक भागको जुदा रख शेष बहुभागको पाँच समान भागों-मेंसे दूसरे भागमें जोड़ देनेसे रति-अरतिका द्रव्य होता है। इसी प्रकार जुदे रखे एक भागमें आवलिके असंख्यातवें भागसे भाग देकर और एक भागको फिर जुदा रख शेष बहुभागको तीसरे भागमें जोड़नेसे हास्य-शोकका भाग होता है। फिर जुदे रखे एक भागमें आवलिके असंख्यातवें भागसे भाग देकर बहुभाग चौथेमें मिलानेपर भयका भाग होता है। फिर शेष बचे एक भागको पाँचवें समान भागमें जोड़ देनेसे जुगुप्साका भाग होता है। जैसे नोकषायका द्रव्य २६८८० है। उसमें आवलिके असंख्यातवें भागके कल्पित प्रमाण ४ का भाग देनेसे लब्ध एक भाग ६७२० आता है। उसे अलग रखनेसे शेष २६८८०–६७२०=२०१६० बचता है। उसके पाँच समान भाग करनेसे प्रत्येक भागका प्रमाण ४०३२ होता है। जुदे रखे हुए एक भाग ६७२० में ४ का भाग देनेसे लब्ध एक भाग १६८० आता है। इसे अलग रखकर शेष बहुभाग ६७२०–१६८०=५०४० को पहले समान भाग ४०३२ में जोड़नेसे वेदका द्रव्य ९०७२ होता है। फिर जुदे रखे एक भाग १६८० में ४ का भाग देनेसे लब्ध एक भाग ४६० आता है। इसे जुदा रखकर शेष बहुभाग १६८०–४२०=१२६० को दूसरे समान भागमें जोड़नेसे ४०३२+१२६०=५२९२ रति-अरतिका द्रव्य होता है। इसी प्रकार आगे भी जानना चाहिये। यहाँ एक बात समझ लेना आवश्यक है कि मूलमें एक भागमें आवलिके असंख्यातवें भागका भाग न देकर यह लिखा है कि आवलिके असंख्यातवें भागका विरलन करो और प्रत्येक विरलित रूपपर जुदे रखे हुए एक भागके समान भाग करके दे दो। किन्तु ऐसा करने का मतलब ही जुदे रखे हुए भागमें आवलिके असंख्यातवें भागसे भाग देना होता है। जैसे १६ में ४ का भाग देनेसे चार आता है यह एक भाग है, वैसे ही चारका विरलन करके और प्रत्येक विरलित रूपपर १६ को ४ समान भागोंमें करके रखने पर एक भागका प्रमाण ४ ही आता है। यथा—$\begin{matrix}४&४&४&४\\१&१&१&१\end{matrix}$। अतः

§ ७५. संपहि कसायभागमावलि० असंखे०भागेण भागं घेत्तूणेगखंडं पुध ट्ठविय सेसदव्वं चत्तारि सरिसपुंजे कादूण तदो आवलि० असंखे०भागमवट्ठिदविरलणं कादूण

दोनोंमें कोई अन्तर नहीं है। आगे भी जहाँ जहाँ आवलिके असंख्यातवें भागका विरलन करके उसके ऊपर जुदे रखे द्रव्यके समान भाग करके एक एक रूपपर एक एक भाग रखनेका कथन किया है वहाँ उसका मतलब जुदे रखे हुए द्रव्यमें आवलिके असंख्यातवें भागका भाग देना ही समझना चाहिये। मूलमें अथवा करके विभागका दूसरा क्रम भी बतलाया है। उस क्रमके अनुसार नोकषायको जो द्रव्य मिला है उसके पाँच समान भाग करो। फिर पहले भागमें आवलिके असंख्यातवें भागसे भाग दो और लब्ध एक भागप्रमाण द्रव्यको अलग रख दो। फिर दूसरे भागमें कुछ अधिक आवलिके असंख्यातवें भागसे भाग दो और लब्ध एक भागप्रमाण द्रव्यको अलग स्थापित कर दो। फिर तीसरे भागमें उससे भी कुछ अधिक आवलिके असंख्यातवें भागसे भाग दो और लब्ध एक भागप्रमाण द्रव्यको पृथक् स्थापित करो। फिर चौथे भागमें उससे भी और अधिक आवलिके असंख्यातवें भागसे भाग दो और लब्ध एक भागप्रमाण द्रव्यको पृथक् स्थापित करो। भाग दे दे करके पृथक् स्थापित किये हुए इन चारों भागोंको पाँचवें समान भागमें जोड़ देनेसे वेदका द्रव्य होता है। और पहले, दूसरे, तीसरे और चौथे समान भागमें भाग देकर जो पृथक् द्रव्य स्थापित किये थे उन द्रव्योंके सिवाय पहले, दूसरे, तीसरे और चौथे समान भागमेंसे जो द्रव्य शेष बचता है वह क्रमानुसार जुगुप्सा, भय, हास्य-शोक और रति-अरतिका भाग होता है। जैसे नोकषायके द्रव्यका प्रमाण २६८८० है। इसके पाँच समान भाग करनेसे प्रत्येक भागका प्रमाण ५३७६ होता है। पहले ५३७६ में आवलि के असंख्यातवें भाग ४से भाग देने से लब्ध एक भाग १३४४ आता है, इसे पृथक् स्थापित करनेसे शेष द्रव्य ५३७६ – १३४४ = ४०३२ बचता है। दूसरे समान भाग ५३७६ में कुछ अधिक आवलिके असंख्यातवें भाग ६ से भाग देने से लब्ध एक भाग ८९६ आता है। इसे पृथक् स्थापित करनेसे शेष द्रव्य ५३७६ – ८९६ = ४४८० बचता है। तीसरे ५३७६ में उससे भी कुछ अधिक आवलिके असंख्यातवें भाग ८ का भाग देनेसे लब्ध एक भाग ६७२ आता है। इसे पृथक् स्थापित करनेसे शेष द्रव्य ५३७६ – ६७२ = ४७०४ बचता है। चौथे ५३७६ में उससे भी कुछ अधिक आवलिके असंख्यातवें भाग १२से भाग देनेसे लब्ध एक भाग ४४८ आता है। उसे पृथक् स्थापित करनेसे शेष द्रव्य ५३७६ – ४४८ = ४९२८ बचता है। इस प्रकार भाग दे दे करके पृथक् स्थापित किये गये एक एक भागको १३४४ + ८९६ + ६७२ + ४४८ = ३३६० पाँचवे समान भाग ५३७६ में मिला देनेसे वेदका द्रव्य ८७३६ होता है और बाकी बचे द्रव्योंमें से क्रमशः ४०३२ द्रव्य जुगुप्साका, ४४८० द्रव्य भयका, ४७०४ द्रव्य हास्य-शोकका और ४९२८ द्रव्य रति-अरतिका होता है। इस क्रमसे विभाग करनेमें भी बटवारेका परिमाण वही आता है जो पहले प्रकारसे करनेसे आता है। हमारे उदाहरणमें जो अन्तर पड़ गया है उसका कारण यह है कि भागहार आवलिके असंख्यातवें भागको हमने भाग देनेकी सहूलियतके लिये अधिक बढ़ा लिया है। अर्थात् उसका प्रमाण ४ कल्पित करके आगे कुछ अधिक कुछ अधिकके स्थानमें ६,८ और १२ कर लिया है। यदि वह ठीक परिमाण में हो तो द्रव्यका परिमाण पहले प्रकारके अनुसार ही निकलेगा।

§ ७५ अब कषायको जो भाग मिला था उसमें आवलिके असंख्यातवें भागका भाग देकर एक भागको पृथक् स्थापित करो। शेष द्रव्यके चार समान पुंज करो। उसके बाद आवलिके असंख्यातवें भागका अवस्थित विरलन करके उसके ऊपर पहले घटाये हुए

तस्सुवरि पुव्वमवणिदभागं समपविभागेण दादूण तत्थेगरूवधरिदं मोत्तूण सेससव्वरूवधरिदाणि घेत्तूण पढमपुंजे पक्खित्ते लोभसंजल०भागो होदि। सेसेगरूवधरिदमवट्ठिदविरलणाए उवरि पुणो वि समखंडं करिय दादूण तत्थेगरूवधरिदपरिच्चागेण सेससव्वरूवधरिदाणि घेत्तूण विदियपुंजे पक्खित्ते मायासंज०भागो होदि। पुणो सेसेगरूवधरिदमवट्ठिदविरलणाए पुव्वविहाणेण दादूण तेणेव कमेण घेत्तूण तदियपुंजे पक्खित्ते कोहसंजलणभागो होदि। सेसेगरूवधरिदं घेत्तूण चउत्थपुंजे पक्खित्ते माणसंजल०भागो होदि। एत्थालावो भण्णदे—माणभागो थोवो। कोहभागो विसेसाहिओ। मायाभागो विसे०। लोभभागो विसे०। अधवा कसायसव्वदव्वं सरिसचत्तारि भागे कादूण पुव्वविहाणेणावलि० असंखे०भागं परिवाडीए विसेसाहियं करिय पढम-विदिय-तदियपुंजेसु भागं घेत्तूण चउत्थपुंजे तम्मि भागलद्धे पक्खित्ते लोभसंजल०भागो होदि। हेट्ठिमा वि विलोमकमेण माया-कोह-माणसंजलणाणं भागा होंति। एत्थ वि सो चेवालावो कायव्वो। एदं च सत्थाणगुणिदकम्मंसियमस्सिऊण भणिदं, खवगसेढीए अक्कमेण संजलणाणमुक्कस्सदव्वाणुवलंभादो। किं कारणं। खवगसेढीए णोकसायसव्वदव्वे कोहसंजलणम्मि पक्खित्ते

एक भागके समान विभाग करके स्थापित करो। उनमेंसे एक विरलित रूप पर स्थापित किये हुए भागको छोड़कर बाकीके विरलित रूपों पर स्थापित किये हुए सब भागोंको एकत्र करके पहले पुंजमें मिला देने पर संज्वलन लोभका भाग होता है। शेष एक विरलनके प्रति प्राप्त द्रव्यको फिर भी अवस्थित विरलनके ऊपर समान खण्ड करके दो। उनमें से एक विरलित रूप पर दिये गये भागको छोड़कर शेष सब विरलित रूपों पर दिये गये भागोंको एकत्र करके दूसरे पुंजमें मिला देने पर संज्वलन मायाका भाग होता है। पुनः शेष एक विरलन अंकके प्रति प्राप्त द्रव्यको अवस्थित विरलन राशिके ऊपर पहले कहे गये विधानके अनुसार देकर उसी क्रमसे एक भागको छोड़ कर और शेष बचे सब भागोंको एकत्र करके तीसरे पुंजमें मिला देने पर संज्वलन क्रोधका भाग होता है। शेष एक विरलन अंकके प्रति प्राप्त हुए द्रव्यको लेकर चौथे पुंजमें मिला देनेपर संज्वलन मानका भाग होता है। यहाँ आलाप कहते हैं। मानका भाग थोड़ा है। उससे क्रोधका भाग विशेष अधिक है। उससे मायाका भाग विशेष अधिक है। उससे लोभका भाग विशेष अधिक है। अथवा कषायके सब द्रव्यके समान चार भाग करके पूर्व विधानके अनुसार आवलिके असंख्यातवें भागको क्रमानुसार विशेष अधिक करके पहले, दूसरे और तीसरे पुंजमें भाग देकर उस लब्ध भागको चौथे पुंजमें मिला देने पर संज्वलन लोभका भाग होता है। नीचेके भी भाग विलोमक्रमसे संज्वलन माया, संज्वलन क्रोध और संज्वलन मानके भाग होते हैं। यहाँ पर भी वही आलाप करना चाहिये। यह विभाग स्वस्थान गुणितकर्मांशिकको लेकर कहा है, क्योंकि क्षपकश्रेणीमें एक साथ संज्वलन कषायोंका उत्कृष्ट द्रव्य नहीं पाया जाता है।

शंका—क्षपक श्रेणीमें संज्वलन कषायोंका उत्कृष्ट द्रव्य एक साथ क्यों नहीं पाया जाता?

समाधान—क्षपकश्रेणीमें नोकषायके सब द्रव्यका संज्वलन क्रोधमें प्रक्षेप कर देने पर संज्वलन क्रोधका द्रव्य होता है। क्रोध संज्वलनके द्रव्यका मान संज्वलनमें प्रक्षेपकर देने

कोहसंजल०दव्वं होदि। कोहसंज०दव्वे माणसंजलणम्मि पक्खित्ते माणसंज०-दव्वं होदि। माणसंज०दव्वे मायासंज० पक्खित्ते मायासंज०दव्वं होदि। मायासंज०-दव्वे लोभसंजलणम्मि पक्खित्ते लोहसंजलणदव्वं होदि त्ति एदेण कारणेण णत्थि तत्थ भागाभागो, जुगवमसंभवंताणं भागाभागविहाणोवायाभावादो। अधवा जुगव-मसंभवंताणं पि सव्वदव्वाणं बुद्धीए समाहारं कादूण एसो भागाभागो कायव्वो।

पर मान संज्वलनका द्रव्य होता है। मान संज्वलनके द्रव्यको माया संज्वलनके द्रव्यमें मिला देनेपर माया संज्वलनका द्रव्य होता है। और माया संज्वलनके द्रव्यको लोभसंज्वलनके द्रव्यमें मिला देनेपर लोभसंज्वलनका द्रव्य होता है। इस कारणसे क्षपकश्रेणीमें भागाभाग नहीं है, क्योंकि इनका एकसाथ पाया जाना सम्भव न होनेसे वहाँ भागाभागके विधान करनेका कोई उपाय नहीं है।

अथवा प्रकृतियोंके एक साथ असंभवित भी सब द्रव्यका बुद्धिके द्वारा समूह करके यह भागाभाग करना चाहिये।

विशेषार्थ—देशघाती द्रव्यका जो भाग संज्वलन कषायको मिला है उसका बटवारा उक्त दोनों क्रमानुसार चार भागोंमें होता है। जैसे कषायके भागका परिमाण ३४५६० है। उसमें आवलिके असंख्यातवें भागके कल्पित प्रमाण ४ से भाग देनेसे लब्ध ८६४० आता है। इस एक भागको जुदा रख शेष बहुभाग ३४५६०–८६४०=२५९२० के चार समान भाग करो। फिर जुदे रखे एक भाग ८६४० में ४ का भाग देकर लब्ध एक भाग २१६० को अलग रखकर शेष बहुभाग ८६४०–२१६०=६४८० को प्रथम समान भाग ६४८० में जोड़ देनेसे ६४८०+६४८०=१२९६० संज्वलन लोभका भाग होता है। फिर जुदे रखे एक भाग २१६० में फिर ४ का भाग देनेसे लब्ध एक भाग ५४० को जुदा रखकर शेष बहुभाग २१६०–५४०=१६२० को दूसरे समान भाग ६४८० में जोड़नेसे संज्वलन मायाका भाग ६४८०+१६२०=८१०० होता है। जुदे रखे भाग ५४० में फिर ४ का भाग देकर लब्ध एक भाग १३५ को जुदा रखकर शेष बहुभाग ५४०–१३५=४०५ को तीसरे समान भागमें जोड़नेसे संज्वलन क्रोधका भाग ६४८०+४०५=६८८५ होता है। शेष बचे एक भाग १३५ को चौथे समान भागमें मिलानेसे संज्वलन मानका भाग ६४८०+१३५=६६१५ होता है। दूसरे क्रमकेअनुसार कषायके सर्व द्रव्य ३४५६० के चार समान भाग करके पहले, दूसरे और तीसरे समान भागमें क्रमसे आवलिके असंख्यातवें भागसे, कुछ अधिक आवलिके असंख्यातवें भागसे और उससे भी कुछ अधिक आवलिके असंख्योतवें भागसे भाग देकर लब्ध तीनों एक एक भागोंको जोड़कर चौथे समान भागमें मिलानेसे संज्वलन लोभका भाग होता है और पहले, दूसरे और तीसरे समान भागमेंसे अपने अपने लब्ध एक एक भागको घटानेसे जो द्रव्य शेष बचता है वह क्रमसे संज्वलन मान, संज्वलन क्रोध और संज्वलन मायाका द्रव्य होता है। जैसा कि प्रारम्भमें ही कह आये हैं। गुणितकर्मांश जीवके प्रदेश सत्कर्मको लेकर ही यह विभाग किया गया है। क्षपकश्रेणीमें यद्यपि संज्वलनचतुष्कका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होता है किन्तु वह एक साथ चारों कषायोंका नहीं होता, किन्तु जब पुरुषवेद और नोकषायोंके प्रदेशोंका प्रक्षेप संज्वलन क्रोधमें हो जाता है तब संज्वलनक्रोधका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होता है। जब यही क्रोध मानमें प्रक्षिप्त हो जाता है तब मानका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होता है। इसी प्रकार आगे भी जानना चाहिए। अतः क्षपक श्रेणिमें भागाभाग नहीं होता। फिर भी यदि वहाँ भागाभाग करना ही हो तो उनके सब द्रव्य-का समाहार करके कर लेना चाहिये।

§ ७६. संपहि मोह० दव्वमणंतखंडं कादूण पुव्वमवणिदेयखंडं दव्वं सव्वघादिपडिबद्धं घेत्तूण तम्मि आवलि० असंखे०भागेण खंडिदेयखंडं पुध ट्ठविय सेसदव्वं सरिसतेरहपुंजे कादूण पुणो आवलि० असंखे०भागं विरलिय पुव्वमवणिददव्वपमाणमाणेयूण समखंडं करिय दादूण तत्थेयखंडमुच्चा सेसबहुखंडाणि घेत्तूण पढमपुंजे पक्खित्ते मिच्छत्तभागो होदि। एवं सेसपुंजेसु वि सव्वकिरियं जाणिऊण भागाभागे कीरमाणे अणंताणु०लोभ-माया-कोह-माण-पच्चक्खाणलोह-माया-कोह-माण-अपच्चक्खाणलोभ-माया-कोह-माणभागा जहाकमं होंति। एत्थालावे भण्णमाणे अपच्चक्खाणमाणमादिं कादूण जाव मिच्छत्तं ताव विसेसाहियकमेण णेदव्वं। अहवा एदं चेव सव्वघादिपडिबद्धसव्वदव्वं घेत्तूण सरिसतेरहपुंजे कादूण पुणो आवलि० असंखे०भागेण पढमपुंजम्मि भागं घेत्तूण पुध ट्ठविय तदो एदं चेव[1] भागहारं परिवाडीए विसेसाहियं कादूण जहाकमं सेसेक्कारसपुंजेसु वि भागं घेत्तूण भागलद्धसव्वदव्वमेगपिंडं करिय तेरसपुंजे पक्खित्ते मिच्छत्तभागो होदि। सेसा वि जहाकममणंताणु०लोभादीणं भागा पच्छाणुपुव्वीए होंति त्ति घेत्तव्वं। एत्थ सव्वत्थ वि भागहारस्स विसेसाहियभावकरणे रासिपरिहाणिमुहेण सिस्साणं पडिबोहो समुप्पाएयव्वो। एत्थ वि पुव्वुत्तो

§ ७६. अब मोहनीयके द्रव्यके अनन्त खण्ड करके पहले घटाये हुए सर्वघातिप्रतिबद्ध एक खण्डप्रमाण द्रव्यको लेकर उसमें आवलिके असंख्यातवें भागसे भाग दो। एक भागको पृथक् स्थापित करके शेष द्रव्यके समान तेरह पुंज करो। फिर आवलिके असंख्यातवें भागका विरलन करके पहले अलग स्थापित किये गये द्रव्यके समान खण्ड करके विरलित राशिपर दो। उन खंडोंमेंसे एक खण्डको छोड़कर शेष सब खण्डोंको लेकर पहले पुंजमें मिला देनेपर मिथ्यात्वका भाग होता है। इस प्रकार शेष पुंजोंमें भी सब क्रियाको जानकर भागाभाग करने पर क्रमशः अनन्तानुबन्धी लोभ, अनन्तानुबन्धी माया, अनन्तानुबन्धी क्रोध, अनन्तानुबन्धी मान, प्रत्याख्यानावरण लोभ, प्रत्याख्यानावरण माया, प्रत्याख्यानावरण क्रोध, प्रत्याख्यानावरण मान, अप्रत्याख्यानावरण लोभ, अप्रत्याख्यानावरण माया, अप्रत्याख्यानावरण क्रोध और अप्रत्याख्यानावरण मानके भाग होते हैं। यहाँ आलापका कथन करनेपर अप्रत्याख्यानावरण मानसे लेकर मिथ्यात्व पर्यन्त विशेष अधिक विशेष अधिक क्रमसे ले जाना चाहिए। अथवा इसी सर्वघातीसे प्रतिबद्ध सब द्रव्यको लेकर समान तेरह पुंज करके फिर आवलिके असंख्यातवें भागसे प्रथम पुंजमें भाग देकर एक भागको पृथक् स्थापित करो। फिर इसी आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण भागहारको क्रमसे विशेष अधिक विशेष अधिक करके क्रमानुसार शेष ग्यारह पुंजोंमें भी भाग दे देकर भाग देनेसे लब्ध सब द्रव्यका एक पिण्ड करके तेरहवें पुंजमें मिला देनेपर मिथ्यात्वका भाग होता है। शेष भाग भी क्रमानुसार पश्चादानुपूर्वी क्रमसे अनन्तानुबन्धी लोभ आदिके होते हैं ऐसा ग्रहण करना चाहिये। यहाँ सर्वत्र ही भागहार आवलिके असंख्यातवें भागके विशेष अधिक करनेपर जो राशिकी उत्तरोत्तर हानि होती है उसी द्वारा शिष्योंको बोध उत्पन्न कराना चाहिये। यहाँ पर भी पूर्वोक्त ही आलाप करना चाहिये,

१. आ-प्रतौ 'एवं चेव' इति पाठः।

चेवालावो कायव्वो, विसेसाभावादो।

§ ७७. संपहि दंसणतियस्स सत्थाणभागाभागे कीरमाणे मिच्छत्तभागं तिप्पडिरासिय तत्थ पढमपुंजं मोत्तूण विदियपुंजे पलिदो० असंखे०भागेण भागं घेत्तूण भागलद्धे अवणिदे सम्मत्तभागो होदि। पुणो गुणसंकमभागहारं किंचूणीकरिय तदिय-

---

क्योंकि जो पहले कहा है उससे कोई अन्तर नहीं है।

विशेषार्थ—देशघाती द्रव्यका बँटवारा बतलाकर अब सर्वघाती द्रव्यके भागाभागका क्रम बतलाते हैं जो बिल्कुल पूर्ववत् ही है। सर्वघाती द्रव्यका यह विभाग मोहनीयकी केवल तेरह प्रकृतियोंमें ही होता है एक मिथ्यात्व और बारह कषाय। जब अनादि मिथ्यादृष्टि जीवको प्रथमोपशम सम्यक्त्व होता है तो मिथ्यात्वका ही द्रव्य शुभ परिणामोंसे प्रक्षालित होकर सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वरूप परिणत होता है, अतः उन्हें पृथक् द्रव्य नहीं दिया जाता। यहाँ भी सर्वघाती द्रव्यमें आवलिके असंख्यातवें भागसे भाग देकर लब्ध एक भागको जुदा रख शेष बहुभाग द्रव्यके तेरह समान भाग करने चाहिये। लब्ध एक भागमें पुनः आवलिके असंख्यातवें भागसे भाग देकर एक भागको जुदा रख शेष बहुभाग पहले भागमें मिलानेसे मिथ्यात्वका द्रव्य होता है। जुदे रखे एक भागमें पुनः आवलिके असंख्यातवें भागसे भाग देकर एक भागको जुदा रख बहुभाग दूसरे समान भागमें मिलानेसे अनन्तानुबन्धी लोभका भाग होता है। इसी प्रकार आगे भी जानना चाहिये। दूसरे क्रमके अनुसार सर्वघाती द्रव्यके तेरह समान भाग करके बारह भागोंमेंसे पहले भागमें आवलिके असंख्यातवें भागसे और शेष ग्यारह भागोंमें कुछ कुछ अधिक आवलिके असंख्यातवें भागसे भाग देकर लब्ध एक एक भागोंको जोड़कर तेरहवें भागमें मिलानेसे मिथ्यात्वका द्रव्य होता है और बारह समान भागोंमें अपने अपने लब्ध एक भागको घटानेसे जो जो द्रव्य बचता है वह क्रमसे अप्रत्याख्यानावरण मान, क्रोध, माया, लोभ, प्रत्याख्यानावरण मान, क्रोध, माया, लोभ और अनन्तानुबन्धी मान, क्रोध, माया और लोभका भाग होता है। यहाँ अन्तमें ग्रन्थकारने कहा है कि दूसरे क्रममें जो भागहार आवलिके असंख्यातवें भागको कुछ अधिक किया है सो कितना अधिक करना चाहिये यह बात गणितकी प्रक्रिया द्वारा शिष्योंको बतला देना चाहिये। यहाँ एक बात खास तौरसे ध्यान देने योग्य यह है कि गोमट्टसार कर्मकाण्डमें सर्वघाती द्रव्यका बटवारा देशघाती प्रकृतियोंमें भी करनेका विधान किया है और इसलिये तेरहमें संज्वलनचतुष्कको मिलाकर मोहनीयके सर्वघाती द्रव्यका विभाग सत्रह प्रकृतियोंमें किया है। जैसा कि कर्मकाण्डकी गाथा नं० १९९ और २०२ से स्पष्ट है। श्वेताम्बर ग्रन्थ कर्मप्रकृतिके अनुसार सर्वघाती द्रव्यके दो भाग होकर आधा भाग दर्शनमोहनीयको और आधा भाग चारित्रमोहनीयको मिलता है। तथा देशघाती द्रव्यका आधा भाग कषायमोहनीयको और आधा भाग नोकषायमोहनीयको मिलता है। दर्शनमोहनीयको जो आधा भाग मिलता है वह सब मिथ्यात्वप्रकृतिका होता है और चारित्रमोहनीयको जो भाग मिलता है वह बारह कषायोंका होता है तथा उसका आलाप वही होता है जो कि यहाँ मूलग्रन्थमें बतलाया है।

§ ७७. अब दर्शनत्रिकके स्वस्थानकी अपेक्षा भागाभाग करने पर मिथ्यात्वको जो भाग मिला उसकी तीन राशियाँ करो। उनमेंसे पहले पुंजको छोड़ दो। दूसरे पुंजमें पल्यके असंख्यातवें भागसे भाग देकर लब्ध एक भागको उसी पुञ्जमेंसे घटा देनेपर जो शेष बचे वह सम्यक्त्वका भाग होता है। फिर गुणसंक्रमभागहारका जो प्रमाण कहा है उसमेंसे कुछ कम करके उससे

पुंजे भागे हिदे भागलद्धे तम्मि चेवावणिदे सम्मामि०भागो होदि। पढमपुंजो वि अखंडो मिच्छत्तभागो होदि। अथवा सम्मत्त-मिच्छत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्सदव्वं वुद्धीए एगपुंजं कादूण पुणो तिण्णि सरिसभागे करिय तत्थ पढमभागे पलिदो० असंखे०-भागेण भागं घेत्तूण भागलद्धदव्वस्स किंचूणमद्धं विदियपुंजे पक्खिविय सेसदव्वम्मि तदियपुंजे पक्खित्ते जहाकमं सम्मामिच्छत्त-सम्मत्त-मिच्छत्तभागा होंति। एत्थ सम्मामि०भागो थोवो। सम्म०भागो विसे०। मिच्छ०भागो विसे०।

§ ७८. संपहि सव्वसमासालावे एत्थ भण्णमाणे अपच्चक्खाणमाणभागो थोवो। कोधे विसेसाहिओ। मायाए विसे०। लोभे विसे०। पच्चक्खाणमाणे विसे०। कोहे विसे०। मायाए विसे०। लोभे विसे०। अणंताणु०माणे विसे०। कोहे विसे०। मायाए विसे०। लोभे विसेसाहिओ। सम्मामि० विसे०। सम्मत्तभागो विसेसा०। मिच्छत्तभागो विसे०। दुगुंछाभागो अणंतगुणो। भयभागो विसे०। हस्स-सोगभागो विसे०। रदि-अरदिभागो विसे०। वेदभागो विसे०। माणसंज०भागो विसे०। कोह-संज०भागो विसे०। मायासंज०भागो विसे०। लोभसंज० विसे०। एवं मणुसतिए।

तीसरे पुंजमें भाग दो। लब्ध भागको उसी पुंजमेंसे घटा देनेपर जो शेष बचता है वह सम्यग्मिथ्यात्वप्रकृतिका भाग होता है। और पहला पूरा पुञ्ज मिथ्यात्वका भाग होता है। अथवा सम्यक्त्व, मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट द्रव्यका बुद्धिके द्वारा एक पुंज करके पुनः उसके तीन समान भाग करो। उसमेंसे पहले भागमें पल्यके असंख्यातवें भागसे भाग देकर भाग देनेसे जो द्रव्य प्राप्त हुआ उसके कुछ कम आधे भागको दूसरे पुंजमें मिला दो और शेष द्रव्यको तीसरे पुञ्जमें मिला दो। ऐसा करने पर क्रमशः सम्यग्मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और मिथ्यात्वके भाग होते हैं। यहाँ सम्यग्मिथ्यात्वका भाग थोड़ा है। सम्यक्त्वका भाग उससे विशेष अधिक है और मिथ्यात्वका भाग उससे विशेष अधिक है।

§ ७८. अब यहाँ सब आलापोंको संक्षेपमें कहते हैं—अप्रत्याख्यानावरण मानका भाग थोड़ा है। क्रोधका भाग उससे विशेष अधिक है। मायाका भाग उससे विशेष अधिक है। लोभका भाग उससे विशेष अधिक है। प्रत्याख्यानावरण मानका भाग उससे विशेष अधिक है। क्रोधका भाग उससे विशेष अधिक है। मायाका भाग उससे विशेष अधिक है। लोभका भाग उससे विशेष अधिक है। अनन्तानुबन्धी मानका भाग उससे विशेष अधिक है। क्रोधका भाग उससे विशेष अधिक है। मायाका भाग उससे विशेष अधिक है। लोभका भाग उससे विशेष अधिक है। सम्यग्मिथ्यात्वका भाग उससे विशेष अधिक है। सम्यक्त्वका भाग उससे विशेष अधिक है। मिथ्यात्वका भाग उससे विशेष अधिक है। जुगुप्साका भाग उससे अनन्तगुणा है। भयका भाग उससे विशेष अधिक है। हास्य-शोकका भाग उससे विशेष अधिक है। रति-अरतिका भाग उससे विशेष अधिक है। वेदका भाग उससे विशेष अधिक है। मानसंज्वलनका भाग उससे विशेष अधिक है। क्रोध संज्वलनका भाग उससे विशेष अधिक है। माया संज्वलनका भाग उससे विशेष अधिक है और लोभ संज्वलनका भाग उससे अधिक है। इसी प्रकार तीन प्रकारके मनुष्योंमें जानना चाहिए।

विशेषार्थ—पहले लिख आये हैं कि सम्यक्त्व प्रकृति और सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतिका बन्ध नहीं होता, इसलिए बन्धकालमें दर्शनमोहनीयका जो द्रव्य मिलता है वह सबका सब

§ ७९. आदेसेण णेरइ० उक्कस्ससंतकम्माणि घेत्तूणेवं चेव भागाभागो कायव्वो। णवरि मिच्छत्तभागमसंखे०खंडाणि कादूण तत्थेयखंडमेत्तो सम्मामि०भागो होइ। कारणं सुगमं। अण्णं च णोकसायुक्कस्ससंतकम्ममस्सियूण भागाभागे कीरमाणे णोकसाय-

---

मिथ्यात्व प्रकृतिको मिल जाता है। जब अनादि मिथ्यादृष्टि या सादि मिथ्यादृष्टि जीवको उपशमसम्यक्त्वकी प्राप्ति होती है तो सम्यक्त्व प्राप्त होनेके प्रथम समयमें ही सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व रूप कर्मांशोंकी उत्पत्ति हो जाती है। जैसे चाकीमें दले जानेसे धान्य तीन रूप हो जाता है—चावलरूप, छिलके रूप और चावलके कण तथा छिलके मिले हुए रूप उसी तरह अनिवृत्तिकरणरूप परिणामोंके द्वारा दला जाकर दर्शनमोहनीयकर्म भी मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वरूप हो जाता है। उपशमसम्यक्त्व प्राप्त होनेके प्रथम समयसे ही मिथ्यात्वके प्रदेश गुणसंक्रमभागहारके द्वारा सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक्त्वरूपमें परिणमित होने प्रारम्भ हो जाते हैं। यहाँ गुणसंक्रम भागहारका प्रमाण पल्यके असंख्यातवें भाग-प्रमाण है। किन्तु सम्यग्मिथ्यात्वमें प्रदेशोंको लानेके लिए जो गुणसंक्रमभागहार है उससे सम्यक्त्व प्रकृतिमें प्रदेशोंको लानेमें निमित्त गुणसंक्रम भागहार असंख्यातगुणा है। इस भागहारके द्वारा उपशमसम्यग्दृष्टि जीव पहले समयमें सम्यग्मिथ्यात्वमें बहुत प्रदेश देता है, सम्यक्त्वमें उससे असंख्यातगुणे हीन प्रदेश देता है। किन्तु प्रथम समयमें सम्यग्मिथ्यात्वमें जितना द्रव्य देता है उससे असंख्यातगुणा द्रव्य दूसरे समयमें सम्यक्त्वमें देता है और उससे असंख्यातगुणा द्रव्य उसी दूसरे समयमें सम्यग्मिथ्यात्वमें देता है। तीसरे समयमें सम्यग्मिथ्यात्वसे असंख्यातगुणा द्रव्य सम्यक्त्वमें और उससे असंख्यातगुणा द्रव्य सम्यग्मिथ्यात्वमें देता है। इस प्रकार अन्तर्मुहूर्तपर्यन्त गुणसंक्रम भागहार होता है। उपशमसम्यक्त्वके द्वितीय समयसे लेकर जब तक मिथ्यात्वका गुणसंक्रम होता है तब तक सम्यग्मिथ्यात्वका भी गुणसंक्रम होता है। अङ्गुलके असंख्यातवें भागरूप प्रतिभागसे भाजित होकर सम्यग्मिथ्यात्वका द्रव्य प्रति समय सम्यक्त्व प्रकृतिमें संक्रमित होता है। अतः इन तीनों प्रकृतियोंके प्रदेशसत्कर्मका भागाभाग जाननेके लिये मिथ्यात्वके भागके तीन भाग करो। पहला भाग मिथ्यात्वका द्रव्य है। दूसरे भागमें पल्यके असंख्यातवें भागसे भाग देकर जो लब्ध आवे उसे उसी भागमेंसे घटा देने पर जो द्रव्य शेष रहे वह सम्यक्त्वका द्रव्य है। तीसरे भागमें कुछ कम पल्यके असंख्यातवें भागसे भाग देकर जो लब्ध आवे उसे उसी भागमेंसे घटानेसे जो शेष बचता है वह सम्यग्मिथ्यात्वका द्रव्य होता है। ऐसे ही दूसरा प्रकार भी समझना चाहिये। ऐसा करनेसे सबसे कम द्रव्य सम्यग्मिथ्यात्वका होता है। उससे अधिक द्रव्य सम्यक्त्वका होता है और उससे भी अधिक मिथ्यात्वका द्रव्य होता है। आलापोंके संक्षेप अर्थात् अल्पबहुत्वमें अनन्तानुबन्धी लोभसे सम्यग्मिथ्यात्व का द्रव्य जो विशेष अधिक कहा है उसका कारण यह है कि यहाँ पर सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट द्रव्य ग्रहण किया है और उसका स्वामी दर्शनमोहकी क्षपणा करनेवाला जीव जब मिथ्यात्वका सब द्रव्य सम्यग्मिथ्यात्वमें क्षेपण कर देता है तब होता है। इसी प्रकार सम्यक्त्व प्रकृतिके विषयमें भी जानना चाहिये। शेष कथन स्पष्ट ही है।

§ ७९. आदेशसे नारकियोंमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मको लेकर इसी प्रकार भागाभाग करना चाहिए। इतना विशेष है कि मिथ्यात्वके भागके असंख्यात खण्ड करके उनमेंसे एक खण्ड-प्रमाण सम्यग्मिथ्यात्वका भाग होता है। इसका कारण सुगम है। तथा नोकषायके उत्कृष्ट सत्कर्मको लेकर भागाभाग करने पर नोकषायके सब द्रव्यका एक पुञ्ज करो। फिर उसमें

सव्वदव्वमेगपुंजं कादूण पुणो तम्मि तप्पाओग्गसंखेज्जरूवेहि खंडिदे तत्थेयखंडमेत्तं हस्स-रदिदव्वं होदि त्ति तमवणिय पुध ट्ठवेयव्वं। पुणो सेसदव्वादो तप्पाओग्गसंखेज्ज-रूवेहि खंडिदेयखंडं पुध ट्ठविय सेसदव्वमावलि० असंखे०भागेण खंडेयूणेगखंडं पि अवणिय पुध ट्ठविय अवणिदसेसं सरिससत्तपुंजे कादूण तत्थ विदियवारमवणिदसंखेज्ज-भागं तिण्णि समभागे कादूण पढम-विदिय-तदियपुंजेसु पक्खिविय पुणो आवलि० असंखे०भागमवट्ठिद०विरलणं कादूण पुव्वमवणिदअसंखे०भागमेत्तदव्वमावलि० असंखे०भागपडिभागियं समखंडं करिय दादूण तत्थेयखंडपरिवज्जणेण सेससव्वखंडाणि घेत्तूण पढमपुंजे पक्खित्ते पुरिसवेदभागो होदि। पुणो सेसेगखंडं पुव्वविहाणेण दादूण तत्थेयखंडमवसेसिय सेसासेसखंडाणि घेत्तूण विदियपुंजे पक्खित्ते भयभागो होदि। एदं सेसेयखंडमवट्ठिदविरलणाए उवरि समपविभागेण दादूण तत्थेगेगखंडं परिच्चागेण सेसबहुखंडाणं संछुहणविहाणे कीरमाणे दुगुंछा-णवुंसय-अरदि-सोग-इत्थिवेदभागा जहाकमं विसेसहीणा भवंति। णवरि णवुंसयवेद-अरदि-सोगभागेसु बंधगद्धापडिभागेण संखे०भागमेत्तदव्वपक्खेवो जाणिय कायव्वो। संपहि हस्स-रदिदव्वं घेत्तूणावलि० असंखे०भागेण खंडेयूणेयखंडमवणिय सेसदव्वं सरिसवेपुंजे कादूण तत्थेगपुंजम्मि

तत्प्रायोग्य संख्यात रूपोंसे भाग देने पर वहाँ एक खण्डप्रमाण द्रव्य हास्य-रतिका होता है, इसलिये उसे घटाकर अलग रखना चाहिये। फिर शेष द्रव्यको उसके योग्य संख्यातरूपोंसे खण्डित करके उनमेंसे एक खण्डको पृथक् रखो। फिर शेष द्रव्यको आवलिके असंख्यातवें भागसे भाजित करके लब्ध एक भागको घटाकर पृथक् स्थापित करो। बाकी बचे द्रव्यके समान सात भाग करो। तथा दूसरी बार घटाये हुए संख्यातवें भागके तीन समभाग करके पहले, दूसरे और तीसरे समान भागोंमें मिला दो। फिर आवलिके असंख्यातवें भागका अवस्थित विरलन करके पहले घटाये हुए असंख्यातवें भागमात्र द्रव्यके आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण खण्ड करके विरलित राशि पर दे दो। उनमेंसे एक खण्डको छोड़कर शेष सब खण्डोंको लेकर पहले भागमें मिलाने पर पुरुषवेदका भाग होता है। फिर शेष बचे एक खण्डको पूर्व विधानके अनुसार देकर अर्थात् आवलिके असंख्यातवें भागका विरलन करके उसके ऊपर शेष बचे एक खण्डके आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण खण्ड करके दे दो। उनमेंसे एक खण्डको छोड़कर बाकी बचे सब खण्डोंको लेकर दूसरे भाग में मिलानेसे भयका भाग होता है। उस बाकी बचे एक खण्डको अवस्थित विरलनराशिके ऊपर समान खण्ड करके दो। उनमेंसे एक एक खण्डको छोड़कर उत्तरोत्तर शेष बहुत खण्डोंको तीसरे आदि भागमें क्रमसे मिलाने पर जुगुप्सा, नपुंसकवेद, अरति, शोक और स्त्रीवेदके भाग होते हैं जो क्रमसे विशेष हीन विशेष हीन होते हैं। इतना विशेष है कि नपुंसकवेद, अरति और शोकके भागोंमें बन्धकालके प्रतिभागके अनुसार संख्यात भागमात्र द्रव्यका प्रक्षेप जानकर करना चाहिये। अर्थात् इनमेंसे जिस प्रकृतिका जितना बन्धककाल है उसके प्रतिभागके अनुसार संख्यातवें भागमात्र द्रव्यको जानकर उसका प्रक्षेप उस उस अपने द्रव्यमें करना चाहिए। अब हास्य-रतिके द्रव्यको लेकर आवलिके असंख्यातवें भागसे उसे भाजित करके लब्ध एक भागको उसमेंसे घटाकर शेष द्रव्यके दो समान

पुव्वमवणिदद्व्वमाणेदूण पक्खित्ते रदिभागो होदि । इयरो वि हस्सभागो होदि । एत्थ हस्समादिं कादूण जाव पुरिसवेदो त्ति ताव सत्थाणभागाभागालावं भणियूण तदो सव्वसमासालावं वत्तइस्सामो । तं जहा—सम्मामि०भागो थोवो । अपच्चक्खाणमाण-भागो असंखे०गुणो । कोधभागो विसेसाहिओ । मायाभागो विसे० । लोभभागो विसे० । पच्चक्खाणमाणभागो विसे० । कोधभागो विसे० । मायाभागो विसे० । लोभभागो विसे० । अणंताणु०माणभागो विसे० । कोधभागो विसे० । मायाभागो विसे० । लोभभागो विसे० । सम्मत्तभागो विसे० । मिच्छत्तभागो विसे० । हस्सभागो अणंतगुणो । रदिभागो विसे० । इत्थिवेदभागो संखे०गुणो । सोगभागो विसे० । अरदि-भागो विसे० । णवुंसयवेदभागो विसे० । दुगुंछाभागो विसे० । भयभागो विसे० । पुरिसवेदभागो विसे० । माणसंजलणभागो विसे० । कोधसंज०भागो विसे० । माया-संज०भागो विसे० । लोभसंज०भागो विसे० । एत्थ भागाभागपरूवणावसरे अप्पाबहु-आलावो असंबद्धो त्ति णाणादरणिज्जो, भागाभागविसयणिण्णयजणणट्ठमेव परूविज्जमाणस्स तदालावस्स सुसंबद्धत्तदंसणादो । एवं पढमपुढवि०-तिरिक्खतिय-देवा सोहम्मादि जाव सव्वट्ठा त्ति । एवं विदियादिछपुढवि-पंचिं०तिरि०जोणिणी-पंचि०तिरि०अपज्ज०-मणुस-

---

भाग करो । उनमेंसे एक भागमें पहले घटाये हुए एक भाग द्रव्यको लेकर जोड़ने पर रतिका भाग होता है और दूसरा भाग हास्यका होता है। यहाँ हास्यसे लेकर पुरुषवेद पर्यन्त स्वस्थान भागाभागका अलाप कहकर अब संक्षेपसे सब अलापोंको कहेंगे। वह इस प्रकार है—सम्यग्मिथ्यात्वका भाग थोड़ा है । उससे अप्रत्याख्यानावरणमानका भाग असंख्यातगुणा है । उससे क्रोधका भाग विशेष अधिक है। उससे मायाका भाग विशेष अधिक है। उससे लोभका भाग विशेष अधिक है । उससे प्रत्याख्यानावरणमानका भाग विशेष अधिक है । उससे क्रोधका भाग विशेष अधिक है। उससे मायाका भाग विशेष अधिक है। उससे लोभका भाग विशेष अधिक है। उससे अनन्तानुबन्धीमानका भाग विशेष अधिक है। उससे क्रोधका भाग विशेष अधिक है। उससे मायाका भाग विशेष अधिक है। उससे लोभका भाग विशेष अधिक है। उससे सम्यक्त्वका भाग विशेष अधिक है। उससे मिथ्यात्वका भाग विशेष अधिक है। उससे हास्यका भाग अनन्तगुणा है। उससे रतिका भाग विशेष अधिक है। उससे स्त्रीवेदका भाग संख्यातगुणा है। उससे शोकका भाग विशेष अधिक है। उससे अरतिका भाग विशेष अधिक है। उससे नपुंसकवेदका भाग विशेष अधिक है। उससे जुगुप्साका भाग विशेष अधिक है। उससे भयका भाग विशेष अधिक है। उससे पुरुषवेदका भाग विशेष अधिक है। उससे मानसंज्वलनका भाग विशेष अधिक है। उससे क्रोध-संज्वलनका भाग विशेष अधिक है। उससे माया संज्वलनका भाग विशेष अधिक है। उससे लोभ संज्वलनका भाग विशेष अधिक है। इस भागाभागके कथनके अवसर पर अल्प बहुत्वका कथन करना असम्बद्ध है यह मानकर उसका अनादर नहीं करना चाहिये; क्योंकि भागाभागविषयक निर्णयके करनेके लिए ही अल्पबहुत्वविषयक आलाप कहा गया है, अतः वह सुसम्बद्ध है। इसी प्रकार पहली पृथिवी, सामान्य तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्च-पर्याप्त, सामान्य देव और सौधर्म स्वर्ग से लेकर सवर्थिसिद्धि तकके देवोंमें जानना चाहिए। इसी प्रकार दूसरी से लेकर छ पृथिवियोंमें पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चयोनिनी, पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चअपर्याप्त,

अपज्ज०-भवण०-वाण०-जोदिसिया त्ति। णवरि दंसणतियदव्वमसंखे० खंडेदूण तत्थ बहुखंडा मिच्छत्तभागो होदि। सेसमसंखे०खंडं कादूण तत्थ बहुखंडा सम्मामि०-भागो होदि। सेसेगभागो सम्मत्तदव्वं होदि। एत्थालावे भण्णमाणे सम्मत्तभागो थोवो। सम्मामि०भागो असंखे०गुणो। अपच्चक्खाणमाणभागो असंखे०गुणो। कोह-भागो विसे०। मायाभागो विसे०। उवरि पुव्वविहाणेण णेदव्वं जाव लोभसंजलण-भागो त्ति। एवं जाव अणाहारि त्ति।

मनुष्य अपर्याप्त, भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषियोंमें जानना चाहिए। इतना विशेष है कि दर्शनमोहनीयकी तीनों प्रकृतियोंके द्रव्यके असंख्यात खण्ड करके उनमेंसे बहुत खण्ड तो मिथ्यात्वके भाग होते हैं। शेष बचे खण्डोंके असंख्यात खण्ड करो। उनमेंसे बहुखण्ड प्रमाण द्रव्य सम्यग्मिथ्यात्वका भाग होता है। शेष एक भाग सम्यक्त्वका द्रव्य होता है। यहाँ आलाप कहते हैं—सम्यक्त्वका भाग थोड़ा होता है। सम्यग्मिथ्यात्वका भाग असंख्यातगुणा होता है। अप्रत्याख्यानावरण मानका भाग असंख्यातगुणा होता है। क्रोधका भाग विशेष अधिक होता है। मायाका भाग विशेष अधिक होता है। आगे संज्वलन लोभके भाग पर्यन्त पहले कही हुई रीतिके अनुसार आलाप कहना चाहिये। अर्थात् जैसा पहले कह आये हैं वैसा ही कहना चाहिये। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

विशेषार्थ—आदेशसे नारकियोंमें भी मोहनीयके प्रदेशसत्कर्मका भागाभाग ओघकी ही तरह होता है। अन्तर केवल इतना है कि एक तो यहाँ सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतिका भागाभाग सबसे थोड़ा है। दूसरे नोकषायोंके विभागमें कुछ अन्तर है जो कि मूलमें बतलाया ही है। उसका खुलासा इस प्रकार है—नोकषायके सब द्रव्यका एक पुंज बनाकर उसमें उसके योग्य संख्यातसे भाग दो। लब्ध एक भाग प्रमाण द्रव्य हास्य और रतिका होता है अतः उसे अलग स्थापित कर दो। शेष द्रव्यमें फिर संख्यातसे भाग दो और लब्ध एक भाग प्रमाण द्रव्यको अलग स्थापित कर दो। शेष द्रव्यमें फिर आवलिके असंख्यातवें भागसे भाग दो और लब्ध एक भागप्रमाण द्रव्यको अलग स्थापित कर दो। बाकी बचे द्रव्यके सात समान भाग करो। दूसरी बार संख्यातका भाग देकर जो द्रव्य अलग स्थापित किया था उसके तीन समान भाग करके सात समान भागोंमें से पहले, दूसरे और तीसरे भागमें एक एक भागको मिला दो। फिर आवलिके असंख्यातवें भागसे भाग देकर जो एक भाग द्रव्यको पृथक् स्थापित किया था उसमें आवलिके असंख्यातवें भागसे भाग देकर एक भागको छोड़कर शेष सब द्रव्यको पहले समान भागमें मिलानेसे पुरुषवेदका भाग होता है जो नोकषायोंमें सबसे अधिक भाग है। छोड़े हुए एक भागमें आवलिके असंख्यातवें भागसे भाग देकर एक भागको छोड़कर बाकी बचे शेष द्रव्यको दूसरे पुंजमें मिला देने पर भयका भाग होता है। शेष एक भागमें आवलिके असंख्यातवें भागसे भाग देकर एक भागको छोड़कर बाकी बचे द्रव्यको तीसरे भागमें मिलाने पर जुगुप्साका भाग होता है। इसी प्रकार आगे भी बाकी बचे एक भागमें आवलिके असंख्यातवें भागका भाग देता जाय और बहुभागको चौथे आदि पुंजमें मिलाता जाय। ऐसा करनेसे क्रमशः नपुंसकवेद, अरति, शोक और स्त्रीवेदका भाग उत्पन्न होता है। किन्तु नपुंसकवेद, अरति और शोकके सम्बन्धमें कुछ विशेषता है। बात यह है कि इन तीनोंका द्रव्य लाते समय आवलीके असंख्यातवें भागको प्रतिभाग न मान कर इनके बन्धकालको प्रतिभाग मानना चाहिये और इस प्रकार जो उत्तरोत्तर संख्यात भाग द्रव्य प्राप्त हो उसे समान पुंजमें

§ ८०. जहण्णए पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदे०। ओघेण मोह० २८ पयडीणं सव्वजहण्णदव्वं घेत्तूण बुद्धीए एगपुंजं करिय तदो एदमणंतखंडं कादूण एगखंडं पुध ट्ठविय सेसमणंताभागमेत्तदव्वं घेत्तूण तं संखे०खंडं कादूण तत्थेयखंडं पि पुध ट्ठविय सेससंखेज्जाभागमेत्तदव्वादो पुणरवि संखेज्जखंडाणि कादूणेयखंड-मवणिय सेसबहुभागदव्वमावलि० असंखे०भागेण खंडियूण तत्थेयखंडमवणिय सेसदव्वं सरिसपंचपुंजे कादूण तत्थ विदियवारसवणिदसंखे०भागमेत्तदव्वं सरिसतिण्णिभागे कादूणेगेगभागं पढम-विदिय-तदियपुंजेसु पक्खिविय पुणो आवलि० असंखे०भागं विरलिय पुव्वमवणिदमसंखे०भागमेत्तदव्वं समपविभागेण दादूण तत्थ बहुभागे घेत्तूण पढमपुंजे पक्खित्ते लोभसंज०भागो होदि। पुणो सेसेगरूवधरिदं पुव्वविहाणेण दादूण तत्थेगरूवधरिदं मोत्तूण सेससव्वरूवधरिदाणि घेत्तूण विदियपुंजे पक्खित्ते भय-भागो होदि। पुणो वि सेसेगखंडं पुव्वविहाणेण दादूण तत्थेगरूवधरिदपरिवज्जणेण सेस-

---

मिलाकर इनका भाग प्राप्त करना चाहिये। हस्य और रतिका द्रव्य जो अलग स्थापित कर आये थे उसका बटवारा भी मूलमें बतलाई गई विधिके अनुसार कर लेना चाहिये। इस प्रकार भागाभाग करने पर नौ नोकषायोंमें किस क्रमसे भागाभाग प्राप्त होता है तथा मोहनीयकी सब प्रकृतियोंमें किस क्रमसे भागाभाग प्राप्त होता है इसका उल्लेख मूलमें किया ही है। इस प्रकार सामान्य नारकियोंमें प्रत्येक प्रकृतिको जिस क्रमसे द्रव्य प्राप्त होता है वह क्रम प्रथम पृथिवी आदि कुछ मार्गणाओंमें अविकल घट जाता है। दूसरीसे लेकर छठी पृथिवी तकके नारकी अदि कुछ मार्गणाएँ हैं जिनमें यह क्रम अविकल बन जाता है पर कुछ विशेषता है जिसका उल्लेख मूलमें किया ही है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जहाँ जो प्रक्रिया सम्भव हो उसके अनुसार भागाभाग जान लेना चाहिये।

§ ८०. अब जघन्यसे प्रयोजन है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीय कर्मकी अट्ठाईस प्रकृतियोंके सब जघन्य द्रव्यको लेकर बुद्धिके द्वारा उस द्रव्यका एक पुंज करो। पुनः उसके अनन्त खण्ड करके उनमें से एक खण्डको पृथक् स्थापित करो और शेष अनन्त खण्डोंके द्रव्यको लेकर उस द्रव्यके संख्यात खण्ड करो। उनमेंसे एक खण्डको पृथक् स्थापित करके बाकी बचे संख्यात खण्डोंके द्रव्यके फिर संख्यात खण्ड करो और एक खण्डको उसमेंसे घटाकर शेष बहुभाग द्रव्यमें आवलिके असंख्यातवें भागसे भाग दो। लब्ध एक भागप्रमाण द्रव्यको उसमेंसे घटाकर शेष द्रव्यके समान पांच भाग करो। दूसरी बार अलग स्थापित किये गये संख्यातवें भागप्रमाण द्रव्यके तीन समान भाग करके पांच समान भागोंमें से पहले, दूसरे और तीसरे भाग में एक एक भागको मिला दो। फिर आवलिके असंख्यातवें भागका विरलन करके पहले घटाकर अलग स्थापित किये हुए असंख्यातवें भागप्रमाण द्रव्यके समान भाग करके उस पर दे दो। उन भागोंमेंसे बहु भाग द्रव्यको लेकर पाँच भागोंमें से पहले भागमें जोड़ने पर लोभ संज्वलनका भाग होता है। शेष बचे एक भागके समान भाग करके पूर्व कहे विधानके अनुसार विरलित राशि पर एक एक भागको दो। उनमेंसे भी एक भागको छोड़कर शेष सब भागोंको लेकर पाँच भागोंमेंसे दूसरे भागमें जोड़ देने पर भयका भाग होता है। बाकी बचे एक भागके समान भाग करके पूर्व विधान के अनुसार विरलित राशि पर एक एक भाग दो। उनमेंसे एक भागको छोड़कर शेष सब भागोंको एकत्र करके पाँच भागोंमेंसे तीसरे

सव्वरूवधरिदाणि संपिंडिय तदियपुंजे पक्खित्ते दुगुंछाभागो होदि । पुणो वि सेसेगरूव-धरिदं तहेव दादूण तत्थ बहुखंडाणं चउत्थपुंजं पि पक्खेवे कदे अरदिभागो होदि । सेसेगखंडे वि पंचमपुंजे पक्खित्ते सोगभागो होदि । एत्थ दुगुंछा-भय-लोभपुंजाणं संखेज्जभागब्भहियत्तकारणं धुवबंधी होदूणेदे हस्स-रदिबंधकाले वि अहियदव्वसंचयं लहंति त्ति वत्तव्वं । अरदि-सोगाणं पुण तण्णत्थि त्ति । पुणो पढमवारमवणिदसंखे०-भागमेत्तदव्वं पलिदो० असंखे०भागमेत्तं खंडं कादूण तत्थेयखंडं पुध ट्ठविय सेससव्व-खंडदव्वमावलि० असंखे०भागेण खंडेयूणेयखंडं पुध ट्ठविय सेससव्वदव्वं सरिसवेपुंजे करिय तत्थ पढमपुंजम्मि पुध ट्ठविदव्वे पक्खित्ते रदिभागो होदि । इयरो वि हस्स-भागो होइ । पुणो पुव्वमवणिदअसंखे०भागमेत्तदव्वं पलिदोवमस्स असंखे०भागेण खंडिय तत्थेयखंडं पुध ट्ठविय पुणो सेसअसंखेज्जाखंडाणि घेत्तूण पुणो वि पलिदो० असंखे०भागमेत्तखंडाणि करिय तत्थेगखंडं घेत्तूण सेससव्वदव्वं सरिसवेपुंजे करिय तत्थ पढमपुंजे तम्मि पक्खित्ते इत्थिवेदभागो होदि । विदियपुंजो वि णवुंसयभागो होदि । एत्थ कारणं सुगमं । पुणो पुव्वमवणिदअसंखे०भागम्मि समयाविरोहेण भागाभागे कदे कोहसंजल०भागो थोवो ६ । माणसंजल०भागो विसे० ८ । केत्तिय-

---

भागमें मिला देने पर जुगुप्साका भाग होता है। फिर बाकी बचे एक भागको उसी प्रकार विरलित राशि पर देकर उसके भागोंमें से बहु भागको पाँच भागोंमें से चौथे भागमें मिलाने पर अरतिका भाग होता है। बाकी बचे एक भागको पाँचवें भागमें मिलाने पर शोकका भाग होता है। यहाँ जुगुप्सा, भय और लोभका द्रव्य अरति और शोकसे संख्यातवें भाग अधिक कहना चाहिये। अधिक होनेका कारण यह है कि ये प्रकृतियाँ ध्रुवबन्धी हैं अतः हास्य और रतिके बन्धकालमें भी अधिक द्रव्य संचयको प्राप्त करती हैं। किन्तु अरति और शोक ध्रुवबन्धी नहीं हैं अतः, इनका द्रव्य भयादिकसे हीन होता है। फिर पहली बार घटाकर अलग रखे हुए संख्यातवें भागमात्र द्रव्यके पल्योपमके असंख्यातवें भागमात्र खण्ड करो। उनमेंसे एक खण्ड को पृथक् स्थापित करके शेष सब खण्डोंके द्रव्यमें आवलिके असंख्यातवें भागसे भाग दो। लब्ध एक खण्डको पृथक् स्थापित करके शेष सब द्रव्यके दो समान भाग करो। उनमें से पहले भागमें पृथक् स्थापित किये गये द्रव्यको मिलाने पर रतिका भाग होता है और दूसरा भाग हास्यका होता है। फिर पहले घटाये हुए असंख्यातवें भागप्रमाण द्रव्यको पल्यके असंख्यातवें भागसे भाजित करके उसमेंसे लब्ध एक भागप्रमाण द्रव्यको पृथक् स्थापित करो। फिर बाकी बचे असंख्यात भागोंको लेकर फिर भी उनके पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण खण्ड करो। उनमेंसे एक खण्डको लेकर शेष सब द्रव्यके दो समान भाग करो। उन भागोंमें से पहले भागमें उस एक खण्डको मिलाने पर स्त्रीवेदका भाग होता है और दूसरा भाग नपुंसकवेदका होता है। स्त्रीवेदसे नपुंसकवेदका भाग कम होनेका कारण सुगम है। फिर पहले घटाये हुए असंख्यातवें भागमें आगमके अविरुद्ध भागाभाग करने पर क्रोधसंज्वलनका भाग थोड़ा होता है और मान संज्व-लनका भाग विशेष अधिक होता है। कितना अधिक होता है ? तीसरे भाग मात्र अधिक होता है। जैसे यदि क्रोध संज्वलनका द्रव्य ६ है तो मान संज्वलनका भव ८ होता है। पुरुषवेदका

मेत्तेण ? तिभागमेत्तेण। पुरिसवेदभागो विसेसाहिओ १२। के०मेत्तेण ? दुभागमेत्तेण। मायासंजल०भागो विसे० पयडिविसेसमेत्तेण।

§ ८१. पुणो पुव्वमवणिदअणंतिमभागमेत्तसव्वघादिदव्वं पलिदो० असंखे०भागेण खंडेयूण तत्थेयखंडं पुध ट्ठविय सेससव्वखंडाणि घेत्तूणावलि० असंखे०भागेण खंडेयूण तत्थेयखंडं पि पुध ट्ठविय सेससव्वदव्वमट्ठसरिसपुंजे कादूण पुणो आवलि० असंखे०भागमवट्ठिदविरलणं कादूण तदो आवलि० असंखे०भागपडिभागेण पुव्वमवणिदेयखंडमेदिस्से विरलणाए समपविभागेण दादूण तत्थेयखंडं मोत्तूण सेससव्वरूवधरिदखंडाणि घेत्तूण पढमपुंजम्मि पक्खित्ते पच्चक्खाणलोभभागो होदि। एवं पुणो पुणो पुव्वविहाणं जाणियूण कीरमाणे माया-कोध-माण-अपच्चक्खाणलोभ-माया-कोध-माणभागा जहाकममुप्पज्जंति।

§ ८२. पुणो पुव्वमवणिदअसंखे०भागमेत्तदव्वं पलिदोवमासंखे०भागपडिभागियं घेत्तूण तस्स पलिदो० असंखे०भागमेत्तखंडाणि कादूण तत्थेयखंडपरिहारेण सेससव्वखंडेसु गहिदेसु मिच्छत्तभागो होदि। पुणो सेसमसंखे०भागं घेत्तूण तत्थ पलिदोवमस्स असंखे०भागेण खंडेयूणेयखंडं पुध ट्ठविय सेससव्वखंडाणि घेत्तूणावलि० असंखे०

भाग विशेष अधिक है। कितना अधिक है ? दो भाग मात्र अधिक है। अर्थात् यदि मान संज्वलनका द्रव्य ८ है तो पुरुषवेदका द्रव्य १२ होता है। माया संज्वलनका भाग विशेष अधिक है। विशेषका प्रमाण प्रकृतिमात्र है।

§ ८१. देशघाती द्रव्यका भागाभाग कहकर अब सर्वघाती द्रव्यका भागाभाग कहते हैं। पहले सब द्रव्यमें अनन्तका भाग देकर जो अनन्तवें भागप्रमाण सर्वघाती द्रव्य अलग स्थापित किया था उसको पल्यके असंख्यातवें भागसे भाजित करके उसमेंसे एक भागको पृथक् स्थापित करो। शेष सब भागोंको लेकर आवलिके असंख्यातवें भागसे भाजित करके उसमेंसे भी एक भागको पृथक् स्थापित करो। शेष सब द्रव्यके आठ समान भाग करो। फिर आवलिके असंख्यातवें भागको अवस्थित विरलन करके पहले आवलिके असंख्यातवें भागसे भाग देकर जो एक भाग घटाकर अलग स्थापित किया था उसके समान विभाग करके इस विरलित राशि पर दे दो। उन भागोंमेंसे एक भागको छोड़कर शेष सब विरलितरूपों पर दिये गये भागोंको एकत्र करके आठ भागोंमेंसे प्रथम भागमें मिलाने पर प्रत्याख्यान लोभका भाग होता है। इस प्रकार पुनः पुनः पहले कहे गये विधानको जानकर उसके अनुसार करने पर अर्थात् बाकी बचे एक एक भागके इसी प्रकार विरलित राशिप्रमाण खण्ड कर करके और विरलित राशिपर उन्हें दे देकर तथा एक भागको छोड़ शेष सब भागोंको एकत्र कर करके बाकी बचे सात समान भागोंमें क्रम क्रमसे मिलाने पर प्रत्याख्यानावरण माया, क्रोध, मान और अप्रत्याख्यानावरण लोभ, माया, क्रोध तथा मानके भाग क्रमशः उत्पन्न होते हैं।

§ ८२. पुनः पहले पल्योपमके असंख्यातवें भागसे भाग देकर घटाये हुए असंख्यातवें भागमात्र द्रव्यको लेकर उसके पल्यके असंख्यातवें भागमात्र खण्ड करके उनमेंसे एक खण्डको छोड़कर शेष सब खण्डोंके मिलाने पर मिथ्यात्वका भाग होता है। पुनः बाकी बचे असंख्यातवें भागको लेकर उसके पल्यके असंख्यातवें भाग खण्ड करके उनमेंसे एक खण्डको पृथक् स्थापित करके शेष सब खण्डोंको लेकर उनमें आवलिके असंख्यातवें भागसे भाग दो

भागेण भागलद्धं तत्तो पुध ट्ठविय सेससव्वदव्वं चत्तारि समपुंजे कादूण तदो आवलि० असंखे०भागं विरलिय पुध ट्ठविददव्वमेदिस्से विरलणाए उवरि समखंडं करिय दादूण तत्थेयखंडपरिच्चाएण सेसबहुखंडेसु पढमपुंजे पक्खित्तेसु अणंताणु०लोभभागो होदि। एवं पुणो पुणो वि कीरमाणे माय-कोध-माणभागा जहाकमं भवंति। पुणो पुव्वमवणिदसंखे०भागमेत्तदव्वं पलिदो० असंखे०भागमेत्तखंडाणि कादूण तत्थेय-खंडमेत्तो सम्मत्तभागो होदि। सेससव्वखंडाणि घेत्तूण सम्मामि०भागो होदि।

§ ८३. संपहि एत्थालावे भण्णमाणे सम्मत्तभागो थोवो। सम्मामि०भागो असंखे०गुणो। अणंताणु०माणभागो असंखे०गुणो। कोधभागो विसेसाहिओ। माया-भागो विसे०। लोभभागो विसे०। मिच्छत्तभागो असंखे०गुणो। अपच्चक्खाणमाणभागो असंखे०गुणो। कोधभागो विसे०। मायाभागो विसे०। लोभभागो विसे०। पच्चक्खाणमाणभागो विसे०। कोधभागो विसे०। मायाभागो विसे०। लोभभागो विसे०। कोहसंजल०भागो अणंतगुणो। माणसंजल०भागो विसेसा०। पुरिस०भागो विसे०। मायासंजल०भागो विसे०। णउंस०भागो असंखे०गुणो। इत्थिवेदभागो विसे०। हस्सभागो असंखे०गुणो। रदिभागो विसेसा०। सोगभागो संखे०गुणो। अरदिभागो विसे०। दुगुंछभागो विसे०। भयभागो विसे०। लोभसंज० विसे०। एवं मणुसा।

लब्ध एक भागको पृथक् स्थापित करके शेष सब द्रव्यके चार समान भाग करो। फिर आवलिके असंख्यातवें भागका विरलन करके पृथक् स्थापित किये गये द्रव्यको समभाग करके विरलन राशि पर दो। उनमेंसे एक भागको छोड़कर शेष सब भागोंको चार समान भागोंमेंसे पहले भागमें मिला देने पर अनन्तानुबन्धी लोभका भाग होता है। इसी प्रकार पुनः पुनः करने पर माया, क्रोध और मानके भाग यथाक्रमसे होते हैं। उसके बाद पहले घटाये हुए असंख्यातवें भागमात्र द्रव्यके पल्यके असंख्यातवें भागमात्र खण्ड करके उनमेंसे एक खण्ड मात्र द्रव्य सम्यक्त्वका भाग होता है। शेष सब खण्डोंको लेकर सम्यग्मिथ्यात्वका भाग होता है।

§ ८३. अब यहां आलापको कहते हैं—सम्यक्त्वका भाग थोड़ा है। सम्यग्मिथ्यात्वका भाग असंख्यातगुणा है। अनन्तानुबन्धी मानका भाग असंख्यातगुणा है। क्रोधका भाग विशेष अधिक है। मायाका भाग विशेष अधिक है। लोभका भाग विशेष अधिक है। मिथ्यात्वका भाग असंख्यातगुणा है। अप्रत्याख्यानावरण मानका भाग असंख्यातगुणा है। क्रोधका भाग विशेष अधिक है। मायाका भाग विशेष अधिक है। लोभका भाग विशेष अधिक है। प्रत्याख्यानावरण मानका भाग विशेष अधिक है। क्रोधका भाग विशेष अधिक है। मायाका भाग विशेष अधिक है। लोभका भाग विशेष अधिक है। क्रोधसंज्वलनका भाग अनन्तगुणा है। मानसंज्वलनका भाग विशेष अधिक है। पुरुषवेदका भाग विशेष अधिक है। मायासंज्वलनका भाग विशेष अधिक है। नपुंसकवेदका भाग असंख्यातगुणा है। स्त्रीवेदका भाग विशेष अधिक है। हास्यका भाग असंख्यातगुणा है। रतिका भाग विशेष अधिक है। शोकका भाग संख्यातगुणा है। अरति का भाग विशेष अधिक है। जुगुप्साका भाग विशेष अधिक है। भयका भाग विशेष अधिक है

मणुसपज्जत्ता एवं चेव। णवरि णवुंस०भागस्सुवरि इत्थिवेदभागो असंखे०गुणो कायव्वो। मणुसिणीसु सम्मत्तमादिं कादूण पुव्वविहाणेण भणिदूण तदो कोहसंज०-भागस्सुवरि माणसंज०भागो विसे०। मायासंज०भागो विसे०। इत्थिवेदभागो असंखे०गुणो। णवुंस०भागो असंखे०गुणो। पुरिस०भागो असंखे०गुणो। हस्सभागो संखे०गुणो। उवरि णत्थि विसेसो।

§ ८४. आदेसेण णेरइय० मोह० २८ पयडीणं सव्वजह०पदेसपिंडं घेत्तूण एवमणंतखंडं कादूण तत्थेयखंडमेत्तसव्वघाइदव्वस्स भागाभागे कीरमाणे ओघभंगो। पुणो सेसबहुभागमेत्तदेसघादिदव्वं घेत्तूण एदं संखे०खंडं कादूण तत्थेयखंडं पुध ट्ठविय पुणो संखेज्जाभागमेत्तसेसदव्वम्मि समयाविरोहेण भागाभागे कदे सोगभागो थोवो। अरदिभागो विसे० पयडिवि०। दुगुंछाभागो विसे० रदिबंधगद्धासंचिददव्वमेत्तेण। भयभागो विसे० पयडिविसे०। माणसंज०भागो विसे० चउब्भागमेत्तेण। कोहसंज०भागो विसे० पयडिविसे०। मायासंज०भागो विसे० पयडिविसे०। लोभसंज०भागो विसे० पयडिविसे०।

§ ८५. संपहि पुव्वमवणिदसंखे०भागमेत्तं पुणो वि संखे०खंडं कादूण तत्थेयखंडं पुध ट्ठविय सेससंखेज्जे भागे घेत्तूणावलि० असंखे०भागेण खंडेयूणेगखंडं घेत्तूण सेससव्व-

---

और लोभसंज्वलनका भाग विशेष अधिक है। इसी प्रकार सामान्य मनुष्योंमें जानना चाहिये। मनुष्य पर्याप्तकोंमें भी इसी प्रकार जानना चाहिये। इतना विशेष है कि इनमें नपुंसकवेदके आगे स्त्रीवेदका भाग असंख्यातगुणा करना चाहिये। मनुष्यिनियोंमें सम्यक्त्वसे लेकर पूर्वोक्त विधानके अनुसार कहकर उसके बाद इस प्रकार कहना चाहिये—क्रोधसंज्वलनके भागसे आगे मान संज्वलनका भाग विशेष अधिक है। माया संज्वलनका भाग विशेष अधिक है। स्त्रीवेदका भाग असंख्यातगुणा है। नपुंसकवेदका भाग असंख्यातगुणा है। पुरुषवेदका भाग असंख्यातगुणा है। हास्यका भाग संख्यातगुणा है। इसके आगे कोई अन्तर नहीं है।

§ ८४. आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी २८ प्रकृतियोंके सबसे जघन्य प्रदेशसमूहको लेकर उसके अनन्त खण्ड करो। उनमेंसे एक खण्डप्रमाण सर्वघाती द्रव्य है। उसका भागाभाग ओघके समान जानना चाहिए। शेष बहुभागमात्र देशघाती द्रव्य है। उसे लेकर उसके संख्यात खण्ड करो। उनमेंसे एक खण्डको पृथक् स्थापित करके शेष बचे संख्यात खण्डप्रमाण द्रव्यमें आगमसे विरोध न आये इस तरह भागाभाग करने पर शोकका भाग थोड़ा होता है। अरतिका भाग विशेष अधिक होता है। विशेषका प्रमाण प्रकृतिमात्र है। जुगुप्साका भाग विशेष अधिक है। विशेषका प्रमाण रतिके बन्धक कालमें संचित हुआ द्रव्यमात्र है। भयका भाग विशेष अधिक है। विशेषका प्रमाण प्रकृतिमात्र है। मानसंज्वलनका भाग विशेष अधिक है। विशेषका प्रमाण चतुर्थभागमात्र है। क्रोधसंज्वलनका भाग विशेष अधिक है। विशेषका प्रमाण प्रकृतिमात्र है। मायासंज्वलनका भाग विशेष अधिक है। विशेषका प्रमाण प्रकृतिमात्र है। लोभ संज्वलनका भाग विशेष अधिक है। विशेषका प्रमाण प्रकृतिमात्र है।

§ ८५. अब पहले घटाये हुए संख्यातवें भागमात्र द्रव्यके फिर भी संख्यात खण्ड करो। उनमेंसे एक खण्डको पृथक् स्थापित करके शेष संख्यात खण्डोंको लेकर उनमें आवलीके

दव्वं सरिसवेपुंजे कादूण तत्थेगपुंजम्मि अणंतरगहिददव्वे पक्खित्ते रदिभागो होदि। इयरो वि हस्सभागो। पुणो पुव्वमवणिदसंखे०भागमेत्तदव्वमसंखे० खंडे कादूण तत्थ बहुखंडेसु गहिदेसु पुरिस०भागो होदि। पुणो सेसेगभागमेत्तदव्वं संखे०खंडं कादूण तत्थ बहुखंडा णवुंस०भागो होदि। इदरेगभागो वि इत्थिवेदस्स होदि।

§ ८६. संपहि एत्थ सव्वसमासालावे भण्णमाणे सम्मत्तभागो थोवो। सम्मामि० भागा असंखे०गुणा। अणंताणु०माणभा० असंखे०गुणा। कोहभा० विसे०। मायाभा० विसे०। लोभभा० विसे०। मिच्छत्तभा० असंखे०गुणा। अपच्चक्खाणमाणभा० असंखे०गुणा। कोधभा० विसे०। मायाभा० विसे०। लोभभा० विसे०। पच्चक्खाण-माणभा० विसे०। कोधभा० विसे०। मायाभा० विसे०। लोभभा० विसे०। इत्थि-वेदभा० अणंतगुणा। णवुंसभा० संखे०गुणा। पुरिसभा० असंखे०गुणा। हस्सभा० संखे०गुणा। रदिभा० विसे०। सोगभा० असंखे०गुणा। अरदिभा० विसे०। दुगुंछाभा० विसे०। भयभा० विसे०। माणसंज०भागा विसे०। कोहसंज०भागा विसे०। माया-संजभागा विसे०। लोभसंज०भागा विसे०। एवं पढमादि जाव सत्तमपुढवि-सव्व-तिरिक्ख-मणुसअपज्ज० देवा भवणादि जाव सव्वट्ठा त्ति। एवं जाव अणाहारि त्ति।

एवमुत्तरपयडिपदेसभागाभागो समत्तो।

असंख्यातवें भागसे भाग देकर लब्ध एक भाग प्रमाण द्रव्यको लेकर शेष सब द्रव्यके दो समान पुंज करो। उनमेंसे एक पुंजमें पहले घटाकर ग्रहण किये गये एक भागप्रमाण द्रव्यको जोड़ दो तो रतिका भाग होता है और दूसरा पुंज हास्यका भाग होता है। फिर पहले घटाये हुए संख्यातवें भागमात्र द्रव्यके असंख्यात खण्ड करो। उनमें से बहुत खण्डोंको लो। यह पुरुषवेदका भाग होता है। फिर बाकी बचे एक भागमात्र द्रव्यके संख्यात खण्ड करो। उनमें से बहुखण्डप्रमाण द्रव्य नपुंसकवेदका भाग होता है। बाकी बचा एक भागमात्र द्रव्य स्त्रीवेदका होता है।

§ ८६. अब यहां पर सबका जोड़ करके आलापको संक्षेपसे कहते हैं—सम्यक्त्वका भाग थोड़ा है। सम्यग्मिथ्यात्वका भाग असंख्यातगुणा है। अनन्तानुबन्धीमानका भाग असंख्यात-गुणा है। क्रोधका भाग विशेष अधिक है। मायाका भाग विशेष अधिक है। लोभका भाग विशेष अधिक है। मिथ्यात्वका भाग असंख्यातगुणा है। अप्रत्याख्यानावरण मानका भाग असंख्यातगुणा है। क्रोधका भाग विशेष अधिक है। मायाका भाग विशेष अधिक है। लोभका भाग विशेष अधिक है। प्रत्याख्यानावरण मानका भाग विशेष अधिक है। क्रोधका भाग विशेष अधिक है। मायाका भाग विशेष अधिक है। लोभका भाग विशेष अधिक है। स्त्रीवेदका भाग अनन्तगुणा है। नपुंसकवेदका भाग संख्यातगुणा है। पुरुषवेदका भाग असंख्यातगुणा है। हास्यका भाग संख्यातगुणा है। रतिका भाग विशेष अधिक है। शोकका भाग संख्यातगुणा है। अरतिका भाग विशेष अधिक है। जुगुप्साका भाग विशेष अधिक है। भयका भाग विशेष अधिक है। मानसंज्वलनका भाग विशेष अधिक है। क्रोध संज्वलनका भाग विशेष अधिक है। माया संज्वलनका भाग विशेष अधिक है और लोभ संज्वलनका भाग विशेष अधिक है। इसप्रकार पहली से लेकर सातवीं पृथिवीमें सब तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव और भवनवासी से लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें जानना चाहिए। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिए।

इस प्रकार उत्तर प्रकृतिप्रदेशविभक्तिमें भागाभाग समाप्त हुआ।

§ ८७. सव्वपदेसविहत्ति-णोसव्वपदेसविहत्तियाणुगमेण दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । तत्थ ओघेण मोह० अट्ठावीसपयडीणं सव्वपदेसग्गं[1] सव्वविहत्ती । तदूणं णोसव्वविहत्ती । एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति ।

§ ८८. उक्कस्साणुक्कस्सपदेसवि० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० अट्ठावीसं पयडीणं सव्वुक्कस्सपदेसग्गं उक्कस्सविहत्ती । तदूणमणुक्कस्सविहत्ती । एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति ।

§ ८९. जहण्णाजहण्णाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० अट्ठावीसं पयडीणं सव्वजहण्णपदेसग्गं जहण्णविहत्ती । तदुवरि अजहण्णवि० । एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति ।

§ ९०. सादिय-अणादिय-धुव-अद्धुवाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । मिच्छत्त-अट्ठक०-अट्ठणोक० उक्क० अणुक्क० ज० किं सादि० ४ ? सादि-अद्धुवं । अज० किं सादि० ४ ? अणादि० धुवमद्धुवं वा । पुरिस०-चदुसंज० उक्क० जह० किं० सा०[2] ४ ? सादि-अद्धुवं । अज० किं० सादि० ४ ? अणादि० धुवमद्धुवं वा । अणुक्क० किं सादि०

§ ८७. सर्वप्रदेशविभक्ति और नोसर्वप्रदेशविभक्ति अनुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । उनमेंसे ओघसे मोहनीयकी अट्ठाईस प्रकृतियोंके सब प्रदेशसमूहक सर्वविभक्ति कहते है और इससे कमको नोसर्वविभक्ति कहते हैं । इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये ।

§ ८८. उत्कृष्टानुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति अनुगमसे निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी अट्ठाईस प्रकृतियोंके सबसे उत्कृष्ट प्रदेशसमूहको उत्कृष्टविभक्ति कहते हैं और उससे कमको अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति कहते हैं । इस प्रकार अनाहारीपर्यन्त ले जाना चाहिये ।

§ ८९. जघन्य-अजघन्य अनुगमसे निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी अट्ठाईस प्रकृतियोंके सबसे जघन्य प्रदेशसमूहको जघन्यविभक्ति कहते हैं और उससे अधिक प्रदेशसमूहको अजघन्य प्रदेशविभक्ति कहते हैं । इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये ।

§ ९०. सादि, अनादि, ध्रुव और अध्रुवानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मिथ्यात्व, आठ कषाय और आठ नोकषायोंकी उत्कृष्ट अनुत्कृष्ट और जघन्य प्रदेशविभक्ति क्या सादि है, अनादि है, ध्रुव है अथवा अध्रुव है ? सादि और अध्रुव है । अजघन्य प्रदेशविभक्ति क्या सादि है, अनादि है, ध्रव है अथवा अध्रुव है ? अनादि, ध्रुव और अध्रुव है । पुरुषवेद और चारों संज्वलन कषायोंकी उत्कृष्ट और जघन्य प्रदेशविभक्ति क्या सादि है, अनादि है, ध्रुव है अथवा अध्रुव है ? सादि और अध्रुव है । अजघन्य प्रदेशविभक्ति क्या सादि है, अनादि है, ध्रुव है अथवा अध्रुव है ? अनादि, ध्रुव और अध्रुव है । अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति क्या सादि है, अनादि है, ध्रुव है अथवा अध्रुव है ? सादि, अनादि, ध्रुव और

१. आ०प्रतौ 'सव्वजहण्णपदेसग्गं' इति पाठः । २. ता०आ० प्रत्योः 'उक्क० किं० सा०' इति पाठः ।

४ ? सादि० अणादि० धुव० अद्धुवं वा। णवरि[1] लोभसंजल० अजह० अणुक्कस्सभंगो। सम्म०-सम्मामि० चत्तारि पदा किं सादि० ४ ? सादि० अद्धुवं वा। अणंताणु०४ उक्क० अणुक्क० जह० किं सादि० ४ ? सादि० अद्धुवं वा। अजह० किं सादि० ४ ? सादि० अणादि० धुव० अद्धुवा०।

§ ९१. आदेसेण णेरइय० मोह० अट्ठावीसं पय० उक्क० अणुक्क० जह० अजह० पदेसविह० किं सादि० ४ ? सादि० अद्धुवा०। एवं चदुगदीसु। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

अध्रुव है। इतना विशेष है कि लोभ संज्वलनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिमें अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके समान भंग होते हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतिमें चारों बिभक्तियाँ क्या सादि हैं, अनादि हैं, ध्रुव हैं अथवा अध्रुव हैं? सादि और अध्रुव हैं। अनन्तानुबन्धिचतुष्कमें उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट और जघन्य प्रदेशविभक्ति क्या सादि है, अनादि है, ध्रुव है अथवा अध्रुव है ? सादि और अध्रुव है। अजघन्य प्रदेशविभक्ति क्या सादि है, अनादि है, ध्रुव है अथवा अध्रुव है ? सादि, अनादि, ध्रुव और अध्रुव है।

§९१. आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी अट्ठाईस प्रतियोंकी उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्ति क्या सादि है, अनादि है, ध्रुव है अथवा अध्रुव है ? सादि और अध्रुव है। इसी प्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिए। इस प्रकार अनाहारीपर्यन्त ले जाना चाहिए।

विशेषार्थ—मिथ्यात्व, मध्यकी आठ कषाय और पुरुष वेदके सिवा आठ नोकषाय इनका उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट सत्त्व कादाचित्क है तथा इनका जघन्य प्रदेशसत्कर्म क्षपणाके अन्तिम समयमें होता है, अतः उक्त प्रकृतियोंका उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट और जघन्य प्रदेशसत्कर्म सादि और अध्रुव है। किन्तु इन प्रकृतियोंका अजघन्य प्रदेशसत्कर्म अनादि, ध्रुव और अध्रुव है। क्षपणाके अन्तिम समयमें जघन्य प्रदेशसत्कर्मके प्राप्त होनेके पूर्व तक अनादिसे अजघन्य प्रदेशसत्कर्म रहता है इसलिये तो अनादि है। तथा अभव्योंकी अपेक्षा ध्रुव और भव्योंकी अपेक्षा अध्रुव है। पुरुषवेदके उदयसे क्षपकश्रेणी पर चढ़ा हुआ गुणितकर्मांशवाला जो जीव जब स्त्रीवेदकी अन्तिम फालिको पुरुष वेदमें संक्रमित करता है तब एक समयके लिये पुरुषवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है। यही जीव जब पुरुषवेद और छह नोकषायोंके द्रव्यको संज्वलन क्रोधमें संक्रमित करता है तब संज्वलन क्रोधकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है। यही जीव जब संज्वलन क्रोधके द्रव्यको संज्वलन मानमें संक्रमित करता है तब संज्वलन मानकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है। यही जीव जब संज्वलन मानके द्रव्यको संज्वलन मायामें संक्रमित करता है तब संज्वलन मायाकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है। तथा जब यही जीव संज्वलन मायाके द्रव्यको संज्वलन लोभमें संक्रमित करता है तब संज्वलन लोभकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है। तथा इन पाँचोंका जघन्य प्रदेशसत्कर्म अपनी अपनी क्षपणाके अन्तिम समयमें होता है। चूँकि ये उत्कृष्ट और जघन्य प्रदेशसत्कर्म एक समयके लिए होते हैं, इसलिये सादि और अध्रुव हैं। तथा इन पांचों प्रकृतियोंकी अजघन्य प्रदेशविभक्ति अनादि, ध्रुव और अध्रुव है। क्षपणाके अन्तिम समयमें जघन्य प्रदेशसत्कर्मके प्राप्त होनेके पूर्व तक अनादिसे

---

१ ता० आ० प्रत्योः 'अद्धुवाणु णवरि' इति पाठः।

९२. एवं सामित्तसुत्तेण सूचिदअणियोगद्दाराणं परूवणं कादूण संपहि मिच्छत्तस्स सामित्तपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि—

❀ **मिच्छत्तस्स उक्कस्सपदेसविहत्ती कस्स ?**

§ ९३. किं णेरइयस्स तिरिक्खस्स मणुसस्स देवस्स वा त्ति एदेण पुच्छा कदा। एवंविहस्स संदेहस्स विणासणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि—

❀ **बादरपुढविजीवेसु कम्मट्ठिदिमच्छिदाउओ तदो उवट्टिदो तसकाए बेसागरोवमसहस्साणि सादिरेयाणि अच्छिदाउओ अपच्छिमाणि तेत्तीसं**

अजघन्य प्रदेशसत्कर्म रहता है इसलिये तो वह अनादि है। तथा अभव्योंकी अपेक्षा ध्रुव और भव्योंकी अपेक्षा अध्रुव है। यहाँ इतनी विशेषता है कि संज्वलनलोभका जघन्य प्रदेशसत्कर्म क्षपितकर्मांशके अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें होता है, अतः इसके अजघन्य प्रदेशसत्कर्मका उक्त तीनोंके साथ सादि विकल्प भी बन जाता है। तथा इन पाँचों प्रकृतियोंका अनुत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म सादि, अनादि, ध्रुव और अध्रुव चारों प्रकारका है। इन प्रकृतियोंके उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मके स्वामीका उल्लेख पहले किया ही है उसके पहले अनुत्कृष्ट अनादि है और उत्कृष्टके बाद सादि है, अभव्योंकी अपेक्षा ध्रुव है और भव्योंकी अपेक्षा अध्रुव है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी सत्ता सादि और सान्त है इसलिये इनके चारों पद सादि और अध्रुव हैं। अनन्तानुबन्धीके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट कदाचित्क हैं तथा जघन्य क्षपणाके अन्तिम समयमें होता है इसलिये ये तीनों पद सादि और अध्रुव हैं। किन्तु अजघन्य पदमें सादि, अनादि, ध्रुव और अध्रुव ये चारों विकल्प बन जाते हैं। अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना होनेके पूर्व तक अजघन्यपद अनादि है और विसंयोजनाके बाद अनन्तानुबन्धीसे पुनः संयुक्त होने पर सादि है। तथा अभव्योंकी अपेक्षा ध्रुव और भव्योंकी अपेक्षा अध्रुव है। यह तो ओघसे विचार हुआ। आदेशसे विचार करने पर नरकगति आदि जो मार्गणाएँ अनित्य हैं अर्थात् एक जीवके बदलती रहती हैं उन मार्गणाओंमें उत्कृष्ट आदि चारों पद सादि और अध्रुव हैं। किन्तु अचक्षुदर्शन और भव्य मार्गणामें ओघके समान व्यवस्था बन जाती है। हाँ इतनी विशेषता है कि भव्यके ध्रुवपद नहीं होता। यद्यपि अभव्यमार्गणा नित्य है किन्तु उसके आदेश उत्कृष्ट आदि पद कादाचित्क हैं, इसलिये वहाँ चारों पदोंके सादि और अध्रुव ये दो पद ही बनते हैं।

§ ९२. इस प्रकार एक जीवकी अपेक्षा स्वामित्वका निर्देश करनेवाले चूर्णिसूत्रके द्वारा सूचित अनुयोगद्वारोंका कथन करके अब मिथ्यात्वके स्वामीको बतलानेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

❀ **मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति किसके होती है ? क्या नारकीके होती है, तिर्यञ्चके होती है, मनुष्यके होती है अथवा देवके होती है ?**

§ ९३. इस सूत्रके द्वारा प्रश्न किया गया है। इस प्रकारके सन्देहका विनाश करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

❀ **जो बादर पृथिवीकायिक जीवोंमें कर्मस्थितिप्रमाण काल तक रहा। उसके बाद वहांसे निकला और त्रसकायमें कुछ अधिक दो हजार सागर तक रहा। वहां अन्तिम**

सागरोवमाणि दोभवग्गहणाणि तत्थ अपच्छिमे तेत्तीसं सागरोवमिए णेरइयभवग्गहणे चरिमसमयणेरइयस्स तस्स मिच्छत्तस्स उक्कस्सयं पदेससंतकम्मं।

§ ९४. बादरपुढविजीवेसु कम्मट्ठिदिमच्छिदाउओ त्ति उत्ते तसट्ठिदीए ऊण-कम्मट्ठिदिमच्छिदो त्ति घेत्तव्वं। तसट्ठिदियूणकम्मट्ठिदीए कुदो कम्मट्ठिदिववएसो? दव्वट्ठियणयणिबंधणउवयारादो। बादरपुढविजीवेसु चेव किमट्ठं हिंडाविदो? अइबहुअ-जोगेण बहुपदेसग्गहणट्ठं। सेसेइंदियाणं जोगेहिंतो बादरपुढविजीवजोगो असंखे०गुणो त्ति कुदो णव्वदे? एदम्हादो चेव सुत्तादो। तत्थ तिव्वसंकिलेसेण बहुदव्वुक्कड्डणट्ठमिदि किमट्ठं ण वुच्चदे? तदट्ठं पि होदु, विरोहाभावादो। बादरणिद्देसो सुहुमपडिसेहफलो। किमट्ठं तप्पडिसेहो कीरदे? ण, बादरजोगादो सुहुमजोगेण असंखे०गुणहीणेण पदेसग्गहणे संते गुणिदकम्मंसियत्ताणुववत्तीदो। किं च सेसेइंदियआउआदो बादरपुढविजीवाण-

---

नरकसम्बन्धी तेतीस सागरकी स्थितिको लेकर दो भव ग्रहण किये। उन दो भवोंमेंसे जब वह जीव तेतीस सागरकी स्थितिवाले नरकसम्बन्धी अन्तिम भवको ग्रहण करके अन्तिम समयवर्ती नारकी होता है तब उसके मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होता है।

§ ९४. 'बादर पृथिवीकायिक जीवोंमें कर्मस्थिति पर्यन्त रहा' ऐसा कहनेसे त्रसोंकी कायस्थितिसे हीन कर्मस्थिति काल तक रहा ऐसा ग्रहण करना चाहिए।

शंका—त्रसकायकी स्थितिसे हीन कर्मस्थितिको 'कर्मस्थिति' क्यों कहा है?

समाधान—द्रव्यार्थिकनयकी अपेक्षा उपचारसे कर्मस्थिति कहा है।

शंका—बादर पृथिवीकायिक जीवोंमें ही क्यों भ्रमण कराया है?

समाधान—अत्यन्त बहुत योगके द्वारा बहुत प्रदेशोंका ग्रहण करनेके लिये बादर पृथिवीकायिक जीवोंमें भ्रमण कराया है।

शंका—शेष एकेन्द्रिय जीवोंके योगसे बादर पृथिवीकायिक जीवोंका योग असंख्यातगुणा होता है, यह किस प्रमाणसे जाना?

समाधान—इसी सूत्रसे जाना। अर्थात् यदि ऐसा न होता तो उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मके ग्रहण करनेके लिये शेष एकेन्द्रियोंको छोड़कर बादर पृथिवीकायिकोंमें ही भ्रमण न कराते। इसीसे स्पष्ट है कि उनसे इनका योग असंख्यातगुणा होता है।

शंका—बादर पृथिवीकायिकोंमें तीव्र संक्लेशके द्वारा बहुत द्रव्यका उत्कर्षण करानेके लिये उनमें भ्रमण कराया है ऐसा क्यों नहीं कहते हो?

समाधान—इसके लिये भी होओ, क्योंकि इसमें कोई विरोध नहीं है।

सूक्ष्मकायका प्रतिषेध करनेके लिए बादरपदका निर्देश किया है।

शंका—सूक्ष्मका निषेध किसलिए किया जाता है?

समाधान—नहीं, क्योंकि बादरकायिक जीवोंके योगसे सूक्ष्मकायिक जीवोंका योग असंख्यातगुणा हीन होता है, अतः उसके द्वारा प्रदेशोंका ग्रहण होने पर जीव गुणितकर्मांशवाला नहीं हो सकता।

माउअं पाएण संखेज्जगुणमिदि वा बादरपुढविजीवेसु अपज्जत्तजोगपरिहरणट्ठं हिंडाविदो। पुढविकाइयजोगादो असंखे०गुणेण जोगेण तप्पज्जत्तद्धादो संखेज्जासंखेज्जगुणाए पज्जत्तद्धाए कम्मपदेससंचयट्ठं संकिलेसेण तदुक्कड्डिज्जमाणदव्वादो असंखेज्जगुणदव्वुक्कड्डणट्ठं च वेसागरोवमसहस्साणि सादिरेयाणि तसकाइएसु हिंडाविदो। जदि एवं तो तसकाइएसु चेव कम्मट्ठिदिमेत्तं कालं किण्ण भमाविदो ? ण, तसट्ठिदीए कम्मट्ठिदिमेत्ताए अभावादो। बहुवारं तसट्ठिदिं किण्ण भमाविदो ? ण, तसट्ठिदिं समाणिय एइंदियत्तं गदस्स पुणो कम्मट्ठिदिकालब्भंतरे तसट्ठिदिसमाणणं पडि संभवाभावेण पुणो एइंदिएसु पविट्ठस्स कम्मट्ठिदिअब्भंतरे णिग्गमाभावेण च बहुदव्वसंचयाभावप्पसंगादो। तेत्तीसं सागरोवमाउट्ठिदिएसु णेरइएसु णिरंतरं जदि उप्पज्जदि तो दो चेव भवग्गहणाणि उप्पज्जदि त्ति जाणावणट्ठं 'अपच्छिमाणि तेत्तीसं सागरोवमाणि दोभवग्गहणाणि' त्ति

दूसरे, शेष एकेन्द्रिय जीवोंकी आयुसे बादर पृथिवीकायिक जीवोंकी आयु प्रायः संख्यातगुणी होती है, इसलिये भी अपर्याप्त योगका परिहार करनेके लिये बादर पृथिवीकायिक जीवोंमें भ्रमण कराया है। पृथिवीकायिक जीवोंके योगसे त्रसकायिक जीवोंका योग असंख्यातगुणा होता है तथा उनके पर्याप्त कालसे त्रसजीवोंका पर्याप्त काल संख्यातगुणा और असंख्यातगुणा होता है। इसके सिवा बादर पृथिवीकायिक जीवोंके संक्लेश परिणामसे जितने द्रव्यका उत्कर्षण होता है, उससे असंख्यातगुणे द्रव्यका उत्कर्षण त्रसकायिक जीवोंमें होता है, अतः असंख्यातगुणे योगके द्वारा संख्यातगुणे और असंख्यातगुणे पर्याप्तकालमें कर्म-प्रदेशका संचय करानेके लिये और संक्लेश परिणामके द्वारा बादर पृथिवीकायिक जीवोंकी अपेक्षा असंख्यागुणे द्रव्यका उत्कर्षण करानेके लिये सातिरेक दो हजार सागर तक त्रसकायिक जीवोंमें भ्रमण कराया है।

शंका—यदि बादर पृथिवीकायिक जीवोंकी अपेक्षा त्रसकायिक जीवोंका योग असंख्यात-गुणा होता है और पर्याप्तकाल भी संख्यातगुणा और असंख्यातगुणा होता है तथा उत्कर्षण द्रव्य भी असंख्यातगुणा होता है तो गुणितकर्मांशवाले जीवको त्रसकायिक जीवोंमें ही कर्मस्थितिप्रमाण काल तक क्यों नहीं भ्रमण कराया ?

समाधान—नहीं, क्योंकि त्रसपर्यायकी कायस्थिति कर्मस्थिति प्रमाण नहीं है, इसलिए कर्मस्थिति काल तक त्रसकायिकोंमें भ्रमण नहीं कराया है।

शंका—तो त्रसोंकी कायस्थितिमें अनेक बार भ्रमण क्यों नहीं कराया ?

समाधान—नहीं, क्योंकि कायस्थितिको समाप्त करके जो जीव एकेन्द्रियपनेको प्राप्त हुआ है वह जीव कर्मस्थितिकालके भीतर पुनः त्रसकायस्थितिको समाप्त नहीं कर सकता है, अतः उसे पुनः एकेन्द्रियोंमें प्रवेश करना होगा और ऐसा होनेसे कर्मस्थितिकालके अन्दर वह जीव एकेन्द्रियपर्यायसे निकल नहीं सकेगा और एकेन्द्रिय पर्यायसे न निकल सकनेसे उसके बहुत द्रव्यके संचयके अभावका प्रसङ्ग प्राप्त होगा। इसलिए त्रसोंकी कायस्थितिमें अनेक बार नहीं भ्रमण कराया है।

तेतीस सागरकी स्थितिवाले नारकियोंमें यदि यह जीव निरन्तर उत्पन्न हो तो दो बार ही उत्पन्न होता है यह बतलानेके लिये अन्तिम नरकसम्बन्धी तेतीस सागरकी

भणिदं। एवं जेणेदं देसामासियवयणं तेण तसट्ठिदिकालब्भंतरे बहुवारं तेत्तीस-सागरोवमिएसु णेरइएसु उप्पज्जिय तदसंभवे छट्ठीए तत्थ वि असंभवे पंचमादिसु उप्पण्णो त्ति दट्ठव्वं। णेरइएसु चेव बहुवारं किमट्ठमुप्पाइदो ? तिव्वसंकिलेसेण बहुदव्वुक्कड्डणट्ठं। चरिमसमयणेरइयं मोत्तूण असंखेपद्धाए अणंतरहेट्ठिमसमए उक्कस्ससामित्तं दादव्वमुवरि आउए बज्झमाणे जहण्णाउअबंधगद्धामेत्ताणं मिच्छत्तसमयपबद्धाणं संखेज्जदिभागस्स खयप्पसंगादो त्ति ? ण, आउअबंधगद्धादो संखेज्जगुणाए उवरिमविस्समणद्धाए संचिददव्वस्स णट्ठदव्वादो संखेज्जगुणत्तुवलंभादो। आउअ-बंधगद्धादो जहण्णविस्समणद्धा संखेज्जगुणा त्ति कत्तो णव्वदे ? णेरइयचरिमसमए सामित्तपरूवणण्णहाणुववत्तीदो। एत्थ उवसंहारो जहा वेयणाए परूविदो तहा परूवेयव्वो।

स्थितिको लेकर दो भव ग्रहण करता है, ऐसा कहा है। यतः यह वाक्य देशामर्षक है अतः उसका ऐसा अर्थ लेना चाहिए कि त्रसकायस्थितिकालके भीतर बहुत बार तेतीस सागरकी स्थितिवाले नारकियोंमें उत्पन्न हुआ। वहाँ उत्पन्न होना संभव न होने पर छठे नरकमें उत्पन्न हुअ। छठेमें भी उत्पन्न होना संभव न होने पर पाँचवें आदि नरकोंमें उत्पन्न हुआ।

शंका—नारकियोंमें ही बहुत बार क्यों उत्पन्न कराया है ?

समाधान—तीव्र संक्लेशके द्वारा बहुत द्रव्यका उत्कर्षण करनेके लिये बहुत बार नारकियोंमें उत्पन्न कराया है।

शंका—अन्तिम समयवर्ती नारकीको छोड़कर आयुबन्धके योग्य अतिसंक्षेप कालके पूर्व अनन्तरवर्ती अधस्तन समयमें मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मका स्वामित्व देना चाहिये, क्योंकि तदनन्तर आयुका बन्ध होने पर आयुबन्धके जघन्य कालप्रमाण मिथ्यात्वके समयप्रबद्धोंके संख्यातवें भागके क्षयका प्रसङ्ग आता है।

समाधान—नहीं, क्योंकि आयुबन्धके कालसे संख्यातगुणे ऊपरके विश्राम कालमें सञ्चित होनेवाला द्रव्य नष्ट हुए द्रव्यसे संख्यातगुणा पाया जाता है।

शंका—आयुबन्धके कालसे जघन्य विश्रामकाल संख्यातगुणा है यह किस प्रमाणसे जाना ?

समाधान—यदि ऐसा न होता तो नारकीके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट प्रदेशके स्वामित्वका कथन न करते।

जैसा वेदनाखण्डमें उपसंहार कहा है वैसा ही यहाँ कहना चाहिये।

विशेषार्थ—उत्कृष्ट प्रदेशसंचयके लिये छह बातें आवश्यक बतलाई हैं—भवाद्धा, आयु, योग, संक्लेश, उत्कर्षण और अपकर्षण। इन्हीं छह आवश्यक कारणोंको ध्यानमें रखकर उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मके स्वामित्वका कथन किया है और बतलाया है कि क्यों बादर पृथिवीकायिक जीवोंमें उत्पन्न कराकर त्रसकायमें उत्पन्न कराया है। त्रसोंमें नरकगतिमें संक्लेश परिणाम अधिक होते हैं अतः बार बार जहाँ तक शक्य हो वहाँ तक नरकमें उत्पन्न कराया है। सातवें नरकमें लगातार दो बार ही जीव जन्म ले सकता है अतः दूसरी बार सातवें नरकमें तेतीस सागरकी स्थिति लेकर उत्पन्न हुए उस जीवके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मका

❀ एवं बारसकसाय-छण्णोकसायाणं ।

§ ९५. जहा मिच्छत्तस्स उक्कस्ससामित्तं परूविदं तहा एदेसिमट्ठारसकम्माणं परूवेदव्वं, विसेसाभावादो। एदेसिं कम्माणं मिच्छत्तस्सेव सत्तरिसागरोवमकोडाकोडिट्ठिदीए विणा कधं मिच्छत्तसंचयविहाणमेदेसिं जुज्जदे ? ण, कम्मट्ठिदिं मोत्तूण अण्णेहिं पयारेहिं[1] सरिसत्तं पेक्खिय एवं 'बारसकसाय-छण्णोकसायाणं' इदि णिद्दिट्ठत्तादो। तेण मिच्छत्तस्स गुणिदकिरियापारद्धपढमसमयादो उवरि तीसंसागरोवमकोडाकोडीओ गंतूण बारसक०—छण्णोकसायाणं गुणिदकिरियाए[2] पारंभो होदि। जदि उक्कड्डिदूण कम्मक्खंधा धरिज्जंति, तो कम्मट्ठिदीए विणा बहुअं कालं किण्ण धरिज्जंति ?

स्वामित्व बतलाया है। किन्तु किसी किसी उच्चारणामें उक्त अन्तिम समयसे नीचे अन्तर्मुहूर्त काल उतरकर उत्कृष्ट स्वामित्व बतलाया है। उसका कहना है कि जिस कालमें आयुका बंध होता है उस कालमें मोहनीयकर्मके बहुतसे निषेकोंका क्षय हो जाता है। इसीको लेकर शंकाकारने शंका की है कि अन्तिम समयके बदलेमें आयुबन्ध कालके नीचेके समयमें उत्कृष्ट स्वामित्व क्यों नहीं कहा ? इस शंका का समाधान यह किया गया है कि यद्यपि आयुबन्धकालमें मोहनीयके बहुतसे समयप्रबद्धोंका नाश हो जाता है फिर भी उससे ऊपरके विश्राम कालमें उसके अधिक समयप्रबद्धोंका संचय हो जाता है, क्योंकि आयुबन्धकालसे विश्रामकाल संख्यातगुणा है, अतः अन्तिम समयवर्ती नारकीके ही उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होता है यह उक्त कथनका अभिप्राय है।

❀ इसी प्रकार बारह कषाय और छ नोकषायोंके उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मका स्वामित्व होता है।

§ ९५. जिस प्रकार मिथ्यात्वके उत्कृष्ट स्वामित्वका कथन किया है उसी प्रकार इन अठारह कर्मोंका भी कहना चाहिये, दोनोंमें कोई अन्तर नहीं है।

शंका—मिथ्यात्वकी तरह इन अठारह कर्मोंकी सत्तर कोड़ाकोड़ि सागरप्रमाण स्थिति नहीं है, अतः उसके बिना मिथ्यात्वकर्मके सञ्चयका विधान इन कर्मोंको कैसे युक्त हो सकता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि कर्मस्थितिके सिवाय अन्य बातोंमें समानता देखकर 'बारह कषाय और छ नोकषायोंके उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मका स्वामित्व मिथ्यात्वकी तरह होता है' ऐसा कहा है।

अतः मिथ्यात्वकी गुणितक्रियाके प्रारम्भ होनेके समयसे लेकर तीस कोड़ाकोड़ी सागर बीत जाने पर बारह कषाय और छ नोकषायोंकी गुणितक्रियाका प्रारम्भ होता है।

शंका—यदि उत्कर्षण करके कर्मस्कन्धोंको रोका जा सकता है तो कर्मस्थितिके बिना बहुत काल तक उनको क्यों नहीं रोका जा सकता है ?

---

१. ता०प्रतौ 'अण्णेसिं(हिं) पयारेहिं' आ०प्रतौ 'अण्णेसिं पयारेहिं' इति पाठः।

२. आ०प्रतौ 'छण्णोकसायाणं व गुणिदकिरियाए' इति पाठः।

ण, वत्तिट्ठिदीदो अहियसत्तिट्ठिदीए अभावादो। सत्ति-वत्तिट्ठिदीओ दो वि समाणाओ त्ति कत्तो णव्वदे? 'बादरपुढविजीवेसु कम्मट्ठिदिमच्छिदो' त्ति सुत्तादो। बारसकसायाणं व छण्णोकसायाणं चालीससागरोवमकोडाकोडिसंचओ णत्थि, तेसिं उक्कस्स बंधट्ठिदीए चालीससागरोवमकोडाकोडिपमाणत्ताभावादो त्ति? ण, कसाएहिंतो णोकसाएसु संकंतकम्मक्खंधाणं चालीससागरोवमकोडाकोडिमेत्तवत्तिट्ठिदीणं उक्कड्डणाए सगवत्तिट्ठिदि मेत्तावट्ठाणाणं तत्थुवलंभादो। अकम्मबंधट्ठिदिअणुसारिणी चेव सत्ति-कम्मट्ठिदी कम्मट्ठिदिबंधाणुसारिणी ण होदि त्ति ण वोत्तुं जुत्तं, वत्तिकम्मट्ठिदित्तं पडि दोण्हं ट्ठिदिबंधाणं भेदाभावादो। अथवा कसायकम्मट्ठिदिं मोत्तूण णोकसायकम्म-ट्ठिदीए एत्थ गहणं कायव्वं, अप्पप्पणो कम्मट्ठिदीए इहाहियारादो।

समाधान—नहीं; क्योंकि व्यक्तिस्थितिसे शक्तिस्थिति अधिक नहीं होती।

शंका—शक्तिस्थिति और व्यक्तिस्थिति दोनों समान होती हैं यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

समाधान—'बादर पृथिवीकायिक जीवोंमें कर्मस्थिति काल तक रहा' इस सूत्रसे जाना जाता है।

शंका—बारह कषायोंकी तरह छ नोकषायोंका संचय चालीस कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण नहीं हो सकता, क्योंकि उनकी उत्कृष्ट बन्धस्थिति चालीस कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण नहीं है?

समाधान—नहीं, क्योंकि कषायोंसे नोकषायोंमें जिन कर्मस्कन्धोंका संक्रमण होता है उनकी व्यक्तिस्थिति चालीस कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण होती है, अतः उत्कर्षणके द्वारा छह नोकषायोंमें चालीस कोड़ाकोड़ी सागर स्थितिप्रमाण काल तक उनका अवस्थान पाया जाता है।

शंका—अकर्मरूपसे स्थित कर्मपरमाणुओंका बन्ध होने पर जो स्थितिबन्ध होता है शक्तिकर्मस्थिति उसके अनुसार ही होती है; किन्तु संक्रमसे जो स्थितिबन्ध प्राप्त होता है उसके अनुसार नहीं होती?

समाधान—ऐसा कहना ठीक नहीं है, क्योंकि, व्यक्तिकर्मस्थितिके प्रति दोनों स्थिति-बन्धोंमें कोई भेद नहीं है।

अथवा कषायोंकी कर्मस्थितिको छोड़कर नोकषायोंकी कर्मस्थितिका यहाँ ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि यहाँ अपनी अपनी कर्मस्थितिका अधिकार है।

विशेषार्थ—बारह कषाय और छह नोकषायों की उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका स्वामी भी मिथ्यात्वकी तरह ही बतलाया है किन्तु मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरके समान उक्त कर्मोंकी उत्कृष्ट स्थिति न हो कर चालीस कोड़ाकोड़ी सागर होती है, इसलिये इन कर्मोंका उत्कृष्ट सञ्चय मिथ्यात्वके उत्कृष्ट संचयके समान नहीं हो सकता, यह एक प्रश्न है जिसका टीकामें यह समाधान किया है कि स्थितिको छोड़कर अन्य बातमें समानता है, अतः मिथ्यात्वका उत्कृष्ट संचय जबसे प्रारम्भ होता है तबसे तीस कोड़ाकोड़ी सागर काल बिताकर कषायों और नोकषायोंके उत्कृष्ट संचयका प्रारम्भ जानना चाहिये, क्योंकि मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिसे इन अठारह कर्मोंकी उत्कृष्ट स्थिति तीस कोड़ाकोड़ी सागर कम है। यहाँ यह शंका हो सकती है कि सर्वत्र

१. आ०प्रतौ 'उक्कड्डणाए वत्तिट्ठिदि' इति पाठः।

उत्कृष्ट संचयके लिये अपनी-अपनी उत्कृष्ट स्थिति ही क्यों ली जाती है जब कि उत्कर्षणके द्वारा कर्मस्थितिके बाहर भी कर्मोंका संचय प्राप्त किया जा सकता है ? इस शंकाका वीरसेन स्वामीने जो समाधान किया है उसका भाव यह है कि कर्मोंमें दो प्रकारकी स्थिति होती है एक शक्तिस्थिति और दूसरी व्यक्तिस्थिति। व्यक्तिस्थिति प्रकट स्थितिका नाम है और शक्तिस्थिति अप्रकट स्थितिका नाम है। जिस कर्मकी जितनी उत्कृष्ट स्थिति है बन्ध के समय यदि वह पूरी प्राप्त हो जाय तो वह सब की सब व्यक्तिस्थिति कहलायगी और यदि कम प्राप्त हो तो जितनी स्थिति कम होगी उतनी व्यक्तिस्थिति कही जायगी। अब यदि इस कर्मका उत्कर्षण हो तो जितनी व्यक्तिस्थिति है वहीं तक उत्कर्षण हो सकता है अधिक नहीं। इससे यह फलित होता है कि शक्तिस्थिति व्यक्तिस्थितिसे अधिक नहीं होती, किन्तु दोनों समान होती हैं। इस पर यह शंका होती है कि शक्तिस्थिति और व्यक्तिस्थिति समान होती हैं यह किस प्रमाण से जाना जाता है ? वीरसेन स्वामीने इसका यह समाधान किया है कि सूत्रमें जो यह कहा है कि 'बादर पृथिवीकायिकोंमें कर्मस्थिति काल तक रहा' सो यह कहना तभी बन सकता है जब यह मान लिया जाय कि अपनी व्यक्तिस्थिति प्रमाण ही उस कर्मकी शक्तिस्थिति होती है। यदि ऐसा न माना जाय तो 'कर्मस्थिति काल तक रहा' इस पद के देनेकी कोई सार्थकता ही नहीं रहती। इससे मालूम होता है कि जिस कर्मकी बन्धसे प्राप्त होनेवाली जितनी उत्कृष्ट स्थिति होती है उतने काल तक ही उसका अवस्थान हो सकता है। उत्कर्षणसे उसकी और स्थिति नहीं बढ़ाई जा सकती। इस प्रकार इतने विवेचनसे यह तो निश्चित हो गया कि उत्कृष्ट संचय प्राप्त करनेके लिये अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थिति लेनी चाहिये। किन्तु तब भी यह प्रश्न खड़ा ही रहता है कि छह नोकषायोंकी उत्कृष्ट बन्धस्थिति चालीस कोड़ाकोड़ी सागर नहीं होती किन्तु अरति, शोक, भय और जुगुप्साकी उत्कृष्ट बन्ध स्थिति बीस कोड़ाकोड़ी सागर तथा हास्य और रतिकी दस कोड़ाकोड़ी सागर उत्कृष्ट बन्धस्थिति होती है। अतः इन छह कर्मोंका उत्कृष्ट संचय काल कषायोंके समान चालीस कोड़ाकोड़ी सागर नहीं प्राप्त होता ? इस शंकाका वीरसेनस्वामीने जो समाधान किया है उसका भाव यह है कि एक तो जो कर्मस्कन्ध कषायोंमेंसे नोकषायोंमें संक्रमित होते हैं उनकी व्यक्तिस्थिति चालीस कोड़ाकोड़ी सागर बन जाती है और दूसरे जिन कर्मस्कन्धोंकी स्थिति घट गई है उनका उत्कर्षण होकर व्यक्तिस्थितिके काल तक अवस्थान बन जाता है, इसलिये छः नोकषायोंका उत्कृष्ट संचयकाल चालीस कोड़ाकोड़ी सागर माननेमें कोई आपत्ति नहीं है। इसपर फिर यह शंका उठी कि शक्तिस्थिति बन्धसे प्राप्त होनेवाली स्थितिके अनुसार होती है संक्रमणसे होनेवाली स्थितिके अनुसार नहीं होती, अतः जिन कर्मोंका स्थितिबन्ध कम है उनका उत्कर्षण होकर संक्रमणसे प्राप्त होनेवाली स्थितिके काल तक अवस्थान नहीं बन सकता ? इस शंकाका वीरसेन स्वामीने जो समाधान किया है उसका भाव यह है कि यद्यपि बन्ध और संक्रमण इन दोनों प्रकारोंसे स्थिति प्राप्त होती है पर इससे व्यक्ति कर्मस्थितिमें कोई भेद नहीं पड़ता। अर्थात् ये दोनों ही स्थितियाँ व्यक्तिकर्म स्थिति हो सकती हैं और तब शक्तिस्थितिको इतना मान लेनेमें कोई अपत्ति नहीं आती। अर्थात् संक्रमणसे जितनी स्थिति प्राप्त होती है वहां तक कर्मोंका उत्कर्षण हो सकता है। यद्यपि यह सिद्धान्तपक्ष है तब भी वीरसेन स्वामी एक दूसरा विकल्प सुझाते हुए लिखते हैं कि यहाँ अपनी अपनी कर्मस्थितिका अधिकार है; अतः यहाँ नोकषायोंकी बन्धस्थिति ही लेनी चाहिये। मालूम होता है कि इस समाधानमें वीरसेन स्वामीकी यह दृष्टि रही है कि उत्कृष्ट संचयके लिये बन्धस्थितिका काल ही प्रधान है, क्योंकि उत्कृष्ट संचय उसके भीतर ही प्राप्त हो सकता है।

९६. हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं णिरंतरबंधेण विणा कधं कम्मट्ठिदिसंचओ लब्भदे? ण, पडिवक्खपयडीए बद्धदव्वस्स वि अप्पिदपयडीए बज्झमाणियाए उवरि संकंति-दंसणादो। हस्स-रदि-भय-दुगुंछाणं णेरइयचरिमसमयं मोत्तूण आवलियअपुव्वखवगम्मि उक्कस्ससामित्तं होदि, उदए गलमाणदव्वं पेक्खिदूण वोच्छिण्णबंधमोहपयडीहिंतो गुणसंकमेण ढुक्कमाणदव्वस्स असंखेज्जगुणत्तुवलंभादो त्ति। ण, सम्मत्तुप्पायणे संजमे अणंताणुबंधिचउक्कविसंजोयणाए दंसणमोहणीयक्खवणाए गुणसेढिकमेण गलिददव्वस्स आवलियकालब्भंतरे गुणसंकमेण संकंतदव्वदो असंखेज्जगुणत्तुवलंभादो। तदसंखेज्जगुणत्तं कत्तो उवलब्भदे? णेरइयचरिमसमए उक्कस्ससामित्तपरूवणण्णहाणुववत्तीदो। गुणसंकम-भागहारादो ओकड्डणभागहारो असंखे०गुणो। ओकड्डिददव्वस्स वि असंखे०भागो गुणसेढीए णिसिंचदि तेण गलिददव्वादो गुणसंकमेण ढुक्कमाणदव्वमसंखेज्जगुणं ति? ण, ओकड्डणभागहारादो सव्वे गुणसंकमभागहारा असंखे०गुणहीणा त्ति णियमाभावेण

§ ९६. **शंका**—हास्य, रति, अरति और शोक प्रकृतियाँ निरन्तर बन्धी नहीं हैं। अतः निरन्तर बन्धके बिना इनका कर्मस्थितिप्रमाण सञ्चय कैसे हो सकता है?

समाधान—नहीं, क्योंकि प्रतिपक्ष प्रकृतिके बद्ध द्रव्यका भी विवक्षित प्रकृतिका बन्ध होते समय उसमें संक्रमण देखा जाता है?

शंका—हास्य, रति, भय और जुगुप्साका उत्कृष्ट स्वामित्व नारकीके अन्तिम समयमें न होकर क्षपक अपूर्वकरणकी आवलिमें होता है, क्योंकि क्षपक अपूर्वकरणमें उक्त प्रकृतियोंका उदयके द्वारा जितना द्रव्य गलता है, उससे बन्धसे विच्छिन्न होनेवाली मोहकर्मकी प्रकृतियोंका गुणसंक्रमके द्वारा जो द्रव्य इन प्रकृतियोंमें आकर मिलता है, वह द्रव्य असंख्यातगुणा होता है?

समाधान—नहीं, क्योंकि सम्यक्त्वकी उत्पत्तिके समय, संयममें, अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजनामें और दर्शनमोहकी क्षपणामें गुणश्रेणिके क्रमसे जो द्रव्य गलता है वह द्रव्य, एक आवलिकालके अन्दर गुणसंक्रमके द्वारा संक्रान्त होनेवाले द्रव्यसे असंख्यातगुणा पाया जाता है। अर्थात् संक्रान्त द्रव्यसे निर्जराको प्राप्त होनेवाला द्रव्य असंख्यातगुणा होता है। अतः क्षपक अपूर्वकरणमें हास्यादिकका उत्कृष्ट संचय नहीं बन सकता।

शंका—संक्रान्त द्रव्यसे गलित द्रव्य असंख्यातगुणा है यह किस प्रमाणसे मालूम होता है?

समाधान—यदि ऐसा न होता तो नारकीके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट स्वामित्वको न बतलाते।

शंका—गुणसंक्रम भागहारसे अपकर्षण भागहार असंख्यातगुणा है, क्योंकि अपकर्षित द्रव्यके भी असंख्यातवें भागका गुणश्रेणिमें निक्षेप होता है। अतः क्षपक अपूर्वकरणमें गलने-वाले द्रव्यसे गणसंक्रमके द्वारा प्राप्त होनेवाला द्रव्य असंख्यातगुणा होता है?

समाधान—नहीं, क्योंकि अपकर्षण भागहारसे सब गुणसंक्रम भागहार अंख्यातगुणे

अपुव्वकरणद्धाए आवलियमेत्तगुणसंकमभागहाराणमोकड्डणभागहारं पेक्खिदूण असंखे०गुणत्तसिद्धीदो।

बंधेण होदि उदओ अहिओ उदएण संकमो अहिओ।
गुणसेढी असंखेज्जा च पदेसग्गेण बोद्धव्वा ॥ १ ॥

त्ति गाहासुत्तादो अपुव्वकरणस्स बज्झमाणसमयपबद्धो थोवो। उदओ असंखे०गुणो। संकामिज्जमाणदव्वमसंखेज्जगुणं ति णव्वदे। एसो वि उदओ हेट्ठिमासेस-उदएहिंतो असंखेज्जगुणो तेण णव्वदे जहा गलिदासेसदव्वं गुणसंकमणसंकंतदव्वस्स असंखेज्जदिभागं ति। अपुव्वस्स उदए गलमाणदव्वं हेट्ठिमासेसगलिददव्वादो असंखेज्ज-गुणं ति ण जुज्जदे, संजमगुणसेढीदो दंसणमोहणीयगुणक्खवणसेढीए असंखे०गुणत्तुव-लंभादो। एसा गाहा अस्सकण्णकरणद्धाए पठिदा त्ति तत्थतणबंधोदयसंकमाणमप्पाबहुअं परूवेदि ण ताए गाहाए अपुव्वकरणबंधोदयसंकमाणमप्पाबहुअं वोत्तुं जुत्तं, भिण्णजादित्तादो। तम्हा णेरइयचरिमसमए चेव उक्कस्ससामित्तं दादव्वमिदि।

हीन होते हैं ऐसा नियम नहीं है, अतः अपूर्वकरणके कालमें अपकर्षण भागहारको देखते हुए आवलिप्रमाण गुणसंक्रम भागहार असंख्यातगुणे हैं यह सिद्ध है।

शंका—प्रदेशोंकी अपेक्षा बन्धसे उदय अधिक होता है और उदयसे संक्रम अधिक होता है। इनकी उत्तरोत्तर गुणश्रेणि असंख्यागुणी जाननी चाहिये ॥ १ ॥

इस गाथासूत्रसे जाना जाता है कि अपूर्वकरणमें बँधनेवाले समयप्रबद्धका प्रमाण थोड़ा है, उदयका प्रमाण उससे असंख्यातगुणा है और संक्रान्त होनेवाले द्रव्यका प्रमाण उससे भी असंख्यातगुणा है। तथा यहाँ जो उदय है वह भी नीचेके सब उदयोंसे असंख्यातगुणा है। इससे जाना जाता है कि गलित होनेवाला अशेष द्रव्य गुणसंक्रम भाग-हारके द्वारा संक्रान्त होनेवाले द्रव्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

समाधान—अपूर्व करणमें उदयके द्वारा गलनेवाला द्रव्य नीचे गलित होनेवाले सब द्रव्यसे असंख्यातगुणा है ऐसा कहना युक्त नहीं है। क्योंकि संयम गुणश्रेणिसे दर्शनमोह-नीयकी क्षपणामें होनेवाली गुणश्रेणि असंख्यातगुणी पाई जाती है। तथा पहले जो गाथा उद्धृत की है वह गाथा अश्वकर्णकरण कालमें कही गई है, इसलिए वह अश्वकर्णकरण कालमें होनेवाले बन्ध, उदय और संक्रमके अल्पबहुत्वको बतलाती है, अतः उस गाथाके द्वारा अपूर्वकरणमें होनेवाले बन्ध, उदय और संक्रमणका अल्पबहुत्व कहना युक्त नहीं है, क्योंकि अश्वकर्णकरणकालमें होनेवाले बन्धादिकसे अपूर्वकरणमें होनेवाला बन्धादिक भिन्न-जातीय है। अतः हास्य और रति आदिका उत्कृष्ट स्वामित्व नारकीके अन्तिम समयमें ही कहना चाहिये।

विशेषार्थ—शंकाकारका कहना है कि हास्य, रति, भय और जुगुप्साका उत्कृष्ट प्रदेश सञ्चय नरकमें अन्तिम समयमें न बतलाकर क्षपकश्रेणीके अपूर्वकरण गुणस्थानमें बतलाना चाहिये, क्योंकि यद्यपि क्षपक अपूर्वकरणमें गुणश्रेणिनिर्जरा होती है किन्तु चारित्रमोहनीय-की जिन प्रकृतियोंकी पहले बन्ध व्युच्छित्ति हो चुकी है उनमेंसे प्रति समय असंख्यातगुणे परमाणु हास्यादिकमें संक्रान्त होते हैं, अतः निर्जरित द्रव्यसे संक्रान्त होनेवाला द्रव्य असंख्यात

❀ सम्मामिच्छत्तस्स उक्कस्सपदेसविहत्तओ को होदि ?

§ ९७. सुगममेदं ।

❀ गुणिदकम्मंसिओ दंसणमोहणीयक्खवओ जम्मि मिच्छत्तं सम्मामिच्छत्ते पक्खित्तं तम्मि सम्मामिच्छत्तस्स उक्कस्सपदेसविहत्तिओ ।

§ ९८. सम्मामिच्छत्तस्स उक्कस्सपदेसविहत्तिओ को होदि त्ति जादसंदेहसिस्साणं संदेहविणासणट्ठं 'दंसणमोहणीयक्खवओ' त्ति भणिदं होदि । खविदकम्मंसिय-

---

गुणा होनेसे उत्कृष्ट सञ्चय बन जाता है। इसका उत्तर यह दिया गया कि सम्यक्त्व आदिमें गुणश्रेणिनिर्जरा बतलाई है और वहाँ गुणसंक्रमके द्वारा एक आवलिकालमें जितना द्रव्य अन्य प्रकृतियोंसे संक्रान्त होता है उससे कहीं असंख्यातगुणे द्रव्यकी निर्जरा हो जाती है, अतः संक्रान्त द्रव्यसे निर्जराको प्राप्त होनेवाला द्रव्य असंख्यातगुणा होता है, इसलिये क्षपक अपूर्वकरणमें उक्त प्रकृतियोंका उत्कृष्ट संचय नहीं बनता। इस पर शंकाकारने कहा कि गुणसंक्रम भागहारसे अपकर्षण भागहार बड़ा बतलाया है। अपकर्षण भागहारके द्वारा ही अपकृष्ट हुए कर्मपरमाणुओंकी गुणश्रेणिरचना की जाती है और गुणश्रेणि रचना होनेसे ही गुणश्रेणिनिर्जरा होती है, अतः अपकर्षण भागहारके असंख्यातगुणा होनेसे जो परमाणु अपकृष्ट होंगे उनका परिमाण कम होगा और गुणसंक्रम भागहारके उससे असंख्यातगुणाहीन होनेसे उसके द्वारा जो परमाणु संक्रान्त होंगे उनका परिमाण अपकृष्ट द्रव्यसे असंख्यातगुणा होगा, क्योंकि भागहारके बड़ा होनेसे भजनफल कम आता है और भागहारके छोटा होनेसे भजनफल अधिक आता है, अतः निर्जराको प्राप्त द्रव्यसे संक्रमणको प्राप्त होनेवाले द्रव्यका परिमाण अधिक होनेसे क्षपक अपूर्वकरणमें ही उत्कृष्ट स्वामित्व बतलाना चाहिये। इसका उत्तर यह दिया गया कि ऐसा कोई नियम नहीं है कि अपकर्षण भागहारसे सब गुणसंक्रम भागहार असंख्यातगुणे हीन ही होते हैं। अपूर्वकरणमें जो अपकर्षण भागहार है उससे गुणसंक्रम भागहार असंख्यातगुणा अधिक है, अतः वहाँ संक्रान्त द्रव्यका प्रमाण निर्जराको प्राप्त द्रव्यसे असंख्यातगुणा नहीं हो सकता। इस पर शंकाकारने कसायपाहुडकी एक गाथाका प्रमाण देकर यह सिद्ध करना चाहा कि उदयागत द्रव्यसे संक्रान्त द्रव्य अधिक होता है। इसका यह उत्तर दिया गया कि नौवें गुणस्थानमें अपगतवेदी होकर क्रोधसंज्वलनके क्षपणका आरम्भ करता हुआ जीव 'अश्वकर्णकरण' नामके करणको करता है, उस प्रकरणमें उक्त गाथा कही गई है, अतः उस गाथाके आधारसे अपूर्वकरणमें होनेवाले बंध, उदय और संक्रमका अल्पबहुत्व नहीं कहा जा सकता। अतः उक्त नोकषायोंका भी उत्कृष्ट स्वामी चरम समयवर्ती नारकी जीव ही होता है यह सिद्ध होता है।

❀ सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाला कौन जीव होता है ?

§ ९७. यह सूत्र सुगम है।

❀ गुणितकर्मांशवाला जो जीव दर्शनमोहनीयका क्षपण करता है वह जब मिथ्यात्वको सम्यग्मिथ्यात्वमें प्रक्षिप्त करता है तब सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाला होता है।

§ ९८. सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाला कौन होता है, इस प्रकार जिस शिष्यको सन्देह हुआ है उसका सन्देह दूर करनेके लिये 'दर्शनमोहनीयका क्षपक होता

खविदगुणिदघोलमाणदंसणमोहणीयक्खवयपडिसेहट्ठं 'गुणिदकम्मंसिओ' त्ति भणिदं। दंसणमोहणीयक्खवणद्धाए अंतोमुहुत्तमेत्ताए वट्टमाणस्स सव्वत्थ उक्कस्ससामित्ते पत्ते तप्पदेसजाणावणट्ठं 'जम्मि मिच्छत्तं सम्मामिच्छत्ते पक्खित्तं तम्मि सम्मामिच्छत्तस्स उक्कस्सपदेसविहत्तिओ' त्ति भणिदं। मिच्छादिट्ठी सत्तमाए पुढवीए णेरइयचरिमसमए मिच्छत्तस्स कदउक्कस्सपदेससंतकम्मो तत्तो णिप्पिडिदूण तिरिक्खेसु दो-तिण्णिभवग्गहणाणि परिभमिय पुणो मणुस्सेसु उववण्णो। तदो गब्भादिअट्ठवस्साणमुवरि उवसमसम्मत्ताभिमुहो जहाकमेण अधापवत्त-अपुव्व-अणियट्टिकरणाणि करेदि। तत्थ अपुव्वकरणकालम्मि ट्ठिदिखंडय-गुणसेढीकिरियाओ करेमाणओ जहण्णपरिणामेहि चेव करावेयव्वो, अण्णहा अधट्ठिदिगलणेण बहुदव्वविणासप्पसंगादो। अणियट्टिकरणे पुण अधट्ठिदिगलणेण गलमाणदव्वं ण रक्खिदुं सक्किज्जदे, तत्थ जहण्णुक्कस्सपरिणामविसेसाभावादो।

§ ९९. संपहि अपुव्व-अणियट्टिकरणद्धासु कीरमाणकिरियाओ विसेसिदूण भणिस्सामो। तं जहा—अपुव्वकरणपढमसमए जहण्णपरिणामेण अपुव्वकरणद्धादो अणियट्टिकरणद्धादो च विसेसाहियं गुणसेढिं करेमाणो उदयावलियबाहिरट्ठिदिं पडि ट्ठिदमिच्छत्तपदेसग्गं ओकड्डुक्कड्डणभागहारेण समयाविरोहेण खंडिय तत्थ लद्धेगखंडं पुणो असंखेज्जलोगभागहारेण खंडेदूणेगखंडं घेत्तूण उदयावलियाए णिसिंचमाणो

है' ऐसा कहा है। क्षपित कर्मांशवाले और क्षपित गुणित घोलमान कर्मांशवाले दर्शनमोहनीय क्षपकका प्रतिषेध करनेके लिये 'गुणितकर्मांश' कहा। दर्शनमोहनीयके क्षपणका काल अन्तर्मुहूर्त मात्र है। उस कालमें वर्तमान जीवके सर्वदा उत्कृष्ट स्वामित्व प्राप्त हुआ, अतः उसका स्थान बतलानेके लिये 'जिस समय मिथ्यात्वका सम्यग्मिथ्यात्वमें निक्षेपण करता है उस समय सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका स्वामी होता है' ऐसा कहा है। सातवें नरकमें नरकसम्बन्धी भवके अन्तिम समयमें मिथ्यात्व कर्मका उत्कृष्ट प्रदेशसंचय करनेवाला मिथ्यादृष्टि जीव वहाँसे निकलकर तिर्यञ्चोंमें दो तीन भवग्रहणतक भ्रमण करके पुनः मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ। गर्भसे लेकर आठ वर्षके बाद उपशमसम्यक्त्वके अभिमुख होकर वह जीव क्रमसे अधःप्रवृत्तकरण, अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणको करता है। अपूर्वकरणके कालमें स्थितिकाण्डक और गुणश्रेणि क्रियाएँ करते हुए जघन्य परिणामोंसे ही करानी चाहिये, अन्यथा अधःस्थिति गलनाके द्वारा बहुत द्रव्यके विनाशका प्रसंग प्राप्त होता है। किन्तु अनिवृत्तिकरणमें अधःस्थितिगलनाके द्वारा गलनेवाले द्रव्यकी रक्षा नहीं की जा सकती, क्योंकि वहाँ जघन्य और उत्कृष्ट परिणामोंका भेद नहीं है।

§ ९९. अब अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणके कालमें की जानेवाली क्रियाओंको विस्तारसे कहते हैं। यथा—अपूर्वकरणके प्रथम समयमें जघन्य परिणामसे अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणके कालसे कुछ अधिक गुणश्रेणिको करता है। ऐसा करते हुए उदयावलिसे बाहरकी स्थितिमें विद्यमान मिथ्यात्वके प्रदेशोंको आगमानुसार अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारसे भाजित करके लब्ध एक भागको फिर भी असंख्यात लोकप्रमाण भागहारसे भाजित करके जो एक भाग लब्ध

उदए पदेसग्गं बहुअं देदि। तदो उवरि सव्वत्थ विसेसहीणं देदि जावुदयावलिय-चरिमसमओ त्ति। पुणो सेसअसंखेज्जे भागे उदयावलियबाहिरे णिसिंचमाणो उदयावलियबाहिराणंतरट्ठिदीए पुव्वणिसित्तादो असंखेज्जगुणं देदि। पुणो तदणंतर-उवरिमट्ठिदीए असंखे०गुणं देदि। एवमुवरिम-उवरिमट्ठिदीसु असंखेज्जगुणमसंखे०गुणं देदि जाव गुणसेढिसीसए त्ति। पुणो गुणसेढिसीसयादो उवरिमाणंतरट्ठिदीए असंखे०-गुणहीणं देदि। तत्तो उवरिमसव्वट्ठिदीसु अइच्छावणावलियवज्जासु विसेसहीणं देदि। एवं समयं पडि असंखे०गुणं दव्वमोकड्डिदूण गुणसेढिं करेमाणो अपुव्वकरणद्धं गमेदि। पुणो अणियट्टिकरणं पविट्ठस्स वि एसा चेव विही होदि जाव अणियट्टिकरणद्धाए संखेज्जा भागा गदा त्ति। पुणो तदद्धाए संखे०भागे सेसे अंतरकरणं काऊण चरिमसमए मिच्छाइट्ठी जादो। तत्थ मिच्छत्तस्स बंधोदयाणं वोच्छेदं कादूण तदणंतरउवरिमसमए अंतरं पविसिय पढमसमयउवसमसम्माइट्ठी जादो। तम्हि चेव समए विदियट्ठिदीए ट्ठिदमिच्छत्तस्स पदेसग्गं मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तसरूवेण परिणमदि। पुणो अंतोमुहुत्तकालं सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणि गुणसंकमेण पूरेमाणो जहण्णपरिणामेहि चेव पूरेदि। तं जहा—गुणसंकमपढमसमए मिच्छत्तादो जं सम्मत्ते संकमदि पदेसग्गं तं थोवं। तम्मि चेव समए सम्मामिच्छत्ते संकंतपदेसग्गमसंखे०गुणं। पढमसमयम्मि

आता है उसका उदयावलिमें निक्षेपण करता हुआ उदयमें बहुत प्रदेशोंका निक्षेपण करता है और उससे ऊपरके निषेकोंमें एक एक चयहीन प्रदेशोंका निक्षेपण करता है। यह निक्षेपण उदयावलिके अन्तिम समय पर्यन्त करता है। फिर शेष बचे असंख्यात बहुभाग द्रव्य का उदयावलिसे बाहरके निषेकोंमें निक्षेपण करता है। ऐसा करते हुए उदयावलिसे बाहरके अनन्तरवर्ती निषेकमें (उस निषेकमें जो उदयावलीके अन्तिम समयवर्ती निषेकसे ऊपरका निषेक है) पहले निक्षिप्त द्रव्यसे असंख्यातगुणा द्रव्य देता है। फिर उससे अनन्तरवर्ती ऊपरके निषेक-में उससे असंख्यातगुणा द्रव्य देता है। इस प्रकार ऊपर ऊपरकी स्थितियोंमें असंख्यातगुणे असंख्यातगुणे द्रव्यको देता है। इस प्रकार गुणश्रेणिके शीर्ष पर्यन्त देता है। फिर गुणश्रेणिके शीर्षसे ऊपरके अनन्तरवर्ती निषेकमें असंख्यात गुणहीन द्रव्य देता है। आगे उससे ऊपरकी सब स्थितियोंमें अतिस्थापनावलीसम्बन्धी निषेकोंको छोड़कर चयहीन चयहीन द्रव्यको देता है। इस प्रकार प्रति समय असंख्यातगुणे असंख्यातगुणे द्रव्यका अपकर्षण करके गुणश्रेणिको करता हुआ अपूर्वकरणके कालको बिता देता है। फिर अनिवृत्तिकरणमें प्रवेश करता है। वहाँ भी अनिवृत्तिकरण कालके संख्यात बहुभाग बीतने तक यही विधि होती है। जब संख्यातवें भाग प्रमाण काल शेष रहता है तो अन्तरकरण करके अन्तिम समयवर्ती मिथ्यादृष्टि हो जाता है और वहाँ मिथ्यात्वके बन्ध और उदयकी व्युच्छित्ति करके उसके अनन्तरवर्ती ऊपरके समयमें अन्तरमें प्रवेश करके प्रथम समयवर्ती उपशमसम्यग्दृष्टी हो जाता है। उसी समयमें जिस समय कि वह उपशमसम्यग्दृष्टी हुआ दूसरी स्थितिमें स्थित मिथ्यात्वके प्रदेश समूहको मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व रूपसे परिणमाता है। पुनः अन्तमुहूर्त कालतक गुणसंक्रमके द्वारा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतिको पूरता हुआ जघन्य परिणामोंके द्वारा ही पूरता है। यथा—गुणसंक्रमके प्रथम समयमें मिथ्यात्वका जो प्रदेशसमूह सम्यक्त्व प्रकृतिमें संक्रमण करता है वह थोड़ा है। उसी समयमें सम्यग्मिथ्यात्वमें संक्रान्त होनेवाला मिथ्यात्वका

सम्मामिच्छत्तसरूवेण परिणदपदेसपिंडादो विदियसमए सम्मत्तसरूवेण संकंतपदेसग्गमसंखे०गुणं। तम्मि चेव समए सम्मामिच्छत्ते संकंतपदेसग्गमसंखे०गुणं। एवं सव्विस्से गुणसंकमद्धाए सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं पूरणक्कमो वत्तव्वो।

प्रदेशसमूह उससे असंख्यातगुणा है। प्रथम समयमें सम्यग्मिथ्यात्वरूपसे परिणमन करनेवाले प्रदेशसमूहसे दूसरे समयमें सम्यक्त्वरूपसे संक्रमण करनेवाला प्रदेशसमूह असंख्यातगुणा है। उससे उसी दूसरे समयमें सम्यग्मिथ्यात्वमें संक्रान्त होनेवाला प्रदेशसमूह असंख्यातगुणा है। इसी प्रकार गुणसंक्रमके सब कालमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके पूरनेका क्रम कहना चाहिये।

विशेषार्थ—सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतिका उत्कृष्ट संचय उस जीवके बतलाया है जो मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसंचय करके सातवें नरकसे निकलकर तिर्यञ्चोंके दो तीन भव धारण करके मनुष्योंमें जन्म लेकर गर्भसे लेकर आठ वर्षकी उम्रमें सम्यक्त्वको प्राप्त करके फिर दर्शनमोहका क्षपण करता हुआ जब मिथ्यात्वकी अन्तिम फालिको सम्यग्मिथ्यात्वमें संक्रान्त करता है तब उसके सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट संचय होता है। जब जीव उपशम सम्यक्त्वके अभिमुख होता है तो उसके अधःकरण, अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण नामके तीन करण अर्थात् परिणाम विशेष होते हैं। इनमेंसे अधःकरणके होने पर तो जीवके प्रतिसमय अनन्तगुणी-अनन्तगुणी विशुद्धिमात्र होती है, जिससे अप्रशस्त प्रकृतियोंके अनुभागबन्धमें प्रतिसमय हीनता होती जाती है और प्रशस्त प्रकृतियोंके अनुभागबन्धमें प्रतिसमय वृद्धि होती जाती है। किन्तु अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणमें चार कार्य होते हैं—स्थितिखण्डन, अनुभागखण्डन, गुणश्रेणि और गुणसंक्रम। पहले बँधे हुए सत्तामें स्थित कर्मोंकी स्थितिके घटानेको स्थितिखण्डन कहते हैं। पहले बँधे हुए सत्तामें स्थित अप्रशस्त कर्मोंके अनुभागके घटानेको अनुभागखण्डन कहते हैं। पहले बँधे हुए सत्तामें स्थित कर्मोंका जो द्रव्य गुणश्रेणिके कालमें प्रतिसमय असंख्यातगुणा असंख्यातगुणा स्थापित किया जाता है उसे गुणश्रेणि कहते हैं। तथा प्रतिसमय उत्तरोत्तर गुणितक्रमसे विवक्षित प्रकृतिके परमाणुओंका अन्य प्रकृतिरूप होना गुणसंक्रम कहाता है। गुणश्रेणिका विधान इस प्रकार जानना—विवक्षित कर्मके सर्व निषेक-सम्बन्धी सब परमाणुओंमें अपकर्षण भागहारका भाग देनेसे जो परमाणु लब्धरूपसे आये उन्हें अपकृष्ट द्रव्य कहते हैं। उस अपकृष्ट द्रव्यमेंसे कुछ परमाणु तो उदयवाली प्रकृतिकी उदयावलीमें मिलाता है, कुछ परमाणु गुणश्रेणिआयाममें मिलाता है और बाकी बचे परमाणुओंको ऊपरकी स्थितिमें मिलाता है। वर्तमान समयसे लेकर आवली मात्र काल सम्बन्धी निषेकोंको उदयावली कहते हैं। उस उदयावलीमें जो द्रव्य मिलाया जाता है वह उसके प्रत्येक निषेकमें एक एक चय घटता हुआ होता है। उस उदयावलीके निषेकोंसे ऊपरके अन्तर्मुहूर्त समय सम्बन्धी जो निषेक हैं उनको गुणश्रेणि आयम कहते हैं। उसमें जो द्रव्य दिया जाता है वह प्रत्येक निषेकमें उत्तरोत्तर असंख्यातगुणा असंख्यातगुणा दिया जाता है। गुणश्रेणिआयामसे ऊपरके सब निषेकोंको ऊपरकी स्थिति कहते हैं। उस ऊपरकी स्थितिके अन्तके जिन आवलीमात्र निषेकोंमें द्रव्य नहीं मिलाया जाता उनको अतिस्थापनावली कहते हैं। बाकीके निषेकोंमें जो द्रव्य मिलाया जाता है वह प्रत्येक निषेकमें उत्तरोत्तर घटता हुआ मिलाया जाता है। जैसे—विवक्षित कर्मकी स्थिति ४८ समय है। उसके निषेक भी ४८ हैं। उन निषेकोंके सब परमाणु २५ हजार हैं। उनमें अपकर्षण भागहारका कल्पित प्रमाण ५ से भाग देनेसे पाँच हजार लब्ध आया, अतः २५हजारमेंसे ५ हजार परमाणु लेकर उनमेंसे

§ १००. एवं सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणि जहण्णगुणसंकमपरिणामेहि तज्जहण्णकालेण समावूरिय पुणो अंतोमुहुत्तं गंतूण उवसमसम्मत्तकालब्भंतरे चेव अणंताणुबंधिचउक्कं

---

२५० परमाणु तो उदयावलीमें दिये। ४८ निषेकोंमेंसे प्रारम्भके ४ निषेक उदयावलीके हैं। उनमें उत्तरोत्तर घटते हुए परमाणु दिये। एक हजार परमाणु गुणश्रेणि आयाममें दिये। सो पाँचसे लेकर बारह तक आठ निषेक गुणश्रेणि आयामके हैं। इनमें उत्तरोत्तर असंख्यातगुणे असंख्यातगुणे परमाणु मिलाये। बाकीके ३७५० परमाणु ऊपरकी स्थितिमें दिये। सो शेष ३६ निषेक रहे। उनमेंसे अन्तके ४ निषेक अतिस्थापनारूप हैं। उन्हें छोड़ बाकी १३ से लेकर ४४ पर्यन्त ३२ निषेकोंमें उत्तरोत्तर चयघाट परमाणु मिलाये। यहाँ गुणश्रेणिआयामका प्रमाण अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणके कालसे कुछ अधिक होता है। इस गुणश्रेणिआयामके अन्तके निषेकोंको गुणश्रेणिशीर्ष कहते हैं, क्योंकि शीर्ष अर्थात् सिर ऊपरके अंगका नाम है। इस प्रकार प्रतिसमय मिथ्यात्वप्रकृतिके संचित द्रव्यका अपकर्षण करके गुणश्रेणि करता है। जब अनिवृत्तिकरणके कालमेंसे संख्यातवाँ भाग काल बाकी रहता है तो मिथ्यात्वका अन्तरकरण करता है। विवक्षित कर्मकी नीचे और ऊपरकी स्थितिको छोड़कर मध्यकी अन्तर्मुहूर्तमात्र स्थितिके निषेकोंके अभाव करनेको अन्तरकरण कहते हैं। ऊपर अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणके कालसे जो कुछ अधिक गुणश्रेणि आयाम कहा था सो यहाँ वह कुछ अधिक भाग ही गुणश्रेणिशीर्ष है। उस गुणश्रेणिशीर्षके सब निषेकों और उससे संख्यातगुणे गुणश्रेणिशीर्षसे ऊपरके ऊपरकी स्थितिसम्बन्धी निषेकोंको मिलानेसे अन्तरायाम अर्थात् अन्तरका काल होता है जो अन्तर्मुहूर्त मात्र है। इतने निषेकोंको बीचसे उठाकर ऊपरकी अथवा नीचेकी स्थितिमें स्थापित करके उनका अभाव कर देता है। यहाँ अन्तरकरण करनेके कालके प्रथम समयसे लेकर अनिवृत्तिकरणका जो संख्यातवाँ भाग काल शेष रहा था उसके भी संख्यातवें भाग काल पर्यन्त तो अन्तरकरण करनेका काल है और उससे ऊपर बाकी बचा हुआ बहुभागमात्र काल प्रथम स्थिति सम्बन्धी काल है और उससे ऊपर जिन निषेकोंका अभाव किया सो अन्तर्मुहूर्त मात्र अन्तरायाम अर्थात् अन्तरका काल है। प्रथम स्थितिमें आवलिमात्र काल शेष रहने पर मिथ्यात्वकी स्थिति और अनुभागका उदीरणारूपसे घात नहीं होता। किन्तु स्थितिकाण्डकघात और अनुभागकाण्डकघात प्रथम स्थितिके अन्तिम समय पर्यन्त होता है। इस प्रकार मिथ्यात्वकी प्रथम स्थितिका क्रमसे वेदन करता हुआ वह जीव चरमसमयवर्ती मिथ्यादृष्टि होता है। उसके अनन्तरवर्ती समयमें मिथ्यात्वकी सम्पूर्ण प्रथम स्थितिको समाप्त करके उपशमसम्यक्त्वको उत्पन्न करता है। अर्थात् अन्तरायाममें प्रवेश करनेके प्रथम समयमें ही दर्शनमोहनीयका उपशम करके उपशमसम्यग्दृष्टि हो जाता है और उसी प्रथम समयमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतियोंकी उत्पत्ति होती है। जैसे चाकीमें दले जानेसे धान्यके तीन रूप हो जाते हैं उसी तरह अनिवृत्तिकरणरूप परिणामोंसे एक दर्शनमोहनीय कर्म तीन रूप हो जाता है। यहाँ दर्शनमोहका सर्वोपशमन नहीं होता, अतः उपशम हो जाने पर भी संक्रमकरण और अपकर्षणकरण पाये जाते हैं। इसीलिए एक अन्तर्मुहूर्त काल तक गुणसंक्रमके द्वारा मिथ्यात्वके प्रदेशसंचयका सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वमें संक्रमण होता है। जिसका क्रम पूर्वमें बतलाया है।

§ १००. इस प्रकार जघन्य गुणसंक्रमके कारण परिणामोंसे और उसके जघन्य कालके द्वारा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वको पूरित करके अनन्तर अन्तर्मुहूर्तको बिताकर उपशम सम्यक्त्व कालके भीतर ही अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजना करता है। फिर उपशम-

विसंजोइय उवसमसम्मत्तकालं समाणिय वेदगसम्मत्तं पडिवज्जिय तत्थ अंतोमुहुत्तमच्छिय दंसणमोहक्खवणमाढवेमाणो तिण्णि वि करणाणि करेदि । तत्थ अधापवत्तकरणं कादूण पच्छा अपुव्वकरणं करेमाणो जहण्णपरिणामेहि चेव गुणसेढिं करेदि थोवदव्वणिज्जरणट्ठं । सम्मत्तस्स उदयावलियब्भंतरे असंखेज्जलोगपडिभागियं दव्वं घेत्तूण गोवुच्छायारेण संछुहदि, सोदयत्तादो। सेसमोकड्डिददव्वमुदयावलियबाहिरे गुणसेढिआगारेण णिसिंचदि । मिच्छत्त-सम्मामिच्छत्ताणं पुण ओकड्डिददव्वमुदयावलियबाहिरे चेव गुणसेढिआगारेण णिसिंचदि, तेसिमुदयाभावादो । सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुवरि गुणसंकमेण समयं पडि मिच्छत्तं संकामेदि । तदो अपुव्वकरणद्धं गमिय अणियट्टिकरणद्धाए संखेज्जेसु भागेसु गदेसु दूरावकिट्टीसण्णिदट्ठिदीए समुप्पत्ती होदि । तदोप्पहुडि दूरावकिट्टिट्ठिदिमसंखेज्जे खंडे कादूण तत्थ बहुखंडाणि अंतोमुहुत्तेण घादिदे जाव मिच्छत्तदुचरिमट्ठिदिकंडए त्ति । तदो मिच्छत्तचरिमट्ठिदिखंडयभागाएंतो उदयावलियबाहिरे आगाएदूण चरिमट्ठिदिखंडयफालीओ सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं सरूवेण संकामेदि । एवं संकामेमाणेण जाधे[1] मिच्छत्तचरिमखंडयस्स चरिमफाली सम्मामिच्छत्तस्सुवरि संकामिदा

सम्यक्त्वके कालको समाप्त करके वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त करके उसमें अन्तर्मुहूर्त कालतक ठहर कर दर्शनमोहके क्षपणका प्रारम्भ करता हुआ तीनों करणोंको करता है । ऐसा करता हुआ वहाँ अधःप्रवृत्तकरणको करके पीछे अपूर्वकरणको करता हुआ जघन्य परिणामोंसे ही गुणश्रेणिको करता है जिससे थोड़े द्रव्यकी निर्जरा हो । तथा सम्यक्त्व प्रकृतिके अपकर्षित द्रव्यमें असंख्यात लोकका भाग देकर लब्ध एक भागप्रमाण द्रव्यको उदयावलीके अन्दर गोपुच्छके आकार रूपसे निक्षेपण करता है, क्योंकि उस प्रकृतिका उदय है । अर्थात् जैसे गौकी पूंछ क्रमसे घटती हुई होती है वैसे ही एक एक चय घटता क्रमसे निषेकोंकी रचना उदयावलीमें करता है और बाकी बचे अपकृष्ट द्रव्यको उदयावलीसे बाहर गुणश्रेणिके आकार रूपसे स्थापित करता है । अर्थात् ऊपर ऊपरके निषेकोंमें असंख्यातगुणे असंख्यातगुणे द्रव्यका निक्षेपण करता है । यह तो उदय प्राप्त सम्यक्त्व प्रकृतिकी गुणश्रेणि रचनाका क्रम हुआ । परन्तु मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अपकृष्ट द्रव्यको उदयावलीके बाहर ही गुणश्रेणिके आकार रूपसे निक्षेपण करता है, क्योंकि उनका उदय नहीं है । अर्थात् उदय प्राप्त प्रकृतिके अपकृष्ट द्रव्यका निक्षेपण उदयावलीमें करता है किन्तु जिसका उदय नहीं है उसके अपकृष्ट द्रव्यका निक्षेपण उदयावलीसे बाहर करता है तथा गुणसंक्रमके द्वारा प्रति समय मिथ्यात्वको सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतिमें संक्रान्त करता है । इस प्रकार अपूर्वकरणके कालको बिताकर अनिवृत्तिकरण कालके संख्यात बहुभाग बीतनेपर दूरापकृष्टि नामकी स्थितिकी उत्पत्ति होती है, इसलिए वहाँसे लेकर दूरापकृष्टि स्थितिके असंख्यात खण्ड करके उनमेंसे बहुतसे खण्डोंको मिथ्यात्वके द्विचरम स्थितिकाण्डकके प्राप्त होनेतक अन्तर्मुहूर्तके द्वारा घातता है । उसके बाद मिथ्यात्वके अन्तिम स्थितिकाण्डकको ग्रहण करता हुआ उदयावलीके बाहर ही ग्रहण करके अन्तिम स्थितिकाण्डककी फालियोंको सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वरूपसे संक्रमित करता है । इस प्रकार संक्रमण करते हुए जब मिथ्यात्वके अन्तिम काण्डककी अन्तिम फाली सम्यग्मिथ्यात्वमें संक्रान्त होती है तब

१. ता०प्रतौ 'जादे (धे)' आ०प्रतौ 'जादे' इति पाठः ।

ताधे सम्मामिच्छत्तउक्कस्सपदेसविहत्ती, सगअसंखे०भागेणूणमिच्छत्तुक्कस्सदव्वस्स सम्मामिच्छत्तसरूवेण परिणयस्सुवलंभादो। सम्मत्तसरूवेण संकंतदव्वमोकड्डिदूण गुणसेढीए गालिददव्वं च मिच्छत्तुक्कस्सदव्वस्स असंखे०भागो त्ति कत्तो णव्वदे? उवरि भण्णमाणपदेसप्पाबहुगसुत्तादो। एसो एदस्स सुत्तस्स भावत्थो

सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है, क्योंकि उस समय अपना असंख्यातवाँ भाग कम मिथ्यात्वका उत्कृष्ट द्रव्य सम्यग्मिथ्यात्वरूपसे परिणमित हुआ पाया जाता है। अर्थात् चूंकि मिथ्यात्वके उत्कृष्ट द्रव्यका असंख्यातवाँ भाग तो सम्यक्त्वरूप हो जाता है और गुणश्रेणीके द्वारा निर्जीर्ण हो जाता है, शेष बहुभाग द्रव्य सम्यग्मिथ्यात्व रूप हो जाता है अतः उस समय सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसंचय होनेसे उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है।

शंका—मिथ्यात्वका जो द्रव्य सम्यक्त्व रूपसे संक्रान्त होता है तथा जो द्रव्य अपकृष्ट होकर गुणश्रेणिके द्वारा गल जाता है वह सब द्रव्य मिथ्यात्वके उत्कृष्ट द्रव्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है यह किस प्रमाणसे जाना जाता है।

समाधान—आगे कहे जानेवाले प्रदेशविषयक अल्पबहुत्वको बतलानेवाले सूत्रसे जाना जाता है।

यह उक्त सूत्रका भावार्थ है।

विशेषार्थ—सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतिका उत्कृष्ट प्रदेशसंचय गुणितकर्मांशवाले दर्शनमोहके क्षपकके बतलाया है। अतः गुणितकर्मांशवाले मिथ्यादृष्टिके उपशम सम्यक्त्व उत्पन्न कराकर क्षायोपशमिक सम्यक्त्व उत्पन्न कराया है और फिर दर्शनमोहका क्षपण कराया है। दर्शनमोहके क्षपणके लिये भी पूर्वोक्त तीन करण होते हैं और वहाँ भी अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणमें गुणश्रेणि आदि कार्य होते हैं। उपशम सम्यक्त्वको प्राप्त करनेके समय और यहाँ पर भी यह गुणश्रेणि जघन्य परिणामोंसे ही कराना चाहिये, क्योंकि यदि पहले उत्कृष्ट आदि परिणामोंसे गुणश्रेणि कराई जायेगी तो मिथ्यात्वका संचित बहुत द्रव्य गुणश्रेणिनिर्जराके द्वारा निर्जीर्ण हो जायेगा और ऐसी स्थितिमें सम्यग्मिथ्यात्वमें अधिक द्रव्यका संक्रमण न हो सकनेसे उसका उत्कृष्ट संचय नहीं बन सकेगा, तथा यहाँ पर भी उत्कृष्ट परिणामोंसे गुणश्रेणि कराने पर तीनों प्रकृतियोंका बहुत द्रव्य निर्जीर्ण हो जायेगा। उपशमसम्यक्त्वकी उत्पत्ति कराते हुए यह कहा था कि मिथ्यात्वके अपकृष्ट द्रव्यका निक्षेप उदयावलीसे अतिस्थापनावलीके पूर्व तक होता है। किन्तु यहाँ पर सम्यक्त्व प्रकृतिके अपकृष्ट द्रव्यका निक्षेप तो उदयावलीसे ही होता है किन्तु मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अपकृष्ट द्रव्यका निक्षेप उदयावलीमें न होकर उससे बाहर गुणश्रेणि और द्वितीय स्थितिमें ही होता है। इसका कारण यह है कि जिस प्रकृतिका उदय होता है उसके अपकृष्ट द्रव्यका निक्षेप उदयावलिसे किया जाता है और जिस प्रकृतिका उदय नहीं होता है उसके अपकृष्ट द्रव्यका निक्षेप उदयावलीमें न होकर उससे बाहर ही होता है। क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टिके केवल सम्यक्त्वप्रकृतिका ही उदय होता है सम्यग्मिथ्यात्व और मिथ्यात्वका उदय नहीं होता, अतः उनके अपकृष्ट द्रव्यके निक्षेपणमें अन्तर है। इस प्रकार अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणमें गुणश्रेणि रचनाको करके अनिवृत्तिकरणके कालमेंसे संख्यात बहुभागप्रमाण कालके बीत जाने पर दूरापकृष्टि नामकी स्थिति उत्पन्न होती है। स्थितिकाण्डकघातके द्वारा जिस स्थितिसत्कर्मका घात करते करते पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितिसत्कर्म शेष रहता है उस सबसे अन्तिम पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितिसत्कर्मको दूरापकृष्टि कहते हैं।

❀ सम्मत्तस्स वि तेणेव जम्मि सम्मामिच्छत्तं सम्मत्ते पक्खित्तं तस्स सम्मत्तस्स उक्कस्सपदेससंतकम्मं ।

§ १०१. तेणेवे त्ति वुत्ते सम्मामिच्छत्तुक्कस्सपदेससंतकम्मिएण जीवेणे त्ति वुत्तं होदि । सम्मामिच्छत्तुक्कस्सपदेससंतकम्मिओ सगुदयावलियबाहिरासेसपदेसग्गं ण सम्मत्ते संकामेदि, अंतोमुहुत्तेण विणा तस्संकमणाणुववत्तीदो । जम्हि उद्देसे उदयावलियबाहिरासेससम्मामिच्छत्तदव्वं सम्मत्ते संकामेदि ण तत्थ सम्मामिच्छत्तस्स पदेसग्गमुक्कस्सं, गालिदअंतोमुहुत्तमेत्तगुणसेढीगोवुच्छत्तादो । तम्हा तेणेवे त्ति ण घडदे ? ण एस दोसो, जीवदुवारेण दोण्हं ट्ठाणाणमेयत्तं[1] पडि विरोहाभावेण तदुववत्तीदो । सम्मामिच्छत्तुक्कस्सपदेससंतकम्मं काऊण पुणो अंतोमुहुत्तकालं संखेज्जट्ठिदिखंडयसहस्सेहि गमिय सम्मामिच्छत्तस्स उदयावलियबाहिरासेसदव्वे सम्मत्तस्सुवरि संकामिदे सम्मत्तुक्कस्सदव्वं होदि त्ति भावत्थो ।

इसके बाद दूरापकृष्टि नामकी स्थितिके असंख्यात खण्ड करके उनमेंसे बहुतसे स्थिति खण्डोंका घात अन्तर्मुहूर्तमें करता है तब तक मिथ्यात्वका द्विचरिमस्थितिकाण्डक हो जाता है । इसके बाद मिथ्यात्वके अन्तिम स्थितिकाण्डकका आगाल करते हुए अर्थात् उसके ऊपरकी स्थितिमें स्थित निषेकोंको प्रथम स्थितिमें स्थापित करते हुए उदयावलिसे बाहर ही स्थापित करता है और ऐसा करके अन्तिम स्थितिकाण्डककी फालियोंका सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व रूपसे संक्रमण करता है । ऐसा करते हुए जब मिथ्यात्वके उस अन्तिम स्थितिकाण्डककी अन्तिम फाली सम्यग्मिथ्यात्वरूपसे हो जाती है तब सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिहोती है ।

❀ वही जीव जब सम्यग्मिथ्यात्वको सम्यक्त्वमें प्रक्षिप्त कर देता है तो उसके सम्यक्त्वप्रकृतिका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होता है ।

§ १०१. 'वही जीव' ऐसा कहनेसे सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मवाले जीवका ग्रहण होता है ।

शंका—सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मवाला जीव अपने उदयावली बाह्य समस्त प्रदेशसमूहको सम्यक्त्व प्रकृतिमें संक्रान्त नहीं करता, क्योंकि अन्तर्मुहूर्त कालके विना उसका संक्रमण नहीं बन सकता । और जब उदयावली बाह्य सम्यग्मिथ्यात्वके सब द्रव्यको सम्यक्त्वमें संक्रान्त करता है तब उसके सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म नहीं रहता, क्योंकि उस समय अन्तर्मुहूर्त कालप्रमाण गुणश्रेणी और गोपुच्छका गलन हो जाता है, अतः सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मवाले जीवके ही सम्यक्त्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होता है यह बात घटित नहीं होती ?

समाधान—यह दोष ठीक नहीं है, क्योंकि एक जीवकी अपेक्षा दोनों स्थानोंके एक होनेमें कोई विरोध नहीं है, अतः उक्त कथन बन जाता है । भावार्थ यह है कि सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मको करके फिर संख्यात हजार स्थितिकाण्डकोंके द्वारा अन्तर्मुहूर्त कालको बिताकर जब सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतिके उदयावली बाह्य समस्त द्रव्यको सम्यक्त्व प्रकृतिमें संक्रमित करता है तब सम्यक्त्वका उत्कृष्ट द्रव्य होता है ।

---

१. आ.प्रतौ 'दोण्हमवट्ठाणमेयत्तं' इति पाठः ।

§ १०२ एदं पि सम्मत्तुक्कस्सपदेसग्गं मिच्छत्तुक्कस्सपदेसग्गादो असंखेज्जदिभागहीणं, गुणसेडीए गलिदासेसदव्वस्स तदसंखे० भागत्तादो। एगसमयपबद्धं ठविय दिवड्ढगुणहाणीए गुणिदे मिच्छत्तुक्कस्सदव्वं होदि। तम्हि तप्पाओग्गोकड्डुकड्डणभागहारेण तप्पाओग्गासंखेज्जरूवगुणिदेण भागे हिदे सम्मत्तादो एगसमएण गुणसेढीए गलिदुक्कस्सदव्वं होदि। एदस्स असंखे० भागो हेट्ठा णट्ठासेसदव्वं, एत्थोकड्डिददव्वस्स पहाणत्तुवलंभादो। जेणेदं णट्ठदव्वस्स पमाणं तेण सेसासेसमिच्छत्तदव्वं सम्मत्तसरूवेण अत्थि त्ति घेत्तव्वं। एसो एदस्स सुत्तस्स भावत्थो। णवरि सम्मामिच्छत्तुक्कस्सदव्वादो सम्मत्तुक्कस्सदव्वं विसेसाहियं, गुणसेढीए उदएण गलिददव्वं पेक्खिय गुणसंकमेण सम्मत्तागारेण परिणयदव्वस्स असंखे०गुणत्तादो। तदसंखे०गुणत्तं कत्तो णव्वदे? उवरि भण्णमाणपदेसप्पाबहुअसुत्तादो।

विशेषार्थ—सूत्रमें कहा गया है कि सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मवाले जीवके ही सम्यक्त्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होता है। इस पर शंकाकारका कहना है कि यह बात नहीं बन सकती, क्योंकि जब उस जीवके सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट द्रव्य रहता है तब सम्यक्त्वका उत्कृष्ट द्रव्य नहीं प्राप्त होता। और जब सम्यग्मिथ्यात्वका उदयावलिके बिना शेष सब द्रव्य सम्यक्त्वमें संक्रान्त होता है तब वह सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मवाला नहीं रहता, क्योंकि तब तक सम्यग्मिथ्यात्वके गुणश्रेणी और गोपुच्छाकी निर्जरा हो लेती है। इसका यह समाधान किया गया है कि उक्त कथन एक जीवकी अपेक्षासे किया है। अर्थात् जो जीव सम्यग्मिमिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मवाला होता है वही जीव सम्यक्त्वका भी उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मवाला होता है। इसका यह मतलब नहीं है कि एक ही समयमें दोनों कर्मोंके उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होते हैं किन्तु कालभेदसे सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मवाला जीव ही सम्यक्त्वके उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मका भी स्वामी होता है।

§ १०२. सम्यक्त्वका यह उत्कृष्ट प्रदेशसंचय भी मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशसंचयसे असंख्यातवें भागप्रमाण हीन होता है, क्योंकि गुणश्रेणिके द्वारा जो द्रव्य निर्जीर्ण हो जाता है वह सब द्रव्य मिथ्यात्वके उत्कृष्ट संचयके असंख्यातवें भागप्रमाण होता है। एक समयप्रबद्धकी स्थापना करके डेढ़ गुणहानिसे गुणा करने पर मिथ्यात्वका उत्कृष्ट द्रव्य होता है। उस उत्कृष्ट द्रव्यमें उसके योग्य असंख्यातगुणे तत्प्रायोग्य उत्कर्षण-अपकर्षण भागहारके द्वारा भाग देने पर जो लब्ध आवे वह सम्यक्त्व प्रकृतिका एक समयमें गुणश्रेणिके द्वारा गलनेवाला उत्कृष्ट द्रव्य होता है और उसके असंख्यातवें भागप्रमाण नीचे नष्ट हुए कुल द्रव्यका प्रमाण है, क्योंकि यहाँ अपकर्षित द्रव्यकी प्रधानता पाई जाती है। यतः नष्ट द्रव्यका प्रमाण इतना है अतः बाकीका सब मिथ्यात्वका द्रव्य सम्यक्त्वरूपसे अवस्थित रहता है ऐसा इस सूत्रका भावार्थ लेना चाहिये। किन्तु सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट द्रव्यसे सम्यक्त्वका उत्कृष्ट द्रव्य विशेष अधिक है, क्योंकि गुणश्रेणिके उदयसे निर्जीर्ण होनेवाले द्रव्यकी अपेक्षा गुणसंक्रमके द्वारा सम्यक्त्वरूपसे परिणत हुआ द्रव्य असंख्यातगुणा होता है।

शंका—वह द्रव्य असंख्यातगुणा है यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

समाधान—आगे कहे जानेवाले प्रदेशविषयक अल्पबहुत्वका कथन करनेवाले सूत्रसे जाना जाता है।

विशेषार्थ—क्रम यह है कि जिस समय मिथ्यात्वका पूरा संक्रमण होता है उस समय सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी बची हुई स्थितिके बहुभागका घात करता है और इस प्रकार संख्यात स्थितिकाण्डकोंका पतन करके जब सम्यग्मिथ्यात्वका सम्यक्त्वमें संक्रमण करता है तब सम्यक्त्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होता है। इससे एक बात तो यह ज्ञात होती है कि जिस समय मिथ्यात्वका सम्यग्मिथ्यात्वमें पूरा संक्रमण होता है उससे सम्यग्मिथ्यात्वका सम्यक्त्वमें संक्रमण होनेके लिये अन्तर्मुहूर्त काल और लगता है, इसलिये सूत्रमें आये हुए 'तेणेव' पदका अर्थ 'सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मवालेके ही सम्यक्त्वका उत्कृष्ट प्रदेश-सत्कर्म होता है' ऐसा न करके जो यह सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मवाला जीव है वही आगे चलकर सम्यक्त्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मवाला होता है ऐसा करना चाहिये। अब इस योग्यतावाला आगे चलकर कब होता है इसका खुलासा मूल सूत्रमें ही किया है कि जब सम्यग्मिथ्यात्वका सम्यक्त्वमें पूरा संक्रमण करता है तब इस योग्यतावाला होता है। इतने कालके भीतर यद्यपि इस जीवके सम्यग्मिथ्यात्वकी अन्तर्मुहूर्त कालवाली गुणश्रेणीका और (उदयावलिप्रमाण) गोपुच्छाका गलन हो जानेसे सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेश नहीं रहते तब भी उस समय सम्यक्त्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होनेमें कोई बाधा नहीं आती, क्योंकि उक्त गलित द्रव्यको छोड़कर सम्यग्मिथ्यात्वका शेष सब द्रव्य तब तक सम्यक्त्वको मिल जाता है, इसलिये उसका प्रदेशसत्कर्म बहुत अधिक बढ़ जाता है। यही कारण है कि गुणित कर्मांश-वाले जीवके जब सम्यग्मिथ्यात्वका सम्यक्त्वमें पूरा संक्रमण होता है तब सम्यक्त्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म कहा है। यद्यपि इस प्रकार सम्यक्त्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म प्राप्त होता है तो भी उसका प्रमाण कितना है यह एक प्रश्न है जिसका खुलासा करते हुए वीरसेन स्वामीने दो बातें कहीं हैं। प्रथम तो यह कि सम्यक्त्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मसे असंख्यातवां भाग कम है और दूसरी यह कि सम्यक्त्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मसे विशेष अधिक है। पहली बातके समर्थनमें वीरसेन स्वामीने यह हेतु दिया है कि गुणश्रेणीके द्वारा जितना द्रव्य गल जाता है वही अकेला मिथ्यात्वके प्रदेशसत्कर्मके असंख्यातवें भाग है और अधस्तन गलनाके द्वारा जो और द्रव्य गला है वह अतिरिक्त है। इससे स्पष्ट है कि मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मसे सम्यक्त्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म असंख्यातवां भाग कम होता है। विशेष खुलासा इस प्रकार है कि मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म गुणितकर्मांशवाले जीवके सातवें नरकके अन्तिम समयमें होता है। तब इसके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी सत्ता नहीं पाई जाती। अब यही जीव जब वहाँसे निकलकर और तिर्यञ्चके दो तीन भव लेकर मनुष्य होता है और आठ वर्षका होकर अन्तर्मुहूर्तमें उपशम सम्यक्त्वको प्राप्त करके मिथ्यात्वके तीन टुकड़े कर देता है और इस प्रकार मिथ्यात्व तीन भागोंमें बट जाता है। अनन्तर अन्तर्मुहूर्तमें दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करता है और तब मिथ्यात्वको सम्यग्मिथ्यात्वमें और सम्यग्मिथ्यात्वको सम्यक्त्वमें संक्रमित करता है और इस प्रकार सम्यक्त्वका उत्कृष्ट द्रव्य प्राप्त किया जाता है। अब यहाँ विचारणीय बात यह है कि एक मिथ्यात्वका द्रव्य ही जो कि सातवें नरकके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट था वही आगे चलकर तीन भागोंमें बटता है, सम्यक्त्व प्राप्तिके समय मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक्त्वकी गुणश्रेणी निर्जरा उसीमेंसे होती है और अन्तमें वही गलितसे शेष बचकर सबका सब सम्यक्त्वरूप परिणमता है तो वह मिथ्यात्वके उत्कृष्ट द्रव्यसे कम होना ही चाहिए। अब कितना कम है सो इस प्रश्नका यह खुलासा किया कि अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारके द्वारा सब द्रव्यका असंख्यातवा भाग ही गुणश्रेणीमें प्राप्त होता है अतः इतना कम

❀ णवुंसयवेदस्स उक्कस्सयं पदेससंतकम्मं कस्स ?

§ १०३. सुगमं।

❀ गुणिदकम्मंसिओ ईसाणं गदो तस्स चरिमसमयदेवस्स उक्कस्सयं पदेससंतकम्मं।

§ १०४. गुणिदकम्मंसिओ किमट्ठमीसाणदेवेसु उप्पाइदो ? तसबंधगद्धादो संखेज्ज-गुणथावरबंधगद्धाए पुरिसित्थिवेदबंधसंभवविरहिदाए णवुंसयवेदस्स बहुदव्वसंचयट्ठं। ण च सत्तमपुढवीए थावरबंधगद्धा अत्थि जेण तत्थ णवुंसयवेदस्स उक्कस्सपदेससंतकम्मं होज्ज। तसबंधगद्धादो थावरबंधगद्धा संखेज्जगुणा त्ति कुदो णव्वदे ? 'सव्वत्थोवा तस-बंधगद्धा। थावरबंधगद्धा संखेज्जगुणा' त्ति एदम्हादो महाबंधसुत्तादो णव्वदे। सत्तमाए

है। यहां अधःस्थिति गलनाके द्वारा जितना द्रव्य गल गया उसकी विवक्षा नहीं की, क्योंकि वह गुणश्रेणिके द्रव्यके भी असंख्यातवें भागप्रमाण है। यहाँ अकर्षण-उत्कर्षण भागहारको जो असंख्यातसे गुणित किया गया और फिर उसका जो मिथ्यात्वके उत्कृष्ट द्रव्यमें भाग दिया गया सो इसका कारण यह है कि अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारकी क्रिया बहुत काल तक चलती रहती है जिसका प्रमाण असंख्यात समय होता है। तथा दूसरी बातके समर्थनमें यह हेतु दिया है कि सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट द्रव्य प्राप्त होने पर उसमेंसे गुणश्रेणिको जितना द्रव्य मिलता है उससे भी असंख्यातगुणा द्रव्य सम्यक्त्वको मिलता है और इस प्रकार सम्यक्त्वके उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मके समय उसका कुल संचित द्रव्य सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट संचयसे अधिक हो जाता है। तात्पर्य यह है कि सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट संचयके समय सम्यक्त्वका जितना संचय है वह गुणश्रेणिरूपसे सम्यग्मिथ्यात्वके गलनेवाले द्रव्यसे बहुत अधिक है और फिर इसमें गुणश्रेणीके द्वारा जितना द्रव्य गलता है उसके सिवा सम्यग्मिथ्यात्वका शेष सब द्रव्य आ मिलता है। अब यदि सम्यक्त्वके इन दोनों द्रव्योंको जोड़ा जाता है तो उसका सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट द्रव्यसे विशेष अधिक होना स्वाभाविक है। यही कारण है कि वीरसेन स्वामीने सम्यक्त्वके उत्कृष्ट द्रव्यको सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट द्रव्यसे विशेष अधिक बतलाया।

❀ नपुंसकवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म किसके होता है ?

§ १०३. यह सूत्र सुगम है।

❀ गुणितकर्मांशवाला जो जीव ईशान स्वर्गमें उत्पन्न हुआ उसके देवपर्यायके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होता है।

§ १०४. **शंका**—गुणितकर्मांशवाले जीवको ईशान स्वर्गके देवोंमें क्यों उत्पन्न कराया है ?

समाधान—त्रसबन्धकके कालसे स्थावरबन्धकका काल संख्यातगुणा है और उस स्थावरबन्धक कालमें पुरुषवेद और स्त्रीवेदका बन्ध संभव नहीं है, अतः नपुंसकवेदका बहुत द्रव्य संचय करनेके लिये ईशान स्वर्गके देवोंमें उत्पन्न कराया है। और सातवें नरकमें स्थावर-बन्धक काल है नहीं, जिससे वहाँ नपुंसकवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म हो।

शंका—त्रसबन्धकके कालसे स्थावरबन्धकका काल संख्यागुणा है यह किस प्रमाणसे जाना ?

समाधान—'त्रसबन्धकका काल सबसे थोड़ा है। स्थावरबन्धकका काल उससे संख्यात-गुणा है' इस महाबन्धके सूत्रसे जाना।

पुढवीए तेत्तीससागरोवमाणि संखेज्जखंडाणि कादूण तत्थ बहुभागा णवुंसयवेदबंधकालो होदि, 'प्रक्षेपकसंक्षेपेण' एदम्हादो सुत्तादो तदुवलद्धीए। ईसाणदेवेसु पुण सगसंखे०-भागेणूणवेसागरोवममेत्तो चेव णवुंसयवेदसंचयकालो लब्भदि तेण सत्तमपुढवीए चेव उक्कस्ससामित्तं दिज्जदि त्ति ? ण, सव्वतसट्ठिदिं णेरइएसु बहुसंकिलेसेसु गमिय तसट्ठिदीए ईसाणदेवाउअमेत्ताए सेसाए ईसाणदेवेसुप्पण्णस्स लाहुवलंभादो। अथवा एसो णवुंसयवेदगुणिदकम्मंसओ एइंदिएहिंतो णिप्पिडिदूण तसेसु हिंडमाणो बहुवार-मीसाणदेवेसु चेव उप्पाएदव्वो त्ति एसो सुत्ताहिप्पाओ, तसट्ठिदिं संखेज्जखंडाणि कादूण तत्थ बहुखंडीभूदथावरबंधगद्धं तसबंधगद्धाए संखेज्जे[1] भागे च णवुंसयवेदस्सुवलंभादो। ईसाणसद्दो जेण देसामासिओ तेण तसथावरबंधपाओग्गासेसतसेसु जहासंभवमुप्पाएदव्वो त्ति भावत्थो। णेरइएसु व णत्थि उक्कड्डणा, अइतिव्वसंकिलेसाभावादो। तदो एत्थ ण उप्पादेदव्वो त्ति ण पच्चवट्ठेयं, बंधगद्धालाहस्सेव उक्कड्डणालाहस्स पहाणत्ताभावादो।

शंका—सातवें नरककी तेतीस सागरकी स्थितिके संख्यात खण्ड करके उनमेंसे बहुभाग नपुंसकवेदके बन्धका काल होता है। यह बात "प्रक्षेपकसंक्षेपेण" इस सूत्रसे उपलब्ध होती है। किन्तु ईशान स्वर्गके देवोंमें अपने संख्यातवें भाग कम दो सागरप्रमाण ही नपुंसकवेदका संचयकाल पाया जाता है, अतः नपुंसकवेदके उत्कृष्ट संचयका स्वामित्व सातवें नरकमें ही देना चाहिये।

समाधान—नहीं, क्योंकि त्रसपर्यायकी सब स्थितिको बहुत संक्लेशवाले नारकियोंमें बिताकर ईशान स्वर्गकी देवायुप्रमाण त्रसस्थितिके शेष रहने पर ईशान स्वर्गके देवोंमें उत्पन्न होने वाले जीवके लाभ अर्थात् उत्कृष्ट संचय अधिक पाया जाता है।

अथवा नपुंसकवेदका गुणितकर्मांशवाला यह जीव एकेन्द्रियोंमेंसे निकलकर जब त्रसोंमें भ्रमण करे तो उसे बहुत बार ईशानस्वर्गके देवोंमें ही उत्पन्न कराना चाहिये, ऐसा उक्त चूर्णिसूत्रका अभिप्राय है, क्योंकि त्रसस्थितिके संख्यात खण्ड करके उनमेंसे बहुत खण्ड-प्रमाण स्थावरबन्धककालमें और संख्यातवें भागप्रमाण त्रसबन्धककालमें नपुंसकवेदका बन्ध पाया जाता है। यतः ईशान शब्द देशामर्षक है, अतः त्रस और स्थावरके बन्धयोग सब त्रसोंमें यथासंभव उत्पन्न कराना चाहिये यह उस सूत्रका भावार्थ है।

शंका—ईशान स्वर्गके देवोंमें नारकियोंकी तरह उत्कर्षण नहीं होता, क्योंकि देवोंमें अति तीव्र संक्लेशका अभाव है। अतः ईशानमें उत्पन्न नहीं कराना चाहिये।

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये; क्योंकि बन्धककालके लाभकी तरह उत्कर्षणके लाभकी प्रधानता नहीं है। अर्थात् उत्कृष्ट संचयके लिये बन्धककाल जितना आव-श्यक है उतना उत्कर्षण आवश्यक नहीं है।

विशेषार्थ—नपुंसकवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसत्त्व गुणितकर्मांशवाले ईशान स्वर्गके देवके बतलाया है। इसका कारण बतलाते हुए वीरसेन स्वामी लिखते हैं कि ईशान स्वर्गमें त्रसबन्धक-काल और स्थावर बन्धककाल दोनों होते हैं। उसमें भी स्थावरबन्धककाल त्रसबन्धककालसे

---

१. आ०प्रतौ '-थावरबंधगद्धाए संखेज्जे' इति पाठः।

संख्यातगुणा है और इसमें स्त्रीवेद और पुरुषवेदका बन्ध नहीं होता। इस प्रकार ईशान स्वर्गमें केवल नपुंसकवेदके बन्धकी अधिक काल तक संभावना होनेसे उसके द्रव्यका अधिक संचय हो जाता है इसलिये नपुंसकवेदके अधिक संचयके लिये गुणितकर्मांशवाले जीवको ईशान स्वर्गमें उत्पन्न कराया है। इस पर यह शंका हुई कि सातवें नरककी उत्कृष्ट आयु तेतीस सागर है और ईशान स्वर्गकी उत्कृष्ट आयु साधिक दो सागर है। अब यदि इन दोनों स्थलोंमें नपुंसकवेदका बन्धकाल प्राप्त किया जाता है तो वह ईशान स्वर्गसे सातवें नरकमें नियमसे अधिक प्राप्त होता है, क्योंकि ऐसा नियम है कि पुरुषवेदका बन्धकाल सबसे थोड़ा है, इससे स्त्रीवेदका बन्धकाल संख्यातगुणा है और इससे नपुंसकवेदका बन्धकाल संख्यातगुणा है। इस नियमके अनुसार तेतीस सागरके संख्यात खण्ड करने पर उनमेंसे बहुभाग खण्ड नपुंसकवेदके बन्धकालके प्राप्त होते हैं। तथा ईशान स्वर्गमें नपुंसकवेदका उत्कृष्ट बन्धकाल अपना संख्यातवाँ भाग कम दो सागर प्राप्त होता है। सो भी यह इतना अधिक काल तब प्राप्त होता है जब ईशान स्वर्गमें त्रसबन्ध-कालसे स्थावरबन्धकाल संख्यातगुणा स्वीकार कर लिया जाता है। तो भी सातवें नरकमें नपुंसकवेदके बन्धकालसे ईशान स्वर्गमें नपुंसकवेदका बन्धकाल बहुत थोड़ा प्राप्त होता है, इसलिये नपुंसकवेदका उत्कृष्ट संचय सातवें नरकमें बतलाना चाहिये। वीरसेन स्वामीने इस शंकाका दो प्रकारसे समाधान किया है। एक तो यह कि संपूर्ण त्रसस्थितिको बहुत संक्लेशसे युक्त नारकियोंमें व्यतीत कराया जाय और जब उस स्थितिमें ईशान स्वर्गके देवकी आयु-प्रमाण काल शेष रहे तब उसे ईशान स्वर्गमें उत्पन्न कराया जाय तो इससे नपुंसकवेदका अधिक संचय संभव है। यही कारण है कि अन्तमें ईशान स्वर्गमें उत्पन्न कराया है। पर मालूम होता है कि वीरसेन स्वामीको इस उत्तर पर स्वयं संतोष नहीं हुआ। उसका कारण यह है कि पूर्वमें मिलान करते हुए जो ईशान स्वर्गसे सातवें नरकमें नपुंसकवेदका अधिक बन्धकाल बतलाया है सो यह तेतीस सागरसे साधिक दो सागरका मिलान करके प्राप्त किया गया है। अब यदि दोनों स्थलों पर समान कालके भीतर नपुंसकवेदका बन्ध-काल प्राप्त किया जाय तो वह सातवें नरकसे ईशान स्वर्गमें बहुत अधिक प्राप्त होता है, क्योंकि सातवें नरकमें केवल त्रसबन्धकाल है स्थावर बन्धकाल नहीं और ईशानस्वर्गमें स्थावर बन्धकाल भी है जिससे यहाँ नपुंसकवेदका बन्धकाल अधिक प्राप्त हो जाता है। वीरसेन स्वामीने पहले उत्तरमें इस दोषका अनुभव किया और तब वे अथवा करके दूसरा उत्तर देते हैं। उसका भाव यह है कि त्रसस्थिति साधिक दो हजार सागर कालके भीतर गुणितकर्मांशवाले इस एकेन्द्रिय जीवको त्रसोंमें उत्पन्न कराते हुए ईशान स्वर्गके देवोंमें बहुत बार उत्पन्न करावे। इससे नपुंसकवेदका बन्धकाल अधिक प्राप्त हो जानेसे उसका संचय भी अधिक प्राप्त होगा। इस पर यह शंका हो सकती है कि क्या यह संभव है कि यह जीव सदा ईशान स्वर्गके देवोंमें उत्पन्न होता रहे। अतः इस शंकाको ध्यानमें रखकर वीरसेन स्वामी आगे लिखते हैं कि सूत्रमें जो ईशान शब्द आया है सो वह देशामर्षक है। उसका भाव यह है कि इस जीवको त्रस और स्थावरके बन्धयोग्य यथासंभव सब त्रसोंमें उत्पन्न कराया जाय। उसमें इतना ध्यान अवश्य रखे कि अधिकसे अधिक जितनी बार ईशान स्वर्गके देवोंमें उत्पन्न कराया जा सके कराया जाय। इतनेके बाद भी यह शंका की गई कि माना कि ईशान स्वर्गमें नपुंसकवेदका बन्धकाल अधिक है पर वहाँ अधिक संक्लेश परिणाम सम्भव न होनेसे नरकके समान अधिक उत्कर्षण नहीं हो सकता, अतः नपुंसकवेदके संचयके लिये नरकमें ही उत्पन्न कराना ठीक है। इस शंकाका वीर-

§ १०५. संपहि एत्थ णवुंसयवेदुक्कस्सदव्वस्स उवसंहारे भण्णमाणे संचयाणुगमो भागहारपमाणाणुगमो लद्धपमाणाणुगमो चेदि तिण्णि अणियोगद्दाराणि होंति। तत्थ संचयाणुगमो वुच्चदे। तं जहा—कम्मट्ठिदिपढमसमयप्पहुडि जाव अंतोमुहुत्तकालं ताव तत्थ पबद्धणवुंसयवेददव्वमत्थि। पुणो तदुवरि अंतोमुहुत्तमेत्तकालसंचिददव्वं णत्थि, तत्थाणप्पिदवेदेसु बज्झमाणेसु णवुंसयवेदस्स बंधाभावादो। पुणो वि उवरि अंतोमुहुत्तमेत्तकालसंचओ अत्थि, तत्थ णवुंसयवेदस्स बंधुवलंभादो। तदुवरिमअंतोमुहुत्तमेत्तकालसंचओ णत्थि, तत्थ पडिवक्खपयडिबंधसंभवादो। एवं णेदव्वं जाव कम्मट्ठिदिचरिमसमओ त्ति। णवरि एत्थ कम्मट्ठिदिकालब्भंतरे पडिवक्खपयडिबंध-

---

सेन स्वामीने जो समाधान किया है उसका भाव यह है कि उत्कर्षणसे जितना संचय होगा उससे बन्धकी अपेक्षा होनेवाला संचय ज्यादह लाभकर है, अतः ऐसे जीवको अधिकतर ईशान स्वर्गके देवोंमें ही उत्पन्न कराना चाहिये। यहाँ पर प्रकरणवश एक करणगाथांश उद्धृत किया गया है जो पूरी इस प्रकार है—

प्रपेक्षकसंक्षेपेण विभक्ते यद्धनं समुपलब्धम्।
प्रक्षेपास्तेन गुणाः प्रक्षेपसमानि खण्डानि ॥

इसलिए नपुंसकवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसंचय ईशान स्वर्गमें उत्पन्न होनेवाले गुणितकर्मांश जीवके देवपर्यायके अन्तिम समयमें बतलाया है, क्योंकि ईशान स्वर्गका देव मरकर एकेन्द्रिय हो जाता है, अतः वहाँ स्थावर प्रकृतियोंका बन्धकाल संभव है और स्थावर प्रकृतियोंके बन्धके समय केवल नपुंसकवेदका ही बन्ध होता है, क्योंकि स्थावर नपुंसक ही होते हैं, अतः ईशान स्वर्गके देवके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट संचय संभव है। सातवें नरककी स्थिति यद्यपि तेतीस सागर है, किन्तु वहाँ स्थावर पर्यायका बन्धकाल नहीं है, क्योंकि सातवें नरकसे निकलकर जीव संज्ञी पञ्चेन्द्रिय पर्याप्तक तिर्यञ्च ही होता है। अतः गुणितकर्मांश जीवके सातवें नरकके अन्तमें नपुंसकवेदका उत्कृष्ट संचय नहीं बतलाया। 'अथवा' करके आगे जो भावार्थ बतलाया है वह स्पष्ट ही है। तथा यद्यपि सातवें नरकमें अतितीव्रसंक्लेश परिणाम होनेसे उत्कर्षण अर्थात् स्थिति और अनुभागमें वृद्धि होनेकी अधिक संभावना है किन्तु किसी प्रकृतिके उत्कृष्ट द्रव्य संचयके लिये उत्कर्षणकी अपेक्षा उस प्रकृतिका बन्ध होना अधिक लाभकारी है, क्योंकि बन्ध होनेसे अधिक प्रदेशों का संचय होता है।

§ १०५. अब यहाँ नपुंसकवेदके उत्कृष्ट द्रव्यके उपसंहारका कथन करने पर संचयानुगम, भागहारप्रमाणानुगम और लब्धप्रमाणानुगम ये तीन अनुयोगद्वार होते हैं। उनमेंसे संचयानुगमको कहते हैं। वह इस प्रकार है—कर्मस्थितिके प्रथम समयसे लेकर अन्तर्मुहूर्त काल पर्यन्त बन्धको प्राप्त नपुंसकवेदका द्रव्य है। उसके बादके अन्तर्मुहूर्त कालमें नपुंसकवेदका संचित होनेवाला द्रव्य नहीं है। अर्थात् उस अन्तर्मुहूर्तमें नपुंसकवेदका संचय नहीं होता, क्योंकि उसमें अविवक्षित स्त्रीवेद और पुरुषवेदका बन्ध होनेसे नपुंसकवेदके बन्धका अभाव है। उससे ऊपरके अन्तर्मुहूर्त कालमें भी नपुंसकवेदका संचय होता है, क्योंकि उसमें नपुंसक वेदका बन्ध पाया जाता है। उससे ऊपरके अन्तर्मुहूर्त कालमें नपुंसकवेदका संचय नहीं होता, क्योंकि उसमें नपुंसकवेदके प्रतिपक्षी स्त्रीवेद और पुरुषवेदका बन्ध सम्भव है। इसी प्रकार कर्मस्थितिके अन्तिम समय पर्यन्त ले जाना चाहिये। किन्तु इतना विशेष है कि इस

गद्धाओ तब्बंधपरियट्टणवारा च सव्वत्थोवा कायव्वा, अण्णहा णवुंसयवेदस्सुक्कस्स-दव्वसंचयाणुववत्तीदो। णिरंतरबंधीणं कसायाणं दव्वे णवुंसयवेदम्मि णिरंतरं संकंते णवुंसयवेदस्स कम्मट्ठिदिमेत्तकालसंचओ किण्ण लब्भदि ? ण, बंधुवरमे संते अंतोमुहुत्त-मेत्तकालं कसाएहिंतो णवुंसयवेदस्स कम्मपदेसागमाभावादो। एदं कत्तो णव्वदे ? 'बंधे उक्कड्डदि' त्ति सुत्तादो। मा होदु उक्कड्डणा, संकमेण पुण होदव्वं, तस्स पडिसेहा-भावादो त्ति। संकमो वि णत्थि, बंधाभावेणापडिग्गहे णत्थि संकमो त्ति सुत्ताविरुद्धा-इरियवयणादो। किं च एत्थ बज्झमाणदव्वं पहाणं ण संकमिददव्वं, तत्थायाणुसारि-वयदंसणादो। जदि बज्झमाणपयडी चेव पडिग्गहो तो मिच्छत्तदव्वं सम्मत्तपयडी ण पडिच्छदि, बंधाभावादो त्ति ? ण एस दोसो, बंधपयडीओ अस्सिदूण एदस्स लक्खणस्स पउत्तीदो। ण च अण्णत्थ पउत्तं लक्खणमण्णत्थ पयट्टदि, विरोहादो।

एवं संचयाणुगमो गदो।

§ १०६. संपहि भागहारपमाणाणुगमो कीरदे। तं जहा—कम्मट्ठिदिपढमसमए जं बद्धं दव्वं तस्स अंगुलस्स असंखे०भागो भागहारो। विदियसमए बद्धस्स किंचूणं

कर्मस्थिति कालके अन्दर प्रतिपक्ष प्रकृतियोंके बन्धका काल और उनके बन्धके बदलनेके बार सबसे थोड़े करने चाहिये अन्यथा नपुंसकवेदका उत्कृष्ट संचय नहीं बन सकता।

शंका—निरन्तर बंधनेवाली कषायोंके द्रव्यका नपुंसकवेदमें निरन्तर संक्रमण होने पर नपुंसकवेदका संचय कर्मस्थिति कालप्रमाण क्यों नहीं पाया जाता ?

समाधान—नहीं, क्योंकि नपुंसकवेदका बन्ध रुक जानेपर अन्तर्मुहूर्त कालतक कषायोंमेंसे नपुंसकवेदमें कर्मप्रदेशोंका आगमन नहीं होता।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना ?

समाधान—'बन्धके समय उत्कर्षण होता है' इति सूत्र से जाना।

शंका—बन्ध के न होने पर यदि उत्कर्षण नहीं होता तो न होवे, संक्रमण तो होना चाहिए, क्योंकि उसका निषेध नहीं है ?

समाधान—बन्धके अभावमें संक्रम भी नहीं होता, क्योंकि 'बन्धका अभाव होने से अपतद्ग्रह प्रकृतिमें संक्रमण नहीं होता' इस प्रकार सूत्रके अविरुद्ध आचार्य वचन हैं। दूसरे, यहाँ बँधनेवाले द्रव्यकी प्रधानता है, संक्रमित द्रव्यकी नहीं, क्योंकि संक्रमित द्रव्यमें आयके अनुसार व्यय देखा जाता है।

शंका—यदि बध्यमान प्रकृति ही पतद्ग्रह है तो मिथ्यात्वके द्रव्यको सम्यक्त्वप्रकृति नहीं ग्रहण कर सकती, क्योंकि उसका बन्ध नहीं होता ?

समाधान—यह दोष ठीक नहीं है, क्योंकि यह लक्षण बन्ध प्रकृतियोंकी अपेक्षासे ही लागू होता है। जो लक्षण अन्यत्र लागू होता है वह उससे भिन्न स्थलमें लागू नहीं हो सकता, क्योंकि ऐसा होनेमें विरोध आता है।

इस प्रकार संचयानुगम समाप्त हुआ।

§ १०६. अब भागहारके प्रमाणका अनुगम करते हैं। वह इस प्रकार है—कर्मस्थितिके प्रथम समयमें जो द्रव्य बांधा उसका भागहार अंगुलका असंख्यातवां भाग है। दूसरे समयमें

पुव्वभागहारद्धं भागहारो । एवं किंचूणतिभाग-चदु०भागादिकमेण णेदव्वं जाव णवुंसयवेदबंधगद्धाचरिमसमओ त्ति। तदद्धाचरिमसमए णवुंसयवेदबंधगद्धोवट्टिदअंगुलस्स असंखे०भागो किंचूणो भागहारो होदि। पुणो इत्थि-पुरिसबंधगद्धाओ वोलाविय उवरिमसमए बद्धणवुंसयवेददव्वस्स तिवेदद्धाहि ओवट्टिदअंगुलस्स असंखे०भागो किंचूणो भागहारो होदि। एदम्हादो उवरि रूवाहियकमेण अंगुलस्स असंखे०भाग-भूदभागहारस्स भागहारो वड्ढमाणो गच्छदि जाव अंतोमुहुत्तमेत्तविदियबंधगद्धाचरिम-समओ त्ति। पुणो दुगुणिदतिवेदबंधगद्धाहि ओवट्टिदअंगुलस्स असंखे०भागो किंचूणो भागहारो होदि। एवं जाणिदूण णेदव्वं जावीसाणदेवचरिमसमयआउअं ति।

§ १०७. संपहि समयपबद्धपमाणाणुगमो वुच्चदे। तं जहा—कम्मट्ठिदि-अब्भंतरे तस-थावरबंधगद्धासु जदि दिवड्ढगुणहाणिमेत्ता समयपबद्धा तिण्हं वेदाणं लब्भंति, तो थावरबंधगद्धाए किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए दिवड्ढगुणहाणिं संखेज्जखंडाणि कादूण तत्थ बहुखंडमेत्ता समयपबद्धा लब्भंति, तसबधं पेक्खिदूण थावरबंधगद्धाए संखे०गुणत्तादो। एदे सव्वे वि समयपबद्धे णवुंसयवेदो[1] चेव लहइ, थावरबंधकाले इत्थिपुरिसवेदाणं बंधाभावादो। एदं दव्वं पुध ट्ठविय पुणो

जो द्रव्य बाँधा उसका भागहार पूर्व भागहारके आधेसे कुछ कम है। इस प्रकार नपुंसकवेदके बन्धककालके अन्तिम समय पर्यन्त तीसरे आदि समयोंमें बँधनेवाले द्रव्यका भागहार पूर्व भागहारसे कुछ कम तिहाई, कुछ कम चौथाई आदि क्रमसे जानना चाहिये। नपुंसकवेदके बन्धककालके अन्तिम समयमें भागहारका प्रमाण अंगुलके असंख्यातवें भागमें नपुंसकवेदके बन्धकालका भाग देनेसे जो लब्ध आवे उससे कुछ कम है। पुनः स्त्रीवेद और पुरुषवेदके बन्धककालको बिताकर उससे ऊपरके समयमें बंधनेवाले नपुंसकवेदके द्रव्यका भागहार अंगुलके असंख्यातवें भागमें तीनों वेदोंके कालका भाग देने पर जो लब्ध आवे उससे कुछ कम होता है। इससे ऊपर नपुंसकवेदके अन्तर्मुहूर्त काल प्रमाण द्वितीय बन्धक कालके अन्तिम समय पर्यन्त अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण भागहारका भागहार रूपाधिक क्रमसे बढ़ता जाता है। इसके बाद पुनः स्त्रीवेद और पुरुषवेदके बन्धककालको बिताकर उससे ऊपरके समयमें बंधनेवाले नपुंसकवेदके द्रव्यका भागहार अंगुलके असंख्यातवें भागमें द्विगुणित तीनों वेदोंके बन्धकालका भाग देनेसे जो लब्ध आवे उससे कुछ कम होता है। इस प्रकार भागहारको जानकर ईशान स्वर्गके देवकी आयुके अन्तिम समय पर्यन्त ले जाना चाहिये।

§ १०७. अब समयप्रबद्धोंके प्रमाणका अनुगम करते हैं। वह इस प्रकार है—कर्मस्थिति कालके अन्दर त्रस और स्थावर प्रकृतियोंके बन्धककालोंमें यदि तीनों वेदोंके समयप्रबद्ध डेढ़ गुणहानिप्रमाण पाये जाते हैं तो स्थावरबन्धककालमें कितने समयप्रबद्ध प्राप्त होते हैं इस प्रकार त्रैराशिक करके फलराशिसे इच्छाराशिको गुणा करके उसमें प्रमाणराशिका भाग देनेसे डेढ़ गुणहानिके संख्यात खण्ड करके उनमेंसे बहुखण्डप्रमाण समयप्रबद्ध प्राप्त होते हैं, क्योंकि त्रसबन्धककालकी अपेक्षा स्थावर बन्धककाल संख्यातगुणा है। ये सब समयप्रबद्ध नपुंसकवेदके ही होते हैं, क्योंकि स्थावर बन्धकालमें स्त्रीवेद और पुरुषवेदके बन्धका अभाव है। इस

१. ता०प्रतौ 'णवुंसयवेदा' इति पाठः।

तस-थावरबंधगद्धाहि ओवट्टिददिवड्ढगुणहाणिमेत्तसमयपबद्धेसु तसबंधगद्धाए गुणिदेसु कम्मट्ठिदिअब्भंतरे तसबंधगद्धाए संचिदतिवेददव्वं होदि। सव्वत्थोवा तसबंधगद्ध-ब्भंतरपुरिसवेदबंधगद्धा। इत्थिवेदबंधगद्धा संखे०गुणा। तत्थेव णवुंसयवेदबंधगद्धा संखे०गुणा। एदासिं तिण्हमद्धाणं समासस्स जदि दिवड्ढगुणहाणीए[1] संखे०भागमेत्ता समयपबद्धा कम्मट्ठिदिअब्भंतरतसबंधगद्धाए लब्भंति तो णवुंसयवेदबंधगद्धाए किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए दिवड्ढगुणहाणिमेत्तसमयपबद्धाणं संखे०भागं संखेज्जखंडाणि कादूण तत्थ बहुखंडमेत्ता समयपबद्धा कम्मट्ठिदिअब्भंतर-तसबंधगद्धाए णवुंसयवेदेण लद्धा। एदेसु समयपबद्धेसु पुव्विल्लथावरबंधगद्धासंचिद-समयपबद्धेसु पक्खित्तेसु कम्मट्ठिदिअब्भंतरे णवुंसयवेदेण संचिददव्वं होदि। होंतं पि दिवड्ढगुणहाणिमेत्तसमयपबद्धेसु संखेज्जरूवेहि खंडिदेसु तत्थ बहुखंडदव्वमेत्तं होदि।

द्रव्यको पृथक् स्थापित करके पुनः डेढ़ गुणहानि प्रमाण समयप्रबद्धोंमें त्रस-स्थावर बन्धक कालसे भाग देकर जो लब्ध आये उसे त्रसबन्धक कालसे गुणा करनेपर कर्मस्थितिकालके अन्दर जो त्रसबन्धक काल है उसमें संचित हुए तीनों वेदोंका द्रव्य होता है। त्रसबन्धक कालके अन्दर पुरुषवेदका बन्धककाल सबसे थोड़ा है। स्त्रीवेदका बन्धककाल उससे संख्यातगुणा है और नपुंसकवेदका बन्धककाल उससे संख्यातगुणा है। यदि कर्मस्थितिकालके अभ्यन्तरवर्ती त्रसबन्धक-कालमें इन तीनों वेदोंके कालोंमें संचित हुए समयप्रबद्ध डेढ़ गुणहानिके संख्यातवें भागमात्र पाये जाते हैं तो नपुंसकवेदके बन्धक कालमें संचित हुए समयप्रबद्ध कितने प्राप्त होते हैं? इस प्रकार त्रैराशिक करके फलराशिसे इच्छाराशिको गुणा करके प्रमाणराशिसे उसमें भाग देने पर डेढ़ गुणहानिप्रमाण समयप्रबद्धोंके संख्यातवें भागके संख्यात खण्ड करके उनमेंसे बहुत खण्ड प्रमाण समयप्रबद्ध कर्मस्थिति कालके अभ्यन्तरवर्ती त्रसबन्धक कालमें नपुंसकवेदके होते हैं। इन समयप्रबद्धोंको पूर्वोक्त स्थावर बन्धककालमें संचित हुए समयप्रबद्धोंमें मिला देनेपर कर्मस्थितिकालके अन्दर नपुंसकवेदका संचित द्रव्य होता है। ऐसा होते हुए भी यह द्रव्य डेढ़ गुणहानिप्रमाण समयप्रबद्धोंके संख्यात खण्ड करने पर उनमेंसे बहुखण्डप्रमाण होता है।

विशेषार्थ—कर्मस्थितिके प्रथम समयसे लेकर अन्तिम समय पर्यन्त कर्मस्थितिकालमें बंधनेवाले समयप्रबद्धोंके प्रमाणकी परीक्षा करनेको उपसंहार कहते हैं। नपुंसकवेदका उत्कृष्ट द्रव्य गुणितकर्मांशवाले जीवके बतलाया है और गुणितकर्मांश होनेके लिये पहले जो विधि बतलाई है उसमें गुणितकर्मांशवाले जीवको कर्मस्थितिकाल तक पहले स्थावरोंमें और पीछे त्रसोंमें भ्रमण कराया है। इस कर्मस्थितिकालमें भ्रमण करता हुआ जीव कभी स्थावर पर्यायके योग्य कर्मोंका बन्ध करता है और कभी त्रसपर्यायके योग्य कर्मोंका बन्ध करता है। किन्तु त्रसबन्धककालसे स्थावरबन्धककाल संख्यातगुणा है। जब जब स्थावर-पर्यायके योग्य कर्मोंका बन्ध करता है तब तब तीनों वेदोंमेंसे नपुंसकवेदका ही बन्ध करता है, क्योंकि सब स्थावर नपुंसक ही होते हैं। तथा जब त्रसपर्यायके योग्य प्रकृतियोंका बन्ध करता है तब तीनोंमेंसे किसी भी वेदका बन्ध करता है, क्योंकि त्रसोंमें तीनों वेदोंका उदय पाया जाता है। इस प्रकार त्रसबन्धककालमें यद्यपि तीनों वेदोंका बन्ध

---

1. आ०प्रतौ 'जदि वि दिवड्ढगुणहाणीए' इति पाठः।

सम्भव है तथापि उसमें नपुंसकवेदका बन्धकाल शेष दोनों वेदोंके बन्धकालसे संख्यात गुणा है। ऐसी स्थितिमें इन दोनों कालोंमें नपुंसकवेदके संचित हुए समयप्रबद्धोंका प्रमाण कितना है यह इस प्रकरणमें बतलाया गया है। जिसका खुलासा इस प्रकार है—कर्मस्थितिकाल के अन्दर तीनों वेदोंके संचित द्रव्यका प्रमाण डेढ़ गुणहानिमात्र है। यहां डेढ़ गुणहानिसे डेढ़ गुणहानिगुणित समयप्रबद्ध लेना चाहिये और वह काल त्रसबन्धक और स्थावर-बन्धक दोनोंका है, अतः कर्मस्थितिकालका भाग डेढ़ गुणहानिगुणित समयप्रबद्धमें देकर जो लब्ध आये उसे स्थावर बन्धककालसे गुणा करने पर स्थावर बन्धककालमें संचित वेदके द्रव्यका प्रमाण होता है। यह सब केवल नपुंसकवेदका ही है। अब रहा त्रस-बन्धक कालमें संचित वेदोंका द्रव्य। चूंकि वह द्रव्य तीनों वेदोंका है, अतः उसमेंसे काल प्रतिभागके अनुसार नपुंसकवेदका द्रव्य निकाल लेना चाहिये। उस द्रव्यको स्थावर बन्धक-कालके द्रव्यमें मिला देनेसे नपुंसकवेदका संचित द्रव्य होता है। यहाँ पर यह शंका होती है कि त्रसबन्धककालमेंसे नपुंसकवेदके द्रव्यके संचयके लिये केवल नपुंसकवेद बन्धककाल ही क्यों लिया है, स्त्रीवेद और पुरुषवेदका बन्धककाल भी ले लेना चाहिये जिससे नपुंसक वेदके संचयके लिये पूरा कर्मस्थितिप्रमाण काल प्राप्त हो जाय, क्यों कि पुरुषवेद और स्त्रीवेद बन्धककालके भीतर भी संक्रमणद्वारा नपुंसकवेदका संचय सम्भव है? इस पर वीरसेन स्वामीने यह समाधान किया कि जब नपुंसकवेदका बन्ध रुक जाता है तब स्त्रीवेद और पुरुषवेदके बन्धकालमें कषायोंका द्रव्य नपुंसकवेदरूपसे संक्रमित नहीं होता। इसकी पुष्टिमें प्रमाणरूपसे वीरसेनस्वामीने 'बंधे उक्कड्डुदि' यह गाथांश प्रस्तुत किया है। इसका भाव यह है कि बन्धके समय ही उत्कर्षण होता है। यद्यपि यहां प्रकरण संक्रमणका है उत्कर्षणका नहीं। तब भी संक्रमण चार प्रकारका है—प्रकृतिसंक्रमण, स्थितिसंक्रमण, अनुभागसंक्रमण और प्रदेशसंक्रमण। इनमेंसे स्थितिसंक्रमण और अनुभागसंक्रमणके ही अपर नाम उत्कर्षण और अपकर्षण हैं। सम्भवतः इस परसे वीरसेनस्वामीने यह निष्कर्ष निकाला कि उत्कर्षणके लिये जो नियम है वही प्रकृतिसंक्रमण और प्रदेशसंक्रमके लिये भी नियम है, अतः 'बंधे उक्कड्डुदि' यह गाथांश देशामर्षक होनेसे इस द्वारा प्रकृति और प्रदेशसंक्रमणका भी समर्थन हो जाता है। इसपर फिर यह शंका हुई कि संक्रमणके लिये यह कोई ऐकान्तिक नियम नहीं है कि बन्धके समय ही उसमें अन्य सजातीय प्रकृतिका संक्रमण हो, क्योंकि बन्धके अतिरिक्त समयमें भी उसमें अन्य सजातीय प्रकृतिका संक्रमण देखा जाता है। यथा नपुंसकवेदका बन्ध पहले गुणस्थानमें ही होता है तब भी जो जीव नपुंसकवेदके उदयसे क्षपकश्रेणिपर चढ़ता है उसके वहां नपुंसकवेदमें स्त्रीवेदका संक्रमण होता है? इस शंकाका वीरसेनस्वामीने जो समाधान किया उसका भाव यह है कि संसारी जीवोंके आम व्यवस्था यह है कि उत्कर्षणके समान बन्धके अभावमें संक्रमण भी नहीं होता है, क्योंकि संक्रमणके कारणभूत संक्लिष्ट परिणामोंसे जो संक्रमण होता है वह बंधनेवाली प्रकृतिमें ही अन्य सजातीय प्रकृतिका होता है। उसमें ही बदल कर पड़नेवाले अन्य प्रकृतिके परमाणुओंको ग्रहण करने की योग्यता पाई जाती है। दूसरे यहां संक्रमित होनेवाले द्रव्यकी प्रधानता नहीं है किन्तु बंधनेवाले द्रव्यकी प्रधानता है। यहां संक्रमित द्रव्यकी प्रधानता इसलिये नहीं है, क्योंकि इसका आय और व्यय समान है। इससे स्पष्ट है कि त्रसस्थितिमेंसे स्त्रीवेद और पुरुषवेदके बन्धककालको छोड़कर अन्यत्र ही नपुंसकवेदके द्रव्यका संचय होता है।

❀ **इत्थिवेदस्स उक्कस्सयं पदेससंतकम्मं कस्स ?**

१०८. सुगमं ।

❀ **गुणिदकम्मंसिओ असंखे०वस्साउए गदो तम्मि पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण जम्हि पूरिदो तस्स इत्थिवेदस्स उक्कस्सयं पदेससंतकम्मं ।**

§ १०९. गुणिदकम्मंसिओ त्ति भणिदे जो जीवो वेसागरोवमसहस्सेहि सादिरेगेहि ऊणियं कम्मट्ठिदिं गुणिदकम्मंसियलक्खणेण अच्छिदो । पुणो तसकाइएसु उप्पज्जिय पलिदोवमस्स असंखे०भागेणूणतसट्ठिदिमच्छिदो तस्स गहणं कायव्वं । कुदो ? अण्णहा गुणिदकम्मंसियत्ताणुववत्तीदो। दीहासु इत्थिवेदबंधगद्धासु उक्कस्सजोगसंकिलेससहगदासु जहण्णियासु पुरिस-णवुंसयवेदबंधगद्धासु जहण्णजोगसंकिलेससहगदासु परिभमिदो त्ति भणिदं होदि । पदेससंचओ भुजगारकाले चेव; अप्पदरकाले समयं पडि ढुक्कमाण-कम्मक्खंधेहिंतो अधट्ठिदीए परपयडिसंकमेण च ओसरंतकम्मक्खंधाणं बहुत्तुवलंभादो। तम्हा कम्मट्ठिदिमेत्तकालहिंडावणे ण किं पि फलं पेच्छामो । ण च कम्मट्ठिदिमेत्तो भुजगारकालो अत्थि, तस्स उक्कस्सस्स वि पलिदो० असंखे०भागपमाणत्तादो त्ति ? ण, सुत्ताहिप्पायाणवगमादो । गुणिदकम्मंसियम्मि अप्पदरकालादो जेण भुजगारकालो बहुओ तेण भुजगारकालसंचिददव्वस्स अप्पदरकालब्भंतरे ण णिम्मूलप्फलओ त्ति

❀ **स्त्रीवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म किसके होता है ?**

§ १०८. यह सूत्र सुगम है ।

जो गुणितकर्मांशवाला जीव असंख्यात वर्षकी आयुवालोंमें उत्पन्न हुआ, वहाँ जिसने पल्यके असंख्यातवें भागमात्र आयुको लेकर स्त्रीवेदको पूरा किया उसके स्त्रीवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होता है ।

§ १०९. 'गुणित कर्मांशवाला' कहनेसे जो जीव कुछ अधिक दो हजार सागर कम कर्मस्थिति कालतक गुणितकर्मांशवाले जीवका जो लक्षण है उससे युक्त रहा अर्थात् गुणित कर्मांशकी सामग्रीसे सहित रहा । फिर त्रसकायिकोंमें उत्पन्न होकर वहाँ पल्योपमके असंख्यातवें भाग कम त्रसस्थिति काल तक रहा, उसका ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि अन्यथा उसके गुणित-कर्मांशपना नहीं बन सकता । इसका यह मतलब हुआ कि उत्कृष्ट योग और उत्कृष्ट संक्लेशके साथ स्त्रीवेदके सुदीर्घ बन्धककालमें घूमा और जघन्य योग और जघन्य संक्लेशके साथ पुरुष-वेद और नपुंसकवेदके जघन्य बन्धकालमें घूमा ।

शंका—कर्मप्रदेशोंका संचय भुजगारकालमें ही होता है, क्योंकि अल्पतरकालमें प्रति समय आनेवाले कर्मस्कन्धोंसे अधःस्थितिगलनाके द्वारा तथा अन्य प्रकृतिरूप संक्रमणके द्वारा जानेवाले कर्मस्कन्ध अधिक पाये जाते हैं, अतः कर्मस्थिति कालतक भ्रमण करानेमें हम कोई भी लाभ नहीं देखते । शायद कहा जाय कि भुजगारका काल कर्मस्थितिप्रमाण है । किन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि भुजगारका उत्कृष्ट काल भी पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण होता है ।

समाधान—यह शंका उचित नहीं है, क्योंकि आपने सूत्रका अभिप्राय नहीं समझा । गुणितकर्मांशमें यतः अल्पतरके कालसे भुजगारका काल बहुत है, अतः भुजगार कालमें संचित

काऊण कम्मट्ठिदिमेत्तकालहिंडावणं ण णिप्फलं ति दट्ठव्वं। एत्थतणअप्पदरकालादो भुजगारकालो बहुओ त्ति कुदो णव्वदे? एदस्स सुत्तस्स आरंभण्णहाणुववत्तीदो। पलिदो० असंखे०भागमेत्तभुजगारकालं परिभमिदस्स वि गुणिदकम्मंसियत्तं घडदि त्ति णासंकणिज्जं, मिच्छत्तसामित्तसुत्तेण सह विरोहादो। असंखेज्जवस्साउए गदो त्ति किमट्ठं वुच्चदे? णवुंसयवेदस्स बंधवोच्छेदं करिय तदद्धाए संखेज्जेसु भागेसु इत्थिवेद-बंधावणट्ठं। तसकाइएसु बंधमाणे बहुवारमसंखेज्जवस्साउअतिरिक्ख-मणुस्सेसु उप्पाइदो त्ति सुत्ताहिप्पाओ। जम्हि असंखेज्जवस्साउए जीवे आउअं पलिदो० असंखे०भागो तम्हि पलिदो० असंखे०भागेण कालेण पूरिदो। असंखे०वस्साउएसु तिरिक्ख-मणुस्सेसु उप्पज्ज-माणो वि पलिदो० असंखे०भागमेत्ताउएसु चेव बहुवारमुप्पण्णो त्ति एदेण जाणाविदं। किमट्ठमेत्थ चेव बहुवारमुप्पाइज्जदे[1]? उवरिमआउआणमित्थिवेदबंधगद्धादो बहुयराए पलिदो० असंखे०भागाउआणमित्थिवेदबंधगद्धाए बहुदव्वसंगलणट्ठं। उवरिम-

हुए द्रव्यका अल्पतरकालके अन्दर निर्मूल विनाश नहीं होता, अतः कर्मस्थिति कालतक भ्रमण कराना निष्फल नहीं है ऐसा जानना चाहिये।

शंका—यहाँके अल्पतर कालसे भुजगारका काल बहुत है यह किस प्रमाणसे जाना जाता है।

समाधान—यदि ऐसा न होता तो स्त्रीवेदके उत्कृष्ट संचयको बतलानेवाले उक्त चूर्णि-सूत्रकी रचना ही न होती।

भुजगारका काल पल्यके असंख्यातवें भाग कहा है। उतने कालतक भ्रमण करनेवाले जीवके भी गुणितकर्मांशिकपना बन जाता है ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि ऐसा होनेसे पहले कहे गये मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशसंचयको बतलानेवाले सूत्रके साथ विरोध आता है।

शंका—असंख्यात वर्षकी आयुवालोंमें उत्पन्न हुआ ऐसा किसलिए कहा?

समाधान—नपुंसकवेदके बन्धकी व्युच्छित्ति करके उसके कालके संख्यात बहुभागोंमें स्त्रीवेदका बन्ध करानेके लिये असंख्यात वर्षकी आयुवालोंमें उत्पन्न हुआ यह कहा।

यहाँ त्रसकायिकोंमें स्त्रीवेदका बन्ध करते हुए बहुत बार असंख्यात वर्षकी आयुवाले तिर्यञ्च और मनुष्योंमें उत्पन्न कराना चाहिये ऐसा सूत्रका अभिप्राय है।

जिस असंख्यात वर्षकी आयुवाले जीवकी आयु पल्यके असंख्यातवें भाग है वह पल्यके असंख्यातवें भाग कालके द्वारा उसे पूरा करे। इससे यह बतलाया कि असंख्यात वर्षकी आयुवाले तिर्यञ्च और मनुष्योंमें उत्पन्न होते हुए भी पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण आयुवालोंमें ही बहुत बार उत्पन्न हुआ।

शंका—इन्हींमें बहुत बार क्यों उत्पन्न कराया है?

समाधान—ऊपरकी आयुवाले जीवोंके स्त्रीवेदके बन्धककालसे पल्यके असंख्यातवें भाग आयुवाले जीवोंका स्त्रीवेदका बन्धककाल बहुत अधिक है। अतः बहुत द्रव्यके संचयके लिये पल्यके असंख्यातवें भाग आयुवालोंमें बहुत बार उत्पन्न कराया है।

१. ता०प्रतौ 'बहुवारादो उप्पाइज्जदे' इति पाठः।

आउआणमित्थिवेदबंधगद्धाहिंतो एत्थतणित्थिवेदबंधगद्धाओ दीहाओ त्ति कुदो णव्वदे ? एदम्हादो चेव सुत्तादो। अथवा जुत्तीदो णव्वदे। तं जहा—पुरिसवेदं पेक्खिदूण इत्थिवेदो अप्पसत्थो, कारीसग्गिसमाणत्तादो। तेण इत्थिवेदो संकिलेसेण बज्झइ। विसोहीए पुरिसवेदो। पलिदो० असंखे०भागाउएसु जो संकिलेसकालो सो उवरिम-आउअसंकिलेसद्धाहिंतो दीहो, दीहाउएसु पुरिसवेदबंधगद्धाए सविसोहिमंदसंकिलेस-पडिबद्धाए पहाणत्तादो त्ति। पलिदो० असंखे०भागाउएसु संकिलेसो बहुओ त्ति कुदो णव्वदे ? सव्वत्थोवो तिपलिदोवमाउअसंकिलेसो। दुपलिदोवमाउअसंकिलेसो अणंतगुणो। एगपलिदोवमाउट्ठिदियाणं संकिलेसो अणंतगुणो। पलिदो० असंखे०-भागमेत्ताउट्ठिदियाणं संकिलेसो अणंतगुणो त्ति एदम्हादो अप्पाबहुअसुत्तादो। तेण तिपलिदोवमाउट्ठिदिएसु इत्थिवेदबंधगद्धा थोवा। दुपलिदोवमाउट्ठिदिएसु इत्थिवेद-बंधगद्धा संखे०गुणा। एगपलिदोवमाउट्ठिदिएसु इत्थिवेदबंधगद्धा संखेज्जगुणा। पलिदो० असंखे०भागमेत्ताउट्ठिदिएसु इत्थिवेदबंधगद्धा संखेज्जगुणा त्ति सिद्धं। अद्धाओ विसेसाहियाओ त्ति किण्ण घेप्पदे ? ण, विसयपडिभागेण अद्धागुणगारुप्पत्तीदो। तस्स

शंका—ऊपरकी आयुवाले जीवोंके स्त्रीवेदके बन्धककालसे पल्यके असंख्यातवें भाग आयुवाले जीवोंका स्त्रीवेदका बन्धककाल अधिक है, यह किस प्रमाणसे जाना ?

समाधान—इसी चूर्णिसूत्रसे जाना। अथवा युक्तिसे जाना। वह युक्ति इस प्रकार है-पुरुषवेदकी अपेक्षा स्त्रीवेद अप्रशस्त है, क्योंकि वह कण्डेकी आगके समान होता है। अतः स्त्रीवेद संक्लेश परिणामसे बँधता है और पुरुषवेद विशुद्ध भावोंसे बंधता है। पल्यके असंख्यातवें भाग आयुवालोंमें जो संक्लेशका काल है वह ऊपरकी आयुवाले जीवोंके संक्लेशसे सम्बन्ध रखनेवाले कालसे अधिक है, क्योंकि दीर्घ आयुवाले जीवोंमें विशुद्धि सहित मंद संक्लेशसे सम्बन्ध रखनेवाले पुरुषवेदके बन्धककालकी प्रधानता होती है।

शंका—पल्यके असंख्यातवें भाग आयुवालोंमें संक्लेश बहुत है यह किस प्रमाणसे जाना ?

समाधान—तीन पल्यकी आयुवाले जीवोंमें संक्लेश सबसे कम है। उससे दो पल्यकी आयुवाले जीवोंमें अनन्तगुणा संक्लेश है। उससे एक पल्यकी आयुवाले जीवोंमें अनन्तगुणा संक्लेश है। उससे पल्यके असंख्यातवें भाग आयुवाले जीवोंमें संक्लेश अनन्तगुणा है। इस अल्पबहुत्वको बतलानेवाले सूत्रसे जाना।

अतः तीन पल्यकी आयुवाले जीवोंमें स्त्रीवेदका बन्धककाल सबसे थोड़ा है। दो पल्यकी आयुवाले जीवोंमें स्त्रीवेदका बन्धककाल संख्यातगुणा है। एक पल्यकी आयुवाले जीवोंमें स्त्रीवेदका बन्धककाल संख्यातगुणा है और पल्यके असंख्यातवें भागमात्र स्थितिवाले जीवोंमें स्त्रीवेदका बन्धककाल उससे भी संख्यातगुणा है, यह सिद्ध हुआ।

शंका—यहाँ वेदके बन्धककाल विशेष अधिक हैं ऐसा क्यों नहीं स्वीकार करते ?

समाधान—नहीं, क्योंकि विषयके प्रतिभागके अनुसार ही कालका गुणकार उत्पन्न होता है।

एवंविहअसंखेज्जवस्साउअस्स चरिमसमए इत्थिवेदस्स उक्कस्सयं पदेससंतकम्मं ।

§ ११०. संपहि एत्थ संचयाणुगम-भागहारपमाणाणुगमाणं णवुंसयवेदस्सेव परूवणा कायव्वा । णवरि तसट्ठिदिं भमंतो जत्थ जत्थ असंखेज्जवस्साउएसु उववण्णो तत्थ तत्थ णवुंसयवेदस्स णत्थि बंधो, देवगईए सह तब्बंधविरोहादो । णवुंसयवेद-बंधगद्धाए संखेज्जे भागे इत्थिवेदो लहइ, पुरिसित्थिवेदबंधगद्धाणं पक्खेवभूदाणं पडि-भागेण 'प्रक्षेपकसंक्षेपेण' एदम्हादो करणसुत्तादो भागुवलंभादो । असंखेज्जवासाउएसु इत्थिवेदस्स संचयकालो असंखेज्जगुणहाणिमेत्तो । एदं कुदो णव्वदे ? इत्थिवेदउक्कस्स-दव्वादो सोगस्स उक्कस्सदव्वं विसेसाहियमिदि उवरि भण्णमाणअप्पाबहुगसुत्तादो । असंखेज्जवस्साउआणमित्थिवेदबंधगद्धादो सोगबंधगद्धाओ विसेसाहियाओ त्ति जदि वि इत्थिवेदसंचयकालो संखेज्जगुणहाणिमेत्तो एगगुणहाणिमेत्तो वा होदि तो वि पुव्विल्ल-मप्पाबहुअं घडदि त्ति णेदमप्पाबहुअं तल्लिंगमिदि चे तो क्खहि उक्कस्सदव्वण्णहाणुव-वत्तीदो असंखेज्जगुणहाणिमेत्तो त्ति घेतव्वो । ण च एसो कालो दुल्लहो, संखेज्जावलिय-मेत्तमंतरिय असंखेज्जबारमसंखे०वासाउप्पण्णम्मि तदुवलंभादो । तेणेत्थ संचिददव्वं

इस प्रकार असंख्यात वर्षकी आयुवाले उस जीवके अन्तिम समयमें स्त्रीवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होता है ।

§ ११०. अब यहाँपर संचयानुगम और भागहारप्रमाणानुगमका कथन नपुंसकवेदके समान ही करना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि त्रसकाय स्थितिमें भ्रमण करते हुए जहाँ जहाँ असंख्यात वर्षकी आयुवालोंमें उत्पन्न हुआ वहाँ वहाँ नपुंसकवेदका बन्ध नहीं होता, क्योंकि देवगतिके बन्धके साथ नपुंसकवेदके बन्धका विरोध है । तथा नपुंसकवेदके बन्धककालके संख्यात बहुभागको स्त्रीवेद प्राप्त करता है, क्योंकि प्रक्षेपभूत पुरुषवेद और स्त्रीवेदके बन्धक कालोंके प्रतिभागानुसार प्रक्षेपकसंक्षेपेण' इस करणसूत्रके अनुसार अपना अपना भाग उपलब्ध हो जाता है ।

शंका—असंख्यात वर्षकी आयुवालोंमें स्त्रीवेदका संचयकाल असंख्यात गुणहानिप्रमाण है यह कैसे जाना ?

समाधान—'स्त्रीवेदके उत्कृष्ट द्रव्यसे शोकका उत्कृष्ट द्रव्य विशेष अधिक है' आगे कहे जानेवाले इस अल्पबहुत्वविषयक सूत्रसे जाना ।

शंका—असंख्यातवर्षकी आयुवाले जीवोंमें स्त्रीवेदके बन्धककालसे शोकका बन्धककाल विशेष अधिक है । अतः यदि स्त्रीवेदका संचयकाल संख्यातगुणहानिप्रमाण हो या एक गुणहानिप्रमाण हो तो भी पूर्वोक्त अल्पबहुत्व बन जाता है, इसलिए इस अल्पबहुत्वसे यह नहीं जाना जा सकता कि असंख्यातवर्षकी आयुवालोंमें स्त्रीवेदका संचयकाल असंख्यात गुणहानिप्रमाण है ?

समाधान—तो फिर ऐसा लेना चाहिये कि यदि असंख्यातवर्षकी आयुवालोंमें स्त्रीवेदका संचयकाल असंख्यातगुणहानि प्रमाण न हो तो उसका उत्कृष्ट द्रव्य नहीं बन सकता, अतः स्त्री-वेदका संचयकाल असंख्यातगुणहानिप्रमाण है ऐसा ग्रहण करना चाहिए । तथा यह काल दुर्लभ भी नहीं है क्योंकि संख्यात आवलीका अन्तर दे देकर असंख्यात बार असंख्यातवर्षकी आयु लेकर उत्पन्न होनेवाले जीवके ऐसा काल पाया जाता है । अतः इस कालमें संचित हुआ द्रव्य संख्यातवें

संखे०भागेणूणदिवड्डगुणहाणिमेत्तपंचिंदियसमयपबद्धमेत्तं। किमट्ठं दिवड्डगुणहाणीए संखे०भागो अवणिज्जदे ? पुरिसवेददव्वावणयणट्ठं। तद्दव्वभागो दिवड्डगुणहाणीए संखे०भागो त्ति कुदो णव्वदे ? पुरिसवेदबंधगद्धादो इत्थिवेदबंधगद्धाए संखे० गुणत्तादो।

§१११. एत्थ ताव दोण्हं वेददव्वाणं वंटणविहाणं वुच्चदे। तं जहा—दोवेददव्वाणं जदि दिवड्डगुणहाणिमेत्ता पंचिंदियसमयपबद्धा लब्भंति तो पुध पुध इत्थि-पुरिसवेदबंधगद्धाणं किं लाभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए इत्थिवेदस्स दिवड्डगुणहाणीए संखेज्जभागमेत्ता पुरिसवेदस्स दिवड्डगुणहाणीए संखे०भागमेत्ता समयपबद्धा लब्भंति।

§ ११२. एत्थ इत्थिवेदुक्कस्सदव्वसामिचरिमसमए अप्पाबहुअं उच्चदे। तं जहा—सव्वत्थोवं णवुंसयवेददव्वं, दिवड्डगुणहाणीए असंखे०भागमेत्तपंचिंदियसमयपबद्धपमाणत्तादो। पुरिसवेददव्वमसंखे०गुणं, दिवड्डगुणहाणीए संखे०भागमेत्तपंचिंदियसमयपबद्धपमाणत्तादो। इत्थिवेददव्वं संखे०गुणं, किंचूणदिवड्डगुणहाणिमेत्तपंचिंदियसमयपबद्धपमाणत्तादो।

§ ११३. इत्थिवेदुक्कस्सदव्वपमाणपसाहणट्ठमसंखेज्जवस्साउएसु अद्धाणप्पाबहुअं

भाग कम डेढ़ गुणहानिमात्र पञ्चेन्द्रिय जीवके समयप्रबद्धप्रमाण होता है।

शंका—डेढ़गुणहानिमें संख्यातवा भाग क्यों कम किया है ?

समाधान—पुरुषवेदसम्बन्धी द्रव्यको उसमेंसे घटानेके लिये कम किया है।

शंका—पुरुषवेदसम्बन्धी द्रव्यका भाग डेढ़ गुणहानिके संख्यातवें भागप्रमाण है यह कैसे जाना ?

समाधान—क्योंकि पुरुषवेदके बन्धककालसे स्त्रीवेदका बन्धककाल संख्यातगुणा है।

§ १११. अब यहां दोनों वेदोंके द्रव्यके बटंवारेका विधान कहते हैं जो इस प्रकार है—यदि दोनों वेदसम्बन्धी द्रव्यके डेढ़गुणहानि प्रमाण पञ्चेन्द्रियसम्बन्धी समयप्रबद्ध होते हैं तो पृथक् पृथक् स्त्रीवेद और पुरुषवेदके बन्धककालमें कितने कितने समयप्रबद्ध प्राप्त होते हैं। इस प्रकार त्रैराशिक करके फलराशिसे इच्छाराशिको गुणित करके प्रमाणराशिसे उसमें भाग देने पर स्त्रीवेदके डेढ़गुणहानिके संख्यात बहुभागप्रमाण और पुरुषवेदके डेढ़गुणहानिके संख्यातवें भागप्रमाण समयप्रबद्ध प्राप्त होते हैं।

§ ११२. अब यहां स्त्रीवेदके उत्कृष्ट द्रव्यके स्वामीके अन्तिम समयसम्बन्धी अल्पबहुत्वको कहते हैं। जो इस प्रकार है—नपुंसकवेदका द्रव्य सबसे थोड़ा है, क्योंकि वह डेढ़गुणहानिके असंख्यातवें भागमात्र पञ्चेन्द्रियसम्बन्धी समयप्रबद्धप्रमाण है। उससे पुरुषवेदका द्रव्य असंख्यातगुणा है, क्योंकि वह डेढ़गुणहानिके संख्यातवें भागमात्र पञ्चेन्द्रियसम्बन्धी समयप्रबद्धप्रमाण है। उससे स्त्रीवेदका द्रव्य संख्यातगुणा है, क्योंकि वह कुछ कम डेढ़गुणहानिमात्र पञ्चेन्द्रियसम्बन्धी समयप्रबद्धप्रमाण है।

§ ११३. अब स्त्रीवेदके उत्कृष्ट द्रव्यका प्रमाण सिद्ध करनेके लिये असंख्यातवर्षकी आयुवालोंमें कालका अल्पबहुत्व बतलाते हैं। यथा—हास्य और रतिका बन्धककाल सबसे

उच्चदे। तं जहा–सव्वत्थोवा हस्स-रदिबंधगद्धा। पुरिसवेदबंधगद्धा विसेसाहिया। इत्थिवेदबंधगद्धा संखे०गुणा। अरदि-सोगबंधगद्धा विसेसा०।

❀ पुरिसवेदस्स उक्कस्सयं पदेससंतकम्मं कस्स ?

§ ११४. सुगमं।

❀ गुणिदकम्मंसिओ ईसाणेसु णवुंसयवेदं पूरेदूण तदो कमेण असंखेज्जवस्साउएसु उववण्णो। तत्थ पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण इत्थिवेदो पूरिदो। तदो सम्मत्तं लब्भिदूण मदो पलिदोवमट्ठिदीओ देवो जादो। तत्थ तेणेव पुरिसवेदो पूरिदो। तदो चुदो मणुसो जादो सव्वलहुं कसाए खवेदि। तदो णवुंसयवेदं पक्खिविदूण जम्हि इत्थिवेदो पक्खित्तो तस्समए पुरिसवेदस्स उक्कस्सयं पदेससंतकम्मं।

§ ११५. गुणिदकम्मंसिओ त्ति वुत्ते वेहि सागरोवमसहस्सेहि सादिरेगेहि यूणियं कसायकम्मट्ठिदिं गुणिदकिरियाए बादरपुढविकाइएसु जो अच्छिदो तस्स गहणं कायव्वं। ईसाणं गदो त्ति किमट्ठं वुच्चदे ? णवुंसयवेददव्वावूरणट्ठं। तिण्हं वेदाणं दव्वमेगट्ठं कादूण पुरिसवेदस्स उक्कस्सदव्वं भण्णमाणे पादेक्कं वेदावूरणमणत्थयं, वेदसामण्णे

थोड़ा है। उससे पुरुषवेदका बन्धककाल विशेष अधिक है। उससे स्त्रीवेदका बन्धककाल संख्यातगुणा है। उससे अरति और शोकका बन्धककाल विशेष अधिक है।

❀ पुरुषवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म किसके होता है ?

§ ११४. यह सूत्र सुगम है।

❀ गुणितकर्मांशवाला जीव ईशान स्वर्गमें नपुंसकवेदकी पूर्ति करके फिर क्रमसे असंख्यातवर्षकी आयुवालोंमें उत्पन्न हुआ। वहां पल्यके असंख्यातवें भागमात्र कालके द्वारा उसने स्त्रीवेदकी पूर्ति की। फिर सम्यक्त्वको प्राप्त करके मरा और पल्योपमकी स्थितिवाला देव हुआ। वहाँ उसने पुरुषवेदकी पूर्ति की। फिर मरकर मनुष्य हुआ और सबसे कम कालके द्वारा कषायोंका क्षपण किया। फिर नपुंसक वेदका प्रक्षेप करके जिस समय स्त्रीवेदको प्रक्षिप्त किया है उस समय उसके पुरुषवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होता है।

§ ११५. गुणितकर्मांशवाला कहनेसे कुछ अधिक दो हजार सागर कम कषायकी कर्मस्थितिप्रमाण जो जीव बादर पृथिवीकायिकोंमें उत्कृष्ट संचयकी सामग्रीके साथ रहा उसका ग्रहण करना चाहिये।

शंका—ईशान स्वर्गमें गया ऐसा क्यों कहते हो ?

समाधान—नपुंसकवेदके द्रव्यको पूरा करनेके लिये उसे ईशान स्वर्गमें उत्पन्न कराया है।

शंका—तीनों वेदोंके द्रव्यको एकत्र करके पुरुषवेदका उत्कृष्ट द्रव्य कहनेके लिये प्रत्येक वेदकी पूर्ति कराना व्यर्थ है, क्योंकि वेद सामान्यके विवक्षित रहने पर ध्रुवबन्धीपनेको

णिरुद्धे पत्तधुवबंधभावस्स वेदस्स समयपबद्धाणं पयडिअंतरगमणाभावादो। तम्हा पादेक्कं वेदावूरणं मोत्तूण जहा कसायाणं सत्तमपुढवीए उक्कस्ससामित्तं दिण्णं तहा वेदसामण्णस्स उक्कस्ससामित्तं दादूण मणुस्सेसुप्पाइय सव्वलहुं खवगसेढिं चढाविय तिवेददव्वं पुरिसवेदसरूवेण काऊण पुरिसवेदस्स उक्कस्ससामित्तं दादव्वमिदि। किं च सोहम्मकप्पम्मि पुरिसवेदे पूरिज्जमाणे सम्मत्तं पडिवज्जावेदव्वो, अण्णहा पुरिसवेदस्स धुवबंधित्ताणुववत्तीदो। एवं संते गुणसेढीए तिवेददव्वं णस्सदि त्ति ण भल्लयमिदं सामित्तं। ण बंधगद्धाणं माहप्पेण दव्वबहुत्तमुवलब्भइ, वेदसामण्णे णिरुद्धे बंधगद्धा-जणिदविसेसस्स अणुवलंभादो त्ति। एत्थ परिहारो उच्चदे—ण कसायाणं व सत्तमपुढवीए तिवेदावूरणं जुत्तं, तत्थ तेसिं बहुदव्वुक्कड्डणाभावादो। णवुंसयवेदो ईसाणदेवेसु चेव इत्थिवेदो असंखेज्जवासाउएसु चेव पुरिसवेदो सोहम्मदेवेसु चेव बहुओ उक्कड्डिज्जदि उवसामणा-णिधत्त-णिकाचणाभावेण परिणामिज्जदि, खेत्त-भव-भावावट्ठंभबलेण कम्म-क्खंधाणं परिणामंतरावत्तिं पडि विरोहाभावादो। एदेसिमेदे भावा एत्थेव बहुवा होंति ण अण्णत्थे त्ति कुदो णव्वदे ? एदम्हादो चेव जिणवयणविणिग्गयसुत्तादो। उक्कड्डणाए

प्राप्त वेदके समयप्रबद्ध अन्य प्रकृति रूप नहीं हो सकते। अतः प्रत्येक वेदकी पूर्ति न कराकर जैसे सातवें नरकमें कषायोंका उत्कृष्ट स्वामित्व दिया है वैसे ही वेदसामान्यका उत्कृष्ट स्वामित्व देकर उसे मनुष्योंमें उत्पन्न कराकर, जल्दीसे जल्दी क्षपक श्रेणीपर चढ़ाकर और तीनों वेदोंके द्रव्यको पुरुषवेदरूपसे करके पुरुषवेदका उत्कृष्ट स्वामित्व देना चाहिए। दूसरे, सौधर्म-कल्पमें पुरुषवेदका संचय करानेपर उस जीवको सम्यक्त्व प्राप्त कराना चाहिये, अन्यथा पुरुषवेद ध्रुवबन्धी नहीं हो सकता और ऐसा होनेपर गुणश्रेणी निर्जराके द्वारा तीनों वेदोंका द्रव्य नाशको प्राप्त होगा, अतः यहाँ जो स्वामित्व बतलाया गया है वह भला नहीं है। यदि कहा जाय कि बन्धक कालके बड़ा होनेसे पुरुषवेदका बहुत द्रव्य प्राप्त हो जायगा सो भी बात नहीं है, क्योंकि वेद सामान्यकी विवक्षा होनेपर बन्धक कालसे उत्पन्न हुई विशेषता नहीं पाई जाती है, अर्थात् बन्धककालकी यही विशेषता है कि उस कालमें उसी वेदका बन्ध होता है जिसका वह बन्धककाल है, किन्तु जब किसी न किसी वेदका बन्ध बराबर होता है और वह सब आगे जाकर पुरुषवेद रूपसे संक्रान्त हो जाता है तो बन्धककालसे भी कोई लाभ नहीं है ?

समाधान—यहाँ इस शंकाका समाधान कहते हैं—कषायोंकी तरह सातवें नरकमें तीनों वेदोंका संचय कराना युक्त नहीं है, क्योंकि वहाँ उनके बहुत द्रव्यका उत्कर्षण नहीं होता। नपुंसकवेदका ईशान देवोंमें ही, स्त्रीवेदका असंख्यात वर्षकी आयुवाले मनुष्य और तिर्यञ्चोंमें ही तथा पुरुषवेदका सौधर्म स्वर्गके देवोंमें ही बहुत द्रव्य उत्कर्षणको प्राप्त होता है तथा उपशामना, निधत्ति और निकाचनारूपसे परिणमित होता है, क्योंकि क्षेत्र, भव और भावके आश्रयका बल पाकर कर्मस्कन्धोंके पर्यायान्तरको प्राप्त होनेमें कोई विरोध नहीं है।

शंका—इन वेदोंके ये भाव इन्हीं स्थानोंमें अधिक होते हैं, अन्यत्र नहीं होते यह कैसे जाना ?

समाधान—जिन भगवानके मुखसे निकले हुए इसी चूर्णिसूत्रसे जाना।

कसायबहुत्तं कारणं। ण च सत्तमपुढवीदो असंखेज्जवासाउआ देवा वा कसाउक्कडा तम्हा तत्थ उक्कड्डणा णत्थि त्ति णासंकणिज्जं, कसायो चेव उक्कड्डणाए णिमित्तमिदि अवहारणाभावेण खेत्त-भवाणं पि तण्णिमित्तत्ते विरोहाभावादो। पढमसम्मत्ते पडिवज्ज-माणे गुणसेढिणिज्जराए पदेसहाणी होदि त्ति जं भणिदं तं पि ण दोसाय, तिस्से णिरयगईदो आगंतूण मणुस्सेसु उप्पज्जिय पढमसम्मत्तं गेण्हमाणे वि उवलंभादो। तम्हा उवसंत-णिधत्त-णिकाचणाकरणेहि बहुदव्वणिज्जरापडिसेहट्ठं तिण्हं वेदाणं उत्तपदेसेसु आवूरणा कायव्वा त्ति।

§ ११६. तदो कमेण असंखे०वासाउएसु उववण्णो त्ति किमट्ठं उच्चदे? असंखेज्जवासाउएसु दीहबंधगद्धाए बंधित्थिवेदपदेसग्गस्स उवसंत-णिधत्त-णिकाचणा-करणविहाणट्ठं। इत्थिवेदस्स असंखेज्जवासाउएसु चेव एदाणि तिण्णि करणाणि पाएण होंति त्ति कत्तो णव्वदे? एदम्हादो चेव सुत्तादो। असंखेज्जवासाउएसु बंधाभावेण अणायस्स णवुंसयवेदपदेसग्गस्स अधट्ठिदिगलणाए असंखेज्जासु गुणहाणीसु गलिदासु ईसाणकप्पे णवुंसयवेदावूरणं णिप्फलमिदि चे ण, णिधत्त-णिकाचणाभावमुवगयाणं

शंका—उत्कर्षणके लिये कषायकी अधिकता कारण है और सातवें नरककी अपेक्षा असंख्यात वर्षकी आयुवाले मनुष्य और तिर्यञ्च तथा देव उत्कृष्ट कषायवाले नहीं होते। अतः उनमें उत्कर्षण नहीं बनता?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये; क्योंकि कषाय ही उत्कर्षण का निमित है ऐसा कोई नियम नहीं है, अतः क्षेत्र और भवके भी उत्कर्षणमें निमित्त होनेमें कोई विरोध नहीं आता।

प्रथम सम्यक्त्वके प्राप्त होनेपर गुणश्रेणी निर्जराके द्वारा वेदोंके द्रव्यकी हानि होगी ऐसा जो कहा वह भी दोषके लिये नहीं है, क्योंकि नरकगतिसे आकर मनुष्योंमें उत्पन्न होकर प्रथम सम्यक्त्वके ग्रहण करनेपर भी प्रदेशहानि पाई जाती है। अतः उपशम, निधत्ति और निकाचना करणोंके द्वारा बहुत द्रव्यकी निर्जराको रोकनेके लिये तीनों वेदोंका उक्त स्थानोंमें संचय कराना चाहिये।

§ ११६. **शंका**—फिर क्रमसे असंख्यात वर्षकी आयुवालोंमें उत्पन्न हुआ यह क्यों कहा?

समाधान—असंख्यात वर्षकी आयुवालोंमें सुदीर्घ बन्धककालमें बन्धको प्राप्त हुए स्त्री-वेदके प्रदेशसमूहका उपशमकरण, निधत्तिकरण और निकाचनाकरण करनेके लिये ऐसा कहा।

शंका—असंख्यात वर्षकी आयुवालोंमें ही स्त्रीवेदके ये तीनों करण प्रायः करके होते हैं यह कहाँसे जाना?

समाधान—इसी सूत्रसे जाना।

शंका—असंख्यात वर्षकी आयुवालोंमें नपुंसकवेदका बन्ध न होनेसे उसमें आय तो होती नहीं उल्टे अधःस्थितिगलनाके द्वारा उसके प्रदेश समूहकी असंख्यात गुणहानियाँ निर्जराको प्राप्त हो जाती हैं। ऐसी स्थितिमें ईशानकल्पमें नपुंसकवेदका संचय करना व्यर्थ है?

समाधान—नहीं, क्योंकि निधत्ति और निकाचनापनेको प्राप्त हुए नपुंसकवेदके प्रदेशाग्र

उदय-परपयडिसंकमाभावेण गलणाभावादो। उक्कड्डणाए दूरमुक्खिविय पक्खित्ताणं सामित्तसमयादो उवरिमट्ठिदीसु उवसामणा-णिधत्त-णिकाचणाभावमुवगयाणं णत्थि परिसदणं ति भणिदं होदि। एदेसिं तिण्हं करणाणं कालो केत्तिओ? जहण्णेण एगसमओ, उक्कस्सेण संखेज्जाणि सागरोवमाणि, सत्तिट्ठिदीदो अहियकालमवट्ठाणाभावादो। णिधत्त-णिकाचणभावमुवगयपदेसा उक्कस्सेण सव्वपदेसाणं केवडिओ भागो? जइवसहगणिंदुवएसेण असंखे०भागो, उच्चारणाइरियाणमुवदेसेण असंखेज्जा भागा। तत्थ पलिदो० असंखे०भागेण इत्थिवेदो पूरिदो त्ति एदेण असंखेज्जवासाउएसु एगभवपरिमाणं परूविदं ण तसट्ठिदिअब्भंतरे तत्थच्छिदासेसकालसमासो, तस्स संखेज्जसागरोवमपमाणत्तादो। तदो सम्मत्तं लब्भिदूण मदो पलिदोवमट्ठिदीओ देवो जादो त्ति किमट्ठं वुच्चदे? पुरिसवेदावूरणट्ठं। जदि एवं तो दिवड्ढपलिदोवमाउट्ठिदिएसु देवेसु किण्ण उप्पाइदो? ण, दिवड्ढपलिदोवमाउट्ठिदीए चेव एत्थ पलिदोवमाउट्ठिदि त्ति विवक्खियत्तादो। तं पि कुदो? जाव सागरोवमं ण पूरेदि

न तो उदयको प्राप्त हो सकते हैं और न अन्य प्रकृतिरूपसे संक्रमणको प्राप्त हो सकते हैं, अतः उनकी निर्जरा नहीं होती। तात्पर्य यह है कि उत्कर्षणके द्वारा उठाकर दूर स्वामित्वके कालसे उपरिम स्थितिमें फेंके गये, अतएव उपशामना, निधत्ति और निकाचनाभावको प्राप्त हुए नपुंसकवेदके प्रदेशोंकी निर्जरा नहीं होती।

शंका—इन तीनों करणोंका काल कितना है?

समाधान—जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात सागर प्रमाण है; क्यों कि शक्तिस्थितिसे अधिक काल तक उनका ठहरना नहीं हो सकता।

शंका—निधत्ति और निकाचनापनेको प्राप्त हुए प्रदेश उत्कृष्टसे सब प्रदेशोंके कितने भागप्रमाण होते हैं?

समाधान—आचार्य यतिवृषभके उपदेशसे असंख्यातवें भाग प्रमाण होते हैं और, उच्चारणाचार्यके उपदेशसे असंख्यात बहुभागप्रमाण होते हैं।

'वहाँ पल्यके असंख्यातवें भाग कालके द्वारा स्त्रीवेदकी पूर्ति की इस वाक्यके द्वारा असंख्यात वर्षकी आयुवालोंमें एक भवका परिमाण बतलाया है, कुल त्रस कायस्थितिके अन्दर वहाँ रहनेके सब कालका जोड़ नहीं, क्योंकि वह तो संख्यात सागरप्रमाण है।

शंका—फिर सम्यक्त्वको प्राप्त करके मरा और पल्यकी स्थितिवाला देव हुआ ऐसा क्यों कहा?

समाधान—पुरुषवेदकी पूर्ति करनेके लिये।

शंका—यदि ऐसा है तो डेढ़ पल्यकी स्थितिवाले देवोंमें क्यों नहीं उत्पन्न कराया?

समाधान—क्योंकि डेढ़ पल्यकी स्थितिकी ही यहां पल्योपमकी स्थिति ऐसी विवक्षा की है।

शंका—ऐसी विवक्षा क्यों की?

समाधान—जब तक सागर पूरा नहीं होता तब तककी स्थितिको 'पल्योपमस्थिति

ताव पलिदोवमट्ठिदि त्ति आगमरूढीदो। एसा एगा परिवाडी देसामासियभावेण सुत्ते ण[1] परूविदा तेण संखेज्जवारमेदेणेव कमेण तसट्ठिदीए अब्भंतरे तिण्हं वेदाण-मावूरणं कादव्वं। तदो अपच्छिमे भवग्गहणे खवगसेढिं किमट्ठं चडाविदो ? इत्थि-णवुंसयवेदपदेसग्गस्स पुरिसवेदसरूवेण परिणमावणट्ठं। पुरिसवेदपदेसग्गादो इत्थि-णवुंसयवेदपदेसग्गमसंखे०भागो, गलिदासंखेज्जगुणहाणित्तादो। गुणसेढिणिज्जरादो खवगसेढीए गलिददव्वं पि पुरिसवेददव्वस्स असंखे०भागो किं तु इत्थि-णवुंसयवेद-दव्वादो असंखे०गुणं, ओकड्डुक्कड्डणभागहारादो पलिदोवमब्भंतरणाणागुणहाणिसलागाण-मसंखेज्जगुणत्तुवलंभादो। ण चेदमसिद्धं[2], सव्वत्थोवो गुणसंकमभागहारो। ओकड्डु-क्कड्डणभागहारो असंखे०गुणो। अधापवत्तसंकमभागहारो असंखेज्जगुणो। जोगगुणगारो असंखे०गुणो। णाणागुणहाणिसलागाओ असंखे०गुणाओ। पलिदोवमद्धच्छेदणाओ विसेसाहिओ त्ति अप्पाबहुअबलेण तस्सिद्धीए। तेण खवगसेढीए आयादो वओ बहुओ त्ति पलिदोवमाउट्ठिदिदेवचरिमसमए उक्कस्ससामित्तं दादव्वं। एत्थ परिहारो वुच्चदे— खवगसेढीए गुणसेढिकमेण गलिददव्वादो इत्थि-णवुंसयवेददव्वमसंखेज्जगुणं, ओकड्डु-

---

कहनेकी आगममें रूढ़ि है।

यह एक क्रम है। इसी प्रकार अनेक बार यही क्रम जानना चाहिये, परन्तु अनेक बार उत्पन्न होनेका वह क्रम देशामर्षक होनेसे सूत्रमें नहीं कहा, अतः त्रसस्थितिके अन्दर संख्यात बार तीनों वेदोंकी पूर्ति कराना चाहिये। अर्थात् संख्यात बार ईशानस्वर्गमें गया, संख्यात बार असंख्यात वर्षकी आयुवालोंमें उत्पन्न हुआ और संख्यात बार सौधर्मकल्पमें उत्पन्न हुआ।

शंका—फिर अन्तके भवमें क्षपकश्रेणिपर क्यों चढ़ाया है ?

समाधान—स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके प्रदेशसमूहको पुरुषवेदरूपसे परिणमानेके लिये अन्तके भवमें क्षपकश्रेणी पर चढ़ाया है।

शंका—स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका प्रदेशसमूह पुरुषवेदके प्रदेशसमूहसे असंख्यातवें भाग बचता है, क्योंकि पुरुषवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसंचय प्राप्त होने तक उनकी असंख्यात गुण-हानियाँ गल चुकी हैं। तथा गुणश्रेणिनिर्जराके द्वारा क्षपकश्रेणिमें गलित द्रव्य भी पुरुषवेदके द्रव्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है, किन्तु वही स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके द्रव्यसे असंख्यातगुणा है, क्योंकि उत्कर्षण-अपकर्षण भागहारसे पल्योपमके अन्दर की नानागुणहानिशलाकाएँ असंख्यातगुणी पाई जाती हैं और यह बात असिद्ध नहीं है, क्योंकि गुणसंक्रम भागहार सबसे थोड़ा है। उत्कर्षण-अपकर्षण भागहार उससे असंख्यातगुणा है। अधःप्रवृत्तसंक्रम भागहार उससे असंख्यातगुणा है। योगोंका गुणकार उससे असंख्यातगुणा है। नानागुणहानिशलाकाऐं उससे असंख्यातगुणी हैं और पल्योपमके अर्द्धछेद उससे विशेष अधिक है। इस अल्पबहुत्वके बलसे उसकी सिद्धि होती है। अतः क्षपकश्रेणिमें आयसे व्यय बहुत है, इसलिये पल्यकी आयुवाले देवके अन्तिम समयमें पुरुषवेदका उत्कृष्ट स्वामित्व देना चाहिये ?

समाधान—अब इस शंकाका समाधान करते हैं—क्षपकश्रेणिमें गुणश्रेणिके क्रमसे निर्जराको प्राप्त होनेवाले द्रव्यसे स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका द्रव्य असंख्यातगुणा है, क्योंकि

---

१. ता०प्रतौ 'सुत्तेण' इति पाठः। २. आ०प्रतौ 'ण चेवमसिद्धं' इति पाठः।

कड्डणभागहारादो असंखेज्जगुणहीणेण भागहारेण खंडिदे तत्थ एयखंडपमाणत्तादो। पढमगुणहाणिप्पहुडि सव्वगुणहाणिदव्वेसु सगअणंतरहेट्ठिमगुणहाणिदव्वं पेक्खिदूण दुगुणहीणकमेण अवट्ठिदेसु इत्थि-णवुंसयवेददव्वाणमण्णोण्णब्भत्थरासी कधं ण भागहारो जायदे ? ण, अहियारट्ठिदीदो हेट्ठिमट्ठिदीणं दव्वमसंखेज्जखंडं कादूण तत्थ बहुखंडे तत्थेव ठविय उवरि पक्खित्तदव्वभागहारस्स ओकड्डुक्कड्डणभागहारादो असंखे०गुणहीणत्तुवलंभादो। ण च बंधं मोत्तूण संतस्स गोवुच्छागारेणावट्ठाणणियमो अत्थि, ओकड्डुक्कड्डणवसेण अणुलोम-विलोमेणावट्ठिदगोवुच्छाणं तदुभएण विणा अवट्ठिदाणं च उवलंभादो। एदं कुदो णव्वदे ? एदम्हादो चेव सुत्तादो। तम्हा खवगसेढीए चेव उक्कस्ससामित्तं दादव्वमिदि।

§ ११७. थोवपदेसग्गालणट्ठमित्थि-णवुंसयवेदोदएण खवगसेढिं चढावेदव्वो त्ति के वि भणंति, तण्ण घडदे, थोवबहुअदव्वेहिंतो गुणसेढिसरूवेण णिक्खिप्पमाणपदेसाणं परिणामसमाणत्तणेण समाणत्तादो। ण च पुरिसवेदपगदिगोवुच्छाहिंतो इत्थि-णवुंसयवेदाणं पगदिगोवुच्छाओ सण्णाओ, पच्चग्गुक्कड्डिदपुरिसवेदगोवुच्छाहिंतो उक्कड्डणाए विणा बहुकालमच्छिदइत्थि-णवुंसयवेदपगदिगोवुच्छाणं थोवत्तविरोहादो। किं च, ण

वह उत्कर्षण-अपकर्षण भागहारकी अपेक्षा असंख्यातगुणे हीन भागहारसे भाग देनेपर लब्ध एक भागप्रमाण है।

शंका—जब प्रथम गुणहानिसे लेकर सब गुणहानियोंका द्रव्य अपने अनन्तरवर्ती नीचेकी गुणहानिके द्रव्यसे दुगुणा हीन दुगुणा हीन होता है तो स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके द्रव्यकी अन्यायोभ्यस्त राशि ही यहाँ भागहार क्यों नहीं है।

समाधान—नहीं, क्योंकि विवक्षित स्थितिसे नीचेकी स्थितिके द्रव्यके असंख्यात खण्ड करके उनमेंसे बहुतसे खण्डोंको वहीं स्थापित करके ऊपर प्रक्षिप्त द्रव्यका भागहार उत्कर्षण-अपकर्षण भागहारसे असंख्यातगुणा हीन पाया जाता है। तथा बन्धको छोड़कर सत्तामें स्थित द्रव्यके गोपुच्छाकर रूपसे रहनेका नियम नहीं है, क्योंकि उत्कर्षण-अपकर्षणके निमित्तसे अनुलोम और विलोमरूपसे स्थित गोपुच्छोंका और उन दोनोंके बिना स्थित गोपुच्छोंका अवस्थान पाया जाता है।

शंका—यह कहाँसे जाना।

समाधान—इसी सूत्रसे जाना।

अतः क्षपकश्रेणिमें ही पुरुषवेदका उत्कृष्ट स्वामित्व देना चाहिए।

§ ११७. थोड़े प्रदेशोंकी निर्जरा करानेके लिए स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके उदयसे क्षपकश्रेणि पर चढ़ाना चाहिए ऐसा कुछ आचार्य कहते हैं। किन्तु वह कहना नहीं बनता, क्योंकि पुरुषवेद और इतरवेदके उदयसे श्रेणिपर चढ़नेवाले जीवोंके परिणाम समान होनेसे थोड़े या बहुत द्रव्यमेंसे जो प्रदेश गुणश्रेणिरूपसे स्थापित किये जाते हैं वे समान होते हैं। शायद कहा जाय कि पुरुषवेदकी प्रकृति गोपुच्छाओंसे स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी प्रकृति गोपुच्छाएँ सूक्ष्म हैं सो भी नहीं है, क्योंकि नवीन उत्कर्ष प्राप्त पुरुषवेदकी गोपुच्छाओंसे उत्कर्षणके बिना बहुत कालतक स्थित स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी प्रकृति गोपुच्छाओंके

इत्थि-णवुंसयवेदोदएण खवगसेढिचढावणं जुत्तं, मिच्छत्तं गदस्स इत्थि-णवुंसयवेदाणं विज्झादेण विणा अधापवत्तभागहारेण संकमप्पसंगादो। तत्थ वयाणुसारी आओ अत्थि त्ति णेदं दोसाए त्ति चे तो क्खहि एवं घेत्तव्वं—ण मिच्छत्तं णिज्जदि, मिच्छत्तगुणेण णिकाचिज्जमाणपदेसग्गेहिंतो सम्मत्तगुणेण णिकाचिज्जमाणपदेसग्गाणमसंखेज्जगुणत्तादो। एदं कुदो णव्वदे ? एदम्हादो चेव सुत्तादो। तम्हा पुरिसवेदोदएण चेव खवगसेढिं चढावेदव्वो।

§ ११८. एत्थ संचयाणुगमो वुच्चदे। तं जहा—चरिमसमयदेवपुरिसवेद-दव्वस्स असंखे०भागो चेव णट्ठो, सामित्तसमयपुरिसवेदउदयगदगुणसेढिगोवुच्छाए असंखे०भागस्सेव हेट्ठा णट्ठत्तादो। सव्वसंकमभागहारेण संकामिदइत्थि-णवुंसयवेद-दव्वाणमसंखे०भागस्सेव कसायसरूवेण गुणसंकमभागहारेण संकंतत्तादो। तेण किंचूण-दिवड्ढगुणहाणिमेत्ता पंचिंदियसमयपबद्धा उक्कस्सेण पुरिसवेदे होंति त्ति घेत्तव्वं।

❀ तेणेव जाधे पुरिसवेद-छण्णोकसायाणं पदेसग्गं कोधसंजलणे

थोड़े होनेमें विरोध आता है। दूसरे, ऐसे जीवको स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके उदयसे क्षपक श्रेणिपर चढ़ाना युक्त नहीं है, क्योंकि इसे स्त्रीवेद और नपुंसकवेदी मनुष्य होनेके लिये मिथ्यात्वमें जाना पड़ेगा और तब इसके स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका विध्यातसंक्रमणके बिना अधःप्रवृत्तभागहारसे ही संक्रमणका प्रसंग प्राप्त होगा।

शंका—मिथ्यात्वमें व्ययके अनुसार ही आय होती है, अतः इससे कोई दोष नहीं है ?

समाधान—तो फिर ऐसा लेना चाहिये कि ऐसा जीव मिथ्यात्वको प्राप्त नहीं होता, क्योंकि मिथ्यात्वगुणके द्वारा निकाचितपनेको प्राप्त होनेवाले प्रदेशोंसे सम्यक्त्वगुणके द्वारा निकाचितपनेको प्राप्त होनेवाले प्रदेश असंख्यातगुणे होते हैं।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना ?

समाधान—इसी सूत्रसे जाना।

अतः पुरुषवेदके उदयसे ही क्षपकश्रेणिपर चढ़ाना चाहिए।

§ ११८. अब संचयानुगम कहते हैं। वह इस प्रकार है—चरिम समयवर्ती देवके पुरुषवेदका जो द्रव्य है, वहाँसे लेकर पुरुषवेदका उत्कृष्ट स्वामित्व प्राप्त होने तक उसका असंख्यातवाँ भाग ही नष्ट हुआ है; क्योंकि पुरुषवेदके उत्कृष्ट स्वामित्वके समयमें पुरुषवेदकी जो गुणश्रेणि गोपुच्छा उदयमें आती है उसका असंख्यातवाँ भाग ही नीचे अर्थात् देव पर्यायके अन्तिम समयसे लेकर उत्कृष्ट स्वामित्व कालके उपान्त्य समय तक नष्ट हुआ है। तथा सर्वसंक्रम भागहारके द्वारा स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका जो द्रव्य पुरुषवेदरूपसे संक्रान्त हुआ है उसका असंख्यातवाँ भाग ही गुणसंक्रम भागहारके द्वारा कषायरूपसे संक्रान्त हुआ है, अतः कुछ कम डेढ़ गुणहानिमात्र पञ्चेन्द्रियके समयप्रबद्ध प्रमाण उत्कृष्ट द्रव्य पुरुषवेदका होता है ऐसा मानना चाहिये।

❀ वही जीव जब पुरुषवेद और छ नोकषायोंके द्रव्यको क्रोधसंज्वलनमें प्रक्षिप्त

पक्खित्तं ताधे कोधसंजलणस्स उक्कस्सयं पदेससंतकम्मं ।

§ ११९. तेणेवे त्ति णिद्देसो किमट्ठं कदो ? उक्कस्सीकदपुरिसवेदेणेव पुरिसवेद-छण्णोकसाएसु कोधसंजलणम्मि संकामिदेसु कोधसंजलणपदेसग्गमुक्कस्सं होदि त्ति जाणावणट्ठं । वेसागरोवमसहस्सेहि ऊणियं कम्मट्ठिदिं बादरपुढविकाइएसु परिभमिय तदो तसट्ठिदिसव्वं णेरइएसु समयाविरोहेण परिभमिय कोधसंजलण-छण्णोकसायाणं तत्थ पदेसग्गमुक्कस्सं करिय थोवावसेसाए तसट्ठिदीए ईसाणदेवेसुप्पज्जिय तत्थ णवुंसय-वेदपदेसग्गमुक्कस्सं करिय पुणो समयाविरोहेण असंखेज्जवासाउएसु उप्पज्जिय पलिदो० असंखे०भागमेत्तकालेण इत्थिवेदमावूरिय पुणो पढमसम्मत्तं पडिवज्जिय पलिदोवम-ट्ठिदिएसु देवेसुप्पज्जिय पुरिसवेदपदेसग्गमुक्कस्सं करिय मणुसेसु उववण्णो । तत्थ सव्व-लहुमट्ठवस्साणमुवरि खवगसेढिपाओग्गो होदूण अपुव्वगुणट्ठाणं पविसिय पुणो तत्थ इत्थि-णवुंसयवेददव्वं पुरिस-हस्स-रदि-भय-दुगुंछ-चदुसंजलणाणमुवरि गुणसंकमेण संकामेदि । पुरिसवेददव्वं बज्झमाणकसायाणमुवरि अधापवत्तसंकमेण संकामेदि । कसाय-णोकसायदव्वं पि पुरिसवेदस्सुवरि तेणेव भागहारेण संछुहदि । एवमेदेण कमेण अपुव्वकरणं वोलाविय अणियट्टिअद्धाए संखेज्जेसु भागेसु गदेसु तेरसण्हं कम्माणमंतरं करिय तदो णवुंसवेदक्खवणं पारभिय पुणो पुरिसवेदस्सुवरि णवुंसयवेदं गुणसंकमेण

कर देता है तब क्रोधसंज्वलनका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होता है ।

§ ११९. **शंका**—'वही जीव' ऐसा निर्देश क्यों किया ?

समाधान—पुरुषवेदके उत्कृष्ट प्रदेश सत्कर्मवाले जीवके द्वारा पुरुषवेद और छह नोकषायोंके क्रोध-संज्वलनमें संक्रान्त कर देने पर क्रोध संज्वलनका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होता है यह बतलानेके लिये किया है ।

दो हजार सागर कम कर्मस्थितिकाल तक बादर पृथिवीकायिकोंमें भ्रमण करके, फिर आगमानुसार पूरे त्रसस्थितिकाल तक नारकियोंमें भ्रमण करके वहाँ क्रोधसंज्वलन और छह नोकषायोंका उत्कृष्ट प्रदेशसंचय करके, त्रसस्थितिकालके थोड़ा शेष रहने पर ईशान स्वर्गके देवोंमें उत्पन्न होकर, वहाँ नपुंसकवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसञ्चय करके फिर आगमानुसार असंख्यात वर्षकी आयुवाले मनुष्य और तिर्यञ्चोंमें उत्पन्न होकर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कालके द्वारा स्त्रीवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसञ्चय करके, फिर प्रथम सम्यक्त्वको प्राप्त करके पल्यकी स्थितिवाले देवोंमें उत्पन्न होकर पुरुषवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसञ्चय करके मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । वहाँ सबसे लघु काल आठ वर्षके बाद क्षपकश्रेणिपर चढ़नेके योग्य होकर अपूर्वकरण गुण-स्थानमें प्रवेश करके वहाँ स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके द्रव्यको गुणसंक्रमभागहारके द्वारा पुरुष-वेद, हास्य, रति, भय, जुगुप्सा और चार संज्वलनकषायोंमें संक्रान्त करता है । पुरुषवेदके द्रव्यको अधःप्रवृत्त संक्रमके द्वारा बध्यमान कषायोंमें संक्रान्त करता है । कषाय और नोकषायके द्रव्यका भी उसी अधःप्रवृत्तसंक्रम भागहारके द्वारा पुरुषवेदमें संक्रमण करता है । इस प्रकार इस क्रमसे अपूर्वकरणको बिताकर अनिवृत्तिकरणकालके संख्यात बहुभाग बीतने पर तेरह कषायोंका अन्तरकरण करके फिर नपुंसकवेदके क्षपणका प्रारम्भ करता है । पुनः उसका प्रारम्भ करते हुए गुणसंक्रमके द्वारा नपुंसकवेदको पुरुषवेदमें संक्रान्त करता है । चूंकि

संकमाविय पारद्धाणुपुव्वीसंकमत्तादो सेसकसायाणमुवरि णवुंसगित्थिवेदाणं संकममोसारिय णवुंसयवेदं खवेमाणो ताव गच्छदि जाव तस्सेव दुचरिमफालि त्ति। तदो चरिमफालिं पुरिसवेदस्सुवरि संछुहिय पुणो इत्थिवेदक्खवणं पारभिय तदो अंतोमुहुत्तं गंतूण तक्खवणद्धाए चरिमसमए इत्थिवेदचरिमफालीए पुरिसवेदस्सुवरि संकंताए पुरिसवेदस्सुक्कस्सयं पदेसग्गं। एदेणेव पुरिसवेदेण सह छण्णोकसाएसु सव्वसंकमेण कोधसंजलणस्सुवरि संकामिदेसु कोधसंजलणस्स उक्कस्सयं पदेसग्गं होदि त्ति एसो एदस्स सुत्तस्स भावत्थो। सत्तमपुढवीए कोधसंजलणस्स पदेसग्गमुक्कस्सं कादूण तत्तो णिप्पिडिय ईसाणादिदेवेसु तिवेदावूरणे कीरमाणे संजलणदव्वक्खओ बहुओ होदि, तत्थ बहुसंकिलेसाभावेण बहुगीए उक्कड्डणाए अभावादो सम्मत्तमुवणंयतस्स दुविहकरणपरिणामेहि गुणसेढीए कम्मक्खंधाणं खयदंसणादो च। तेण पुव्वं तिवेदावूरणं करिय पच्छा सत्तमपुढविम्हि संजलणपदेसग्गमुक्कस्सं करिय मणुस्सेसुप्पाइय खवगसेढिं चडाविय कोधसंजलणस्स उक्कस्ससामित्तं दिज्जदि त्ति ? ण, पुव्वं तत्थ हिंडाविज्जमाणे वि तद्दोसाणइवुत्तीए गुणिदकम्मंसियकालब्भंतरे सव्वत्थ णवणोकसाएहि सह कोधसंजलणपदेसग्गं रक्खणिज्जं। तदो तेणेव त्ति सुत्तणिद्देसण्णहाणुववत्तीदो पुव्विल्लवुत्तकमेणेव उक्कस्ससामित्तं दादव्वं। ण च तत्थ आयदो वओ बहुओ चेवे त्ति णियमो सामित्तद्विदीदो

नौवें गुणस्थानमें अन्तरकरणके बाद जो संक्रमण होता है वह आनुपूर्वीक्रमसे होता है, अतः शेष कषायोंमें नपुंसकवेद और स्त्रीवेदका संक्रमण न करके नपुंसकवेदका क्षपण करता हुआ नपुंसकवेदकी द्विचरिमफालीके प्राप्त होने तक जाता है, उसके बाद अन्तिम फालीको पुरुषवेदमें संक्रमण कर नष्ट कर देता है। फिर स्त्रीवेदके क्षपणका प्रारम्भ करके अन्तर्मुहूर्त कालको बिताकर उसके क्षपणाकालके अन्तिम समयमें स्त्रीवेदकी अन्तिम फालीके पुरुषवेदमें संक्रान्त होनेपर पुरुषवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसंचय होता है। पुनः इसी पुरुषवेदके साथ छह नोकषायोंके सर्वसंक्रमणके द्वारा क्रोधसंज्वलनमें संक्रान्त होनेपर क्रोधसंज्वलनका उत्कृष्ट प्रदेशसंचय होता है यह इस सूत्र का भावार्थ है।

शंका—सातवें नरकमें क्रोधसंज्वलनका उत्कृष्ट प्रदेशसंचय करके वहाँसे निकलकर ईशान आदिके देवोंमें तीनों वेदोंका प्रदेशसंचय करते समय संज्वलन कषायका बहुत द्रव्य क्षय हो जाता है, क्योंकि वहाँ बहुत संक्लेशके न होनेसे बहुत उत्कर्षण भी नहीं होता। तथा सम्यक्त्वको प्राप्त करते समय अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण परिणामोंके द्वारा गुणश्रेणिरूपसे कर्मस्कन्धोंका क्षय भी देखा जाता है। अतः पहले तीनों वेदोंका संचय करके और पीछे सातवें नरकमें संज्वलनकषायका उत्कृष्ट प्रदेश संचय करके मनुष्योंमें उत्पन्न कराकर क्षपकश्रेणिपर चढ़ाकर क्रोधसंज्वलनका उत्कृष्ट स्वामीपना कहना चाहिये।

समाधान—उक्त कथन ठीक नहीं है, क्योंकि पहले ईशानादिकमें भ्रमण कराने पर भी वह दोष बना ही रहेगा, अतः सर्वत्र गुणितकर्मांशके कालके अन्दर ही नव नोकषायोंके साथ क्रोधसंज्वलनके प्रदेशसमूहकी रक्षा करनी चाहिये। यतः सूत्रमें 'वही जीव' ऐसा निर्देश अन्यथा बन नहीं सकता अतः पहले कहे हुए क्रमके अनुसार ही संज्वलनक्रोधका उत्कृष्ट स्वामित्व कहना चाहिये।

हेट्ठिमासेसट्ठिदिपदेसग्गं घेत्तूण अप्पिदट्ठिदीए उवरि पक्खिविय ईसाणादिसु थोवीभूद-गोवुच्छागालणेण तिण्णि वि वेदे आवूरेंतस्स आयदो गुणिदकम्मंसियम्मि थोवव्वओव-लंभादो। किं च जदि वि गुणिदकम्मंसियलक्खणेण तिण्णि वि वेदे ईसाणादिसु आवूरंतस्स कोधसंजलण-छण्णोकसायाणं सत्तमपुढविलाहादो थोवो लाहो तो वि तिण्णिवेदेहिंतो णिकाचणादिवसेण उवलद्धलाहो तत्तो बहुओ, तेणेव त्ति सुत्तणिद्देसण्णहा-णुववत्तीदो। तेण पुव्विल्लत्थो चेव भद्दओ त्ति दट्ठव्वो। णवरि कोधसंजलणपदेसग्गस्स उक्कस्ससामित्ते भण्णमाणे माणादिउदएण खवगसेढिं चढावेदव्वो पढमट्ठिदिपदेसग्ग-णिज्जरापरिरक्खणट्ठं। अधवा तेणेवे त्ति वयणेण सामण्णगुणिदकम्मंसियलक्खण-मेवावहारेयव्वं, विरोहाभावादो।

❀ एसेव कोधो जाधे माणे पक्खित्तो ताधे माणस्स उक्कस्सयं पदेस-संतकम्मं।

§ १२०. एदस्स सुत्तस्स अत्थो सुगमो। णवरि माया-लोहोदएहि खवगसेढिं चढावेदव्वो। ण च तेणेव त्ति वयणेण सह विरोहो वि, तस्स पूरिदकोहसंजलणावहारणे वावदस्स माणोदयावहारणे वावाराभावादो। ण च माणोदएणेव चडिदस्स कोधमुक्कस्सं

ईशानादिकमें आयसे व्यय बहुत ही है ऐसा कोई नियम नहीं है, क्योंकि स्वामित्वकी स्थितिसे नीचेकी स्थितिके सब प्रदेशोंको लेकर उनको विवक्षित स्थितिसे ऊपर स्थापित करके ईशानादिकमें स्तोक गोपुच्छकी निर्जरा होनेसे तीनों ही वेदोंका संचय करते हुए गुणितकर्मांशवाले जीवमें आयसे व्यय थोड़ा पाया जाता है। दूसरे, यद्यपि गुणितकर्मांश-की विधिके साथ ईशानादिकमें तीनों वेदोंकी पूर्ति करनेवाले जीवके क्रोधसंज्वलन और छह नोकषायोंका सातवें नरकमें जो लाभ होता है उसकी अपेक्षा थोड़ा लाभ होता है, फिर भी निकाचना आदिके द्वारा तीनों वेदोंमेंसे जो लाभ प्राप्त होता है वह उस क्रोधसंज्वलनके लाभ की अपेक्षासे बहुत है, क्योंकि यदि ऐसा न होता तो सूत्रमें 'वही जीव' ऐसा निर्देश नहीं हो सकता था, इसलिये पहले कहा हुआ अर्थ ही ठीक है ऐसा जानना चाहिये। इतना विशेष है कि क्रोध संज्वलनके प्रदेशसमूहके उत्कृष्ट स्वामित्वका कथन करते हुए मान आदि कषायके उदयसे क्षपकश्रेणि पर चढ़ाना चाहिये, जिससे प्रथम स्थितिके प्रदेशसमूहकी निर्जरासे रक्षा हो सके। अथवा 'वही जीव' ऐसा कहनेसे गुणितकर्मांशका जो सामान्य लक्षण कहा है वही लेना चाहिये, उसमें कोई विरोध नहीं है।

❀ वही जीव जब क्रोधको मानमें प्रक्षिप्त करता है तब मानका उत्कृष्ट प्रदेश-सत्कर्म होता है।

§ १२०. इस सूत्रका अर्थ सुगम है। इतना विशेष है कि माया या लोभ कषायके उदयसे क्षपकश्रेणिपर चढ़ाना चाहिये। शायद कहा जाय कि ऐसा होनेसे 'वही जीव' इस वचनके साथ विरोध आता है, सो भी नहीं है, क्योंकि यहां पर 'तेणेव'का अर्थ है जिसने क्रोध संज्वलनका उत्कृष्ट प्रदेशसंचय किया है वह जीव, अतः उसका अर्थ मान कषायके उदयवाला जीव नहीं हो सकता। तथा मान कषायके उदयसे ही क्षपकश्रेणिपर चढ़नेवाले जीवके क्रोधका उत्कृष्ट संचय होता है ऐसी भी बात नहीं है क्योंकि माया और लोभ कषायके

होदि, माय-लोहोदएणावि चडिदस्स उक्कस्सभाववत्तिं पडि विरोहाभावादो।

❀ एसेव माणो जाधे मायाए पक्खित्तो ताधे मायासंजलणस्स उक्कस्सयं पदेससंतकम्मं।

१२१. सुगममेदं। णवरि लोहोदएण खवगसेढिं चडिदस्स उक्कस्सं पदेससंतकम्मं वत्तव्वं।

❀ एसेव माया जाधे लोभसंजलणे पक्खित्ता ताधे लोभसंजलणस्स उक्कस्सयं पदेससंतकम्मं।

§ १२२. सुगममेदं। णवरि लोभसंजलणस्स माणोदएण खवगसेढिं चढावेदव्वो, लोभगोवुच्छाओ आवलियाए असंखे०भागेण खंडेदूण तत्थ एयखंडमेत्तेण माणगोवुच्छाणं लोभगोवुच्छाहिंतो ऊणत्तुवलंभादो। एवं चुण्णिसुत्तपरूवणं काऊण संपहि उच्चारणा वुच्चदे।

§ १२३सामित्तं दुविहं—जहण्णमुक्कस्सयं च। उक्कस्से पयदं। दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसे०। ओघेण मिच्छत्त-बारसक०—छण्णोक० उक्क० पदेस० कस्स? अण्णदरस्स बादरपुढविकाइएसु वेहि[1] सागरोवमसहस्सेहि सादिरेगेहि ऊणियं कम्मट्ठिदिमच्छिदो। एवं गंतूण तेत्तीसं सागरोवमिएसु णेरइएसु उववण्णो तस्स णेरइयस्स चरिमसमए उक्कस्सयं पदेसग्गं। काए वि[2] उच्चारणाए णेरइयचरिमसमयादो हेट्ठा

उदयसे भी चढ़नेवाले जीवके उत्कृष्ट संचय होनेमें कोई विरोध नहीं है।

❀ वही जीव जब मानको माया संज्वलनमें प्रक्षिप्त करता है तब माया संज्वलनका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होता है।

§ १२१. यह सूत्र सुगम है। इतना विशेष है कि लोभ कषायके उदयसे क्षपकश्रेणिपर चढ़नेवाले जीवके उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म कहना चाहिये।

❀ वही जीव जब मायाको लोभ संज्वलनमें प्रक्षिप्त करता है तब लोभ संज्वलनका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होता है।

§ १२२ यह सूत्र सुगम है। इतना विशेष है कि लोभ संज्वलनका उत्कृष्ट संचय प्राप्त करनेके लिये मान कषायके उदयसे क्षपकश्रेणिपर चढ़ाना चाहिये, क्योंकि लोभकी गोपुच्छाओंको आवलिके असंख्यातवें भागसे भाजित करके लब्ध एक भागप्रमाण मानकी गोपुच्छाएँ लोभकी गोपुच्छाओंसे कम पाई जाती हैं। इस प्रकार चूर्णिसूत्रोंका कथन करके अब उच्चारणाको कहते हैं—

§ १२३. स्वामित्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व, बारह कषाय और छह नोकषायोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति किसके होती है? जो बादर पृथिवीकायिकोंमें कुछ अधिक दो हजार सागर कम कर्मस्थिति काल तक रहा। और अन्तमें जाकर पहले कही हुई विधिके अनुसार तेतीस सागरकी स्थितिवाले नारकियोंमें उत्पन्न हुआ। उस नारकीके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होता है। किसी उच्चारणामें नारकीके अन्तिम समयसे नीचे अन्तर्मुहूर्त काल उतरकर

१. आ०प्रतौ 'विह' इति पाठः। २. आ०प्रतौ 'कम वि' इति पाठः।

अंतोमुहुत्तमोसरिय उक्कस्ससामित्तं दिण्णं, आउअबंधकाले जादमोहणीयक्खयादो उवरिमविस्समणद्धाए जादसंचयस्स बहुत्ताभावादो। सम्मामि० उक्क० पदेसवि० कस्स? जो अण्णदरो गुणिदकम्मंसिओ सत्तमादो पुढवीदो ओवट्टिदूण सव्वलहुं दंसणमोहक्खवगो जादो तेण जाधे मिच्छत्तं सम्मामिच्छत्ते पक्खित्तं तस्स सम्मामिच्छत्तस्स उक्कस्सयं पदेसग्गं। सम्मत्तस्स तेणेव जाधे सम्मामिच्छत्तं सम्मत्ते पक्खित्तं ताधे तस्स सम्मत्तस्स उक्कस्सिया पदेसविहत्ती। णवुंस० उक्क० पदेसविहत्ती कस्स? अण्णद० गुणिदकम्मंसियस्स ईसाणं गदस्स चरिमसमयदेवस्स तस्स णवुंसयवेदस्स उक्कस्सिया पदेसविहत्ती। इत्थिवेद० उक्क०पदेसवि० कस्स? अण्णद० गुणिदकम्मं० असंखे०वस्साउएसु उप्पज्जिय पलिदो० असंखे०भागकालेण पूरिदइत्थिवेदस्स तस्स उक्क० इत्थिवेदपदेसवि०[1]। पुरिस० उक्क० पदेसवि० कस्स? अण्णद० गुणिदकम्मंसियस्स ईसाणदेवेसु णवुंसयवेदं पूरिदूण असंखेज्जवासाउएसु उववज्जिय तत्थ पलिदो० असंखे०भागेण कालेण इत्थिवेदं पूरिय तदो सम्मत्तं लभिदूण पलिदोवमट्ठिदिएसु देवेसु उववज्जिय तत्थ पुरिसवेदं पूरेदूण तदो चुदो मणुस्सेसु उवज्जिय सव्वलहुं खवगसेढिमारुहिय णवुंसयवेदं पुरिसवेदम्मि पक्खिविय जम्मि इत्थिवेदो पुरिसवेदम्मि पक्खित्तो तम्मि पुरिसवेदस्स उक्कस्सयं पदेससंतकम्मं। कोधसंजलणस्स उक्कस्सिया पदेसविहत्ती कस्स? जाधे पुरिसवेदस्स उक्कस्सपदेससंतकम्मं कोधसंजलणे

उत्कृष्ट सामित्व दिया है, क्योंकि आयुबंधके कालमें मोहनीयका जो क्षय होता है उससे आयुबन्धके पश्चात्के विश्राम कालमें होनेवाला संचय बहुत नहीं होता। सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति किसके होती है? जो गुणितकर्मांशवाला जीव सातवें नरकसे निकलकर सबसे कम कालमें दर्शनमोहका क्षपक हुआ। वह जब मिथ्यात्वको सम्यग्मिथ्यात्वमें प्रक्षिप्त कर देता है तब सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होता है। वही जीव जब सम्यग्मिथ्यात्वको सम्यक्त्वमें प्रक्षिप्त करता है तो उसके सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है। नपुसंकवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति किसके होती है? जो गुणितकर्मांशवाला जीव ईशान स्वर्गमें जाकर जब देवपर्यायके अन्तिम समयमें स्थित होता है तब उसके नपुंसकवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है। स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट विभक्ति किसके होती है? जो गुणित कर्मांशवाला जीव असंख्यात वर्षकी आयुवाले मनुष्य-तिर्यञ्चोंमें उत्पन्न होकर पल्यके असंख्यातवें भाग कालके द्वारा स्त्रीवेदका संचय करता है उसके स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है। पुरुषवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति किसके होती है? जो गुणितकर्मांशवाला जीव ईशान स्वर्गके देवोंमें उत्पन्न होकर नपुंसकवेदको पूरता है फिर असंख्यात वर्षकी आयुवाले मनुष्य तिर्यञ्चोंमें उत्पन्न होकर पल्यके असंख्यातवें भाग कालके द्वारा स्त्रीवेदको पूरता है। फिर सम्यक्त्वको प्राप्त करके पल्यकी स्थितिवाले देवोंमें उत्पन्न होकर वहां पुरुषवेदको पूरण करके च्युत होकर मनुष्योंमें उत्पन्न होकर सबसे लघु कालके द्वारा क्षपकश्रेणिपर चढ़कर नपुंसकवेदको पुरुषवेदमें प्रक्षिप्त करके जब स्त्रीवेदका पुरुषवेदमें क्षेपण करता है तब पुरुषवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होता है। क्रोध संज्वलनकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति किसके होती है? जब पुरुषवेदके

१. आ०प्रतौ 'उक्क०, पदेसवि० इत्थिवेदवि०' इति पाठः।

पक्खित्तं ताधे तस्स उक्कस्सयं पदेससंतकम्मं । माणसंजलणस्स उक्क० पदेस० कस्स ? अण्णद० जाधे कोधसंज० उक्क० पदेससंतकम्मं माणे पक्खित्तं ताधे माणस्स उक्क० पदेससंतकम्मं । मायासंजलणस्स उक्क० पदेसवि० कस्स ? अण्णद० जाधे माणस्स उक्क० पदेससंतकम्मं मायाए पक्खित्तं ताधे तस्स उक्क० पदेसविहत्ती । लोभसंजल० उक्क० पदेस० कस्स ? अण्णद० जाधे उक्कस्समायासंजल०पदेसग्गं लोभे पक्खित्तं ताधे तस्स उक्कस्सयं पदेससंतकम्मं ।

§ १२४. आदेसेण णिरयगईए णेरइएसु मिच्छत्त-सोलसक०-छण्णोक० उक्क० पदेसवि० कस्स? जो गुणिदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण सत्तमाए पुढवीए तेत्तीससागरोवमाउट्ठिदीओ होदूण उववण्णो तस्स चरिमसमयणेरइयस्स अंतोमुहुत्त-चरिमसमयणेरइयस्स वा उक्क० पदेसविहत्ती । सम्मामि० उक्क० पदेसवि० कस्स ? सत्तमपुढविणेरइयस्स अंतोमुहुत्तेण मिच्छत्तपदेससंतकम्ममुक्कस्सं होहिदि त्ति विवरीदं गंतूण सम्मत्तं पडिवज्जिय उक्कस्सगुणसंकमकालेण आवूरिय तिण्हं कम्माणमेगदरस्स उदओ होहिदि त्ति अहोदूण ट्ठिदउवसमसम्मादिट्ठिस्स उक्कस्सिया पदेसविहत्ती । सम्मत्तस्स उक्क०पदेसवि० कस्स ? जो गुणिदकम्मंसिओ सत्तमादो पुढवीदो उव्वट्टिदसमाणो संखेज्जाणि तिरियभवग्गहणाणि भमिदूण मणुस्सो जादो सव्वलहुएण कालेण दंसणमोहक्खवणमाढविय कदकरणिज्जो होदूण सम्मत्तट्ठिदीए अंतोमुहुत्ताव-

---

उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मको क्रोध संज्वलनमें प्रक्षिप्त कर देता है तब क्रोधका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होता है। मानसंज्वलनका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म किसके होता है ? जब क्रोध संज्वलनका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म मानमें प्रक्षिप्त कर देता है तब मानका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होता है। माया संज्वलन-की उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति किसके होती है ? जब मानका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म मायामें प्रक्षिप्त कर देता है तब मायाकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है। लोभ संज्वलनका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म किसके होता है ? जब उत्कृष्ट माया संज्वलनके प्रदेशसमूहको लोभमें प्रक्षिप्त कर देता है तब लोभका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होता है।

§ १२४. आदेशसे नरकगतिमें नारकियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और छह नोकषायोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति किसके होती है ? जो गुणितकर्मांशके लक्षणके साथ आकर सातवें नरकमें तेतीस सागरकी आयु लेकर उत्पन्न हुआ उस अन्तिम समयवर्ती नारकीके अथवा चरिम समयसे अन्तर्मुहूर्त नीचे उतरकर स्थित नारकीके उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है। सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति किसके होती है ? सातवें नरकके जिस नारकीके अन्तर्मुहूर्तके बाद मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होगा वह विपरीत जाकर सम्यक्त्वको प्राप्तकर गुण-संक्रमके उत्कृष्ट कालके द्वारा सम्यग्मिथ्यात्वका संचयकर दर्शनमोहकी तीनों प्रकृतियोंमेंसे एकका उदय होगा किन्तु ऐसा न होकर स्थित हुए उपशमसम्यग्दृष्टिके उत्कृष्ट प्रदेश-विभक्ति होती है। सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति किसके होती है ? जो गुणितकर्मांश वाला जीव सातवीं पृथिवीसे निकल कर तिर्यञ्चके संख्यात भवोंमें भ्रमण करके मनुष्य हुआ। और सबसे लघु कालके द्वारा दर्शनमोहके क्षपणका आरम्भ करके कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि होकर सम्यक्त्व प्रकृतिकी अन्तर्मुहूर्त प्रमाण स्थिति शेष रहने पर नरकायुके बंधके वशसे

सेसाए आउअबंधवसेण णेरइएसु उववण्णो तस्स पढमसमयउववण्णस्स उक्कस्सिया पदेसविहत्ती। तिण्हं वेदाणमुक्क० पदेसवि० कस्स? जो पूरिदगुणिदकम्मंसिओ णेरइएसु उववण्णो तस्स पढमसमयउववण्णणेरइयस्स उक्कस्सिया पदेसविहत्ती। एवं सत्तमाए पुढवीए। णवरि सम्मत्तस्स सम्मामिच्छत्तेण सह उक्कस्ससामित्तं भाणिदव्वं।

§ १२५. पढमादि जाव छट्ठि त्ति मिच्छत्त-सोलसक०–छण्णोक० उक्क० पदेसवि० कस्स? जो गुणिदकम्मंसिओ सत्तमादो पुढवीदो उव्वट्टिदसमाणो संखेज्जाणि तिरिक्खभवग्गहणाणि जीविदूण पुणो अप्पप्पणो णेरइएसु उववण्णो तस्स पढमसमय-उववण्णणेरइयस्स उक्कस्सिया पदेसविहत्ती। सम्मत्त-सम्मामि० उक्क० पदेसवि० कस्स? सो चेव जीवो अंतोमुहुत्तेण सम्मत्तं पडिवण्णो तदो सव्वउक्कस्सेण पूरणकालेण सव्व-जहण्णेण गुणसंकमभागहारेण सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणि पूरेदूण तदो तिण्हमेगदरकम्मस्स उदए पडिच्छदि त्ति तस्स उवसमसम्मादिट्ठिस्स चरिमसमए वट्टमाणस्स उक्कस्सिया पदेसविहत्ती। तिण्हं वेदाणं णिरओघभंगो। पढमाए सम्मत्तस्स वि णिरओघभंगो।

§ १२६. तिरिक्खेसु मिच्छत्त-सोलसक०–छण्णोक० उक्क० पदेसवि० कस्स? जो गुणिदकम्मंसिओ णेरइओ सत्तमादो पुढवीदो उव्वट्टिदो तिरिक्खेसु उववण्णो तस्स

नारकियोंमें उत्पन्न हुआ उसके उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें सम्यक्त्व प्रकृतिकी उत्कृष्ट प्रदेश-विभक्ति होती है। तीनों वेदोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति किसके होती है? जो गुणितकर्मांशवाला जीव वेदोंका उत्कृष्ट प्रदेशसंचय करके नारकियोंमें उत्पन्न हुआ उसके उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें वेदोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है। इसीप्रकार सातवें नरकमें जानना चाहिए, किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व प्रकृतिका उत्कृष्ट स्वामित्व सम्यग्मिथ्यात्वके साथ कहना चाहिये। अर्थात् जिस तरहसे जिस जीवके नरकमें सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट स्वामित्व कहा है उसी प्रकार उसी जीवके सम्यक्त्व प्रकृतिका उत्कृष्ट स्वमित्व सातवें नरकमें कहना चाहिए।

§ १२५. पहलेसे लेकर छठे नरक तक मिथ्यात्व, सोलह कषाय और छह नोकषायकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति किसके होती है? जो गुणितकर्मांशवाला जीव सातवें नरकसे निकलकर संख्यात भव तिर्यञ्चके धारण करके फिर अपने योग्य नरकमें उत्पन्न हुआ उसके नरकमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति किसके होती है? वही जीव अन्तर्मुहूर्त कालके द्वारा सम्यक्त्वको प्राप्त करे, फिर पूरण करनेके सबसे उत्कृष्ट कालमें सबसे जघन्य गुणसंक्रम भागहारके द्वारा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वको प्रदेशोंसे पूर दे। उसके बाद तीनों प्रकृतियोंमेंसे किसी एकका उदय होगा इस प्रकार उस उपशमसम्यग्दृष्टिके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है। तीनों वेदोंके उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका स्वामित्व सामान्य नारकियोंकी तरह होता है। पहले नरकमें सम्यक्त्व प्रकृतिका भी उत्कृष्ट स्वामित्व सामान्य नारकियोंको तरह होता है।

§ १२६. तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और छह नोकषायकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति किसके होती है? जो गुणितकर्मांशवाला नारकी सातवें नरकसे निकलकर तिर्यञ्चोंमें

पढमसमयउववण्णस्स उक्कस्सयं पदेससंतकम्मं । सम्मामि० उक्क० पदेसवि० कस्स ? जो गुणदिकम्मंसिओ सत्तमादो पुढवीदो ओवट्टिदूण संखेज्जाणि तिरियभवग्गहणाणि अणुपालेदूण सव्वलहुं सम्मत्तं पडिवण्णो सव्वुक्कस्सेण पूरणकालेण सम्मामिच्छत्तं ॰ेदूण उवसमसम्मत्तचरिमसमए वट्टमाणस्स उक्क० पदेसविहत्ती । सम्मत्तस्स णेरइयभंगो । इत्थिवेदस्स ओघभंगो । पुरिस०-णवुंस० उक्क० पदेसवि० कस्स ? जो पूरिदकम्मंसिओ तिरिक्खेसु उववण्णो तस्स पढमसमयउववण्णस्स उक्क० पदेसविहत्ती । एवं पंचिंदिय-तिरिक्ख-पंचिं०तिरिक्खपज्जत्ताणं । जोणिणीणमेवं चेव । णवरि सम्मत्त० सम्मामिच्छत्त-भंगो । पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज० मिच्छत्त०-सोलसक०-छण्णोक० उक्क० पदेसवि० कस्स ? जो गुणिदकम्मंसिओ सत्तमादो पुढवीदो उव्वट्टिदूण संखेज्जतिरियभवग्गहणाणि जीविदूण पुणो पंचिं०तिरिक्खअपज्जत्तएसु उववण्णो तस्स पढयसमयउववण्णस्स उक्कस्सयं पदेससंतकम्मं । सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमेवं चेव संखेज्जतिरिक्खभवग्गहणाणि गमेदूण सव्वलहुं सम्मत्तं पडिवज्जिय पुणो मिच्छत्तं गंतूण अविणट्ठगुणसेढीहि पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तएसु उववण्णो तस्स पढमसमयउववण्णस्स उक्क० पदेसवि० । तिण्हं वेदाणमुक्क० कस्स ? जो पूरिदकम्मंसिओ सव्वलहुं पंचिं०तिरिक्खअपज्जत्तएसु

उत्पन्न हुआ उसके उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होता है। सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति किसके होती है ? जो गुणितकर्मांशवाला जीव सातवें नरकसे निकलकर तिर्यञ्चके संख्यात भव धारण करके जल्दीसे जल्दी सम्यक्त्वको प्राप्त करे और सबसे उत्कृष्ट पूरण कालके द्वारा सम्यग्मिथ्यात्वको प्रदेशोंसे पूर दे। उपशम सम्यक्त्वके अन्तिम समयमें वर्तमान उस जीवके उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है। सम्यक्त्व प्रकृतिका उत्कृष्ट स्वामित्व नारकियोंके समान जानना चाहिए। स्त्रीवेदका उत्कृष्ट स्वामित्व ओघकी तरह है। पुरुषवेद और नपुंसकवेदका उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति किसके होती है ? जो गुणित कर्मांशवाला जीव दोनों वेदोंको प्रदेशोंसे पूरकर तिर्यञ्चोंमें उत्पन्न हुआ उसके उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है। इसीप्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च पर्याप्तकोंमें जानना चाहिए। योनिनी तिर्यञ्चोंमें भी इसी प्रकार जानना चाहिए। विशेष इतना है कि सम्यक्त्व प्रकृतिका उत्कृष्ट स्वामित्व सम्यग्मिथ्यात्वके समान होता है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और छह नोकषायकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति किसके होती है ? जो गुणितकर्मांशवाला जीव सातवें नरकसे निकलकर तिर्यञ्चोंके संख्यात भव धारण करके फिर पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तोंमें उत्पन्न हुआ उसके उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होता है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म भी इसी प्रकार जानना चाहिये। अर्थात् गुणितकर्मांशवाला जीव तिर्यञ्चके संख्यात भव बिताकर सबसे लघु कालके द्वारा सम्यक्त्वको प्राप्त करके फिर मिथ्यात्वमें जाकर नाशको नहीं प्राप्त हुई गुणश्रेणियोंके साथ पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तोंमें उत्पन्न हुआ उसके उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है। तीनों वेदोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति किसके होती है ? जो तीनों वेदोंका उत्कृष्ट संचय करके जल्दीसे जल्दी पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुआ

उववण्णो तस्स पढमसमयउववण्णस्स उक्क० पदेसवि० । एवं मणुसअपज्जत्ताणं ।

§ १२७. मणुस्सेसु मिच्छत्त-बारसक०-छण्णोक० पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तभंगो । णवरि मणुस्सेसु उववण्णो त्ति वत्तव्वं । सम्मत्त-सम्मामि०-चदुसंजल०-पुरिसवेद० ओघं । इत्थि०-णवुंस० उक्क० पदेस० कस्स ? जो पूरिदकम्मंसिओ मणुस्सेसु उववण्णो तस्स पढमसमयउववण्णस्स उक्क० पदेससंतकम्मं । एवं मणुसपज्जत्त-मणुसिणीणं ।

§ १२८. देवेसु मिच्छ०-सोलसक०-छण्णोक० उक्क० पदेसवि० कस्स ? जो गुणिदकम्मंसिओ अधो सत्तमादो पुढवीदो उव्वट्टिदसमाणो संखेज्जाणि तिरियभवग्गहणाणि अणुपालेदूण देवेसु उववण्णो तस्स पढमसमयउववण्णस्स उक्क० पदेसवि० । सम्मामि० उक्क० पदेसवि० कस्स ? सो चेव जीवो सम्मत्तं पडिवण्णो अंतोमुहुत्तं सव्वुक्कस्सियाए पूरणद्धाए पूरेदूण तदो तिण्हमेक्कदरस्स कम्मस्स उदए पडिहिदि त्ति तस्स उक्क० पदेसवि० । सम्मत्त० णेरइयभंगो । इत्थि० उक्क० पदेसवि० कस्स ? जो पूरिदकम्मंसिओ देवेसु उववण्णो तस्स पढमसमयउववण्णस्स उक्क० पदेसवि० । पुरिसवेदवि० ओघं । णवरि पलिदोवमट्ठिदिएसु देवेसु उप्पज्जिदूण पुरिसवेदमावूरिदचरिम-

---

उसके उत्पन्न होनेके प्रथमसमयमें उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्तकोंमें जानना चाहिये।

§ १२७. सामान्य मनुष्योंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और छह नोकषायोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान होती है। इतना विशेष है कि पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तके स्थानमें 'मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ' ऐसा कहना चाहिये। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, चार संज्वलन कषाय और पुरुषवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति ओघकी तरह जानना चाहिये। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति किसके होती है ? जो स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका उत्कृष्ट संचय करके मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ उसके उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होता है। इसी प्रकार मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंके जानना चाहिये।

§ १२८. देवोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और छह नोकषायोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति किसके होती है ? जो गुणितकर्मांशवाला जीव नीचे सातवें नरकसे निकल कर और तिर्यञ्चके संख्यात भव धारण करके देवोंमें उत्पन्न हुआ, उसके उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है। सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति किसके होती है ? वही देवोंमें उत्पन्न हुआ जीव जब सम्यक्त्वको प्राप्त करके अन्तर्मुहूर्त पर्यन्त सबसे उत्कृष्ट पूरण कालके द्वारा सम्यग्मिथ्यात्वको प्रदेशोंसे पूर देता है और उसके बाद दर्शनमोहकी तीनों प्रकृतियोंमेंसे किसी एक प्रकृतिके उदयको प्राप्त होगा उसके उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है। सम्यक्त्व प्रकृतिका भंग नारकियोंकी तरह जानना चाहिये। स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति किसके होती है ? जो स्त्रीवेदको पूर कर देवोंमें उत्पन्न हुआ उसके उत्पन्न होनेके प्रथम समय में उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है। पुरुषवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति ओघकी तरह जानना चाहिए। इतना विशेष है कि पल्यकी स्थितिवाले देवोंमें उत्पन्न होकर पुरुषवेदका उत्कृष्ट संचय करने-

समयदेवस्स उक्क० पदेसवि० । णवुंस० ओघं । एवं भवण०-वाण०जोदिसियाणं । णवरि सम्मत्तस्स सम्मामिच्छत्तभंगो । तिण्हं वेदाणमुक्क० पदेसवि० कस्स ? जो गुणिदकमेण पूरिदकम्मंसिओ अप्पप्पणो देवेसु उववण्णो तस्स पढमसमयदेवस्स उक्क० पदेसवि० । सोहम्मीसाणेसु देवोघं । सणक्कुमारादि जाव सहस्सारे त्ति देवोघं । णवरि तिण्हं वेदाणं भवणवासियभंगो ।

§ १२९. आणदादि जाव णवगेवज्जा त्ति मिच्छत्त-सोलसक०छण्णोक० उक्क० पदेसवि० कस्स ? जो गुणिदकम्मंसिओ सत्तमादो पुढवीदो उव्वट्टिदसमाणो संखेज्जाणि तिरियभवग्गहणाणि अणुपालेदूण पुणो वासपुधत्ताउओ होदूण मणुस्सेसु उववण्णो सव्वलहुएण कालेण दव्वलिंगमुवणमिय अंतोमुहुत्तमच्छिय कालगदसमाणो अप्पप्पणो देवेसु उववण्णो । तस्स पढमसमयउववण्णस्स उक्क० पदेसविहत्ती । सम्मामि० उक्क० पदेसवि० कस्स ? एसो जीवो चेव अंतोमुहुत्तेण जो सम्मत्तं पडिवण्णो सव्वुकस्सेण पूरणकालेणावूरिदसम्मामिच्छत्तो तिण्हमेक्कदरस्स उदए अवरिदचरिमसमए ट्ठिदस्स तस्स सम्मामि० उक्क० पदेसवि० । सम्मत्तस्स सणक्कुमारभंगो । एवं तिण्हं वेदाणं । णवरि दव्वलिंगि त्ति भाणिदव्वं । अणुद्दिसादि जाव सव्वट्टसिद्धि त्ति मिच्छ०-सम्मामि०-सोलसक०-छण्णोक० उक्क० पदेस० कस्स ?

वाले देवके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है। नपुंसकवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति ओघकी तरह है। इसी प्रकार भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें जानना चाहिये। इतना विशेष है कि सम्यक्त्व प्रकृतिकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति सम्यग्मिथ्यात्वकी तरह जानना चाहिये। तीनों वेदोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति किसके होती है? जो गुणितकर्मांशके क्रमानुसार तीनों वेदोंका उत्कृष्ट संचय करके अपने अपने देवोंमें उत्पन्न हुआ उसके प्रथम समयमें उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है। सौधर्म और ईशान स्वर्गके देवोंमें सामान्य देवोंकी तरह जानना चाहिये। सनत्कुमारसे लेकर सहस्रार स्वर्ग पर्यन्त भी सामान्य देवोंकी तरह जानना चाहिये। इतना विशेष है कि तीनों वेदोंका भङ्ग भवनवासियोंकी तरह होता है।

§ १२९. आनतसे लेकर नव ग्रैवेयकपर्यन्त मिथ्यात्व, सोलह कषाय और छह नोकषायकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति किसके होती है? जो गुणितकर्मांशवाला जीव सातवें नरकसे निकलकर तिर्यञ्चके संख्यात भव धारण करके फिर वर्ष पृथक्त्वकी आयु लेकर मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ। सबसे जघन्य कालके द्वारा द्रव्यलिंगको धारण करके अन्तर्मुहूर्त तक ठहरकर फिर मरण करके अपने अपने देवोंमें उत्पन्न हुआ उसके 'उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है। सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति किसके होती है? इन्हीं जीवोंमेंसे जो अन्तर्मुहूर्तमें सम्यक्त्वको प्राप्त करके सबसे उत्कृष्ट पूरणकालके द्वारा सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतिको प्रदेशोंसे पूर देता है, तीनों प्रकृतियोंमेंसे किसी एकके उदयमें आनेके पूर्व अवशिष्ट अन्तिम समयमें स्थित उस जीवके सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है। सम्यक्त्व प्रकृतिका भंग सानत्कुमार स्वर्गकी तरह होता है। इसी प्रकार तीनों वेदोंका जानना चाहिए। किन्तु द्रव्यलिंगीके कहना चाहिए। अर्थात् उक्त प्रकारसे जो द्रव्यलिंगी मरकर आनतादिकमें उत्पन्न हुआ उसके उक्त विधिके द्वारा वेदोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि पर्यन्त मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह

जो गुणिदकम्मंसिओ अधो सत्तमादो पुढवीदो उव्वट्टिदसमाणो संखेज्जाणि तिरियभवग्गहणाणि जीविदूण पुणो वासपुधत्ताउअमणुस्सेसु उववज्जिय तत्थ सव्वलहुएण कालेण संजमं पडिवज्जिय अंतोमुहुत्तकालेण कालं[1] करिय अप्पप्पणो देवेसु उववण्णो तस्स पढमसमयउप्पण्णदेवस्स उक्क० पदेसविहत्ती। सम्मत्त० देवोघं। तिण्हं वेदाणमुक्क० पदेस० कस्स? जो पूरिदकम्मंसिओ मणुस्सेसु उववज्जिय सव्वलहुं संजमं पडिवज्जिदूण अंतोमुहुत्तेण कालगदसमाणो अप्पप्पणो देवेसु उववण्णो तस्स पढमसमयउववण्णस्स उक्कस्सिया पदेसविहत्ती। एवं जाणिदूण णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

एवमुक्कस्ससामित्तं गदं।

कषाय और छह नोकषायोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति किसके होती है? जो गुणितकर्मांशवाला जीव नीचेकी सातवीं पृथिवीसे निकलकर और तिर्यञ्चोंके संख्यात भव तक जीवित रहकर पुनः वर्षपृथक्त्वकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न होकर वहां अति शीघ्र कालके द्वारा संयमको प्राप्त होकर अन्तर्मुहूर्त कालके भीतर मरकर अपने अपने देवोंमें उत्पन्न हुआ उस देवके उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है। सम्यक्त्व प्रकृतिका भंग सामान्य देवोंके समान है। तीन वेदोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति किसके होती है? जो कर्मांशको पूरकर और मनुष्योंमें उत्पन्न होकर अतिशीघ्र संयमको प्राप्त करके अन्तर्मुहूर्तके भीतर मरकर अपने अपने देवोंमें उत्पन्न हुआ, उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें उसके तीन वेदोंकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है। इस प्रकार जानकर अनाहारक मार्गणा तक ले जाना चाहिए।

विशेषार्थ—यहाँ एक साथ क्रमसे चारों गतियोंमें उत्कृष्ट स्वामित्वका खुलासा करते हैं। यथा—ओघमें बतलाया है कि जो जीव गुणित कर्मांशकी विधिसे आकर कर्मस्थिति कालके भीतर अन्तिम बार तेतीस सागरकी आयु लेकर सातवें नरकमें उत्पन्न हुआ है उस नारकीके भवके अन्तिम समयमें मिथ्यात्व और संज्वलन चारके बिना बारह कषाय और छह नोकषाय की उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है। ओघसे बतलाई गई यह विधि सामान्य नारकियोंके भी बन जाती है, अतः यहां भी उक्त कर्मोंके स्वामित्वका कथन उक्त प्रकारसे किया। यहाँ शेष कर्मोंके उत्कृष्ट स्वामित्वके कथनमें ओघसे कुछ विशेषता है। बात यह है कि ओघसे चार संज्वलनका उत्कृष्ट स्वामित्व क्षपकश्रेणिमें प्राप्त होता है और क्षपकश्रेणि नरकमें सम्भव नहीं, इसलिए इन चारों कषायोंका उत्कृष्ट स्वामित्व भी मिथ्यात्व आदि प्रकृतियोंके समान बतलाया है। यहाँ इतना विशेष जानना कि किसी उच्चारणामें मिथ्यात्वादि प्रकृतियोंका उत्कृष्ट स्वामित्व आयु बन्धके पूर्व बतलाया है, अतः इस मतके अनुसार यहाँ भी उसी प्रकार समझना। ओघसे सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म क्षायिक सम्यक्त्वको प्राप्त करनेवाले गुणितकर्मांश जीवके बतलाया है किन्तु नरकमें क्षायिक सम्यक्त्वकी प्राप्तिका प्रारम्भ नहीं होता, अतः यहाँ मूलमें जो विधि बतलाई है उस विधिसे ही सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेश सत्कर्म प्राप्त होता है। कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि मरकर नरकमें उत्पन्न होता है, अतः गुणितकर्मांशवाले जीवको नरकसे निकालकर और तिर्यंचोंमें भ्रमाकर वर्षपृथक्त्वकी आयुके साथ मनुष्योंमें उत्पन्न कराना चाहिए और वहाँ सम्यक्त्व प्राप्तिकी योग्यता आते ही सम्यक्त्वको प्राप्त कराकर दर्शनमोहनीयकी क्षपणाका प्रारम्भ कराना चाहिये और जैसे

---

१. आ०प्रतौ० 'मुहुत्ता कालं' इति पाठः।

ही यह जीव कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि हो वैसे ही इसे अतिशीघ्र नरकमें उत्पन्न कराना चाहिए। ऐसा करानेसे नरककी अपेक्षा सम्यक्त्व प्रकृतिका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म प्राप्त होता है। यहाँ इतना विशेष जानना कि सम्यक्त्वप्राप्तिके पूर्व नरकायुका बन्ध करा देना चाहिए, क्योंकि सम्यक्त्व प्राप्तिके बाद नरकायुका बन्ध नहीं होता। स्त्रीवेदका उत्कृष्ट संचय असंख्यात वर्षकी आयुवाले तिर्यंच या मनुष्यके होता है, नपुंसकवेदका उत्कृष्ट संचय ईशान स्वर्गके देवके होता है और पुरुषवेदका उत्कृष्ट संचय डेढ़ पल्यकी आयुवाले देवके होता है। इन जीवोंको यथासम्भव शीघ्रसे शीघ्र नरकमें ले जाय तो वहाँ उत्पन्न होनेके पहले समयमें नरककी अपेक्षा उत्कृष्ट संचय प्राप्त हो जाता है। इस प्रकार नरकगतिमें ओघसे सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट संचयका विचार किया। अलग अलग प्रत्येक नरकका विचार करने पर सातवें नरकमें सम्यक्त्व प्रकृतिके उत्कृष्ट संचय को छोड़कर और सब क्रम सामान्य नारकियोंके समान बन जाता है, इसलिए सातवें नरकमें सब प्रकृतियोंका उत्कृष्ट संचय सामान्य नारकियोंके समान कहा। किन्तु कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि जीव सातवें नरकमें नहीं उत्पन्न होता, इसलिये सातवें नरकमें सम्यक्त्व प्रकृतिका उत्कृष्ट संचय सम्यग्मिथ्यात्वके समान कहा। अर्थात् सातवें नरकमें सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशसंचयका जो स्वामी बतलाया है वही जब सम्यक्त्वको प्रदेशोंसे पूर लेता है तो उसके सम्यक्त्वका उत्कृष्ट प्रदेशसंचय होता है। प्रथमादि नरकोंमें उत्कृष्ट संचय को प्राप्त करनेके लिये प्रत्येक प्रकृतिके उत्कृष्ट संचयवाले जीवको उस उस नरकमें ले जाना चाहिये। यही कारण है कि प्रथमादि नरकोंमें सब प्रकृतियोंका उत्कृष्ट संचय उत्पन्न होनेके पहले समयमें कहा। यहाँ इतना विशेष जानना कि पहले मिथ्यात्व, सोलह कषाय और छह नोकषायोंका उत्कृष्ट संचय सातवें नरकमें प्राप्त करावे, स्त्रीवेदका उत्कृष्ट संचय भोगभूमिमें प्राप्त करावे, पुरुषवेदका उत्कृष्ट संचय डेढ़ पल्यकी आयुवाले देवोंमें उत्पन्न करावे और नपुंसकवेदका उत्कृष्ट संचय ईशानस्वर्गमें उत्पन्न करावे और पश्चात् यथाविधि उस उस नरकमें ले जाय जहाँका उत्कृष्ट संचय ज्ञातव्य हो। किन्तु सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट संचय प्राप्त करनेमें कुछ विशेषता है। बात यह है कि पहले सातवें नरकमें मिथ्यात्वका उत्कृष्ट संचय प्राप्त करावे। बादमें उसे तिर्यञ्चोंमें भ्रमाता हुआ अतिशीघ्र उस उस नरकमें ले जाय और उत्पन्न होनेके अन्तर्मुहूर्त बाद सम्यक्त्वको प्राप्त कराके सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक्त्वका उत्कृष्ट संचय प्राप्त कर ले। किन्तु पहले नरकमें कृतकृत्यवेदकसम्यग्दृष्टि भी उत्पन्न होता है, अतः यहां सम्यक्त्वका उत्कृष्ट संचय कृतकृत्यवेदकसम्यग्दृष्टिके कहना चाहिये। अब तिर्यञ्चगतिमें उसका विचार करते हैं। गुणितकर्मांशवाले जीवके सातवें नरकमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और छह नोकषायका उत्कृष्ट संचय होता है। अब यह जीव तिर्यञ्चोंमें उत्पन्न हुआ तो तिर्यञ्चोंके इनका उत्कृष्ट संचय पाया जाता है पर यह उत्कृष्ट संचय पहले समय में ही सम्भव है, अतः तिर्यञ्चके इन कर्मोंका उत्कृष्ट संचय उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें कहा है। इसी प्रकार पुरुषवेद और नपुंसकवेदका उत्कृष्ट संचय भी तिर्यञ्चके उत्पन्न होने के प्रथम समय में घटित कर लेना चाहिये। यहाँ स्त्रीवेदका उत्कृष्ट संचय ओघके समान कहनेका कारण यह है कि ओघसे भोगभूमिमें तिर्यञ्च या मनुष्यके स्त्रीवेदका उत्कृष्ट संचय होता है। अतः तिर्यञ्चके स्त्रीवेदका उत्कृष्ट संचय ओघके समान बन जाता है। अब रही सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति सो कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि जीव भी तिर्यंचोंमें उत्पन्न होता है, अतः ऐसे तिर्यंचके उत्पन्न होनेके पहले समयमें सम्यक्त्वका उत्कृष्ट संचय कहा। तथा सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट संचय उस तिर्यंचके होता है जो सातवें नरकमें मिथ्यात्वका यथासंभव उत्कृष्ट संचय करके तिर्यंचोंमें उत्पन्न हुआ। परन्तु ऐसा जीव

सम्यक्त्वको नहीं प्राप्त होता, अतः उसने तिर्यञ्चके संख्यात भवग्रहण किये और ऐसी अवस्थाको प्राप्त हुआ जिस पर्यायमें सम्यक्त्वको प्राप्त करनेकी योग्यता आ गई। तब उस पर्यायमें सम्यक्त्वको प्राप्त करके सम्यग्मिथ्यात्वका संचय किया। इस प्रकार तिर्यञ्चके सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट संचय प्राप्त हो जाता है। पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च पर्याप्तके उक्त स्वामित्व अविकल बन जाता है, इसलिये इनमें सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट संचयके स्वामित्वको सामान्य तिर्यञ्चोंके समान कहा। यह व्यवस्था योनिमती तिर्यंचोंमें भी बन जाती है परन्तु यहाँ सम्यक्त्व प्रकृतिका अपवाद है। बात यह है कि योनिमती तिर्यञ्चोंमें कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि जीव नहीं उत्पन्न होता, अतः यहाँ सम्यक्त्वका उत्कृष्ट संचय सम्यग्मिथ्यात्वके समान कहा। सातवें नरकसे निकला हुआ जीव सीधा लब्ध्यपर्याप्तक तिर्यञ्च नहीं हो सकता, किन्तु इस पर्यायको प्राप्त करनेके लिए ऐसे जीवको तिर्यञ्चके संख्यात भव लेना पड़ते हैं। यही कारण है कि उच्चारणामें सातवें नरकसे निकलकर तिर्यञ्चोंके संख्यात भव धारण करनेके बाद लब्ध्यपर्याप्तक तिर्यञ्चके उत्पन्न होनेके पहले समयमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और छह नोकषायोंका उत्कृष्ट संचय बतलाया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट संचय प्राप्त करनेके लिए लब्ध्यपर्याप्त पर्यायके पहले पूर्व पर्यायमें सम्यक्त्वको प्राप्त कराना चाहिये और अतिशीघ्र मिथ्यात्वमे ले जाकर गुणश्रेणियोंकी निर्जरा होनेके पहले ही लब्ध्यपर्याप्तक तिर्यञ्चोंमें उत्पन्न करा देना चाहिये। इस प्रकार लब्ध्यपर्याप्तक तिर्यञ्च के उत्पन्न होनेके पहले समयमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट संचय प्राप्त हो जाता है। पहले गुणितकर्मांशवाले जीवके स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेदका उत्कृष्ट संचय क्रमसे भोगभूमिमें, डेढ पल्यकी आयुवाले देवोंमें और ईशान स्वर्गमें करावे। बादमें उसे यथाविधि अतिशीघ्र लब्ध्यपर्याप्तक तियञ्चमें उत्पन्न करावे। इस प्रकार लब्ध्यपर्याप्तक तिर्यञ्चके अपने उत्पन्न होनेके पहले समयमें उत्कृष्ट संचय प्राप्त होता है। लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्यके यह व्यवस्था अविकल बन जाती है, इसलिए इनके सब कर्मोंके उत्कृष्ट संचयको लब्ध्यपर्याप्तक तिर्यञ्चोंके समान कहा। अब मनुष्यगतिमें विचार करते हैं। सातवें नरकसे निकला हुआ जीव सीधा मनुष्य नहीं हो सकता। उसे बीचमें तिर्यञ्चोंकी संख्यात पर्याय लेना पड़ती हैं। इसी कारण सामान्य मनुष्यके मिथ्यात्व, बारह कषाय और छह नोकषायका उत्कृष्ट संचय लब्ध्यपर्याप्त तिर्यञ्चके समान कहा। ओघसे सम्यक्त्व, चार संज्वलन और पुरुषवेदका उत्कृष्ट संचय दर्शनमोहनीयकी क्षपणा और चारित्रमोहनीयकी क्षपणाके समय प्राप्त होता है। यह अवस्था मनुष्यके ही होती है, अतः मनुष्यके उक्त प्रकृतियोंका उत्कृष्ट संचय ओघके समान कहा। तथा स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका उत्कृष्ट संचय क्रमशः भोगभूमि और ईशानस्वर्गमें बतलाया है। इसके वहाँसे च्युत होकर मनुष्योंमें उत्पन्न होने पर मनुष्यके उक्त कर्मोंका उत्कृष्ट प्रदेश संचय होता है। इसीसे स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका उत्कृष्ट संचय प्राप्त करके अनन्तर मरकर मनुष्योंमें उत्पन्न होने पर उत्पन्न होनेके पहले समयमें इन प्रकृतियोंका उत्कृष्ट संचय कहा। सामान्य मनुष्योंके जो व्यवस्था कही है वह मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनीके भी अविकल बन जाती है, अतः इनमें सब प्रकृतियोंका उत्कृष्ट संचय सामान्य मनुष्यके समान कहा। अब देवगतिमें विचार करते हैं। मिथ्यात्व, सोलह कषाय और छह नोकषाय इनका उत्कृष्ट संचय गुणित कर्मांशवाले जीवके सातवें नरकके अन्तिम समयमें होता है। अब इन कर्मोंका सामान्य देवोंमें उत्कृष्ट संचय प्राप्त करना है, इसलिये ऐसे जीवको देवपर्यायमें उत्पन्न कराना चाहिए। पर यह सीधा देव नहीं हो सकता, अतः बीचमें तिर्यञ्च पर्यायके संख्यात भव ग्रहण कराए हैं। यही देव अन्तर्मुहूर्तमें जब सम्यक्त्वको प्राप्त होता है तो इसके सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म प्राप्त हो जाता है। कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि

❀ मिच्छत्तस्स जहण्णपदेससंतकम्मिओ को होदि ?

§ १३०. सुगमं।

❀ सुहुमणिगोदेसु कम्मट्ठिदिमच्छिदाउओ तत्थ सव्वबहुआणि अपज्जत्तभवग्गहणाणि दीहाओ अपज्जत्तद्धाओ तप्पाओग्गजहण्णयाणि जोगट्ठाणाणि अभिक्खं गदो। तदो तप्पाओग्गजहण्णियाए वड्ढीए वड्ढिदो।

जीव देव हो सकता है। नरकमें भी यह व्यवस्था घटित करके बतला आये हैं। अतः देव-सामान्यके सम्यक्त्वका उत्कृष्ट प्रदेशसंचय नारकीके समान कहा। स्त्रीवेदका उत्कृष्ट संचय भोगभूमिया तिर्यञ्चके होता है। अब इसे देवमें प्राप्त करना है अतः यहाँसे देव पर्यायमें ले जाना चाहिये। इसीलिये देवपर्यायके प्रथम समयमें स्त्रीवेदका उत्कृष्ट संचय कहा। पहले देवोंके पुरुषवेदका उत्कृष्ट संचय ओघके समान बतलाया है। पर यह व्यवस्था अविकल नहीं बनती। बात यह है कि ओघसे पुरुषवेदका उत्कृष्ट संचय क्षपकश्रेणीमें होता है और देवोंके क्षपकश्रेणि सम्भव नहीं। सामान्यतः डेढ़ पल्यकी आयुवाले देवके पुरुषवेदका उत्कृष्ट संचय अन्तिम समयमें होता है, अतः यहाँ देवके अन्तिम समयमें पुरुषवेदका उत्कृष्ट संचय कहा। देवके नपुंसकवेदका उत्कृष्ट संचय जो ओघके समान बतलाया है सो यह स्पष्ट ही है। कुछ कर्मोंके उत्कृष्ट संचयको छोड़कर यह सब व्यवस्था भवनत्रिकके भी बन जाती है, इसलिये इनके सम्यक्त्व और तीन वेदोंके सिवा शेष प्रकृतियोंका उत्कृष्ट संचय सामान्य देवोंके समान कहा। यहाँ कृतकृत्य वेदकसम्यग्दृष्टि जीव नहीं उत्पन्न होता, इसलिये भवनत्रिकके सम्यक्त्व का भंग सम्यग्मिथ्यात्वके समान कहा। तथा अपने-अपने स्थानमें स्त्रीवेद आदिका उत्कृष्ट संचय प्राप्त करके और वहाँसे च्युत होकर जब भवनत्रिकमें उत्पन्न होते हैं तब भवनत्रिकमें इनका उत्कृष्ट संचय प्राप्त होता है, इसलिये भवनत्रिकके उत्पन्न होनेके पहले समयमें तीन वेदोंका उत्कृष्ट संचय कहा। सामान्य देवोंके जो व्यवस्था बतलाई है वह सौधर्म और ऐशान स्वर्गमें अविकल बन जाती है, इसलिये इन स्थानोंमें सब प्रकृतियोंका उत्कृष्ट संचय सामान्य देवोंके समान कहा। सनत्कुमारसे लेकर सहस्रारतक भी यही जानना। किन्तु तीन वेदोंका कथन भवनत्रिकके समान है। बात यह है कि तीन वेदोंका उत्कृष्ट संचय सनत्कुमारादिमें तो होता नहीं, अतः अपने-अपने स्थानमें इनका उत्कृष्ट संचय प्राप्त कराके क्रमसे सनत्कुमारा-दिकमें उत्पन्न कराना चाहिये तब सनत्कुमारादिकमें तीन वेदोंका उत्कृष्ट संचय प्राप्त होगा। इसी प्रकार भवनत्रिकमें तीन वेदोंका उत्कृष्ट संचय प्राप्त होता है इसलिये सनत्कुमारादिकमें तीन वेदोंका भंग भवनत्रिकके समान कहा है। आनतादिकमें मनुष्य ही उत्पन्न होता है। इसमें भी नौ ग्रैवेयक तक द्रव्यलिंगी मुनि भी पैदा हो सकता है। और यहाँ उत्कृष्ट संचय प्राप्त कराना है, अतः आनतादिकमें द्रव्यलिंगी मुनी उत्पन्न कराया गया है। शेष कथन सुगम है। किन्तु अनुदिश आदिमें भावलिंगी ही उत्पन्न होता है, किन्तु अधिक निर्जरा न हो जाय इसलिए वर्षपृथक्त्वकी आयुवाले मनुष्यको ही वहाँ उत्पन्न कराना चाहिए।

❀ मिथ्यात्वके जघन्य प्रदेशसत्कर्मवाला कौन होता है ?

§ १३०. यह सूत्र सुगम है।

❀ जो जीव सूक्ष्मनिगोदियोंमें कर्मस्थिति काल तक रहा। वहां उसने अपर्याप्तकके भव सबसे अधिक ग्रहण किये और अपर्याप्तकका काल दीर्घ रहा। तथा निरन्तर अपर्याप्तकके योग्य जघन्य योगस्थानोंसे युक्त रहा। उसके बाद तत्प्रायोग्य जघन्य

जदा जदा आउअं बंधदि तदा तदा तप्पाओग्गउक्कस्सएसु जोगट्ठाणेसु वट्टदि। हेट्ठिल्लीणं ट्ठिदीणं णिसेगस्स उक्कस्सपदेसतप्पाओग्गं उक्कस्स-विसोहिमभिक्खं गदो। जाधे अभवसिद्धियपाओग्गं जहण्णगं कम्मं कदं तदो तसेसु आगदो। संजमासंजमं संजमं सम्मत्तं च बहुसो लद्धो। चत्तारि वारे कसाए उवसामित्ता तदो वेछावट्ठिसागरोवमाणि सम्मत्तमणु-पालिदूण तदो दंसणमोहणीयं खवेदि। अपच्छिमट्ठिदिखंडयमवणिज्ज-माणयमवणिदमुदयावलियाए जं तं गलमाणं तं गलिदं। जाधे एक्किस्से ट्ठिदीए दुसमयकालट्ठिदिगं सेसं ताधे मिच्छत्तस्स जहण्णयं पदेससंतकम्मं।

§ १३१. सुहुमणिगोदेसु कम्मट्ठिदिमच्छिदो त्ति णिद्देसो बादरणिगोदादिसु तदवट्ठाणपडिसेहफलो। ण सुहुमणिगोदेसु कम्मट्ठिदिअवट्ठाणं फलविरहियं, बादरादि-जोगेहिंतो असंखेज्जगुणहीणसुहुमणिगोदजोगेण थोवपदेसेसु आगच्छमाणेसु खविद-कम्मंसियत्तफलोवलंभादो। तत्थ सव्वबहुआणि अपज्जत्तभवग्गहणाणि दीहाओ अपज्जत्तद्धाओ त्ति वयणेण कम्मट्ठिदिं हिंडमाणसुहुमणिगोदस्स भवावासेण सह अद्धावासो परूविदो। किमट्ठमद्धावासो परूविज्जदे? पज्जत्तजोगेहिंतो असंखे०गुणहीण-

---

वृद्धिसे बढ़ा। जब जब आयुका बंध किया तब तब तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट योगस्थानोंमें ही बंध किया। नीचेकी स्थिति निषेकोंको उत्कृष्ट प्रदेशवाला और निरन्तर तत्प्रा-योग्य उत्कृष्ट विशुद्धिको प्राप्त हुआ। जब अभव्यके योग्य जघन्य प्रदेशसत्कर्म हुआ तब त्रसोंमें आगया। वहाँ संयमासंयम, संयम और सम्यक्त्वको अनेकबार प्राप्त किया। चार बार कषायोंका उपशम करके फिर एकसौ बत्तीस सागर तक सम्यक्त्व-को पालकर उसके बाद दर्शनमोहनीयका क्षपण करता है। क्षपण करनेके योग्य अन्तिम स्थितिकाण्डका क्षपण करके उदयावलीमें जो द्रव्य गल रहा है उसको गला-कर जब एक निषेककी दो समय प्रमाण स्थिति शेष रहे तब उसके मिथ्यात्वका जघन्य प्रदेशसत्कर्म होता है।

§ १३१. 'सूक्ष्मनिगोदियोंमें कर्मस्थितिकाल तक रहा' यह निर्देश बादर निगोदिया जीवोंमें उस जीवके रहनेका प्रतिषेध करता है। तथा सूक्ष्मनिगोदियोंमें कर्मस्थिति काल तक रहना निष्फल नहीं है, क्योंकि बादर आदि जीवोंके योग्य योगसे असंख्यातगुणा हीन सूक्ष्म निगोदिया जीवके योग द्वारा थोड़े कर्मप्रदेशोंका आगमन होनेसे क्षपित कर्मांश रूप फल पाया जाता है 'वहाँ उसने अपर्याप्तकके भव सबसे अधिक ग्रहण किए और अपर्याप्तकका काल दीर्घ रहा' ऐसा कहनेसे कर्मस्थिति काल तक भ्रमण करनेवाले सूक्ष्मनिगोदिया जीवके भवावासके भवरूप आवश्यकके साथ-साथ अद्धावास—कालरूप आवश्यक बतलाया है।

शंका—अद्धावास क्यों बतलाया?

अपज्जत्तजोगेहिं थोवकम्मपोग्गलग्गहणट्ठं। तप्पाओग्गजहण्णयाणि जोगट्ठाणाणि अभिक्खं गदो त्ति किमट्ठं वुच्चदे? दीहासु अपज्जत्तद्धासु उक्कस्साणि जोगट्ठाणाणि परिहरिय तप्पाओग्गजहण्णजोगट्ठाणेसु चेव परिभमिदो त्ति जाणावणट्ठं। अपज्जत्तद्धाए एगंताणुवड्ढिजोगेहि वड्ढमाणस्स गुणगारो जहण्णओ उक्कस्सओ वि अत्थि। तत्थ अणप्पिदगुणगारपडिसेहट्ठं तप्पाओग्गजहण्णियाए वड्ढीए वड्ढिदो त्ति भणिदं। एदेण जोगावासो परूविदो। बहुअं मोहणीयदव्वमाउअस्स संचारणट्ठं जदा जदा आउअं बंधदि तदा तदा तप्पाओग्गउक्कस्सएसु जोगेसु वट्टदि[1] त्ति भणिदं। एदेण आउआवासो परूविदो। खविदकम्मंसिए सगोकड्डिदट्ठिदीदो हेट्ठा णिसिंचमाणदव्वं चेव बहुअमिदि जाणावणट्ठं हेट्ठिल्लीणं ट्ठिदीणं णिसेयस्स उक्कस्सपदमिदि भणिदं। हेट्ठा बहुकम्मक्खंधाणं णिसेगो किमट्ठं कीरदे? उदएण बहुपोग्गलणिज्जरणट्ठं। एवं संते कमवड्ढीए गोवुच्छाणमवट्ठाणं फिट्टिदूण पदेसरयणाए अट्ठ-वियट्टत्तं पसज्जदि त्ति चे होदु, इच्छिज्ज-माणत्तादो। एदेण ओकड्डुक्कड्डणावासो परूविदो। तप्पाओग्गमुक्कस्सविसोहिमभिक्खं गदो त्ति किमट्ठं वुच्चदे? कम्मपदेसाणमुवसामणा-णिकाचणा-णिधत्तिकरणाणं

समाधान—पर्याप्तके योगोंसे अपर्याप्तके योग असंख्यातगुणे हीन होते हैं अतः उनके द्वारा थोड़े कर्मपुद्गलोंका ग्रहण करनेके लिए अद्धावासको बतलाया है?

शंका—अपर्याप्तकके योग्य जघन्य योगस्थानोंसे निरन्तर युक्त रहा ऐसा क्यों कहा?

समाधान—दीर्घ अपर्याप्तकालोंमें उत्कृष्ट योगस्थानोंको छोड़कर तत्प्रायोग्य जघन्य में ही भ्रमण किया यह बतलानेके लिए कहा है।

अपर्याप्तकालमें एकान्तानुवृद्धि नामक योगोंके द्वारा वर्धमान जीवका गुणकार जघन्य होता है और उत्कृष्ट भी होता है। उनमेंसे अविवक्षित गुणकारका निषेध करनेके लिए 'तत्प्रायोग्य जघन्य वृद्धिसे बढ़ा' ऐसा कहा है। इससे योगावास बतलाया। मोहनीयको प्राप्त हो सकनेवाले बहुत द्रव्य आयुकर्मको प्राप्त करानेके लिए 'जब जब आयुका बन्ध किया तब तक तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट योगस्थानोंमें ही बन्ध किया' ऐसा कहा। इससे आयुरूप आवास बतलाया। 'क्षपितकर्मांशवाले जीवमें अपनी उत्कर्षित स्थितिकी अपेक्षा नीचे की स्थितिमें स्थापित द्रव्य ही अधिक है' यह बतलानेके लिये 'नीचेकी स्थितिके निषेकोंको उत्कृष्ट प्रदेशवाला किया' ऐसा कहा।

शंका—नीचे बहुत कर्मस्कन्धोंका निक्षेप किस लिए किया जाता है?

समाधान—उदयके द्वारा बहुत कर्मपुद्गलोंकी निर्जरा करानेके लिए किया जाता है।

शंका—ऐसा होने पर अर्थात् यदि नीचे नीचे बहुत कर्मस्कन्धोंका निक्षेप किया जाता है तो क्रमवृद्धिके द्वारा जो प्रदेशरचनाका गोपुच्छरूपसे अवस्थान बतलाया है वह नहीं रहकर प्रदेशरचनाके अस्त व्यस्त होनेका प्रसंग प्राप्त होता है?

समाधान—प्राप्त होता है तो होओ, वह इष्ट ही है।

इससे अपकर्षण-उत्कर्षणरूप आवास बतला दिया।

शंका—'निरन्तर तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट विशुद्धिको प्राप्त हुआ' ऐसा क्यों कहा?

---

१. आ॰तौ 'वड्ढदि' इदि पाठः।

विसोहीए विणासपदुप्पायणट्ठं। एदेण संकिलेसावासो परूविदो। जाधे अभवसिद्धियपाओग्गं जहण्णयं कम्मं कदं तसेसु आगदो त्ति एदेण वयणेण भवियाणमभवियाणं च एदं खविदकम्मंसियलक्खणं साहारणमिदि जाणाविदं। एदिस्से भव्वाभव्वसाहारणखविदकिरियाए कालो कम्मट्ठिदिमेत्तो चेव, कम्मट्ठिदिपढमसमयपबद्धस्स सत्तिट्ठिदीदो उवरि अवट्ठाणाभावादो। सुहुमणिगोदेसु कम्मट्ठिदिमच्छिदो त्ति सुत्तणिद्देसादो वा। संपहि सुहुमेइंदिसु कम्मणिज्जरा एत्तिया चेव वड्ढिमा णत्थि त्ति सम्मत्तादिगुणेण कम्मणिज्जरणट्ठं तसेसु उप्पाइदो। सुहुमणिगोदेसु कम्मट्ठिदिमेत्तकालं ण भमादेदव्वो पलिदो० असंखे०भागमेत्तअप्पदरकाले चेव कम्मक्खंधक्खयदंसणादो। ण चाप्पदरकालो कम्मट्ठिदिमेत्तो, तप्परूवयसुत्तवक्खाणाणमणुवलंभादो त्ति? ण एस दोसो, खविदकम्मंसियम्मि अप्पदरकालादो भुजगारकालस्स संखेज्जगुणहीणत्तणेण मिच्छादिट्ठिक्खविदकम्मंसियकिरियाए कम्मट्ठिदिकालपमाणत्तं पडि विरोहाभावादो। संजमासंजमं संजमं सम्मत्तं च बहुसो लद्धो त्ति किमट्ठं वुच्चदे? गुणसेढीए बहुकम्मणिज्जरणट्ठं। लद्धो सम्मत्तं संजमं संजमासंजमं च बहुसो पडिवण्णो त्ति दट्ठव्वं।

समाधान—विशुद्धिके द्वारा कर्मप्रदेशोंके उपशामनाकरण, निकाचनाकरण और निधत्तिकरणका विनाश करानेके लिए कहा।

इससे संक्लेशरूप आवास बतलाया। 'जब अभव्यके योग्य जघन्य प्रदेश सत्कर्म हुआ तब त्रसोमें आगया' ऐसा कहनेसे 'क्षपितकर्मांशका यह लक्षण भव्य और अभव्य जीवोंके एकसा है, यह बतलाया। भव्य और अभव्य दोनों प्रकारके जीवोंके समान रूपसे होनेवाली इस क्षपित क्रियाका काल कर्मस्थितिमात्र ही है, क्योंकि कर्मस्थितिका प्रथम समयप्रबद्ध सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण शक्तिरूप स्थितिसे अधिक काल तक नहीं ठहर सकता, अथवा सूक्ष्म निगोदिया जीवोंमें कर्मस्थिति काल तक रहा ऐसा सूत्रमें निर्देश है इससे भी सिद्ध है कि क्षपित क्रियाका काल कर्मस्थितिमात्र है।

सूक्ष्म एकेन्द्रियों में इतनी ही कर्मनिर्जरा होती है उसमें वृद्धि नहीं है, इसलिये सम्यक्त्व आदि गुणों के द्वारा कर्मोंकी निर्जरा कराने के लिए त्रसोंमें उत्पन्न कराया है।

शंका—सूक्ष्मनिगोदिया जीवोंमें कर्मस्थितकाल तक भ्रमण नहीं करना चाहिये, क्योंकि पल्य के असंख्यातवें भाग प्रमाण अल्पतरके कालमें ही कर्मस्कन्धोंका क्षय देखा जाता है। शायद कहा जाय कि अल्पतरकाल कर्मस्थिति प्रमाण है, सो भी नहीं है क्योंकि अल्पतर कालको कर्मस्थितिप्रमाण बतलानेवाला न तो कोई सूत्र ही पाया जाता है और न कोई व्याख्यान ही पाया जाता है?

समाधान—यह दोष ठीक नहीं है, क्योंकि क्षपितकर्मांशमें अल्पतरके कालसे भुजगारका काल संख्यातगुणा हीन होनेसे, मिथ्यादृष्टि जीवमें क्षपितकर्मांशकी क्रियाके कर्मस्थिति काल प्रमाण होनेमें कोई विरोध नहीं है।

शंका—संयमासंयम, संयम और सम्यक्त्वको अनेक बार प्राप्त किया ऐसा क्यों कहा?

समाधान—गुणश्रेणीके द्वारा बहुत कर्मोंकी निर्जरा कराने के लिये ऐसा कहा। यहाँ लब्ध शब्दका अर्थ सम्यक्त्व, संयम और संयमसंयमको अनेक बार प्राप्त किया ऐसा

बहुसो त्ति वुत्ते संखेज्जासंखेज्जाणं गहणं कायव्वं णाणंतस्स, सम्मत्त-संजम-संजमासंजम-गहणवाराणमाणंतियाभावादो। सम्मत्त-संजमासंजमगहणवाराणं पमाणं पलिदो० असंखे०भागो। संजमग्गहणवाराणं पमाणं बत्तीसं। अणंताणुबंधिविसंजोयणवारा वि असंखेज्जा चेव। तेण बहुसो त्ति वुत्ते संखेज्जासंखेज्जाणं चेव गहणं कायव्वं। वेयणाए व एत्तिया चेव होंति त्ति परिच्छेदो किण्ण कदो? ण, संपुण्णेसु सम्मत्त-संजम-संजमासंजमकंडएसु भमिदेसु मोक्खगमणं मोत्तूण सम्मत्तगुणेण वेछावट्ठिसागरोवमेसु परिब्भमणाणुववत्तीदो। तेणेत्थ केत्तिएण वि ऊणत्तजाणावणट्ठं बहुसो त्ति णिद्देसो कदो। चत्तारि वारे कसाए उवसामित्ता त्ति किमट्ठं परिच्छेदं कादूण वुच्चदे? चदुक्खुत्तो उवसमसेढिमारुहिय उवसामिदकसाओ वि असंजमं गंतूणं वेछावट्ठिसागरोवमाणि परिभमदि त्ति जाणावणट्ठं। एत्थुवज्जंतीओ गाहाओ—

सम्मत्तुप्पत्ती वि य सावयविरदे अणंतकम्मंसे।
दंसणमोहक्खवए कसायउवसामए य उवसंते॥ २॥

लेना चाहिये।

यहाँ 'अनेकवार' इस पदसे संख्यात और असंख्यातका ही ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि सम्यक्त्व, संयम और संयमासंयमको ग्रहण करनेके बार अनन्त नहीं होते। सम्यक्त्व और संयमासंयमको ग्रहण करनेके बारोंका प्रमाण पल्यके असंख्यातवें भाग है, संयमको ग्रहण करनेके बारों का प्रमाण बत्तीस है और अनन्तानुबन्धीका विसंयोजन करनेके बार भी असंख्यात ही हैं। अर्थात् एक जीव मोक्ष जाने तक अधिकसे अधिक इतनेबार ही सम्यक्त्वादिका धारण और अनन्तानुबन्धीका विसंयोजन कर सकता है। अतः अनेक बार इस पदसे संख्यात और असंख्यातका ही ग्रहण करना चाहिये।

शंका—वेदनाखण्डकी तरह यहां भी इतने बार ही सम्यक्त्वादिक होते हैं ऐसा निर्णय क्यों नहीं कर दिया?

समाधान—नहीं, क्योंकि सम्पूर्ण सम्यक्त्व, संयम और संयमासंयम काण्डकोंमें भ्रमण कर चुकनेपर मोक्ष गमनको छोड़कर सम्यक्त्व गुणके साथ एक सौ बत्तीस सागर तक परिभ्रमण नहीं बन सकता। अतः यहाँ कुछ कम बतलानेके लिये अनेक बार ऐसा कहा।

शंका—चार बार कषायोंका उपशमन करे इस प्रकार निर्णयपूर्वक कथन क्यों किया? अर्थात् जैसे सम्यक्त्वादिके लिये कोई परिमाण न बतलाकर अनेक बार कह दिया है वैसे यहाँ न कहकर चार बार ही क्यों बतलाया?

समाधान—चार बार उपशमश्रेणिपर चढ़कर कषायोंका उपशम कर देनेवाला असंयमी होकर एक सौ बत्तीस सागर तक परिभ्रमण करता है यह बतलानेके लिये कहा है। इस सम्बन्धमें उपयोगी गाथाएँ ये हैं—

सम्यक्त्वकी उत्पत्ति, श्रावक, संयमी, अनन्तानुबन्धीकषायका विसंयोजक, दर्शनमोह क्षपक, कषायोंका उपशामक, उपशान्तमोही, क्षपकश्रेणिवाला, क्षीणमोही और जिन इनके

---

१. ता०प्रतौ 'णिजारणट्ठ'। [लदो] सम्मत्तं' इति पाठः।

खवगे य खीणमोहे जिणे य णियमा भवे असंखेज्जा ।
तव्विवरीदो कालो संखेज्जगुणाए सेढीए ॥ ३ ॥

§ १३२. एदेण पयारेण तिरिक्ख-मणुस्सेसु गुणसेढिं करिय पुणो दसवास-

---

नियमसे उत्तरोत्तर असंख्यातगुणी निर्जरा होती है किन्तु काल उससे विपरीत है। अर्थात् जिनसे लगाकर सम्यक्त्वकी उत्पत्तितक उत्तरोत्तर संख्यातगुणा संख्यातगुणा है ॥ २-३ ॥

विशेषार्थ—प्रथमोपशम सम्यक्त्वके कारण तीन करणोंके अन्तिम समयमें स्थित मिथ्यादृष्टि जीवके कर्मोंकी जो गुणश्रेणिनिर्जराका द्रव्य है उससे देशसंयतके गुणश्रेणि निर्जराका द्रव्य असंख्यातगुणा है। उससे सकलसंयमीके गुणश्रेणिनिर्जराका द्रव्य असंख्यात-गुणा है। इसी प्रकार उससे अनन्तानुबन्धीकषायका विसंयोजन करनेवालेके, उससे दर्शन-मोहका क्षय करनेवालेके, उससे कषायका उपशम करनेवाले आठवें, नौवें और दसवें गुण स्थानवर्तीके, उससे उपशान्तकषाय गुणस्थानवर्तीके, उससे क्षपकश्रेणिके आठवें, नौवें और दसवें गुणस्थानवर्तीके, उससे क्षीणकषाय गुणस्थानवर्तीके और उससे स्वस्थान केवली जिन और समुद्घातकेवली जिनके गुणश्रेणिनिर्जराका जो द्रव्य है वह असंख्यातगुणा असंख्यातगुणा है। गुणश्रेणिनिर्जराका कथन पहले कर आये हैं। अर्थात् डेढ़ गुणहानि प्रमाण संचित द्रव्यमें अपकर्षण भागहारसे भाग देकर लब्ध एक भाग प्रमाण द्रव्यमें पल्यके असंख्यातवें भागका भाग देकर बहुभाग ऊपरको स्थितिमें दो। बाकी बचे एक भागमें असंख्यात लोकका भाग देकर बहुभागको गुणश्रेणि आयाममें दो और अवशेष एक भागको उदयावली में दो। जो द्रव्य उदयावलिमें दिया गया वह वर्तमान समयसे लगाकर एक आवली कालमें जो उदयावलीके निषेक थे उनके साथ खिर जाता है। उदयावलीके ऊपर अन्तर्मुहूर्तप्रमाण गुणश्रेणि होती है। उसमें दिया हुआ द्रव्य अन्तर्मुहूर्त कालके प्रथमादि समयमें जो निषेक पहलेसे मौजूद थे उनके साथ क्रमसे असंख्यातगुणा असंख्यातगुणा होता हुआ खिरता है। अर्थात् ऊपर गुणश्रेणि निर्जराका द्रव्य असंख्यात लोकका भाग देनेसे जो बहुभाग आया तत्प्रमाण कहा है। सो पूर्वमें कहे हुये ग्यारह स्थानोंमें गुणश्रेणिका जो अन्तर्मुहूर्तप्रमाण काल है उसके प्रथम समयसे लेकर अन्तिम समय पर्यन्त उस द्रव्यकी प्रतिसमय असंख्यातगुणी असंख्यातगुणी निषेकरचना की जाती है। इस प्रकार जिस जिस समयमें जितना जितना द्रव्य स्थापित किया जाता है उतना उतना द्रव्य उस उस समयमें निर्जराको प्राप्त होता है। इस तरह गुणश्रेणिके कालमें दिया हुआ द्रव्य प्रति समय असंख्यातगुणा असंख्यातगुणा होकर निर्जीर्ण होता है। यह गुणश्रेणि निर्जराका द्रव्य पूर्वमें कहे गये ग्यारह स्थानोंमें असंख्यात-गुणा असंख्यातगुणा है। इसका कारण यह है कि इन स्थानोंमें विशुद्धता अधिक अधिक है। अतः पूर्वस्थानमें जो अपकर्षण भागहारका प्रमाण होता है उससे आगेके स्थानमें अपकर्षण भागहार असंख्यातवें भाग असंख्यातवें भाग होता जाता है। सो जितना भागहार घटता है उतना ही लब्ध राशिका प्रमाण अधिक अधिक होता जाता है। उसके अधिक होनेसे गुणश्रेणिका द्रव्य भी क्रमसे असंख्यातगुणा होता जाता है। किन्तु उत्तरोत्तर गुणश्रेणिका काल विपरीत है। अर्थात् समुद्घातगत जिनके गुणश्रेणिके कालसे स्वस्थान जिनकी गुणश्रेणिका काल संख्यातगुणा है। उससे क्षीणमोहका संख्यातगुणा है। इसी प्रकार क्रमसे पीछेकी ओर संख्यातगुणा संख्यातगुणा जानना। किन्तु सामान्यसे सबकी गुणश्रेणिका काल अन्तर्मुहूर्त ही है।

§ १३२. इस प्रकारसे तिर्यञ्च और मनुष्योंमें गुणश्रेणीको करके फिर दस हजार वर्षकी

सहस्सियदेवेसुप्पज्जिय पुणो समयाविरोहेण सुहुमेइंदिएसुप्पज्जिय तत्थ पलिदो० असंखे०भागमेत्तं कालं गमिय पुणो समयाविरोहेण मणुस्सेसु उप्पाएदव्वो। एवं पलिदो० असंखे०भागमेत्तासु परिब्भमणसलागासु अदिक्कंतासु पच्छा वेछावट्ठि-सागरोवमाणि भमादेदव्वो आएण विणा वेछावट्ठिसागरोवममब्भंतरट्ठिदीसु ट्ठिद-गोवुच्छाणमधट्ठिदिगलणाए णिज्जरणट्ठं। तदो दंसणमोहणीयं खवेदि त्ति किमट्ठं वुच्चदे? मिच्छत्तस्स दंसणमोहणीयक्खवणाए विणा अपच्छिमट्ठिदिखंडयं णावणिज्जदि त्ति जाणावणट्ठं। उदयावलियाए जं तं गलमाणं तं गलिदं ति णिद्देसो किमट्ठं वुच्चदे? उदयावलियब्भंतरे पविट्ठपदेसाणं गालणट्ठं। जाधे एक्किस्से ट्ठिदीए दुसमयं कालट्ठिदिगं सेसं ताधे मिच्छत्तस्स जहण्णयं पदेससंतकम्मं।

आयुवाले देवोंमें उत्पन्न होकर, फिर आगमानुसार सूक्ष्म एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न होकर वहाँ पल्यके असंख्यातवें भाग कालको बिताकर फिर आगमानुसार उसे मनुष्योंमें उत्पन्न कराना चाहिए। इस प्रकार पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण परिभ्रमण शलाकाओंके बीतने पर पीछे उसे आयके बिना स्थितिमें अधःस्थितिगलनाके द्वारा गोपुच्छोंकी निर्जरा करानेके लिए दो छ्यासठ सागर तक परिभ्रमण कराना चाहिए।

शंका—'उसके बाद दर्शनमोहनीयका क्षपण करता है' ऐसा क्यों कहा?

समाधान—दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके बिना मिथ्यात्वका अन्तिम स्थितिकाण्डक नहीं नष्ट होता यह बतलानेके लिये कहा।

शंका—'उदयावलीमें जो द्रव्य गल रहा है उसे गलाकर' ऐसा क्यों कहा?

समाधान—उदयावलीके अन्दर प्रविष्ट हुए कर्मप्रदेशोंको गलानेके लिये ऐसा कहा।

इस तरह जब एक निषेककी दो समयप्रमाण स्थिति शेष रहती है तब मिथ्यात्वका जघन्य प्रदेशसत्कर्म होता है।

विशेषार्थ—पहले गुणितकर्मांशकी विधि बतला आये हैं। क्षपितकर्मांशकी विधि उसके ठीक विपरीत है। वहाँ गुणितकर्मांशके लिये कर्मस्थितिप्रमाण काल तक बादर पृथिवी-कायिकोंमें उत्पन्न कराया था। यहाँ क्षपितकर्मांशके लिये कर्मस्थितिप्रमाण काल तक सूक्ष्म-निगोदियोंमें उत्पन्न कराया है, क्योंकि अन्य जीवोंके योगसे इनका योग असंख्यातगुणा हीन होता है। इससे इनके अधिक कर्मोंका संचय नहीं होता। सूक्ष्मनिगोदियोंमें उत्पन्न होता हुआ भी यह क्षपितकर्मांशवाला जीव अन्य गुणितकर्मांशवाले आदि जीवोंकी अपेक्षा अपर्याप्तकोंमें बहुत बार उत्पन्न होता है और पर्याप्तकोंमें कम बार उत्पन्न होता है। यहां इस क्षपित-कर्मांशवाले जीवको जो अन्य जीवोंकी अपेक्षा अपर्याप्तकोंमें बहुत बार उत्पन्न कराया गया है सो अपने स्वयंके पर्याप्त भवोंकी अपेक्षा नहीं, क्योंकि स्वयंके पर्याप्त भवोंकी अपेक्षा अपर्याप्त भव थोड़े होते हैं। खुलासा इस प्रकार है—दोइन्द्रिय यदि अपर्याप्तकोंमें निरन्तर उत्पन्न होता है तो अधिकसे अधिक अस्सी बार उत्पन्न होता है। तेइन्द्रिय साठ बार, चौइन्द्रिय चालीस बार और पञ्चेन्द्रिय चौबीस बार निरन्तर अपर्याप्तकोंमें उत्पन्न होता है। किन्तु दोइन्द्रिय पर्याप्तकी उत्कृष्ट स्थिति बारह वर्ष, तेइन्द्रिय पर्याप्तककी उत्कृष्ट स्थिति उनचास दिन, चौइन्द्रिय पर्याप्तककी उत्कृष्ट स्थिति छह महीना और पञ्चेन्द्रिय पर्याप्तककी उत्कृष्ट स्थिति

तेतीस सागर बतलाई है। अब यदि दोइन्द्रिय पर्याप्तकोंके निरन्तर उत्पन्न होनेके बार अस्सी लिये जाते हैं तो कुल ९६० वर्ष प्राप्त होते हैं। इसी प्रकार तेइन्द्रिय पर्याप्तकके लगातार उत्पन्न होनेके कुल भव साठ लिये जाते हैं तो कुल आठ वर्ष दो माह प्राप्त होते हैं और चौइन्द्रिय पर्याप्तकके लगातार उत्पन्न होनेके कुल भव चालीस लिये जाते हैं तो कुल बीस वर्ष प्राप्त होते हैं परन्तु कालानुयोगद्वारमें एक जीवकी अपेक्षा इनकी उत्कृष्ट कायस्थिति संख्यात हजार वर्ष कही है। इससे स्पष्ट है कि विकलत्रयके पर्याप्त भवोंकी अपेक्षा अपर्याप्त भव कम होते हैं। इस प्रकार जो बात विकलत्रयकी है वही बात अन्य जीवोंकी भी जानना। इससे स्पष्ट है कि यहाँ क्षपित कर्मांशवाले निगोदिया जीवके अपने पर्याप्त भवोंकी अपेक्षा अपर्याप्तक भव अधिक नहीं लिये हैं किन्तु गुणितकर्मांशवाले आदि जीवोंके जितने अपर्याप्त भव होते हैं उनकी अपेक्षा यहां अपर्याप्त भव अधिक लिये हैं। तथा इस क्षपितकर्मांशवाले जोवके अपर्याप्त काल अधिक होता है और पर्याप्तकाल थोड़ा। इसका यह तात्पर्य है कि गुणितकर्मांश आदि वाले जीवको जितना अपर्याप्तकाल प्राप्त होता है उससे इसका अपर्याप्तकाल काल बड़ा होता है और उनके पर्याप्त कालसे इसका पर्याप्त छोटा होता है। इसका अपर्याप्त काल बड़ा बतलानेका कारण यह है कि पर्याप्त कालके योगसे अपर्याप्त कालका योग असंख्यातगुणा हीन होता है और इससे अधिक कर्मोंका संचय नहीं होता। सूक्ष्म निगोदिया जीवके जघन्य योगस्थान भी होता है और उत्कृष्ट योगस्थान भी होता है। यतः यह क्षपितकर्मांशवाला जीव है अतः इसे निरन्तर यथासम्भव जघन्य स्थान प्राप्त कराया है। इसका यह तात्पर्य है कि जब जघन्य योगस्थानोंको प्राप्त करनेके बार पूरे हो जाते हैं तब यथासम्भव उत्कृष्ट योगस्थानको भी प्राप्त होता है। इसका भी फल कर्मोंका कम संचय कराना है। इसके योगस्थानोंकी जघन्य और उत्कृष्ट दोनों वृद्धियां सम्भव हैं, अतः उत्कृष्ट वृद्धिका निषेध करनेके लिये जघन्य वृद्धिका विधान किया है। इस क्षपितकर्मांशवाले जीवके मोहनीयको कम कर्मपरमाणु प्राप्त हों इसलिये इसके सदा आयुबन्ध उत्कृष्ट योगसे कराया। क्षपितकर्मांशवाला जीव गुणितकर्मांशवाले जीवकी अपेक्षा अपकर्षण अधिक कर्मोंका करता है जिससे निरन्तर अधिक कर्मोंकी निर्जरा होती रहती है यह बतलानेके लिये नीचेकी स्थितियोंको अधिक प्रदेशवाला कराया है। अधिकतर बहुतसे कर्म संक्लेशकी अधिकतासे उपशम, निधत्ति और निकाचनारूप रहे आते हैं। यतः यह क्षपितकर्मांश जीव है अतः इसके इन भावोंका निषेध करनेके लिये सदा विशुद्ध परिणामोंकी बहुलता बतलाई है। इस प्रकार पूर्वोक्त छह आवश्यकोंके द्वारा सूक्ष्म निगोदियोंमें कर्मस्थिति काल तक परिभ्रमण कराने पर जब इसका अभव्योंके योग्य जघन्य प्रदेशसत्कर्म हो जाता है तब सम्यक्त्वादि गुणोंके द्वारा कर्मोंकी और निर्जरा करानेके लिये इसे त्रसोंमें उत्पन्न कराना चाहिये। वेदनाखण्डमें इसे पहले बादर पृथिवीकायिक पर्याप्तकोंमें उत्पन्न कराया है। वहां यह प्रश्न किया गया है कि सूक्ष्मनिगोदसे निकालकर इसे सीधा मनुष्योंमें क्यों नहीं उत्पन्न कराया है? तो वीरसेन स्वामीने वहां इस प्रश्नका यह समाधान किया है कि यदि सूक्ष्म निगोदसे निकालकर सीधा मनुष्योंमें उत्पन्न कराया जाता है तो वह केवल सम्यक्त्व और संयमासंयमको ही ग्रहण कर सकता है तब भी इनको अतिशीघ्र ग्रहण न करके ऐसे जीवको इनके ग्रहण करनेमें अधिक काल लगता है, इसलिये इसे पहले बादर पृथिवीकायिक पर्याप्तकोंमें उत्पन्न कराया है। इस पर पुनः प्रश्न उठा कि तो केवल बादर पृथिवीकायिकोंमें ही क्यों उत्पन्न कराया गया है तो इसका वीरसेन स्वामीने यह समाधान किया है कि जलकायिक आदिसे जो मनुष्यमें उत्पन्न होता है वह अतिशीघ्र संयम आदिको नहीं ग्रहण कर सकता, अतः सर्व प्रथम बादर पृथिवीकायिक पर्याप्तकोंमें ही उत्पन्न

कराया है।

इस प्रकार जब यह जीव त्रसोंमें उत्पन्न हो जाय तो वहाँ संयमासंयम, संयम और सम्यक्त्वको अनेक बार प्राप्त करावे और बार बार कषायका उपशम करावे। यह नियम है कि एक जीव पल्यके असंख्यातवें भाग बार संयमासंयम और सम्यक्त्वको प्राप्त हो सकता है और बत्तीस बार संयमको प्राप्त हो सकता है। पर यहाँ इस प्रकारकी संख्याका निर्देश नहीं किया जब कि वेदनाखण्डमें इसी प्रकरणमें इस प्रकारकी संख्याका स्पष्ट निर्देश किया है? यहां संख्याका निर्देश न करनेका कारण यह है कि आगे चलकर इस जीवको सम्यक्त्वके साथ एक सौ बत्तीस सागर काल तक परिभ्रमण और कराया है। अब यदि यह जीव सम्यक्त्व आदिको अधिकसे अधिक जितनी बार प्राप्त करना चाहिये उतनी बार प्राप्त करले तो फिर इसका एक सौ बत्तीस सागर काल तक सम्यक्त्वके साथ और परिभ्रमण करना सम्भव नहीं हो सकता। यही कारण है कि यहां स्पष्टतः संख्याका निर्देश नहीं किया है। किन्तु वेदनाखण्डमें ऐसे जीवको अलगसे सम्यक्त्वके साथ एक सौ बत्तीस सागर काल तक परिभ्रमण नहीं कराया है, इसलिये वहाँ संख्याका निर्देश स्पष्टतः कर दिया है। इस प्रकार उक्त क्रिया कर लेनेके बाद एक सौ बत्तीस सागर काल तक सम्यक्त्वके साथ परिभ्रमण करावे यह चूर्णिसूत्रमें बतलाया है पर वीरसेन स्वामी इसकी टीका करते हुए लिखते हैं कि इन दोनोंके बीचमें पहले इसे दस हजार वर्षकी आयु वाले देवोंमें उत्पन्न करावे। अनन्तर यथाविधि सूक्ष्म एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न करावे। यहाँ यथाविधि या समयाविरोधसे लिखनेका कारण यह है कि देव मर कर सीधा सूक्ष्म एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न नहीं होता, अतः पहले उसे अन्यत्र उत्पन्न कराना चाहिये और बादमें सूक्ष्म एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न करावे। यहां रहकर यह पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कालके द्वारा पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितिकाण्डकोंका घात करता है। एक स्थितिकाण्डक घातके लिये अन्तर्मुहूर्त काल लगता है, इसलिये पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितिकाण्डकोंका घात करनेके लिये भी पल्यका असंख्यातवां भागप्रमाण काल लगेगा, क्योंकि पल्यके असंख्यातवें भागको एक अन्तर्मुहूर्तसे गुणित करने पर भी पल्यका असंख्यातवां भाग ही प्राप्त होता है। इसके बाद इस सूक्ष्म एकेन्द्रियको यथाविधि मनुष्योंमें उत्पन्न करावे और पश्चात् एक सौ बत्तीस सागर कालतक सम्यक्त्वके साथ परिभ्रमण करावे। तदनन्तर दर्शनमोनीयका क्षय कराते हुए मिथ्यात्वका जघन्य प्रदेशसत्कर्म प्राप्त करे। वेदनाखण्डमें पल्यका असंख्यातवां भागकम कर्मस्थितिप्रमाण कालतक सूक्ष्म एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न करानेके बाद क्रमशः बादर पृथिवीकायिकोंमें, मनुष्योंमें, दस हजार वर्षकी आयुवाले देवोंमें, बादर पर्याप्त पृथिविकायिकोंमें उत्पन्न कराया है। यहाँ मनुष्यों और देवोंमें क्रमसे संयम और सम्यक्त्वको भी प्राप्त कराया है। अनन्तर सूक्ष्म पर्याप्त निगोदियोंमें उत्पन्न कराकर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितिकाण्डकोंका घात करनेके लिये पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कालतक वहीं रहने दिया है। अनन्तर बादर पृथिवीकायिकोंमें उत्पन्न कराकर फिर त्रसोंमें उत्पन्न कराया है और यहां पल्यके असंख्यातवें भागबार संयमासंयमको इतने ही बार सम्यक्त्वको, बत्तीस बार संयमको और चार बार उपशमश्रेणिको प्राप्त कराया है। फिर अन्त में एक पूर्वकोटिकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न कराकर और अतिशीघ्र संयमको प्राप्त कराकर जीवन भर संयमके साथ रखा है और जब अन्तर्मुहूर्त काल शेष रहा तब दर्शनमोहनीयका क्षय कराते हुए मिथ्यात्वका जघन्य प्रदेशसत्कर्म प्राप्त किया गया है। इस प्रकार वेदनाखण्डके कथनको और चूर्णिसूत्रके कथनको मिलाकर पढ़ने पर जो विशेषता ज्ञात होती है उसका कोष्ठक इस प्रकार है—

§ १३३. एत्थ सामित्तट्ठिदीए कम्मट्ठिदिपढमसमयप्पहुडि पलिदो० असंखे०-भागेणब्भहियवेछावट्ठिसागरोवमेसु बद्धदव्वस्स एगो वि परमाणू णत्थि; कम्मट्ठिदि-बाहिरे पलिदो० असंखे०भागेणब्भहियवेछावट्ठिसागरोवमकालं परिभमियत्तादो। तत्तो बाहिं परिभमिदो त्ति कुदो णव्वदे ? अभवसिद्धियपाओग्गं जहण्णयं कम्मं कदो तदो तसेसु आगदो त्ति सुत्तादो। ण च सुहुमेइंदिएसु खविदकम्मंसियलक्खणेण कम्मट्ठिदि-मणच्छिदभवसिद्धियजीवस्स संतकम्ममभवसिद्धियजहण्णसंतकम्मेण समाणं होदि,

चूर्णिसूत्र		वेदनाखण्ड	
स्वामी	काल	स्वामी	काल
सूक्ष्मएकेन्द्रिय	कर्म स्थितिप्रमाण	सूक्ष्म एकेन्द्रिय	पल्यका असंख्यातवाँ भाग कम कर्मस्थितिप्र०
त्रस	संयमासंयम, संयम और सम्यक्त्वको अनेक बार प्राप्त किया चार बार कषायका उपशम किया।	बादर पृथिवी पर्याप्त मनुष्य	...... पूर्व कोटि
देव	दस हजार वर्ष	देव	दस हजार वर्ष
बादर पृथिवी कायिक पर्याप्त	......	बादर पृथिवी पर्याप्त	......
सूक्ष्म एकेन्द्रिय	पल्यका असख्यातवाँ भाग	सूक्ष्म एकेन्द्रिय	पल्यका असंख्यातवाँ भाग
बादर पृथिवी कायिक पर्याप्त	......	बादर पृथिवी पर्याप्त	......
मनुष्य	आठ वर्ष अन्तर्मुहूर्त	त्रस	पल्यके असंख्यातवें भाग बार संयमासंयम और सम्यक्त्व, ३२ बार संयम और चार बार कषायका उपशम
सम्यक्त्वके साथ	१३२ सागर	मनुष्य	एक पूर्वकोटि

§ १३३. स्वामित्वविषयक इस निषेकमें कर्मस्थितिके प्रथम समयसे लेकर पल्यके असंख्यातवें भाग अधिक दो छयासठ सागरमें बाँधे गये द्रव्यका एक भी परमाणु नहीं है; क्योंकि वह जीव कर्मस्थिति कालसे बाहर अर्थात् उससे अतिरिक्त पल्यके असंख्यातवें भाग अधिक दो छयासठ सागर काल तक घूमा है।

शंका—वह जीव कर्मस्थिति कालसे बाहर भी घूमा है। यह कैसे जाना ?

समाधान—अभव्यके योग्य जघन्य प्रदेशसत्कर्म करके फिर त्रसोंमें आगया इस सूत्रसे जाना।

तथा जो भव्य जीव सूक्ष्म एकेन्द्रियोंमें क्षपितकर्मांशकी विधिके साथ कर्मस्थितिकाल तक नहीं रहा उसका सत्कर्म अभव्य जीवके जघन्य सत्कर्मके समान नहीं होता, क्योंकि उसके

कम्मट्ठिदिपढमसमयप्पहुडि पलिदो० असंखे०भागमेत्तसमयपबद्धाणं कम्मक्खंधेहि अब्भहियस्स समाणत्तविरोहादो। णिल्लेवणट्ठाणमेत्तसमयपबद्धा वि णियमा अत्थि; तदसंभवपक्खग्गहणेण विणा जहण्णदव्वत्ताणुववत्तीदो। तेण अवसेसकम्मट्ठिदीए बद्धासेससमयपबद्धाणं परमाणू जहण्णदव्वम्मि अत्थि त्ति सिद्धं। घडदि एदं सव्वं पि जदि कम्मट्ठिदिमेत्तो अप्पदरकालो खविदकम्मंसियम्मि होज्ज ? ण च एवं, तस्स पलिदोवमस्स असंखे०भागपमाणत्तादो। ण च भुजगारकाले खविदकम्मंसिओ संभवइ, समयं पडि वड्ढमाणकम्मक्खंधस्स खविदकम्मंसियत्तविरोहादो। तम्हा सामित्तसमए अप्पदरकालमेत्तसमयपबद्धाणं चेव पदेसेहि होदव्वमिदि ? ण एस दोसो, खविदकम्मंसियकालब्भंतरे भुजगारप्पदरकालाणं दोण्हं पि संभवेण खविदकम्मंसियकालस्स कम्मट्ठिदिपमाणत्तं पडि विरोहाभावादो। ण च भुजगारकालेण खविदकम्मंसियभावस्स विरोहो; भुजगारकालसंचिददव्वादो तत्तो संखेज्जगुणअप्पदरकालेण संचयादो असंखेज्जगुणं दव्वं णिज्जरेंतस्स विरोहाभावादो।

§ १३४. वेयणाए पलिदो० असंखे०भागेणूणियं कम्मट्ठिदिं सुहुमेइंदिएसु हिंडाविय तसकाइएसु उप्पाइदो। एत्थ पुण कम्मट्ठिदिं संपुण्णं भमाडिय तसत्तं णीदो,

---

कर्मस्थितिके प्रथम समयसे लेकर पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण समयप्रबद्धोंके कर्मस्कन्ध अधिक होते हैं, अतः उन्हें अभव्योंके समान माननेमें विरोध आता है। तथा उसके निर्लेपनस्थानप्रमाण समयप्रबद्ध भी नियमसे हैं, क्योंकि उसके असम्भवरूप पक्षको ग्रहण किये बिना जघन्य द्रव्यपना नहीं बन सकता, अतः बाकी बची कर्मस्थितिमें बाँधे गये सब समयप्रबद्धोंके परमाणु जघन्य द्रव्यमें हैं यह सिद्ध हुआ।

शंका—यदि क्षपितकर्मांशमें अल्पतरका काल कर्मस्थितिप्रमाण होता तो यह सब घट सकता था। किन्तु ऐसा नहीं है; क्योंकि उसका प्रमाण पल्यके असंख्यातवें भाग है और भुजगारके कालमें क्षपितकर्मांश होना संभव नहीं है; क्योंकि भुजगारके कालके भीतर प्रति समय कर्मस्कन्ध बढ़ता रहता है, अतः उसके क्षपितकर्मांशरूप होनेमें विरोध आता है। अतः स्वामित्वकालमें अल्पतर कालप्रमाण समयप्रबद्धोंके ही प्रदेश होने चाहिये ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है; क्योंकि क्षपितकर्मांशके कालके भीतर भुजगार और अल्पतर दोनों ही काल संभव होनेसे क्षपितकर्मांशके कालके कर्मस्थितिप्रमाण होनेमें कोई विरोध नहीं आता। शायद कहा जाय कि क्षपितकर्मांशरूप भावका भुजगार कालके साथ विरोध है सो भी बात नहीं है; क्योंकि भुजगारके कालसे अल्पतरका काल संख्यातगुणा है, अतः भुजगारके कालमें जितने द्रव्यका संचय होता है उससे असंख्यातगुणे द्रव्यकी अल्पतरके कालमें निर्जरा हो जाती है। अतः क्षपितकर्मांशपनेका भुजगारके कालके साथ विरोध नहीं है।

§ १३४. वेदनाखण्डमें पल्यके असंख्यातवें भाग कम कर्मस्थितिप्रमाण कालतक सूक्ष्म एकेन्द्रियोंमें भ्रमण कराकर फिर त्रसकायिकोंमें उत्पन्न कराया है और यहाँ सम्पूर्ण कर्मस्थिति काल तक भ्रमण कराकर त्रसपर्यायको प्राप्त कराया है, अतः दोनों सूत्रोंमें जिस रीतिसे

तदो दोण्हं सुत्ताणं जहाविरोहो तहा[1] वत्तव्वमिदि। जइवसहाइरिओवएसेण खविद-कम्मंसियकालो कम्मट्ठिदिमेत्तो सुहुमणिगोदेसु कम्मट्ठिदिमच्छिदाउओ त्ति सुत्त-णिद्देसण्णहाणुववत्तीदो। भूदबलिआइरियोवएसेण पुण खविदकम्मंसियकालो पलिदोवमस्स असंखे०भागेणूणकम्मट्ठिदिमेत्तो[2]। एदेसिं दोण्हमुवदेसाणं मज्झे सच्चेणेक्केणेव होदव्वं। तत्थ सच्चत्तणेगदरणिण्णओ णत्थि त्ति दोण्हं पि संगहो कायव्वो।

§ १३५. संपहि एदस्स सुत्तस्स भावत्थो वुच्चदे। तं जहा—खविदकम्मंसियलक्खणेणा-गंतूण असण्णिपंचिंदिएसु देवेसु च उप्पज्जिय तत्थ देवेसु उवसमसम्मत्तं पडिवज्जमाण-काले उक्कस्सअपुव्वकरणपरिणामेहि गुणसेढिणिज्जरं काऊण तदो अणियट्टिपरिणामेहि मि असंखेज्जगुणाए[3] सेढीए कम्मणिज्जरं काऊण पढमसम्मत्तं पडिवज्जिय उवसम-सम्मत्तद्धाए उक्कस्सगुणसंकमकालेण सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणि आवूरिय वेदगसम्मत्तं घेत्तूण पुणो अणंताणुबंधिचउक्कं विसंजोजिय वेछावट्ठिसागरोवमाणि भमिय पुणो दंसणमोहक्खवणद्धाए जहण्णअपुव्वपरिणामेहि गुणसेडिं काऊण उदयावलियबाहिर-मिच्छत्तचरिमफालिं सम्मामिच्छत्तस्सुवरि संछुहिय दुसमयूणावलियमेत्तगुणसेडि-गोवुच्छाओ गालिय पुणो दुसमयकालपमाणाए एयणिसेयट्ठिदीए सेसाए मिच्छत्तस्स जहण्णयं पदेससंतकम्मं। कुदो? कम्मट्ठिदिआदिसमयप्पहुडि पलिदो० असंखे०-

विरोध न आवे उस रीतिसे कथन करना चाहिये। आचार्य यतिवृषभके उपदेशके अनुसार क्षपितकर्मांशका काल कर्मस्थितिप्रमाण है, क्योंकि सूत्रमें सूक्ष्म निगोदियोंमें कर्मस्थिति काल तक रहा ऐसा निर्देश अन्यथा बन नहीं सकता और भूतबलि आचार्यके उपदेशके अनुसार क्षपितकर्मांशका काल पल्यका असंख्यातवाँ भाग कम कर्मस्थितिप्रमाण है। इन दोनों उपदेशोंमें से एक ही उपदेश सत्य होना चाहिए। किन्तु उनमेंसे एक कौन सत्य है यह निश्चय नहीं है, अतः दोनों ही उपदेशोंका संग्रह करना चाहिये।

§ १३५. अब इस चूर्णिसूत्रका भावार्थ कहते हैं। वह इस प्रकार है—क्षपितकर्मांश विधिसे आकर असंज्ञी पञ्चेन्द्रियों और देवोंमें उत्पन्न हुआ। वहाँ देवोंमें उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त होनेके कालमें उत्कृष्ट अपूर्वकरणरूप परिणामोंके द्वारा गुणश्रेणिनिर्जराको करके फिर अनिवृत्तिकरणरूप परिणामोंके द्वारा भी असंख्यातगुणी श्रेणिके द्वारा कर्मोंकी निर्जरा करके प्रथमोपशम सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ। पुनः उपशमसम्यक्त्वके कालमें गुणसंक्रमके उत्कृष्ट कालके द्वारा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वको पूरकर फिर वेदकसम्यक्त्वको ग्रहण किया। फिर अनन्तानुबन्धीचतुष्कका विसंयोजन करके दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण किया। फिर दर्शनमोहके क्षपणकालमें जघन्य अपूर्वकरणरूप परिणामोंके द्वारा गुणश्रेणीको करके उदयावली-के बाहरकी मिथ्यात्वकी अन्तिम फालीको सम्यग्मिथ्यात्वमें संक्रमण कर तथा दो समय कम आवलि प्रमाण गुणश्रेणिगोपुच्छाओंका गालन कर जब दो समय कालवाली एक निषेकस्थिति शेष रहती है तब मिथ्यात्वका जघन्य प्रदेशसत्कर्म होता है, क्योंकि जघन्य प्रदेशसत्कर्मके स्वामित्वके अन्तिम समयमें कर्मस्थितिके प्रथम समयसे लेकर पल्योपमके असंख्यातवें भाग

१. आ०प्रतौ 'जहाविरोहा तहा' इति पाठः। २. आ०प्रतौ '-भागेणूणं कम्मट्ठिदिमेत्तो' इति पाठः। ३. ता०प्रतौ 'अणियट्टिपरिणामेहि [म्मि] असंखेज्जगुणाए' आ०प्रतौ 'अणियट्टिपरिणामेहिम्मि असंखेज्ज-गुणाए' इति पाठः।

भागेणब्भहियवेछावट्ठिसागरोवममेत्तसमयपबद्धाणं सामित्तचरिमसमए एगपरमाणुस्स वि अभावादो अप्पिदएगणिसेगट्ठिदिं मोत्तूण सेसणिसेगट्ठिदीसु ट्ठिदमिच्छत्तसव्वपदेसाणं परपयडिसंकमेण अधट्ठिदिगलणेण च विणट्ठत्तादो च।

१३६. संपहि एदम्मि जहण्णदव्वे पयडिगोवुच्छाए पमाणाणुगमं कस्सामो। तंजहा–एगम्मि एइंदियसमयपबद्धे दिवड्ढगुणहाणीए गुणिदे एइंदिएसु संचिददव्वं होदि। तम्मि अंतोमुहुत्तोवट्टिदओकड्डुक्कड्डणभागहारेण ओवट्टिदे उक्कड्डिददव्वपमाणं होदि। उक्कड्डिददव्वेण विणा एइंदिएसु संचिददव्वेण सह वेछावट्ठिसागरोवमाणि किण्ण भमाडिज्जदे? ण, मिच्छत्तपरमाणूणं देसूणसागरोवममेत्तट्ठिदीणं वेछावट्ठिसागरोवम-मेत्तकालावट्ठाणविरोहादो। पुणो अंतोकोडाकोडिअब्भंतरणाणागुणहाणिसलागासु विरलिय विगुणिय अण्णोण्णगुणिदासु जा समुप्पण्णरासी ताए रूवूणाए वेछावट्ठिसागरो-वमूणअंतोकोडाकोडीए अब्भंतरणाणागुहाणिसलागासु विरलिय विगुणिय अण्णोण्णेण गुणिय रूवूणोकदासु उप्पण्णरासिणा ओवट्टिदाए जं लद्धं तेण उक्कड्डिददव्वे ओवट्टिदे

अधिक दो छ्यासठ सागर प्रमाण समयप्रबद्धोंका एक भी परमाणु नहीं पाया जाता तथा विवक्षित एक निषेक की स्थितिको छोड़कर शेष निषेकोंकी स्थितियोंमें स्थित मिथ्यात्वके सब प्रदेशोंका परप्रकृतिरूप संक्रमणके द्वारा व अधःस्थितिगलनाके द्वारा विनाश हो जाता है।

विशेषार्थ—पहले उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मको बतलाते हुए गुणितकर्मांशकी सामग्री और प्रकार बतला आये हैं अब जघन्य प्रदेशसत्कर्मको बतलाते हुए क्षपितकर्मांशका प्रकार बतलाया है कि किस तरह कोई जीव कर्मोंका क्षपण करके मिथ्यात्वके जघन्य प्रदेशसत्कर्मका स्वामी हो सकता है। उत्कृष्ट संचयकी पहले जो सामग्री कही है उससे बिल्कुल विपरीत जघन्य प्रदेशशत्कर्मकी सामग्री है। उसमें यही ध्यान रखा गया है कि किस प्रकार कर्मोंका अधिक संचय नहीं होने पावे। इसलिये सूक्ष्म एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न कराकर वहां अपर्याप्तके भव अधिक बतलाये हैं और योगस्थान भी जघन्य ही बतलाया है। तथा आयुबन्ध उत्कृष्ट योगके द्वारा बतलाया है। इसी प्रकार आगे भी समझना।

§ १३६. अब इस जघन्य द्रव्यमें प्रकृति गोपुच्छाका प्रमाण बतलाते हैं। वह इस प्रकार है—एकेन्द्रियसम्बन्धी एक समयप्रबद्धको डेढ़ गुणहानिसे गुणा करने पर एकेन्द्रियोंमें संचित हुए द्रव्यका प्रमाण होता है। उस संचित द्रव्यमें अन्तर्मुहूर्तसे भाजित अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारसे भाग देने पर उत्कर्षित द्रव्यका प्रमाण होता है।

शंका—उत्कर्षित द्रव्यके बिना एकेन्द्रियोंमें संचित हुए द्रव्यके साथ दो छ्यासठ सागर तक भ्रमण क्यों नहीं कराया जाता?

समाधान—नहीं, क्योंकि कुछ कम एक सागर प्रमाण स्थितिवाले मिथ्यात्वके परमाणुओं के दो छ्यासठ सागर तक ठहरनेमें विरोध आता है। फिर अन्तःकोड़ाकोड़ीके भीतर जो नाना गुणहानि शलाकाएँ हैं उनका विरलन करके और उन विरलन अंकोंको द्विगुणित करके परस्पर गुणा करनेसे जो राशि उत्पन्न हो उसमें एक कम करो। और दो छ्यासठ सागर कम अन्तःकोड़ाकोड़ी सागरके भीतर जो नानागुणहानिशलाकाएँ हों उनके विरलन अंकोंको द्विगणित करके परस्पर गुणा करनेसे जो जो राशि उत्पन्न हो एक कम करके उस

वेछावट्ठिसागरोवमेसु गलिदसेसदव्वं होदि। पुणो दिवड्ढगुणहाणिणा तम्मि ओवट्टिदे पयडिगोवुच्छा आगच्छदि।

राशिसे पूर्वोत्पन्न राशिमें भाग देने पर जो लब्ध आवे उससे उत्पकर्षित द्रव्यमें भाग देने पर दो छयासठ सागरमें गलितसे बाकी बचे द्रव्यका प्रमाण होता है। फिर उस द्रव्यमें डेढ़ गुणहानिसे भाग देने पर प्रकृतिगोपुच्छा आती है।

विशेषार्थ—पहले जो मिथ्यात्वका जघन्य द्रव्य बतला आए हैं उसमें प्रकृतिगोपुच्छा और विकृतिगोपुच्छा इस तरह दोनों प्रकारकी गोपुच्छाएँ पाई जाती हैं। गोपुच्छाका अर्थ गायकी पूँछ है। जैसे गायकी पूँछ उत्तरोत्तर पतली होती जाती है वैसे ही कर्मनिषेक एक एक गुणहाणिके प्रति उत्तरोत्तर एक एक चय कम होनेसे उनकी रचनाका आकार भी गायकी पूँछके समान हो जाता है। जो निषेक रचना स्वाभाविक होती है उसे प्रकृति गोपुच्छा कहते हैं। स्वाभाविकका अर्थ है बन्धके समय जो निषेक रचना हुई है प्रायः वह। अपकर्षण या उत्कर्षण द्वारा जो कर्मपरमाणु नीचे ऊपर होते रहते हैं या संक्रमण द्वारा जो कर्म परप्रकृतिरूप होते हैं उनसे प्रकृतिगोपुच्छाकी हानि नहीं मानी गई है, क्योंकि उनके ऐसा होनेका कोई क्रम है या वे ऐसे किसी हद तक ही होते हैं, अतः इससे प्रकृतिगोपुच्छामें उल्लेखनीय विकृति नहीं पैदा होती। तथा जो निषेकरचना क्रमहानि और क्रमवृद्धिरूप न रहकर व्यतिक्रमको प्राप्त हो जाती है उसे विकृतिगोपुच्छा कहते हैं। यह विकृतिगोपुच्छा स्थितिकाण्डक घातसे प्राप्त होती है। अब प्रकृतमें यह देखना है कि प्रकृतिगोपुच्छाका प्रमाण कितना है? यहाँ जघन्य प्रदेशसत्कर्मका प्रकरण है, इसलिए जो जीव सूक्ष्म एकेन्द्रियोंमें कर्मस्थितिप्रमाण काल तक घूम लिया है उस एकेन्द्रियका कर्मस्थितिके अन्तिम समयमें प्राप्त होनेवाला द्रव्य लो और इसमें अन्तर्मुहूर्तसे भाजित अपकर्षण-उत्कर्षणभागहारका भाग दो। इससे एकेन्द्रियके संचित द्रव्यमेंसे उत्कर्षित द्रव्यका प्रमाण आ जाता है। उत्कर्षित द्रव्यका प्रमाण इसीलिए लाया गया है कि जघन्य स्वामित्वके समयमें जो प्रकृति गोपुच्छा रहती है वह इस उत्कर्षित द्रव्यमेंसे ही शेष रहती है, संचित द्रव्यमेंसे नहीं, क्योंकि सूक्ष्म एकेन्द्रियके मिथ्यात्वका स्थितिबन्ध कुछ कम एक सागर प्रमाण होता है और यहाँ गोपुच्छा कर्मस्थितिके अन्तिम समयसे लेकर साधिक १३२ सागरके बादकी प्राप्त करना है, परन्तु इतने काल तक एकेन्द्रिय-सम्बन्धी बन्धसे प्राप्त स्थितिवाले निषेक रह नहीं सकते, अतः संचित द्रव्यको छोड़कर यहाँ अपने आप उत्कर्षित द्रव्यकी प्रधानता प्राप्त हो जाती है। अतः यह सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीव कर्मस्थितिप्रमाण कालको समाप्त करके साधिक १३२ सागर काल तक त्रसोंमें घूमता है तब कहीं जघन्य द्रव्य प्राप्त होता है और त्रसोंमें संज्ञी त्रसोंमें श्रेणिको छोड़कर अन्यत्र अन्तः कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण स्थितिबन्ध होता है, अतः अन्तःकोड़ाकोड़ी सागरके भीतर प्राप्त होनेवाली नाना गुणहानिशलाकाओंकी जो अन्योन्याभ्यस्तराशि प्राप्त हो, एक कम उसमें एक सौ बत्तीस सागर कम अन्तःकोड़ाकोड़ीके भीतर प्राप्त होनेवाली नाना गुणहानिशलाकाओंकी एक कम अन्योन्याभ्यस्तराशिका भाग दो और इस प्रकार जो राशि प्राप्त हो उसका भाग पूर्वोक्त उत्कर्षणसे प्राप्त हुए द्रव्यमें देने पर उस उत्कर्षित द्रव्यमेंसे एकसौ बत्तीस सागरके भीतर जितना द्रव्य गल जाता है उससे बाकी बचे हुए द्रव्यका प्रमाण प्राप्त होता है। यतः संचित द्रव्यको प्राप्त करनेके लिये एक समयप्रबद्धको डेढ़गुणहानिसे गुणित करना पड़ता है, अतः यहाँ प्रकृतिगोपुच्छाको प्राप्त करनेके लिए गल कर शेष बचे हुए द्रव्यमें डेढ़ गुणहानिका भाग दो। इस प्रकार इतनी क्रियाके करनेपर प्रकृतिगोपुच्छा प्राप्त होती है।

१३७. कुदो एदिस्से पगदिगोवुच्छत्तं ? ट्ठिदिकंडयदव्वेण विणा उक्कड्डणाए जहाणिसित्तपदेसग्गहणादो। ण णिसेगट्ठिदीए जहाणिसेगसरूवेणावट्ठाणं, ओकड्डणाए तिस्से वयदंसणादो ? ण एस दोसो, तत्थतणआय-व्वयाणं सरिसत्तणेण तिस्से विगिदित्ताभावादो। आय-व्वयाणं सरिसत्तं कुदो णव्वदे ? जुत्तीदो। तं जहा—दिवड्ढगुणहाणिगुणिदेगसमयपबद्धे पगदिगोवुच्छाभागहारेण ओकड्डुक्कड्डणभागहार-गुणिदेण ओवट्टिदे पयडिगोवुच्छाए वओ होदि। पुणो दिवड्ढगुणहाणिगुणिदेगसमय-पबद्धे वेछावट्ठिसागरोवमकालगलिदसेसदव्वभागहारेण दिवड्ढगुणहाणिगुणिदओकड्डु-क्कड्डणभागहारगुणिदेण ओवट्टिदे तिस्से आओ। एदे बे वि आय-व्वया सरिसा। कुदो ? उभयत्थ अवहिरिज्जमाणे समाणे संते वेओकड्डुक्कड्डणभागहारगुणिदवेछावट्ठिणाणागुण-हाणिसलागण्णोण्णब्भत्थरासीए पदुप्पायिददिवड्ढगुणहाणिभागहारस्स सरिसत्तुव-लंभादो त्ति।

---

§ १३७. **शंका**—इसे प्रकृतिगोपुच्छा क्यों कहते हैं ?

समाधान—क्योंकि इसमें स्थितिकाण्डकके द्रव्यके विना उत्कर्षणके द्वारा यथा निक्षिप्त प्रदेशोंका ही ग्रहण होता है, अतः इसे प्रकृतिगोपुच्छा कहते हैं।

शंका—निषेक स्थितिमें जिस क्रमसे निषेकोंकी रचना होती है उस क्रमसे अवस्थान नहीं रहता, क्योंकि अपकर्षणके द्वारा उसका विनाश देखा जाता है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि निषेकस्थितिमें आय और व्ययके समान होनेसे वह विकृतिगोपुच्छा नहीं हो सकती।

शंका—वहां आय और व्यय समान होते हैं यह किस प्रमाणसे जाना ?

समाधान—युक्तिसे जाना। वह युक्ति इस प्रकार है—डेढ़ गुणहानिगुणित एक समय-प्रबद्धमें अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारसे गुणित प्रकृतिगोपुच्छाके भागहारसे भाग देने पर प्रकृति गोपुच्छाका व्यय प्राप्त होता है। तथा डेढ़ गुणहानिसे गुणित जो अपकर्षण-उत्कर्षण भागहार है उससे गुणित जो दो छयासठ सागर कालसे गलितसे बाकी बचे द्रव्यका भागहार उससे डेढ़ गुणहानि गुणित एक समयप्रबद्धमें भाग देने पर प्रकृतिगोपुच्छाकी आय आती है। ये दोनों आय और व्यय समान हैं; क्योंकि दोनों जगह भाज्यराशिके समान होते हुए दो अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारसे गुणित दो छयासठ सागरकी नाना गुगहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्त राशिसे उत्पन्न हुआ डेढ़ गुणहानिका भागहार समान पाया जाता है।

विशेषार्थ—शंकाकारका कहना है कि उत्कर्षणके होने पर जिस क्रमसे निषेक स्थापित रहते हैं उसी क्रमसे नहीं रहते; क्योंकि स्थिति और अनुभागके बढ़ानेको उत्कर्षण कहते हैं और उनके घटानेको अपकर्षण कहते हैं। जिन प्रदेशोंमें स्थिति अनुभाग बढ़ाया जाता है उन्हें नीचेकी स्थितिसे उठाकर ऊपर की स्थितिमें डाल दिया जाता है और जिन प्रदेशोंमें स्थिति अनुभाग घटाया जाता है उन्हें ऊपरकी स्थितिसे उठाकर नीचेकी स्थितिमें फेक दिया जाता है। इसका उत्तर दिया गया कि आय और व्ययके समान होनेसे निषेकोंका स्वरूप ज्योंका

§ १३८. ण एसो परिहारो घडंतओ। तं जहा—पयडिगोवुच्छादो ओकड्डुक्कड्डणाए हेट्ठा णिवदमाणदव्वेण सव्वकालमायादो सरिसेणेव होदव्वमिदि णियमो णत्थि; समाणपरिणामखविदकम्मंसिएसु वि ओकड्डुक्कड्डणवसेण एगसमयपबद्धस्स वड्ढिहाणिदंसणादो। एदेण समाणपरिणामत्तादो एत्थ आय-व्वया सरिसा त्ति एदमवणिदं। एत्थ पुण वयादो जहासंभवमाएण थोवेणेव होदव्वं, अण्णहा पयदगोवुच्छाए थोवत्ताणुववत्तीदो। गोवुच्छागारेण ट्ठिदासेसणिसेगदव्वमोकड्डुक्कड्डणभागहारेण खंडिय तत्थ एगखंडं घेत्तूण पुणो तेणेव गोवुच्छागारेण तत्थेव णिसिंचमाणे आय-व्वयाणं ण विसरिसत्तमिदि ण वोत्तुं जुत्तं, आवलियमेत्तट्ठिदीओ हेट्ठा ओसरिय णिवदमाणाणं सरिसत्ताणुववत्तीदो। ण चावलियमेत्तं चेव णियमेण ओसरिय हेट्ठा णिवदंति त्ति णियमो अत्थि, संखेज्जाणं पि पलिदोवमाणं हेट्ठा ओसरणं पडि संभवुवलंभादो। तम्हा आय-व्वया सरिसा त्ति

त्यों बना रहता है। आय और व्यय दोनोंमें भाज्यराशि तो डेढ़ गुणहानिप्रमाण समयप्रबद्धों की संख्या है और भाजकराशि व्ययमें तो अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारसे गुणित प्रकृति गोपुच्छा का भागहार है और आयमें डेढ़ गुणहानि और अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारसे गुणित-एक सौ बत्तीस सागरके कालमें गलितसे बाकी बचे द्रव्यका भागहार है। ये दोनों समान हैं, क्योंकि दोनों जगह गुणकारमें अपकर्षण-उत्कर्षण भागहार है। तथा इधर आयमें डेढ़ गुणहानिसे एक सौ बत्तीस सागरके कालमें गलितसे बाकी बचे द्रव्यके भागहारको गुणा किया गया है और उधर व्ययमें उत्कर्षित द्रव्योंमेंसे गलित शेष द्रव्यको लाकर उसमें डेढ़ गुणहानिका भाग देनेसे प्रकृति गोपुच्छा आती है जो कि भागहारस्वरूप है। सारांश यह है कि आयमें डेढ़ गुणहानिसे गुणित गलित शेष द्रव्यका भागहार भाजकराशि है और व्ययमें प्रकृति गोपुच्छाका भागहार भाजकराशि है। ये दोनों राशियां समान हैं, अतः आय और व्ययकी भाज्यराशि और भाजकराशि समान होनेसे दोनोंका प्रमाण समान होता है। अतः जितने प्रदेश जाते हैं उतने ही आ जाते हैं, इसलिये उत्कर्षणके द्वारा प्रदेशोंका व्यतिक्रम नहीं होता।

§ १३८. **शंका**—यह परिहार नहीं घटता। खुलासा इस प्रकार है—प्रकृतिगोपुच्छासे अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारके द्वारा जो द्रव्य नीचे निक्षिप्त किया जाता है वह सदा आयके समान ही होना चाहिये ऐसा नियम नहीं है, क्योंकि समान परिणामवाले क्षपितकर्मांश सत्कर्मवाले जीवोंमें भी अपकर्षण-उत्कर्षणकी वजहसे एक समयप्रबद्धकी वृद्धि या हानि देखी जाती है। इससे समान परिणाम होनेसे यहाँ आय और व्यय समान होते हैं यह बात नहीं रही। प्रत्युत यहां तो व्ययसे आय यथासम्भव थोड़ी ही होनी चाहिये, अन्यथा प्रकृति गोपुच्छामें स्तोकपना नहीं बन सकता। शायद कहा जाय कि गोपुच्छाकाररूपसे स्थित समस्त निषेकोंके द्रव्यको अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारसे भाजित करके, उसमेंसे एक भाग लेकर उस भागको उसी गोपुच्छाकाररूपसे उसीमें प्रक्षिप्त कर देने पर आय और व्ययमें असमानता नहीं रहती सो ऐसा कहना भी ठीक नहीं है, क्योंकि एक आवलीप्रमाण स्थितियाँ नीचे उतरकर निक्षिप्त किये जानेवाले प्रदेशोंमें समानता नहीं बन सकती। तथा नियमसे एक आवली प्रमाण उतरकर ही प्रदेश नीचे निक्षिप्त किये जाते हैं ऐसा नियम नहीं है, क्योंकि संख्यात पल्योपमप्रमाण नीचे उतरना भी संभव है। अतः आय और व्यय समान हैं ऐसा जो तुमने

जं तुब्भेहि भणिदं तं ण घडदे। किं च पयडिगोवुच्छा विज्झादभागहारेण बेछावट्ठि-मेत्तकालं सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तेसु पडिसमयं संकंता। एदेण वि कारणेण पयडिगोवुच्छाए जहाणिसित्तसरूवेण णावट्ठाणमिदि ? तोक्खहिं एवं घेत्तव्वं—ओकड्डुकड्डणाहि जणिदआय-व्वएहि परपयडिसंकमजणिदवयेण च ण पयडिगोवुच्छत्तं फिट्टदि, विगिदि-गोवुच्छदव्वादो गुणसेढिदव्वादो च वदिरित्तासेसदव्वस्स पगडिगोवुच्छा त्ति गहणादो।

कहा है वह घटित नहीं होता। दूसरे, विध्यातभागहारके द्वारा दो छयासठ सागर तक प्रकृतिगोपुच्छाका प्रति समय सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वमें संक्रमण होता रहता है, इसलिये इस कारणसे भी प्रकृतिगोपुच्छाका यथानिक्षिप्तरूपसे अवस्थान नहीं बनता ?

समाधान—तो फिर ऐसा लेना चाहिये—अपकर्षण-उत्कर्षणके द्वारा जो आय-व्यय होता है और परप्रकृतिरूप संक्रमणके द्वारा जो व्यय होता है उनसे प्रकृतिगोपुच्छपना नष्ट नहीं होता, क्योंकि विकृतिगोपुच्छाके द्रव्यसे और गुणश्रेणिके द्रव्यसे भिन्न जो बाकीका द्रव्य है उसे प्रकृतिगोपुच्छा रूपसे माना गया है।

विशेषार्थ—पहले प्रकृतिगोपुच्छाका प्रमाण बतला आये हैं उसपर शंकाकारका यह कहना है कि इसे प्रकृतिगोपुच्छा क्यों माना जाय। तब इसका यह समाधान किया कि इसमें स्थितिकाण्डकघातसे प्राप्त द्रव्यका ग्रहण नहीं किया है किन्तु केवल उत्कर्षणसे प्राप्त होने वाले द्रव्यकी जो यथाविधि रचना होती है उसीका ग्रहण किया है, इसलिये इसे प्रकृति-गोपुच्छा माननेमें कोई आपत्ति नहीं। इस पर फिर यह शंका की गई कि निषेकस्थितिके निषेकोंकी जिस क्रमसे रचना होती है उत्कर्षणके द्वारा वह नष्ट भ्रष्ट हो जाती है, अतः उसे प्रकृतिगोपुच्छा मानना ठीक नहीं है। इसपर आय और व्ययकी समानता दिखला कर यह सिद्ध किया गया कि इससे प्रकृतिगोपुच्छा जैसीकी तैसी बनी रहती है। इस पर फिर शंका हुई कि अपकर्षण और उत्कर्षण द्वारा सदा आय और व्यय समान ही होता है ऐसा कोई ऐकान्तिक नियम नहीं है। उदाहरणार्थ समान परिणामवाले दो क्षपितकर्मांश जीव लीजिये। उनमेंसे एकके अपकर्षण द्वारा एक समयप्रबद्धकी हानि और दूसरेके उत्कर्षण द्वारा एक समयप्रबद्धकी वृद्धि देखी जाती है, अतः यह नियम तो रहा नहीं कि समान परिणाम होनेसे आय और व्यय समान ही होता है। दूसरे अपकर्षित होनेवाले द्रव्यका सब निषेकोंमें निक्षेप न होकर एक आवलिप्रमाण या कभी कभी संख्यात पल्यप्रमाण निषेकोंको छोड़कर निक्षेप होता है, इसलिये भी सब निषेकोंमें आय और व्यय समान ही होता है यह कहना नहीं बनता। तीसरे त्रसपर्यायमें परिभ्रमण करते हुए जब यह जीव १३२ सागर काल तक सम्यक्त्वके साथ रहता है तब इसके मिथ्यात्वकी प्रकृतिगोपुच्छा प्रति समय सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वमें संक्रमित होती रहती है, इससे भी स्पष्ट है कि प्रकृतिगोपुच्छाकी जिस प्रकार रचना होती है उस प्रकार वह नहीं रहती। तब इस शंकाका समाधान करते हुए यह बतलाया है कि इस प्रकार अपकर्षण या उत्कर्षणसे जो न्यूनाधिक आय-व्यय होता है या सजातीय अन्य प्रकृतिमें संक्रमण होनेसे जो व्यय होता है उससे प्रकृतिगोपुच्छामें भले ही थोड़ी बहुत न्यूनाधिकता हो जाय पर इससे प्रकृतिगोपुच्छाका विनाश नहीं होता। तात्पर्य यह है कि विकृतिगोपुच्छाके द्रव्यके और गुणश्रेणिके द्रव्यके सिवा शेष सब द्रव्य प्रकृतिगोपुच्छाका द्रव्य माना गया है।

§ १३९. संपहि विगिदिगोवुच्छपमाणाणुगमं कस्सामो। तं जहा—दिवड्ढ-गुणहाणिगुणिदेगसमयपबद्धे ओकड्डुक्कड्डणभागहारेण गुणिदवेछावट्ठिअण्णोण्णब्भत्थ-रासिणा[1] ओवट्टिदे अधट्ठिदिगलणाए परपयडिसंकमेण च फिट्टावसेसदव्वं होदि। पुणो एदम्मि चरिमफालीए खंडिदे विगिदिगोवुच्छदव्वं[2] होदि। का विगिदिगोवुच्छा? अपुव्वअणियट्टिकरणेसु कीरमाणेसु जाणि ट्ठिदिखंडयाणि पदिदाणि तेसिं चरिमफालीसु णिवदमाणासु जं सामित्तसमए पदिददव्वं सा विगिदिगोवुच्छा। दुचरिमादिफालीसु पदमाणासु[3] अहिकयगोवुच्छाए पदिददव्वं विगिदिगोवुच्छा किण्ण होदि? ण, तस्स[4] ओकड्डणभागहारेण आगदत्तेण पयडिगोवुच्छाए पवेसादो[5]।

§ १३९. अब विकृति गोपुच्छाका प्रमाण कहते हैं। वह इस प्रकार है—डेढ़ गुणहानि गुणित एक समयप्रबद्धमें अपकर्षण उत्कर्षण भागहारसे गुणित दो छयासठ सागरकी अन्योन्याभ्यस्तराशिका भाग देने पर अधःस्थितिगलनाके द्वारा और परप्रकृतिरूप संक्रमणके द्वारा नष्ट होकर शेष बचे सब द्रव्यका प्रमाण होता है। फिर इसमें अन्तिम फालिका भाग देने पर विकृतिगोपुच्छाका द्रव्य होता है।

शंका—विकृतिगोपुच्छा किसे कहते हैं।

समाधान—अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणके करने पर जिन स्थितिकाण्डकोंका पतन हुआ उनकी अन्तिम फालियों का पतन होने पर स्वामित्वके समयमें जो द्रव्य पतित हुआ उसे विकृतिगोपुच्छा कहते हैं।

शंका—द्विचरम आदि फालियोंका पतन होते समय विवक्षित गोपुच्छामें जो द्रव्य पतित होता है वह विकृतिगोपुच्छा क्यों नहीं होती?

समाधान—नहीं, क्योंकि अपकर्षण भागहारके द्वारा आया हुआ होनेके कारण उसका अन्तर्भाव प्रकृतिगोपुच्छामें ही हो जाता है।

विशेषार्थ—पहले हम विकृतिगोपुच्छाका उल्लेख कर आये हैं पर वहां उसका विशेषरूपसे विचार नहीं किया है, इसलिये यहां उसके स्वरूप और प्रमाण पर विशेष प्रकाश डाला जाता है। विकृतिका अर्थ है विकारयुक्त और गोपुच्छाका अर्थ है गायकी पूंछ। तात्पर्य यह है कि गायकी पूंछ उत्तरोत्तर पतली होती हुई एकसी चली जाती है पर रोगादिक अन्य कारणोंसे बीचमें या अन्यत्र वह मोटी हो जाय तो वह गोपुच्छा विकार युक्त कही जाती है। इसी प्रकार प्रकृतमें जो निषेक रचना होती है वह गायकी पूंछके समान होनेसे उसे प्रकृतिगोपुच्छा कहते हैं। अब यदि किसी कारणसे उसमें विकार पैदा होकर उसका वह क्रम न रहे तो जितना उसमें विकारका भाग है वह विकृतिगोपुच्छा कहलाती है। मुख्यतः यह विकृतिगोपुच्छा स्थितिकाण्डकघातके होने पर अन्तिम फालिके पतनसे बनती है, इसलिये यहां विकृतिगोपुच्छाका लक्षण लिखते हुए यह बतलाया है कि अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणरूप परिणामोंसे स्थितिकाण्डकोंका घात होते हुए उनकी अन्तिम फालियोंका जितना द्रव्य जघन्य सत्कर्मके स्वामित्वके समयमें प्राप्त होता है उसे विकृतिगोपुच्छा कहते हैं। यहां यह भी प्रश्न किया गया कि द्विचरम आदि फालियोंके द्रव्यका पतन होने पर उसमें जो द्रव्य

१. आ०प्रतौ '-अण्णोण्णब्भत्थरासिणो' इति पाठः। २. आ०प्रतौ 'विगिदिगोपुच्छं दव्वं' इति पाठः। ३. ता०प्रतौ 'पढमासु' इति पाठः। ४. ता०आ०प्रत्योः 'ण च तस्स' इतिपाठः। ५. आ०प्रतौ 'पदेसादो' इतिपाठः।

§ १४०. संपहि एसा विगिदिगोवुच्छा पगदिगोवुच्छादो असंखे०गुणा । कुदो एदं णव्वदे ? तंतजुत्तीदो । तं जहा—बेछावट्ठीओ हिंडिदूण दंसणमोहक्खवणमाढविय जहाकमेण अधापवत्तकरणं गमिय अपुव्वकरणपारंभपढमसमए मिच्छत्तदव्वं गुणसंकमेण सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तेसु संकामेदि । कुदो ? साभावियादो । तक्काले पयडिगोवुच्छाए गुणसंकमभागहारेण खंडिदाए तत्थेयखंडं परपयडिसरूवेण गच्छदि । एवं जाव अपुव्वकरणपढमट्ठिदिखंडयस्स दुचरिमफालि त्ति गुणसंकमेण पयडिगोवुच्छाए वओ चेव, ओकड्डणाए पदिददव्वस्स संकामिज्जमाणदव्वादो असंखे०गुणहीणत्तणेण पहाणत्ता-भावादो । असंखेज्जगुणहीणत्तं कुदो णव्वदे ? गुणसंकमभागहारादो ओकड्डुक्कड्डणभाग-

---

जघन्य सत्कर्मके स्वामित्व समयमें प्राप्त होता है उसे विकृतिगोपुच्छा क्यों नहीं कहा जाता ? सो इसका यह समाधान किया है कि वह द्रव्य अपकर्षण भागहारसे प्राप्त होता है और पहले यह बतला आये हैं कि अपकर्षण भागहारसे प्राप्त हुए द्रव्यके कारण विकृति नहीं आती, अतः इसका अन्तर्भाव प्रकृतिगोपुच्छामें ही हो जाता है। इस प्रकार विकृतिगोपुच्छाके स्वरूपका विचार करके अब इसके प्रमाणका विचार करते हैं। संचित द्रव्य डेढ़ गुणहानि गुणित समयप्रबद्धप्रमाण है। अब यह देखना है कि १३२ सागर कालके भीतर इसमेंसे अधःस्थिति गलनाके द्वारा और पर प्रकृति संक्रमणके द्वारा नष्ट होनेके बाद कितना द्रव्य बचता है, अतः डेढ़ गुणहानि गुणित समयप्रबद्धमें अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारका भाग दो और जो शेष आवे उसमें १३२ सागरके भीतर प्राप्त होनेवाली नाना गुणहानियोंकी अन्योन्याभ्यस्तराशिका भाग दो। ऐसा करनेसे जो लब्ध आवे वह शेष द्रव्यका प्रमाण होता है। पर यह विकृति-गोपुच्छाका प्रमाण नहीं है, इसलिये उसे प्राप्त करनेके लिये इस शेष बचे हुए द्रव्यमें अन्तिम फालिका भाग दिया जाय। ऐसा करनेसे विकृतिगोपुच्छाका प्रमाण आ जाता है। यहां इतना विशेष समझना कि विकृतिगोपुच्छाका यह स्वरूप और प्रमाण जघन्य सत्कर्मकी अपेक्षासे कहा है।

§ १४०. यह विकृतिगोपुच्छा प्रकृतिगोपुच्छासे असंख्यातगुणी है।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना।

समाधान—शास्त्रानुकूल युक्तिसे। उसका खुलासा इस प्रकार है—दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण करके दर्शनमोहके क्षपणको प्रारम्भ करके क्रमसे अधःप्रवृत्तकरणको बिताकर, अपूर्वकरणको प्रारम्भ करनेके प्रथम समयमें मिथ्यात्वके द्रव्यको गुणसंक्रमणके द्वारा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वमें संक्रान्त करता है, क्योंकि ऐसा करना स्वाभाविक है। उस समय गुणसंक्रम भागहारके द्वारा प्रकृतिगोपुच्छामें भाग देनेपर लब्ध एक भागप्रमाण द्रव्य परप्रकृतिरूपसे संक्रान्त होता है। इस प्रकार अपूर्वकरणके प्रथम स्थितिकाण्डककी द्विचरम फाली पर्यन्त गुणसंक्रमके द्वारा प्रकृतिगोपुच्छाका व्यय ही होता है, क्योंकि अपकर्षणके द्वारा पतनको प्राप्त होनेवाला द्रव्य संक्रमणको प्राप्त होनेवाले द्रव्यसे असंख्यातगुणा हीन होता है, इसलिये यहां उसकी प्रधानता नहीं है।

शंका—संक्रमणको प्राप्त होनेवाले द्रव्यसे अपकर्षणके द्वारा पतनको प्राप्त हुआ द्रव्य असंख्यातगुणा हीन होता है यह किस प्रमाणसे जाना ?

हारस्स असंखे०गुणत्तणेण। णचेदमसिद्धं, उवरि भण्णमाणअप्पाबहुगादो तदसंखेज्ज-गुणत्तसिद्धीए।

§ १४१. संपहि पढमट्ठिदिकंडयचरिमफालीए णिवदमाणाए अहियारगोवुच्छाए पदिददव्वं विगिदिगोवुच्छा णाम, ओकड्डुक्कड्डणाए विणा ट्ठिदिकंडएड आगदव्वस्सेव गहणादो। तस्स पमाणाणुगमं कस्सामो। तं जहा—एगमेइंदियसमयपबद्धं दिवड्ड-गुणहाणिपदुप्पण्णं ठविदं। एदस्स[1] हेट्ठा बेछावट्ठिअब्भंतरणाणागुणहाणिसलागासु विरलिय विगुणिय अण्णोण्णगुणिदासु समुप्पण्णरासिमंतोमुहुत्तोवट्टिदओकड्डुक्कड्डण-भागहारगुणिदं ठविय पुणो उवरिमअंतोकोडाकोडीअब्भंतरणाणागुणहाणिसलागासु विरलिय दुगुणिय अण्णोण्णपदुप्पण्णासु पदुप्पण्णरासिम्हि रूवूणम्हि पलिदो० संखे०-भागमेत्तट्ठिदिकंडयब्भंतरणाणागुणहाणिसलागाणं रूवूणण्णोण्णब्भत्थरासिणा ओवट्टिदम्हि जं लद्धं तेण दिवड्डगुणहाणिं गुणिय एदम्मि पुव्वं ठविदभागहारस्स पासे कदे पढमट्ठिदिकंडयादो समुप्पण्णविगिदिगोवुच्छा समुप्पज्जदि। एसा जहण्णविगिदिगोवुच्छा पगदिगोवुच्छादो गुणसंकमेण परपयडिं गच्छमाणदव्वस्स असंखे०भागो। कुदो? गुणसंकमभागहारादो अण्णोण्णब्भासजणिदरासीए असंखेज्जगुणत्तादो।

समाधान—क्योंकि गुणसंक्रमके भागहारसे अपकर्षण-उत्कर्षण भागहार असंख्यात-गुणा है। और यह असिद्ध नहीं है, क्योंकि आगे कहे जानेवाले अल्पबहुत्वसे अपकर्षण उत्कर्षण भागहारका असंख्यातगुणापना सिद्ध है।

§ १४१. यहां प्रथमस्थितिकाण्डकी अन्तिम फालीका पतन होते समय अधिकृत गोपुच्छामें जो द्रव्य पतित होता है उसे विकृतिगोपुच्छा कहते हैं, क्योंकि अपकर्षण-उत्कर्षणके बिना स्थितिकाण्डकके द्वारा आये हुए द्रव्यका ही यहां ग्रहण किया गया है। उस विकृतिगोपुच्छाका प्रमाणानुगम करते हैं। वह इस प्रकार है—एकेन्द्रियसम्बन्धी एक समयप्रबद्धको डेढ़ गुणहानिसे गुणा करके स्थापित करो। उसके नीचे दो छयासठ सागरके भीतरकी नाना गुणहानि-शलाकाओंका विरलन करके और उन विरलित अंकोंको द्विगुणित करके परस्पर गुणा करनेसे जो राशि उत्पन्न हो उसे अन्तर्मुहूर्तसे भाजित अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारसे गुणा करके स्थापित करो। फिर ऊपरकी अन्तःकोडाकोडीके अन्दरकी नानागुणहानिशलाकाओंका विरलन करके और उस विरलित राशिको द्विगुणित करके परस्पर गुणा करनेसे जो राशि उत्पन्न हो एक कम उसमें पल्यके संख्यातवें भागमात्र स्थितिकाण्डकोंके भीतरकी नाना गुणहानि-शलाकाओंकी एक कम अन्योन्याभ्यस्तराशिसे भाग दो जो लब्ध आवे उससे डेढ़ गुणहानिको गुणा करके पूर्वमें स्थापित भागहारके समीपमें इसको स्थापित करने पर प्रथम स्थितिकाण्डकसे उत्पन्न हुई विकृतिगोपुच्छा होती है। यह जघन्य विकृतगोपुच्छा प्रकृतिगोपुच्छासे गुण-संक्रमणके द्वारा परप्रकृतिरूपसे संक्रमण करनेवाले द्रव्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है, क्योंकि गुणसंक्रमण भागहारसे अन्योन्यान्याससे उत्पन्न हुई राशि असंख्यातगुणी होती है। अब दूसरे स्थितिकाण्डकका पतन होते समय जो विकृतिगोपुच्छा उत्सन्न होती है

---

१. आ०प्रतौ 'ट्ठविदएदस्स' इति पाठः।

संपहि विदिए ट्ठिदिखंडए णिवदमाणे विगिदिगोवुच्छा समुप्पज्जदि। तिस्से पमाणे आणिज्जमाणे पुव्वं व अवहारवहिरिज्जमाणाणं ट्ठवणा कायव्वा। णवरि अंतोकोडाकोडीअब्भंतरणाणागुणहाणिसलागासु पादेक्कं दुगुणिय अण्णोण्णेण गुणिदासु समुप्पण्णरासीए रूवूणाए दोण्हं ट्ठिदिखंडयाणमब्भंतरणाणागुणहाणिसलागासु विरलिय पादेक्कं दुगुणिय अण्णोण्णागुणिदासु समुप्पण्णरासी रूवूणा, भागहारो ठवेदव्वो। एवमेदेण कमेण तिण्णि-चत्तारि-पंच-छ-सत्तादि जाव संखेज्जसहस्सट्ठिदिखंडएसु अपुव्वकरणद्धाए णिवदमाणासु विगिदिगोवुच्छा समुप्पादेदव्वा।

§ १४२. पुणो अपुव्वकरणं समाणिय अणियट्टिकरणमाढविय तदब्भंतरे संखेज्ज-सहस्सट्ठिदिखंडएसु पदिदेसु ट्ठिदिसंतकम्ममसण्णिट्ठिदिबंधकम्मेण[1] सरिसं होदि। कुदो? साभावियादो। एदेण कमेण संखेज्जसहस्सट्ठिदिखंडयाणि गंतूण ट्ठिदिसंतकम्मं चदु-ते-बे-एइंदियाणं ट्ठिदिबंधेण समाणं होदि। पुणो तत्तो उवरि संखेज्जट्ठिदिखंडय-सहस्सेसु पदिदेसु पच्छा पलिदोवमट्ठिदिसंतकम्मं होदि। संपहि एत्थतणविगिदिगोवुच्छा-पमाणे आणिज्जमाणे भज्जभागहाराणं ठवणकमो पुव्वं व होदि। णवरि अंतोकोडाकोडि-अब्भंतरणाणागुणहाणिसलागासु विरलिय पादेक्कं दुगुणिय अण्णोण्णेण गुणिदासु समुप्पण्णरासीए रूवूणाए पलिदोवमेणूणअंतोकोडाकोडिअब्भंतरणाणागुणहाणिसलागाणं

उसका प्रमाण लानेके लिये पहलेकी ही तरह भाज्य-भाजक राशियोंकी स्थापना करना चाहिये। इतना विशेष है कि अन्तःकोडाकोडिके भीतरकी नानागुणहानि शलाकाओंमेंसे प्रत्येकको दूना करके परस्परमें गुणा करने पर जो राशि उत्पन्न हो उसमें एक कम करके जो राशि आवे उससे दो स्थितिकाण्डकोंके भीतरकी नानागुणहानि शलाकाओंका विरलन करके और उनमेंसे प्रत्येकको दूना करके परस्पर गुणा करनेसे जो राशि उत्पन्न हो उसमेंसे एक कम राशिको भागहार स्थापित करना चाहिए। इस प्रकार इस क्रमसे तीन, चार, पांच, छह, सात आदि संख्यात हजार स्थितिकाण्डकोंका अपूर्वकरणकालमें पतन होने पर विकृतिगोपुच्छा उत्पन्न कर लेनी चाहिए।

§ १४२. फिर अपूर्वकरणको समाप्त करके अनिवृत्तिकरणका प्रारम्भ करने पर उसके अन्दर संख्यात हजार स्थितिकाण्डकोंका पतन होने पर स्थितिसत्कर्म असंज्ञी जीवके स्थिति बन्ध के समान होता है। क्योंकि ऐसा होना स्वाभाविक है। इस प्रकार इस क्रमसे संख्यात हजार स्थितिकाण्डकोंके जाने पर स्थितिसत्कर्म चौइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, दोइन्द्रिय, और एकेन्द्रियके स्थितिबन्धके समान होता है। फिर उससे आगे संख्यात हजार स्थितिकाण्डकोंका पतन होने पर बादमें पल्योपम प्रमाण स्थितिसत्कर्म होता है। अब यहां की विकृतिगोपुच्छाका प्रमाण लाने पर भाज्य और भागहारकी स्थापनाका क्रम पहलेकी ही तरह होता है। इतना विशेष है कि अन्तःकोडाकोडीके अन्दरकी नानागुणहानि शलाकाओंका विरलन करके प्रत्येकको दूना करके परस्परमें गुणा करने पर जो राशि उत्पन्न हो, एक कम उसके भागहाररूपसे पल्योपम कम अन्तःकोडाकोडीके अन्दरकी नानागुणहानि शलाकाओंको दूना करके परस्परमें

१ ता०आ०प्रत्योः 'मसण्णिट्ठिदिसंतकम्मेण' इति पाठः।

दुगुणिदाणमण्णोण्णब्भासजणिदरासी रूवूणा भागहारो ठवेदव्वो। एवं ठविदे तदित्थविगिदिगोवुच्छा आगच्छदि। एसा वि गुणसंकमेण परपयडिं गच्छमाणदव्वस्स असंखेज्जदिभागो। कुदो? गुणसंकमभागहारं पेक्खिदूण पलिदोवमब्भंतरणाणागुणहाणिसलागाणमण्णोण्णब्भत्थरासीए असंखेज्जगुणत्तादो।

§ १४३. संपहि पलिदोवममेत्ते ट्ठिदिसंतकम्मे सेसे तदो ट्ठिदिखंडयमागाएंतो तट्ठिदीए संखेज्जे भागे आगाएदि। किं कारणं? साहावियादो। एवं सेस-सेसट्ठिदीए संखेज्जे भागे आगाएंतो ताव गच्छदि जाव दूरावकिट्टिट्ठिदिसंतकम्मं चेट्ठिदं त्ति। एत्थ विगिदिगोवुच्छपमाणाणयणं पुव्वं व कायव्वं। णवरि अंतोकोडाकोडिअब्भंतरणाणागुणहाणिसलागाणमण्णोण्णब्भत्थरासीए रूवूणाए दूरावकिट्टीए परिहीणअंतोकोडाकोडिअब्भंतरणाणागुणहाणिसलागाणमण्णोण्णब्भत्थरासी रूवूणा भागहारो ठवेयव्वो। एवं ठविदे तदित्थविगिदिगोवुच्छा होदि। एसा वि पयडिगोवुच्छादो गुणसंकमभागहारेण परपयडिं गच्छमाणदव्वस्स असंखे०भागो। कुदो? गुणसंकमभागहारादो पलिदो० संखे०भागमेत्तदूरावकिट्टिट्ठिदीए अब्भंतरणाणागुणहाणिसलागाणमण्णोण्णब्भत्थरासीए असंखेज्जगुणत्तादो। एदस्स असंखेज्जगुणत्तं कत्तो णव्वदे? सम्मत्तुव्वेल्लणकालब्भंतरणाणागुणहाणिसलागाणमण्णोण्णब्भत्थरासी अधापवत्तभागहारादो असंखेज्ज-

---

गुणा करनेसे जो राशि उत्पन्न हो उसमें एक कम भागहारराशि करनी चाहिये। ऐसा स्थापित करने पर उस स्थानकी विकृतिगोपुच्छा आती है। यह विकृतिगोपुच्छा भी गुणसंक्रमके द्वारा परप्रकृतिरूपसे संक्रमण करनेवाले द्रव्यके असंख्यातवें भागप्रमाण होती है, क्योंकि गुणसंक्रमभागहारकी अपेक्षा पल्योपमके भीतरकी नानागुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्तराशि असंख्यातगुणी है।

§ १४३. अब पल्योपमप्रमाण स्थितिसत्कर्मके शेष रहने पर उसमेंसे स्थितिकाण्डकको ग्रहण करते हुए स्थितिकाण्डकके लिये उस स्थितिके संख्यात बहुभागको ग्रहण करता है, क्योंकि ऐसा होना स्वाभाविक है। इस प्रकर शेष शेष स्थितिके संख्यात बहुभागको ग्रहण करता हुआ दूरापकृष्टि स्थितिसत्कर्मके प्राप्त होने तक जाता है। यहाँ पर भी पहलेकी तरह ही विकृति गोपुच्छाका प्रमाण लाना चाहिए। इतना विशेष है कि अन्तःकोडाकोडीके अभ्यन्तरवर्ती नाना गुणहानिशलाकाओंकी रूपोन अन्योन्याभ्यस्तराशिकी भागहाररूपसे दूरापकृष्टिसे हीन अन्तः कोडाकोडीके अभ्यन्तरवर्ती नानागुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्तराशिमें एक कम राशिकी स्थापना करनी चाहिए। इस प्रकार स्थापित करने पर उस स्थानको विकृतिगोपुच्छा होती है। यह विकृतिगोपुच्छा भी प्रकृतिगोपुच्छासे गुणसंक्रम भागहारके द्वारा परप्रकृतिरूपसे संक्रमण करनेवाले द्रव्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है; क्योंकि गुणसंक्रमभागहारसे पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण दूरापकृष्टि स्थितिके अभ्यन्तरवर्ती नानागुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्तराशि असंख्यातगुणी है।

शंका—यह राशि गुणसंक्रम भागहारसे असंख्यातगुणी है यह किस प्रमाणसे जाना?

समाधान—सम्यक्त्वप्रकृतिके उद्वेलनाकालके अन्दरकी नानागुणहानिशलाकाओंकी

गुणा त्ति भणंतसुत्तादो । तं जहा—सम्मत्तस्स उक्कस्सपदेससंकमो कस्स ? गुणिदकम्मंसिय-लक्खणेण गंतूण सत्तमपुढवीए अंतोमुहुत्तेण मिच्छत्तदव्वमुक्कस्सं होहदि त्ति विवरीयं गंतूण उवसमसम्मत्तं पडिवज्जिय उक्कस्सगुणसंकमकालम्मि सव्वत्थोवगुणसंकमभाग-हारेण सम्मत्तमावूरिय पुणो मिच्छत्तं पडिवण्णपढमसमए अधापवत्तसंकमेण संकम-माणस्स उक्कस्सपदेससंकमो । एदं सुत्तं अधापवत्तभागहारादो सम्मत्तुव्वेल्लणकालस्स णाणागुणहाणिसलागाणमण्णोण्णब्भत्थरासीए असंखेज्जगुणत्तं जाणावेदि, सम्मत्तुक्कस्सु-व्वेल्लणकालेणुव्वेल्लिय सव्वसंकमेण संकामिज्जमाणदव्वस्स[1] एदम्हादो थोवत्तं जाणाविय अवट्ठिदत्तादो। ण च सव्वसंकमदव्वे बहुए संते अधापवत्तसंकमेण पदेससंकमस्स सुत्तमुक्कस्स-सामित्तं भणदि, विप्पडिसेहादो । एदेण सुत्तेण अधापवत्तभागहारादो दूरावकिट्ठि-ट्ठिदीए णाणागुणहाणिसलागाणमण्णोण्णब्भत्थरासीए असंखेज्जगुणत्तं सिज्झउ णाम, ण आयादो वयस्स असंखेज्जगुणत्तं, गुणसंकमभागहारादो दूरावकिट्ठिट्ठिदिणाणागुणहाणि-सलागाणमण्णोण्णब्भत्थरासीए थोवबहुत्तविसयावगमाभावादो ? ण, गुणसंकमभाग-हारादो असंखेज्जगुणअधापवत्तभागहारं पेक्खिदूण असंखे०गुणत्तण्णहाणुववत्तीदो । तदो[2] दूरावकिट्टिणाणागुणहाणिसलागाणमण्णोण्णब्भत्थरासीए असंखेज्जगुणत्तसिद्धीदो ।

अन्योन्याभ्यस्त राशि अधःप्रवृत्तभागहारसे असंख्यातगुणी है ऐसा कथन करनेवाले सूत्रसे जाना । इसका खुलासा इस प्रकार है—सम्यक्त्व प्रकृतिका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है ? गुणितकर्मांशके लक्षणके साथ सातवें नरकमें जाकर जब मिथ्यात्वका उत्कृष्ट द्रव्य होनेमें अन्तर्मुहूर्त काल बाकी रहे तब मिथ्यात्वसे सम्यक्त्वकी ओर जाकर, उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त करके उत्कृष्ट गुणसंक्रमकालमें सबसे छोटे गुणसंक्रम भागहारके द्वारा सम्यक्त्व प्रकृतिको पूरकर, पुनः मिथ्यात्वको प्राप्त करनेके प्रथम समयमें अधःप्रवृत्तसंक्रमके द्वारा संक्रमण करनेवाले उस जीवके सम्यक्त्व प्रकृतिका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है। यह सूत्र अधःप्रवृत्तभागहारसे सम्यक्त्वप्रकृतिके उद्वेलन कालकी नानागुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्तराशिको असंख्यात-गुणा बतलाता है; क्योंकि यह सूत्र सम्यक्त्व प्रकृतिके उत्कृष्ट उद्वेलनाकालके द्वारा उद्वेलना कराके सर्व संक्रमणके द्वारा संक्रमणको प्राप्त होनेवाले द्रव्यको इससे थोड़ा बतलाते हुए अवस्थित है । यदि सर्वसंक्रमणका द्रव्य बहुत होता तो अधःप्रवृत्तसंक्रमके द्वारा प्रदेशसंक्रमका प्रतिपादन करनेवाला सूत्र उत्कृष्ट स्वामित्व न कहता; क्योंकि ऐसा होना निषिद्ध है ।

शंका—इस सूत्रसे अधःप्रवृत्त भागहारसे दूरापकृष्टि स्थितिकी नाना गुणहानिशलाकाओं-की अन्योन्याभ्यस्तराशि भले ही असंख्यातगुणी सिद्ध होवे तो भी आयसे अर्थात् विकृति गोपुच्छाको प्राप्त होनेवाले द्रव्यसे व्यय अर्थात् गुणसंक्रमणके द्वारा पर प्रकृतिको प्राप्त होनेवाला द्रव्य असंख्यातगुणा नहीं हो सकता, क्योंकि गुणसंक्रम भागहारसे दूरापकृष्टि स्थितिकी नाना गुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्तराशिके स्तोकपने अथवा बहुतपनेका ज्ञान नहीं होता ।

समाधान—नहीं; क्योंकि यदि ऐसा न होता तो गुणसंक्रमभागहारसे असंख्यातगुणे अधःप्रवृत्तभागहारसे उक्त अन्योन्याभ्यस्तराशि असंख्यातगुणी न होती । अतः गुणसंक्रम भागहारसे दूरापकृष्टि स्थितिकी नानागुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्तराशिका असंख्यात-

१. आ०प्रतौ 'सव्वरांकामिज्जमाणदव्वस' इति पाठः । २. ता० प्रतौ 'तत्तो' इति पाठः ।

ण च गुणसंकमभागहारादो अधापवत्तभागहारस्स असंखेज्जगुणत्तमसिद्धं, सव्वत्थोवो सव्वसंकमभागहारो। गुणसंकमभागहारो असंखे०गुणो। ओकड्डुक्कड्डण-भागहारो असंखेज्जगुणो। अधापवत्तभागहारो असंखे०गुणो। उव्वेल्लणकालब्भंतरे णाणागुणहाणिसलागाणमण्णोण्णब्भत्थरासी असंखेज्जगुणा। दूरावकिट्टिट्टिदिअब्भंतरणाणा-गुणहाणिसलागाणमण्णोण्णब्भत्थरासी असंखे०गुणा त्ति सुत्ताविरुद्धवक्खाणप्पाबहुएण तस्स सिद्धीदो। संपहि दूरावकिट्टिट्टिदिसंतकम्मे अच्छिदे ट्ठिदीए असंखेज्जभागे आगाएदि। अवसेसट्टिदी पलिदोवमस्स असंखे०भागमेत्ता। तत्थ जदि जहण्णपरित्ता-संखेज्जअद्धच्छेदणयसलागाहि अब्भहियगुणसंकमभागहारद्धच्छेदणयसलागमेत्ताओ णाणा-गुणहाणिसलागाओ होंति तो वि आयादो वओ असंखेज्जगुणो, जहण्णपरित्तासंखेज्ज-मेत्तगुणगारुवलंभादो। अह जइ तत्थ संपहि उत्तणाणागुणहाणिसलागाओ रूवूणाओ होंति तो वि विगिदिगोवुच्छादो वओ संखेज्जगुणो होदि, जहण्णपरित्तासंखेज्जस्स अद्धमेत्तगुणगारुवलंभादो। एवं संखेज्जगुणवड्ढी उवरि वि जाणिदूण वत्तव्वा। जदि सेसट्टिदीए गुणसंकमभागहारस्स अद्धच्छेदणयमेत्ताओ णाणागुणहाणिसलागाओ होंति तो वएण विगिदिगोवुच्छा सरिसी होदि, उभयत्थ भज्ज-भागहाराणं सरिसत्तुवलंभादो। एसो थूलत्थो। सुहुमट्ठिदीए पुण णिहालिज्जमाणे एत्थ वि आयादो वओ विसेसाहिओ,

---

गुणापना सिद्ध है। शायद कहा जाय कि गुणसंक्रमभागहारसे अधःप्रवृत्तभागहारका असंख्यातगुणा होना असिद्ध है। सो भी बात नहीं है; क्योंकि सर्वसंक्रमभागहार सबसे थोड़ा है। गुणसंक्रमभागहार उससे असंख्यातगुणा है। अपकर्षण-उत्कर्षणभागहार उससे असंख्यातगुणा है। अधःप्रवृत्तभागहार उससे असंख्यातगुणा है। उद्वेलनकालके अन्दरकी नानागुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्तराशि उससे असंख्यातगुणी है। दूरापकृष्टिस्थितिके अन्दरकी नानागुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्तराशि उससे असंख्यातगुणी है इस सूत्रा-विरुद्ध व्याख्यानमें कहे गये अल्पबहुत्वके आधारसे गुणसंक्रमभागहारसे अधःप्रवृत्तभाग-हारका असंख्यातगुणापना सिद्ध है।

दूरापकृष्टि स्थितिसत्कर्मके रहते हुए स्थितिकाण्डकके लिए स्थितिके असंख्यात बहु-भागको ग्रहण करता है और बाकी स्थिति पल्यके असंख्यातवें भाग रहती है। उसमें यदि जघन्य परीतासंख्यातकी अर्द्धच्छेदशलाकाओंसे अधिक गुणसंक्रमभागहारके अर्द्धच्छेदोंकी शलाकाप्रमाण नाना गुणहानिशलाकाएँ होती हैं, तो भी आयसे अर्थात् विकृतिगोपुच्छाके द्रव्यसे व्यय अर्थात् गुणसंक्रमके द्वारा परप्रकृतिको प्राप्त होनेवाला द्रव्य असंख्यातगुणा हुआ, क्योंकि व्ययका गुणकार जघन्यपरीतासंख्यात प्रमाण पाया जाता है। और यदि उसमें उक्त नाना गुण-हानिशलाकाएँ एक कम होती हैं तो भी विकृतिगोपुच्छासे व्यय संख्यातगुणा प्राप्त होता है, क्योंकि तब व्ययका गुणकार जघन्य परीतासंख्यातसे आधा पाया जाता है। इसी प्रकार आगे भी संख्यातगुणवृद्धिको जानकर कहना चाहिए। यदि शेष स्थितिमें गुणसंक्रमभागहारके अर्द्धच्छेदप्रमाण नानागुणहानि शलाकाएँ होती हैं तो विकृतिगोपुच्छा व्ययके समान होती है; क्योंकि दोनों जगह भाज्य और भागहार समान पाये जाते हैं। यह तो हुआ स्थूल अर्थ। किन्तु सूक्ष्म स्थितिको देखने पर यहाँ भी आयसे व्यय विशेष अधिक है; क्योंकि अतिक्रान्त

अदिक्कंतविगिदिगोवुच्छाए सह पयडिगोवुच्छं गुणसंकमभागहारेण खंडिय तत्थ एयखंडस्स पररूवेण गमणुवलंभादो। अह जइ तत्थ गुणसंकमभागहारस्स रूवूण-छेदणयमेत्ताओ णाणागुणहाणिसलागाओ होंति तो वयादो विगिदिगोवुच्छा किंचूण-दुगुणमेत्ता होदि। एत्तो प्पहुडि उवरि सव्वत्थ वयादो विगिदिगोवुच्छा अहिया चेव।

§ १४४. एवं संखेज्जगुणकमेण गच्छंती विगिदिगोवुच्छा कत्थ वयादो असंखेज्ज-गुणा होदि त्ति वुत्ते वुच्चदे—ट्ठिदिखंडए पदिदे संते जाए अवसेसट्ठिदीए जहण्णपरित्ता-संखेज्जयस्स अद्धच्छेदणयसलागाहि यूणगुण[1]संकमभागहारद्धच्छेदणयमेत्ताओ गुणहाणीओ होंति तत्थ असंखेज्जगुणा होदि, किंचूणजहण्णपरित्तासंखेज्जमेत्तगुणगारुवलंभादो। एत्तो प्पहुडि उवरि सव्वत्थ वयादो विगिदिगोवुच्छा असंखेज्जगुणा चेव होदूण गच्छदि, ट्ठिदीए ज्झीयमाणाए विगिदिगोवुच्छावड्ढिदंसणादो। णवरि पगदिगोवुच्छादो विगिदि-गोवुच्छा अज्ज वि असंखे०गुणहीणा, पगदिगोवुच्छाभागहारं पेक्खिदूण विगिदिगोवुच्छा-भागहारस्स असंखेजगुणत्तुवलंभादो। संपहि पगदिगोवुच्छादो विगिदिगोवुच्छा असंखे०गुणहीणा होदूण गच्छंती काए ट्ठिदीए सेसाए असंखे०गुणहाणीए पज्जवसाणं पावदि त्ति वुत्ते वुच्चदे—जाए सेसट्ठिदीए जहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स अद्धच्छेदणयमेत्ताओ णाणागुणहाणिसलागाओ अत्थि तत्थ पज्जवसाणं। कुदो ? पयदिगोवुच्छं जहण्णपरित्ता-

विकृतिगोपुच्छाके साथ प्रकृतिगोपुच्छाको गुणसंक्रमभागहारसे भाजित करके उसमेंसे एक भाग का पररूपसे गमन पाया जाता है। अब यदि वहाँ पर गुणसंक्रमभागहारके रूपोन अर्द्धच्छेद प्रमाण नानागुणहानिशलाकाएँ होती हैं तो व्ययसे विकृतिगोपुच्छा कुछ कम दुगुनी होती है। यहाँसे लेकर आगे सर्वत्र विकृतगोपुच्छा व्ययसे अधिक ही है।

§ १४४. इस तरह संख्यात गुणितक्रमसे जानेवाली विकृतिगोपुच्छा व्ययसे अर्थात् गुणसंक्रमके द्वारा पर प्रकृतिको प्राप्त होनेवाले द्रव्यसे असंख्यातगुणी कहां होती है ऐसा पूछने पर कहते हैं—स्थितिकाण्डकका पतन होने पर जिस बाकीकी स्थितिमें जघन्यपरीता-संख्यातकी अर्द्धच्छेदशलाकाओंसे न्यून गुणसंक्रमभागहारके अर्द्धच्छेदप्रमाण गुणहानियाँ होती हैं वहाँ विकृतिगोपुच्छा असंख्यातगुणी होती है; क्योंकि वहाँ कुछ कम जघन्यपरीता-संख्यातप्रमाण गुणकार पाया जाता है। यहाँसे लेकर आगे सर्वत्र विकृतिगोपुच्छा व्ययसे असंख्यातगुणी ही होती हुई जाती है; क्योंकि उत्तरोत्तर स्थितिका क्षय होने पर विकृति-गोपुच्छामें वृद्धि देखी जाती है। किन्तु प्रकृतिगोपुच्छासे विकृतिगोपुच्छा अब भी असंख्यात-गुणी हीन है; क्योंकि प्रकृतिगोपुच्छाके भागहारसे विकृतिगोपुच्छाका भागहार असंख्यातगुणा पाया जाता है।

शंका—प्रकृतिगोपुच्छासे विकृतिगोपुच्छा उत्तरोत्तर असंख्यातगुणी हीन होती हुई किस स्थितिके शेष रहने पर असंख्यातगुणहानिके अन्तको प्राप्त होती है ?

समाधान—शेष बची हुई जिस स्थितिकी जघन्य परीतासंख्यातके अर्द्धच्छेदप्रमाण नानागुणहानि शलाकाएँ होती हैं वहाँ अन्त होता है; क्योंकि प्रकृतिगोपुच्छाको जघन्य

१ आ० प्रतौ 'सलागाहियाग गुण' इति पाठः।

संखेज्जेण खंडिदेयखंडमेत्ताए विगिदिगोवुच्छाए तत्थुवलंभादो। एत्थ दोण्हं गोवुच्छाणं पमाणं कण्णभूमीए[1] ठविय सोदाराणं पडिबोहो कायव्वो, अण्णहा वायणाए विहलत्तप्पसंगादो। अत्रोपयोगी श्लोकः—

अप्रतिबुद्धे श्रोतरि वक्तृत्वमनर्थकं भवति पुंसाम्।
नेत्रविहीने भर्त्तरि विलासलावण्यवत्स्त्रीणाम् ॥४॥

§ १४५. संपहि पयडिगोवुच्छादो विगिदिगोवुच्छा कत्थ संखेज्जगुणहीणा? जाए गहिदावसेसट्ठिदीए णाणागुणहाणिसलागाओ रूवूणजहण्णपरित्तासंखेज्जअद्धच्छेदणयमेत्तीओ होंति ताए। एत्थ बालजणउप्पायणट्ठं[2] भागहारपरूवणं कस्सामो। तं जहा—दिवड्ढगुणहाणिगुणिदसमयपबद्धे दिवड्ढगुणहाणिमेत्तअंतोमुहुत्तोवट्टिदओकड्डुकड्डणभागहारेण गुणिदवेछावट्ठिअण्णोण्णब्भत्थरासीए ओवट्टिदे पयडिगोवुच्छा आगच्छदि। पयडिगोवुच्छाभागहारेण जहण्णपरित्तासंखेज्जद्धपदुप्पण्णेण दिवड्ढगुणहाणिगुणिदसमयपबद्धे भागे हिदे विगिदिगोवुच्छा आगच्छदि। एवं दो वि गोवुच्छाओ आणिय ओवट्टणं करिय गुणगारो साहेयव्वो। णवरि गुणगारेसु भागहारेसु च सव्वत्थ सेसो अत्थि सो जाणिय सिस्साणं परूवेदव्वो। एवं पगदिगोवुच्छादो विगिदिगोवुच्छा

परीतासंख्यातसे भाजित कर जो एक भाग आता है उतनी विकृतिगोपुच्छा वहाँ पाई जाती है।

यहाँ दोनों गोपुच्छाओंका प्रमाण कर्णभूमिमें स्थापित करके श्रोताओंको प्रतिबोध करोना चाहिए, अन्यथा इस व्याख्यानकी विफलताका प्रसंग प्राप्त होता है। इस विषयमें उपयोगी श्लोक देते हैं—

श्रोता के न समझने पर मनुष्योंका वक्तृत्व व्यर्थ है, जैसे कि पतिके नेत्ररहित होने पर स्त्रियोंका हाव-भाव और श्रृंगार ॥४॥

§ १४५. **शंका**—प्रकृतिगोपुच्छासे विकृतिगोपुच्छा संख्यातगुणी हीन कहाँ होती है?

समाधान—स्थितिकाण्डकघातरूपसे ग्रहण करके शेष बची जिस स्थितिकी नाना गुणहानिशलाकाएँ रूपोन जघन्य परीतासंख्यातकी अर्द्धच्छेदप्रमाण होती हैं वहाँ विकृतिगोपुच्छा प्रकृतिगोपुच्छासे संख्यातगुणी हीन होती है।

यहाँ बालजनोंको समझानेके लिए भागहारका कथन करते हैं। यथा—डेढ़ गुणहानिसे गुणित समयप्रबद्धमें डेढ़ गुणहानिमात्र अन्तर्मुहूर्तसे भाजित जो अपकर्षण-उत्कर्षण भागहार उससे गुणित दो छयासठ सागरकी अन्योन्याभ्यस्तराशिसे भाग देने पर प्रकृतिगोपुच्छा आती है। और जघन्य परीतासंख्यातके आधेसे गुणित प्रकृतिगोपुच्छाके भागहारके द्वारा डेढ़ गुणहानिसे गुणित समयप्रबद्धमें भाग देने पर विकृतिगोपुच्छा आती है। इस प्रकार दोनों ही गोपुच्छाओंको लाकर और विकृतिगोपुच्छाका प्रकृतिगोपुच्छामें भाग देकर गुणकारको साधना चाहिए। मात्र सर्वत्र गुणकारों और भागहारोंमें कुछ शेष रहता है सो जानकर शिष्योंको कहना चाहिये।

शंका—इस प्रकार प्रकृतिगोपुच्छासे संख्यातगुणहीन क्रमसे जाती हुई विकृतिगोपुच्छा

---

१. ता०आ०प्रत्योः 'कम्मभूमिए' इति पाठः। २. ताःप्रतौ 'बालजणमु (वु)प्पायणट्ठ' इति पाठः।

संखे०गुणहीणकमेण[1] गच्छंती कत्थ पगदिगोवुच्छाए समाणा होदि त्ति वुत्ते वुच्चदे— जाए ट्ठिदीए घादिदावसेसाए एगा चेव गुणहाणी अत्थि तत्थ सरिसा; पढमगुणहाणिं मोत्तूण सेसगुणहाणिदव्वे पढमगुणहाणीए पदिदे विगिदिगोवुच्छाए[2] पगदिगोवुच्छाए सह सरिसत्तुवलंभादो। ण चेदमसिद्धं, सव्वदव्वे गुणहाणिचदुब्भागेणोवट्टिदे[3] पयडिगोवुच्छपमाणुवलंभादो। एसो थूलत्थो।

§ १४६. सुहुमाए ट्ठिदीए णिहालिज्जमाणे विगिदिगोवुच्छा पगदिगोवुच्छाए सह ण सरिसा; पढमगुणहाणिदव्वं पेक्खिदूण विदियादिगुणहाणिदव्वस्स कम्मट्ठिदि-चरिमगुणहाणिदव्वेण ऊणत्तुवलंभादो।

§ १४७ संपहि पढमगुणहाणीए उवरिमतिभागेण सह सेसासेसगुणहाणीसु घादिदासु पगदिगोवुच्छादो विगिदिगोवुच्छा किंचूणदुगुणमेत्ता होदि, दोसु गुणहाणि-तिभागखंडेसु उड्ढपंतियागारेण समयाविरोहेण रइदेसु एगपगदि[4]गोवुच्छपमाणुवलंभादो।

कहाँपर प्रकृतिगोपुच्छाके समान होती है ?

समाधान—घातनेसे शेष बची जिस स्थितिमें एक ही गुणहानि होती है वहाँ विकृतिगोपुच्छा प्रकृतिगोपुच्छाके समान होती है; क्योंकि प्रथम गुणहानिको छोड़कर शेष गुणहानिके द्रव्यके प्रथम गुणहानिमें मिल जाने पर विकृतिगोपुच्छाकी प्रकृतिगोपुच्छाके साथ समानता पाई जाती है और यह बात असिद्ध भी नहीं है; क्योंकि सर्व द्रव्यमें गुण-हानिके एक चौथाईसे भाग देने पर प्रकृतिगोपुच्छाका प्रमाण पाया जाता है। यह स्थूल अर्थ हुआ।

उदाहरण—सब द्रव्य ६३००, गुणहानिका चौथा भाग २,
६३००÷२=३२०० प्रकृतिगोपुच्छा।

§ १४६. सूक्ष्म स्थितिके देखने पर विकृतिगोपुच्छा प्रकृतिगोपुच्छाके समान नहीं है; क्योंकि प्रथम गुणहानिके द्रव्यसे दूसरी आदि गुणहानियोंका द्रव्य कर्मस्थितिकी अन्तिम गुण-हानिका जितना द्रव्य है उतना कम पाया जाता है।

उदाहरण—सब द्रव्य ६३००, गुणहानिका प्रमाण ८,
६३००÷$\frac{८}{४}$=६३००×$\frac{४}{८}$=३२०० प्रकृतिगोपुच्छा।

यहाँ यद्यपि विकृतिगोपुच्छाको इस प्रकृतिगोपुच्छाके बराबर बतलाया है तब भी द्वितीयादि शेष गुणहानियोंका द्रव्य प्रथम गुणहानिसे न्यून है। न्यूनका प्रमाण अन्तिम गुणहानिका द्रव्य है।

§ १४७. अब प्रथम गुणहानिके उपरिम त्रिभागके साथ बाकीकी सब गुणहानियोंके (स्थितिकाण्डकघातके द्वारा) घाते जाने पर प्रकृतिगोपुच्छासे विकृतिगोपच्छा कुछ कम दूनी होती है, क्योंकि गुणहानिके दो त्रिभागोंके आगमानुसार ऊर्ध्वपंक्तिरूपसे रचे जाने पर एक प्रकृतिगोपुच्छाका प्रमाण पाया जाता है।

---

१. ता॰प्रतौ 'हीणा कमेण' इति पाठः। २. ता॰आ॰प्रत्योः 'विगिदिपढमगोपुच्छाए' इति पाठः। ३. ता॰आ॰प्रत्योः गुणहाणितिण्णिचदुब्भागेणोवट्टिदे' इति पाठः।

कुदो देसूणत्तं ? गुणहाणीए दो-तदियतिभागगोवुच्छाहि पढम-विदियतिभागाणं पमाणुप्पत्तीदो ।

§ १४८. पढमगुणहाणीए अद्धेण सह उवरिमासेसगुणहाणीसु णिवदिदासु पगदिगोवुच्छादो विगिदिगोवुच्छा किंचूणतिगुणा होदि, गुणहाणिअद्धमेत्तगोवुच्छासु एगपगदिगोवुच्छुवलंभादो । एत्थ वि पुव्वं व किंचूणत्तं परूवेदव्वं ।

§ १४९ पढमगुणहाणिआयामं पंच-खंडाणि करिय तत्थ उवरिमतीहि खंडेहि सह विदियादिसेसगुणहाणीसु घादिदासु पगदिगोवुच्छादो विगिदिगोवुच्छा किंचूण-चदुग्गुणमेत्ता होदि, गुणहाणिए वेपंचभागमेत्तगोवुच्छासु एगपगदिगोवुच्छुवलंभादो । एवं जत्तिय-जत्तियमेत्तं गुणगारमिच्छदि तेण गुणगारेण रूवाहिएण गुणिहाणिं खंडिय तत्थ दो खंडे मोत्तूण सेसखंडेहि सह विदियादिगुणहाणीओ घादिय इच्छिद-इच्छिद-गुणगारो साहेयव्वो ।

शंका—यहाँ विकृतिगोपुच्छा दूनेसे कुछ कम क्यों है ?

समाधान—क्योंकि गुणहानिके तीसरे त्रिभागरूप गोपुच्छाओंको दो बार लेने पर प्रथम और द्वितीय त्रिभागोंका प्रमाण उत्पन्न होता है ।

विशेषार्थ—प्रथम गुणहानिका प्रमाण ३२०० है। इसका तीसरा भाग १०६६ होता है। इसे द्वितीयादि शेष पांच गुणहानियोंके द्रव्यमें मिला देने पर कुल द्रव्य ४१६६ हुआ। यह द्रव्य प्रथम गुणहानिके दो बटे तीन भागोंसे कुछ कम दूना है। इससे स्पष्ट है कि स्थिति-काण्डकघातके द्वारा प्रथम गुणहानिके ऊपरके तीसरे भागके साथ शेष गुणहानियोंके द्रव्यके मिल जाने पर प्रकृतिगोपुच्छा २१३४ से विकृतिगोपुच्छा ४१६६ कुछ कम दूनी होती है।

§ १४८. आधी प्रथमगुणहानिके साथ ऊपरकी सब गुणहानियोंका पतन होने पर प्रकृतिगोपुच्छासे विकृतिगोपुच्छा कुछ कम तिगुनी होती है, क्योंकि यहाँ आधी गुणहानि-प्रमाण गोपुच्छाओंमें एक प्रकृतिगोपुच्छा पाई जाती है। यहां पर भी विकृतिगोपुच्छाके तिगुनेसे कुछ कमका कथन पहलेके समान करना चाहिये ।

विशेषार्थ—प्रथम गुणहानिका आधा द्रव्य १६०० हुआ। इसमें शेष गुणहानियोंका द्रव्य मिला देने पर ४७०० होते हैं। यह प्रथमगुणहानिके आधे द्रव्यसे कुछ कम तिगुना है। इससे स्पष्ट है कि यदि स्थितिकाण्डक घातके द्वारा प्रथम गुणहानिके ऊपरके आधे द्रव्यके साथ शेष गुणहानियोंका द्रव्य घाता जाता है तो प्रकृतिगोपुच्छा १६०० से विकृतिगोपुच्छा ४७०० कुछ कम तिगुनी होती है।

§ १४९. प्रथम गुणहानि आयामके पाँच खण्ड करके उनमेंसे ऊपरके तीन खण्डोंके साथ दूसरी आदि शेष गुणहानियोंका घात करने पर प्रकृतिगोपुच्छासे विकृतिगोपुच्छा कुछ कम चौगुनी होती है, क्योंकि यहां पर पहली गुणहानिके दो बटे पाँच भागमात्र गोपुच्छाओंमें एक प्रकृतिगोपुच्छा पाई जाती है। इस प्रकार जितने जितने मात्र गुणकारकी इच्छा हो अर्थात् प्रकृतिगोपुच्छासे जितनी गुणी विकृतिगोपुच्छा लानी हो, रूपाधिक उस गुणकारके द्वारा प्रथम गुणहानिके खण्ड करके उनमेंसे दो खण्डोंको छोड़कर शेष खण्डोंके साथ दूसरी आदि गुणहानियोंका घात करके इच्छित इच्छित गुणकार साधना चाहिए।

१५०. एवं गंतूण जहण्णपरित्तासंखेज्जेण पढमगुणहाणीए खंडिदाए तत्थ दोखंडे मोत्तूण सेसखंडेहि सह विदियादिगुणहाणीसु घादिदासु पगदिगोवुच्छादो विगिदिगोवुच्छा किंचूणुक्कस्ससंखे०गुणा। कुदो? विगिदिगोवुच्छाए संबंधिदो-दोखंडेहि एगपयडिगोवुच्छाए समुप्पत्तिदंसणादो। संपहि पयडिगोवुच्छादो विगिदिगोवुच्छा कत्थ असंखे०गुणा? पढमगुणहाणिआयामे रूवाहियजहण्ण-परित्तासंखेज्जेण तत्थ दोखंडे मोत्तूण सेसखंडेहि सह विदियादिगुणहाणीसु घादिदासु होदि, दोदोखंडेहि एगपगदिगोवुच्छाए समुप्पत्तिदंसणादो। एत्तो प्पहुडि उवरि सव्वत्थ पगदिगोवुच्छादो विगिदिगोवुच्छा असंखेज्जगुणा चेव। असंखेज्जगुणत्तस्स कारणं पुव्वं परूविदमिदि णेह परूविज्जदे, परूविय-

---

विशेषार्थ—प्रथम गुणहानिके ३२०० प्रमाण द्रव्यके पाँच हिस्से करने पर प्रत्येक हिस्सा ६४० होता है। ऐसे तीन हिस्सों १९२० को शेष गुणहानियोंके ३१०० द्रव्यमें मिला देने पर कुल प्रमाण ५०२० होता है। यह प्रथम गुणहानिके दो बटे पाँच १२८० प्रमाण द्रव्यसे कुछ कम चौगुना है। इससे स्पष्ट है कि यदि स्थितिकाण्डकघातके द्वारा प्रथम गुणहानिके पांच हिस्सोंमेंसे ऊपरके तीन हिस्सोंके साथ शेष गुणहानियोंका द्रव्य घाता जाता है तो प्रकृतिगोपुच्छा १२८० से विकृतिगोपुच्छा ५०२० कुछ कम चौगुनी होती है। इसी प्रकार आगे प्रकृतिगोपुच्छासे कुछ कम जितनी गुणी विकृतिगोपुच्छा लानी हो वहाँ गुणकारके प्रमाणमें एक मिला दो और जो लब्ध आवे, प्रथम गुणहानिके उतने हिस्से करो। बादमें नीचेके दो हिस्से छोड़कर शेष हिस्सोंके साथ उपरिम गुणहानियोंका घात कराओ तो विवक्षित विकृतिगोपुच्छा आ जाती है। उदाहरणार्थ—प्रकृतिगोपुच्छासे कुछ कम सात गुनी विकृतिगोपुच्छा लानी है, इसलिए प्रथम गुणहानिके द्रव्यके आठ हिस्से करो। प्रत्येक हिस्सेका प्रमाण ४०० हुआ। अब नीचेके दो हिस्से ८०० को छोड़कर शेष द्रव्य २४०० के साथ शेष गुणहानियोंके द्रव्य ३१०० का घात कराओ तो विकृतिगोपुच्छाका प्रमाण ५५०० आता है। यहाँ प्रकृति गोपुच्छाका प्रमाण ८०० है। इस प्रकार यहाँ प्रकृति-गोपुच्छासे विकृतिगोपुच्छा कुछ कम सातगुनी प्राप्त हुई।

§ १५०. इस प्रकार जाकर जघन्य परीतासंख्यातके द्वारा प्रथम गुणहानिको भाजित करके उनमेंसे दो भागोंको छोड़कर शेष भागोंके साथ दूसरी आदि गुणहानियोंका घात करने पर प्रकृतिगोपुच्छासे विकृतिगोपुच्छा कुछ कम उत्कृष्ट संख्यातगुणी होती है; क्योंकि विकृति-गोपुच्छासम्बन्धी दो दो भागोंसे एक प्रकृतिगोपुच्छाकी उत्पत्ति देखी जाती है। अब प्रकृति गोपुच्छासे विकृतिगोपुच्छा असंख्यातगुणी कहाँ होती है यह बतलाते हैं—प्रथम गुणहानिके आयाममें रूपाधिक जघन्य परीतासंख्यातसे भाग देने पर उनमेंसे दो भागोंको छोड़कर शेष भागोंके साथ दूसरी आदि गुणहानियोंके घाते जाने पर प्रकृतिगोपुच्छासे विकृतिगोपुच्छा असंख्यातगुणी होती है; क्योंकि सर्वत्र दो दो खण्डोंसे एक प्रकृतिगोपुच्छाकी उत्पत्ति देखी जाती है। यहाँसे लेकर आगे सर्वत्र प्रकृतिगोपुच्छासे विकृतिगोपुच्छा असंख्यात-गुणी ही होती है। असंख्यातगुणी होनेका कारण पहले कह आये हैं, इसलिये यहाँ नहीं

---

१. आप्रप्रतौ '-संखेज्जेण तत्थ' इति पाठः।

परूवणाए फलाभावादो । ण विस्सरणालुअसीससंभालणफला, अणंतरं चेव परूविय़ूण गदत्थमणवहारयंतस्स अज्झप्पसुणणे अहियाराभावादो। ण तस्स वक्खाणेयव्वं पि, तव्वक्खाणाए अज्झप्पविज्जवोच्छेदहेदुत्तादो। ण चावगयअज्झप्पविज्जो करण-चरणविसुद्ध-विणीद-मेहाविसोदारेसु संतेसु रागेण भएण मोहेणालसेण वा अवरेसु वक्खाणेंतो सम्माइट्ठी, तिरयणसंताणविणासयस्स तदणुववत्तीए।

§ १५१. संपहि असंखेज्जगुणवड्ढीए चरिमवियप्पो वुच्चदे। तं जहा—चरिमफालीअद्धेणोवट्टिदगुणहाणीए पढमगुणहाणीए खंडिदाए तत्थ दोखंडे मोत्तूण सेसखंडेहि सह विदियादिगुणहाणीसु घादिदासु पगदिगोवुच्छादो असंखेज्जगुणा अपच्छिमविगिदिगोवुच्छा उप्पज्जदि। को गुणगारो? गुणहाणिभागहारो रूवेणो। अथवा चरिमफालीए

कहा; क्योंकि कहे हुएको कहनेमें कुछ फल नहीं है। शायद कहा जाय कि विस्मरणशील शिष्यको सँभालना ही उसका फल है, सो भी ठीक नहीं है; क्योंकि अनन्तर ही कहे हुए अर्थको स्मरण रखनेमें जो असमर्थ है उसको अध्यात्मशास्त्रके सुननेका अधिकार नहीं है। ऐसे शिष्यके लिए व्याख्यान भी नहीं करना चाहिये; क्योंकि उसे व्याख्यान करने पर वह अध्यात्मविद्याके विनाशका कारण होता है। तथा अध्यात्मविद्याको जानकर जो परिणाम और चारित्रसे शुद्ध, विनयी और मेधावी श्रोताओंके रहते हुए रागसे, भयसे, मोहसे या आलस्यसे अन्य लोगोंको व्याख्यान करता है वह सम्यग्दृष्टि नहीं हो सकता, क्योंकि उससे रत्नत्रयकी परंपराका विनाश होना संभव है।

विशेषार्थ—यदि जघन्य परीतासंख्यातका प्रमाण १६ मान लिया जाय और उत्कृष्ट संख्यातका प्रमाण १५ तो प्रथम गुणहानिके द्रव्य ३२०० के १६ खण्ड करने पर उनमेंसे नीचेके दो खण्डप्रमाण ४०० द्रव्यको छोड़कर शेष खण्डोंके द्रव्य २८०० के साथ शेष सब गुणहानियों के द्रव्य ६१०० के घाते जाने पर प्रकृतिगोपुच्छा ४०० से विकृतिगोपुच्छा ५९०० कुछ कम उत्कृष्ट संख्यातगुणी प्राप्त होती है। यहां विकृतिगोपुच्छाका पन्द्रहवाँ भाग कुछ कम चार सौ है और प्रकृतिगोपुच्छाका प्रमाण पूरा चार सौ है जो कि प्रथम गुणहानिके सोलह खण्डोंमें से दो खण्डोंके बराबर हैं। इससे स्पष्ट है कि प्रकृतिगोपुच्छासे विकृतिगोपुच्छा कुछ कम पन्द्रहगुणी अर्थात् उत्कृष्ट संख्यातगुणी है। अब यदि प्रथम गुणहानिके जघन्य परीतासंख्यात १६ से एक अधिक १७ खण्ड किये जाते हैं और उनमेंसे नीचेके दो खण्डोंको छोड़कर शेष खण्डोंके द्रव्य २८२४ के साथ शेष गुणहानियोंके द्रव्य ३१०० का स्थितिकाण्डक घात होता है तो प्रकृतिगोपुच्छाके द्रव्य ३७६ से विकृतिगोपुच्छाका द्रव्य ५९२४ कुछ कम सोलहगुणा अर्थात् कुछ कम जघन्य परीतासंख्यातगुणा प्राप्त होता है। कारणका निर्देश पहले किया ही है। इसके आगे सर्वत्र विकृतिगोपुच्छा असंख्यातगुणी ही प्राप्त होती है यह स्पष्ट ही है।

१५१ § अब असंख्यात गुणवृद्धिका अन्तिम विकल्प कहते हैं। यथा—अन्तिम फालीके आधेसे भाजित गुणहानिके द्वारा प्रथम गुणहानिके खण्ड करके उनमेंसे दो खण्डोंको छोड़कर शेष खण्डोंके साथ दूसरी आदि गुणहानियोंके घाते जानेपर प्रकृतिगोपुच्छासे असंख्यातगुणी अन्तिम विकृतिगोपुच्छा उत्पन्न होती है। यहां गुणकारका प्रमाण कितना है? गुणहानिका रूपोन भागहार गुणकार है। अथवा अन्तिम फालीसे

ओवट्टिददिवड्डगुणहाणी गुणगारो। एत्थ कारणं चिंतिय वत्तव्वं। एदेण कारणेण पयडिगोवुच्छादो विगिदिगोवुच्छा असंखेज्जगुणा त्ति सिद्धं।

एवं विगिदिगोवुच्छाए परूवणा कदा।

भाजित डेढ़ गुणहानिरूप गुणकार है। यहाँ कारण विचार कर कहना चाहिये। इस कारण से प्रकृतिगोपुच्छासे विकृतिगोपुच्छा असंख्यातगुणी है यह सिद्ध हुआ।

विशेषार्थ—जिस समय जघन्य प्रदेशसत्कर्म प्राप्त होता है उस समय प्रकृतिगोपुच्छा और विकृतिगोपुच्छा दोनों प्रकारकी गोपुच्छाएं रहती हैं। इस सम्बन्धमें पहले यह बतलाया गया है कि प्रकृतमें प्रकृतिगोपुच्छासे विकृतिगोपुच्छा असंख्यातगुणी होती है। आगे यही घटित करके बतलाया गया है कि यह बात कैसे बनती है। एक क्षपित कर्मांशवाला जीव है जिसने कर्मस्थितिप्रमाण काल तक एकेन्द्रियोंमें परिभ्रमण किया और वहाँसे निकल कर त्रसोंमें उत्पन्न हुआ। तदनन्तर यथायोग्य एकसौ बत्तीस सागर कालको सम्यक्त्वके साथ बिता कर दर्शनमोहनीयकी क्षपणाका प्रारम्भ किया। अधःप्रवृत्तकरणके कालमें स्थितिकाण्डकघात नहीं होता इसलिये उसे बिताकर अपूर्वकरणको प्राप्त हुआ। इसके प्रथम समयसे ही स्थितिकाण्डक घातका प्रारम्भ हो जाता है। तब भी यहां प्रति समय गुणसंक्रमभागहारके द्वारा जितना द्रव्य पर प्रकृतिरूपसे संक्रमित होता है उसका असंख्यातवां भाग ही प्रति समय अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारके द्वारा उपरितन स्थितिगत निषेकोंमेंसे अधस्तन स्थितिगत निषेकोंमें निक्षिप्त होता है, क्योंकि गुणसंक्रमभागहारके प्रमाणसे अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारका प्रमाण असंख्यातगुणा है। इस प्रकार यहां प्रति समय जो द्रव्य अधस्तन स्थितिगत निषेकोंमें निक्षिप्त होता है उससे विकृतिगोपुच्छाका निर्माण नहीं होता, क्योंकि उसका समावेश प्रकृतिगोपुच्छामें ही हो जाता है। किन्तु स्थितिकाण्डककी अन्तिम फालिके पतनसे जो द्रव्य प्राप्त होता है उससे विकृतिगोपुच्छाका निर्माण होता है। इसी प्रकार आगे भी जानना चाहिये। अर्थात् दूसरे, तीसरे और चौथे आदि स्थितिकाण्डकोंकी अन्तिम फालियोंका पतन होनेसे जो द्रव्य प्राप्त होता है उससे विकृतिगोपुच्छाओंका निर्माण होता है। अब विचारणीय बात यह है कि इनमेंसे किस विकृतिगोपुच्छाका प्रमाण कितना है? क्या सभी विकृतिगोपुच्छाएं प्रकृतिगोपुच्छाओंसे असंख्यातगुणी हैं या इनके प्रमाणमें कुछ अन्तर है? अब आगे इस प्रश्नका समाधान करते हैं—अपूर्वकरणरूप परिणामोंके समय सर्व प्रथम स्थितिकाण्डक घातसे जो विकृतिगोपुच्छाका निर्माण होता है वह प्रकृतिगोपुच्छामेंसे गुणसंक्रम भागहारके द्वारा पर प्रकृतिको प्राप्त होनेवाले द्रव्यके असंख्यातवें भाग है, क्योंकि यहां प्रकृति गोपुच्छामें पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण गुणसंक्रमभागहारका भाग देनेसे जो एक भागप्रमाण द्रव्य प्राप्त होता है वह प्रति समय पर प्रकृतिरूप परिणमता है तथा अन्तःकोडाकोडीके अन्दरकी नाना गुणहानिशलाकाओंका विरलन करके और उस विरलित राशि के प्रत्येक एक पर दोके अंक रख कर परस्परमें गुणा करनेसे जो राशि उत्पन्न हो, एक कम उसमें पल्यके संख्यातवें भागमात्र स्थितिकाण्डकोंके अन्तरवर्ती नाना गुणहानिशलाकाओं की रूपोन अन्योन्याभ्यस्तराशिसे भाग दो, जो लब्ध आवे उससे डेढ़ गुणहानिको गुणा करो। इस प्रकार जो भागहार प्राप्त हो इसका उस समय संचित हुए द्रव्यमें भाग देने पर विकृतिगोपुच्छा प्राप्त होती है। इस प्रकार इन दोनों भागहारोंको देखनेसे ज्ञात होता है कि प्रारम्भमें विकृतिगोपुच्छाका प्रमाण प्रकृतिगोपुच्छाके असंख्यातवें भागप्रमाण होता है, क्यों कि यहां परप्रकृतिरूप परिणमन करनेवाले द्रव्यके भागहारसे विकृतिगोपुच्छाका

भागहार असंख्यातगुणा है, अतः जब कि विकृतिगोपुच्छाका द्रव्य परप्रकृतिरूप परिणमन करनेवाले द्रव्यके असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होता है तो वह विकृतिगोपुच्छाका द्रव्य प्रकृतिगोपुच्छाके द्रव्यके असंख्यातवें भागप्रमाण होना ही चाहिये, क्योंकि पर प्रकृतिको प्राप्त होनेवाला द्रव्य प्रकृतिगोपुच्छाका असंख्यातवां भाग है और जब विकृति गोपुच्छाका द्रव्य इसके असंख्यातवें भाग है तो वह प्रकृतिगोपुच्छाके असंख्यातवें भाग प्रमाण होगा ही। इसी प्रकार दूसरी आदि गोपुच्छाएं भी प्रकृतिगोपुच्छाओंके असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होती हैं। केवल वहां दूसरी आदि विकृतिगोपुच्छाओंका भागाहार उत्तरोत्तर न्यून होता जाता है और इसलिये दूसरी आदि विकृतिगोपुच्छाओंका द्रव्य भी उत्तरोत्तर वृद्धिंगत होता जाता है। इस प्रकार हजारों स्थितिकाण्डकोंका पतन होने पर अपूर्वकरण समाप्त होता है। तथा आगे अनिवृत्तिकरणमें भी यही क्रम चालू रहता है। फिर क्रमशः मिथ्यात्वका स्थितिसत्कर्म असंज्ञियोंके स्थितिबन्धके समान प्राप्त होता है। आगे भी संख्यात हजार स्थितिकाण्डकोंका पतन होने पर स्थितिसत्कर्म क्रमशः चौइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, द्वीन्द्रिय और एकेन्द्रियके स्थितिबन्धके समान प्राप्त होता है। यहां सर्वत्र विकृतिगोपुच्छाका द्रव्य वृद्धिंगत होता जाता है और भागहारका प्रमाण घटता जाता है। फिर संख्यात हजार स्थितिकाण्डकोंका पतन होने पर सत्कर्मकी स्थिति एक पल्य प्राप्त होती है। यहां सत्कर्म की स्थिति अन्तःकोडाकोडी नहीं रही किन्तु एक पल्य रह गई है, इसलिये यहां अन्तःकोडा-कोडीकी नाना गुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्तराशिको पल्यकम अन्तःकोड़ाकोड़ी की नानागुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्तराशिका भाग दे देना चाहिये। तात्पर्य यह है कि पहले भागाहारमें जो अन्तःकोड़ाकोड़ीकी नाना गुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्त-राशि थी वह क्रमसे घटकर अब एक पल्यके अन्दर प्राप्त होनेवाली नानागुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्तराशि भागहार है। इस प्रकार यहां जो विकृतिगोपुच्छा उत्पन्न होती है वह गुणसंक्रमभागहारके द्वारा पर प्रकृतिको प्राप्त होनेवाले द्रव्यके असंख्यातवें भाग-प्रमाण है, क्योंकि यहां भी गुणसंक्रमभागहारसे एक पल्यके भीतर प्राप्त होनेवाली नाना गुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्तराशि असंख्यातगुणी है। इसके बाद स्थितिकाण्डकघात होता हुआ क्रमसे दूरापकृष्टि स्थितिसत्कर्म प्राप्त होता है। इसके पूर्व तक अब भी पल्यके संख्यातवें भागप्रमाण स्थितिसत्कर्म शेष है, इसलिये यहां भी विकृतिगोपुच्छा परप्रकृतिको प्राप्त होनेवाले द्रव्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। इसके आगे यदि स्थितिके असंख्यात बहुभागप्रमाण स्थितिकाण्डकका घात करके जो स्थिति शेष रहती है उसमें नाना गुणहानियाँ यदि गुणसंक्रमभागहारकी अर्धच्छेद शलाकाओं और जघन्य परीतासंख्यातकी अर्धच्छेद शलाकाओंके जोड़प्रमाण होती हैं तो भी यहां विकृतिगोपुच्छाका द्रव्य पर प्रकृतिको प्राप्त होनेवाले द्रव्य के असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होता है। इस प्रकार उत्तरोत्तर आगे भागहार घटता जाता है और विकृतिगोपुच्छाका द्रव्य बढ़ता जाता है। इस क्रमके चालू रहते हुए जब स्थितिकाण्डकघातसे शेष रही स्थितिकी नानागुणहानिशलाकाएं गुणसंक्रम भागहारकी अर्धच्छेदशलाकाप्रमाण होती हैं तब विकृतिगोपुच्छाका द्रव्य पर प्रकृतिको प्राप्त होनेवाले द्रव्यके समान होता है क्योंकि यहां दोनोंकी भाजक और भाज्य राशियां समान हैं। अब इसके आगे स्थितिकाण्डकका घात होने पर उत्तरोत्तर विकृतिगोपुच्छाका प्रमाण बढ़ने लगता है और पर प्रकृतिको प्राप्त होनेवाला द्रव्यका प्रमाण विकृतिगोपुच्छाके प्रमाणसे उत्तरोत्तर घटने लगता है। यदि शेष रही स्थितिकी नाना गुणहानिशलाकाएं गुणसंक्रमभागहारकी एक कम अर्धच्छेदशलाकाप्रमाण होती हैं तो विकृतिगोपुच्छाका द्रव्य पर प्रकृतिको प्राप्त

§ १५२. पयडिगोवुच्छं तत्तो असंखेज्जगुणं विगिदिगोवुच्छं तत्तो असंखेज्जगुणं अपुव्वगुणसेढीगोवुच्छं तत्तो असंखेज्जगुणं[1] अणियट्टिगुणसेढीगोवुच्छं च घेत्तूण जहण्णदव्वं जादमिदि घेत्तव्वं।

❀ तदो पदेसुत्तरं दुपदेसुत्तरमेवमणंताणि हाणाणि तम्मि ट्ठिदिविसेसे।

§ १५३. सामित्तपरूवणाए कादुमाढत्ताए तत्थेव किमट्ठं हाणपरूवणा कीरदे? ण, एत्तो उवरि पुव्वं व हाणपरूवणाए कीरमाणाए विस्सरिदजहण्णदव्वसरूवस्स अणवगयतस्सरूवस्स वा अंतेवासिस्स हाणविसयाववोहो सुहेण उप्पाइदुं सक्किज्जदि त्ति

होनेवाले द्रव्यसे कुछ कम दूना हो जाता है। इसी प्रकार आगे जाकर जब शेष रही स्थिति गुणसंक्रमभागहारकी जघन्य परीतासंख्यात कम अर्धच्छेदशलाकाप्रमाण शेष रही स्थितिकी नाना गुणहाणिशलाकाएं होती हैं तब विकृतिगोपुच्छाका द्रव्य पर प्रकृतिको प्राप्त होनेवाले द्रव्यसे कुछ कम असंख्यातगुणा प्राप्त होता है। इस प्रकार यद्यपि यहां पर परप्रकृतिको प्राप्त होनेवाले द्रव्यसे विकृतिगोपुच्छाका द्रव्य असंख्यातगुणा हो गया है तो भी अब भी विकृतिगोपुच्छा प्रकृतिगोपुच्छाके असंख्यातवें भागप्रमाण ही है, क्योंकि यहां पर अब भी प्रकृतिगोपुच्छाके भागहारसे विकृतिगोपुच्छाका भागहार असंख्यातगुणा पाया जाता है। इसके आगे जब शेष स्थितिकी नाना गुणहाणिशलाकाएं जघन्य परीतासंख्यातके अर्धच्छेदप्रमाण प्राप्त होती हैं तब प्रकृतिगोपुच्छाका विकृतिगोपुच्छासे असंख्यातगुणापना समाप्त होता है। इस प्रकार उत्तरोत्तर प्रकृतिगोपुच्छा घटती जाती है और विकृतिगोपुच्छा वृद्धिंगत होती जाती है। यह क्रम चालू रहते हुए जब जाकर स्थितिकाण्डकघात होकर इतनी स्थिति शेष रहती है जिसमें एक गुणहानि प्राप्त होती है तब जाकर विकृतिगोपुच्छा प्रकृतिगोपुच्छाके समान होती है, क्योंकि यहां प्रथमगुणहानिके सिवा शेष गुणहानियोंका द्रव्य स्थितिकाण्डक घातके द्वारा प्रथम गुणहानिमें पतित हो जाता है, अतः यहां विकृतिगोपुच्छा प्रकृतिगोपुच्छाके समान पाई जाती है। इसके आगे उत्तरोत्तर स्थितिकाण्डकघातके कारण विकृतिगोपुच्छाका प्रमाण बढ़ता जाता है और प्रकृतिगोपुच्छाका प्रमाण घटता जाता है। इस प्रकार अन्तमें जाकर प्रकृतिगोपुच्छासे विकृतिगोपुच्छा असंख्यातगुणी प्राप्त होती है, इसलिये स्वामित्वकालमें प्रकृतिगोपुच्छासे विकृतिगोपुच्छाको असंख्यातगुणा बतलाया है।

इस प्रकार विकृतिगोपुच्छाका कथन किया।

§ १५२. प्रकृतिगोपुच्छा, उससे असंख्यातगुणी विकृतिगोपुच्छा, उससे असंख्यात गुणी अपूर्वकरणकी गुणश्रेणिकी गोपुच्छा और उससे असंख्यातगुणी अनिवृत्तिकरणकी गुणश्रेणि की गोपुच्छा इस प्रकार इन सबके मिलने पर जघन्य द्रव्य हुआ है यह अर्थ यहाँ लेना चाहिये।

❀ जघन्य प्रदेशसत्कर्मस्थानसे एक परमाणू अधिक होने पर दूसरा प्रदेश स्थान होता है, दो परमाणु अधिक होने पर तीसरा प्रदेशस्थान होता है। इस प्रकार उस स्थितिके विकल्पमें अनन्त प्रदेशसत्कर्मस्थान होते हैं।

§ १५३. **शंका**—स्वामित्वका कथन प्रारम्भ करके वहीं स्थानोंका कथन क्यों किया?

समाधान—नहीं, क्योंकि यहाँसे आगे पहलेकी तरह स्थान प्ररूपणाके करने पर जघन्य द्रव्यके स्वरूपको भूल जानेवाले या उसके स्वरूपको नहीं जाननेवाले शिष्यको स्थानोंका ज्ञान

१. ता०आ०प्रत्योः 'असंखेज्जगुणा' इति पाठः।

एत्थेव तप्परूवणा कीरदे। अथवा जहण्णुक्कस्सट्ठाणाणं सामित्तं परूविदं। संपहि सेसट्ठाणाणं सामित्तपरूवणट्ठमिदमुवक्कमदे 'तदो' जहण्णपदेसट्ठाणादो त्ति भणिदं होदि। 'पदेसुत्तरं' पदेसो परमाणू तेण उत्तरमहियं दव्वं विदियं पदेसट्ठाणं होदि, ओकड्डुक्कड्डुण-वसेण एगपदेसुत्तरट्ठाणुवलंभादो। दुपदेसुत्तरमण्णं ट्ठाणं। तिपदेसुत्तरमण्णं[1] ट्ठाणं। एवमणंताणि पदेससंतकम्मट्ठाणाणि तम्मि ट्ठिदिविसेसे होंति त्ति पदसंबंधो कादव्वो।

❀ केण कारणेण।

§ १५४. खविदकम्मंसियकिरियाए खग्गधारासरिसीए खलणेण विणा परिसक्किद-जीवस्स ण ट्ठाणभेदो, कारणाभावादो। ण हि कारणे एगसरूवे संते कज्जाणं णाणत्तं, विरोहादो त्ति पच्चवट्ठाणसुत्तमेदं। एवं पच्चवट्ठिदस्स सिस्सस्स खविदकम्मंसियत्तं पडि भेदाभावे वि तक्कज्जभेदपदुप्पायणट्ठमुत्तरसुत्तं भणादि।

❀ जं तं जहाक्खयागदं तदो उक्कस्सयं पि समयपबद्धमेत्तं।

§ १५५. 'जं जहाक्खयागदं' खविदकम्मंसियलक्खणकिरियापरिवाडीए जं खयमागदं त्ति भणिदं होदि। 'तदो उक्कस्सयं पि' तत्तो उवरि खविदकम्मंसियविसए वट्टमाणं जं जहाक्खयागदं दव्वमुक्कस्सं तं पि एगसमयपबद्धमेत्तं। जदि एसो खविदकम्मंसिय-

सुखपूर्वक कराना शक्य नहीं है, इसलिये यही उनका कथन करते हैं। अथवा जघन्य और उत्कृष्ट स्थानोंके स्वामित्वको कह दिया। अब शेष स्थानोंके स्वामित्वका कथन करनेके लिये यह उपक्रम है। सूत्रमें आये हुए 'तदो' पदसे जघन्य प्रदेशसत्कर्मस्थानसे लिया गया है। 'पदेसत्तरं' इसमें आये हुए प्रदेशका अर्थ परमाणु है। उससे उत्तर अर्थात् अधिक द्रव्य दूसरा प्रदेशस्थान होता है, क्योंकि अपकर्षण-उत्कर्षण के कारण एक प्रदेश अधिकवाला स्थान पाया जाता है। दो परमाणु अधिकवाला दूसरा स्थान होता है, तीन परमाणु अधिकवाला तीसरा स्थान होता है। इस प्रकार अनन्त प्रदेशसत्कर्म उस स्थितिविकल्पमें होते हैं, ऐसा पदका सम्बन्ध करना चाहिये।

❀ किस कारण से ?

१५४ § क्षपितकर्मांशकी क्रिया तलवार की धारके समान है, उसका स्खलन हुए बिना भ्रमण करनेवाले जीवके स्थान भेद नहीं हो सकता, क्योंकि उसका कोई कारण नहीं है ? और कारण के एकरूप होते हुए कार्योंमें भेद नहीं हो सकता; क्योंकि ऐसा होने में विरोध है। इस तरह यह सूत्र शंका रूप है। इस प्रकार शंकित शिष्य को क्षपितकर्मांश पने में भेद न होने पर भी उसका कार्यभेद बतलाने के लिये आगे का सूत्र कहते हैं—

❀ क्षपित कर्मांशविधिसे जो क्षयको प्राप्त हुआ है, उत्कृष्ट द्रव्य भी उससे एक सममप्रबद्ध ही अधिक होता है।

§ १५५. 'जं जहाक्खयादं' इसका तात्पर्य है कि 'क्षपितकर्मांश रूप क्रियाकी परंपरा के द्वारा क्षयको प्राप्त हुआ है।' 'तदो उक्कस्सयं पि' अर्थात् उससे ऊपर क्षपितकर्मांशके विषयमें वर्तमान, जिस रूपसे जो क्षयसे आया हुआ उत्कृष्ट द्रव्य है वह भी एक समय-

१. आ०प्रतौ 'तिपदेसुत्तरसणंतरमण्णं' इति पाठः।

लक्खणेणेवागदो तो एगसमयपबद्धमेत्ता परमाणू अब्भहिया ण होंति त्ति णासंकणिज्जं, ओकड्डुकड्डणपरिणामेसु जोगपरिणामेसु च सरिसेसु संतेसु वि एगसमयपबद्धमेत्ताणं कम्मक्खंधाणं हीणाहियत्तं होदि चेव, एगपरिणामेण ओकड्डुकड्डिज्जमाणपरमाणूणं समाणत्तं पडि णियमाभावादो। किंणिमित्तो अणियमो ? उवसामणा-णिकाचणा-णिधत्ती-करणणिमित्तो। ण च तीहि करणेहि उप्पाइदकम्मपरमाणुगयविसरिसत्तं खविद-कम्मंसियलक्खणं विणासेदि, छसु आवासएसु अणूणाहिएसु संतेसु तल्लक्खणविणास-विरोहादो। जदि एवं तो एगसमयपबद्धं मोत्तूण बहुआ समयपबद्धा अहिया किण्ण होंति ? ण, सुत्तम्मि तहा अणुवइट्ठत्तादो। ण च परमाणुसारीणं तदणुसारित्तं जुत्तं, विरोहादो।

प्रबद्धमात्र होता है।

शंका—यदि यह क्षपितकर्मांशके लक्षणके द्वारा ही आया है तो एक समयप्रबद्ध मात्र परमाणु अधिक नहीं हो सकते ?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए; क्योंकि अपकर्षण-उत्कर्षणरूप और योगरूप परिणामोंके समान होने पर भी एक समयप्रबद्धप्रमाण कर्मस्कन्धोंकी हीनाधिकता होती ही है, क्योंकि एक परिणामके द्वारा अपकर्षण अथवा उत्कर्षणको प्राप्त होनेवाले परमाणुओंके समान होनेका नियम नहीं है।

शंका—अनियम होनेका क्या निमित्त है ?

समाधान—उपशामना, निधत्ती और निकाचनाकरण निमित्त है। शायद कहा जाय कि इन तीन करणोंके द्वारा कर्मपरमाणुओंमें जो हीनाधिकता आती है वह क्षपितकर्मांशरूप लक्षणको नष्ट कर देगी अर्थात् तब वह जीव क्षपितकर्मांश नहीं रहेगा, किन्तु ऐसा कहना ठीक नहीं है; क्योंकि क्षपितकर्मांशके लिए कारणरूप छह आवश्यकोंके न न्यून और न अधिक रहते हुए क्षपितकर्मांशरूप लक्षणका विनाश होनेमें विरोध आता है।

शंका—यदि इन तीन करणोंके द्वारा अधिक परमाणु भी हो सकते हैं तो क्षपित-कर्मांश जीवके एकसमयप्रबद्धको छोड़कर बहुत समयप्रबद्ध अधिक क्यों नहीं होते ?

समाधान—नहीं, क्योंकि चूर्णिसूत्रमें ऐसा नहीं कहा है। और जो आगमप्रमाणका अनुसरण करते हैं उनके लिए उसका अनुसरण करना युक्त नहीं है, क्योंकि ऐसा करनेमें विरोध आता है।

विशेषार्थ—अब तक मिथ्यात्वके दो समय कालवाली एक स्थितिगत उत्कृष्ट सत्कर्मके स्वामी और जघन्य सत्कर्मके स्वामीका विवेचन किया। अब उसी स्थितिमें कुल सत्कर्म स्थान कितने होते हैं और वे सान्तर क्रमसे हैं या निरन्तर क्रमसे हैं इसका खुलासा किया है। यद्यपि यह स्वामित्वका प्रकरण है, इसलिये यहां स्थानोंका कथन नहीं करना चाहिये तब भी इससे स्वामीका बोध हो ही जाता है, इसलिये इस प्रकरणमें स्थानोंका कथन करनेमें कोई बाधा नहीं है। जघन्य प्रदेशसत्कर्मका उल्लेख पहले किया ही है वह पहला सत्कर्मस्थान है। इसमें एक प्रदेशकी वृद्धि होने पर दूसरा सत्कर्मस्थान होता है और दो प्रदेशों की वृद्धि होने पर तीसरा सत्कर्म स्थान होता है। इस प्रकार उत्तरोत्तर एक एक स्थानके प्रति एक एक प्रदेश बढ़ाते जाना चाहिये। यह वृद्धिका क्रम एक समयप्रबद्धप्रमाण प्रदेशोंके

❀ जो पुण तम्मि एक्कम्मि ट्ठिदिविसेसे उक्कस्सगस्स विसेसो असंखेज्जा समयपबद्धा ।

§ १५६. पुव्वं तिस्से एक्किस्से ट्ठिदीए खविदकम्मंसियलक्खणेण आगदस्स एगसमयपबद्धमेत्ता परमाणू अहिया होंति त्ति परूविदं । एदेण[1] पुण सुत्तेण गुणिदकम्मंसियलक्खणेण आगंतूण वेछावट्ठीओ भमिय मिच्छत्तं खविय एक्किस्से ट्ठिदीए मिच्छत्तपदेसं काऊण ट्ठिदस्स उक्कस्सदव्वादो जहण्णदव्वे सोहिदे जं सेसं तमुक्कस्सगस्स विसेसो णाम । तम्मि विसेसे असंखेज्जा समयपबद्धा होंति । कुदो ? खविदकम्मंसियपगदि-विगिदिगोवुच्छाहिंतो गुणिदकम्मंसियस्स पगदि-विगिदिगोवुच्छाओ असंखेज्जगुणाओ, उक्कस्सजोगेण

बढ़ाने तक ही चालू रहता है आगे नहीं, क्योंकि क्षपितकर्मांशके इससे और अधिक प्रदेशोंकी वृद्धि नहीं होती । इस प्रकार क्षपितकर्मांशके दो समय कालवाली एक स्थितिमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म स्थानसे लेकर उत्तरोत्तर एक एक प्रदेशकी वृद्धि होते हुए एक समयप्रबद्धप्रमाण प्रदेशोंकी वृद्धि होती है । अब प्रश्न यह है कि सबके क्षपितकर्मांशकी विधि के समान रहते हुए किसीके जघन्य सत्कर्मस्थान, किसीके एक प्रदेश अधिक जघन्य सत्कर्मस्थान, किसीके दो प्रदेश अधिक जघन्य सत्कर्मस्थान और अन्तमें जाकर किसीके एकसमयप्रबद्ध अधिक जघन्य सत्कर्मस्थान क्यों पाया जाता है ? वीरसेन स्वामी ने इस शंकाका जो समाधान किया है उसका भाव यह है कि यद्यपि क्षपिकर्मांशकी विधि सबके समान भले ही पाई जाती है तब भी उपशामनाकरण, निधत्तिकरण और निकाचनाकरणके कारण अपकर्षण और उत्कर्षणको प्राप्त होनेवाले परमाणुओंमें समानता नहीं रहती, इसलिये किसीके जघन्य सत्कर्मस्थान, किसी के एक परमाणु अधिक जघन्य सत्कर्मस्थान, किसीके दो परमाणु अधिक जघन्य सत्कर्मस्थान और अन्तमें जाकर किसीके एक समयप्रबद्ध अधिक जघन्य सत्कर्मस्थान बन जाता है । यदि कहा जाय कि इससे क्षपितकर्मांशकी विधिमें अन्तर पड़ जायगा सो भी बात नहीं है, क्योंकि क्षपितकर्मांशकी विधिके लिये जो छह आवश्यक बतलाये हैं वे सबके एक समान पाये जाते हैं, अतएव क्षपितकर्मांशकी विधिमें कोई अन्तर नहीं पड़ता । इस प्रकार क्षपितकर्मांशके दो समयवाली एक स्थितिमें जघन्य सत्कर्मस्थानसे लेकर निरन्तर क्रमसे एक एक परमाणुकी वृद्धि होते हुए अधिक से अधिक एक समयप्रबद्धको वृद्धि होती है यह इस प्रकरण का तात्पर्य है ।

❀ किन्तु उस एक स्थितिविकल्पमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मको प्राप्त हुए द्रव्यका जो विशेष प्राप्त होता है वह असंख्यात समयप्रबद्धरूप है ।

§ १५६. पूर्वसूत्रमें उस एक स्थितिमें क्षपितकर्मांशके लक्षणके साथ आये हुए जीवके एक समयप्रबद्धप्रमाण परमाणु अधिक होते हैं ऐसा कथन किया है । परन्तु इस सूत्रके अनुसार गुणितकर्मांशके लक्षणके साथ आकर एक सौ बत्तीस सागर तक भ्रमण करके और मिथ्यात्वका क्षपण करके मिथ्यात्वके परमाणुओंको एक स्थितिमें करके जो स्थित है उसके उत्कृष्ट द्रव्यमें से जघन्य द्रव्यको घटाने पर जो शेष रहता है उस उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मको प्राप्त हुए द्रव्यका विशेष कहते हैं । उस विशेषमें असंख्यात समयप्रबद्ध होते हैं; क्योंकि क्षपितकर्मांशकी प्रकृति और विकृतिगोपुच्छाओंसे गुणितकर्मांशकी प्रकृति और विकृतिगोपुच्छाएँ असंख्यातगुणी होती हैं, क्योंकि उनका

---

१. आ०प्रतौ 'परूवदव्वं। एदेण' इति पाठः ।

संचिदत्तादो। खविदकम्मंसियअपुव्वगुणसेडिगोवुच्छादो गुणिदकम्मंसियअपुव्वगुणसेडिगोवुच्छा असंखे०गुणा। कुदो? अपुव्वकरणे उक्कस्सपरिणामेहि कयगुणसेडिणिसेयदंसणादो। अणियट्टिगुणसेडिगोवुच्छा पुण उभयत्थ सरिसा, तत्थ परिणामाणुसारिगुणसेडिणिसेयदंसणादो तिकालगोयरासेसअणियट्टीणं समाणसमयाणं भिण्णपरिणामाभावादो। तेण उक्कस्सविसेसे असंखेज्जा समयपबद्धा होंति त्ति णव्वदे। खविदकम्मंसियपगदिगोवुच्छादो गुणिदकम्मंसियपगदिगोवुच्छा जदि वि असंखेज्जगुणा तो वि एगसमयपबद्धस्स असंखे०भागमेत्ता चेव, जोगगुणगारादो वेछावट्ठिअब्भंतरणाणागुणहाणिसलागुप्पण्णकिंचूणण्णोण्णब्भत्थरासीए असंखे०गुणत्तुवलंभादो। अणियट्टिगुणसेडिगोवुच्छाओ पुण उभयत्थ दो वि सरिसाओ। खविदकम्मंसियअपुव्वगुणसेडिगोवुच्छादो गुणिदकम्मंसियअपुव्वगुणसेडिगोवुच्छा जदि वि असंखे०गुणा तो वि विसेसे असंखेज्जाणं समयपबद्धाणमत्थित्तं ण णव्वदे, खविदकम्मंसियअपुव्वगुणसेडिगोवुच्छाए पमाणाणवगमादो त्ति? एत्थ परिहारो वुच्चदे—खविदकम्मंसियम्मि अपुव्वगुणसेडिगोवुच्छासामित्तसमयट्ठिदा जदि वि जहण्णपरिणामेहि कदत्तादो जहण्णा तो वि असंखेज्जसमयपबद्धमेत्ता। कुदो? गुणसेडीए एगट्ठिदीए णिक्खित्तजहण्णदव्वम्मि वि असंखेज्जाणं समयपबद्धाणमुवलंभादो। एदम्हादो तिस्से चेव ट्ठिदीए अपुव्वकरणपरिणामेहि

संचय उत्कृष्ट योगके द्वारा होता है। इसी तरह क्षपितकर्मांशकी अपूर्वकरणसम्बन्धी गुणश्रेणिगोपुच्छासे गुणितकर्मांशकी अपूर्वकरणसम्बन्धी गुणश्रेणिगोपुच्छा असंख्यातगुणी होती है; क्योंकि अपूर्वकरणमें उत्कृष्ट परिणामोंसे की गई गुणश्रेणिके निषेक देखे जाते हैं। किन्तु अनिवृत्तिकरणसम्बन्धी गुणश्रेणिकी गोपुच्छाएँ क्षपित और गुणित दोनोंमें समान हैं; क्योंकि वहाँ परिणामोंके अनुसार गुणश्रेणिके निषेक देखे जाते हैं और समान कालवाले त्रिकालवर्ती जितने भी अनिवृत्तिकरण हैं उनके भिन्न भिन्न परिणाम नहीं होते। इससे जाना जाता है कि उत्कृष्टको प्राप्त हुए द्रव्यके विशेषमें असंख्यात समयप्रबद्ध होते हैं।

शंका—क्षपितकर्मांशकी प्रकृतिगोपुच्छासे गुणितकर्मांशकी प्रकृतिगोपुच्छा यद्यपि असंख्यातगुणी है तो भी वह एक समयप्रबद्धके असंख्यातवें भागमात्र ही है; क्योंकि योगके गुणकारसे एक सौ बत्तीस सागरके अन्दरकी नाना गुणहानिशलाकाओंसे उत्पन्न हुई कुछ कम अन्योन्याभ्यस्तराशि असंख्यातगुणी पाई जाती है। किन्तु अनिवृत्तिकरणसम्बन्धी गुणश्रेणिकी दोनों ही गोपुच्छाएँ दोनों जगह समान हैं। हां क्षपितकर्मांशकी अपूर्वकरणसम्बन्धी गुणश्रेणिकी गोपुच्छासे गुणितकर्मांशकी अपूर्वकरणसम्बन्धी गुणश्रेणिकी गोपुच्छा यद्यपि असंख्यातगुणी है तो भी उत्कृष्ट विशेषमें असंख्यात समयप्रबद्धोंका अस्तित्व प्रतीत नहीं होता; क्योंकि क्षपितकर्मांशकी अपूर्वकरणसम्बन्धी गुणश्रेणिकी गोपुच्छाका प्रमाण ज्ञात नहीं है।

समाधान—इस शंकाका परिहार करते हैं—क्षपितसत्कर्मवाले जीवमें रहनेवाली स्वामित्व कालमें अपूर्वकरणसम्बन्धी गुणश्रेणिकी गोपुच्छा यद्यपि जघन्य परिणामोंसे की हुई होनेके कारण जघन्य है तो भी वह असंख्यात समयप्रबद्धप्रमाण है; क्योंकि गुणश्रेणिकी एक स्थितिमें निक्षिप्त जघन्य द्रव्यमें भी असंख्यात समयप्रबद्ध पाये जाते हैं। और इससे उसी स्थितिमें अपूर्वकरण परिणामोंके द्वारा उत्कृष्ट रूपसे संचित द्रव्य असंख्यातगुणा है, इस-

उक्कस्सेण संचिददव्वमसंखे०गुणं ति रूवूणगुणागारेण अपुव्वकरणजहण्णगुणसेडिदव्वे एगट्ठिदिट्ठिदे गुणिदे जेण असंखेज्जा समयपबद्धा होंति तेणुक्कस्सविसेसो असंखेज्जसमयपबद्धमेत्तो त्ति परिच्छिज्जदे। किं च विगिदिगोवुच्छं पि अस्सिदूण असंखेज्जा समयपबद्धा उवलब्भंति। का विगिदिगोवुच्छा णाम? अंतोकोडाकोडिमेत्तट्ठिदीसु एगेगट्ठिदिम्मि ट्ठिदपदेसग्गं पयडिगोवुच्छा। ट्ठिदिखंडयघादे कीरमाणे चरिमट्ठिदिखंडयस्स एगेगट्ठिदीए अपुव्वपदेसलाहो विगिदिगोवुच्छा णाम। तिस्से पमाणं केत्तियं? अंतोमुहुत्तोवट्टिदओकड्डुक्कड्डणभागहारपदुप्पण्णचरिमफालिगुणिदवेछावट्ठिअण्णोण्णब्भत्थरासिणोवट्टिददिवड्ढगुणहाणिसमयपबद्धमेत्तं। एसा जहण्णविगिदिगोवुच्छा। उक्कस्सिया पुण एत्तो असंखेज्जगुणा, खविदकम्मंसियजोगादो गुणिदकम्मंसियजोगस्स असंखे०गुणत्तुवलंभादो। तेणुक्कस्सविसेसो असंखेज्जसमयपबद्धमेत्तो त्ति सिद्धं। एदिस्से एगणिसेगट्ठिदीए असंखे०समयपबद्धमेत्तपदेसट्ठाणाणि णिरंतरमुप्पण्णाणि त्ति पदुप्पायणफला एसा परूवणा।

लिए रूपोन गुणकारके द्वारा एक स्थितिमें स्थित अपूर्वकरणसम्बन्धी गुणश्रेणिके जघन्य द्रव्यको गुणा करने पर यतः असंख्यात समयप्रबद्ध होते हैं अतः उत्कृष्ट विशेष असंख्यातसमयप्रबद्धप्रमाण होता है यह जाना जाता है। दूसरे, विकृतिगोपुच्छाकी अपेक्षा भी असंख्यात समयप्रबद्ध पाये जाते हैं।

शंका—विकृतिगोपुच्छा किसे कहते हैं?

समाधान—अन्तःकोडाकोडीमात्र स्थितिमें से एक एक स्थितिमें स्थित जो प्रदेश समूह है उसे प्रकृतिगोपुच्छा कहते हैं और स्थितिकाण्डकघातके किये जाने पर अन्तिम स्थितिकाण्डकके द्रव्यका एक एक स्थितिमें जो अपूर्व प्रदेशोंका लाभ होता है उसे विकृतिगोपुच्छा कहते हैं।

शंका—उस विकृतिगोपुच्छाका प्रमाण कितना है?

समाधान—अन्तर्मुहूर्तसे भाजित जो अपकर्षण-उत्कर्षण भागहार, उससे गुणित जो अन्तिम फाली, उससे गुणित दो छयासठ सागरकी अन्योन्याभ्यस्त राशि उसका भाग डेढ़ गुणहानिगुणित समयप्रबद्धोंमें देनेसे जो लब्ध आवे उतना है। यह जघन्य विकृतिगोपुच्छा है। उत्कृष्ट विकृतिगोपुच्छा इससे असंख्यातगुणी है, क्योंकि क्षपितकर्मांशके योगसे गुणितकर्मांशका योग असंख्यातगुणा पाया जाता है, इसलिये उत्कृष्ट विशेष असंख्यात समयप्रबद्धमात्र है यह सिद्ध हुआ। इस एक निषेकस्थितिके असंख्यात समयप्रबद्धप्रमाण प्रदेशस्थान निरन्तर उत्पन्न होते हैं यह कथन करना ही इस प्ररूपणाका फल है।

विशेषार्थ—अब तक यह तो बतलाया कि क्षपितकर्मांशके दो समय कालवाली एक स्थितिके रहते हुए जघन्य सत्कर्मस्थानसे उसीका उत्कृष्ट सत्कर्मस्थान एक समयप्रबद्धप्रमाण अधिक होता है। अब गुणित कर्मांशके उत्कृष्ट गत विशेषताका खुलासा करते हैं। दो समय कालवाली एक स्थितिके रहते हुए क्षपितकर्मांशके जघन्य सत्कर्मस्थानसे गुणितकर्मांशका उत्कृष्ट सत्कर्मस्थान असंख्यात समयप्रबद्धप्रमाण अधिक होता है। तात्पर्य यह है कि क्षपितकर्मांशके दो समय कालवाली एक स्थितिके रहते हुए जो जघन्य सत्कर्मस्थान होता

§ १५७. एसो उक्कस्सविसेसो जहण्णसंतकम्मादो थोवो त्ति जाणावणट्ठमुत्तरं सुत्तं भणदि—

❀ तस्स पुण जहण्णयस्स संतकम्मस्स असंखे०भागो ।

§ १५८. एसो एगट्ठिदिविसेसट्ठिदउक्कस्सविसेसो असंखेज्जसमयपबद्धमेत्तो होंतो वि जहण्णसंतकम्मस्स असंखे०भागमेत्तो । तं जहा—एयं पयडिगोपुच्छं अण्णेगं विगिदिगोपुच्छमपुव्वगुणसेडिगोपुच्छमणियट्टिगुणसेडिगोपुच्छं च घेत्तूण जहण्णदव्वं

है उसमें अपकर्षण और उत्कर्षणके कारण एक समयप्रबद्धप्रमाण प्रदेशों तक वृद्धि क्षपितकर्मांशिकके ही देखी जाती है । इसके आगे गुणितकर्मांशके उसी स्थितिके रहते हुए एक एक परमाणुकी वृद्धि होने लगती है और इस प्रकार वृद्धिको प्राप्त हुए कुल परमाणुओंका जोड़ असंख्यात समयप्रबद्धप्रमाण होता है । मतलब यह है कि दो समयवाली एक स्थितिके जघन्य सत्कर्मस्थानसे उत्कृष्ट सत्कर्मस्थानमें असंख्यात समयप्रबद्धोंका अन्तर रहता है और नाना जीवोंकी अपेक्षा इतने स्थान पाये जाना सम्भव है । इनमेंसे एकसमयप्रबद्धप्रमाण वृद्धि होने तकके स्थान क्षपितकर्मांशके पाये जाते हैं और आगेके सब स्थान गुणितकर्मांशके ही पाये जाते हैं । बात यह है कि चाहे क्षपितकर्मांश जीव हो या गुणितकर्मांश उनमेंसे प्रत्येकके दो समय कालवाली एक स्थितिमें चार गोपुच्छाएं पाई जाती हैं—प्रकृतिगोपुच्छा, विकृतिगोपुच्छा, अपूर्वकरणकी गुणश्रेणिगोपुच्छा और अनिवृत्तिकरणकी गुणश्रेणिगोपुच्छा । इनमेंसे दोनोंके अनिवृत्तिकरणकी गुणश्रेणिगोपुच्छाएं तो समान होती हैं; क्योंकि अनिवृत्तिकरणमें दोनोंके एकसे परिणाम होते हैं । अब रहीं शेष गोपुच्छाएं सो उनमें क्षपितकर्मांशकी तीनों गोपुच्छाओंसे गुणितकर्मांशकी तीनों गोपुच्छाएँ असंख्यातगुणी होती हैं । इससे ज्ञात होता है कि जघन्य सत्कर्मस्थानसे उत्कृष्टगत विशेष असंख्यात समयप्रबद्ध अधिक पाया जाता है । यहां इतना विशेष जानना चाहिए कि क्षपितकर्मांश और गुणितकर्मांश इन दोनोंके अनिवृत्तिकरण की गुणश्रेणीगोपुच्छा तो समान होती है, इसलिये इसके कारण तो क्षपितकर्मांशसे गुणितकर्मांशके असंख्यात समयप्रबद्ध अधिक सत्त्व पाया नहीं जा सकता । अब यदि प्रकृतिगोपुच्छाकी अपेक्षा विचार करते हैं तो यद्यपि क्षपितकर्मांशकी प्रकृतिगोपुच्छासे गुणितकर्मांशकी प्रकृतिगोपुच्छा असंख्यातगुणी होती है तो भी गुणितकर्मांशकी प्रकृतिगोपुच्छा एक समयप्रबद्धके असंख्यातवें भागप्रमाण ही पाई जाती है, इसलिये इसकी अपेक्षा भी क्षपितकर्मांशसे गुणितकर्मांशके असंख्यात समयप्रबद्ध अधिक सत्त्व नहीं पाया जा सकता । अब रही शेष दो गोपुच्छाएं सो इनकी अपेक्षा ही यह वृद्धि सम्भव है और इसी अपेक्षासे प्रकृतमें क्षपितकर्मांशके जघन्य द्रव्यसे गुणितकर्मांशका उत्कृष्ट द्रव्य असंख्यात समयप्रबद्ध अधिक कहा है ।

§ १५७ यह उत्कृष्ट विशेष जघन्य सत्कर्म से थोड़ा है यह बतलाने के लिये आगे का सूत्र कहते हैं—

❀ किन्तु यह उत्कृष्ट द्रव्यका विशेष उस जघन्य सत्कर्मके असंख्यातवें भागप्रमाण है ।

§ १५८ एक स्थिति विशेषमें स्थित यह उत्कृष्ट विशेष असंख्यात समयप्रबद्धप्रमाण होता हुआ भी जघन्य सत्कर्मके असंख्यातवें भागमात्र है । उसका खुलासा इस प्रकार है—एक प्रकृतिगोच्छा, एक विकृतिगोपुच्छा, अपूर्वकरणसम्बन्धी गुणश्रेणिकी गोपुच्छा और अनिवृत्तिकरणसम्बन्धी गुणश्रेणिकी गोपुच्छाको लेकर जघन्य द्रव्य होता है । इन चारों गोपुच्छाओंमें

होदि। एदासु चदुसु गोपुच्छासु अणियट्टिगुणसेडिगोपुच्छा पहाणा, सेसतिण्हं गोपुच्छाणमेदिस्से असंखे०भागत्तादो एदेसिं तिण्हं गोपुच्छाणं जो उक्कस्सविसेसो-सो वि एदासिं पदेसेहिंतो पदेसग्गेण ण असंखेज्जगुणो किं तु तस्स विसेसस्स पदेसग्ग-मणियट्टिगुणसेडिगोपुच्छपदेसग्गादो असंखेज्जगुणहीणं। एदं कुदो णव्वदे ? 'तस्स पुण जहण्णयस्स संतकम्मस्स असंखेज्जदिभागो' त्ति सुत्तणिद्देसण्णहाणुववत्तीदो। किंफला एसा परूवणा। जहण्णट्ठाणस्स असंखे०भागमेत्ताणि चेव एत्थ पदेससंतकम्मट्ठाणाणि लब्भंति त्ति पदुप्पायणफला।

❀ एदेण कारणेण एगं फद्दयं।

§ १५९. जेण उक्कस्सविसेसपदेसग्गमणियट्टिगुणसेडिपदेसग्गस्स असंखे०भागो तेण पदेसुत्तरकमेण णिरंतरवड्ढी ण विरुज्झदि त्ति एयं फद्दयं। जदि पुण विसेसो

अनिवृत्तिकरणसम्बन्धी गुणश्रेणिकी गोपुच्छा प्रधान है, क्योंकि शेष तीन गोपुच्छाएँ इसके असंख्यातवें भागमात्र हैं। इन तीन गोपुच्छाओंका जो उत्कृष्ट विशेष है वह भी इनके प्रदेशोंसे प्रदेशोंकी अपेक्षा असंख्यातगुणा नहीं है, किन्तु उस विशेषका जो प्रदेशसमूह है वह अनिवृत्तिकरण सम्बन्धी गुणश्रेणिकी गोपुच्छाके प्रदेशसमूहसे असंख्यातगुणा हीन है।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना ?

समाधान—यदि ऐसा नहीं होता तो 'उस जघन्य सत्कर्मके असंख्यावें भाग प्रमाण है' ऐसा सूत्रका कथन नहीं होता।

शंका—इस कथनका क्या प्रयोजन है ?

समाधान—जघन्य प्रदेशस्थानके असंख्यातवें भागमात्र ही यहां प्रदेशसत्कर्मस्थान पाये जाते हैं यह ज्ञान कराना ही इस कथनका प्रयोजन है।

विशेषार्थ—पहले उत्कृष्ट विशेष असंख्यात समयप्रबद्धप्रमाण सिद्ध कर आए हैं। इतने कथनमात्रसे यह ज्ञात नहीं होता कि यह उत्कृष्ट विशेष जघन्य सत्कर्मके प्रमाणसे कितना अधिक है, अतः इस बातका ज्ञान करानेके लिए यहां चूर्णिसूत्रके आधारसे यह सिद्ध करके बतलाया गया है कि यह उत्कृष्ट विशेष जघन्य सत्कर्मके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसकी सिद्धिमें वीरसेन स्वामीने जो युक्ति दी है उसका भाव यह है कि जघन्य द्रव्यमें चार गोपुच्छाएं होती हैं। उनमें अनिवृत्तिकरणका गुणश्रेणि गोपुच्छा मुख्य है, क्योंकि शेष तीन गोपुच्छाएं उसके असंख्यातवें भागप्रमाण होता हैं। तात्पर्य यह है कि जिस अनिवृत्ति-करणकी गोपुच्छाके कारण बहुत अन्तर पड़ सकता है वह तो जघन्य प्रदेशसत्कर्म और उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म दोनों जगह समान है। विषमता केवल तीन गोपुच्छाओंके कारण सम्भव है पर वे तीनों मिलकर भी अनिवृत्तिकरण गुणश्रेणीगोपुच्छासे असंख्यातगुणी हीन हैं। अतः उत्कृष्ट विशेष जघन्य सत्कर्मके असंख्यातवें भागप्रमाण है यह सिद्ध होता है।

❀ इस कारणसे एक ही स्पर्धक होता है।

§ १५९ यतः उत्कृष्ट विशेषका प्रदेशसमूह अनिवृत्तिकरणसम्बन्धी गुणश्रेणिके प्रदेश-समूहके असंख्यातवें भागप्रमाण है अतः प्रदेशोत्तर क्रमसे निरन्तर वृद्धिके होनेमें कोई विरोध नहीं आता, इसलिये एक स्पर्धक होता है। किन्तु यदि वह विशेष अनिवृत्तिकरणसम्बन्धी

अणियट्टिगुणसेडिगोवुच्छादो संखे०गुणो असंखेज्जगुणो वा होज्ज तो णिरंतरवड्ढीए अभावादो एगं फद्दयं पि ण होज्ज, पगदि-विगिदि-अपुव्वगुणसेडिगोवुच्छासु उक्कस्सेण वड्ढिददव्वे अणियट्टिगुणसेढीए असंखे०भागमेत्तपरमाणुत्तरकमेण वड्ढिदे पुणो सेसपदेसाणं णिरंतरकमेण वड्ढावणोवायाभावादो। तम्हा एदिस्से ट्ठिदीए पदेसग्गस्स एगं चेव फद्दयं त्ति दट्ठव्वं।

❀ दोसु ट्ठिदिविसेसेसु बिदियं फद्दयं।

§ १६०. गुणिदकम्मंसियलक्खणेणागदएगट्ठिदिदुसमयकालउक्कस्सदव्वे खविदकम्मंसियलक्खणेणागदस्स दोट्ठिदितिसमयकालजहण्णदव्वम्मि सोहिदे सुद्धसेसम्मि एगपरमाणुस्स अणुवलंभादो। ण च एगं मोत्तूण बहुसु परमाणुसु अक्कमेण वड्ढिदेसु एगं फद्दयं होदि, कमवड्ढि-हाणीणं फद्दयववएसादो। सुद्धसेसम्मि एगपरमाणुं मोत्तूण बहुआ[1] परमाणू थक्कंति त्ति कुदो णव्वदे ? जुत्तीदो। तं जहा—खविदकम्मंसियचरिम-

गुणश्रेणिकी गोपुच्छासे संख्यातगुणा अथवा असंख्यातगुणा होता तो निरन्तर वृद्धिका अभाव होनेसे एक स्पर्धक भी नहीं होता; क्योंकि प्रकृतिगोपुच्छा, विकृतिगोपुच्छा और अपूर्वकरणकी गुणश्रेणिगोपुच्छा इनमें उत्कृष्ट रूपसे वृद्धिको प्राप्त हुआ द्रव्य अनिवृत्तिकरणकी गुणश्रेणिके असंख्यातवें भागप्रमाण होता है जो प्रदेशोत्तरक्रमसे बढ़ा है किन्तु इसके अतिरिक्त शेष प्रदेशोंका निरन्तरक्रमसे बढ़ानेका कोई उपाय नहीं पाया जाता, इसलिये इस स्थितिके प्रदेशोंका एक ही स्पर्धक होता है ऐसा जानना चाहिये।

विशेषार्थ—पहले उत्कृष्ट विशेषको जघन्य प्रदेशसत्कर्मके असंख्यातवें भागप्रमाण बतला आये हैं और वहां इस कथनकी सार्थकताको बतलाते हुए कहा है कि यह प्ररूपणा जघन्य प्रदेशसत्कर्मस्थानके असंख्यातवें भागप्रमाण कुल स्थान पाये जाते हैं इस बातके बतलानेके लिये की गई है। किन्तु ये स्थान निरन्तर वृद्धिको लिए हुए हैं या सान्तर वृद्धिरूप हैं इस बातका ज्ञान उक्त प्ररूपणासे नहीं होता है, अतः यहाँ इसी बातका ज्ञान कराया गया है। जघन्य सत्कर्मस्थानसे लेकर उत्कृष्ट सत्कर्मस्थान तक यहाँ जितने भी स्थान सम्भव हैं वे निरन्तर क्रमसे वृद्धिको लिए हुए हैं, इसलिए इन सबका मिलाकर एक स्पर्धक होता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है, क्योंकि स्पर्धकका लक्षण है कि जहाँ निरन्तररूपसे क्रमवृद्धि और हानि पाई जाती है उसे स्पर्धक कहते हैं।

❀ दो स्थितिविशेषोंमें दूसरा स्पर्धक होता है।

§ १६० गुणितकर्मांशके लक्षणके साथ आये हुये दो समयकी स्थितिवाले एक निषेकके उत्कृष्ट द्रव्यको क्षपितकर्मांशके लक्षणके साथ आये हुये तीन समयकी स्थितिवाले दो निषेकसम्बन्धी जघन्य द्रव्यमें से घटानेपर जो शेष रहे उसमें एक परमाणु नहीं पाया जाता। और एकको छोड़कर बहुत परमाणुओंके साथ बढ़ने पर एक स्पर्धक होता नहीं; क्योंकि क्रमसे होनेवाली वृद्धि और हानिको स्पर्धक कहते हैं।

शंका—घटाने पर शेषमें एक परमाणुको छोड़कर बहुत परमाणु रहते हैं यह किस प्रमाणसे जाना ?

१. आ०प्रतौ 'एगपरमाणुं घेत्तूण बहुआ' इति पाठः।

अणियट्टिगुणसेडिगोवुच्छादो गुणिदकम्मंसियअणियट्टिगुणसेडिगोवुच्छा सरिसा त्ति अवणेयव्वा। कुदो सरिसत्तं ? खविद-गुणिदकम्मंसियअणियट्टिपरिणामाणं सरिसत्तादो। ण च परिणामेसु समाणेसु संतेसु गुणसेडिपदेसग्गाणं विसरिसत्तं, अत्तकज्जत्तप्पसंगादो। खविदकम्मंसियपगदि-विगिदिअपुव्वगुणसेढिगोवुच्छाहिंतो दोसु[1] ट्ठिदीसु ट्ठिदाहिंतो गुणिदकम्मंसियस्स एगट्ठिदीए ट्ठिदउक्कस्सपगदि-विगिदि-अपुव्वगुणसेढिगोवुच्छाओ असंखेज्जगुणाओ त्ति तासु तत्थ अवणिदासु असंखेज्जा भागा चेट्ठंति। तं च खविदकम्मंसियम्मि उव्वरिदअणियट्टिगुणसेढिगोवुच्छाए असंखेज्जदिभागमेत्ता त्ति तेसु तत्थ सोहिदेसु फद्दयंतरं होदि। सव्वअपुव्वगुणसेढिगोवुच्छाहिंतो जेण जहण्णिया वि अणियट्टि[2]गुणसेढिगोवुच्छा असंखे०गुणा तेण एसो वि विसेसो अणियट्टिस्स दुचरिम-गुणसेढिगोवुच्छादो वि असंखेज्जगुणहीणो त्ति दट्ठव्वं। तदो दोसु ट्ठिदीसु विदियं फद्दयं होदि त्ति सिद्धं। पुणो एदासु अट्ठसु गोवुच्छासु अणियट्टिगोवुच्छाओ मोत्तूण सेसछगोवुच्छाओ परमाणुत्तरकमेण वड्ढावेदव्वाओ जाव जहण्णादो असंखेज्जगुणत्तं पत्ताओ त्ति। कथं परमाणुत्तरवड्ढी ? ण, पयडिगोवुच्छाए पदेसुत्तरवड्ढिं पडि विरोहा-

समाधान—युक्तिसे जाना। उसका खुलासा इस प्रकार है—क्षपितकर्मांशके अनिवृत्तिकरणसम्बन्धी गुणश्रेणिकी अन्तिम गोपुच्छासे गुणितकर्मांशके अनिवृत्तिकरण-सम्बन्धी गुणश्रेणिकी गोपुच्छा समान है, इसलिए उसे अलग कर देना चाहिए।

शंका—क्यों समान है ?

समाधान—क्योंकि क्षपितकर्मांश और गुणितकर्मांशके अनिवृत्तिकरणरूप परिणाम समान होते हैं और परिणामोंके समान होते हुए गुणश्रेणिके प्रदेशसंचयमें असमानता हो नहीं सकती। यदि हो तो प्रदेशसंचय परिणामका कार्य नहीं ठहरेगा।

क्षपितकर्मांशकी दो स्थितियोंमें स्थित प्रकृतिगोपुच्छा, विकृतिगोपुच्छा और अपूर्वकरण-सम्बन्धी गुणश्रेणिकी गोपुच्छाओंकी अपेक्षा गुणितकर्मांशकी एक स्थितिमें स्थित उत्कृष्ट प्रकृतिगोपुच्छा, विकृतिगोपुच्छा और अपूर्वकरणसम्बन्धी गुणश्रेणिकी गोपुच्छा असंख्यातगुणी हैं, इसलिए उनको इनमेंसे घटाने पर असंख्यात बहुभाग बाकी बचते हैं और वे असंख्यात बहुभाग क्षपितकर्मांशकी बाकी बची अनिवृत्तिकरणकी गुणश्रेणि गोपुच्छाके असंख्यातवें भागमात्र हैं, इसलिए उनको उसमेंसे घटाने पर दोनों स्पर्धकोंका अन्तर प्राप्त होता है। यतः सब अपूर्वकरणसम्बन्धी गुणश्रेणिकी गोपुच्छाओंसे जघन्य भी अनिवृत्तिकरणकी गुणश्रेणि गोपुच्छा असंख्यातगुणी है अतः यह विशेष भी अनिवृत्तिकरणकी गुणश्रेणिसम्बन्धी द्विचरिम गोपुच्छासे भी असंख्यातगुणा हीन है ऐसा जानना चाहिए। अतः दो स्थितियोंमें दूसरा स्पर्धक होता है यह सिद्ध हुआ।

इसके बाद इन आठ गोपुच्छाओंमेंसे अनिवृत्तिकरणसम्बन्धी गोपुच्छाओंको छोड़कर शेष छह गोपुच्छाओंको एक एक परमाणुके क्रमसे तब तक बढ़ाना चाहिए जब तक ये जघन्यसे असंख्यातगुणी प्राप्त हों।

शंका—एक एक परमाणुके क्रमसे वृद्धि कैसे होगी ?

1. ता०आ०प्रत्योः '-गोवुच्छाहिं दोसु' इति पाठः। 2. आ०प्रतौ 'जहण्णियादिअणियट्टि-' इति पाठः।

भावादो। एत्थतणो वि उक्कस्सविसेसो असंखेज्जसमयपबद्धमेत्तो होदूण एगअणियट्टि-गुणसेढिगोवुच्छाए असंखेज्जभागमेत्तो। एवमणंतेहि ठाणेहि विदियं फद्दयं।

❀ एवमावलियसमऊणमेत्ताणि फद्दयाणि।

§ १६१. एवमेदेहि दोहि फद्दएहिं सह समयूणावलियमेत्ताणि फद्दयाणि होंति, चरिमफालीए पदिदाए उदयावलियब्भंतरे उक्कस्सेण समयूणावलियमेत्ताणं चेव गोवुच्छाणमुवलंभादो। एत्थ एदेसु फद्दएसु उप्पाइज्जमाणेसु फद्दयंतरपरूवणविहाणं फद्दयाणमायामपरूवणविहाणं च जाणिदूण वत्तव्वं।

समाधान—नहीं; क्योंकि प्रकृतिगोपुच्छामें एक एक परमाणुके क्रमसे वृद्धि होनेमें कोई विरोध नहीं है।

यहाँका भी उत्कृष्ट विशेष असंख्यात समयप्रबद्धमात्र होकर एक अनिवृत्तिकरणसम्बन्धी गुणश्रेणिकी गोपुच्छाके असंख्यातवें भाग है। इस प्रकार अनन्त स्थानोंसे दूसरा स्पर्धक होता है।

विशेषार्थ—पहले एक स्थिति विशेषमें पाये जानेवाले स्थानोंका एक स्पर्धक होता है यह बतला आये हैं। अब यहां दो स्थितिविशेषोंमें वही स्पर्धक चालू न रहकर अन्य स्पर्धक चालू हो जाता है यह बताया जाता जा रहा है। यहां दो स्थितिविशेषोंसे तात्पर्य तीन समयकी स्थितिवाले दो निषेकों में अपना उत्कृष्टगत विशेष लिया गया है। यह जहां अपने जघन्य स्थानसे उत्कृष्ट स्थान तक निरन्तर क्रमसे वृद्धिको लिये हुए है वहाँ प्रथम स्पर्धकके उत्कृष्ट स्थानसे निरन्तर क्रमसे वृद्धिको लिए हुए नहीं है, प्रत्युत प्रथम स्पर्धकके अन्तिम स्थानसे इस स्पर्धकके प्रथम स्थानमें युगपत् बहुत परमाणओंकी वृद्धि देखी जाती है, इसलिये यह दूसरा स्पर्धक है यह सिद्ध होता है। इस स्पर्धकमें कितने स्थान हैं आदि बातोंका खुलासा मूलमें किया ही है, इसलिये वहांसे जान लेना चाहिए। दिशाका बोध कराने मात्रके लिए यह लिखा है।

❀ इस प्रकार एक समय कम आवलिप्रमाण स्पर्धक होते हैं।

§ १६१. इस प्रकार इन दो स्पर्धकोंके साथ सब कुल एक समय कम आवलीप्रमाण स्पर्धक होते हैं, क्योंकि अन्तिम फालिका पतन होने पर उदयावलिके अन्दर उत्कृष्ट रूपसे एक समय कम आवलीप्रमाण ही गोपुच्छ पाये जाते हैं।

यहाँ इन स्पर्धकोंके उत्पन्न करने पर स्पर्धकोंके अन्तरके कथनका विधान और स्पर्धकोंके आयामके कथनका विधान जानकर कहना चाहिए।

विशेषार्थ—दो समयवाली एक स्थितिके अपने जघन्यके लेकर अपने उत्कृष्ट तक जितने सत्कर्मस्थान होते हैं उनका एक स्पर्धक होता है और तीन समयवाली दो स्थितियोंके अपने जघन्यसे लेकर अपने उत्कृष्ट तक जितने सत्कर्मस्थान होते हैं उनका दूसरा स्पर्धक होता है यह बात तो पृथक् पृथक् बतला आये हैं। अब यहाँ यह बतलाया है कि इस प्रकार इन दो स्पर्धकों सहित कुल स्पर्धक आवलिप्रमाण कालमेंसे एक समयके कम करने पर जितने समय शेष रहते हैं उतने होते हैं। उतने क्यों होते है इस प्रश्नका समाधान करते हुये वीरसेन स्वामीने जो कुछ लिखा है उसका भाव यह है स्थितिकोण्डकघात उदयावलिके बाहरके द्रव्यका ही होता है, इसलिये जिस समय अन्तिम फालिका पतन होता है उस समय उदयावलिके भीतर प्रकृत कर्मके एक कम उदयावलिप्रमाण निषेक पाये जानेके कारण

ॐ अपच्छिमस्स ट्ठिदिखंडयस्स चरिमसमयजहण्णफद्दयमादिं कादूण जाव मिच्छत्तस्स उक्कस्सगं ति एदमेगं फद्दयं।

§ १६२. 'अपच्छिमस्स ट्ठिदिखंडयस्स चरिमसमए' त्ति णिद्देसो समयूणुक्कीरणद्धामेत्तगोवुच्छाणं फालीणं च गालणफलो। जहण्णपदणिद्देसो गुणिदकम्मंसियगुणिदखविद-घोलमाणचरिमफालिपडिसेहदुवारेण खविदकम्मंसियचरिमफालिपदेसग्गग्गहणफलो। खविदकम्मंसियस्स अपच्छिमट्ठिदिखंडयचरिमफालिजहण्णदव्वमादिं कादूण जाव मिच्छत्तस्स उक्कस्सदव्वं त्ति एदमेगं फद्दयं, अंतराभावादो। एदस्स चरिमफद्दयस्स अंतरपमाणपरूवणा कीरदे। तं जहा—समयूणावलियमेत्तफद्दएसु चरिमफद्दयउक्कस्सदव्वादो आवलियमेत्तफद्दएसु चरिमफद्दयस्स जहण्णदव्वमसंखेज्जगुणं, गुणसेढिदव्वादो चरिमट्ठिदिकंडयचरिमफालिदव्वस्स असंखेज्जगुणत्तादो। कथमसंखेज्जगुणत्तं णव्वदे? पुव्वकोडिमेत्तकालं कदगुणसेढिदव्वादो चरिमफालिपदेसग्गमसंखेज्जगुणं। त्ति सुत्ताविरुद्ध-गुरुवयणादो। असंखेज्जगुणओकड्डुकड्डणभागहारमेत्तखंडीकददिवड्ढगुणहाणिमेत्तसमयपबद्धेहिंतो देसूणपुव्वकोडिमेत्तखंडेसु अवणिदेसु वि अवणिददव्वादो उव्वरिददव्वस्स असंखेज्जगुणत्तुवलंभादो वा। किं च चरिमफालिम्हि पविट्ठअणियट्ठि-

---

स्पर्धक भी उतने ही होते हैं। यहाँ प्रथम स्पर्धक और द्वितीय स्पर्धकके मध्य जैसे पहले अन्तरका कथन किया है उसी प्रकार सर्वत्र घटित कर लेना चाहिये। तथा द्वितीय स्पर्धकका आयाम अनन्तप्रमाण बतलाया है उसी प्रकार तृतीयादि सब स्पर्धकोंका आयाम जान लेना चाहिये।

ॐ अन्तिम स्थितिकाण्डकके अन्तिम समयसम्बन्धी जघन्य स्पर्धकसे लेकर मिथ्यात्वके उत्कृष्ट द्रव्य पर्यन्त एक स्पर्धक होता है।

§ १६२. 'अन्तिम स्थितिकाण्डकके अन्तिम समय' इस कथनका प्रयोजन एक समय कम उत्कीरणकाल प्रमाण गोपुच्छाओं और फालियोंका गलन कराना है। जघन्य पदका निर्देश करनेका प्रयोजन गुणितकर्मांशकी गुणित, क्षपित और घोलमान अन्तिम फालीका प्रतिषेध करके क्षपितकर्मांशकी अन्तिम फालीके प्रदेशोंका ग्रहण कराना है। इस प्रकार क्षपितकर्मांशके अन्तिम स्थितिकाण्डककी अन्तिम फालीके जघन्य द्रव्यसे लेकर मिथ्यात्वके उत्कृष्ट द्रव्य पर्यन्त एक स्पर्धक होता है, क्योंकि इसमें अन्तरका अभाव है।

अब इस अन्तिम स्पर्धकके अन्तरके प्रमाणका कथन करते हैं। यथा—एक समय कम आवलीप्रमाण स्पर्धकोंमें जो अन्तिम स्पर्धक है उसके उत्कृष्ट द्रव्यसे आवलीप्रमाण स्पर्धकोंमें जो अन्तिम स्पर्धक है उसका जघन्य द्रव्य असंख्यातगुणा है; क्योंकि गुणश्रेणिके द्रव्यसे स्थितिकाण्डककी अन्तिम फालीका द्रव्य असंख्यातगुणा है।

शंका—अन्तिम फालीका द्रव्य असंख्यातगुणा है यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

समाधान—एक पूर्वकोटि काल पर्यन्त की गई गुणश्रेणिके द्रव्यसे अन्तिम फालीके प्रदेशोंका समूह असंख्यातगुणा है इस सूत्रके अविरुद्ध गुरुवचनसे जाना जाता है। अथवा डेढ़ गुणहानिप्रमाण समयप्रबद्धोंके अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारसे असंख्यातगुणे खण्ड करके, उन खण्डोंमें से कुछ कम पूर्वकोटिप्रमाण खण्डोंके घटाने पर भी घटाये हुए द्रव्यसे बाकी बचा

गुणसेढिगोवुच्छाओ चेव हेट्ठा गलिदअसेसदव्वादो असंखेज्जगुणाओ, असंखे०गुणाए सेढीए[1] णिसित्तत्तादो। गोवुच्छागारेण ट्ठिदफालिदव्वं पुण चरिमफालीए अंतोट्ठिद-गुणसेढिदव्वादो असंखेज्जगुणं, फालीए आयामस्स गोवुच्छगुणगारं पेक्खिदूण असंखे०-गुणत्तादो। तेण समयूणावलियमेत्तफद्दयउक्कस्सदव्वे आवलियफद्दयजहण्णदव्वादो सोहिदे सुद्धसेसं फद्दयंतरं होदि। एदं जहण्णदव्वमादिं कादूण पदेसुत्तरकमेण णिरंतरं वड्ढावेदव्वं जाव सत्तमाए पुढवीए चरिमसमयणेरइयस्स उक्कस्सदव्वं ति। एवं कदे मिच्छत्तस्स आवलियमेत्तफद्दएहि अणंताणि ठाणाणि उप्पण्णाणि।

§ १६३. संपहि आवलियमेत्तफद्दएसु पुव्वं सामण्णेण परूविदपदेसट्ठाणाणं विसेसिदूण परूवणं कस्सामो। एसा परूवणा पढमफद्दयपरूवणाए किण्ण परूविदा ? ण,

हुआ द्रव्य असंख्यातगुणा पाया जाता है, इससे भी जाना जाता है। दूसरे, अन्तिम फालीमें प्रविष्ट अनिवृत्तिकरणसम्बन्धी गुणश्रेणिकी गोपुच्छाएँ ही नीचे विगलित हुए सब द्रव्यसे असंख्यात गुणी हैं, क्योंकि असंख्यात गुणितश्रेणीरूपसे उनका निक्षेपण हुआ है। तथा गोपुच्छाके आकार रूपसे स्थित फालीका द्रव्य तो अन्तिम फालीके अभ्यन्तरस्थित गुणश्रेणीके द्रव्यसे असंख्यात-गुणा है; क्योंकि गोपुच्छाके गुणकारकी अपेक्षा फालीका आयाम असंख्यातगुणा है। अतः एक समय कम आवलिप्रमाण स्पर्द्धकोंके उत्कृष्ट द्रव्यको आवलीप्रमाण स्पर्द्धकोंके जघन्य द्रव्यमेंसे घटानेपर जो शेष बचता है वह स्पर्द्धकोंका अन्तर होता है। इस जघन्य द्रव्यसे लेकर एक एक प्रदेश करके इसे तब तक बढ़ाना चाहिये जब तक सातवें नरकके अन्तिम समयवर्ती नारकीके उत्कृष्ट द्रव्य आवे। ऐसा करने पर मिथ्यात्वके आवलिप्रमाण स्पर्द्धकोंसे अनन्त स्थान उत्पन्न होते हैं।

विशेषार्थ—पहले एक समय कम एक आवलिप्रमाण स्पर्धकोंका कथन कर आये हैं। अब यहाँ पर अन्तिम स्थितिकाण्डकके पतनके अन्तिम समयमें जो जघन्य सत्कर्मस्थान होता है उससे लेकर मिथ्यात्वके उत्कृष्ट द्रव्यके प्राप्त होने तक एक ही स्पर्धक होता है यह बतलाया गया है। अन्तिम स्थितिकाण्डकके पतनके अन्तिम समयमें जघन्य सत्कर्मस्थान क्षपित-कर्मांशिकके होता है और मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसंचय जो गुणितकर्मांशिकविधिसे आकर अन्तमें सातवें नरकमें उत्पन्न होता है उस नारकीके भवके अन्तिम समयमें होता है। इस प्रकार यद्यपि इन जघन्य और उत्कृष्ट स्थानोंमें अधिकारी भेद है फिर भी इस जघन्य स्थानसे लेकर उत्कृष्ट स्थानके प्राप्त होने तक जितने भी स्थान प्राप्त होते हैं उनमें क्रमसे प्रदेशोत्तरवृद्धि सम्भव है, इसलिए इन सबका एक स्पर्धक माना गया है। यहाँ एक समय कम आवलि-प्रमाण स्पर्धकोंमेंसे अन्तिम स्पर्धकके उत्कृष्ट द्रव्यसे इस स्पर्धकका जघन्य द्रव्य असंख्यातगुणा है। इसके स्वतंत्र स्पर्धक माननेका यही कारण है। एक समयकम स्पर्धकोंमेंसे अन्तिम स्पर्धकके उत्कृष्ट द्रव्यसे इस स्पर्धकका जघन्य द्रव्य असंख्यातगुणा क्यों है इस प्रश्नका उत्तर वीरसेन स्वामीने मूलमें ही तीन प्रकारसे दिया है, इसलिए उसे वहाँसे जान लेना चाहिए।

§ १६३ अब आवलिप्रमाण स्पर्द्धकोंमें पहले सामान्यरूपसे कहे गये प्रदेशस्थानोंका विशेषरूप से कथन करते हैं—

शंका—प्रथम स्पर्द्धकका कथन करते समय इस कथन को क्यों नहीं किया ?

१. आ०प्रतौ 'असंखे०गुणसेढीए' इति पाठः। २. आ०प्रतौ 'असंखेज्जगुणफलीए' इति पाठः।

आवलियमेत्तफद्दए अस्सिदूण द्विदट्ठाणपरूवणाए एक्कम्मि परूवणाणुववत्तीदो। जं जं जम्मि जम्मि फद्दयं परूविदं तत्थ तत्थ तट्ठाणपरूवणा सुत्तेव किण्ण कदा? ण, सवित्थराए फद्दयं पडि ट्ठाणपरूवणाए कीरमाणाए गंथबहुत्तं होदि त्ति सयलफद्दए समुप्पण्णावगमाणं सिस्साणमेगफद्दयस्स ट्ठाणपरूवणं सवित्थरं काऊण अण्णासिं फद्दयट्ठाणपरूवणाणमेत्थेवंतब्भावपदुप्पायणट्ठं पच्छा तप्परूवणाकरणादो। ण च फद्दयं पडि पढमं चेव चउव्विहा ट्ठाणपरूवणा पण्णवणजोग्गा, अणवगयफद्दयंतरस्स तज्जाणावणे उवायाभावादो।

§ १६४. खविदकम्मंसियस्स कालपरिहाणिट्ठाणपरूवणा गुणिदकम्मंसियस्स कालपरिहाणिट्ठाणपरूवणा खविदकम्मंसियस्स संतकम्मट्ठाणपरूवणा गुणिदकम्मंसियस्स संतकम्मट्ठाणपरूवणा चेदि चउव्विहा ट्ठाणपरूवणा। तत्थ ताव वेछावट्ठिसागरोवमसमए एगसेढिआगारेण ठइदूण[1] खविदकम्मंसियकालपरिहाणिट्ठाणपरूवणं कस्सामो। तं जहा—खविदकम्मंसियलक्खणेण कम्मट्ठिदिं सुहुमणिगोदेसु अच्छिय पलिदोवमस्स असंखे०भागमेत्तसंजमासंजमकंडयाणि तत्तो विसेसाहियसम्मत्तकंडयाणि अणंताणुबंधिविसंजोयणकंडयाणि च पुणो किंचूणअट्ठसंजमकंडयाणि चत्तारिवारं कसायउवसामणं

समाधान—नहीं, क्योंकि आवलीप्रमाण स्पर्धकों पर अवलम्बित स्थानोंका कथन एक स्पर्धकके कथनके समय नहीं किया जा सकता।

शंका—जो जो स्पर्धक जिस-जिस स्थानमें कहा है वहाँ-वहाँ उस स्थानका कथन सूत्रमें ही क्यों नहीं किया?

समाधान—नहीं, क्योंकि प्रत्येक स्पर्धकके प्रति स्थानोंका विस्तारपूर्वक कथन करने पर ग्रन्थ बड़ा हो जायगा। इसलिये सब स्पर्धकोंका जिन्हें ज्ञान हो गया है उन शिष्योंको एक स्पर्धकके स्थानोंका कथन विस्तारसे करके अन्य स्थानोंके कथनका इसीमें अन्तर्भाव कराने के लिये पीछेसे उनका कथन किया है। दूसरे प्रत्येक स्पर्धकके प्रति पहले ही स्थानोंका चार प्रकारका कथन बतलानेके योग्य नहीं है; क्योंकि जिसने स्पर्धकोंका अन्तर नहीं जाना है उसके लिये उनके ज्ञान करानेका कोई उपाय भी नहीं है।

§ १६४ क्षपितकर्मांशकी कालपरिहानिस्थानप्ररूपणा, गुणितकर्मांशकी कालपरिहानिस्थानप्ररूपणा, क्षपितकर्मांशकी सत्कर्मस्थानप्ररूपणा और गुणितकर्मांशकी सत्कर्मस्थानप्ररूपणा इस प्रकार चार प्रकारकी स्थानप्ररूपणा है। इनमेंसे दो छयासठ सागरप्रमाण कालको एक श्रेणीके आकार रूपमें स्थापित करके क्षपितकर्मांशके कालकी हानिद्वारा स्थानकी प्ररूपणा करते हैं। वह इसप्रकार है—क्षपितकर्मांशके लक्षणके साथ कर्मस्थिति काल तक सूक्ष्मनिगोदिया जीवोंमें रहकर, वहाँसे निकलकर पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण संयमासंयमकाण्डकोंको उससे कुछ अधिक सम्यक्त्वकाण्डकोंको और अनन्तानुबन्धीकषायके विसंयोजनाकाण्डकोंको करके फिर कुछ कम आठ संयमकाण्डकोंको करके और चार बार कषायोंका उपशमन करके असंज्ञी पञ्चेन्द्रियोंमें उत्पन्न हो। वहाँ देवायुका बन्ध करके मरकर देवोंमें उत्पन्न

---

१. ता०प्रतौ 'रइदूण इति पाठः।

च कादूण तदो असण्णिपंचिंदिएसु उववज्जिय तत्थ देवाउअं बंधिदूण देवेसुववज्जिय छ पज्जत्तीओ समाणिय पुणो सम्मत्तं घेत्तूण वेछावट्ठीओ भमिय तदो दंसणमोहणीय-क्खवणाए अब्भुट्ठिय मिच्छत्तस्स एगट्ठिदिदुसमयकालपमाणे ट्ठिदिसंतकम्मअच्छिदे जहण्णदव्वं होदि। एदमेगं ठाणं। पुणो अण्णम्मि जीवे पुव्वुत्तखविदकम्मंसिय-लक्खणेणागंतूण ओकड्डुकड्डणमस्सिय एगपरमाणुणा अब्भहियमिच्छत्तजहण्णदव्वं धरेदूण[1] तत्थेवावट्ठिदे विदियट्ठाणं। एसा अणंतभागवड्ढी, जहण्णदव्वे तेणेव खंडिदे तत्थेगखंडस्स वड्ढित्तादो। पुणो दोसु पदेसेसु वड्ढिदेसु सा चेव[2] वड्ढी, जहण्णदव्व-दुभागेण जहण्णदव्वे भागे हिदे तत्थेगभागस्स वड्ढिदत्तादो। एवं तिण्णि-चत्तारि-आदिं कादूण जाव संखेज्ज-असंखेज्ज-अणंतपदेसेसु वड्ढिदेसु वि सा चेव वड्ढी। पुणो जहण्ण-परित्ताणंतेण जहण्णदव्वे खंडिदे तत्थेगखंडे जहण्णदव्वस्सुवरि वड्ढिदे अणंतभागवड्ढी परिसमप्पदि, जहण्णपरित्ताणंतादो हेट्ठिमासेससंखाए आणंतियाभावादो।

§ १६५. पुणो एदस्सुवरि एगपदेसे वड्ढिदे असंखे०भागवड्ढी होदि। अवत्तव्ववड्ढी किण्ण जायदे ? ण, अणंतासंखेज्जसंखाणमंतरे अण्णसंखाभावादो[3]। ण परियम्मेण वियहिचारो, तत्थ कलासंखाए[4] विवक्खाभावादो।

होकर छ पर्याप्तियोंको पूरा करके फिर सम्यक्त्वको ग्रहण करके दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण करे। फिर दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके लिये उद्यत होकर मिथ्यात्वके एक निषेककी दो समयप्रमाण स्थितिसत्कर्मके शेष रहने पर जघन्य द्रव्य होता है। यह एक स्थान है। कोई दूसरा जीव क्षपितकर्मांशके पूर्वोक्त लक्षणके साथ आकर अपकर्षण-उत्कर्षणके आश्रयसे एक परमाणु अधिक मिथ्यात्वके उक्त जघन्य द्रव्यको करके जब वहीं पाया जाता है तो दूसरा स्थान होता है। यह अनन्तभागवृद्धि है; क्योंकि यहाँ पर जघन्य द्रव्यमें जघन्य द्रव्यसे ही भाग देने पर लब्ध एक भागकी वृद्धि हुई है। पुनः जघन्यमें दो प्रदेशोंके बढ़ने पर भी वही वृद्धि होती है; क्योंकि जघन्य द्रव्यके आधेका जघन्य द्रव्यमें भाग देने पर जो एक भाग लब्ध आया उसकी यहाँ वृद्धि पाई जाती है। इस प्रकार तीन, चार आदि प्रदेशोंसे लेकर संख्यात, असंख्यात और अनन्त प्रदेशोंके बढ़ने पर अनन्तभागवृद्धि ही होती है। पुनः जघन्य द्रव्यमें जघन्य परीतानन्तसे भाग देकर लब्ध एक भागको जघन्य द्रव्यमें मिला देने पर अनन्तभागवृद्धि समाप्त हो जाती है, क्योंकि जघन्य परितानन्तसे नीचेकी सब संख्याएँ अनन्त नहीं हैं।

§ १६५ फिर अन्तिम अनन्तभागवृद्धियुक्त जघन्य द्रव्यमें एक प्रदेशके बढ़ाने पर असंख्यातभागवृद्धि होती है।

शंका—अवक्तव्यवृद्धि क्यों नहीं होती ?

समाधान—नहीं, क्योंकि अनन्त और असंख्यात संख्याके बीचमें अन्य संख्या नहीं है। इस कथनका परिकर्म नामक ग्रन्थमें किए गए कथनके साथ व्यभिचार भी नहीं आता; क्योंकि उसमें कलाओंकी संख्याकी विवक्षा नहीं है।

१. आ०प्रतौ '-मिच्छत्त धरेदूण' इति पाठः। २. आ०प्रतौ 'वड्ढिदेसु एसा चेव' इति पाठः। ३. ता०प्रतौ 'अण्णसंभा(भा)वादो'। आ०प्रतौ 'अण्णासंखाभावादो' इति पाठः। ४. ता०प्रतौ कालसंखाए इति पाठः।

§ १६६. संपहि एदिस्से वड्ढीए छेदभागहारपरूवणं कस्सामो। तं जहा—जहण्णपरित्ताणंतं विरलेदूण समखंडं कादूण रूवं पडि जहण्णदव्वे दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स जहण्णपरित्ताणंतेणोवट्टिदजहण्णदव्वं पावदि। पुणो एदिस्से विरलणाए हेट्ठा वड्ढिरूओवट्टिदएगरूवधरिदं विरलिय समखंडं कादूण एगरूवधरिदे चेव दिण्णे रूवं पडि एगेगपदेसो पावदि। पुणो एत्थ एगरूवधरिदे उवरिमविरलणाए एगेगरूवधरिदस्सुवरि ट्ठविदे संपहि वड्ढिददव्वं होदि। हेट्ठिमविरलणं रूवाहियं गंतूण जदि एगरूवपरिहाणी लब्भदि तो उवरिमविरलणाए जहण्णपरित्ताणंतपमाणाए केवडियरूवपरिहाणिं पेच्छामो त्ति पमाणेण फलगुणिदच्छाए ओवट्टिदाए एगरूवस्स अणंतिमभागो आगच्छदि। पुणो एदम्मि जहण्णपरित्ताणंतविरलणाए एगरूवादो कदसरिसछेदादो सोहिदे सुद्धसेसमेगरूवस्स अणंता भागा उक्कस्समसंखेज्जासंखेज्जं च भागहारो होदि। संपहि एदस्स एगरूवस्स जाव अणंता भागा झिज्जंति ताव छेदभागहारो चेव। पुणो तेसु सव्वेसु झीणेसु समभागहारो।

§ १६६. अब इस वृद्धिके छेद भागहारका कथन करते हैं, जो इस प्रकार है—जघन्य-परितानन्तका विरलन करके उसके प्रत्येक एक-एक रूप पर जघन्य द्रव्यके बराबर-बराबर खण्ड करके देने पर एक-एक रूप पर जघन्य परीतानन्तसे भाजित जघन्य द्रव्य आता है। फिर इस विरलनके नीचे वृद्धिरूपके द्वारा भाजित एक रूप पर स्थापित द्रव्यका विरलन करके उसके उपर एक रूप पर स्थापित द्रव्यके ही समान खण्ड करके देने पर प्रत्येक एक पर एक-एक प्रदेश प्राप्त होता है। फिर यहाँ एक रूप पर स्थापित एक प्रदेशको ऊपरकी विरलन राशिके एक एक रूपपर स्थापित द्रव्यके ऊपर रखने पर इस समय बढ़े हुए द्रव्यका परिमाण होता है। रूप अधिक नीचेके विरलनके जाने पर यदि एक रूपकी हानि प्राप्त होती है तो ऊपरके जघन्य परीतानन्तप्रमाण विरलनमें कितने रूपोंकी हानि होगी, इस प्रकार त्रैराशिक करके फलराशिसे इच्छाराशिको गुणा करके उसमें प्रमाण-राशिसे भाग देने पर एक रूपका अनन्तवां भाग आता है। फिर इस अनन्तवें भागको जघन्य परीतानन्तप्रमाण विरलनराशिके एक विरलनमेंसे समान छेद करके उसमेंसे घटाने पर एक रूपका अनन्त बहुभाग और उत्कृष्ट असंख्यतासंख्यात भागहार प्राप्त होता है। अब इस रूपके अनन्त बहुभाग जब तक क्षयको प्राप्त होते हैं तब तक तो छेदभागहार ही रहता है। किन्तु उन सबके क्षीण होने पर समभागहार होता है।

उदाहरण—जघन्य द्रव्य ६४ ज. परीतानन्त ४ वृद्धिरूप १

१ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १
१ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १
१६ १६ १६ १६
१ १ १ १

एक अधिक नीचेके विरलन जाने पर यदि एकको हानि प्राप्त होती है तो उपरिम विरलनके प्रति कितनी हानि प्राप्त होगी। इस प्रकार त्रैराशिक करने पर $\frac{४}{१७}$ की हानि प्राप्त हुई। अब इसे एकमेंसे घटा देने पर $\frac{१३}{१७}$ रहे। पुनः इसे उत्कृष्ट असंख्यातासंख्यातमें जोड़ देने पर $\frac{६४}{१७}$ आये। यहाँ यही भागहार है, क्योंकि इसका भाग जघन्य द्रव्यमें देने पर इच्छित द्रव्य

§ १६७. एवं एदेण कमेण खविदकम्मंसियजहण्णदव्वस्सुवरि वड्ढावेदव्वं जाव तप्पाओग्गएगगोवुच्छविसेसो पयदगोवुच्छाए एगसमयमोकड्डिदूण विणासिददव्वं विज्झादभागहारेण परपयडिसरूवेण गददव्वं वड्ढिदं ति। एवं वड्ढिदूण ट्ठिदो जहण्ण-सामित्तविहाणेण आगंतूण समयूणवेछावट्ठिं भमिय मिच्छत्तं खविय एगणिसेगदुसमय-कालपमाणं धरेदूण ट्ठिदो च सरिसो।

§ १६८. संपहि पुव्विल्लखवगं मोत्तूण इमं समयूणवेछावट्ठिं भमिय खवेदूणच्छिदखवगं घेत्तूण एदस्स दव्वं परमाणुत्तरदुपरमाणुत्तरादिकमेण दोहि वड्ढीहि एगो तप्पाओग्गगोवुच्छविसेसो पयदगोवुछाए एगवारमोकड्डिय विणासिददव्वं तत्तो एगसमएण परपयडीसु संकामिददव्वं च वड्ढिदं ति। एवं वड्ढिदूणच्छिदो अण्णेगेण खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण दुसमयूणवेछावट्ठिं भमिय एगणिसेगं दुसमय-कालट्ठिदिं धरेदूणच्छिदेण सरिसो।

§ १६९. तं मोत्तूण दुसमयूणवेछावट्ठीओ[1] हिंडिदूण ट्ठिदखवगदव्वं घेत्तूण पुणो एदं परमाणुत्तर-दुपरमाणुत्तरादिकमेण वड्ढावेदव्वं जाव एगो गोवुच्छविसेसो पयदगोवुच्छाए एगवारमोकड्डिदूण विणासिज्जमाणदव्वं तत्तो विज्झादसंकमेण गददव्वं

---

१७ आ जाता है।

§ १६७. इस प्रकार इस क्रमसे क्षपितकर्मांशके जघन्य द्रव्यके ऊपर तब तक वृद्धि करनी चाहिये जब तक उसके योग्य एक गोपुच्छ विशेष, प्रकृत गोपुच्छमें एक समयमें अपकर्षण करके विनष्ट हुआ द्रव्य और विध्यातभागहारके द्वारा परप्रकृति रूपसे गये हुए द्रव्यकी वृद्धि हो। इस प्रकार वृद्धिको प्राप्त हुआ जीव और जघन्य स्वामित्वके विधानके अनुसार आकर एक समय कम दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण करके फिर मिथ्यात्वका क्षपण करके दो समयकी स्थितिवाले एक निषेकको धारण करनेवाला जीव ये दोनों समान हैं।

§ १६८. अब पूर्वोक्त क्षपकको छोड़कर इस एक समय कम दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण करके मिथ्यात्वका क्षपण करके स्थित क्षपकको लेकर और इसके जघन्य द्रव्यके ऊपर एक परमाणु, दो परमाणुके क्रमसे अनन्तभागवृद्धि और असंख्यातभागवृद्धिके द्वारा उसके योग्य एक गोपुच्छविशेष, प्रकृत गोपुच्छामें एकबार अपकर्षण करके विनष्ट हुआ द्रव्य और उस गोपुच्छामेंसे एक समयमें परप्रकृतियोंमें सक्रान्त हुआ द्रव्य बढ़ाओ। इस प्रकार वृद्धिको करके स्थित हुआ जीव क्षपितकर्मांशके लक्षणके साथ आकर दो समय कम दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण करके दो समयकी स्थितिवाले एक निषेकको धारण करनेवाले अन्य जीवके समान है।

§ १६९. पुनः उसको छोड़कर दो समय कम दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण करके स्थित क्षपकके द्रव्यको लो। फिर इसके एक परमाणु, दो परमाणुके क्रमसे तब तक बढ़ाना चाहिये जब तक एक गोपुच्छविशेष, प्रकृतिगोपुच्छमें एकबार अपकर्षण करके विनाशको प्राप्त होनेवाले द्रव्य और उसमेंसे विध्यातभागहारके द्वारा संक्रमणको प्राप्त हुए द्रव्यकी

---

१. आ०प्रतौ 'दुसमयवेछावट्ठिओ इति पाठः।

च वड्ढिदं ति। एवं वड्ढिदूण ट्ठिदेण तिसमयूणवेछावट्ठिं भमिय एगणिसेगं दुसमयकालट्ठिदियं धरेदूण ट्ठिदो सरिसो। एवं चदु-पंचसमयूणादिकमेण ओदारेदव्वं जाव अंतोमुहुत्तूणा विदियछावट्ठि त्ति।

§ १७०. संपहि विदियछावट्ठिपढमसमए वेदगसम्मत्तं पडिवज्जिय अंतोमुहुत्तं[1] गमेदूण मिच्छत्तं खविय ट्ठिदस्स तदेगणिसेगदव्वं दुसमयकालट्ठिदियं घेत्तूण परमाणुत्तर-दुपरमाणुत्तरादिकमेण दोहि वड्ढीहि अंतोमुहुत्तमेत्तगोवुच्छविसेसा अहियारट्ठिदीए अंतोमुहुत्तमोकड्ढिदूण विणासिददव्वं पुणो जहण्णसम्मत्तद्धामेत्तकालं विज्झादेण परपयडीसु संकामिददव्वं च वड्ढावेदव्वं। एत्थ अंतोमुहुत्तपमाणं[2] केत्तियं? विदियछावट्ठि-पढमसमयप्पहुडि जहण्णसम्मत्तद्धासहिदमिच्छत्तक्खवणद्धामेत्तं हेट्ठिमसम्मत्तसम्मा-मिच्छत्तक्खवणद्धामेत्तेण सादिरेयं। ओकड्डुक्कड्डणभागहारो णाम पलिदो० असंखे०भागो। तं विरलिय अप्पिदणिसेगे समखंडं कादूण दिण्णे तत्थेगेगखंडे पडिसमयं हेट्ठा णिवदमाणे वेछावट्ठिसागरोवमकालेण मिच्छत्तस्स सव्वे समयपबद्धा बंधाभावेण परपयडिदव्वपडिच्छणेण सगदव्वुक्कड्डणाए च उम्मुक्का कथं ण णिल्लेविज्जंति? ण, उवसामणा-णिकाचणा-

वृद्धि हो। इस प्रकार वृद्धिको करके स्थित हुआ जीव और तीन समय कम दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण करके दो समयकी स्थितिवाले एक निषेकको धारण करनेवाला जीव ये दोनों समान होते हैं। इस प्रकार चार समय कम पाँच समय कम आदिके क्रमसे अन्तर्मुहूर्तकम दूसरे छयासठ सागर काल तक उतारते जाना चाहिये।

§ १७०. अब दूसरे छयासठ सागरके प्रथम समयमें वेदक सम्यक्त्वको प्राप्त करके अन्तर्मुहूर्त काल बिताकर मिथ्यात्वका क्षपण करके स्थित जीवके दो समयकी स्थितिवाले एक निषेकको लेकर उसपर एक परमाणुके क्रमसे अनन्तभागवृद्धि और असंख्यातभागवृद्धिके द्वारा अन्तर्मुहूर्तप्रमाण गोपुच्छाविशेष, अधिकृत स्थितिमें अन्तर्मुहूर्त कालतक अपकर्षण करके विनष्ट हुआ द्रव्य और सम्यक्त्वके जघन्य काल पर्यन्त विध्यातभागहारके द्वारा अन्य प्रकृतियोंमें संक्रान्त हुए द्रव्यको बढ़ाना चाहिये।

शंका—यहाँ अन्तर्मुहूर्तका प्रमाण कितना है?

समाधान—यहाँ दूसरे छयासठ सागरके प्रथम समयसे लेकर सम्यक्त्वके जघन्य-सहित मिथ्यात्वके क्षपण कालप्रमाण अन्तर्मुहूर्त है जो कि अधस्तन सम्यक्त्वप्रकृति और सम्यग्मिथ्यात्वके क्षपणकालसे अधिक है।

शंका—अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारका प्रमाण पल्यका असंख्यातवां भाग है। उसका विरलन करके विवक्षित निषेकोंके समान खण्ड करके उसपर दो। उनमेंसे प्रतिसमय एक-एक खण्डका नीचे पतन होने पर दो छयासठ सागरप्रमाण कालके द्वारा मिथ्यात्वके सब समय-प्रबद्धोंका अभाव क्यों नहीं हो जाता; क्योंकि मिथ्यात्वके बन्धका अभाव होनेसे न तो उसमें अन्य प्रकृतियोंका द्रव्य ही आता है और न अपने द्रव्यका उत्कर्षण ही संभव है?

समाधान—नहीं, क्योंकि यद्यपि मिथ्यात्वके स्कन्ध उक्त कालके भीतर परिणामान्तरको

१. आ०प्रतौ 'पडि अंतोमुहुत्त' इति पाठः। २. ता०प्रतौ 'एव (द)मंत्तोमुहुत्तपमाणं' आ०प्रतौ 'एवमंतोमुहुत्तपमाणं' इति पाठः।

णिधत्तिकरणेहि परिणामंतरमुवगयाणं मिच्छत्तकम्मक्खंधाणं सव्वेसिं पि परपयडि-संकमोकड्डणाणमभावादो। ण च ओकड्डिदासेसपरमाणू सव्वे वि वेछावट्ठिसागरोवम-मेत्तहेट्ठिमणिसेगेसु चेव णिवदंति; अप्पिदणिसेगादो हेट्ठा आवलियमेत्तणिसेगे अइच्छिदूण सव्वणिसेगेसु ओकड्डिदकम्मक्खंधाणं पदणुवलंभादो। पलिदोवमस्स असंखे०-भागमेत्तकालेण जदि एगावलियमेत्तणिसेगट्ठिदी उवरिमाओ णिल्लेविज्जंति तो वेछावट्ठिसागरोवमकालेण केत्तियाओ णिल्लेविज्जंति त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए पलिदो० असंखे०भागमेत्तणिसेगाणं णिल्लेवणुवलंभादो ण सव्वट्ठिदीओ णिल्लेविज्जंति। किं च ण सव्वणिसेगाणमोकड्डुक्कड्डणभागहारो पलिदो० असंखे०भागो चेव होदि त्ति णियमो, उवसामणा-णिकाचणा-णिधत्तीकरणेहि पडिग्गहिदणिसेगेसु[1] असंखे०लोगमेत्तभागहारस्स वि उदयावलियबाहिरणिसेगाणं व तत्थुवलंभादो। ण च उवसामणा-णिकाचणा-णिधत्तीकरणाणि एगेगणिसेगकम्मक्खंधाणमेवदिए भागे चेव वट्टंति त्ति णियमो अत्थि, तप्पडिबद्धजिणवयणाणुवलंभादो। तम्हा ण सव्वे णिसेगा णिल्लेविज्जंति त्ति सिद्धं। एवं वड्डिदूणच्छिदक्खवगेण खविदकम्मंसियलक्खणेणा-गंतूण सम्मामिच्छत्तं पडिवज्जिय पढमछावट्ठिं भमिय पुव्वं व सम्मामिच्छत्तं पडिवण्णपढमसमयम्मि सम्मामिच्छत्तमपडिवज्जिय[2] तत्थ दंसणमोहणीयक्खवणं

प्राप्त नहीं होते हैं पर उपशामना, निकाचना और निधत्तिकरणके कारण उन सभी कर्मस्कन्धोंका पर प्रकृतिरूपसे संक्रमण और अपकर्षण नहीं होता। तथा अपकृष्ट हुए सभी परमाणु दो छ्यासठ सागर कालप्रमाण नीचेके निषेकोंमें ही नहीं गिरते; किन्तु विवक्षित निषेकसे नीचेके आवलिप्रमाण निषेकोंको छोड़कर बाकीके सब निषेकोंमें अपकृष्ट कर्मस्कन्धोंका पतन पाया जाता है। दूसरे पल्योपमके असंख्यातवें भागमात्र कालके द्वारा यदि ऊपरके एक आवलिप्रमाण निषेकोंकी स्थिति नष्ट होती है तो दो छ्यासठ सागरप्रमाण कालके द्वारा कितनी निषेकस्थितियोंका ह्रास होगा, इस प्रकार त्रैराशिक करके फलराशिसे इच्छाराशिको गुणा करके प्रमाणराशिसे उसमें भाग देने पर इतने कालके द्वारा असंख्यातवें भाग निषेकोंका विनाश पाया जाता है; सब स्थितियोंका विनाश नहीं होता। तीसरे सब निषेकोंका अपकर्षण उत्कर्षण भागहार पल्यके असंख्यातवें भाग ही होता है ऐसा नियम नहीं है, क्योंकि उपशमना, निकाचना और निधत्तिकरणके द्वारा स्वीकृत निषेकोंके रहते हुए उदयावलीबाह्य निषेकोंकी तरह उनमें असंख्यात लोकप्रमाण भागहार भी पाया जाता है। तथा उपशामना, निधत्ति और निकाचनाकरण एक-एक निषेकरूप कर्मस्कन्धोंके इतने भागमें ही होते हैं ऐसा नियम नहीं है; क्योंकि इस बातका नियामक कोई जिनवचन नहीं पाया जाता, इसलिये सब निषेकोंका विनाश नहीं होता यह सिद्ध हुआ।

इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुये क्षपकसे, क्षपितकर्मांशके लक्षणके साथ आकर, सम्यक्त्वको प्राप्त करके, प्रथम छ्यासठ सागर तक भ्रमण करके, तदनन्तर पहले सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त करता था सो न करके सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त करनेके कालके प्रथम समयमें दर्शन-

१. आ०प्रतौ 'पडिग्गहिदाणिसेगेसु' इति पाठः। २. ता०प्रतौ 'सम्मामिच्छत्तं(म)पडिवज्जिय' इति पाठः।

पारभिय पुव्विल्लसम्मामिच्छत्तकालब्भंतरे मिच्छत्तचरिमफालिं सम्मामिच्छत्तस्सुवरि पक्खिविय समयूणावलियमेत्तगुणसेढिगोवुच्छाओ गालिय ट्ठिदस्स एगणिसेगदव्वं दुसमयकालट्ठिदियं सरिसं। अथवा एत्थ अक्कमेण विणा कमेण समयूणादिसरूवेण ओयरणं पि संभवदि तं चिंतिय वत्तव्वं।

§ १७१. संपधि इमं घेत्तूण एदम्मि परमाणुत्तर-दुपरमाणुत्तरादिकमेण एगो गोवुच्छविसेसो पगदिगोवुच्छाए एगवारमोकड्ढिददव्वं विज्झादसंकमेण गददव्वं च वड्ढावेदव्वं। एवं वड्ढिदूण ट्ठिदेण अण्णो जीवो समयूणपढमछावट्ठिं भमिय मिच्छत्तं खविय एगणिसेगं दुसमयट्ठिदियं धरेदूण ट्ठिदो सरिसो। एवं पढमछावट्ठी वि समयूणादिकमेण ओदारेदव्वा जाव अंतोमुहुत्तूणपढमछावट्ठी सव्वा ओदिण्णे त्ति।

§ १७२. तत्थ सव्वपच्छिमवियप्पो वुच्चदे। तं जहा—जहण्णसामित्तविहाणेणागंतूण उवसमसम्मत्तं पडिवज्जिय पुणो वेदगसम्मत्तं घेत्तूण तत्थ सव्वजहण्णमंतोमुहुत्तमच्छिय दंसणमोहणीयक्खवणाए अब्भुट्ठिय मिच्छत्तं खविय तत्थ एगणिसेगं दुसमयकालट्ठिदिं धरेदूण ट्ठिदो। एसो सव्वपच्छिमो। एदस्स दव्वं चत्तारि पुरिसे अस्सिदूण वड्ढावेदव्वं जाव अपुव्वगुणसेढीए पयडि-विगिदिगोवुच्छाणं च दव्वमुक्कस्सं जादं त्ति। एवं वड्ढाविदे अणंताणि ट्ठाणाणि पढमफद्दए उप्पण्णाणि।

मोहनीयके क्षपणका प्रारम्भ करके, सम्यग्मिथ्यात्वके पूर्वोक्त कालके अन्दर मिथ्यात्वकी अन्तिम फालिको सम्यग्मिथ्यात्वमें क्षेपण करके और एक समय कम आवली प्रमाण गुणश्रेणिकी गोपुच्छाओंका गालन करके स्थित जीवका दो समयकी स्थितिवाले एक निषेकका द्रव्य समान होता है। अथवा यहाँ अक्रमके बिना क्रमसे एक समय कम, दो समय कम आदि रूपसे उतारना भी संभव है। उसे विचार कर कहना चाहिये।

§ १७१. अब इस उक्त द्रव्यको लेकर उसमें एक परमाणु, दो परमाणु आदिके क्रमसे एक गोपुच्छा विशेष प्रकृतिगोपुच्छामें एकबार अपकृष्ट किया हुआ द्रव्य और विध्यातसंक्रमणके द्वारा अन्य प्रकृतिरूप हुआ द्रव्य बढ़ाना चाहिये। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके एक समयकम प्रथम छ्यासठ सागर तक भ्रमण करके फिर मिथ्यात्वका क्षपण करके दो समयकी स्थितिवाले एक निषेकको धारण करनेवाला अन्य जीव समान है। इस प्रकार प्रथम छ्यासठ सागरको दो समय कम आदिके क्रमसे तब तक उतारना चाहिये जब तक अन्तर्मुहूतकम प्रथम छ्यासठ सागर पूरे हों।

§ १७२. अब उनमेंसे सबसे अन्तिम विकल्पको कहते हैं। वह इस प्रकार है—जघन्य स्वामित्वकी जो विधि कही है उस विधिसे आकर उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त करके फिर वेदक सम्यक्त्वको ग्रहण करके, वेदक सम्यक्त्वमें सबसे जघन्य अन्तर्मुहूर्त काल तक रहकर दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके लिए उद्यत हो, फिर मिथ्यात्वका क्षपण करके मिथ्यात्वके दो समयकी स्थितिवाले एक निषेकको धारण करे। वह सबसे अन्तिम विकल्प है। इसके द्रव्यको चार पुरुषोंकी अपेक्षासे तब तक बढ़ाना चाहिये जब तक अपूर्वकरणसम्बन्धी गुणश्रेणि और प्रकृतिगोपुच्छा तथा विकृतिगोपुच्छाका उत्कृष्ट द्रव्य हो। इस प्रकार बढ़ानेपर प्रथम स्पर्धकमें अनन्त स्थान उत्पन्न होते हैं।

§ १७३. संपहि विदियफद्दयमस्सिदूण ट्ठाणपरूवणं कस्सामो। तं जहा—खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण वेछावट्ठिओ भमिय दंसणमोहणीयक्खवणाए अब्भुट्ठिय मिच्छत्तं खविय तत्थ दोणिसेगे तिसमयकालट्ठिदीए धरेदूण ट्ठिदस्स अण्णमपुणरुत्तट्ठाणं विदियफद्दयं पडि सव्वजहण्णमुप्पज्जदि। कुदो एदस्स विदिय-

विशेषार्थ—मिथ्यात्वकी दो समयवाली एक निषेक स्थितिसे लेकर सातवें नरकमें भवके अन्तिम समयमें होनेवाले उत्कृष्ट प्रदेशसञ्चयके प्राप्त होने तक कुल स्पर्धक एक आवलिप्रमाण होते हैं इस बातका निर्देश पहले कर ही आये हैं। अब यहाँ इन स्पर्धकोंमेंसे किस स्पर्धकमें कितने प्रदेशसत्कर्म स्थान होते हैं यह बतलानेका प्रक्रम किया गया है। जीव दो प्रकारके हैं–एक क्षपितकर्मांशिक और दूसरे गुणितकर्मांशिक। एक तो यह कोई नियम नहीं कि सभी क्षपितकर्मांशिक और गुणितकर्मांशिक जीवोंके मिथ्यात्वके सभी प्रदेशसत्कर्मस्थान एक समान होते हैं। क्रियाविशेषके कारण उनमें अन्तर होना सम्भव है। दूसरे ये जीव निश्चित समयमें पहुँचकर ही मिथ्यात्वकी क्षपणा करते हैं यह भी कोई नियम नहीं है। इनके सिवा ऐसे भी जीव होते हैं जो न तो क्षपितकर्मांशिक ही होते हैं और न गुणितकर्मांशिक ही। इसलिए एक-एक स्पर्धकगत प्रदेशभेदसे अनन्त सत्कर्मस्थान बनते हैं। यहाँ सर्व प्रथम मिथ्यात्वकी दो समय कालवाली एक स्थितिके शेष रहने पर जघन्य स्थानसे लेकर उत्कृष्ट स्थान तक कुल कितने स्थान उत्पन्न होते हैं यह घटित करके बतलाया गया है। उत्तरोत्तर एक एक प्रदेशकी वृद्धि होकर किस प्रकार स्थान उत्पन्न हुए हैं इसका स्पष्ट निर्देश मूलमें किया ही है, इसलिये वहाँसे जान लेना चाहिये। यहाँ पर प्रसङ्गसे मिथ्यात्वके द्रव्यका अपकर्षण होते रहनेसे उसका अभाव क्यों नहीं होने पाता इसका भी खुलासा किया है। क्षपणाके पूर्व मिथ्यात्वके द्रव्यके अभाव न होनेके जो कारण दिये हैं वे ये हैं—१. अपकर्षण-उत्कर्षण भागहार का भाग देकर मिथ्यात्वके जिन परमाणुओंका अपकर्षण होता है उनका निक्षेप अतिस्थापनावलिको छोड़कर नीचेके उदयावलि बाह्य सब निषेकोंमें होता है। २. मिथ्यात्वके प्रत्येक निषेकमें न्यूनाधिक ऐसे भी परमाणु होते हैं जिनका उपशामना, निधत्ति और निकाचनारूप परिणाम होनेसे न तो संक्रमण ही हो सकता है और न अपकर्षण ही। ३. ऊपर के एक आवलिप्रमाण निषेकोंका अभाव करनेमें पल्यका असंख्यातवाँ भागप्रमाण काल लगता है, इसलिये दो छ्यासठ सागरप्रमाण कालके भीतर ऊपरके पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण निषेकोंका ही अभाव हो सकता है तथा ४. सब निषेकोंका अपकर्षण-उत्कर्षणभागहार पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण ही है ऐसा एकान्त नियम नहीं है किन्तु उपशामना आदिके कारण कहीं भागहारका प्रमाण असंख्यात लोकप्रमाण भी पाया जाता है और भागहारके बड़े होनेसे लब्ध द्रव्य स्वल्प होगा यह स्पष्ट ही है। ये तथा ऐसे ही कुछ अन्य कारण हैं जिनके कारण क्षपणके पूर्व वेदकसम्यक्त्वके उत्कृष्ट कालके भीतर मिथ्यात्वके सब द्रव्यका अभाव नहीं होता। इस प्रकार प्रथम स्पर्धकके भीतर जघन्य सत्कर्मस्थानसे लेकर उत्कृष्ट सत्कर्मस्थानतक जो अनन्त स्थान होते हैं वे उत्पन्न कर लेने चाहिये।

§ १७३. अब दूसरे स्पर्धककी अपेक्षा स्थानोंका कथन करते हैं। वह इस प्रकार है—क्षपितकर्मांशके लक्षणके साथ आकर दो छ्यासठ सागर तक भ्रमण करके दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके लिए तैयार होकर, मिथ्यात्वकी क्षपणा करके मिथ्यात्वके तीन समयकी स्थितिवाले दो निषेकोंको धारण करके स्थित हुए जीवके दूसरे स्पर्धकका सबसे जघन्य अपुनरुक्त स्थान उत्पन्न होता है।

फद्दयत्तं ? अंतरिदूणुप्पण्णत्तादो । केवडियमेत्तमंतरं ? अणियट्टिगुणसेढीए असंखेज्जा भागा । तं जहा—तिसमयकालट्ठिदिएसु दोणिसेगेसु दोपयडिगोवुच्छाओ दोविगिदिगोवुच्छाओ दो-दोअपुव्व-अणियट्टिगुणसेढिगोवुच्छाओ च अत्थि । संपहि गुणिदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण उवसमसम्मत्तं पडिवज्जिय पढमछावट्ठिं पढमसमए वेदगसम्मत्तं घेत्तूण[1] जहण्णमंतोमुहुत्तमच्छिय मिच्छत्तं खवेदूण तत्थ एगणिसेगं दुसमयकालट्ठिदिं धरेदूण ट्ठिदस्स एगुक्कस्सपयडिगोवुच्छा पुव्वं भणिदूणागदस्स दोजहण्णपयडिगोवुच्छाहिंतो असंखेज्जगुणा । कुदो ? बहुजोगेण संचिदत्तादो वेछावट्ठिकालेण अपत्तक्खयत्तादो च । पुव्विल्लदोविगिदिगोवुच्छाहिंतो एत्थतणी एगा उक्कस्सविगिदिगोवुच्छा असंखेज्जगुणा । कारणं सुगमं । खविदकम्मंसियचरिमदुचरिमजहण्णअपुव्वगुणसेढिगोवुच्छाहिंतो गुणिदकम्मंसियस्स उक्कस्सअपुव्वगुणसेढिगोवुच्छा एक्कल्लिया वि असंखे०गुणा । कुदो ? उक्कस्सअपुव्वकरणपरिणामेहि संचिदत्तादो । एत्थ गुणसेढीए पदेसबहुत्तस्स ओकड्डिज्जमाणपयडीए पदेसबहुत्तमकारणं[2], परिणामबहुत्तेण गुणसेढिपदेसग्गस्स बहुत्तुवलंभादो । अणियट्टिकरणचरिमसमए गुणसेढिगोवुच्छा[3] पुण उभयत्थ सरिसा; अणियट्टिपरिणामाणमेक्कम्मि समए वट्टमाणासेस-

शंका—यह दूसरा स्पर्धक कैसे है ?

समाधान—क्योंकि यह अन्तर देकर उत्पन्न हुआ है ।

शंका—कितना अन्तर है ?

समाधान—अनिवृत्तिकरणसम्बन्धी गुणश्रेणिके असंख्यात बहुभागप्रमाण अन्तर है । खुलासा इसप्रकार है–तीन समयकी स्थितिवाले दो निषेकोंमें दो प्रकृतिगोपुच्छा, दो विकृतिगोपुच्छा, दो अपूर्वकरणसम्बन्धी गुणश्रेणिगोपुच्छा और दो अनिवृत्तिकरणसम्बन्धी गुणश्रेणिगोपुच्छा हैं और गुणितकर्मांशके लक्षणके साथ आकर उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त करके फिर प्रथम छयासठ सागरके प्रथम समयमें वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त करके, जघन्य अन्तर्मुहूर्त कालतक वेदकसम्यक्त्वके साथ रहकर फिर मिथ्यात्वका क्षपण करके मिथ्यात्वके दो समयकी स्थितिवाले एक निषेकके धारक जीवकी एक उत्कृष्ट प्रकृतिगोपुच्छा है । वह पहले कही हुई विधिसे आये हुए जीवकी दो जघन्य प्रकृतिगोपुच्छाओंसे असंख्यातगुणी है; क्योंकि एक तो उसका संचय बहुत योगके द्वारा हुआ । दूसरे दो छयासठ सागर कालके द्वारा उसका क्षय भी नहीं हुआ है । इसी तरह पूर्वोक्त जीवकी दो विकृतिगोपुच्छाओंसे इस गुणितकर्मांशकी एक उत्कृष्ट विकृतिगोपुच्छा असंख्यातगुणी है । इसका कारण सुगम है । क्षपितकर्मांशकी जघन्य अपूर्वकरणसम्बन्धी गुणश्रेणिकी अन्तिम और द्विचरमगोपुच्छाओंसे गुणितकर्मांशकी उत्कृष्ट अपूर्वकरणसम्बन्धी गुणश्रेणिकी गोपुच्छा अकेली भी असंख्यातगुणी है, क्योंकि अपूर्वकरणसम्बन्धी उत्कृष्ट परिणामोंसे उसका संचय हुआ है । यहाँ गुणश्रेणिमें बहुत प्रदेश होनेका कारण अपकर्षणको प्राप्त प्रकृतिके बहुत प्रदेशोंका होना नहीं है, क्योंकि परिणामोंकी बहुतायतसे गुणश्रेणिमें प्रदेश संचयकी बहुतायत पाई जाती है । किन्तु अनिवृत्तिकरणसम्बन्धी गुणश्रेणिकी अन्तिम गोपुच्छा दोनों जगह समान है, क्योंकि एक समयमें वर्तमान सभी जीवोंके अनिवृत्तिकरणसम्बन्धी

१. आ०प्रतौ 'घेत्तूण' इति स्थाने 'गंतूण' इति पाठः । २. ता०प्रतौ 'पदेसबहुत्तं कारणं' इति पाठः । ३. आ०प्रतौ '–चरिमगुणसेढिगोपुच्छा' इति पाठः ।

जीवाणं विसरिसत्ताणुवलंभादो। जदि एवं तो समाणसमए वट्टमाणखविद-गुणिद-कम्मंसियाणं अपुव्वगुणसेढिगोवुच्छाओ णियमेण सरिसाओ किण्ण होंति ? ण, समयं पडि अपुव्वपरिणामाणं असंखेज्जलोगपमाणाणमुवलंभादो। खविद-गुणिदकम्मंसियाणं समाणापुव्वकरणपरिणामाणं पुण गुणसेढिगोवुच्छाओ सरिसाओ चेव; पदेस-विसरिसत्तस्स कारणपरिणामाणं विसरिसत्ताभावादो। जदि वि सरिसअपुव्वकरणपरिणामा विसरिसगुणसेढिणिसेयस्स कारणं तो सव्वापुव्वकरणपरिणामेहि अपुव्व-अपुव्वेण चेव गुणसेढिपदेसविण्णासेण होदव्वमिदि ? ण, सव्वापुव्वकरणपरिणामेहि अपुव्वा चेव गुणसेढिपदेसविण्णासो होदि त्ति णियमाभावादो। किं तु अंतोमुहुत्तमेत्तसगद्धासमएसु एगेगसमयं पडि जहण्णपरिणामट्ठाणप्पहुडि छहि वड्ढीहि गदअसंखेज्जलोगमेत्त-परिणामट्ठाणेसु पढमपरिणामादो तप्पाओग्गासंखेज्जलोगमेत्तपरिणामट्ठाणेसु गदेसु एगो अपुव्वपदेसविण्णासणिमित्तपरिणामो होदि। हेट्ठिमावसेसपरिणामा[1]समाणगुणसेढिपदेस-विण्णासे णिमित्तं। एवमेदेण कमेण पुणो पुणो उच्चिणिदूण गहिदासेस-परिणामा एगेगसमयपडिबद्धा असंखे०लोगमेत्ता होंति। ते च अण्णोण्णपदेसविण्णासं पक्खिदूण असंखेज्जभागवड्ढिणिमित्ता। पडिभागो पुण असंखेज्जा लोगा। गुणहाणि-सलागाओ पुण एत्थ असंखेज्जा। सुत्तेण विणा एदं कथं णव्वदे ? सुत्ताविरुद्धत्तेण

परिणामोंमें विसदृशता नहीं पाई जाती।

शंका—यदि ऐसा है तो समान समयवर्ती क्षपितकर्मांश और गुणितकर्मांश जीवोंकी अपूर्वकरणसम्बन्धी गुणश्रेणिकी गोपुच्छाएँ नियमसे समान क्यों नहीं होतीं ?

समाधान—नहीं, क्योंकि प्रतिसमय अपूर्व परिणाम असंख्यात लोकप्रमाण पाये जाते हैं। हां, जिन क्षपितकर्मांश और गुणितकर्मांश जीवोंके अपूर्वकरणसम्बन्धी परिणाम समान होते हैं उनकी गुणश्रेणिकी गोपुच्छाएँ समान ही होती हैं, क्योंकि प्रदेशोंमें विसदृशता होनेके कारण परिणाम हैं और वहाँ परिणामोंमें विसदृशताका अभाव है।

शंका—यदि अपूर्वकरण परिणामोंकी विसदृशता गुणश्रेणिके निषेकोंकी विसदृशताका कारण है तो सब अपूर्वकरणपरिणामोंके द्वारा गुणश्रेणिके प्रदेशोंका निक्षेप अपूर्व-अपूर्व ही होना चाहिये ?

समाधान—नहीं, क्योंकि सब अपूर्वकरण परिणामोंके द्वारा गुणश्रेणिके प्रदेशोंका निक्षेप अपूर्व ही होता है ऐसा नियम नहीं है। किन्तु अपूर्वकरणके अन्तर्मुहूर्तकालके समयोंमेंसे प्रत्येक समयमें जघन्य परिणामस्थानसे लेकर छ वृद्धियोंसे युक्त असंख्यात लोकप्रमाण परिणाम-स्थानोंमेंसे प्रथम परिणामसे लेकर तत्प्रायोग्य असंख्यात लोकप्रमाण परिणामस्थानोंके जाने पर अपूर्व प्रदेशोंके निक्षेपमें निमित्त एक परिणाम होता है। और उससे पूर्वके शेष परिणाम समान गुणश्रेणिकी प्रदेशरचनाके कारण हैं। इस प्रकार इस क्रमसे एक एक समयसम्बन्धी एकत्रित किये गये सब परिणाम असंख्यात लोकप्रमाण हैं और परस्परकी प्रदेश रचनाको देखते हुए वे परिणाम असंख्यातभागवृद्धिमें निमित्त होते हैं। यहाँ प्रतिभागरूप असंख्यातका प्रमाण असंख्यात लोक है। परन्तु गुणहानिशलाकाएँ यहाँ असंख्यात हैं।

---

१. ता०प्रतौ 'हेट्ठिमवसेणपरिणाम' आ०प्रतौ 'हेट्ठिमावसेसपरिणाम इति पाठः।

सुत्तसमाणाइरियवयणादो। एत्थेव वेदगो णाम अत्थाहियारो उवरि अत्थि। तत्थ उक्कस्सयपदेसउदीरणाए जहण्णमंतरमंतोमुहुत्तमिदि पठिदं। तं जहा—गुणिदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण संजमाहिमुहचरिमसमयमिच्छादिट्ठिणा उक्कस्सविसोहिट्ठाणेण पदेसुदीरणाए उक्कस्साए कदाए आदी जादा। पुणो संजमं घेत्तूणंतरिय अंतोमुहुत्तमच्छिय मिच्छत्तं गंतूण संजमाहिमुहो होदूण मिच्छादिट्ठिचरिमसमए तेणेव उक्कस्सविसोहिट्ठाणेण उक्कस्सपदेसुदीरणाए कदाए जहण्णमंतरं ति सुत्ते भणिदं तेण जाणिज्जदि जधा खविद-गुणिदकम्मंसियाणं समाणपरिणामेसु ओकड्डणा सरिसी चेव होदि त्ति। जदि गुणिदकम्मंसियस्सेव उक्कस्सउदीरणा तो जहण्णअंतरेण वि अणंतेण होदव्वं, एगवारं समाणिदगुणिदकिरियस्स पुणो अणंतेण कालेण विणा गुणिदत्ताणुववत्तीदो। तेण अपुव्वपरिणामेसु विसरिसेसु वि संतेसु गुणसेढिपदेसविण्णासो सरिसो त्ति एदं ण घडदे। एत्थ परिहारो वुच्चदे—परिणामे सरिसे संते ओकड्डिज्जमाणमुक्कड्डिज्जमाणं च दव्वं सरिसं चेव त्ति णियमो णत्थि; खविद-गुणिदकम्मंसिएसु एगसमयपबद्धमेत्तपदेसाणं वड्ढि-हाणिदंसणादो। तेण समाणपरिणामेहि ओकड्डिज्जमाणदव्वं सरिसं पि होदि त्ति घेत्तव्वं। विसरिसपरिणामेहि पुण ओकड्डिज्जमाणदव्वं विसरिसं चेवे त्ति

शंका—सूत्रके बिना यह किस प्रमाणसे जाना ?

समाधान—सूत्रसे अविरुद्ध होनेसे सूत्रके समान आचार्य वचनोंसे ऐसा जाना। इसी कसायपाहुडमें आगे वेदक नामका अधिकार है। वहां उत्कृष्ट प्रदेशोदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त कहा है। खुलासा इस प्रकार है—गुणितकर्मांशके लक्षणके साथ आकर संयमके अभिमुख अन्तिसमयवर्ती मिथ्यादृष्टि जीवके द्वारा उत्कृष्ट विशुद्धिस्थान वश उत्कृष्ट प्रदेशोदीरणाके करनेपर उत्कृष्ट प्रदेशोदीरणा प्रारम्भ होती है। फिर संयमको ग्रहण करके और मिथ्यात्वका अन्तर करके अन्तर्मुहूर्त कालतक ठहरकर तदनन्तर मिथ्यात्वमें जाकर पुनः संयमके अभिमुख होकर मिथ्यात्वके अन्तिम समयमें उसी विशुद्धिस्थानके द्वारा पुनः उत्कृष्ट प्रदेशोदीरणाके करनेपर जघन्य अन्तर होता है ऐसा चूर्णिसूत्रमें कहा है। उससे जाना जाता है कि क्षपितकर्मांश और गुणितकर्मांशके समान परिणाम होनेपर समान ही अपकर्षण होता है।

शंका—यदि गुणितकार्मांश जीवके ही उत्कृष्ट उदीरणा होती है तो उत्कृष्ट उदीरणाका जघन्य अन्तर भी अनन्तकाल होना चाहिये; क्योंकि एकबार गुणितसंचयकी क्रियाको समाप्त करके पुनः अनन्त काल बीते बिना गुणितकर्मांशपना नहीं बन सकता। अतः अपूर्वकरणके परिणामोंके विसदृश होते हुए भी गुणश्रेणिकी प्रदेशरचना समान होती है यह बात नहीं घटती।

समाधान—इस शंकाका परिहार कहते हैं—परिणामोंके सदृश होनेपर अपकृष्यमाण और उत्कृष्यमाण द्रव्य समान ही होता है ऐसा नियम नहीं है; क्योंकि क्षपितकर्मांश और गुणितकर्मांश जीवोंमें एकसमयप्रबद्धमात्र प्रदेशोंकी वृद्धि और हानि देखी जाती है। अतः समान परिणामके द्वारा अपकृष्यमाण द्रव्य समान भी होता है ऐसा ग्रहण करना चाहिये। पर विसदृशपरिणामके द्वारा अपकृष्यमाण द्रव्य विसदृश ही होता है ऐसा नियम नहीं है, क्योंकि छह वृद्धियोंसे युक्त अपूर्व

णियमो णत्थि; अपुव्वपरिणामेसु छवड्ढीए अवट्ठिदेसु जहण्णादो अणंतगुणेण वि परिणामेण गुणसेढिपदेसविण्णासस्स सरिसत्तुवलंभादो। तेण विसरिसपरिणामेहि विसरिसं पि ओकड्डिज्जमाणदव्वं होदि त्ति घेत्तव्वं। अणियट्टिपरिणामेहि पुण ओकड्डिज्जमाणं दव्वं तिसु वि कालेसु सरिसं चेव, समाणोकड्डणणिमित्तसरिसपरिणामत्तादो। तदो अपुव्वगुणसेढिपदेसविण्णासो सरिसो वि होदि समाणोकड्डणपरिणामेसु वट्टमाणाणं, विसरिसो वि होदि असमाणोकड्डणहेदुपरिणामेसु वट्टमाणाणं त्ति घेत्तव्वं। तेण विदियफद्दयस्स दोसु ट्ठिदीसु ट्ठिदपयडि-विगिदिगोवुच्छासु पढमुक्कस्स[1]फद्दयपगदि-विगिदिगोवुच्छाहिंतो सोहिदासु सुद्धसेसं तासिमसंखेज्जा भागा चेट्ठंति। खविद-चरिम-दुचरिमअपुव्वजहण्ण-गुणसेढिगोवुच्छासु गुणिदअपुव्वुक्कस्सगुणसेढीदो सोधिदासु एत्थ वि असंखेज्जा भागा उव्वरंति। खविद-गुणिदअणियट्टीणं चरिमगुणसेढिगोवुछाओ सरिसाओ त्ति अवणेयव्वाओ। पुणो पुव्वमवणिदसेसदव्वे खविददुचरिमअणियट्टिगुणसेढीदो सोहिदे सुद्धसेसमसंखेज्जा भागा तस्स चेट्ठंति। एदे परमाणू रूवूणा पढमविदियफद्दयाणमंतरं। जत्थ जत्थ फद्दयंतरविण्णासो[2] समुप्पज्जदि तत्थ तत्थ एवं चेव हेट्ठिम-जहण्णफद्दय-मुवरिमउक्कस्सफद्दयादो सोहिय फद्दयंतरमुप्पादेदव्वं।

परिणामोंके रहते हुए जघन्यसे अनन्तगुणे भी परिणामके द्वारा गुणश्रेणिकी प्रदेशरचनामें समानता पाई जाती है। अतः विसदृशपरिणामके द्वारा अपकृष्यमाण द्रव्य विसदृश भी होता है ऐसा ग्रहण करना चाहिये। किन्तु अनिवृत्तिकरणरूप परिणामोंके द्वारा अपकृष्यमाण द्रव्य तीनों ही कालोंमें समान ही होता है; क्योंकि अनिवृत्तिकरणमें समान अपकर्षणके निमित्त परिणाम समान ही होते हैं। अतः समान अपकर्षणके कारणभूत परिणामोंमें वर्तमान जीवोंके सदृश भी होती है और असमान अपकर्षणके कारणभूत परिणामोंमें वर्तमान जीवोंके विसदृश भी होती है ऐसा ग्रहण करना चाहिये। अतः प्रथम उत्कृष्ट स्पर्धककी प्रकृतिगोपुच्छा और विकृतिगोपुच्छामेंसे द्वितीय स्पर्धककी दो स्थितियोंमें विद्यमान प्रकृतिगोपुच्छा और विकृतिगोपुच्छाको घटानेसे उनका असंख्यात बहुभाग शेष रहता है। तथा गुणितकर्मांशकी अपूर्वकरणसम्बन्धी उत्कृष्ट गुणश्रेणिमेंसे क्षपितकर्मांशकी अपूर्वकरणसम्बन्धी जघन्य गुणश्रेणिकी अन्तिम और द्विचरम गोपुच्छाओंको घटानेसे भी असंख्यात बहुभाग शेष रहता है। क्षपितकर्मांश और गुणितकर्मांशके अनिवृत्तिकरणसम्बन्धी चरिम गुणश्रेणिकी गोपुच्छाएँ समान हैं, इसलिये उन्हें छोड़ देना चाहिये। तदन्तर क्षपितकर्मांशकी अनिवृत्तिकरणसम्बन्धी द्विचम गुणश्रेणिमेंसे, पहले घटाकर शेष बचे द्रव्यको घटाने पर उसका असंख्यात बहुभाग शेष बचता है। इन परमाणुओंमेंसे एक कम करनेपर प्रथम और द्वितीय स्पर्धकका अन्तर होता है। जहाँ-जहाँ स्पर्धकका अन्तर जाननेकी इच्छा उत्पन्न हो वहाँ-वहाँ इसी प्रकार आगेके उत्कृष्ट स्पर्धकमेंसे जघन्य स्पर्धकको घटाकर स्पर्धकका अन्तर उत्पन्न कर लेना चाहिये।

विशेषार्थ—यहाँ द्वितीय स्पर्धकके जघन्य सत्कर्मस्थानमें प्रथम स्पर्धकके उत्कृष्ट

---

१. ता०प्रतौ '-गोवुच्छासु पगदिपढमुक्कस्स-' इति पाठः। २. ता०प्रतौ 'फद्दयंतरविण्णासो' इति पाठः।

§ १७४. संपहि तिसमयकालट्ठिदियाणं दोण्हं गोवुच्छाणमुवरि परमाणुत्तरकमेण दोहि वड्ढीहि वेगोवुच्छविसेसो[1] पयदगोवुच्छाहिंतो एगसमयमोकड्डिदद्व्वं तत्तो तम्मि चेव समए विज्झादसंकमेण गददव्वं च वड्ढावेदव्वं। एवं वड्ढिमाणट्ठिदेण अण्णेगो जीवो जहण्णसामित्तविहाणेणागंतूण समयूण-बेछावट्ठीओ भमिय मिच्छत्तं खविय दोगोवुच्छाओ तिसमयकालट्ठिदियाओ धरेदूण ट्ठिदो सरिसो। संपहि इमं घेत्तूण परमाणुत्तर-दुपरमाणुत्तरादिकमेणेदस्सुवरि दोहि

सत्कर्मस्थानसे कितना अन्तर है यह उत्पन्न करके बतलाया गया है। प्रथम स्पर्धकके प्रत्येक सत्कर्मस्थानमें चार गोपुच्छाएँ होती हैं—अनिवृत्तिकरण गुणश्रेणि गोपुच्छा, अपूर्वकरण गुणश्रेणि गोपुच्छा, प्रकृतिगोपुच्छा और विकृतिगोच्छा। यहाँ उत्कृष्ट सत्कर्मस्थानसे प्रयोजन है, इसलिए इनमें जो गोपुच्छाएँ उत्कृष्ट सम्भव है वे ली गई हैं। अब द्वितीय स्पर्धकके जघन्य सत्कर्मस्थानमें कितनी गोपुच्छाएँ होती हैं यह बतलाते हैं। दो अनिवृत्तिकरण गुणश्रेणि गोपुच्छाएँ, दो अपूर्वकरण गुणश्रेणि गोपुच्छाएँ, दो प्रकृति-गोपुच्छाएँ और दो विकृतिगोपुच्छाएँ ये सब अनिवृत्तिकरणकी गुणश्रेणि गोपुच्छाओंको छोड़कर जघन्य ली गई हैं। अब पूर्वोक्त चार गोपुच्छाओंके साथ इन आठ गोपुच्छाओंकी तुलना करनेपर प्रथम स्पर्धकके अन्तिम सत्कर्मसम्बन्धी अनिवृत्तिकरण गुणश्रेणि गोपुच्छा और द्वितीय स्पर्धकके प्रथम जघन्य सत्कर्मकी अनिवृत्तिकरणसम्बन्धी अन्तिम गोपुच्छा सो ये दोनों समान होती हैं, इसलिये इन दो गोपुच्छाओंको अलग कर दिया है। अब रही प्रथम स्पर्धकके अन्तिम उत्कृष्ट सत्कर्मकी तीन गोपुच्छाएँ और द्वितीय स्पर्धकके जघन्य प्रथम सत्कर्मकी सात गोपुच्छाएँ सो इन सातमेंसे अनिवृत्तिकरण गुणश्रेणि गोपुच्छाको छोड़कर शेष छह गोपुच्छाएँ उक्त तीन गोपुच्छाओंके असंख्यातवें भागप्रमाण होती हैं, अतः तीन गोपुच्छाओंका असंख्यात बहुभागप्रमाण द्रव्य बच जाता है। पर अभी द्वितीय स्पर्धकके प्रथम जघन्य सत्कर्मकी एक अनिवृत्तिकरण गुणश्रेणि गोपुच्छा अछूती है, अतः इसके द्रव्यमेंसे बाकी बचे हुए असंख्यात बहुभागप्रमाण द्रव्यके कम कर कर देने पर असंख्यात बहुभागप्रमाण द्रव्य शेष बच रहता है जो प्रथम स्पर्धकके अन्तिम उत्कृष्ट सत्कर्मस्थानके द्रव्यसे अधिक है। इस प्रकार प्रथम स्पर्धकके अन्तिम उत्कृष्ट सत्कर्मस्थानके द्रव्यमें और द्वितीय स्पर्धकके जघन्य प्रथम सत्कर्मस्थानके द्रव्यमें कितना अन्तर है इस बातका पता लग जाता है। आगे भी इसी क्रमसे पिछले उत्कृष्ट स्थानसे अगले जघन्य स्थानके मध्य अन्तरका विचार कर लेना चाहिये। यहाँ कारणका साङ्गोपाङ्ग विचार मूलमें किया ही है, इसलिये वहाँसे जान लेना चाहिये।

§ १७४. अब तीन समयकी स्थितिवाली दो गोपुच्छाओंके ऊपर एक एक परमाणुके क्रमसे अनन्तभागवृद्धि और असंख्यातभागवृद्धिके द्वारा दो गोपुच्छविशेष, प्रकृत गोपुच्छाओंमेंसे एक समयमें अपकृष्ट हुआ द्रव्य और उन्हीं गोपुच्छाओंमेंसे उसी एक समयमें विध्यातसंक्रमणके द्वारा संक्रान्त हुआ द्रव्य बढ़ाना चाहिये। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके साथ जघन्य स्वामित्वके विधानके अनुसार आकर एक समय कम दो छयासठ सागर कालतक भ्रमण करके फिर मिथ्यात्वका क्षपण करके तीन समयकी स्थितिवाले दो गोपुच्छाओंका धारक अन्य एक जीव समान है। अब इसको लेकर एक परमाणु, दो

1. आ०प्रतौ 'वड्ढीहि चे गोपुच्छविसेसो' इति पाठः।

वड्डीहि वेगोवुच्छविसेसा[1] एगसमयमोकड्डिदूण विणासिददव्वं विज्झादसंकमेण गददव्वं च वड्ढावेदव्वं। एवं वड्डिदूण ट्ठिदेण अण्णेगो दुसमयूणवेछावट्ठीओ भमिय मिच्छत्तं खवेदूण तिसमयकालट्ठिदिगो दोगोवुच्छाओ धरेदूण ट्ठिदजीवो सरिसो। संपहि एदस्स दव्वस्सुवरि परमाणुत्तरादिकमेण दोगोवुच्छविसेसा पयदगोवुच्छासु एगवारमोकड्डिद-दव्वं परपयडिसंकमेण गददव्वं चे दोहि वड्डीहि वड्ढावेदव्वं। एवं वड्डिदूण ट्ठिदेण अण्णेगो तिसमयूणवेछावट्ठीओ भमिय मिच्छत्तं खविय दोणिसेगे तिसमयकाल-ट्ठिदिगे धरेदूण ट्ठिदजीवो सरिसो। संपहि इमं घेत्तूण पुव्वभणिदवीजावट्ठंभबलेण वड्ढाविय ओदारेदव्वं जाव विदियछावट्ठीए अंतोमुहुत्तमुव्वरिदं ति। पुणो तत्थ ट्ठविय परमाणुत्तरादिकमेण दोहि वड्डीहि वड्ढावेदव्वं जाव पढमवारवड्डिदअंतोमुहुत्तमेत्त-गोवुच्छविसेसेहिंतो दुगुणमेत्तगोवुच्छविसेसा अंतोमुहुत्तमोकड्डिदूण पयदगोवुच्छाए विणासिददव्वं च वड्ढाविदं ति। पुणो सव्वजहण्णसम्मत्तकालब्भंतरे विज्झादसंकमेण गददव्वमेत्तं च वड्ढावेदव्वं। एवं वड्डिदेण अवरेण जहण्णसामित्तविहाणेणागंतूण पढमछावट्ठिं भमिय पुव्वं सम्मामिच्छत्तं पडिवण्णपढमसमए दंसणमोहक्खवणं पट्ठविय मिच्छत्तं खविय दोणिसेगे तिसमयकालट्ठिदिगे धरेदूण ट्ठिदजीवो सरिसो। संपहि इमं घेत्तूण परमाणुत्तरादिकमेण वेवड्डीहि दोगोवुच्छविसेसमेत्तं एगवारमोकड्डिदूण

परमाणु आदिके क्रमसे इसके ऊपर दो वृद्धियोंके द्वारा दो गोपुच्छविशेष, एक समयमें अपकर्षण करके विनष्ट हुआ द्रव्य और विध्यात संक्रमणके द्वारा संक्रान्त हुआ द्रव्य बढ़ाना चाहिये। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके साथ दो समय कम दो छयासठ सागर तक भ्रमण करके मिथ्यात्वका क्षपण करके, तीन समयकी स्थितिवाले दो गोपुच्छाओंका धारक एक अन्य जीव समान है। अब इसके द्रव्यके ऊपर भी एक एक परमाणुके क्रमसे दो गोपुच्छ-विशेष, प्रकृति गोपुच्छाओंमें एकवार अपकृष्ट हुआ द्रव्य और अन्य प्रकृतिमें संक्रमणके द्वारा गया हुआ द्रव्य दो वृद्धियोंके द्वारा बढ़ाना चाहिये। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके साथ तीन समयकम दो छयासठ सागर तक भ्रमण करके और मिथ्यात्वका क्षपण करके तीन समयकी स्थितिवाले दो निषेकोंका धारक अन्य एक जीव समान है। अब इस द्रव्यको लेकर पहले कहे गये मूल कारणकी सहायतासे बढ़ाकर तब तक उतारते जाना चाहिये जब तक दूसरे छयासठ सागरमें एक अन्तर्मुहूर्त बाकी रहे। फिर वहाँ ठहरकर एक-एक परमाणुके क्रमसे दो वृद्धियोंके द्वारा उसे तब तक बढ़ाना चाहिये जब तक प्रथमबार बढ़ाये हुए अन्तर्मुहूर्त प्रमाण गोपुच्छविशेषोंसे दुगुने गोपुच्छविशेष और अन्तर्मुहूर्तमें अपकर्षण करके प्रकृत गोपुच्छामेंसे विनष्ट हुए द्रव्यकी वृद्धि हो। फिर इसके बाद सबसे जघन्य सम्यक्त्वके कालके अन्दर विध्यातसंक्रमणके द्वारा संक्रान्त हुए द्रव्यमात्रकी वृद्धि करनी चाहिये। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके साथ जघन्य स्वामित्वकी प्रक्रियाके अनुसार प्रथम छयासठ सागर तक भ्रमण करके फिर सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त करनेके प्रथम समयमें दर्शनमोहके क्षपणको प्रारम्भ करके और मिथ्यात्वका क्षपण करके तीन समयकी स्थितिवाले दो निषेकोंका धारण करके स्थित हुआ जीव समान है। अब इसको लेकर एक परमाणु आदिके क्रमसे

१. ता०प्रतौ 'वड्डीहि चे (व) गोपुच्छविसेसा' आ०प्रतौ 'वड्डीहि चे गोपुच्छविसेसा' इति पाठः।

विणासिददव्वं परपयडिसंकमेण गददव्वमेत्तं च एत्थ वड्ढावेदव्वं । एवं वड्ढिदेण समयूणपढमछावट्ठिं भमिय मिच्छत्तं खविय वेणिसेगे तिसमयकालट्ठिदिगे धरेदूण ट्ठिदजीवो सरिसो । एवं जाणिदूण ओदारेदव्वं जाव पढमछावट्ठी हाइदूण अंतोमुहुत्तमेत्ता चेट्ठिदा त्ति । तत्थ ट्ठविय चत्तारि पुरिसे अस्सिदूण वड्ढावेदव्वं जाव तदित्थओघुक्कस्सदव्वं पत्तं ति । एवं विदियफद्दयमस्सिदूण ट्ठाणपरूवणा कदा ।

§ १७५. संपहि खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण वेछावट्ठीओ भमिय मिच्छत्तं खविय तिण्णि णिसेगे चदुसमयकालट्ठिदिगे धरेदूण ट्ठिदम्मि तदियफद्दयस्स आदी होदि । एत्थ फद्दयंतरपमाणं जाणिदूण वत्तव्वं । संपहि इमं घेत्तूण परमाणुत्तरादिकमेण दोहि वड्ढीहि तिण्णिगोवुच्छविसेसमेत्तमेगवारमोकड्डिदूण विणासिददव्वमेत्तं परपयडिसंकमेण गददव्वमेत्तं च वड्ढाविय समयूण-दुसमयूणादिकमेण ओदारेदव्वं जाव अंतोमुहुत्तूणविदियछावट्ठी ओदिण्णा त्ति । पुणो तत्थ ट्ठविय परमाणुत्तरकमेण वड्ढावेदव्वं जाव पढमवारं वड्ढिदअंतोमुहुत्तमेत्तगोवुच्छविसेसेहिंतो तिगुणगोवुच्छविसेसा अंतोमुहुत्तमोकड्डिदूण परपयडिसंकमेण विणासिददव्वमेत्तं वड्ढिदं ति । एवं

दो वृद्धियोंके द्वारा दो गोपुच्छविशेष, एक बार अपकर्षणके द्वारा विनष्ट हुआ द्रव्य और परप्रकृतिरूपसे संक्रान्त हुए द्रव्यके बराबर द्रव्य बढ़ाना चाहिये । इस प्रकार वृद्धि करनेवाले जीवके साथ एक समय कम प्रथम छ्यासठ सागर तक भ्रमण करके मिथ्यात्वका क्षपण करके तीन समयकी स्थितिवाले दो निषेकोंको धारण करके स्थित हुआ जीव समान है। इस प्रकार जानकर तब तक उतारना चाहिये जब तक प्रथम छ्यासठ सागर घट करके अन्तर्मुहूर्त मात्र शेष रह जाये। वहाँ ठहरकर चार पुरुषोंकी अपेक्षासे तब तक बढ़ाते जाना चाहिये जब तक वहाँका ओघरूपसे उत्कृष्ट द्रव्य प्राप्त हो। इस प्रकार दूसरे स्पर्धकको लेकर स्थानोंका कथन किया।

विशेषार्थ—प्रथम स्पर्धकके जघन्य सत्कर्म स्थानसे लेकर उसीके उत्कृष्ट सत्कर्मस्थानको प्राप्त करनेके लिये जिस प्रक्रियाका निर्देश किया है वही प्रक्रिया यहाँ भी समझ लेनी चाहिए।

§ १७५. अब क्षपितकर्मांशके लक्षणके साथ आकर दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण करके फिर मिथ्यात्वका क्षपण करके चार समयकी स्थितिवाले तीन निषेकोंको धारण करनेवाले जीवके तीसरे स्पर्धकका आरम्भ होता है। यहाँ पर स्पर्धकके अन्तरका प्रमाण जानकर कहना चाहिये। अब इसे लेकर एक परमाणु आदिके क्रमसे दो वृद्धियोंके द्वारा तीन गोपुच्छविशेष प्रमाण, और एकबार अपकर्षण करके विनष्ट हुए द्रव्यप्रमाण और अन्य प्रकृति रूपसे संक्रान्त हुए द्रव्यप्रमाण द्रव्यको बढ़ाकर एक समय कम, दो समय कम आदिके क्रमसे अन्तर्मुहूर्तकम दूसरे छयासठ सागर काल पर्यन्त उतारते जाना चाहिए। फिर वहाँ ठहराकर एक एक परमाणुके अधिकके क्रमसे तब तक बढ़ाना चाहिये जब तक प्रथमबार बढ़े हुए अन्तर्मुहूर्तप्रमाण गोपुच्छविशेषोंसे तिगुने गोपुच्छविशेष और अन्तर्मुहूर्तमें अपकर्षण करके अन्य प्रकृतिरूपसे विनष्ट हुए द्रव्यप्रमाण द्रव्यकी वृद्धि हो। इस प्रकार वृद्धि करनेवाले जीव के साथ प्रथम छयासठ सागर तक भ्रमण करके और मिथ्यात्वका क्षपण करके चार समयकी

वड्ढिदेण अवरेगो खविदकम्मंसिओ पढमछावट्ठिं भमिय मिच्छत्तं खविय तिण्णि णिसेगे चदुसमयकालट्ठिदिगे धरेदूण ट्ठिदजीवो सरिसो। एवं समयूणादिकमेणोदारेदव्वं जाव अंतोमुहुत्तूणपढमछावट्ठी ओदिण्णा त्ति। पुणो तत्थ ठविय चत्तारि पुरिसे अस्सिदूण वड्ढावेदव्वं जाव एदं फद्दयमुक्कस्सत्तं[1] पत्तं ति। एदेण कमेण समयूणावलियमेत्त-फद्दयाणि अस्सिदूण ट्ठाणपरूवणा जाणिदूण कायव्वा। णवरि पुव्वुत्तसंधिम्मि पढमवारं वड्ढाविय गोवुच्छविसेसाणं चत्तारि-पंचआदिगुणगारे पवेसिय वड्ढावणं कायव्वं जाव तेसिं समयूणावलियमेत्तगुणगारो पविट्ठो त्ति।

§ १७६. संपहि समयूणावलियमेत्तगोवुच्छाणं कालपरिहाणिं काऊण चत्तारि पुरिसे अस्सिदूण तासु वड्ढाविज्जमाणियासु अणियट्टिगुणसेढिगोवुच्छाओ ण वड्ढावेदव्वाओ; तत्थ परिणामभेदाभावेण खविद-गुणिदकम्मंसियाणमणियट्टिगुणसेढि-गोवुच्छाणं तिसु वि कालेसु सरिसत्तुवलंभादो। अपुव्वगुणसेढी वड्ढदि, तत्थ असंखेज्ज-लोगमेत्तपरिणामाणमुवलंभादो। णवरि पदेसुत्तरादिकमेण णत्थि वड्ढी, असंखेज्जलोगेहि जहण्णदव्वे खंडिदे तत्थ एगखंडमेत्तदव्वस्स एगवारेण वड्ढिदंसणादो। तं जहा— अपुव्वकरणपढमसमयम्मि असंखेज्जलोगमेत्तपरिणामट्ठाणाणि होंति। तत्थ जहण्ण-परिणामट्ठाणप्पहुडि असंखे०लोगमेत्तविसोहिट्ठाणाणि जहण्णगुणसेढिपदेसविण्णासस्सेव

स्थितिवाले तीन निषेकोंको धारण करके स्थित हुआ अन्य एक क्षपितकर्मांशवाला जीव समान है। इस प्रकार एक सयमहीन आदिके क्रमसे अन्तर्मुहूर्त कम छयासठ सागर काल तक उतारते जाना चाहिये। फिर वहाँ ठहराकर चार पुरुषोंकी अपेक्षा तब तक बढ़ाते जाना चाहिये जब तक यह स्पर्धक उत्कृष्टपनेको प्राप्त होवे। इस क्रमसे एक समयकम आवली प्रमाण स्पर्धकोंको लेकर स्थानोंका कथन जानकर कहना चाहिये। किन्तु इतना विशेष है कि पूर्वोक्त सन्धिमें प्रथमवार बढ़ा करके गोपुच्छविशेषोंके चार, पाँच आदि गुणकारोंका प्रवेश कराकर तब तक बढ़ाना चाहिये जब तक उन गोपुच्छोंके एक समयकम आवलीप्रमाण गुणकार प्रविष्ट हों। अर्थात् चौगुने पँचगुने आदिके क्रमसे एक समय कम आवलीप्रमाण गुणित गोपुच्छोंकी वृद्धि करनी चाहिये।

§ १७६. अब एक समयकम आवलिप्रमाण गोपुच्छाओंकी कालकी हानिको करके चार पुरुषोंकी अपेक्षा उन गोपुच्छाओंमें वृद्धि करने पर अनिवृत्तिकरणसम्बन्धी गुणश्रेणिकी गोपुच्छाएँ नहीं बढ़ानी चाहिये, क्योंकि वहाँ परिणाम भेद न होनेसे क्षपितकर्मांश और गुणितकर्मांशवाले जीवोंकी अनिवृत्तिकरणसम्बन्धी गुणश्रेणिकी गोपुच्छओंमें तीनों ही कालोंमें समानता पाई जाती है। केवल अपूर्वकरणसम्बन्धी गुणश्रेणिमें ही वृद्धि होती है, क्योंकि अपूर्वकरणमें असंख्यात लोकप्रमाण परिणाम पाये जाते हैं। किन्तु अपूर्वकरणमें एक प्रदेश अधिक आदिके क्रमसे वृद्धि नहीं होती, क्योंकि असंख्यात लोकके द्वारा जघन्य द्रव्यमें भाग देनेपर जो आवे उसके लब्ध एक भागप्रमाण द्रव्यकी वहाँ एक बारमें वृद्धि देखी जाती है। खुलासा इस प्रकार है—अपूर्वकरणके प्रथम समयमें असंख्यात लोकप्रमाण परिणामस्थान होते हैं। उनमेंसे जघन्य परिणामस्थानसे लेकर असंख्यात लोकप्रमाण विशुद्धिस्थान तो

---

१. आ.प्रतौ 'फद्दयमुक्कस्संतरं पत्तं' इति पाठः।

कारणं। कुदो? साहावियादो। अणंतगुणहीण-अणंतगुणपरिणामाणं कज्जं कथं सरिसं होदि? ण, मेरुगिरिमेत्तसोवण्णपुंजेणुप्पाइदमोहादो दहरपुत्तहंडेणुप्पाइदमोहस्स महल्लत्तुवलंभादो। पुणो उवरि तदणंतरमेगपरिणामट्ठाणमसंखेज्जलोगभागहारेण खंडिदेगखंडवुड्डीए कारणं होदि। एदं परिणामट्ठाणमपुणरुत्तं ति जहण्णपरिणामेण सह पुध ट्ठवेदव्वं। पुणो पदेसओकड्डणाए एदेण सरिसपरिणामट्ठाणेसु[1] असंखेज्ज-लोगमेत्तेसु गदेसु तदो[2] अण्णमेगमपुणरुत्तट्ठाणं लब्भदि, पुव्विल्लगुणसेढिपदेसग्ग-मसंखे०लोगेहि खंडिय तत्थ एगखंडमेत्तपदेसब्भहियगुणसेढिविण्णासस्स कारणत्तादो। एदं पि परिणामं घेत्तूण पुव्वं पुध ट्ठविददोण्हं परिणामाणं पासे ठवेदव्वं। पुणो वि एत्तियमेत्तियमद्धाणमुवरि गंतूण अपुणरुत्तपरिणामट्ठाणाणि असंखेज्जलोगमेत्ताणि लब्भंति। पुणो अणेण विधाणेणुच्चिणिदूण गहिदासेसपरिणामट्ठाणाणमपुव्वकरणपढम-समए अवणिदासेसपुव्विल्लपरिणामपंतियागारेण रचणा कायव्वा। एवं विदियसमयादि जाव चरिमसमओ त्ति पुणरुत्तपरिणामाणमवणयणं काऊण तत्थतणअपुणरुत्तपरिणामाणं चेव एगसेढिआगारेण विण्णासो कायव्वो। संपहि एत्थ पढमसमयम्मि रचिदविदिय-

स्वभावसे ही गुणश्रेणिसम्बन्धी जघन्य प्रदेशरचनाका ही कारण है। क्योंकि ऐसा होना स्वाभाविक है।

शंका—अनन्तगुणे हीन और अनन्तगुणे परिणामोंका कार्य समान कैसे हो सकता है?

समाधान—यह शंका ठीक नहीं है; क्योंकि सुमेरुपर्वतके बराबर सोनेके ढेरसे जो मोह उत्पन्न होता है उस मोहसे छोटे पुत्रके खण्ड करनेसे उत्पन्न हुआ मोह बड़ा पाया जाता है।

पुनः उन असंख्यात लोकप्रमाण परिणामस्थानोंका अनन्तरवर्ती एक परिणामस्थान जघन्य द्रव्यके असंख्यात लोकप्रमाण खण्ड करके उनमेंसे एक खण्डप्रमाण वृद्धिका कारण होता है। यह परिणाम स्थान अपुनरुक्त है, इसलिए जघन्य परिणामके साथ इसे पृथक् स्थापित करना चाहिये। फिर प्रदेशोंका अपकर्षण करनेमें उक्त परिणामके समान असंख्यात लोकप्रमाण परिणामोंके हो जानेपर एक अन्य अपुनरुक्त स्थान प्राप्त होता है, क्योंकि यह परिणाम पूर्वोक्त गुणश्रेणिके प्रदेशसमूहके असंख्यात लोकप्रमाण समान खण्ड करके उनमेंसे एक खण्डप्रमाण प्रदेश अधिक गुणश्रेणिकी रचनामें कारण है। इस परिणामको भी ग्रहण करके पहले पृथक स्थापित किए गये दो परिणामोंके पासमें स्थापित करना चाहिए। इसके बाद भी असंख्यात लोकप्रमाण असंख्यात लोकप्रमाण स्थान जाकर अलग अलग असंख्यात लोकप्रमाण अपुनरुक्त परिणामस्थान प्राप्त होते हैं। पुनः इस विधिसे एकत्र किए हुए सब परिणामस्थानोंकी अपूर्व-करणके प्रथम समयमें अलग किए गए सब परिणामोंकी एक पंक्तिरूपसे रचना करनी चाहिए। इसी प्रकार दूसरे समयसे लेकर अन्तिम समय पर्यन्त पुनरुक्त परिणामोंको घटाकर वहांके अपुनरुक्त परिणामोंकी ही एक पंक्तिरूपसे रचना करनी चाहिए। अब यहां प्रथम समयमें स्थापित दूसरे परिणामरूप परिणमाकर शेष समयोंके जघन्य परिणामरूप यदि

१. आ०प्रतौ 'सरिसपरिणामेहि ट्ठाणेसु' इति पाठः। २. आ०प्रतौ 'मेत्तेसु तदो' इति पाठः।

परिणामं परिणमिय सेससमयजहण्णपरिणामेसु चेव जदि परिणमदि तो अणंताणि ट्ठाणाणि अंतरिदूण अण्णमपुणरुत्तट्ठाणमुप्पज्जदि। एवं वड्ढिददव्वं तत्तो अवणिय पुध ट्ठविय पुणो समयूणावलियमेत्तपगदिगोवुच्छासु परमाणुत्तरादिकमेण दोहि वड्ढीहि पुव्वमवणेदूण ट्ठविददव्वं वड्ढावेदव्वं। एवं वड्ढिदूण ट्ठिदेण सव्वसमएसु जहण्ण-अपुव्वकरणपरिणामेहि परिणमिय पढमसमए विदियपरिणामेण गुणसेढिं कदजीवो सरिसो[1]। संपहि पुणरवि पयडिगोवुच्छाए उवरि परमाणुत्तरकमेण दोहि वड्ढीहि अपुव्वगुणसेढिविसेसमेत्तं वड्ढावेदव्वं। एवं वड्ढिददव्वेण अण्णेगो खविदकम्मंसिओ अपुव्वकरणपढमसमयम्मि तदियपरिणामेण परिणमिय सेससमएसु सग-सगजहण्ण-परिणामेहि परिणमिय आगंतूण समयूणावलियमेत्तगोवुच्छाओ धरेदूण ट्ठिददव्वं सरिसं होदि। संपहि एदेण बीजपदेण समयूणावलियमेत्तपगदिगोवुच्छाओ अस्सिदूण अपुव्वगुणसेढिदव्वं वड्ढावेदव्वं जावप्पणो[2] उक्कस्सं पत्तमिदि। णवरि पढमसमय-जहण्णपरिणामप्पहुडि जाव उक्कस्सपरिणामो त्ति ताव णिरंतरं परिणमाविय गुणसेढि-दव्वे वड्ढाविज्जमाणे विदियादिसमएसु जहण्णपरिणामा चेव णिरुद्धा कायव्वा, विरोधो णत्थि, पढमसमयउक्कस्सपरिणामादो विदियसमयजहण्णपरिणामस्स अणंतगुणत्तुवलंभादो। पुणो पढमसमयमुक्कस्सपरिणामम्मि चेव ट्ठविय विदियसमओ सगजहण्णपरिणामप्पहुडि जाव तस्सेव उक्कस्सपरिणामो त्ति ताव परिवाडीए संचारेदव्वो। पुणो पढम-विदिय-

परिणमता है तो अनन्त स्थानोंका अन्तर देकर अन्य अपुनरुक्त स्थान उत्पन्न होता है। इस प्रकार बढ़े हुए द्रव्यको उसमेंसे घटाकर पृथक् स्थापित करो। फिर एक समय कम आवलि-प्रमाण प्रकृतिगोपुच्छाओंमें एक एक परमाणु अधिक आदिके क्रमसे दो वृद्धियोंके द्वारा पहले घटा करके स्थापित किये हुए द्रव्यको बढ़ाना चाहिये। इसप्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके साथ सब समयोंमें जघन्य अपूर्वकरणसम्बन्धी जघन्य परिणामोंके द्वारा परिणमन करके प्रथम समयमें दूसरे परिणामके द्वारा गुणश्रेणीको करनेवाला जीव समान हैं। अब प्रकृतिगोपुच्छाके ऊपर फिर भी एक एक परमाणु अधिक आदिके क्रमसे दो वृद्धियोंके द्वारा अपूर्वकरणकी गुणश्रेणिके विशेषमात्रको बढ़ाना चाहिये। इसप्रकार बढ़ाये हुए द्रव्यके साथ जो अन्य एक क्षपितकर्मांश-वाला जीव अपूर्वकरणके प्रथम समयमें तीसरे परिणामरूप परिणमकर और शेष समयोंमें अपने अपने जघन्य परिणामरूप परिणम कर तथा आकर एक समयकम आवलिप्रमाण गोपुच्छाओंको धारण करके जब स्थित होता है तब उसका द्रव्य समान होता है। अब इसी बीज-पदके अनुसार एक समयकम आवलिप्रमाण प्रकृतिगोपुच्छाओंका आश्रय लेकर अपूर्वकरणकी गुणश्रेणिका द्रव्य तब तक बढ़ाना चाहिए जब तक वह अपने उत्कृष्टपनेको प्राप्त हो। इतनी विशेषता है कि प्रथम समयके जघन्य परिणामसे लेकर उत्कृष्ट परिणामपर्यन्त निरन्तर परिणमन कराके गुणश्रेणिके द्रव्यको बढ़ाने पर दूसरे आदि समयोंमें जघन्य परिणाम ही लेने चाहिये, इसमें कोई विरोध नहीं है, क्योंकि प्रथम समयके उत्कृष्ट परिणामसे दूसरे समयका जघन्य परिणाम अनन्तगुणा पाया जाता है। फिर प्रथम समयमें उत्कृष्ट परिणाममें ही ठहराकर दूसरे समयको उसके जघन्य परिणामसे लेकर उसीके उत्कृष्ट परिणामके प्राप्त

१. आ०प्रतौ 'कदजीवसरिसो' इति पाठः। २. ता०प्रतौ 'जाव पुणो' इति पाठः।

समए सग-सगुक्कस्सपरिणामेसु चेव ट्ठविय पुणो तदियसमओ सगजहण्णपरिणाम-प्पहुडि जावप्पणो उक्कस्सपरिणामो त्ति ताव णिरंतरं परिणमावेदव्वो। एवं सव्वे समया परिवाडीए संचारेदव्वा जावप्पप्पणो उक्कस्सपरिणामं पत्ता त्ति। तत्थ सव्व-पच्छिमवियप्पो वुच्चदे। तं जहा—खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण उवसमसम्मत्तं पडिवज्जिय पुणो वेदगं गंतूण तत्थ अंतोमुहुत्तमच्छिय दंसणमोहक्खवणमाढविय सव्वुक्कस्सअपुव्वपरिणामेहि चेव गुणसेढिं करिय मिच्छत्तं खवेदूण आवलियकालट्ठिदीए समयूणावलियमेत्तणिसेगे धरेदूण ट्ठिदो सव्वपच्छिमो।

§ १७७. संपहि समयूणावलियमेत्तविगिदिगोवुच्छाओ उक्कस्साओ कस्सामो। एदाओ वि परमाणुत्तरकमेण ण वड्ढंति[1]। कुदो? ट्ठिदिखंडयचरिमफालीसु णिवद-माणासु सव्वणिसेगेसु अणंताणं परमाणूणमेगवारेण विगिदिगोवुच्छासरूवेण णिवादुलंभादो। तेण परमाणुत्तरकमेण पयडिगोवुच्छा चेव वड्ढावेदव्वा जाव पढमट्ठिदि-खंडयमस्सिदूण समयूणआवलियमेत्तगोवुच्छासु वड्ढिददव्वं ति। एवं वड्ढिदूण ट्ठिदेण अण्णेगो समयूणावलियमेत्तपगदिगोवुच्छाओ जहण्णाओ चेव करिय समयूणावलिय-मेत्तविगिदिगोवुच्छासु पुव्वं वड्ढाविददव्वं धरेदूण ट्ठिदो सरिसो। पुणो समयूणा-

होने तक क्रमसे संचरण कराना चाहिये। फिर पहले और दूसरे समयमें अपने अपने उत्कृष्ट परिणामोंमें ही ठहराकर फिर तीसरे समयको अपने जघन्य परिणामसे लेकर अपने उत्कृष्ट परिणामके प्राप्त होने तक निरन्तर परिणमाना चाहिये। इस प्रकार सब समयोंका अपने अपने उत्कृष्ट परिणामके प्राप्त होने तक संचार कराना चाहिये। अब उनमेंसे सबसे अन्तिम विकल्पको कहते हैं। वह इस प्रकार है—क्षपितकर्मांशके लक्षणके साथ आकर उपशम-सम्यक्त्वको ग्रहण करके फिर वेदकसम्यक्त्वको ग्रहण करके, वहां अन्तर्मुहूर्त तक ठहरकर दर्शनमोहके क्षपणको आरम्भ करके और अपूर्वकरणसम्बन्धी सबसे उत्कृष्ट परिणामोंके ही द्वारा गुणश्रेणिको करके मिथ्यात्वका क्षपण करे और मिथ्यात्वकी एक आवलिप्रमाण स्थितिवाले एक समय कम आवलिप्रमाण निषेकोंके शेष रहने पर सबसे अन्तिम विकल्प होता है।

§ १७७. अब एक समय कम आवलिप्रमाण विकृतिगोपुच्छाओंको उत्कृष्ट करके बतलाते हैं। ये गोपुच्छाएं भी एक एक परमाणु अधिकके क्रमसे नहीं बढ़ती हैं, क्योंकि स्थितिकाण्डककी अन्तिम फालियोंका पतन होने पर सब निषेकोंमें अनन्त परमाणुओंका एक बारमें विकृतिगोपुच्छारूपसे पतन पाया जाता है। अतः एक-एक परमाणु अधिकके क्रमसे प्रकृतिगोपुच्छाको ही प्रथम स्थितिकाण्डकका अवलम्बन लेकर एक समय कम आवलि-प्रमाण गोपुच्छाओंमें बढ़े हुए द्रव्यके अन्त तक बढ़ाना चाहिये। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके साथ एक समय कम आवलिप्रमाण जघन्य प्रकृतिगोपुच्छाओंको ही करके एक समय कम आवलिप्रमाण विकृतिगोपुच्छाओंमें पहले बढ़ाये हुए द्रव्यको धारण करके स्थित हुआ अन्य एक जीव समान है। फिर एक समय कम आवलिप्रमाण जघन्य

१. ता०प्रतौ 'कमेण वड्ढंति' इति पाठः।

वलियमेत्तपगदिगोवुच्छासु जहण्णियासु परमाणुत्तरकमेण वड्ढावेदव्वं जाव विदिय-ट्ठिदिकंडयचरिमफालिमस्सिदूण समयूणावलिय[1]मेत्तविगिदिगोवुच्छासु णिवदिददव्वं ति। एवं वड्ढिदेण समयूणावलियमेत्तपगदिगोवुच्छाओ जहण्णाओ चेव धरिय चरिम-दुचरिम-ट्ठिदिखंडयचरिमफालीणं उक्कस्सदव्वं समयूणावलियमेत्तगोवुच्छासु तप्पाओग्गं धरेदूण ट्ठिदो सरिसो। कथं सव्वट्ठिदिखंडेसु जहण्णेसु संतेसु पढम-विदियट्ठिदि खंडयाणि चेव उक्कस्सत्तं पडिवज्जंति? ण, उक्कड्डणवसेण तेसिं चेव उक्कस्स-भावावत्तीए अविरोहादो। सव्वट्ठिदिखंडएसु वा समयाविरोहेण तप्पमाणं दव्वं वड्ढावेदव्वं। अहवा सव्वट्ठिदिखंडएसु जहण्णेण वड्ढिदेसु संतेसु जो लाहो विगिदिगोवुच्छाए[2] तत्तियमेत्तदव्वं परमाणुत्तरकमेण पयडिगोवुच्छाए वड्ढिदे पुणो पच्छा सव्वट्ठिदिखंडएसु एत्तियमेत्तं दव्वं वड्ढाविय समयूणावलियमेत्तपयडिगोवुच्छाणं जहण्णभावं करिय सरिसं कायव्वं। एदेण बीजपदेण विगिदिगोवुच्छा वड्ढावेदव्वा जाव समयूणावलियमेत्तविगिदिगोवुच्छाओ उक्कस्सत्तं पत्ताओ त्ति। पुणो पच्छा समयूणावलियमेत्तपयडिगोवुच्छाओ परमाणुत्तरकमेण णिरंतरं वड्ढावेदव्वाओ जाव अप्पणो उक्कस्सत्तं पत्ताओ त्ति। सव्वट्ठिदिगोवुच्छासु उक्कस्सभावमुवगयासु संतीसु

प्रकृतिगोपुच्छाओंमें एक एक परमाणु अधिकके क्रमसे तब तक बढ़ाना चाहिए जब तक दूसरे स्थितिकाण्डककी अन्तिम फालिका अवलम्बन लेकर एक समय कम आवलिप्रमाण विकृतिगोपुच्छाओंमें द्रव्यका पतन होता रहे। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके साथ एक समय कम आवलिप्रमाण जघन्य प्रकृतिगोपुच्छाओंको ही धारण करके, अन्तिम और द्विचरम स्थितिकाण्डककी अन्तिम फालियोंके उत्कृष्ट द्रव्यको एक समय कम आवलिप्रमाण गोपुच्छाओंमें तत्प्रायोग्य धारण करके स्थित हुआ जीव समान है।

शंका—सब स्थितिकाण्डकोंके जघन्य होते हुए प्रथम और द्वितीय स्थितिकाण्डक ही उत्कृष्टपनेको क्यों प्राप्त होते हैं।

समाधान—नहीं, क्योंकि उत्कर्षणाके द्वारा उन्हींके उत्कृष्टपनेको प्राप्त होनेमें कोई विरोध नहीं आता।

अथवा सभी स्थितिकाण्डकोंमें आगमानुसार तत्प्रमाण द्रव्यको बढ़ाना चाहिये। अथवा सब स्थितिकाण्डकोंके जघन्यरूपसे बढ़ने पर विकृतिगोपुच्छामें जो लाभ हो, प्रकृतिगोपुच्छामें एक एक परमाणु अधिकके क्रमसे उतने द्रव्यके बढ़ने पर फिर बादमें सब स्थितिकाण्डकोंमें उतने द्रव्यको बढ़ाकर एक समय कम आवलिप्रमाण प्रकृतिगोपुच्छाओंको जघन्य करके समान करना चाहिये। इस बीजपदके अनुसार जब तक एक समयकम आवलि-प्रमाण विकृतिगोपुच्छाएँ उत्कृष्टपनेको प्राप्त हों तब तक विकृतिगोपुच्छाको बढ़ाना चाहिये। इसके बाद एक समय कम आवलिप्रमाण प्रकृतिगोपुच्छाओंको एक एक परमाणु अधिकके क्रमसे तब तक निरन्तर बढ़ाना चाहिये जब तक अपने उत्कृष्टपनेको प्राप्त हों।

शंका—सभी स्थितिगोपुच्छाओंके उत्कृष्टपनेको प्राप्त होने पर एक समय कम

१. आ०प्रतौ '–मस्सिदूण ण समयूणावलिय-' इति पाठः। २. ता०प्रतौ 'लोहो ? विगिदिगोवुच्छाए' आ०प्रतौ 'लोहो विगिदिगोवुच्छाए' इति पाठः।

कधं समयूणावलियमेत्तपगदिगोवुच्छाणं चेव जहण्णत्तं ? ण ओकड्डुक्कड्डणवसेण तत्थतणकम्मखंधेसु हेट्ठुवरि संकंतेसु तासिं जहण्णत्तं पडि विरोहाभावादो। तत्थ सव्वपच्छिमवियप्पो वुच्चदे। तं जहा—जो गुणिदकम्मंसिओ सण्णिपंचिंदिएसु एइंदिएसु च अंतोमुहुत्तकालमंतरिय मणुस्सेसु उववण्णो। तत्थ अंतोमुहुत्तब्भहियअट्ठवस्सेसु गदेसु उक्कस्सअपुव्वपरिणामेहि दंसणमोहणीयं खविय समयूणावलियमेत्तगोवुच्छाओ धरेदूण ट्ठिदो सव्वपच्छिमवियप्पो, एत्तो उवरि वड्डीए अभावादो।

§ १७८. संपहि जो खविदकम्मंसिओ सम्मत्तेण सह भमिदवेछावट्ठिसागरोवमो मिच्छत्तचरिमफालिं धरेदूण ट्ठिदो तस्स दव्वं पुव्विल्लसमयूणावलियमेत्तगोवुच्छाणमुक्कस्सदव्वादो असंखेज्जगुणं। तदसंखेज्जगुणत्तं कुदो णव्वदे ? जुत्तीदो। तं जहा—समयूणावलियमेत्तउक्कस्सपयडिगोवुच्छाहिंतो खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण वेछावट्ठीओ भमिय मिच्छत्तचरिमफालिं धरेदूण ट्ठिदखवगस्स पयडिगोवुच्छाओ असंखेज्जगुणाओ, जोगगुणगारादो अंतोमुहुत्तोवट्टिदओकड्डुकड्डणभागहारपदुप्पण्णवेछावट्ठिअण्णोण्णब्भत्थरासिणोवट्टिदचरिमफालिआयामस्स असंखेज्जगुणत्तादो। तत्थतणविगिदिगोवुच्छाहिंतो वि चरिमफालीए विगिदिगोवुच्छाओ असंखेज्जगुणाओ। कारणं पुव्वं व परूवेदव्वं। समयूणावलियमेत्तअपुव्व-अणियट्टिगुणसेढिगोवुच्छाहिंतो चरिम-

---

आवलिप्रमाण प्रकृतिगोपुच्छाएँ जघन्य क्यों रहती हैं ?

समाधान—नहीं, क्योंकि अपकर्षण-उत्कर्षणके निमित्तसे वहाँके कर्मस्कन्धोंके नीचे और ऊपर संक्रान्त होने पर उनके जघन्य होनेमें कोई विरोध नहीं आता। अब वहां सबसे अन्तिम विकल्पको कहते हैं। वह इस प्रकार है—जो गुणितकर्मांशवाला जीव संज्ञी पञ्चेन्द्रियों और एकेन्द्रियोंमें अन्तर्मुहूर्त काल बिताकर मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ और वहां अन्तर्मुहूर्त अधिक आठ वर्ष बीतने पर उत्कृष्ट अपूर्वकरणरूप परिणामोंके द्वारा दर्शनमोहनीयका क्षय करके एक समय कम आवलिप्रमाण गोपुच्छाओंको धारण करके स्थित हुआ उसके सबसे अन्तिम विकल्प होता है, क्योंकि इसके द्रव्यके ऊपर वृद्धिका अभाव है।

§ १७८. अब जो क्षपितकर्मांशवाला जीव सम्यक्त्वके साथ दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण करके मिथ्यात्वकी अन्तिम फालिको धारण करके स्थित है उसका द्रव्य पूर्वोक्त एक समय कम आवलिप्रमाण गोपुच्छाओंके उत्कृष्ट द्रव्यसे असंख्यातगुणा है।

शंका—किण प्रमाणसे जाना कि वह असंख्यातगुणा है ?

समाधान—युक्तिसे जाना। वह युक्ति इस प्रकार है—क्षपितकर्मांशके लक्षणके साथ आकर दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण करके मिथ्यात्वकी अन्तिम फालिको धारण करनेवाले क्षपककी प्रकृतिगोपुच्छाएँ एक समय कम आवलिप्रमाण उत्कृष्ट प्रकृतिगोपुच्छाओंसे असंख्यातगुणी हैं, क्योंकि अन्तर्मुहूर्तसे भाजित अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारसे गुणित दो छयासठ सागरकी अन्योन्याभ्यस्तराशिसे भाजित जो चरिमफालिका आयाम है वह योगके गुणकारसे असंख्यातगुणा है। तथा वहांकी विकृतिगोपुच्छाओंसे भी चरिमफालिकी विकृतिगोपुच्छाएँ असंख्यातगुणी हैं। कारणका पहलेके ही समान कथन करना चाहिये। अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणसम्बन्धी गुणश्रेणिकी एक समय कम

फालिधरस्स अपुव्व-अणियट्टिगुणसेढिगोवुच्छाओ असंखेज्जगुणाओ। कुदो ? असंखेज्ज-गुणकमेण अवट्ठिदणिसेगाणं अंतोमुहुत्तमेत्ताणं चरिमफालीए उवलंभादो। जदि वि अपुव्वगुणसेढिगोवुच्छाणं जहण्णुक्कस्सपरिणामावट्ठंभेण असंखेज्जगुणत्तमासंकिज्जइ तो वि अणियट्टिगुणसेढीणमसंखेज्जत्ते णत्थि आसंका, तत्थ परिणामाणं जहण्णुक्कस्सभेदाभावेण खविद-गुणिदकम्मंसियएसु[1] तासिं समाणत्तुवलंभादो। तम्हा चरिमफालिदव्वमसंखेज्जगुणं ति घेत्तव्वं।

§ १७९ एत्थ ओवट्टणं ठविय दव्वपमाणपरिच्छेदो कीरदे। तं जहा—जोगगुणगारेण पदुप्पण्णदिवड्ढगुणहाणिगुणिदसमयपबद्धचरिमफालीए समयूणावलियमेत्त-पगदिविगिदिगोवुच्छसहिदअपुव्व-अणियट्टिगुणसेढीणमागमणट्ठमसंखेज्जरूवोवट्टिदाए भागे हिदे समयूणावलियमेत्तगोवुच्छाणमुक्कस्सदव्वमागच्छदि। दिवड्ढगुणिदसमयपबद्धे अंतोमुहुत्तोवट्टिदओकड्डुक्कड्डणभागहारगुणिदवेछावट्ठिअण्णोण्णब्भत्थरासीए ओवट्टिदे चरिमफालिदव्वमागच्छदि। जोगगुणगारेण अपुव्व-अणियट्टिगुणसेढिगोवुच्छागमणट्ठं ठविद-असंखेज्जरूवगुणिदेणोवट्टिदचरिमफालीदो जेणंतोमुहुत्तोवट्टिदओकड्डुक्कड्डणभागहारगुणिद-वेछावट्ठिअण्णोण्णब्भत्थरासी असंखेज्जगुणो तेण समयूणावलियमेत्तउक्कस्सगोवुच्छाहिंतो

आवलिप्रमाण गोपुच्छाओंसे अन्तिम फालिके धारक जीवकी अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण सम्बन्धी गुणश्रेणिकी गोपुच्छाएँ असंख्यातगुणी हैं, क्योंकि अन्तिम फालिमें अन्तर्मुहूर्त प्रमाण निषेक असंख्यात गुणितक्रमसे अवस्थित पाये जाते हैं। यद्यपि अपूर्वकरणसम्बन्धी गुणश्रेणिकी गोपुच्छाओंके असंख्यातगुणित होनेमें आशंका हो सकती है, क्योंकि अपूर्वकरणमें जघन्य और उत्कृष्ट परिणाम पाये जाते हैं, तथापि अनिवृत्तिकरणसम्बन्धी गुणश्रेणिकी गोपुच्छाओंके असंख्यातगुणित होनेमें कोई आशंका नहीं है, क्योंकि अनिवृत्तिकरणरूप परिणामोंमें जघन्य और उत्कृष्टका भेद नहीं होनेसे क्षपितकर्मांश और गुणितकर्मांश जीवोंमें वे समान पाई जाती हैं। अतः अन्तिम फालिका द्रव्य असंख्यातगुणा है ऐसा ग्रहण करना चाहिये।

§ १७९. अब यहां अपवर्तनाको स्थापित कर द्रव्यप्रमाणका निर्णय करते हैं। वह इस प्रकार है—योगगुणकारसे उत्पन्न डेढ़ गुणहाणिगुणित समयप्रबद्धमें एक समय कम आवलिप्रमाण प्रकृतिगोपुच्छा और विकृतिगोपुच्छा सहित अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण सम्बन्धी गुणश्रेणियोंको लानेके लिये स्थापित असंख्यात रूपसे भाजित अन्तिम फालिका भाग देने पर एक समय कम आवलिप्रमाण गोपुच्छाओंका उत्कृष्ट द्रव्य आता है। और डेढ़ गुणहानिसे गुणित समयप्रबद्धमें अन्तर्मुहूर्तसे भाजित ऐसे अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारसे गुणित दो छयासठ सागरकी अन्योन्याभ्यस्तराशिका भाग देने पर अन्तिम फालिका द्रव्य आता है। अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणसम्बन्धी गुणश्रेणिकी गोपुच्छाओंके लानेके लिए स्थापित असंख्यात रूपसे गुणित योगके गुणाकारका अन्तिम फालिमें भाग देने पर जो लब्ध आवे उससे यतः अन्तर्मुहूर्तसे भाजित अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारसे गुणित जो दो छयासठ सागरकी

१. ता०प्रतौ 'खविदकम्मंसिएसु' इति पाठः। २. ता०प्रतौ घेत्तव्वं। ण य ओवट्टणं इति पाठः। ३. आ०प्रतौ '-समयपबद्धचरिमफालीए' इति पाठः।

चरिमफालिदव्वमसंखेज्जगुणहीणं ति, तदसंखेज्जगुणत्तस्स कारणाणुवलंभादो। असंखेज्ज-रूवगुणिदवेछावट्ठिअण्णोण्णब्भत्थरासीदो चरिमफालिआयामो असंखेज्जरूववड्ढिदो वि संतो असंखेज्जगुणहीणो त्ति[1] काए जुत्तीए णव्वदे ? पुव्वं परूविदाए। ण च भागहारे बहुए संते लद्धपमाणं बहुअं होदि, विप्पडिसेहादो। तदो अत्थदो ओवट्टणादो[2] दुचरिमफालिदव्वमसंखेज्जगुणं ति सिद्धं।

§ १८० संपहि इमं चरिमफालिदव्वं परमाणुत्तरकमेण दोवड्ढीहि एगगोवुच्छ-मेत्तमेगसमएण ओकड्डणाए परपयडिसंकमेण च विणासिददव्वमेत्तं च वड्ढावेदव्वं। एवं वड्ढिदूण ट्ठिदेण अण्णेगो समयूणवेछावट्ठीओ भमिय मिच्छत्तं खविय चरिम-फालिं धरेदूण ट्ठिदजीवो सरिसो; पुव्विल्लेण वड्ढाविददव्वस्स एत्थ खयाणुवलंभादो। पुणो इमं घेत्तूण परमाणुत्तरकमेण एगगोवुच्छमेत्तमेगसमएण ओकड्डणाए परपयडि-संकमेण च विणासिददव्वमेत्तं च वड्ढावेदव्वं[3]। एवं वड्ढिदूण ट्ठिदेण अण्णेगो दुसमयूणवेछावट्ठिं भमिय मिच्छत्तचरिमफालिं धरेदूण ट्ठिदखवगो सरिसो। एवं जाणिदूण ओदारेदव्वं जाव अंतोमुहुत्तूणविदियछावट्ठिमोदिण्णो त्ति। इममेत्थेव ट्ठविय

अन्योन्याभ्यस्तराशि वह असंख्यातगुणी है, अतः एक समयकम आवलिप्रमाण उत्कृष्ट गोपुच्छाओंसे अन्तिम फालिका द्रव्य असंख्यातगुणा हीन है, क्योंकि उसके असंख्यातगुणे होनेका कोई कारण नहीं है।

शंका—असंख्यात रूपसे गुणित दो छ्यासठ सागरकी अन्योन्याभ्यस्त राशिसे अन्तिम फालिका आयाम असंख्यात रूपसे बढ़ा हुआ होने पर भी असंख्यातगुणा हीन है यह किस युक्तिसे जाना ?

समाधान—पहले कही हुई युक्तिसे जाना। दूसरे, भागहारके बहुत होने पर लब्धका प्रमाण बहुत नहीं होता, क्योंकि ऐसा होनेका निषेध है। अतः वास्तवमें अपवर्तनासे द्विचरिम फालिका द्रव्य असंख्यातगुणा है यह सिद्ध होता है।

§ १८०. अब इस अन्तिम फालिके द्रव्यको एक एक परमाणु अधिकके क्रमसे दो वृद्धियोंके द्वारा एक गोपुच्छप्रमाण तथा एक समयमें अपकर्षण और अन्य प्रकृतिरूप संक्रमणके द्वारा विनष्ट हुए द्रव्यप्रमाण बढ़ाना चाहिए। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके साथ एक समयकम दो छ्यासठ सागर काल तक भ्रमण करके फिर मिथ्यात्वका क्षपण करके अन्तिम फालिको धारण करनेवाला जीव समान है, क्योंकि पहले जीवने जो द्रव्य बढ़ाया है उसका इस जीवके क्षय नहीं पाया जाता। फिर इस द्रव्यको लेकर एक एक परमाणु अधिकके क्रमसे एक गोपुच्छप्रमाण और एक समयमें अपकर्षण और अन्य प्रकृतिसंक्रमणके द्वारा विनष्ट हुए द्रव्यको बढ़ाना चाहिए। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके साथ दो समय कम दो छ्यासठ सागर काल तक भ्रमण करके मिथ्यात्वकी अन्तिम फालिको धारण करनेवाला क्षपक जीव समान है। इस प्रकार जानकर अन्तर्मुहूर्तकम दूसरे छ्यासठ सागर कालके प्राप्त होने तक उतारते जाना चाहिए।

---

१. ता०प्रतौ 'असंखेज्जगुणो त्ति' इति पाठः। २. आ०प्रतौ 'अत्थदो अधदो ओवट्टणादो' इति पाठः। ३. ता०प्रतौ '-दव्वमेत्तं वड्ढाशेदव्वं' इति टाठः।

परमाणुत्तरादिकमेण दोहि वड्ढीहि अंतोमुहुत्तमेत्तगोवुच्छाओ अंतोमुहुत्तमोकड्डणाए परपयडिसंकमेण च विणासिददव्वमेत्तं च एत्थ वड्ढावेदव्वं। एवं वड्ढिदेण अण्णेगो पढमछावट्ठिं भमिय सम्मामिच्छत्तं पडिवज्जमाणपढमसमए दंसणमोहक्खवणमाढविय मिच्छत्तचरिमफालिं धरेदूण ट्ठिदजीवो सरिसो। पुणो इमं घेत्तूण परमाणुत्तरकमेण दोवड्ढीहि एगगोवुच्छमेत्तमेगसमएण ओकड्डणाए परपयडिसंकमेण च विणासिदव्वमेत्तं च वड्ढावेदव्वं। एवं वड्ढिदेण अण्णो खविदकम्मंसिओ भमिदसमयूणपढमछावट्ठिसागरोवमो धरिदमिच्छत्तचरिमट्ठिदिखंडयचरिमफालीओ सरिसो। एवं जाणिदूण ओदारेदव्वं जाव पढमछावट्ठिमंतोमुहुत्तूणं ओदिण्णो त्ति। पुणो तत्थ ट्ठविय पयडि-विगिदिगोवुच्छा-वट्ठंभणवलेण परिणामे अस्सिदूण अपुव्वगुणसेढिं वड्ढाविय परिणामभेदाभावादो अणियट्टिगुणसेढिमवट्ठिदं ठविय पुणो परमाणुत्तरकमेण पंचवड्ढीहि चत्तारि पुरिसे अस्सिदूण चरिमफालिमेत्ताओ पयडि-विगिदिगोवुच्छाओ वड्ढावेदव्वाओ जाव दुचरिम-वड्ढि त्ति। तत्थ चरिमवड्ढिवियप्पो वुच्चदे। तं जहा—सत्तमाए पुढवीए मिच्छत्तदव्व-मुक्कस्सं करिय पुणो दोतिण्णिभवग्गहणाणि तिरिक्खेसु उववज्जिय पुणो मणुस्सेसु उववज्जिय सव्वलहुं जोणिणिक्कमणजम्मणेण अंतोमुहुत्तब्भहियअट्ठवासीओ होदूण मिच्छत्तचरिमफालिं धरेदूण ट्ठिदम्मि चरिमवियप्पो। पुणो इमं सत्तमपुढविचरिम-

---

इस द्रव्यको यहीं स्थापित करके एक परमाणु अधिक आदिके क्रमसे दो वृद्धियोंके द्वारा अन्तर्मुहूर्तप्रमाण गोपुच्छाएँ और अन्तर्मुहूर्त पर्यन्त अपकर्षण और अन्य प्रकृतिरूप संक्रमणके द्वारा विनष्ट हुए द्रव्यको इस पर बढ़ाना चाहिए। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके साथ प्रथम छयासठ सागर तक भ्रमण करके जिस समय सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानको प्राप्त होनेवाला था उसके प्रथम समयमें दर्शनमोहके क्षपणको प्रारम्भ करके मिथ्यात्वकी अन्तिम फालिको धारण करनेवाला अन्य जीव समान है। फिर इसको लेकर एक एक परमाणु अधिकके क्रमसे दो वृद्धियोंके द्वारा एक गोपुच्छप्रमाण द्रव्यको और एक समयमें अपकर्षण और अन्य प्रकृतिरूप संक्रमणके द्वारा विनष्ट हुए द्रव्यको बढ़ाना चाहिए। इस प्रकार बढ़ानेवाले जीवके साथ एक समयकम प्रथम छयासठ सागर काल तक भ्रमण करके मिथ्यात्वके अन्तिम स्थितकाण्डककी अन्तिम फालिका धारक क्षपितकर्मांशवाला अन्य जीव समान है। इस प्रकार जानकर अन्तर्मुहूर्तकम प्रथम छयासठ सागरके प्राप्त होने तक उतारते जाना चाहिए।

फिर वहाँ ठहरा कर प्रकृतिगोपुच्छा और विकृतिगोपुच्छाके अवलम्बनसे परिणामोंका आश्रय लेकर, अपूर्वकरणसम्बन्धी गुणश्रेणिको बढ़ाओ और अनिवृत्तिकरणमें परिणामोंका भेद न होनेसे अनिवृत्तिकरणसम्बन्धी गुणश्रेणिको तदवस्थ रखो। फिर एक एक परमाणु अधिक आदिके क्रमसे पाँच वृद्धियोंके द्वारा चार पुरुषोंका आश्रय लेकर द्विचरम वृद्धि पर्यन्त अन्तिम फालिप्रमाण प्रकृतिगोपुच्छाओं और विकृतिगोपुच्छाओंको बढ़ाओ। उनमें से वृद्धिका अन्तिम विकल्प कहते हैं। वह इस प्रकार है—सातवें नरकमें मिथ्यात्वके द्रव्यको उत्कृष्ट करके तिर्यञ्चोंमें दो तीन भव धारण करे। फिर मनुष्योंमें उत्पन्न होकर, सबसे लघु कालके द्वारा योनिसे निकलकर, अन्तर्मुहूर्त अधिक आठ वर्षका होकर मिथ्यात्वकी अन्तिम फालिको धारण करे उसके अन्तिम विकल्प होता है। फिर इसे सातवें नरकके अन्तिम समयवर्ती

समयणेरइयदव्वेण सह संधिय तं मोत्तूणेदं घेत्तूण परमाणुत्तरकमेण दोहि वड्ढीहि वड्ढावेदव्वं जाव अप्पणो ओघुक्कस्सदव्वं पत्तं त्ति। एवं मिच्छत्तस्स खविदकम्मंसियमस्सिदूण कालपरिहाणीए ट्ठाणपरूवणा कदा।

§ १८१. संपहि तस्सेव मिच्छत्तस्स गुणिदकम्मंसियमस्सिदूण कालपरिहाणीए ट्ठाणपरूवणं कस्सामो। तं जहा—खविदकम्मंसियलक्खणेण बेछावट्ठीओ भमिय मिच्छत्तं खविय दुसमयकालट्ठिदिएगणिसेगमेत्तजहण्णदव्वं धरेदूण ट्ठिदो परमाणुत्तरकमेण पंचवड्ढीहि वड्ढावेदव्वो जाव अप्पणो उक्कस्सदव्वं पत्तो त्ति। एदेण अण्णेगो गुणिदकम्मंसिओ[1] णेरइयचरिमसमए एगगोवुच्छविसेसेण एगसमयमोकड्डुण-परपयडिसंकमेहि विणासिज्जमाणदव्वेण च ऊणमुक्कस्सदव्वं करिय पुणो तत्तो णिप्पिडिय समयूणवेछावट्ठीओ भमिय मिच्छत्तं खविय एगणिसेगं दुसमयकालट्ठिदियं धरेदूण ट्ठिदजीवो सरिसो। संपहि इमं खवयगोवुच्छं घेत्तूण वड्ढावेदव्वं जाव तेणूणीकददव्वं वड्ढिदं ति। एवं वड्ढिदूण ट्ठिदेण अण्णेगो एगगोवुच्छविसेसेण एगसमयमोकड्डुण-परपयडिसंकमेहि विणासिददव्वेण य ऊणुक्कस्सं पयदगोवुच्छं णेरइएसु करिय पुणो तत्तो णिग्गंतूण दुसमयूणवेछावट्ठीओ भमिय मिच्छत्तं खविय एगणिसेगं दुसमयकालट्ठिदियं धरेमाणट्ठिदो सरिसो। एवं जाणिदूण ओदारेदव्वं जाव

नारकीके द्रव्यके साथ मिलाओ और उसे छोड़ इसे लो। फिर इस पर एक परमाणु अधिक आदिके क्रमसे दो वृद्धियोंके द्वारा तब तक बढ़ाओ जब तक अपने ओघरूप उत्कृष्ट द्रव्यकी प्राप्ति हो। इस प्रकार क्षपितकर्मांशको लेकर कालकी हानिके द्वारा मिथ्यात्वके स्थानोंका कथन किया।

§ १८१. अब गुणितकर्मांशको लेकर कालकी हानिके द्वारा उसी मिथ्यात्वके स्थानोंका कथन करते हैं। वह इस प्रकार है—क्षपितकर्मांशके लक्षणके साथ दो छयासठ सागर तक भ्रमण कर और मिथ्यात्वका क्षपण करके दो समयकी स्थितिवाले एक निषेकप्रमाण जघन्य द्रव्यको धारण करके फिर उसे एक परमाणु अधिक आदिके क्रमसे पाँच वृद्धियोंके द्वारा तब तक बढ़ाना चाहिए जब तक अपना उत्कृष्ट द्रव्य प्राप्त हो। इस प्रकार उत्कृष्ट द्रव्यको करके स्थित हुए जीवके साथ एक अन्य गुणितकर्मांशवाला नारकी अन्तिम समयमें एक गोपुच्छविशेष और एक समयमें अपकर्षण और अन्य प्रकृतिरूप संक्रमणके द्वारा नष्ट होनेवाले द्रव्यसे हीन उत्कृष्ट द्रव्यको करके फिर वहाँसे निकलकर एक समयकम दो छयासठ सागर तक भ्रमण कर मिथ्यात्वका क्षपण करके दो समयकी स्थितिवाले एक निषेकका धारक होने पर समान होता है। अब इस क्षपककी गोपुच्छको तब तक बढ़ाना चाहिए जब तक उसके द्वारा कम किया हुआ द्रव्य वृद्धिको प्राप्त हो। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके साथ एक गोपुच्छविशेष तथा एक समयमें अपकर्षण और अन्य प्रकृतिरूप संक्रमणके द्वारा नष्ट होनेवाले द्रव्यसे हीन उत्कृष्ट प्रकृतिगोपुच्छको नारकियोंमें करके फिर वहाँसे निकलकर दो समय कम दो छयासठ सागर तक भ्रमण करके मिथ्यात्वका क्षय करके दो समय काल स्थितिवाले एक निषेकको धारण करके स्थित हुआ एक अन्य जीव समान है। इस प्रकार

१. आ० प्रतौ 'अण्णेण गुणिदकम्मंसिओ' इति पाठः।

अंतोमुहुत्तूणविदियछावट्ठी ओदिण्णा त्ति। संपहि तत्थ अंतोमुहुत्तमेत्तकाले अक्कमेण ऊणीकदे वि होदि तमम्हे एत्थ ण परूवेमो, बहुसो परूविदत्तादो।

§ १८२. संपहि एत्थ समयूणादिकमेण ओयरणविहाणं उच्चदे। तं जहा—चरिमसमयणेरइयो एगगोवुच्छविसेसेण एगसमयमोकड्डणपरपयडिसंकमेहि विणासिज्ज-माणदव्वेण य ऊणमुक्कस्सं पयदगोवुच्छं करिय तत्तो णिप्पिडिय समयूणं पढमछावट्ठिं भमिय सम्मत्तचरिमसमए सम्मामिच्छत्तं पडिवज्जिय सम्मामिच्छत्तचरिमसमए सम्मत्तं पडिवज्जिय पुणो अंतोमुहुत्तमच्छिय मिच्छत्तं खविय एगणिसेगं दुसमयकालट्ठिदिं करेदूण ट्ठिदो पुव्विल्लेण सरिसो। एवं पढमछावट्ठिं सगचरिमसमयादो एग-दो-समयादिकमेण ओदारेदव्वा जाव सम्मामिच्छत्तकालो विदियछावट्ठीए उव्वरिद-सम्मामिच्छत्तक्खवणद्धपेरंतकालो च सविसेसो ओदिण्णो त्ति। एवमोदिण्णेण अण्णेगो पढमछावट्ठिं भमिय सम्मामिच्छत्तमपडिवज्जिय मिच्छत्तं खविय तदेग-गोवुच्छं दुसमयकालट्ठिदियं पढमछावट्ठिचरिमसमयादो अंतोमुहुत्तमोदरिय धरेदूण ट्ठिदो सरिसो। एदेण अण्णेगो एगगोवुच्छविसेसेण एगसमएण ओकड्डण-परपयडि-संकमेण विणासिज्जमाणदव्वेण य ऊणमुक्कस्सं पयदगोवुच्छं णेरइयचरिमसमए करिय समऊणपुव्विल्लकालं परिभमिय मिच्छत्तं खविय तदेगगोवुच्छं दुसमयकालट्ठिदियं

जानकर अन्तर्मुहूर्त कम दूसरे छयासठ सागर काल कम होने तक उतारते जाना चाहिये। वहां अन्तर्मुहूर्तकाल एक साथ कम करने पर भी समानता होती है पर उसे हमने यहां नहीं कहा है, क्योंकि उसका अनेक बार कथन कर आये हैं।

§ १८२ अब यहांपर एक समय कम आदिके क्रमसे अवतरणविधिका कथन करते हैं। वह इसप्रकार है—एक अन्तिम समयवर्ती नारकी है जिसने एक गोपुच्छविशेषसे तथा अपकर्षण और परप्रकृति संक्रमणके द्वारा नष्ट होनेवाले द्रव्यसे हीन उत्कृष्ट प्रकृतगोपुच्छको किया। फिर वहांसे निकल कर एक समय कम प्रथम छयासठ सागर तक भ्रमण किया। फिर सम्यक्त्वके अन्तिम समयमें सम्यग्मिथ्यात्वको और सम्यग्मिथ्यात्वके अन्तिम समयमें सम्यक्त्वको प्राप्त किया। फिर अन्तर्मुहूर्त तक ठहरकर मिथ्यात्वका क्षय किया। ऐसा करते हुए जब वह दो समय कालकी स्थितिवाले एक निषेकको करके स्थित होता है तो वह पहलेके जीवके समान होता है। इस प्रकार अपने अन्तिम समयसे लेकर एक समय और दो समय आदिके क्रमसे प्रथम छयासठ सागर कालको तब तक उतारते जाना चाहिये जब तक सम्यग्मिथ्यात्वका काल और दूसरे छयासठ सागरमें शेष बचा सविशेष मिथ्यात्वका क्षपण तकका काल घट जाय। इस प्रकार उतरते हुए जीवके साथ प्रथम छयासठ सागर तक भ्रमण करके और सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त हुए बिना मिथ्यात्वका क्षय करके पहले छयासठ सागरसे अन्तर्मुहूर्त उतरकर दो समय कालकी स्थितिवाले मिथ्यात्वके एक गोपुच्छाको धारण करके स्थित हुआ अन्य एक जीव समान है। अब अन्य एक जीव लो जिसने एक गोपुच्छ विशेषसे तथा एक समयमें अपकर्षण और परप्रकृति संक्रमणके द्वारा विनाशको प्राप्त होनेवाले द्रव्यसे कम नारकीके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट प्रकृति गोपुच्छको किया है। फिर एक समय कम पूर्वोक्त काल तक परिभ्रमण करके मिथ्यात्वका क्षय किया। वह जब दो समय कालकी स्थितिवाले मिथ्यात्वके एक निषेकको

धरेदूण ट्ठिदो सरिसो। एवं समयूणादिकमेण ओदारेदव्वं जाव अंतोमुहुत्तूणपढमछावट्ठि त्ति। एवमोदारिदे एगं फद्दयं होदि, अंतराभावादो।

§ १८३. संपहि विदियफद्दए ओदारिज्जमाणे पुव्वं व ओदारेदव्वं। णवरि दोगोवुच्छविसेसेहि एगसमयमोकड्डुण-परपयडिसंकमेहि विणासिज्जमाणदव्वेण य णेरइयचरिमसमए पयददोगोवुच्छाओ ऊणाओ करिय समयूणवेछावट्ठीओ भमिय मिच्छत्तं खविय तदो गोवुच्छाओ तिसमयकालट्ठिदियाओ धरेदूण ट्ठिदो सरिसो। पुणो एदं दव्वं परमाणुत्तरकमेण वड्ढावेदव्वं जावप्पणो ऊणीकददव्वं वड्ढिदं ति। एदेण अण्णेगो दोगोवुच्छविसेसेहि एगसमयमोकड्डुण-परपयडिसंकमेहि विणासिज्जमाणदव्वेण य पयददोगोवुच्छाणमूणमुक्कस्सं करिय दुसमयूणवेछावट्ठीओ भमिय मिच्छत्तं खविय तदोगोवुच्छाओ तिसमयकालट्ठिदियाओ धरेदूण ट्ठिदो सरिसो। एवं संधीओ जाणिय ओदारेदव्वं जाव अंतोमुहुत्तूणवेछावट्ठीओ ओदिण्णाओ त्ति। एवमोदारिदे विदियं फद्दयं होदि; अंतराभावादो।

§ १८४. संपहि तदियफद्दए ओदारिज्जमाणे पुव्वं व ओदारेदव्वं। णवरि तीहि गोवुच्छविसेसेहि एगसमयमोकड्डुण-परपयडिसंकमेहि विणासिज्जमाणदव्वेण य ऊणमुक्कस्सं तिण्हं पयदगोवुच्छाणं कादूणोदारेदव्वं। एवं समयूणावलियमेत्तफद्दयाणि

धारण करके स्थित होता है तब वह पूर्वोक्त जीवके समान होता है। इस प्रकार एक समय कम आदिके क्रमसे अन्तर्मुहूर्त कम पहले छयासठ सागर काल तक उतारते जाना चाहिये। इस प्रकार उतारने पर एक स्पर्धक होता है, क्योंकि बीचमें अन्तर नहीं पाया जाता।

§ १८३. अब दूसरे स्पर्धकके उतारने पर पहलेके समान उतारना चाहिये। इतनी विशेषता है कि नारकीके अन्तिम समयमें प्रकृतिगोपुच्छाओंको दो गोपुच्छविशेषोंसे तथा एक समयमें अपकर्षण और परप्रकृतिरूपसे संक्रमणके द्वारा विनाशको प्राप्त होनेवाले द्रव्यसे कम करे। तथा एक समय कम दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण करके मिथ्यात्वका क्षय करे। ऐसा करते हुए तीन समय कालकी स्थितिवाले मिथ्यात्वके दो निषेकोंको धारण करके स्थित हुआ जीव समान है। फिर इस द्रव्यको एक परमाणु अधिक आदिके क्रमसे अपने कम किये गये द्रव्यके बढ़ने तक बढ़ाता जाय। अब एक अन्य जीव लो जो दो गोपुच्छविशेषोंसे तथा एक समयमें अपकर्षण और परप्रकृति संक्रमणके द्वारा विनाशको प्राप्त होनेवाले द्रव्यसे न्यून प्रकृत दो गोपुच्छाओंको उत्कृष्ट करके दो समय कम दो छयासठ सागर काल तक परिभ्रमण करके और मिथ्यात्वका क्षय करके तीन समय कालकी स्थितिवाले मिथ्यात्वके दो गोपुच्छाओंको धारण करके स्थित है। वह पहले बढ़ाकर स्थित हुये जीवके समान है। इस प्रकार सन्धियोंको जानकर अन्तर्मुहूर्त कम दो छयासठ सागर काल उतरने तक उतारते जाना चाहिये। इस प्रकार उतारने पर दूसरा स्पर्धक होता है, क्योंकि बीचमें अन्तरका अभाव है।

§ १८४ अब तीसरे स्पर्धकके उतारने पर पहलेके समान उतारते जाना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि तीन गोपुच्छविशेषोंसे तथा एक समयमें अपकर्षण और परप्रकृति संक्रमणके द्वारा विनाशको प्राप्त होनेवाले द्रव्यसे न्यून तीन प्रकृति गोपुच्छाओंको उत्कृष्ट करके उतारना चाहिये। इस प्रकार एक समय कम आवलिप्रमाण स्पर्धकोंका आश्रय लेकर अलग अलग

अस्सिदूण पुध पुध कालपरिहाणीए ट्ठाणपरूवणा कायव्वा जाव समयूणावलियमेत्तफद्दयाणि सगसगुक्कस्सत्तं पत्ताणि त्ति ।

§ १८५. तत्थ सव्वपच्छिमफद्दयस्स ओयारणकमो वुच्चदे । तं जहा—गुणिद-कम्मंसियलक्खणेणागंतूण वेछावट्ठीओ भमिय मिच्छत्तं खविय समयूणावलियमेत्त-गुणसेढिगोवुच्छाओ धरिय ट्ठिदेण अण्णेगो समयूणावलियमेत्तगोवुच्छविसेसेहि एगसमयमोकड्डण-पयडिसंकमेहि विणासिज्जमाणदव्वेण य ऊणमुक्कस्सं समयूणावलिय-मेत्तगोवुच्छाणं करिय आगंतूण समयूणवेछावट्ठीओ भमिय मिच्छत्तं खविय समऊणावलियमेत्तगुणसेढिगोवुच्छाओ धरेदूण ट्ठिदो सरिसो । संपहि इमं घेत्तूण परमाणुत्तरकमेण वड्ढावेदव्वं जावप्पणो ऊणीकदं वड्ढिदं ति । एवं णाणाजीवे अस्सिदूण संधीओ जाणिय ओदारेदव्वं जाव अंतोमुहुत्तूणवेछावट्ठिमोदिण्णो त्ति ।

§ १८६. पुणो एदेण णेरइएसु मिच्छत्तदव्वमुक्कस्सं करिय आगंतूण तिरिक्खेसुव-वज्जिय तत्थ अंतोमुहुत्तं गमिय मणुस्सेसुववज्जिय जोणिणिक्कमणजम्मणेण अंतो-मुहुत्तब्भहियअट्ठवस्साणमुवरि मिच्छत्तं खविय समयूणावलियमेत्तगुणसेढिगोवुच्छाओ धरेदूण ट्ठिदेण मिच्छत्तमुक्कस्सं करिय वेछावट्ठीओ भमिय दंसणमोहक्खवणमाढविय

कालकी हानि द्वारा एक समय कम आवलिप्रमाण स्पर्धकोंके अपने अपने उत्कृष्टपनेको प्राप्त होने तक स्थानोंका कथन करना चाहिये ।

§ १८५ अब सबसे अन्तिम स्पर्धकके उतारनेका क्रम कहते हैं जो इस प्रकार है—एक जीव ऐसा है जो गुणितकर्मांशकी विधिसे आकर दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण करके और मिथ्यात्वका क्षय करके एक समय कम आवलिप्रमाण गुणश्रेणि गोपुच्छाओंको धारण करके स्थित है । तथा एक अन्य जीव ऐसा है जो एक समय कम आवलिप्रमाण गोपुच्छाविशेषोंसे तथा एक समयमें अपकर्षण और परप्रकृति संक्रमणके द्वारा विनाशको प्राप्त होनेवाले द्रव्यसे न्यून एक समय कम आवलिप्रमाण गोपुच्छाओंको उत्कृष्ट करके आया है और एक समय कम दो छयासठ सागर तक परिभ्रमण करके तथा मिथ्यात्वका क्षय करके एक समय कम आवलिप्रमाण गुणश्रेणिगोपुच्छाओंको धारण करके स्थित है । इस प्रकार स्थित हुआ यह जीव पिछले जीवके समान है । अब इसे लेकर एक एक परमाणुके उत्तरोत्तर अधिक के क्रमसे अपने कम किये हुए द्रव्यके बढ़ने तक बढ़ाते जाना चाहिये । इस प्रकार नाना जीवों का आश्रय लेकर और सन्धियोंको जानकर अन्तर्मुहूर्त कम दो छयासठ सागर उतरने तक उतारते जाना चाहिये ।

§ १८६ फिर इस जीवने नारकियोंमें मिथ्यात्वके द्रव्यको उत्कृष्ट किया और वहांसे आकर तिर्यञ्चोंमें उत्पन्न हुआ । और वहाँ अन्तर्मुहूर्त बिताकर मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । वहाँ योनिसे बाहर पड़नेरूप जन्मसे लेकर आठ वर्ष और अन्तर्मुहूर्त होने पर मिथ्यात्वका क्षय करके एक समयकम आवलिप्रमाण गुणश्रेणिगोपुच्छाओंको धारण करके स्थित हुआ । इस प्रकार स्थित हुए इस जीवके साथ मिथ्यात्वके द्रव्यको उत्कृष्ट करके दो छयासठ सागर तक भ्रमण करके और दर्शनमोहनीयके क्षयका आरम्भ करके मिथ्यात्वकी अन्तिम फालिको

मिच्छत्तचरिमफालिं धरिय ट्ठिददव्वं सरिसं ण होदि, असंखेज्जगुणत्तादो। एदेण अण्णेगो णेरइयचरिमसमयम्मि एगगोवुच्छाए एगसमयमोकड्डण-परपयडिसंकमेहि विणासिज्जमाणदव्वेण य ऊणमुक्कस्सदव्वं करिय आगंतूण समयणवेछावट्टीओ भमिय मिच्छत्तं खविय तचारिमफालिं धरिय ट्ठिदो सरिसो। संपहि इमेण ऊणीकददव्वं वड्ढावेदव्वं। एवं वड्ढिदूण ट्ठिदेण अण्णेगो एगगोवुच्छाए एगसमयमोकड्डण-परपयडिसंकमेहि विणासिज्जमाणदव्वेण य ऊणं मिच्छत्तमुक्कस्सं करिय दुसमयूणवेछावट्ठीओ भमिय मिच्छत्तचरिमफालिं धरिय ट्ठिदो सरिसो। संपहि इमेण ऊणीकददव्वं परमाणुत्तरकमेण वड्ढावेदव्वं। एदेण अण्णेगो एगगोवुच्छाए एगसमयमोकड्डण-परपयडिसंकमेहि विणासिज्जमाणदव्वेण य ऊणमुक्कस्सं करिय तिसमयूणवेछावट्ठिओ भमिय चरिमफालिं धरिय ट्ठिदो सरिसो। एवं संधीओ जाणिय ओदारेदव्वं जाव अंतोमुहुत्तूणवेछावट्ठीओ ओदिण्णाओ त्ति। संपहि गुणिदकम्मंसियलक्खणेण मिच्छत्तमुक्कस्सं करिय तिरिक्खेसुववज्जिय तत्तो मणुस्सेसुववज्जिय जोणिणिक्कमणजम्मणेण अंतोमुहुत्तब्भहियअट्ठवस्साणि गमिय मिच्छत्तचरिमफालिं धरिय ट्ठिदम्मि चरिमफालिदव्वमुक्कस्सं होदि त्ति भावत्थो। संपहि गुणिदकम्मंसियलक्खणेणागदणेरइयचरिमसमय-

---

धारण करके स्थित हुए जीवका द्रव्य समान नहीं है, क्योंकि यह उससे असंख्यातगुणा है। हाँ इसके साथ एक अन्य जीव समान है जो नारकियोंके अन्तिम समयमें एक गोपुच्छासे तथा एक समयमें अपकर्षण और परप्रकृतिसंक्रमणके द्वारा विनाशको प्राप्त होनेवाले द्रव्यसे न्यून द्रव्यको उत्कृष्ट करके और नरकसे आकर एक समय कम दो छ्यासठ सागर काल तक भ्रमण करके तथा मिथ्यात्वका क्षय करते हुए उसकी अन्तिम फालिको धारण करके स्थित है। अब इसके द्वारा कम किया हुआ द्रव्य बढ़ाना चाहिए। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए इस जीवके साथ एक अन्य जीव समान है जिसने एक गोपुच्छासे तथा एक समयमें अपकर्षण और परप्रकृतिसंक्रमणके द्वारा विनाशको प्राप्त होनेवाले द्रव्यसे कम मिथ्यात्वका द्रव्य उत्कृष्ट किया है। अनन्तर जो दो समयकम दो छ्यासठ सागर काल तक भ्रमण करके और मिथ्यात्वका क्षय करते हुए मिथ्यात्वकी अन्तिम फालिको धारण करके स्थित है। अब इस जीवके द्वारा कम किये हुए द्रव्यको उत्तरोत्तर एक एक परमाणुके क्रमसे बढ़ाना चाहिए। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके साथ एक अन्य जीव समान है जिसने एक गोपुच्छासे तथा एक समयमें अपकर्षण और परप्रकृतिसंक्रमणके द्वारा विनाशको प्राप्त होनेवाले द्रव्यसे कम मिथ्यात्वका द्रव्य उत्कृष्ट किया है और तीन समय कम दो छ्यासठ सागर काल तक भ्रमण करके जो अन्तिम फालिको धारण करके स्थित है। इस प्रकार सन्धियोंको जानकर अन्तर्मुहूर्त कम दो छ्यासठ सागर काल उतरने तक उतारते जाना चाहिए। अब गुणितकर्मांशकी विधिसे आकर मिथ्यात्वके द्रव्यको उत्कृष्ट करके तिर्यञ्चोंमें उत्पन्न होकर और वहाँसे मनुष्योंमें उत्पन्न होकर योनिसे बाहर पड़नेरूप जन्मसे लेकर अन्तर्मुहूर्त अधिक आठ वर्ष बिताकर मिथ्यात्वकी अन्तिम फालिको धारण करके स्थित हुए जीवके अन्तिम फालिका द्रव्य उत्कृष्ट होता है यह इसका भावार्थ है। अब गुणितकर्मांशविधिसे आकर जो नारकी हुआ है, उसके अन्तिम समयका द्रव्य इस

दव्वमेदेण[1] सरिसमूणमहियं पि अत्थि। तत्थ सरिसं घेत्तूण परमाणुत्तरकमेण दोहि वड्डीहि वड्डावेदव्वं जाव मिच्छत्तमुक्कस्सदव्वं पत्तं ति। एवं कदे आवलियमेत्तफद्दयाणि अस्सिदूण मिच्छत्तस्स विदियपयारेण द्वाणपरूवणा कदा होदि।

§ १८७. संपहि खविदकम्मंसियस्स संतकम्ममस्सिदूण द्वाणपरूवणं कस्सामो। तं जहा—समयूणावलियमेत्तफद्दएसु समयूणावलियमेत्ताणि चेव सांतरद्वाणाणि उप्पज्जंति, तत्थ खविदकम्मंसियसंतं पडि णिरंतरठाणुप्पत्तीए[2] अभावादो। संपहि खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण सम्मत्तं पडिवज्जिय वेछावद्वीओ भमिय मिच्छत्तचरिमफालिं धरिय द्विदखवगो परमाणुत्तरकमेण दोहि वड्डीहि वड्डावेदव्वो जाव दुचरिमसमयम्मि परसरूवेण गददुचरिमफालिदव्वं पुणो त्थिउक्कस्संतरेण संकमेण सम्मत्तसरूवेण गदगुणसेढिगोवुच्छदव्वं च वड्डिदं ति। पुणो एदेण अण्णेगो जहण्णसामित्तविहाणेणागंतूण वेछावट्ठीओ भमिय मिच्छत्तदुचरिमफालिं धरिय ट्ठिदो सरिसो। संपहि इमं घेत्तूण परमाणुत्तरकमेण वड्डावेदव्वो जाव तिचरिमसमयम्मि गदतिचरिमफालिदव्वं तत्थेव त्थिवुक्कसंकमेण गदगुणसेढिगोवुच्छदव्वं च वड्डिदं ति। एवं वड्डिदूण ट्ठिदेण जहण्णसामित्तविहाणेणागंतूण वेछावट्ठीओ भमिय मिच्छत्ततिचरिमफालिं धरिय ट्ठिदो सरिसो। एवमोदारेदव्वं जाव चरिमखंडयपढमफालि त्ति, विसेसाभावादो।

द्रव्यके समान भी होता है, न्यून भी होता है और अधिक भी होता है। उसमेंसे समान द्रव्यको ग्रहण कर एक एक परमाणु अधिकके क्रमसे मिथ्यात्वके उत्कृष्ट द्रव्यके प्राप्त होने तक दो वृद्धियोंके द्वारा उसकी वृद्धि करनी चाहिये। ऐसा करने पर एक आवलिप्रमाण स्पर्धकोंका आश्रय लेकर मिथ्यात्वके स्थानोंकी प्ररूपणा दूसरे प्रकारसे की गई है।

§ १८७. अब क्षपितकर्मांशके सत्कर्मका आश्रय लेकर स्थानोंका कथन करते हैं। वह इस प्रकार है—एक समय कम आवलिप्रमाण स्पर्धकोंके एक समय कम आवलिप्रमाण ही सान्तर स्थान उत्पन्न होते हैं, क्योंकि उनमें क्षपितकर्मांशके सत्त्वकी अपेक्षा निरन्तर स्थानोंकी उत्पत्ति नहीं होती। अब एक ऐसा क्षपक जीव लो जो क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर सम्यक्त्वको प्राप्त करके, दो छ्यासठ सागर काल तक भ्रमण करके मिथ्यात्वकी अन्तिम फालिको धारण करके स्थित है। फिर इसके दो वृद्धियोंके द्वारा उत्तरोत्तर एक एक परमाणुके क्रमसे द्रव्यको तब तक बढ़ाओ जब तक इसके द्विचरम समयमें प्राप्त हुआ द्विचरिम फालिका द्रव्य तथा स्तिवुकसंक्रमणके द्वारा सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ गुणश्रेणि और गोपुच्छाका द्रव्य वृद्धिको प्राप्त हो जाय। फिर इस जीवके साथ एक अन्य जीव समान है जो जघन्य स्वामित्वकी विधिसे आकर दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण करके मिथ्यात्वकी द्विचरम फालिको धारण करके स्थित है। अब इस जीवको लेकर उत्तरोत्तर एक एक परमाणुके क्रमसे तब तक बढ़ाओ जब तक इसके द्विचरम समयमें प्राप्त हुआ त्रिचरम फालिका द्रव्य तथा वहीं पर स्तिवुकसंक्रमणके द्वारा अन्य प्रकृतिको प्राप्त हुआ गुणश्रेणि और गोपुच्छाका द्रव्य वृद्धिको प्राप्त हो जाय। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए इस जीवके साथ एक अन्य जीव समान है जो जघन्य स्वामित्वकी विधिसे आकर, दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण करके

---

१. आ०प्रतौ 'दव्वमेत्तेण' इति पाठः। २. आ०प्रतौ 'णिरंतरं ठाणुप्पत्तीए' इति पाठः।

§ १८८. संपहि दुचरिमखंडयचरिमफालिप्पहुडि हेट्ठा ओदारिज्जमाणे फालिदव्वं ण वड्ढावेदव्वं, दुचरिमादिसव्वट्ठिदिखंडयफालीणं परसरूवेण गमणाभावादो। तेण चरिमखंडयस्सुवरि वड्ढाविज्जमाणे दुचरिमखंडयचरिमसमयम्मि गुणसंकमेण गददव्वं तत्थ त्थिवुक्कसंकमेण गदगुणसेढिगोवुच्छदव्वं च वड्ढावेदव्वं। एदेण जहण्णसामित्तविहाणेणागंतूण बेछावट्ठीओ भमिय चरिमट्ठिदिखंडएण सह दुचरिमखंडयचरिमफालिं धरिय ट्ठिदो सरिसो। एवं गुणसंकमभागहारेण गददव्वं त्थिवुक्कसंकमेण गदगुणसेढिगोवुच्छं[1] च वड्ढाविय ओदारेदव्वं जाव आवलियअणियट्टि त्ति। संपहि एत्तो प्पहुडि हेट्ठा गुणसंकमेण गददव्वं त्थिउक्कसंकमेण गदअपुव्वगुणसेढिगोवुच्छं च वड्ढाविय ओदारेदव्वं जाव आवलियअपुव्वकरणे त्ति। एत्तो प्पहुडि हेट्ठा ओदारिज्जमाणे गुणसंकमेण गददव्वं संजमगुणसेढिगोवुच्छदव्वं च[2] वड्ढाविय ओदारेदव्वं जाव चरिमसमयअधापमत्तकरणे त्ति। एत्तो हेट्ठा ओदारिज्जमाणे गुणसंकमेण गददव्वं णत्थि त्ति विज्झादसंकमेण गददव्वं त्थिवुक्कगोवुच्छदव्वं च वड्ढाविय ओदारेदव्वं जाव विदियछावट्ठिपढमसमयादो हेट्ठा सम्मामिच्छादिट्ठिचरिमसमओ त्ति। णवरि कत्थ

मिथ्यात्वकी त्रिचरम फालिको धारण करके स्थित है। इस प्रकार मिथ्यात्वके अन्तिम काण्डककी प्रथम फालिके प्राप्त होने तक उतारते जाना चाहिए, क्योंकि इससे उस कथनमें कोई विशेषता नहीं है।

§ १८८. अब द्विचरमकाण्डककी अन्तिम फालिसे लेकर नीचे उतारने पर फालिके द्रव्यको नहीं बढ़ाना चाहिये, क्योंकि द्विचरमसे लेकर सब स्थितिकाण्डकोंकी फालियोंका पररूपसे गमन नहीं पाया जाता है, इसलिये अन्तिम काण्डकके ऊपर बढ़ाने पर द्विचरमकाण्डकके अन्तिम समयमें गुणसंक्रमणके द्वारा परप्रकृतिको प्राप्त हुआ द्रव्य तथा वहीं पर स्तिवुकसंक्रमणके द्वारा परप्रकृतिको प्राप्त हुआ गुणश्रेणि और गोपुच्छाका द्रव्य बढ़ाना चाहिये। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए इस जीवके साथ एक अन्य जीव समान है जो जघन्य स्वामित्वकी विधिसे आकर, दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण करके अन्तिम स्थितिकाण्डकके साथ द्विचरम स्थितिकाण्डककी चरम फालिको धारण करके स्थित है। इस प्रकार गुणसंक्रमणभागहारके द्वारा परप्रकृतिको प्राप्त हुआ द्रव्य और स्तिवुक संक्रमणके द्वारा परप्रकृतिको प्राप्त हुआ गुणश्रेणि और गोपुच्छाका द्रव्य बढ़ाकर अनिवृत्तिकरणकी एक आवलि प्राप्त होने तक उतारना चाहिए। अब यहाँसे लेकर नीचे गुणसंक्रमणके द्वारा परप्रकृतिको प्राप्त हुआ द्रव्य तथा स्तिवुकसंक्रमणके द्वारा परप्रकृतिको प्राप्त हुआ अपूर्वकरणकी गुणश्रेणि और गोपुच्छाका द्रव्य बढ़ा कर अपूर्वकरणकी एक आवलि प्राप्त होने तक उतारना चाहिये। अब यहाँसे लेकर नीचे उतारने पर गुणसंक्रमके द्वारा परप्रकृतिको प्राप्त हुआ द्रव्य तथा संयमकी गुणश्रेणि गोपुच्छके द्रव्यको बढ़ाकर अधःप्रवृत्तकरणका अन्तिम समय प्राप्त होने तक उतारना चाहिये। इससे नीचे उतारने पर गुणसंक्रमसे परप्रकृतिको प्राप्त हुआ द्रव्य नहीं है इसलिये विध्यातसंक्रमके द्वारा परप्रकृतिको प्राप्त हुआ द्रव्य और स्तिवुकसंक्रमणके द्वारा परप्रकृतिको प्राप्त हुआ गोपुच्छाका द्रव्य बढ़ाकर दूसरे छयासठ सागरके प्रथम समयसे नीचे सम्यग्मिथ्यादृष्टिके अन्तिम समय तक उतारना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि कहीं पर संयतकी गुणश्रेणि गोपुच्छा,

1. ता०प्रतौ '-संकमेणागदगुणसेढिगोवुच्छं' इति पाठः। 2. ता०प्रतौ '-गोवुच्छं च' इति पाठः।

वि संजदगुणसेढिगोवुच्छा, कत्थ वि संजदासंजदगुणसेढिगोवुच्छा, कत्थ वि सत्थाणसम्माइट्ठिगोवुच्छा त्थिवुक्केण संकमिदि त्ति एसो विसेसो जाणिदव्वो। एदम्हादो हेट्ठा ओदारिज्जमाणे सम्मामिच्छादिट्ठिम्मि त्थिवुक्कसंकमेण गदगोवुच्छा चेव वड्ढावेदव्वा, तत्थ दंसणतियस्स संकमाभावादो। एवं वड्डिदूण ट्ठिदेण जहण्ण-सामित्तविहाणेणागंतूण पढमछावट्ठिं भमिय सम्मामिच्छत्तं पडिवज्जिय तस्स दुचरिमसमयट्ठिदो सरिसो। एवमेगेगगोवुच्छं वड्ढाविय ओदारेदव्वं जाव पढम-छावट्ठिचरिमसमयसम्मादिट्ठि त्ति। पुणो एत्तो हेट्ठा परमाणुत्तरकमेण वड्ढाविज्जमाणे णवरि हदसंकमेण त्थिवुक्कसंकमेण च गददव्वं वड्ढावेदव्वं। एवं वड्डिदूण ट्ठिदेण अण्णेगो जहण्णसामित्तविहाणेणागंतूण पढमछावट्ठिसम्मत्तकालदुचरिमसमयट्ठिदो सरिसो। एवमोदारेदव्वं जाव आवलियूणपढमछावट्ठि त्ति। पुणो तत्थ ट्ठविय वड्ढाविज्जमाणे विज्झादसंकमेण गददव्वं चेव वड्ढावेदव्वं, त्थिवुक्कसंकमेण गदमिच्छत्त-गोवुच्छाए अभावादो। एवमोदारेयव्वं जाव उवसमसम्मादिट्ठिचरिमसमओ त्ति। तत्थ ट्ठविय पुणो वि एगसमयविज्झादसंकमगददव्वमेत्तं चेव वड्ढावेयव्वं। एवं वड्ढिदूण ट्ठिदेण अण्णेगो जहण्णसामित्तविहाणेणागंतूण उवसमसम्मत्तं पडिवज्जिय तस्स दुचरिमसमयट्ठिदो सरिसो। एवमंतोमुहुत्तकालमोदारेदव्वं जाव गुणसंकमचरिमसमओ

कहीं पर संयतासंयतकी गुणश्रेणिगोपुच्छा और कहीं पर स्वस्थान सम्यग्दृष्टिकी गोपुच्छा स्तिवुकसंक्रमणके द्वारा परप्रकृतिरूपसे संक्रान्त होती है इतना यहाँ विशेष जानना चाहिए। अब इससे नीचे उतारने पर सम्यग्मिथ्यादृष्टिके स्तिवुकसंक्रमणके द्वारा परप्रकृतिको प्राप्त हुई गोपुच्छा ही बढ़ाना चाहिए, क्योंकि वहां पर दर्शनमोहनीयकी तीन प्रकृतियोंका संक्रमण नहीं होता। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके साथ जघन्य स्वामित्व विधिसे आकर प्रथम छ्यासठ सागर काल तक भ्रमण करके और सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त होकर उसके द्विचरम समयमें स्थित हुआ जीव समान है। इस प्रकार एक एक गोपुच्छको बढ़ाकर प्रथम छ्यासठ सागरके अन्तिम समयवर्ती सम्यग्दृष्टिके प्राप्त होने तक उतारते जाना चाहिये। फिर इससे नीचे उत्तरोत्तर एक एक परमाणुके क्रमसे बढ़ाने पर हतसंक्रमणके द्वारा और स्तिवुक संक्रमणके द्वारा पर प्रकृतिको प्राप्त हुआ द्रव्य बढ़ाना चाहिये। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके साथ जघन्य स्वामित्व विधिसे आकर प्रथम छ्यासठ सागरसम्बन्धी सम्यक्त्वकालके द्विचरम समयमें स्थित हुआ जीव समान है। इस प्रकार एक आवलि कम प्रथम छ्यासठ सागर काल तक उतारना चाहिये। फिर वहां ठहराकर बढ़ाने पर विध्यातसंक्रमणके द्वारा परप्रकृतिको प्राप्त हुआ द्रव्य ही बढ़ाना चाहिये, क्योंकि वहां पर स्तिवुक संक्रमणके द्वारा परप्रकृतिको प्राप्त हुए मिथ्यात्वके गोपुच्छाका अभाव है। इस प्रकार उपशमसम्यग्दृष्टिके अन्तिम समयके प्राप्त होने तक उतरना चाहिये। अब वहां ठहराकर फिर भी एक समयमें विध्यातसंक्रमणके द्वारा परप्रकृतिको प्राप्त हुआ द्रव्य मात्र बढ़ाना चाहिये। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके साथ जघन्य स्वामित्व विधिसे आकर उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त होकर उसके द्विचरम समयमें स्थित हुआ जीव समान है। इस प्रकार गुणसंक्रमका अन्तिम समय प्राप्त होने तक अन्तर्मुहूर्त काल तक उतारना चाहिये। फिर वहां पर ठहराकर बढ़ाने पर

त्ति। पुणो तत्थ ठविय वड्ढाविज्जमाणे गुणसंकमेण गददव्वमेत्तं वड्ढावेदव्वं। एवं वड्ढिदूण ट्ठिदेण अण्णेण गुणसंकमकालदुचरिमसमयट्ठिदो सरिसो। एवं गुणसंकमेण गददव्वं वड्ढाविय ओदारेदव्वं जाव पढमसमयउवसमसम्मादिट्ठि त्ति। एत्थ ट्ठविय वड्ढाविज्जमाणे गुणसंकमेण गददव्वमपुव्व-अणियट्टिगुणसेढिगोवुच्छाओ च वड्ढावेदव्वाओ। एवं वड्ढिदूण ट्ठिदेण अण्णेगो खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण मिच्छादिट्ठिचरिमसमए ट्ठिदो सरिसो। पुणो चरिमसमयमिच्छादिट्ठितक्कालयपच्चग्गबंधेणूणदुचरिमगुणसेढिमेत्तं[1] वड्ढावेदव्वो। एदेण जहण्णसामित्तविहाणेणागंतूण मिच्छादिट्ठी दुचरिमसमयट्ठिदो सरिसो। एवमोदारेदव्वं जाव आवलियअपुव्वकरणमिच्छादिट्ठि त्ति। एत्तो हेट्ठा ओदारेदुं ण सक्कदे, उदए गलमाणएइंदियगोवुच्छादो संपहि वज्झमाणपंचिंदियसमयपबद्धस्स असंखेज्जगुणत्तादो। संपहि इमेण सरिसं णेरइयचरिमसमयदव्वं घेत्तूण चत्तारि पुरिसे आसेज्ज परमाणुत्तरकमेण पंचवड्ढीहि वड्ढावेयव्वं जाव ओघुक्कस्सदव्वं पत्तं ति। एवं खविदकम्मंसियमस्सिदूण संतकम्मट्ठाणपरूवणा कदा।

§ १८९. संपहि गुणिदकम्मंसियमासेज्ज संतकम्मट्ठाणपरूवणं कस्सामो। तं जहा—समयूणावलियमेत्तफद्दयाणं ट्ठाणाणं पुव्वं व परूवणा कायव्वा, विसेसाभावादो। उक्कस्सचरिमफालिदव्वं धरेदूण ट्ठिदेण अण्णेगो णेरइयचरिमसमए त्थिउक्कसंकमेण

गुणसंक्रमणके द्वारा परप्रकृतिको प्राप्त हुआ द्रव्य बढ़ाना चाहिये। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके साथ गुणसंक्रमणके द्विचरम समयमें स्थित हुआ अन्य एक जीव समान है। इस प्रकार गुणसंक्रमणके द्वारा परप्रकृतिको प्राप्त हुआ द्रव्य बढ़ाकर उपशमसम्यग्दृष्टिका प्रथम समय प्राप्त होने तक उतारना चाहिये। फिर यहाँ पर स्थापित करके बढ़ानेपर गुणसंक्रमके द्वारा परप्रकृतिको प्राप्त हुआ द्रव्य तथा अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणकी गुणश्रेणि गोपुच्छाओंका द्रव्य बढ़ाना चाहिए। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके साथ क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर मिथ्यादृष्टिके अन्तिम समयमें स्थित हुआ अन्य एक जीव समान है। फिर अन्तिम समय मिथ्यादृष्टिके उसी कालमें नवीन बन्धसे न्यून द्विचरम गुणश्रेणिप्रमाण द्रव्यको बढ़ाना चाहिये। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए इस जीवके साथ जघन्य स्वामित्वकी विधिसे आकर द्विचरम समयमें स्थित हुआ मिथ्यादृष्टि जीव समान है। इस प्रकार अपूर्वकरण मिथ्यादृष्टिके एक आवलि काल तक उतारना चाहिये। अब इससे नीचे उतारना शक्य नहीं है, क्योंकि उदयमें एकेन्द्रियके गलनेवाले गोपुच्छसे इस समय पंचेन्द्रियके बंधनेवाला समयप्रबद्ध असंख्यातगुणा है। अब इसके समान नारकीके अन्तिम समयवर्ती द्रव्यको लेकर चार पुरुषोंके आश्रयसे उत्तरोत्तर एक एक परमाणु अधिकके क्रमसे पाँच वृद्धियोंके द्वारा ओघसे उत्कृष्ट द्रव्यके प्राप्त होने तक बढ़ाते जाना चाहिये। इस प्रकार क्षपितकर्मांशकी अपेक्षा सत्कर्मस्थानोंका कथन किया।

§ १८९ अब गुणितकर्मांशकी अपेक्षा सत्कर्मस्थानोंका कथन करते हैं जो इस प्रकार है—एक समय कम आवलिप्रमाण स्पर्धकोंके स्थानोंका कथन पहलेके समान कर लेना चाहिए, क्योंकि उनके कथनसे इनके कथनमें कोई विशेषता नहीं है। अब एक ऐसा जीव है जो

---

१. ता०प्रतौ '-दुचरिमसेढिमेत्तं' इति पाठः।

गदद्व्वेण चरिमसमए गुणसंकमेण गदद्व्वेण य ऊणमुक्कस्सदव्वं करिय वे छावट्ठीओ भमिय दुचरिमफालिं धरिय ट्ठिदो सरिसो। संपहि एसो अप्पणो ऊणीकददव्वमेत्तं परमाणुत्तरकमेण दोहि वड्ढीहि वड्ढावेदव्वो। एवं वड्ढिदेण अवरेगो[1] चरिमसमयणेरइओ गुणसंकमेण त्थिउक्कसंकमेण य गदद्व्वेणूणमुक्कस्सं कादूण वे छावट्ठीओ भमिय तिचरिमफालिं धरिय ट्ठिदो सरिसो। एसो वि अप्पणो ऊणीकददव्वमेत्ताए[2] वड्ढावेदव्वो। एवं णेरइयचरिमसमयम्मि इच्छिददव्वमूणं करिय आगदं संपधियऊणीकददव्वं वड्ढाविय अव्वामोहेण ओदारेदव्वं जाव चरिमसमयणेरइयओघुक्कस्सदव्वं पत्तं ति। पुणो एत्थ पुणरुत्तट्ठाणाणि अवणिय अपुणरुत्तट्ठाणाणं गहणं कायव्वं।

एवं मिच्छत्तस्स सामित्तपरूवणा कदा।

❀ सम्मामिच्छत्तस्स जहण्णयं पदेससंतकम्मं कस्स।

§ १९०. सुगमं।

❀ तधा चेव सुहुमणिगोदेसु कम्मट्ठिदिमच्छिदूण तदो तसेसु संजमासंजमं संजमं सम्मत्तं च बहुसो लद्धूण चत्तारि वारे कसाए उवसामेदूण वेछावट्ठिसागरोवमाणि सम्मत्तमणुपालेदूण मिच्छत्तं गदो। दीहाए

अन्तिम फालिके उत्कृष्ट द्रव्यको धारण करके स्थित है सो इसके साथ एक अन्य जीव समान है जो नारकियोंके अन्तिम समयमें स्तिवुक संक्रमणके द्वारा परप्रकृतिको प्राप्त हुए द्रव्यसे तथा अन्तिम समयमें गुणसंक्रमणके द्वारा परप्रकृतिको प्राप्त हुए द्रव्यसे कम उत्कृष्ट द्रव्यको करके दो छयासठ सागर काल तक परिभ्रमण करके द्विचरम फालिको धारण करके स्थित है। अब इसने जितना द्रव्य कम किया हो उतने द्रव्यको उत्तरोत्तर एक एक परमाणु अधिकके क्रमसे दो वृद्धियोंके द्वारा बढ़ावे। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए इस जीवके साथ एक अन्य जीव समान है जो नारकियोंके अन्तिम समयमें गुणसंक्रम और स्तिवुक संक्रमणके द्वारा परप्रकृतिको प्राप्त हुए द्रव्यसे कम उत्कृष्ट द्रव्यको करके दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण करके त्रिचरिम फालिको धारण करके स्थित है। इसने भी अपना जितना द्रव्य कम किया हो उतनेको यह बढ़ा लेवे। इस प्रकार नारकीके अन्तिम समयमें इच्छित द्रव्यको कम करके आये हुए और इस समय कम किये हुए द्रव्यको बढ़ाकर व्यामोहसे रहित होकर नारकीके अन्तिम समयमें ओघ उत्कृष्ट द्रव्यके प्राप्त होने तक उतारते जाना चाहिये। फिर यहां पुनरुक्त स्थानोंको छोड़कर अपुनरुक्त स्थानोंका ग्रहण करना चाहिये।

इस प्रकार मिथ्यात्वके स्वामित्वका कथन किया।

❀ सम्यग्मिथ्यात्वका जघन्य प्रदेशसत्कर्म किसके होता है।

§ १९०. यह सूत्र सुगम है।

❀ जो उसी प्रकार कर्मस्थितिप्रमाण काल तक सूक्ष्म निगोदियोंमें रहा। फिर त्रसोंमें संयमासंयम, संयम और सम्यक्त्वको अनेक बार प्राप्त करके चारबार कषायोंका उपशम कर और दो छ्यासठ सागर काल तक सम्यक्त्वका पालन कर

१. ता०प्रतौ 'वड्ढिदे णवरि अवरेगो' इति पाठः। २. आ० प्रतौ '–दव्वमेत्तं' इति पाठः।

उव्वेल्लणद्धाए उव्वेल्लिदं तस्स जाधे सव्वं उव्वेल्लिदं उदयावलिया गलिदा जाधे दुसमयकालट्ठिदियं एक्कम्मि ट्ठिदिविसेसे सेसं ताधे सम्मामिच्छत्तस्स जहण्णं पदेससंतकम्मं।

§ १९१. 'तथा चेव०' जहामिच्छत्तजहण्णदव्वे कीरमाणे सुहुमणिगोदेसु खविदकम्मंसियलक्खणेण कम्मट्ठिदिमच्छिदो तथा एसो वि तत्थच्छिदूण 'तदो तसेसु' तसेसुव्वज्जिय बहुसो संजमासंजम-संजम-सम्मत्ताणि पडिवण्णो। पलिदो० असंखे०भागमेत्ताणि त्ति एत्थ मिच्छत्तजहण्णसामित्ते च णिद्देसो किण्ण कदो ? ण, ओघखविदकम्मंसियसंजमासंजम-संजम-सम्मत्तकंडएहिंतो एदेसिं कंडयाणं थोवत्तपदुप्पायणफलत्तादो। तत्तो थोवत्तं कुदो णव्वदे ? पलिदो० असंखे०भागेणब्भहियवेछावट्ठिसागरोवमपरियट्टणण्णहाणुववत्तीदो। मिच्छत्तखविदकम्मंसियस्स सम्मत्त-देसविरइ-संजमवारेहिंतो एत्थतणा थोवा[1] मिच्छत्तं गंतूणुव्वेल्लणकालपरियट्टणण्णहाणुववत्तीदो।

मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ। वहां उद्वेलनाके सबसे उत्कृष्ट काल द्वारा सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना करते हुए जब सबकी उद्वेलना कर ली और उदयावली गल गई किन्तु दो समय कालकी स्थिति एक स्थितिविशेषमें शेष रही तब उसके सम्यग्मिथ्यात्वका जघन्य प्रदेशसत्कर्म होता है।

§ १९१. सूत्रमें आये हुए 'तथा चेव' का भाव यह है कि जिस प्रकार मिथ्यात्वके जघन्य द्रव्यको करते समय यह जीव क्षपितकर्मांशकी विधिके साथ सूक्ष्म निगोदियोंमें कर्मस्थितिप्रमाण कालतक रहा उसी प्रकार यह भी वहां रहा। सूत्रमें आये हुए 'तदो तसेसु' का भाव है कि तदनन्तर त्रसोंमें उत्पन्न होकर वहां बहुत बार संयमासंयम, संयम और सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ।

शंका—यहां और मिथ्यात्वके जघन्य स्वामित्वके कथनके समय यह जीव 'पल्यके असंख्यातवें भाग बार संयमासंयम और सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ' इस प्रकार स्पष्ट निर्देश क्यों नहीं किया ?

समाधान—नहीं, क्योंकि ओघसे क्षपितकर्मांश जितनी बार संयमासंयम, संयम और सम्यक्त्वको प्राप्त होता है उससे इसके संयमासंयम आदिको प्राप्त होने के बार थोड़े हैं, इस बात का कथन करना इसका फल है।

शंका—ओघसे इसके संयमासंयम आदिको प्राप्त करनेके बार थोड़े हैं यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—अन्यथा पल्यके असंख्यातवें भागसे अधिक दो छ्यासठ सागर काल तक इसका परिभ्रमण करना बन नहीं सकता है। इससे जाना जाता है कि यह ओघसे कम बार संयमासंयम आदि को प्राप्त होता है। उसमें भी मिथ्यात्वका जघन्य सत्कर्म प्राप्त करते समय क्षपितकर्मांश जीव जितनी बार सम्यक्त्व, देशविरति और संयमको प्राप्त होता है उससे यह जीव कमबार सम्यक्त्व आदिको प्राप्त होता है, क्योंकि यदि ऐसा न माना जाय तो इसका उद्वेलनकाल तक मिथ्यात्वमें जाकर परिभ्रमण करना नहीं बन सकता है।

---

१. आ०प्रतौ 'एत्थतणथोवा' इति पाठः।

'चत्तारि वारे०' एत्थ कसायउवसामणाओ[1] चत्तारि वि ण विरुद्धाओ, चदुक्खुत्तोवसामिदकसायस्स वि वेछावट्ठिसागरोवमपरिब्भमणे विरोहाभावादो। 'वेछावट्ठी०' एसा वेछावट्ठी पुव्विल्लवेछावट्ठीदो ऊणा। कुदो? मिच्छत्तगमणण्णहाणुववत्तीदो। जदि ऊणा तो वेछावट्ठिणिद्देसो कथं कीरदे? ण, 'समुदाए पउत्ता सद्दा तदवयवेसु वि वट्टंति' त्ति णायावलंबणाए तदविरोहादो। 'दीहाए' उव्वेल्लणद्धा जहण्णिया वि अत्थि त्ति जाणावणदुवारेण तप्पडिसेहविहाणट्ठं दीहाए त्ति णिद्देसो। ण च एसो णिप्फलो, उवरि चडिदूण ट्ठिदसहिणगोवुच्छ[2]ग्गहणट्ठमुवइट्ठस्स णिप्फलत्तविरोहादो। अद्धुव्वेल्लिदे वि उव्वेल्लिदं होइ, पज्जवट्ठियणयावलंबणाए तप्पडिसेहट्ठं 'जाधे सव्वमुव्वेल्लिदं' ति णिद्देसो कदो। पज्जवट्ठियणयावलंबणाए 'उदयावलिया गलिदा' त्ति णिद्दिट्ठं, अण्णहा दुसमऊणाए उदयावलियववएसाणुववत्तीदो। सेससुत्तावयवा सुगमा।

§ १९२. खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण असण्णिपंचिंदिएसु उववज्जिय देवाउअं बंधिय देवेसुप्पज्जिय छप्पज्जत्तीओ समाणिय अंतोमुहुत्ते गदे उक्कस्सअपुव्वकरणपरिणामेहि

सूत्रमें 'चत्तारि वारे' इत्यादि पाठ देनेका यह प्रयोजन है कि यहां अर्थात् सम्यग्मिथ्यात्वका जघन्य सत्कर्म प्राप्त करते समय कषायोंकी चार बार उपशामना करना विरुद्ध नहीं है, क्योंकि जिसने चार बार कषायोंका उपशम किया है उसका भी दो छयासठ सागर काल तक परिभ्रमण माननेमें कोई बाधा नहीं आती। सूत्रमें 'वेछावट्ठो' से जो दो छयासठ सागर काल लिया है सो यह पहलेके दो छयासठ सागर कालसे कम है, क्योंकि ऐसा माने बिना इसका मिथ्यात्वमें जाना नहीं बन सकता।

शंका—यदि कम है तो 'वेछावट्ठी' पदका निर्देश कैसे किया?

समाधान—नहीं, क्योंकि 'समुदायमें प्रवृत्त हुए शब्द उसके अवयवोंमें भी रहते हैं' इस न्यायका अवलम्बन करने पर उस बातके मान लेनेमें कोई विरोध नहीं रहता।

'दीहाए' उद्वेलनाकाल जघन्य भी है इस प्रकारका ज्ञान करानेके अभिप्रायसे उसका निषेध करनेके लिये सूत्रमें 'दीहाए' इस पदका निर्देश किया है। यदि कहा जाय कि तब भी 'दीर्घ' पदका निर्देश करना निष्फल है सो भी बात नहीं है, क्योंकि ऊपर चढ़कर स्थित सूक्ष्म गोपुच्छाके ग्रहण करने के लिये इसका उपदेश दिया है। अर्थात् जितना बड़ा उद्वेलनाकाल होगा अन्तमें उतनी छोटी गोपुच्छा प्राप्त होगी, इसलिये इसे निष्फल माननेमें विरोध आता है। यद्यपि आधी उद्वेलना कर देने पर भी उद्वेलना कर दी ऐसा कहा जाता है, अतः पर्यायार्थिकनयकी अपेक्षा इस कथनका विरोध करनेके लिये 'जब सबकी उद्वेलना की' इस प्रकारका निर्देश किया है। इसी प्रकार 'उदयावलि गल गई' यह निर्देश पर्यायार्थिक नयकी अपेक्षासे किया है। अन्यथा उदयावलिमें दो समय शेष रहे, इस प्रकारका कथन नहीं बन सकता। सूत्रके शेष अवयव सुगम हैं।

§ १९२ जो क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर असंज्ञी पञ्चेन्द्रियोंमें पैदा होकर और देवायुका बन्ध करके देवोंमें उत्पन्न हुआ। फिर छह पर्याप्तियोंको पूरा करके अन्तर्मुहूर्त जाने

---

1. ता०प्रतौ 'कसाओ(य)उवसामणाओ' आ०प्रतौ 'कसोओ उवसामणाओ' इति पाठः। 2. ता०प्रतौ 'ट्ठिदस्स हि(ही)ण गोवुच्छ इति पाठः।'

उवसमसम्मत्तं घेत्तूण तत्थ अपुव्वकरणगुणसेढिणिज्जरमुक्कस्सं काऊण जहण्णगुणसंकम-कालेण सव्वबहुएण गुणसंकमभागहारेण सुट्ठु थोवं मिच्छत्तदव्वं सम्मामिच्छत्तसरूवेण परिणमाविय वेदगसम्मत्तं पडिवज्जिय तप्पाओग्गवेछावट्ठीओ भमिय मिच्छत्तं गंतूण दीहुव्वेल्लणकालेणुव्वेलिय सम्मामिच्छत्तचरिमफालिं मिच्छत्तसरूवेण परिणमाविय एगणिसेगं दुसमयकालं धरेदूण ट्ठिदस्स जहण्णदव्वं होदि त्ति एसो भावत्थो।

§ १९३. संपहि एत्थ उवसंहारो उच्चदे—कम्मट्ठिदिपढमसमयप्पहुडि उक्कस्स-णिल्लेवणकालवेछावट्ठिसागरोवमउक्कस्सुव्वेल्लणकालमेत्तमुवरिं चडिदूण बद्धसमयपबद्धाणं सामित्तचरिमसमए एगो वि परमाणू णत्थि, सगुक्कस्सवड्डिट्ठिदीदो अहियकाल-मवट्ठाणाभावादो। अवसेसकम्मट्ठिदीए बद्धसमयपबद्धाणं कम्मपरमाणू सिया अत्थि,

पर अपूर्वकरणसम्बन्धी उत्कृष्ट परिणामोंके द्वारा उपशम सम्यक्त्वको प्राप्त किया। फिर वहाँ पर अपूर्वकरणकी उत्कृष्ट गुणश्रेणिकी निर्जरा की। गुणसंक्रमके सबसे छोटे काल और उसीके सबसे बड़े भागहार द्वारा मिथ्यात्वके बहुत थोड़े द्रव्यको सम्यग्मिथ्यात्वरूप परिणमाया। फिर वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त करके उसके योग्य दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण करके मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ। फिर वहां उत्कृष्ट उद्वेलन काल द्वारा सम्यग्मिथ्यात्वको उद्वेलना करके जब सम्यग्मिथ्यात्वकी अन्तिम फालिको मिथ्यात्वरूपसे परिणमा कर दो समय कालकी स्थितिवाले एक निषेकको धारण करके स्थित हुआ तब उसके सम्यग्मिथ्यात्वका जघन्य द्रव्य होता है। यह उक्त सूत्रका भावार्थ है।

विशेषार्थ—यहां सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतिके जघन्य द्रव्यका स्वामी कौन है यह बतलाया गया है। यह बतलाते हुए अन्य सब विधि तो क्षपितकर्मांशिककी ही बतलाई गई है। केवल अन्तमें दो छयासठ सागर काल तक सम्यक्त्वके साथ रखकर मिथ्यात्वमें ले जाना चाहिए और वहां मिथ्यात्वमें उद्वेलनाके सबसे बड़े काल तक सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना करानी चाहिए। ऐसा करने पर जब सम्यग्मिथ्यात्वकी दो समय कालवाली एक निषेकस्थिति शेष रहे तब वह जीव सम्यग्मिथ्यात्वके सबसे जघन्य द्रव्यका स्वामी होता है। यहां उद्वेलनाका यह उत्कृष्ट काल प्राप्त करनेके लिए संयमासंयम, संयम और सम्यक्त्वको प्राप्त करनेके बार थोड़े कहने चाहिए। तथा वेदकसम्यक्त्वका दो छयासठ सागर काल भी कुछ न्यून लेना चाहिए। ऐसा करनेसे अन्तमें उद्वेलनाका बड़ा काल प्राप्त हो जाता है। क्षपणसे सम्यग्मिथ्यात्वका जघन्य द्रव्य नहीं प्राप्त होता है, क्योंकि सम्यग्दृष्टिके मिथ्यात्वका द्रव्य सम्यग्मिथ्यात्वमें संक्रान्त होता रहता है पर मिथ्यादृष्टिके यह क्रिया न होकर उद्वेलना संक्रमण होने लगता है, अतः मिथ्यादृष्टिके ही सम्यग्मिथ्यात्वका जघन्य द्रव्य प्राप्त किया जा सकता है। यही कारण है कि यहां सबके अन्तमें सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना कराते हुए एक निषेकके शेष रहने पर उसका जघन्य द्रव्य प्राप्त किया गया है।

§ १९३ अब यहां उपसंहारका कथन करते हैं—उत्कृष्ट निर्लेपनकाल दो छयासठ सागर है और उत्कृष्ट उद्वेलनाकाल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सो कर्मस्थितिके पहले समयसे लेकर इतना काल ऊपर चढ़कर बन्धको प्राप्त हुए समयप्रबद्धोंका एक भी परमाणु स्वामित्वके अन्तिम समयमें नहीं पाया जाता, क्योंकि जिस कर्मकी जितनी उत्कृष्ट बढ़ी हुई स्थिति है उससे और अधिक काल तक उस कर्मका अवस्थान नहीं पाया जाता। शेष बची हुई कर्मस्थितिके

ओकड्डुक्कड्डणवसेण हेट्ठिल्लुवरिल्लणिसेगेसु संकमंतसमयपबद्धेगादिपरमाणूणं तत्थावट्ठाण-विरोहाभावादो[1]।

§ १९४. संपहि एदम्मि जहण्णदव्वे पयडिगोवुच्छपमाणाणुगमं कस्सामो। तं जहा—एगमेइंदियसमयपबद्धं दिवड्ढगुणहाणिगुणिदं ठविय पुणो एदस्स हेट्ठा अंतोमुहुत्तोवट्टिद[2]ओकड्डुक्कड्डणभागहारो ठवेदव्वो, देवेसुववज्जिय अंतोमुहुत्तं कालं पबद्ध[3]अंतोकोडाकोडिसागरोवममेत्तट्ठिदीसु उक्कड्डिददव्वस्सेव अवट्ठाणुवलंभादो। पुणो गुणसंकमभागहारो पुव्विल्लभागहारस्स गुणगारभावेण ठवेयव्वो, उक्कड्डिददव्वे किंचूणचरिमगुणसंकमभागहारेण खंडिदेगखंडस्सेव मिच्छत्तादो सम्मामिच्छत्तसरूवेण गमणुवलंभादो। पुणो सकलंतोकोडाकोडिअब्भंतरणाणागुणहाणिसलागाओ विरलिय विगुणिय अण्णोण्णेण गुणिय रूवूणीकयरासी वेछावट्ठिसागरोवमूणंतोकोडाकोडि-

---

भीतर बंधे हुए समयप्रबद्धोंके कर्मपरमाणु स्वामित्वके अन्तिम समयमें कदाचित् रहते हैं, क्योंकि अपकर्षण और उत्कर्षणके कारण नीचे और ऊपरके निषेकोंमें संक्रमणको प्राप्त होनेवाले समय-प्रबद्धोंके एक आदि परमाणुओंका स्वामित्वके अन्तिम समयमें सद्भाव माननेमें कोई विरोध नहीं है।

विशेषार्थ—बन्धके समय जिस कर्मकी जितनी स्थिति पड़ती है उस कर्मका अधिकसे अधिक उतने काल तक ही सत्त्व पाया जाता है। यद्यपि बँधे हुये कर्म परमाणुओंका उत्कर्षण होना सम्भव है पर यह क्रिया भी अपने-अपने कर्मकी शक्तिस्थितिके भीतर ही होती है, इसलिये किसी भी कर्मके परमाणुओंका अपनी कर्मस्थितिसे अधिक काल तक सद्भाव पाया जाना सम्भव नहीं है। इसी नियमको ध्यानमें रखकर यहां कर्मस्थितिके प्रथम समयसे लेकर दो छ्यासठ सागर काल और उद्वेलना कालका जितना योग हो उतने काल तकके परमाणु सम्यग्मिथ्यात्वके जघन्य सत्कर्मके समयमें नहीं पाये जाते यह निर्देश किया है, क्योंकि दो छ्यासठ सागर और दीर्घ उद्वेलना इन दोनोंका काल कर्मस्थितिके कालके बाहर है।

§ १९४. अब इस जघन्य द्रव्यमें प्रकृतिगोपुच्छाके प्रमाणका विचार करते हैं। वह इस प्रकार है—एकेन्द्रियके एक समयप्रबद्धको डेढ़ गुणहानिसे गुणा करके स्थापित करो। फिर इसके नीचे अन्तर्मुहूर्तसे भाजित अपकर्षण-उत्कर्षण भागहार स्थापित करो, क्योंकि देवोंमें उत्पन्न होनेके बाद अन्तर्मुहूर्त काल तक बन्धको प्राप्त हुई अन्तःकोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण स्थितियोंमें उत्कर्षणको प्राप्त हुए द्रव्यका ही अवस्थान पाया जाता है। फिर गुणसंक्रम भागहारको पूर्वोक्त भागहारके गुणकाररूपसे स्थापित करना चाहिये, क्योंकि उत्कर्षणको प्राप्त हुए द्रव्यमें कुछ कम अन्तिम गुणसंक्रम भागहारका भाग देने पर जो एक भाग प्राप्त हो उसीका मिथ्यात्वके द्रव्यमेंसे सम्यग्मिथ्यात्वरूपसे संक्रमण पाया जाता है। फिर अन्तःकोड़ाकोड़ी सागरके भीतर प्राप्त हुई सब नाना गुणहानिशलाकाओंका विरलन कर और विरलित प्रत्येक एकको दूना कर परस्पर गुणा करनेसे जो राशि उत्पन्न हो एक कम उसमें दो छ्यासठ सागर

---

१. ता०आ०प्रत्योः 'तत्थावट्ठाणाभावादो इति पाठः। २. ता०आ०प्रत्योः 'अंतोमुहुत्तोवट्टिदं' इति पाठः। ३. ता०प्रतौ 'अंतोमुहु त्तं(त्त)कालं (ल) पबद्ध' इति पाठः।

अब्भंतरणाणागुणहाणिसलागाणमण्णोण्णब्भत्थरासिणा रूवणेणोवट्टिदो भागहारो ठवेदव्वो, वेछावट्ठिसागरोवमेसु विरइदगोवुच्छाणं सम्माइट्ठिचरिमसमए अभावादो। पुणो उव्वेल्लणकालब्भंतरणाणागुणहाणिसलागाणमण्णोण्णब्भत्थरासो सादिरेओ भागहारो ठवेदव्वो, उव्वेल्लणकालब्भंतरे विरइदगोवुच्छाणं[1] णिस्सेसगलणुवलंभादो। संपहि एदस्स गलिदावसिट्ठदव्वस्स दिवड्ढगुणहाणिभागहारो ठवेदव्वो, गलिदावसिट्ठदव्वे पयडिगोवुच्छपमाणेण कीरमाणे दिवड्ढगुणहाणिमेत्तपगदिगोवुच्छाणं तत्थुवलंभादो। एवमेसा पयडिगोवुच्छा परूविदा।

§ १९५. संपहि विगदिगोवुच्छाए पमाणाणुगमं कस्सामो। तं जहा—दिवड्ढगुणिदसमयपबद्धस्स पयडिगोवुच्छाए ठविदासेसभागहारे पच्छिमदिवड्ढगुणहाणिभागहारवज्जिदे ठविय चरिमुव्वेल्लणफालीए ओवट्टिदे विगिदिगोवुच्छा आगच्छदि। पयडिगोवुच्छा एगसमयपबद्धस्स असंखे०भागो, समयपबद्धगुणगारभूददिवड्ढगुणहाणीदो हेट्ठिमासेसभागहाराणमसंखे०गुणत्तुवलंभादो। विगिदिगोवुच्छा पुण असंखेज्जसमयपबद्धमेत्ता, हेट्ठिमासेसभागहारेहिंतो गुणगारभूददिवड्ढगुणहाणीए असंखेज्जगुणत्तुवलंभादो। तदो पयडिगोवुच्छादो विगिदिगोवुच्छा असंखेज्जगुणा त्ति गहेयव्वं।

कम अन्तःकोड़ाकोड़ी सागरके भीतर प्राप्त हुई नाना गुणहानिशलाकाओंकी एक कम अन्योन्याभ्यस्तराशिका भाग देने पर जो प्राप्त हो उसे भागहाररूपसे स्थापित करना चाहिये; क्योंकि दो छ्यासठ सागर कालके भीतर विरचित गोपुच्छाओंका सम्यग्दृष्टिके अन्तिम समयमें अभाव होता है। फिर उद्वेलन कालके भीतर नानागुणहानिशलाकाओंकी साधिक अन्योन्याभ्यस्त राशिको भागहाररूपसे स्थापित करना चाहिये; क्योंकि उद्वेलना कालके भीतर विरचित गोपुच्छाओंका पूरी तरहसे गल कर पतन होता हुआ देखा जाता है। अब गल कर शेष बचे हुए इस द्रव्यका डेढ़ गुणहानिप्रमाण भागहार स्थापित करना चाहिये, क्योंकि गल कर शेष बचे हुए द्रव्यकी प्रकृतिगोपुच्छाएँ बनाने पर वहां डेढ़ गुणहानिप्रमाण प्रकृतिगोपुच्छाएँ पाई जाती हैं। इस प्रकार यह प्रकृतिगोपुच्छा कही।

§ १९५. अब विकृतिगोपुच्छाके प्रमाणका विचार करते हैं। वह इस प्रकार है—प्रकृतिगोपुच्छाके लानेके लिये डेढ़ गुणहानिसे गुणित समयप्रबद्धका पहले जो भागहार स्थापित कर आये हैं उसमेंसे अन्तमें कहे गये डेढ़ गुणहानिप्रमाण भागहारके सिवा बाकीके सब भागहारको स्थापित करो और उसमें उद्वेलनाकाण्डककी अन्तिम फालिका भाग दो तो विकृतिगोपुच्छा प्राप्त होती है। इनमेंसे प्रकृतिगोपुच्छा एक समयप्रबद्धके असंख्यातवें भागप्रमाण है; क्योंकि पहले प्रकृतिगोपुच्छाके लानेके लिये एक समयप्रबद्धका जो डेढ़ गुणहानिप्रमाण गुणकार बतला आये हैं उससे नीचेका सब भागहार असंख्यातगुणा पाया जाता है। किन्तु विकृतिगोपुच्छा असंख्यात समयप्रबद्धप्रमाण पाई जाती है, क्योंकि पहले विकृतिगोपुच्छाके लानेके लिये नीचे जो भागहार बतलाये हैं उन सबसे गुणकाररूप डेढ़ गुणहानि असंख्यातगुणी पाई जाती है। अतः प्रकृतिगोपुच्छासे विकृतिगोपुच्छा असंख्यातगुणी है ऐसा ग्रहण

---

1. ता०प्रतौ 'विगइदगोवुच्छाणं' इति पाठः।

§ १९६. पुणो वि तदसंखेज्जगुणत्तस्स किं चि कारणं वुच्चदे। तं जहा—एगमेइंदियसमयपबद्धं दिवड्ढगुणहाणिगुणिदं ठविय पुणो अंतोमुहुत्तेणोवट्टिद-ओकड्डुक्कड्डणभागहारो किंचूणचरिमगुणसंकमभागहारो अण्णेगो ओकड्डुक्कड्डणभागहारो वेछावट्ठिअब्भंतरणाणागुणहाणिसलागाणमण्णोण्णब्भत्थरासी उव्वेल्लणणाणागुणहाणि-सलागाणमण्णोण्णब्भत्थरासी च भागहारो हेट्ठा ठवेदव्वो। एवं ठविय पुणो दिवड्ढ-भागहारे ठविदे तदित्थलाभो होदि। संपहि पयडिगोवुच्छं ठविय ओकड्डुक्कड्डण-भागहारेणोवट्टिदे पयडिगोवुच्छावओ होदि। एदे आय-व्वया वे वि सरिसा, उभयत्थ भागहार-गुणगाराणं सरिसत्तुवलंभादो। संपहि विज्झादसंकममस्सिदूणायपरूवणं कस्सामो। तं जहा—एगमेइंदियसमयपबद्धं दिवड्ढगुणहाणिगुणिदं ठविय पुणो अंतो-मुहुत्तेणोवट्टिदओकड्डुक्कड्डणभागहारो विज्झादभागहारो वेछावट्ठि-उव्वेल्लणणाणागुणहाणि-सलागाणमण्णोण्णब्भत्थरासी च भागहारो ठवेदव्वो। पुणो पच्छा दिवड्ढगुणहाणिणा खंडिदे तत्थ एगखंडं विज्झादमस्सिदूण आओ होदि[1]। विज्झादेण वओ वि अत्थि सो अप्पहाणो, आयादो तस्स असंखेज्जगुणहीणत्तादो। तदसंखेज्जगुणहीणत्तं कुदो

करना चाहिये।

§ १९६. अब फिरसे प्रकृतिगोपुच्छासे विकृतिगोपुच्छा असंख्यातगुणी क्यों है इसका कुछ अन्य कारण कहते हैं। वह इसप्रकार है—एकेन्द्रियके एक समयप्रबद्धको डेढ़ गुणहानिसे गुणित करके स्थापित करो। फिर इसके नीचे अन्तर्मुहूर्तसे भाजित अपकर्षण-उत्कर्षण भागहार, कुछ कम अन्तिम गुणसंक्रम भागहार, अन्य एक अपकर्षण-उत्कर्षण भागहार, दो छयासठ सागर के भीतर नाना गुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्तराशि और उद्वेलन कालके भीतर प्राप्त हुई नाना गुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्तराशि इन सब राशियोंको भागहाररूपसे स्थापित करो। इस प्रकार स्थापित करके पुनः डेढ़ गुणहानिको भागहाररूपसे स्थापित करने पर वहांका लाभ प्राप्त होता है। अब प्रकृतिगोपुच्छाको स्थापित करके अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारका भाग देने पर प्रकृतिगोपुच्छाओंमेंसे जितनेका व्यय होता है वह राशि आती है। ये दोनों ही आय और व्यय समान हैं, क्योंकि दोनोंही जगह भागहार और गुणकार समान पाये जाते हैं। अब विध्यातसंक्रमणका आश्रय लेकर आयका कथन करते हैं। वह इस प्रकार है—एकेन्द्रियके एक समयप्रबद्धको डेढ़ गुणहानिसे गुणा करके स्थापित करो। फिर इसके नीचे अन्तर्मुहूर्तसे भाजित अपकर्षण-उत्कर्षण भागहार, विध्यातसंक्रमण भागहार, दो छयासठ सागरकी नाना गुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्तराशि इन सब राशियोंको भागहाररूपसे स्थापित करो। फिर नीचेसे डेढ़ गुणहानिका भाग देने पर जो एक भाग द्रव्य प्राप्त हो वह विध्यातकी अपेक्षा आयका प्रमाण होता है। विध्यातसंक्रमणके द्वारा व्यय भी होता है पर उसकी यहां प्रधानता नहीं है, क्योंकि आयसे वह असंख्यातगुणा हीन है।

शंका—वह आयसे असंख्यातगुणा हीन है यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

---

१. ता०आ०प्रत्योः 'आदी होदि' इति पाठः।

णव्वदे ? अणंतरपरूविदअंतोमुहुत्तेणोवट्टिदओकड्डुकड्डणभागहार-गुणसंकमभागहार-वेछावट्ठि-उव्वेल्लणणाणागुणहाणिसलागण्णोण्णब्भत्थरासि-दिवड्डगुणहाणि-विज्झादभागहारेहि खंडिद एगखंडपमाणस्स तस्सुवलंभादो। एदेण कमेण वेछावट्ठिं गमिय मिच्छत्ते पडिवण्णे सम्मामिच्छत्तस्स वओ चेव, अधापमत्तसंकमभागहारेण सम्मामिच्छत्तदव्वे खंडिदे तस्स एयखंडस्स मिच्छत्तसरूवेण अंतोमुहुत्तकालं णिरंतरं गमणुवलंभादो। पुणो उव्वेल्लणपारंभे कदे पयडिगोवुच्छाए उव्वेल्लणभागहारेण खंडिदाए तत्थ एयखंडं मिच्छत्तसरूवेण गच्छदि। एवमुव्वेल्लणभागहारेण पयदगोवुच्छाए खंडिदाए तत्थ एगेगखंडं समयं पडि झीयमाणं गच्छदि जाव उव्वेल्लणकालचरिमसमओ त्ति। एवमेसा पयडिगोवुच्छाए आय-व्वयपरूवणा कदा।

§ १९७. संपहि विगिदिगोवुच्छाए माहप्पपरूवणा कीरदे। तं जहा— वेछावट्ठिकालब्भंतरे णत्थि विगिदिगोवुच्छा, तत्थ ट्ठिदिखंडयघादाभावादो। संते वि तग्घादे तत्तो जादसंचयस्स पयडिगोवुच्छाए अंतब्भावादो। संपहि पढमुव्वेल्लणखंडय-चरिमफालीए णिवदमाणाए विगिदिगोवुच्छा सव्वजहण्णिया उप्पज्जदि। सा च दिवड्डगुणहाणिगुणिदेगसमयपबद्धे अंतोमुहुत्तेणोवट्टिदओकड्डुकड्डणभागहारेण किंचूण-

समाधान—अभी पहले जो यह कहा है कि अन्तर्मुहूर्तसे भाजित अपकर्षण-उत्कर्षण-भागहार, गुणसंक्रम भागहार, दो छयासठ सागरके भीतर प्राप्त हुई नानागुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्तराशि, उद्वेलना कालके भीतर प्राप्त हुई नाना गुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्या-भ्यस्तराशि, डेढ़ गुणहानि और विध्यातसंक्रमण भागहार इन सबका भाग देनेपर जो एक भाग प्राप्त हो उतना व्यय पाया जाता है, इससे ज्ञात होता है कि आयसे व्यय असंख्यातगुणा हीन है।

इस क्रमसे दो छयासठ सागर काल बिताकर मिथ्यात्वको प्राप्त होनेपर सम्यग्मिथ्यात्वके द्रव्यका व्यय ही होता है, क्योंकि सम्यग्मिथ्यात्वके द्रव्यमें अधःप्रवृत्तसंक्रम भागहारका भाग देने पर जो एक खण्ड द्रव्य प्राप्त होता है उतनेका अन्तर्मुहूर्त काल तक निरन्तर मिथ्यात्वरूपसे संक्रमण पाया जाता है। फिर उद्वेलनाका प्रारम्भ करनेपर प्रकृतिगोपुच्छामें उद्वेलना भागहारका भाग देने पर जो एक भाग प्राप्त होता है उतना मिथ्यात्वरूपसे प्राप्त होता है। इस प्रकार उद्वेलना भागहारका प्रकृतिगोपुच्छामें भाग देने पर जो एक भाग प्राप्त होता है वह प्रत्येक समयमें उद्वेलना कालके अन्तिम समय तक झरकर मिथ्यात्वमें चला जाता है अर्थात् मिथ्यात्वरूप होता जाता है। इस प्रकार यह प्रकृतिगोपुच्छाके आय और व्ययका कथन किया।

§ १९७. अब विकृतिगोपुच्छाके माहात्म्यका कथन करते हैं। वह इस प्रकार है—दो छयासठ सागर कालके भीतर विकृतिगोपुच्छा नहीं है, क्योंकि उस कालमें स्थितिकाण्डकघात नहीं होता। उस कालके भीतर यदा कदाचित् स्थितिकाण्डकघात होता भी है तो उससे हुए संचयका प्रकृतिगोपुच्छामें ही अन्तर्भाव हो जाता है। अब प्रथम उद्वेलनाकाण्डककी अन्तिम फालिका पतन होनेपर सबसे जघन्य विकृतिगोपुच्छा उत्पन्न होती है। डेढ़ गुणहानिसे गुणा किये गये एक समयप्रबद्धमें अन्तर्मुहूर्तसे भाजित अपकर्षण-उत्कर्षणभागहार, कुछ कम

चरिमसमयगुणसंकमभागहारेण वेछावट्ठिणाणागुणहाणिसलागाणमण्णोण्णब्भत्थरासिणा च ओवट्टिदे उवरिमदव्वमागच्छदि। पुणो अवसेसंतोकोडाकोडिणाणागुणहाणिसलागाणमण्णोण्णब्भत्थरासिणा रूवूणेण दिवड्ढगुणहाणिगुणिदेणोवट्टिदे चरिमणिसेगो आगच्छदि। पुणो एदेसु भागहारेसु पढमुव्वेल्लणखंडयचरिमफालीए ओवट्टिदेसु चरिमफालिमेत्ता चरिमणिसेया आगच्छंति[1]। पुणो किंचूणं कादूण विहज्जमाणदव्वे ओवट्टिदे पढमुव्वेल्लणखंडयचरिमफालिदव्वं होदि। पुणो उव्वेल्लणणाणागुणहाणिसलागाणमण्णोण्णब्भत्थरासिणा तम्मि ओवट्टिदे पढमुव्वेल्लणखंडयचरिमफालिदव्वमस्सिय पयदगोवुच्छादो उवरि णिवदिददव्वं होदि। तम्मि दिवड्ढगुणहाणीए ओवट्टिदे अहियारट्ठिदीए विगिदिगोवुच्छा होदि।

§ १९८. संपहि विदियउव्वेल्लणखंडयचरिमफालीए एत्तो उवरि अंतोमुहुत्तं चडिदूण ट्ठिदाए णिवदमाणाए जा विगिदिगोवुच्छा तिस्से पमाणाणुगमं कस्सामो। पुव्वं ट्ठविदभज्ज-भागहारसव्वरासीणं विण्णासं करिय दुगुणचरिमफालीए सादिरेगाए पुव्वभागहारेसु ओवट्टिदेसु तदित्थविगिदिगोवुच्छाए पमाणं होदि। एवमेदेण विहाणेण असंखेज्जुव्वेल्लणखंडएसु णिवदिदेसु उवरि एगगुणहाणिमेत्तट्ठिदी परिहायदि। ताधे उव्वेल्लणकालो वि गुणहाणीए असंखे०भागमेत्तो अइक्कमइ, एगुव्वेल्लणखंडयस्स

अन्तिम समयवर्ती गुणसंक्रमभागहार और दो छयासठ सागरकी नानागुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्तराशि इन सबका भाग देने पर उपरिम द्रव्यका प्रमाण आता है। फिर इस द्रव्यमें शेष बची अन्तःकोडाकोडीकी नाना गुणहानिशलाकाओंकी एक कम अन्योन्याभ्यस्तराशिको डेढ़ गुणहानिसे गुणा करके प्राप्त हुई राशिका भाग देनेपर अन्तिम निषेकका प्रमाण आता है। फिर इन भागहारोंको प्रथम उद्वेलनाकाण्डककी अन्तिम फालिसे भाजित कर देने पर अन्तिम फालिप्रमाण अन्तिम निषेक प्राप्त होते हैं। फिर अन्तिम फालिको कुछ कम करके उसका भज्यमान द्रव्यमें भाग देने पर प्रथम उद्वेलनाकाण्डकको अन्तिम फालिका द्रव्य प्राप्त होता है। फिर इसे उद्वेलनाकी नाना गुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्तराशिका भाग देने पर प्रथम उद्वेलनाकाण्डककी अन्तिम फालिके द्रव्यका आश्रय लेकर प्रकृत गोपुच्छासे ऊपर पतित हुए द्रव्यका प्रमाण प्राप्त होता है। अब इसमें डेढ़ गुणहानिका भाग देने पर अधिकृत स्थितिमें विकृतिगोपुच्छा प्राप्त होती है।

§ १९८ अब इससे आगे अन्तर्मुहूर्त जाकर जो दूसरे उद्वेलनाकाण्डककी अन्तिम फालि स्थित है उसका पतन होने पर जो विकृतिगोपुच्छा बनती है उसके प्रमाणका विचार करते हैं—पहले भाज्य और भागहारकी सब राशियोंकी जिस प्रकार स्थापना कर आये हैं उन्हें उसी प्रकारसे रखकर अनन्तर पहले स्थापित किये हुए भागहारोंमें साधिक दूनी की हुई अन्तिम फालिका भाग दो तो वहाँ की विकृतिगोपुच्छाका प्रमाण होता है। इस प्रकार इस विधिसे असंख्यात उद्वेलनाकाण्डकोंका पतन होनेपर ऊपरकी एक गुणहानिप्रमाण स्थितियोंकी हानि होती है। और तब उद्वेलनाका काल भी गुणहानिके असंख्यातवें भागप्रमाण व्यतीत हो जाता है, क्योंकि एक उद्वेलनाकाण्डकके पतनमें यदि अन्तर्मुहूर्तप्रमाण उत्कीरणा काल प्राप्त

१. ता०आ०प्रत्योः 'आगच्छदि' इति पाठः।

जदि अंतोमुहुत्तमेत्ता उक्कीरणद्धा लब्भदि तो एगगुणहाणिमेत्तट्ठिदीए किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए उक्कीरणद्धोवट्टिदुव्वेल्लणखंडयचरिमफालीए ओवट्टिदगुणहाणिमेत्तकालुवलंभादो ।

§ १९९. संपहि एत्थतणविगिदिगोवुच्छाए पमाणाणुगमं कस्सामो । तं जहा— दिवड्ढगुणहाणिगुणिदेगेइंदियसमयपबद्धे अंतोमुहुत्तोवट्टिदओकड्डुक्कड्डणभागहारेण किंचूण-चरिमगुणसंकमभागहारेण वेछावट्ठिणाणागुणहाणिसलागाणमण्णोण्णब्भत्थरासिणा उवरिमअंतोकोडाकोडिअब्भंतरणाणागुणहाणिसलागाणमण्णोण्णब्भत्थरासिणा च भागे हिदे चरिमगुणहाणिदव्वमागच्छदि । पुणो एदम्मि दीहुव्वेल्लणकालब्भंतरणाणागुणहाणि-सलागाणमण्णोण्णब्भत्थरासिणोवट्टिदे पयदणिसेगादो उवरि णिवदमाणदव्वं होदि । पुण तम्मि दिवड्ढगुणहाणीए ओवट्टिदे एत्थतणविगिदिगोवुच्छा आगच्छदि ।

§ २००. संपहि एत्तो उवरि अंतोमुहुत्तमेत्तउक्कीरणकालं चडिदूण अण्णमेगं ट्ठिदिखंडयं णिवददि । तत्तो समुप्पण्णविगिदिगोवुच्छापमाणे आणिज्जमाणे पुव्विल्लविगिदि-गोवुच्छाणयणे ठविदभज्ज-भागहारा ठवेदव्वा । णवरि उवरिमअंतोकोडाकोडिणाणा-गुणहाणिसलागाणमण्णोण्णब्भत्थरासीए दिवड्ढगुणहाणिगुणिदाए पढमट्ठिदिखंडयदुगुण-चरिमफालीए अब्भहियदिवड्ढगुणहाणिभागहारो ठवेदव्वो । किमट्ठं पढमगुणहाणि-

---

होता है तो एक गुणहानिप्रमाण स्थितियोंके पतनमें कितना काल लगेगा इस प्रकार त्रैराशिक करके फलराशिसे इच्छाराशिको गुणित करके जो लब्ध आवे उसमें प्रमाणराशिका भाग देने पर उत्कीरणाकालसे उद्वेलनाकाण्डककी अन्तिम फालिको भाजित करके जो प्राप्त हो उसका एक गुणहानिप्रमाण स्थितियोंमें भाग देनेसे एक गुणहानिप्रमाण स्थितियोंके पतनमें लगने-वाला उद्वेलनाकाल प्राप्त होता है ।

§ १९९. अब यहाँकी विकृतिगोपुच्छाके प्रमाणका विचार करते हैं । वह इस प्रकार है—डेढ़ गुणहानिसे गुणा किये गये एकेन्द्रियके एक समयप्रबद्धमें अन्तर्मुहूर्तसे भाजित अपकर्षण-उत्कर्षण भागहार, कुछ कम अन्तिम समयवर्ती गुणसंक्रमभागहार, दो छयासठ सागरकी नाना गुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्त राशि और उपरिम अन्तः कोड़ाकोड़ीके भीतर प्राप्त हुई नाना गुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्त राशि इन सबका भाग देने पर अन्तिम गुणहानिका द्रव्य आता है । फिर उसमें सबसे बड़े उद्वेलना कालके भीतर प्राप्त हुई नाना गुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्त राशिका भाग देने पर प्रकृत निषेकसे ऊपर प्राप्त हुए द्रव्यका प्रमाण प्राप्त होता है । फिर उसमें डेढ़ गुणहानिका भाग देने पर यहांकी विकृतिगोपुच्छा प्राप्त होती है ।

§ २००. अब इसके ऊपर अन्तर्मुहूर्तप्रमाण उत्कीरण काल जाकर एक दूसरे स्थिति-काण्डकका पतन होता है । अब इस स्थितिकाण्डकके पतनसे उत्पन्न हुई विकृतिगोपुच्छाका प्रमाण लाने पर, पूर्वोक्त विकृतिगोपुच्छाका प्रमाण प्राप्त करनेके लिये जिन भाज्य और भागहारोंको स्थापित कर आये हैं उन्हें उसी प्रकार स्थापित करना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि डेढ़ गुणहानिसे गुणित उपरिम अन्तःकोड़ाकोड़ीकी नाना गुणहानि-शलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्त राशिके भागहाररूपसे प्रथम स्थितिकाण्डककी दूनी अन्तिम

चरिमफालिआयामो दुगुणिय पक्खिप्पदे ? ण, चरिमगुणहाणिगोवुच्छाहिंतो दुचरिमगुणहाणिगोवुच्छाणं दुगुणत्तुवलंभादो । पुणो अवरेगे उव्वेल्लणट्ठिदिखंडए णिवदमाणे चउग्गुणं करिय पक्खिवेयव्वा। ण च उव्वेल्लणखंडयाणि सव्वत्थ सरिसा[1] चेवे त्ति णियमो, उव्वेल्लणकालस्स जहण्णुक्कस्सभावण्णहाणुववत्तीए। एत्थ पुण सव्वुव्वेल्लणट्ठिदिखंडयाणमायामो सरिसो चेव, अहियकयउक्कस्सुव्वेल्लणकालत्तादो। एवमेदेण कमेण वेगुणहाणिमेत्तट्ठिदीसु णिवदिदासु विगिदिगोवुच्छाए भागहारो चरिमगुणहाणीए णिवदिदाए जो उत्तो सो चेव होदि। णवरि एत्थ पुण उवरिमअंतोकोडाकोडीए अण्णोण्णब्भत्थरासी दोगुणहाणिसलागाणमण्णोण्णब्भत्थरासिणा रूवूणेणोवट्टेदव्वो। कुदो ? गुणगारीभूददिवड्ढगुणहाणीदो तब्भागहारीभूददिवड्ढगुणहाणीए एवदिगुणत्तुवलंभादो। एवं तिण्णि-चत्तारिआदी जावुक्कीरणद्धोवट्टिदचरिमफालीए जत्तियाणि रूवाणि तत्तियमेत्तगुणहाणीसु णिवदिदासु उव्वेल्लणकालब्भंतरे एगगुणहाणिमेत्तकालो गलदि।

§ २०१. संपहि एत्थतणविगिदिगोवुच्छाए पमाणाणुगमं कस्सामो। तं जहा—दिवड्ढगुणहाणिगुणिदसमयपबद्धे अंतोमुहुत्तोवट्टिदओकड्डुकड्डणभागहारेण गुणसंकम-

---

फालिसे अधिक डेढ़ गुणहानिको स्थापित करना चाहिये।

शंका—प्रथम गुणहानिकी अन्तिम फालिका आयाम दूना क्यों स्थापित किया जाता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, अन्तिम गुणहानिकी गोपुच्छाओंसे उपान्त्य गुणहानिकी गोपुच्छाएँ दूनी पाई जाती हैं।

फिर एक दूसरे उद्वेलनाकाण्डकके पतन होने पर अन्तिम फालिका आयाम चौगुना करके मिलाना चाहिये। तब भी सर्वत्र उद्वेलनाकाण्डक समान ही होते हैं ऐसा कोई नियम नहीं है, अन्यथा जघन्य और उत्कृष्ट उद्वेलनाकाल नहीं बन सकता। किन्तु यहाँ पर सब उद्वेलना स्थितिकाण्डकोंका आयम समान ही लिया है, क्योंकि प्रकृतमें उत्कृष्ट उद्वेलनाकालका अधिकार है। इस प्रकार इस क्रमसे दो गुणहानिप्रमाण स्थितियोंका पतन होने पर विकृतिगोपुच्छाका भागहार वही रहता है जो अन्तिम गुणहानिके पतनके समय कह आये हैं। किन्तु इतनी विशेषता है कि यहां पर दो गुणहानिशलाकाओंको एक कम अन्योन्याभ्यस्त राशिसे उपरिम अन्तःकोड़ाकोड़ीकी अन्योन्याभ्यस्त राशिको भाजित करना चाहिये, क्योंकि, गुणकाररूप डेढ़ गुणहानिसे उसकी भागहाररूप डेढ़ गुणहानि इतनी गुणी पाई जाती है। इस प्रकार तीन गुणहानि और चार गुणहानि आदिसे लेकर चरमफालिमें उत्कीरणकालका भाग देनेपर जितने अंक प्राप्त हों उतनी गुणहानियोंका पतन होने पर उद्वेलना कालके भीतर एक गुणहानिप्रमाण काल गलता है।

§ २०१. अब यहांकी विकृतिगोपुच्छाके प्रमाणका अनुगम करते हैं। वह इस प्रकार है—डेढ़ गुणहानिसे गुणा किये गये एक समयपबद्धमें अन्तर्मुहूर्तसे भाजित अपकर्षण-उत्कर्षणभागहार, गुणसंक्रमभागहार, दो छ्यासठ सागरकी अन्योन्याभ्यस्तराशि, उपरिम

---

१. ता०आ०प्रत्योः 'सव्वद्ध सरिसा' इति पाठः।

भागहारेण वेछावट्ठिअण्णोण्णब्भत्थरासिणा उवरिमअंतोकोडाकोडिणाणागुणहाणिसलागाणमण्णोण्णब्भत्थरासिणा रूवूणेण उक्कीरणद्धोवट्टिदचरिमउव्वेल्लणकंडयरूवमेत्तणाणागुणहाणिसलागाण रूवूणण्णोण्णब्भत्थरासिणोवट्टिदेण रूवूणुव्वेल्लणणाणागुणहाणिसलागाणमण्णोण्णब्भत्थरासिणा दिवड्ढगुणहाणीए च ओवट्टिदे तत्थतणविगिदिगोवुच्छा आगच्छदि ।

§ २०२. एवमुवरिमगुणहाणीओ हायमाणीओ जाधे उक्कीरणद्धोवट्टिददुगुणपढमुव्वेल्लणफालिमेत्ताओ गुणहाणीओ परिहीणाओ ताधे उव्वेल्लणकालब्भंतरे दोगुणहाणीओ परिगलंति, एगगुणहाणीए जदि उक्कीरणद्धोवट्टिदचरिमफालीए खंडिदगुणहाणिमेत्तुव्वेल्लणकालो लब्भदि तो उक्कीरणद्धाए दुभागेणोवट्टिदचरिमफालिमेत्तगुणहाणीणं किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए दोगुणहाणिमेत्तुव्वेल्लणकालुवलंभादो ।

§ २०३. एत्थ विगिदिगोवुच्छापमाणाणुगमं कस्सामो । तं जहा—दिवड्ढगुणहाणिगुणिदसमयपबद्धे अंतोमुहुत्तोवट्टिदओकड्डुक्कड्डणभागहारेण गुणसंकमभागहारेण वेछावट्ठिअण्णोण्णब्भत्थरासिणा उवरिमअंतोकोडाकोडिणाणागुणहाणिसलागाणं रूवूणण्णोण्णब्भत्थरासिणा उक्कीरणद्धादुभागेणोवट्टिदचरिमुव्वेल्लणफालिमेत्तणाणागुणहाणिसलागाणं रूवूणण्णोण्णब्भत्थरासिणोवट्टिदेण दुरूवूणुव्वेल्लणणाणागुणहाणिसलागाणमण्णोण्णब्भत्थ-

---

अन्तःकोड़ाकोड़ीकी नानागुणहानिशलाकाओंकी एक कम अन्योन्याभ्यस्तराशि, उत्कीरणाकालसे भाजित उद्वेलनाकाण्डककी अन्तिम फालिप्रमाण नानागुणहानि शलाकाओंकी एक कम अन्योन्याभ्यस्तराशिसे भाजित उद्वेलनाकी एक कम नाना गुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्तराशि और डेढ़ गुणहानि इन सब भागहारोंका भाग देने पर वहांकी विकृतिगोपुच्छा आती है ।

§ २०२. इस प्रकार उपरिम गुणहानियाँ कम होती हुई जब उत्कीरणकालसे भाजित प्रथम उद्वेलनकी दूनी फालिप्रमाण गुणहानियाँ कम होती हैं तब उद्वेलनकालके भीतर दो गुणहानियाँ गलती हैं, क्योंकि एक गुणहानिमें यदि उत्कीरण कालसे भाजित जो अन्तिम फालि उससे भाजित गुणहानिप्रमाण काल प्राप्त होता है तो उत्कीरणकालके द्वितीय भागसे भाजित अन्तिम फालिप्रमाण गुणहानियोंमें कितना काल प्राप्त होगा, इस प्रकार त्रैराशिक करके फल राशिसे इच्छा राशिको गुणित करके जो प्राप्त हो उसमें प्रमाणराशिका भाग देने पर दो गुणहानिप्रमाण उद्वेलनकाल प्राप्त होता है ।

§ २०३. अब यहाँ विकृतिगोपुच्छाके प्रमाणका अनुगम करते हैं । वह इस प्रकार है—डेढ़ गुणहानिसे गुणा किये गये एक समयप्रबद्धमें अन्तर्मुहूर्तसे भाजित अपकर्षण-उत्कर्षणभागहार, गुणसंक्रमभागहार, दो छयासठ सागरकी अन्योन्याभ्यस्त राशि, उपरिम अन्तःकोड़ाकोड़ीकी नाना गुणहानिशलाकाओंकी एक कम अन्योन्याभ्यस्त राशि, उत्कीरण कालके दूसरे भागसे भाजित उद्वेलनाकाण्डककी अन्तिम फालिप्रमाण नाना गुणहानिशलकाओंकी एक कम अन्योन्याभ्यस्त राशिसे भाजित उद्वेलनाकी दो कम नाना गुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्त राशि और डेढ़ गुणहानि इन सब भागहारोंका भाग देने पर वहाँकी विकृति-

रासिणा दिवड्ढगुणहाणीए च ओवट्टिदे तदित्थविगिदिगोवुच्छापमाणं होदि ।

§ २०४ एवमुव्वेल्लणकालब्भंतरे गुणहाणीसु गलमाणासु जाधे जहण्णपरित्तासंखेज्जच्छेदणयमेत्तगुणहाणीओ मोत्तूण सेससव्वगुणहाणाओ गलिदाओ ताधे अधियय-गोवुच्छादो उवरि जहण्णपरित्तासंखेज्जछेदणयोवट्टिदुक्कीरणद्धाए खंडिदचरिमफालीए जत्तियाणि रूवाणि तत्तियमेत्तगुणहाणीओ चिट्ठंति, उक्कीरणद्धोवट्टिदुव्वेल्लणफालियाए खंडिदगुणहाणिमेत्तुव्वेल्लणकालम्मि जदि एगगुणहाणिमेत्तट्ठिदी लब्भदि तो जहण्णपरित्तासंखेज्जछेदणयगुणिदगुणहाणिमेत्तुव्वेल्लणकालम्मि किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए उक्कीरणद्धोवट्टिदचरिमुव्वेल्लणफालीए गुणिदजहण्ण-परित्तासंखेज्जछेदणयमेत्तगुणहाणीणमुवलंभादो ।

§ २०५. संपहि एत्थतणविगिदिगोवुच्छाए पमाणाणुगमं कस्सामो । तं जहा—दिवड्ढगुणहाणिगुणिदसमयपबद्धे अंतोमुहुत्तोवट्टिदओकड्डुकड्डणभागहारेण किंचूणचरिम-गुणसंकमभागहारेण वेछावट्टिअण्णोण्णब्भत्थरासिणा उवरिमअंतोकोडाकोडिणाणागुण-हाणिसलागाणं रूवूणण्णोण्णब्भत्थरासिणा ओदिण्णट्ठिदिणाणागुणहाणिसलागाणं रूवूणण्णोण्णब्भत्थरासिणोवट्टिदेण जहण्णपरित्तासंखेज्जेण दिवड्ढगुणहाणीए च भागे हिदे तदित्थविगिदिगोवुच्छा होदि ।

गोपुच्छाका प्रमाण प्राप्त होता है ।

§ २०४. इस प्रकार उद्वेलना कालके भीतर गुणहानियोंके उत्तरोत्तर गलने पर जब जघन्य परीतासंख्यातके अर्धच्छेदशलाकाप्रमाण गुणहानियोंके सिवा शेष सब गुणहानियाँ गल जाती हैं तब अधिकृत गोपुच्छाके ऊपर जघन्य परितासंख्यातके अर्धच्छेदोंका उत्कीरणकालमें भाग दो जो लब्ध आवे उससे अन्तिम फालिको भाजित करो जो लब्ध रहे उतनी गुणहानियाँ शेष रहती हैं, क्योंकि यदि उत्कीरण कालसे उद्वेलनफालिको भाजित करके जो लब्ध आवे उससे गुणहानिप्रमाण उद्वेलना कालके भाजित करने पर यदि एक गुणहानिप्रमाण स्थिति प्राप्त होती है तो जघन्य परीतासंख्यातके अर्धच्छेदोंसे गुणित गुणहानिप्रमाण उद्वेलन कालके भीतर क्या प्राप्त होगा, इस प्रकार त्रैराशिक करके फलराशिसे इच्छा राशिको गुणित करके जो लब्ध आवे उसमें प्रमाण राशिका भाग देने पर, उत्कीरण कालसे अन्तिम उद्वेलना फालिको भाजित करके जो लब्ध आवे उससे जघन्य परीतसंख्यातके अर्धच्छेदोंको गुणित करनेसे जितनी संख्या प्राप्त हो उतनी गुणहानियां पाई जाती हैं ।

§ २०५. अब यहाँकी विकृतिगोपुच्छाके प्रमाणका अनुगम करते हैं । वह इस प्रकार है—डेढ़ गुणहानिसे गुणा किये गये एक समयप्रबद्धमें अन्तर्मुहूर्तसे भाजित अपकर्षण-उत्कर्षण-भागहार, कुछ कम अन्तिम गुणसंक्रमभागहार, दो छयासठ सागरकी अन्योन्याभ्यस्त राशि, उपरिम अन्तःकोड़ाकोड़ी सागरकी नाना गुणहानिशलाकाओंकी एक कम अन्योन्याभ्यस्त राशि, जितनी स्थिति गत हो गई है उसकी नाना गुणहानिशलाकाओंकी एक कम अन्योन्याभ्यस्त राशिसे भाजित जघन्य परितासंख्यात और डेढ़ गुणहानि इन सब भागहारोंका भाग देने पर वहाँकी विकृतिगोपुच्छा प्राप्त होती है ।

§ २०६ संपहि उव्वेल्लणकालब्भंतरे एगगुणहाणिमेत्तुव्वेल्लणकाले सेसे पयदगोवुच्छाए उवरि उक्कीरणद्धोवट्टिदचरिमुव्वेल्लणफालिमेत्तगुणहाणीओ होंति। एत्थतणविगिदिगोवुच्छाए पमाणाणुगमं कस्सामो। तं जहा—दिवड्ढगुणहाणिगुणिद-समयपबद्धे अंतोमुहुत्तोवट्टिदओकड्डुकड्डणभागहारेण किंचूणचरिमगुणसंकमभागहारेण वेछावट्ठिणाणागुणहाणिसलागाणं सादिरेयण्णोण्णब्भत्थरासिणा उवरिमअंतोकोडाकोडि-णाणागुणहाणिसलागाणं रूवूणण्णोण्णब्भत्थरासिणा ओदिण्णद्धाणणाणागुणहाणि-सलागाणं रूवूणण्णोब्भत्थरासिणोवट्टिदेण दोहि रूवेहि सादिरेगेहि दिवड्ढगुणहाणीए च ओवट्टिदे विगिदिगोवुच्छापमाणं होदि।

§ २०७. पुणो उवरिमण्णोण्णगुणहाणीए झीणाए उव्वेल्लणकालो किंचूण-गुणहाणिमेत्तो उव्वरइ, उक्कीरणद्धोवट्टिदचरिमुव्वेल्लणफालिं विरलिय गुणहाणीए समखंडं कादूण दिण्णाए तत्थ एगखंडस्स परिहाणिदंसणादो। पुणो विदियगुणहाणीए झीणाए पुव्वुत्तविरलणाए विदियरूवधरिदं गलदि। एवं तिण्णि-चत्तारिआदी जाव जहण्णपरित्तासंखेज्जछेदणयमेत्तगुणहाणीओ मोत्तूण अवसेससव्वगुणहाणीसु ओदिण्णासु जहण्णपरित्तासंखेज्जछेदणयगुणिदुक्कीरणद्धाए ओवट्टिदचरिमफालीए गुणहाणीए ओवट्टिदाए तत्थ एगभागमेत्तो उव्वेल्लणकालो सेसो होदि।

§ २०८. संपहि एत्थतणविगिदिगोवुच्छाए पमाणाणुगमं कस्सामो। तं जहा—दिवड्ढगुणहाणिगुणिदसमयपबद्धे अंतोमुहुत्तोवट्टिदओकड्डुकड्डणभागहारेण किंचूण-

---

§ २०६. अब उद्वेलना कालके भीतर एक गुणहानिप्रमाण उद्वेलना कालके शेष रहने पर प्रकृतिगोपुच्छाके ऊपर उत्कीरण कालसे भाजित अन्तिम उद्वेलनाफालिप्रमाण गुणहानियाँ होती हैं। अब यहाँकी विकृतिगोपुच्छाके प्रमाणका विचार करते हैं। वह इस प्रकार है—डेढ़ गुणहानिसे गुणा किये गये एक समयप्रबद्धमें अन्तर्मुहूर्तसे भाजित अपकर्षण-उत्कर्षण भागहार, कुछ कम अन्तिम गुणसंक्रम भागहार, दो छयासठ सागरकी नाना गुणहानि-शलाकाओंकी साधिक अन्योन्याभ्यस्त राशि, उपरिम अन्तःकोड़ाकोड़ीकी नाना गुणहानि-शलाकाओंकी एक कम अन्योन्याभ्यस्त राशि, जितना काल गत हो गया है उसकी नाना गुणहानिशलाकाओंकी एक कम अन्योन्याभ्यस्त राशिसे भाजित और दो रूप अधिक डेढ़ गुणहानि इन सब भागहारोंका भाग देने पर विकृतिगोपुच्छाका प्रमाण होता है।

§ २०७. पुनः ऊपरकी अन्य एक गुणहानिके गलित होने पर उद्वेलना काल कुछ कम एक गुणहानिप्रमाण शेष रहता है, क्योंकि उत्कीरणकालसे भाजित अन्तिम उद्वेलनाफालिका विरलन करके गुणहानिको समान खण्ड करके देनेपर वहाँ एक खण्डकी हानि देखी जाती है। पुनः दूसरी गुणहानिके गलित होने पर पूर्वोक्त विरलनके दूसरे एक विरलन पर स्थापित भागकी हानि होती है। इस प्रकार तीन और चारसे लेकर जघन्य परीतासंख्यातके अर्धच्छेद प्रमाण गुणहानियोंके सिवा शेष सब गुणहानियोंके गलने पर, जघन्य परीतासंख्यातके अर्ध-च्छेदोंसे उत्कीरण कालको गुणा करो, फिर इसका अन्तिम फालिमें भाग दो, फिर इसका गुणहानिमें भाग देने पर वहाँ जो एक भाग प्राप्त है उतना उद्वेलना काल शेष रहता है।

§ २०८. अब यहाँकी विकृतिगोपुच्छाके प्रमाणका अनुगम करते हैं। वह इस प्रकार

चरिमगुणसंकमभागहारेण वेछावट्ठिअण्णोण्णब्भत्थरासिणा सादिरेयजहण्णपरित्तासंखेज्जेण दिवड्ढगुणहाणीए च ओवट्टिदे विगिदिगोवुच्छा होदि।

§ २०९. पुणो उवरि अण्णेगाए गुणहाणीए झीणाए तत्थतणविगिदिगोवुच्छाभागहारो जो पुव्वं परूविदो सो चेव होदि। णवरि एत्थ जहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स अद्धं भागहारो होदि। कुदो? रूवूणजहण्णपरित्तासंखेज्जछेदणयमेत्तगुणहाणीणमुवरि अवट्ठिदत्तादो। अधिकारगोवुच्छाए उवरि एगगुणहाणिमेत्तट्ठिदीसु चेट्ठिदासु पयदिगोवुच्छाए विगिदिगोवुच्छा सरिसा होदि, पढमगुणहाणिदव्वादो विदियादिगुणहाणिदव्वस्स सरिसत्तुवलंभादो।

§ २१०. पुणो पढमगुणहाणिं तिण्णि खंडाणि करिय तत्थ हेट्ठिमदोखंडाणि मोत्तूण उवरिमएगखंडेण सह सेसासेसगुणहाणीसु घादिदासु पयडिगोवुच्छादो विगिदिगोवुच्छा किंचूणदुगुणमेत्ता होदि, पढमगुणहाणिवे-ति-भागदव्वादो उवरिमति-भागसहिदसेसासेसगुणहाणिदव्वस्स किंचूणदुगुणत्तुवलंभादो। एवं गंतूण पढमगुणहाणिं जहण्णपरित्तासंखेज्जमेत्तखंडाणि कादूण तत्थ हेट्ठिमवेखंडे मोत्तूण उवरिमरूवूणुक्कस्ससंखेज्जमेत्तखंडेहि सह उवरिमासेसगुणहाणीसु घादिदासु पयडिगोवुच्छादो विगिदिगोवुच्छा उक्कस्ससंखेज्जगुणा, अवट्ठिददव्वादो ट्ठिदिखंडएण पदिददव्वस्स उक्कस्ससंखेज्जगुणत्तुवलंभादो। रूवाहियजहण्णपरित्तासंखेज्जमेत्तखंडयाणि पढमगुणहाणिं

है—डेढ़ गुणहानिसे गुणा किये गये समयप्रबद्धमें अन्तर्मुहूर्तसे भाजित अपकर्षण-उत्कर्षण भागहार, कुछ कम अन्तिम गुणसंक्रमभागहार, दो छयासठ सागरकी अन्योन्याभ्यस्त राशि, साधिक जघन्य परीतासंख्यात और डेढ़ गुणहानि इन सब भागहारोंका भाग देने पर विकृतिगोपुच्छा प्राप्त होती है।

§ २०९. फिर आगे एक अन्य गुणहानिके गलने पर वहाँकी विकृतिगोपुच्छाका भागहार जो पहले कहा है वही रहता है। किन्तु इतनी विशेषता है कि यहाँ जघन्य परीतासंख्यातका आधा भागहार होता है, क्योंकि आगे एक कम जघन्य परीतासंख्यातके अर्धच्छेदप्रमाण गुणहानियां अवस्थित हैं। अधिकृत गोपुच्छाके आगे एक गुणहानिप्रमाण स्थितियोंके रहते हुए विकृतिगोपुच्छा प्रकृतिगोपुच्छाके समान होती है, क्योंकि प्रथम गुणहानिके द्रव्यसे दूसरी आदि गुणहानियोंका द्रव्य समान पाया जाता है।

§ २१०. फिर प्रथम गुणहानिके तीन खण्ड करके उनमेंसे नीचेके दो खंडोंको छोड़कर ऊपरके एक खण्डके साथ बाकीकी सब गुणहानियोंके घातने पर प्रकृतिगोपुच्छासे विकृतिगोपुच्छा कुछ कम दूनी होती है, क्योंकि प्रथम गुणहानिके दो तीन भागप्रमाण द्रव्यसे उपरिम तीन भाग सहित शेष सब गुणहानियोंका द्रव्य कुछ कम दूना पाया जाता है। इस प्रकार जाकर प्रथम गुणहानिके जघन्य परीतासंख्यातप्रमाण खण्ड करके वहां नीचेके दो खण्डोंको छोड़कर ऊपरके एक कम उत्कृष्ट संख्यातप्रमाण खण्डोंके साथ ऊपरकी अशेष गुणहानियोंका घात होनेपर प्रकृतिगोपुच्छासे विकृतिगोपुच्छा उत्कृष्ट संख्यातगुणी प्राप्त होती है; क्योंकि जो द्रव्य अवस्थित रहता है उससे स्थितिकाण्डक घातके द्वारा पतित हुआ द्रव्य उत्कृष्ट संख्यातगणा पाया जाता है। प्रथम गुणहानिके एक अधिक जघन्य परीतासंख्यात

करिय तत्थ वे खंडे मोत्तूण उवरिमउक्कस्ससंखेज्जमेत्तखंडेहि सह सेसगुणहाणीसु घादिदासु पयडिगोवुच्छादो विगिदिगोवुच्छा जहण्णपरित्तासंखेज्जगुणा । पुणो सव्वपच्छिमवियप्पो वुच्चदे । तं जहा—चरिमसुव्वेल्लणफालीए अद्धेण पढमगुणहाणीए खंडिदाए जं लद्धं तत्तियमेत्तखंडाणि पढमगुणहाणिं करिय तत्थ वे खंडे मोत्तूण सेसदुरूवूणखंडेहि सह उवरिमासेसट्ठिदीसु घादिदासु असंखेज्जगुणवड्ढीए समत्ती होदि । एत्थ को गुणगारो ? चरिमफालिअद्धेण गुणहाणीए खंडिदाए जं लद्धं तं रूवूणं गुणगारो । अथवा चरिमफालिओवट्टिददिवड्ढगुणहाणिगुणगारो । तदो पयडिगोवुच्छादो विगिदिगोवुच्छाए सिद्धमसंखेज्जगुणत्तं । एवं विगिदिगोवुच्छाए पमाणपरूवणा कदा ।

§ २११. एवंविहपयडि-विगिदिगोवुच्छाओ घेत्तूण सम्मामिच्छत्तस्स जहण्णयं पदेससंतकम्मं । संपहि जहण्णसामित्तं परूविय अजहण्णसामित्तपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि—

❀ तदो पदेसुत्तरं ।

§ २१२. जहण्णट्ठाणस्सुवरि ओकड्डुकड्डणाहिंतो एगपदेसे वड्ढिदे विदियं ट्ठाणं । जोगकसायवड्ढिहाणीहि विणा कथमेगो परमाणू वड्ढदि हायदि वा ? ण एस दोसो, जोगकसाएहि विणा अण्णेहि वि जीवपरिणामेहिंतो कम्मपरमाणूणं

प्रमाण खण्ड करके उनमेंसे दो खण्डोंको छोड़कर ऊपरके उत्कृष्ट संख्यातप्रमाण खण्डोंके साथ शेष गुणहानियोंके घाते जानेपर प्रकृतिगोपुच्छासे विकृतिगोपुच्छा जघन्य परीतासंख्यातगुण प्राप्त होती है । अब सबसे अन्तिम विकल्पको कहते हैं । वह इस प्रकार है—उद्वेलनाकी अन्तिमी फालिके आधेका प्रथम गुणहानिमें भाग दो जो लब्ध आवे, प्रथम गुणहानिके उतने खण्ड करके उनमेंसे दो खण्डोंको छोड़कर दो कम शेष खण्डोंके साथ ऊपरकी शेष सब स्थितियोंके घाते जाने पर असंख्यातगुणवृद्धिकी समाप्ति होती है ।

शंका—यहाँ गुणकारका प्रमाण क्या है ?

समाधान—अन्तिम फालिके आधेका गुणहानिमें भाग देने पर जो लब्ध आवे एक कम उतना गुणकार है । अथवा अन्तिम फालिसे भाजित डेढ़ गुणहानि गुणकार है ।

इसलिये प्रकृतिगोपुच्छासे विकृतिगोपुच्छा असंख्यातगुणी सिद्ध होती है ।

इस प्रकार विकृतिगोपुच्छाके प्रमाणका कथन किया ।

§ २११. इस प्रकार प्रकृतिगोपुच्छा और विकृतगोपुच्छाकी अपेक्षा सम्यग्मिथ्यात्वके जघन्य प्रदेशसत्कर्मका कथन किया । अब जघन्य स्वामित्वका कथन करके अजघन्य स्वामित्वका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

❀ **उससे एक प्रदेश अधिक होता है ।**

§ २१२. जघन्य स्थानके उपर अपकर्षण-उत्कर्षणके द्वारा एक प्रदेशके बढ़ने पर दूसरा स्थान होता है ।

शंका—योग और कषायकी वृद्धि और हानिके बिना एक परमाणु कैसे घट बढ़ सकता है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि योग और कषायके सिवा जीवके अन्य

वड्डि-हाणिदंसणादो। अण्णेसिं परिणामाणमत्थित्तं कत्तो णव्वदे ? खविद-गुणिद-कम्मंसिएसु अणंतट्ठाणपरूवणण्णहाणुववत्तीदो।

❀ दुपदेसुत्तरं।

§ २१३. जहण्णदव्वस्सुवरि दोकम्मपरमाणुसु ओकड्डुक्कड्डणावसेण वड्डिदे तदियं ट्ठाणं। एत्थ कज्जभेदण्णहाणुववत्तीदो कारणभेदोवगंतव्वो।

❀ णिरंतराणि ट्ठाणाणि उक्कस्सपदेससंतकम्मं ति।

§ २१४. जहण्णट्ठाणप्पहुडि जाव उक्कस्ससंतकम्मं ति ताव सम्मामिच्छत्तस्स णिरंतराणि ठाणाणि। ण सांतराणि, मिच्छत्तस्सेव एत्थ अपुव्व-अणियट्टिगुणसेढि-गोवुच्छाणमभावादो।

§ २१५. संपहि वेछावट्ठिसागरोवमसमयाणमुव्वेल्लणकालसमयाणं च एग-सेढिआगारे रचणं कादूण कालपरिहाणीए संतकम्मावलंबणेण च चउव्विहपुरिसे अस्सिदूण ठाणपरूवणं कस्सामो। तं जहा—खविदकम्मंसियलक्खणेण सव्वं कम्मट्ठिदिं

परिणामोंसे भी कर्मपरमाणुओंकी वृद्धि और हानि देखी जाती है।

शंका—अन्य परिणामोंका सद्भाव किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—अन्यथा क्षपितकर्मांश और गुणितकर्मांशके अनन्त स्थानोंका कथन बन नहीं सकता, इससे जाना जाता है कि योग और कषायके सिवा अन्य परिणाम भी हैं जिनसे कर्मपरमाणुओंकी हानि और वृद्धि होती है।

❀ दो प्रदेश अधिक होते हैं।

§ २१३. जघन्य द्रव्यके ऊपर अपकर्षण उत्कर्षणके कारण दो कर्म परमाणुओंकी वृद्धि होने पर तीसरा स्थान होता है। यहाँ कारणमें भेद हुए बिना कार्यमें भेद हो नहीं सकता, इसलिए कारणमें भेद जानना चाहिये।

❀ इस प्रकार उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मके प्राप्त होने तक निरन्तर स्थान होते हैं।

§ २१४. सत्कर्मके जघन्य स्थानसे लेकर उत्कृष्ट सत्कर्मस्थानके प्राप्त होने तक सम्यग्मिथ्यात्वके निरन्तर स्थान होते हैं, मिथ्यात्वके समान सान्तर स्थान नहीं होते, क्योंकि यहां पर अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणकी गुणश्रेणिगोपुच्छाएँ नहीं पाई जाती।

विशेषार्थ—मिथ्यात्वके अधिकतर सान्तर सत्कर्मस्थानोंके प्राप्त होनेका मूल कारण उनका क्षपणाके निमित्तसे प्राप्त होना है। पर सम्यग्मिथ्यात्वका जघन्य स्थान क्षपणाके निमित्तसे न प्राप्त होकर उद्वेलनाके निमित्तसे प्राप्त होता है और उसमें उत्तरोत्तर प्रदेशवृद्धि होकर उत्कृष्ट सत्कर्मस्थान प्राप्त होता है; इसलिये यहाँ सान्तरसत्कर्मस्थानोंका प्राप्त होना सम्भव न होनेसे उनका निषेध किया है।

§ २१५. अब दो छयासठ सागरके समयोंकी और उद्वेलनाकालके समयोंकी एक पंक्ति रूपसे रचना करके कालकी हानि और सत्कर्मके अवलम्बन द्वारा चार पुरुषोंकी अपेक्षा स्थानोंका कथन करते हैं। वे इस प्रकार हैं—क्षपितकर्मांशकी विधिसे सब कर्मस्थितिप्रमाण

सुहुमणिगोदेसु अच्छिय पुणो तत्तो णिप्पिडिय पलिदो० असंखे०भागमेत्ताणि संजमासंजमकंडयाणि तेहिंतो विसेसाहियमेत्ताणि सम्मत्ताणंताणुबंधिविसंजोयणकंडयाणि अट्ठ संजमकंडयाणि चदुक्खुत्तो कसायउवसामणं च कादूण एइंदिएसु भमिय पच्छा असण्णिपंचिंदिएसु उप्पज्जिय तत्थ देवाउअं बंधिय देवेसु उप्पज्जिय छप्पज्जत्तीओ समाणिय पुणो सम्मत्तमुवणमिय वेछावट्ठिसागरोवमाणि भमिय तदो मिच्छत्तं गंतूण दीहुव्वेल्लणकालेण सम्मामिच्छत्तमुव्वेल्लिय एगणिसेगे दुसमयकालट्ठिदिए सेसे सम्मामिच्छत्तस्स सव्वजहण्णट्ठाणं होदि। संपहि जहण्णदव्वम्मि ओकड्डुकड्डणाओ अस्सिदूण एगपरमाणुम्मि ओवट्टिदे विदियमणंत-भागवड्डिठाणं होदि, जहण्णदव्वेण जहण्णदव्वे खंडिदे संते तत्थ एगखंडमेत्तरूववड्डि-दंसणादो। दुपरमाणुत्तरं वड्डिदे वि तदियं ठाणमणंतभागवड्डीए, जहण्णट्ठाणदुभागेण जहण्णट्ठाणे भागे हिदे वड्डिरूवोवलंभादो। एवमणंतभागवड्डीए चेव अणंताणि ठाणाणि णिरंतरं गच्छंति जाव जहण्णपरित्ताणंतेण जहण्णट्ठाणे भागे हिदे तत्थ एगभागमेत्ता कम्मपरमाणू जहण्णदव्वम्मि वड्डिदा त्ति। एवं वड्डिदे अणंतभागवड्डी परिसमप्पदि। अंसाणमविवक्खाए एत्थ एगपरमाणुम्मि वड्डिदे असंखेज्जभागवड्डी होदि, जहण्णदव्व-भागहारस्स वड्डिरूवागमणणिमित्तस्स एत्थ असंखेज्जत्तुवलंभादो। तं जहा— जहण्णपरित्ताणंतं विरलिय जहण्णदव्वे समखंडं कादूण दिण्णे विरलणरूवं पडि

कालतक सूक्ष्म निगोदियोंमें रहकर फिर वहांसे निकलकर पल्यके असंख्यातवें भागवार संयमा-संयमको और इनसे विशेष अधिक बार सम्यक्त्व और अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनाको, आठ बार संयमको तथा चार बार कषायोंके उपशमको प्राप्त करके, फिर एकेन्द्रियोंमें भ्रमणकर, बादमें असंज्ञी पंचेन्द्रियोंमें उत्पन्न होकर और वहाँ देवायुका बन्धकर फिर देवोंमें उत्पन्न होकर और छह पर्याप्तियोंको पूरा कर फिर सम्यक्त्वको प्राप्तकर और दो छयासठ सागर कालतक भ्रमण कर फिर मिथ्यात्वमें जाकर वहाँ उत्कृष्ट उद्वेलना काल द्वारा सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना कर जब दो समय कालकी स्थितिवाला एक निषेक शेष रहता है तब सम्यग्मिथ्यात्वका सबसे जघन्य स्थान होता है। अब जघन्य द्रव्यमें अपकर्षण-उत्कर्षणकी अपेक्षा एक एक परमाणुकी वृद्धि होने पर अनन्तभागवृद्धिसे युक्त दूसरा स्थान होता है, क्योंकि जघन्य द्रव्यका जघन्य द्रव्यमें भाग देने पर जो एक भाग प्राप्त होता है उसकी वहां वृद्धि देखी जाती है। जघन्य द्रव्यमें दो परमाणुओंके बढ़नेपर अनन्तभागवृद्धिसे युक्त तीसरा स्थान होता है, क्योंकि जघन्य स्थानमें जघन्य स्थानके आधेका भाग देने पर दो परमाणुओंकी वृद्धि पाई जाती है। इस प्रकार जघन्य परीतानन्तका जघन्य स्थानमें भाग देने पर वहां जघन्य द्रव्यमें लब्ध एक भागप्रमाण कर्म परमाणुओंकी वृद्धि होने तक केवल अनन्तभागवृद्धिके निरन्तर अनन्त स्थान होते हैं। इसप्रकार वृद्धि होनेपर अनन्तभागवृद्धि समाप्त होती है। आगे अंशोंकी विवक्षा न करके एक परमाणुकी वृद्धि होने पर असंख्यातभागवृद्धि होती है, क्योंकि जिसका जघन्य द्रव्यमें भाग देकर वृद्धिके अंक प्राप्त किये जाते हैं वह यहां असंख्यात है। खुलासा इस प्रकार है—जघन्य परीतानन्तका विरलन कर जघन्य द्रव्यके समान खण्ड करके देयरूपसे देने पर विरलनके प्रत्येक एकके प्रति पूर्वोक्त वृद्धिरूप द्रव्य प्राप्त होता है। फिर

पुव्विल्लवड्ढिदव्वं पावदि । पुणो परमाणुत्तरवड्ढिदव्वमिच्छामो त्ति उवरिल्लेगरूवधरिदं हेट्ठा विरलिय पुणो तम्मि चेव विरलणरूवं पडि समखंडं करिय दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स एगेगपरमाणुपमाणं पावदि । पुणो एदेसु उवरिमविरलणरूवधरिदेसु पक्खित्तेसु जा भागहारपरिहाणी होदि तं वत्तइस्सामो—हेट्ठिमविरलणरूवाहियं गंतूण जदि एगरूवपरिहाणी लब्भदि तो उवरिमविरलणाए किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए एगरूवस्स अणंतिमभागो आगच्छदि । एदम्मि जहण्णपरित्ताणंतादो सोधिदे सुद्धसेसमुक्कस्सअसंखेज्जासंखेज्जरूवस्स अणंतेहि भागेहि अब्भहियं होदि । जहण्णपरित्ताणंतादो हेट्ठिमा इमा संखे त्ति असंखेज्जा । संपहि जाव एदे एगरूवस्स अणंता भागा ण झीयंति ताव छेदभागहारो होदि । तेसु सव्वेसु परिहीणेसु समभागहारो होदि । एवमसंखेज्जभागवड्ढीए ताव वड्ढावेदव्वं जावेग-गोवुच्छविसेसो एगसमयमोकड्ढिदूण विणासिज्जमाणदव्वं विज्झादेण संकामिददव्वं च मिच्छत्तादो विज्झादसंकमेणागच्छमाणदव्वेण परिहीणं वड्ढिदं ति ।

§ २१६. पुणो एदेण अण्णेगो जहण्णसामित्तविहाणेणागंतूण समयूणवेछावट्ठीओ भमिय मिच्छत्तं गंतूण दीहुव्वेल्लणकालेणुव्वेल्लिय एगणिसेगं[1] दुसमयकालट्ठिदियं धरेदूण ट्ठिदो सरिसो । संपहि पुव्विल्लं मोत्तूण एदं दव्वं परमाणुत्तरादिकमेण

एक परमाणु अधिक वृद्धिरूप द्रव्य लाना इष्ट है, इसलिए ऊपरके एक अंकके प्रति जो राशि प्राप्त है उसका विरलन करके और उसी विरलित राशिको समान खण्ड करके विरलित राशिके प्रत्येक एकके प्रति देयरूपसे देने पर एक एकके प्रति एक-एक परमाणु प्राप्त होता है। फिर इनको उपरिम विरलनके प्रत्येक एकके प्रति प्राप्त राशिमें मिला देने पर जो भागहारकी हानि होती है उसे बतलाते हैं—एक अधिक नीचेका विरलन समाप्त होने पर यदि भागहारमें एककी हानि होती है तो ऊपरके विरलनमें कितनी हानि प्राप्त होगी इसप्रकार त्रैराशिक करके इच्छा राशिको फलराशिसे गुणाकर फिर उसमें प्रमाण राशिका भाग देने पर एकका अनन्तवां भाग प्राप्त होता है। इसे जघन्य परीतानन्तमेंसे घटाने पर जो शेष बचता है वह एकका अनन्त बहुभाग अधिक उत्कृष्ट असंख्यातासंख्यात होता है। यह संख्या जघन्य परीतानन्तसे कम है, इसलिये इसका अन्तर्भाव असंख्यातमें होता है। अब जब तक इस एकके ये अनन्त बहुभाग गलित नहीं होते तब तक छेद भागहार होता है। और उन सबके घट जाने पर समभागहार होता है। इस प्रकार असंख्यातभागवृद्धिके द्वारा उत्तरोत्तर तब तक द्रव्य बढ़ाते जाना चाहिये जब तक एक गोपुच्छविशेष, एक समयमें अपकर्षण द्वारा विनाशको प्राप्त हुआ द्रव्य और मिथ्यात्वमेंसे विध्यात संक्रमणद्वारा आनेवाले द्रव्यसे हीन उसी विध्यातसंक्रमणद्वारा संक्रमणको प्राप्त हुआ द्रव्य वृद्धिको नहीं प्राप्त हो जाता।

§ २१६. फिर इस जीवके साथ एक अन्य जीव समान है जो जघन्य स्वामित्वकी विधिसे आकर एक समय कम दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण कर, मिथ्यात्वमें जाकर उत्कृष्ट उद्वेलना कालतक उद्वेलना कर दो समय कालकी स्थितिवाले एक निषेकको धारण करके स्थित है। अब पहलेके जीवको छोड़ दो और इस जीवके द्रव्यको एक परमाणु अधिक आदिके

[1] ता० प्रतौ 'एगणिसेग' इति पाठः ।

वड्ढावेदव्वं जाव विज्झादसंकमेणागच्छंतदव्वेणूणेगगोवुच्छविसेसेणब्भहियएगसमएणो-कड्डिदूण विणासिज्जमाणदव्वं सगविज्झादसंकमदव्वसहिदं वड्डिदं ति। पुणो एदेण खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण दुसमयूणवेछावट्ठीओ भमिय दीहुव्वेल्लणकालेणुव्वेल्लिय एगणिसेगं दुसमयकालट्ठिदियं धरेदूण ट्ठिदो सरिसो। एवमेदेण कमेण ओदारेदव्वं जाव अंतोमुहुत्तूणविदियछावट्ठि त्ति। तं घेत्तूण परमाणुत्तर-दुपरमाणुत्तरादिकमेण वड्डावेदव्वं जाव अंतोमुहुत्तमेत्तगोवुच्छविसेसा तावदियमेत्तकालमोकड्डियूण विणासिद-दव्वं जहण्णसम्मत्तकालब्भंतरे[1] परपयडिसंकमेण गददव्वं च तेत्तियमेत्तकालं मिच्छत्तादो विज्झादेणागच्छमाणदव्वेणूणं वड्डिदं ति। एदमंतोमुहुत्तपमाणं जहण्णसम्मत्त-सम्मामिच्छत्तद्धामेत्तमिदि घेत्तव्वं। एवं वड्डिऊण ट्ठिदेण अण्णेगो अंतोमुहुत्तूणपढमछावट्ठिम्मि सम्मामिच्छत्तमपडिवज्जिय मिच्छत्तं गंतूण दीहुव्वेल्लण-कालेणुव्वेल्लिय एयणिसेयं दुसमयकालट्ठिदियं धरेदूण ट्ठिदो सरिसो। एत्तो प्पहुडि विदियछावट्ठिम्मि वुत्तविहाणेणोदारेदव्वं जावंतोमुहुत्तूणपढमछावट्ठी सव्वा ओदिण्णा त्ति। जहण्णसामित्तविहाणेणागंतूण असण्णिपंचिंदिएसु देवेसु च कमेणुप्पज्जिय छप्पज्जत्तीओ समाणिय उवसमसम्मत्तं घेत्तूण वेदगं पडिवज्जिय तत्थ सव्वजहण्ण-

क्रमसे तब तक बढ़ाओ जबतक विध्यातसंक्रमणके द्वारा आनेवाले द्रव्यसे न्यून एक समयमें अपकर्षित होकर विनाशको प्राप्त होनेवाला द्रव्य और विध्यातसंक्रमणके द्वारा संक्रमणको प्राप्त हुआ अपना द्रव्य न बढ़ जाय। फिर इस जीवके साथ एक अन्य जीव समान है जो क्षपितकर्मांशकी विधिके साथ आकर दो समय कम दो छ्यासठ सागर काल तक भ्रमण कर और उत्कृष्ट उद्वेलना काल द्वारा उद्वेलना कर दो समय कालकी स्थितिवाले एक निषेकको धारण कर स्थित है। इसप्रकार इस क्रमसे अन्तर्मुहूर्त कम दूसरे छ्यासठ सागर कालके समाप्त होने तक उतारते जाना चाहिए। फिर वहां स्थित हुए जीवके दो समय कालकी स्थितिवाले एक निषेकको लो और उसमें एक परमाणु अधिक, दो परमाणु अधिक आदिके क्रमसे तब तक बढ़ाओ जब तक अन्तर्मुहूर्तके जितने समय हैं उतने गोपुच्छविशेष, उतने काल तक अपकर्षित होकर विनाशको प्राप्त होने वाला द्रव्य, जघन्य सम्यक्त्व कालके भीतर संक्रमणके द्वारा परप्रकृतिको प्राप्त हुआ द्रव्य न बढ़ जाय। किन्तु इस वृद्धिको प्राप्त हुए द्रव्यमेंसे अन्तर्मुहूर्त काल तक मिथ्यात्व प्रकृतिमेंसे विध्यातसंक्रमणके द्वारा आनेवाला द्रव्य कम कर देना चाहिये। यहां उस अन्तर्मुहूर्तको सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके जघन्य कालप्रमाण लेना चाहिये। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके साथ एक अन्य जीव समान है जो प्रथम छ्यासठ सागर कालमें अन्तर्मुहूर्त शेष रहने पर सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त होकर फिर मिथ्यात्वमें जाकर उत्कृष्ट उद्वेलना कालके द्वारा उद्वेलना करके दो समय कालकी स्थितिवाले एम निषेकको धारण करके स्थित है। फिर यहांसे लेकर दूसरे छ्यासठ सागरमें उक्त विधिसे जीवको तब तक उतारना चाहिये जब तक अन्तर्मुहूर्त कम प्रथम छ्यासठ सागर सबका सब उतर जाय। फिर जघन्य स्वामित्वकी विधिसे आकर तथा असंज्ञी पंचेन्द्रियों और देवोंमें क्रमसे उत्पन्न होकर छह पर्याप्तियोंको पूरा कर उपशमसम्यक्त्वको ग्रहण कर फिर वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त

1. आ०प्रतौ 'जहण्णसामित्तकालब्भंतरे' इति पाठः।

मंतोमुहुत्तमच्छिय पुणो मिच्छत्तं गंतूण दीहुव्वेल्लणकालेणुव्वेल्लिय एगणिसेगं दुसमयकालट्ठिदिं धरेदूण ट्ठिदं जाव पावदि ताव ओदिण्णो त्ति भणिदं होदि।

§ २१७. संपहि इमं घेत्तूण परमाणुत्तरादिकमेण वड्ढावेदव्वं जाव अंतोमुहुत्तमेत्तगोवुच्छविसेसा अंतोमुहुत्तमेत्तकालमोकड्डिदूण विणासिज्जमाणदव्वेण पुणो विज्झादेग गददव्वेणब्भहियावट्ठिदा त्ति। णवरि सम्मत्तकालम्मि सव्वजहण्णम्मि विज्झादसंकमेणागददव्वेणूणा त्ति वत्तव्वं। एवं वड्ढिदूण ट्ठिदेण अण्णेगो जहण्णसामित्तविहाणेण[1] देवेसुप्पज्जिय उवसमसम्मत्तं पडिवज्जिय पुणो वेदगसम्मत्तमगंतूण मिच्छत्तं पडिवण्णो दीहुव्वेल्लणकालेणुव्वेल्लिय एगणिसेगं दुसमयकालट्ठिदिं धरिय ट्ठिदो सरिसो। संपधि एदं दव्वमुव्वेल्लणभागहारेणेयसमयम्मि गददव्वेणेगगोवुच्छाविसेसेण च अब्भहियं कायव्वं। पुणो एदेण समऊणुक्कस्सुव्वेल्लणकालेणुव्वेल्लिय एगणिसेगं दुसमयकालट्ठिदिं धरेदूण ट्ठिदो सरिसो। एवं जाणिदूणोदारेदव्वं जाव सव्वजहण्णुव्वेल्लणकालो सेसो त्ति। पुणो एसा गोवुच्छा पंचहि वड्ढीहि वड्ढावेदव्वा जाव उक्कस्सा जादे त्ति। णारगचरिमसमयम्मि मिच्छत्तमुक्कस्सं कादूण तिरिक्खेसु देवेसुववज्जिय उवसमसम्मत्तं घेत्तूण

हो और वहांपर सबसे जघन्य अन्तर्मुहूर्त कालतक रहे। फिर मिथ्यात्वमें जाकर और वहां उत्कृष्ट उद्वेलनाकालके द्वारा उद्वेलना करके दो समय कालकी स्थितिवाले एक निषेकको धारण करके स्थित हुआ जीव जब जाकर प्राप्त हो तब तक उतारते जाना चाहिये, यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

§ २१७. अब इस जीवको ग्रहण करके एक परमाणु अधिक आदिके क्रमसे तब तक बढ़ाते जाना चाहिए जब तक अन्तर्मुहूर्तमें जितने समय हों उतने गोपुच्छविशेष, एक अन्तर्मुहूर्त काल तक स्थितिका अपकर्षण करके नष्ट हुआ द्रव्य और विध्यातसंक्रमणके द्वारा परप्रकृतिको प्राप्त हुआ द्रव्य वृद्धिको प्राप्त होवे। किन्तु इतनी विशेषता है कि सबसे जघन्य सम्यक्त्व कालके भीतर विध्यात संक्रमणके द्वारा प्राप्त हुए द्रव्यसे न्यून उक्त द्रव्यको कहना चाहिये। इस प्रकार द्रव्यको बढ़ा कर स्थित हुए इस जीवके साथ एक अन्य जीव समान है जो जघन्य स्वामित्व विधिसे आकर देवोंमें उत्पन्न होकर उपशम सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ फिर वेदक सम्यक्त्वको प्राप्त न होकर मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ और वहां दीर्घ उद्वेलनाकालके द्वारा उद्वेलना कर दो समय कालकी स्थितिवाले एक निषेकको धारण करके स्थित है। अब इस द्रव्यको उद्वेलना भागहारके द्वारा एक समयमें जितना द्रव्य अन्य प्रकृतिको प्राप्त हो उससे और एक गोपुच्छविशेषसे अधिक करे। इस प्रकार अधिक किये हुए द्रव्यको धारण करनेवाले इस जीवके साथ एक समय कम उत्कृष्ट उद्वेलना कालके द्वारा उद्वेलना करके दो समय कालकी स्थितिवाले एक निषेकको धारण करके स्थित हुआ जीव समान है। इस प्रकार जानकर सबसे जघन्य उद्वेलना कालके शेष रहने तक उतारना चाहिये। फिर इस गोपुच्छाको पांच वृद्धियोंके द्वारा तब तक बढ़ाना चाहिये जब तक वह उत्कृष्ट न हो जाय। उक्त कथनका तात्पर्य यह है कि नारकियोंके अन्तिम समयमें मिथ्यात्वके द्रव्यको उत्कृष्ट करके क्रमशः तिर्यंचों और देवोंमें उत्पन्न होकर, उपशमसम्यक्त्वको ग्रहण कर फिर

---

१. ता०प्रतौ 'जहण्णम्मि वि सामित्तविहाणेण' इति पाठः।

मिच्छत्तं गंतूण सव्वजहण्णुव्वेल्लणकालेणुव्वेल्लिय जाव एगणिसेगं दुसमयकालट्ठिदिं धरेदूण ट्ठिदं पावदि ताव ओदिण्णो त्ति भणिदं होदि।

§ २१८. संपहि दोगोवुच्छाओ तिसमयकालट्ठिदियाओ घेत्तूणवसेसट्ठाणाणं सामित्तपरूवणं कस्सामो। तं जहा—जहण्णसामित्तविहाणेणागंतूण वे छावट्ठीओ भमिय मिच्छत्तं गंतूण दीहुव्वेल्लणकालेणुव्वेल्लिय एगणिसेयं दुसमयकालट्ठिदियं धरेदूण ट्ठिदस्स सम्मामिच्छत्तं ताव वड्ढावेदव्वं जाव तस्सेव दुचरिमगोवुच्छा वड्ढिदा त्ति। एवं वड्ढिदूण ट्ठिदेण अण्णेगो खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण वेछावट्ठीओ दीहुव्वेल्लणकालं च भमिय दो गोवुच्छाओ तिसमयकालट्ठिदियाओ धरेदूण ट्ठिदो सरिसो। संपहि एदं दव्वं परमाणुत्तरकमेण विज्झादसंकमेणागददव्वेणूणदोगोवुच्छविसेसमेत्तमेगसमएण ओकड्डणाए विणासिज्जमाणदव्वं च सादिरेयं वड्ढावेदव्वं। एदेण समयूणवेछावट्ठीओ भमिय दीहुव्वेल्लणकालेणुव्वेल्लिय दोगोवुच्छाओ तिसमयकालट्ठिदियाओ धरेदूण ट्ठिदो सरिसो। संपहि एवं जाणिदूण ओदारेदव्वं जाव अंतोमुहुत्तूणविदियछावट्ठी ओदिण्णा त्ति। पुणो एदं दव्वं परमाणुत्तरकमेण वड्ढावेदव्वं जाव पुव्वं वड्ढिदअंतोमुहुत्तमेत्तगोवुच्छविसेसेहिंतो दुगुणमेत्तगोवुच्छविसेसा विज्झादसंकमेण अंतोमुहुत्तमागददव्वेणूण-अंतोमुहुत्तमोकड्डिदूण विणासिज्जमाणदव्वं च सादिरेयं वड्ढिदं ति। एदेण अण्णेगो

मिथ्यात्वमें जाकर सबसे जघन्य उद्वेलनाके द्वारा उद्वेलना करके दो समय कालकी स्थितिवाले एक निषेकको धारण करके स्थित हुए जीवको प्राप्त होता है तब तक उतारना चाहिये।

§ २१८. अब तीन समय कालकी स्थितिवाली दो गोपुच्छाओंको ग्रहण करके अवशेष स्थानोंके स्वामित्वका कथन करते हैं। वह इस प्रकार है—जघन्य स्वामित्व विधिसे आकर दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण कर फिर मिथ्यात्वमें जाकर उत्कृष्ट उद्वेलना काल द्वारा उद्वेलना करके दो समय कालकी स्थितिवाले एक निषेकको धारण करके स्थित हुए जीवके सम्यग्मिथ्यात्व तब तक बढ़ाना चाहिये जब तक उसी जीवके द्विचरम गोपुच्छा बढ़ जाय। इस प्रकार द्विचरम गोपुच्छाको बढ़ाकर स्थित हुए जीवके साथ अन्य एक जीव समान है जो क्षपित-कर्मांशकी विधिसे आकर दो छयासठ सागर और उत्कृष्ट उद्वेलना काल तक भ्रमण करके तीन समय कालकी स्थितिवाली दो गोपुच्छाओंको धारण करके स्थित है। अब इसके द्रव्यको उत्तरोत्तर एक परमाणुके अधिक क्रमसे विध्यात संक्रमणके द्वारा प्राप्त हुए द्रव्यसे न्यून दो गोपुच्छ विशेषके और एक समयमें अपकर्षण द्वारा विनाशको प्राप्त हुए द्रव्यके अधिक होने तक बढ़ाते जाना चाहिये। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके साथ एक समय कम दो छयासठ सागर काल तक भ्रमणकर और उत्कृष्ट उद्वेलना काल द्वारा उद्वेलना कर तीन समय कालकी स्थितिवाली दो गोपुच्छाओंको धारण कर स्थित हुआ जीव समान है। अब इस प्रकार जानकर अन्तर्मुहूर्त कम दूसरे छयासठ सागर कालके समाप्त होने तक उतारते जाना चाहिए। फिर इस द्रव्यको उत्तरोत्तर एक-एक परमाणुके अधिक क्रमसे तब तक बढ़ाना जब तक एक अन्तर्मुहूर्तमें जितने समय हों उनकी पहले बढ़ाई हुई गोपुच्छविशेषोंसे दूने गोपुच्छविशेष, विध्यातसंक्रमणके द्वारा अन्तर्मुहूर्तमें प्राप्त हुए द्रव्यसे कम अन्तर्मुहूर्ततक अपकर्षण करके विनाशको प्राप्त हुआ साधिक द्रव्य न बढ़ जाय। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित

खविदकम्मंसियलक्खणेण देवेसुववज्जिय उवसमसम्मत्तं पडिवज्जिय पढमछावट्ठिं भमिय सम्मामिच्छत्तमगंतूण मिच्छत्तं पडिवज्जिय दीहुव्वेल्लणकालेणुव्वेल्लिय दोणिसेगे तिसमयकालट्ठिदिगे धरेदूण ट्ठिदो सरिसो।

§ २१९. एवमेदेण कमेण जाणिदूण पढमछावट्ठी वि ओदारेदव्वा जाव अंतोमुहुत्तूणा त्ति। तत्थ ट्ठविय अंतोमुहुत्तमेत्तगोवुच्छविसेसा विज्झादसंकमेणागददव्वेणूण-ओकड्डुकड्डणाए विणासिय दव्वमेत्तं च सादिरेयं वड्ढावेयव्वं। एदेण खविदकम्मंसिय-लक्खणेणागंतूण देवेसुववज्जिय उवसमसम्मत्तं घेत्तूण मिच्छत्तं पडिवज्जिय दीहुव्वेल्लण-कालेणुव्वेल्लिय दोणिसेगे तिसमयकालट्ठिदिगे धरेदूण ट्ठिदो सरिसो[1]। पुणो इमं दव्वं परमाणुत्तरादिक्कमेण वड्ढावेदव्वं जाव एयसमयमुव्वेल्लणभागहारेणागददव्वेण सहिदवेगोवुच्छविसेसा वड्ढिदा त्ति। पुणो एदेण पुव्वविहाणेणागंतूण समयूणुक्कस्सु-व्वेल्लणकालेणुव्वेल्लिददोणिसेगे तिसमयकालट्ठिदिगे धरेदूण ट्ठिदो सरिसो। एवं समयूणादिक्कमेण ओदारिय सव्वजहण्णुव्वेल्लणकालचरिमसमए ठविय गुणिद-कम्मंसिएण सह पुव्वं व संधाणं कायव्वं।

§ २२०. संपहि एदेण कमेण तिण्णि णिसेगे चदुसमयकालट्ठिदिगे आदिं कादूण ओदारेदव्वं जाव समयूणावलियमेत्तगोवुच्छाओ ओदिण्णाओ त्ति। तत्थ

हुए इस जीवके साथ एक अन्य जीव समान है जो क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर देवोंमें उत्पन्न हुआ। फिर उपशम सम्यक्त्वको प्राप्त कर और पहले छ्यासठ सागर काल तक भ्रमण कर सम्यग्मिथ्यात्वको न प्राप्त हो मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ। फिर उत्कृष्ट उद्वेलना कालके द्वारा उद्वेलना कर तीन समय कालकी स्थितिवाले दो निषेकोंको धारण करके स्थित है।

§ २१९. इस प्रकार इस क्रमसे जानकर अन्तर्मुहूर्त कम प्रथम छ्यासठ सागर कालको भी उतारना चाहिये। फिर वहां ठहराकर एक अन्तर्मुहूर्तमें जितने समय हों उतने गोपुच्छविशेषोंको और विध्यातसंक्रमणके द्वारा आये हुए द्रव्यसे कम अपकर्षण-उत्कर्षणके द्वारा विनाशको प्राप्त हुए साधिक द्रव्यको बढ़ाना चाहिये। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए इस जीवके साथ एक अन्य जीव समान है जो क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर देवोंमें उत्पन्न हुआ। फिर उपशम सम्यक्त्वको प्राप्त कर मिथ्यात्वमें गया और वहां उत्कृष्ट उद्वेलना कालके द्वारा उद्वेलनाकर तीन समय कालकी स्थितिवाले दो निषेकोंको धारण करके स्थित है। फिर इस द्रव्यको उत्तरोत्तर एक-एक परमाणुके अधिक क्रमसे तब तक बढ़ाना चाहिए जब तक एक समयमें उद्वेलना भागहारके द्वारा प्राप्त हुए द्रव्यके साथ दो गोपुच्छविशेष वृद्धिको न प्राप्त हों। फिर इस जीवके साथ पूर्वोक्त विधिसे आकर एक समयकम उत्कृष्ट उद्वेलना कालके द्वारा तीन समयकी स्थितिवाले उद्वेलनाको प्राप्त हुए दो निषेकोंको धारण कर स्थित हुआ जीव समान है। इस प्रकार एक समयकम आदिके क्रमसे उतारकर सबसे जघन्य उद्वेलना कालके अन्तिम समयमें स्थापित कर गुणितकर्मांशके साथ पहलेके समान मिलान करा देना चाहिये।

§ २२०. अब इसी क्रमसे चार समयकी स्थितिवाले तीन निषेकोंसे लेकर एक समय कम आवलिप्रमाण गोपुच्छाओंके उतरनेतक उतारते जाना चाहिये। अब यहां सबसे अन्तिम

---

१. आ०प्रतौ 'ट्ठिदिसरिसो' इति पाठः।

सव्वपच्छिमवियप्पो वुच्चदे। तं जहा—खवियकम्मंसियलक्खणेणागंतूण असण्णि-पंचिंदिएसुववज्जिय पुणो देवेसुप्पज्जिय उवसमसम्मत्तं घेत्तूण वेदगं पडिवज्जिय वेछावट्ठीओ भमिय मिच्छत्तं गंतूण दीहुव्वेल्लणकालेणुव्वेल्लिय एगणिसेगं दुसमय-कालट्ठिदियं घेत्तूण परमाणुत्तरकमेण वड्ढावेदव्वं जाव दुसमयूणावलियमेत्तजहण्ण-गोवुच्छाओ सविसेसाओ वड्ढिदाओ त्ति। एवं वड्ढिदूण ट्ठिदेण खविदकम्मंसियलक्खणेणा-गंतूण सम्मत्तं पडिवज्जिय वेछावट्ठीओ भमिय मिच्छत्तं गंतूण दीहुव्वेल्लणकालेणुव्वेल्लिय सम्मामिच्छत्तचरिमफालिमवणिय समयूणावलियमेत्तजहण्णगोवुच्छाओ धरिय ट्ठिदजीवो सरिसो। तं मोत्तूण समयूणावलियमेत्तगोवुच्छाओ धरिय ट्ठिदं घेत्तूण तत्थ परमाणुत्तर-कमेण समयूणावलियमेत्तगोवुच्छविसेसा विज्झादभागहारेणागददव्वेणूणएगसमय-मोकड्डिदूण विणासिददव्वं च वड्ढावेदव्वं। एवं वड्ढिदेणेदेण खविदकम्मंसियलक्खणेणा-गंतूण समयूणवेछावट्ठीओ भमिय दीहुव्वेल्लणकालेण सम्मामिच्छत्तमुव्वेल्लिय समयूणावलियमेत्तगोवुच्छाओ धरिय ट्ठिदो सरिसो। संपहि एदस्सुवरि परमाणुत्तरकमेण समयूणावलियमेत्तगोवुच्छविसेसा विज्झादसंकमेणागददव्वेणूणएगसमयमोकड्डिय विणासिददव्वं च वड्ढावेदव्वं। एवं वड्ढिदेण अण्णेगो दुसमयूणवेछावट्ठीओ भमिय

विकल्पको कहते हैं जो इस प्रकार है—क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर, असंज्ञी पंचेन्द्रियोंमें उत्पन्न होकर फिर देवोंमें उत्पन्न होकर फिर उपशम सम्यक्त्वको ग्रहणकर वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ। फिर दो छयासठ सागर कालतक भ्रमणकर मिथ्यात्वमें गया। फिर वहां उत्कृष्ट उद्वेलना कालके द्वारा उद्वेलना करके दो समय स्थितिवाले एक निषेकको प्राप्तकर उत्तरोत्तर एक एक परमाणुके अधिक क्रमसे तब तक बढ़ाना चाहिये जबतक दो समयकम आवलि-प्रमाण कुछ अधिक जघन्य गोपुच्छाएं वृद्धिको प्राप्त हों। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके साथ एक अन्य जीव समान है जो क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर सम्यक्त्वको प्राप्त हो और दो छयासठ सागर काल तक भ्रमणकर मिथ्यात्वमें गया। फिर उत्कृष्ट उद्वेलना कालके द्वारा उद्वेलना करके सम्यग्मिथ्यात्वकी अन्तिम फालिके सिवा एक समयकम आवलिप्रमाण गोपुच्छाओंको धारण कर स्थित है। अब इस जीवको छोड़ दो और एक समयकम आवलि-प्रमाण गोपुच्छाओंको धारणकर स्थित हुए जीवको लो। फिर उसके एक परमाणु अधिकके क्रमसे एक समयकम आवलिप्रमाण गोपुच्छविशेषोंको और विध्यात भागहारके द्वारा प्राप्त हुए द्रव्यसे कम एक समयमें अपकर्षणके द्वारा विनाशको प्राप्त हुए द्रव्यको बढ़ाओ। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए इस जीवके साथ एक अन्य जीव समान है जो क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर एक समयकम दो छयासठ सागर कालतक भ्रमणकर और उत्कृष्ट उद्वेलना काल द्वारा सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलनाकर एक समयकम आवलिप्रमाण गोपुच्छाओंको धारण कर स्थित है। अब इस जीवके द्रव्यके ऊपर एक परमाणु अधिकके क्रमसे एक समयकम आवलिप्रमाण गोपुच्छविशेषोंको और विध्यातसंक्रमण द्वारा प्राप्त हुए द्रव्यसे न्यून एक समयमें अपकर्षण द्वारा विनाशको प्राप्त हुए द्रव्यको बढ़ाना चाहिये। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके साथ एक अन्य जीव समान है जो दो समयकम दो छयासठ सागर काल

उव्वेल्लिय ट्ठिदो सरिसो। एदेण कमेणोदारेदव्वं जाव अंतोमुहुत्तूणविदियछावट्ठी ओदिण्णा त्ति।

§ २२१. संपहि एत्तो हेट्ठा दोहि पयारेहि ओयरणं संभवदि। तत्थ ताव समयूणादिकमेणोदारणोवाओ उच्चदे। तं जहा—एदस्स दव्वस्सुवरि परमाणुत्तरकमेण समयूणावलियमेत्तगोवुच्छविसेसा विज्झादसंकमेणागदव्वेणूणमेगसमयमोकड्डिय विणासिददव्वं च वड्ढावेदव्वं। एदेण पढमछावट्ठिसम्मत्तकालचरिमसमए सम्मामिच्छत्तं पडिवज्जिय अवट्ठिदं सम्मामिच्छत्तद्धमच्छिय सम्मामिच्छत्तचरिमसमए सम्मत्तं घेत्तूण तेण सह जहण्णंतोमुहुत्तमच्छिय पुणो मिच्छत्तं गंतूण दीहुव्वेल्लणकालेणुव्वेल्लिय समयूणावलियमेत्तगोवुच्छं ओदरिय ट्ठिदो सरिसो।

§ २२२. एवं दुसमयूणादिकमेण ओदारेदव्वं जाव सम्मामिच्छत्तपढमसमओ त्ति। एवमोदारिय ट्ठिदेण अण्णेगो पढमछावट्ठीए सम्मामिच्छत्तं पडिवज्जमाणट्ठाणे सम्मामिच्छत्तमपडिवज्जिय मिच्छत्तं गंतूणुव्वेल्लिय ट्ठिदो सरिसो। एत्तो प्पहुडि समयूणादिकमेणोदारिज्जमाणे जहा विदियछावट्ठी ओदारिदा तहा ओदारेदव्वं।

§ २२३. संपहि एगवारेणोदारिज्जमाणे विदियछावट्ठिपढमसमए सम्मत्तं घेत्तूण तत्थ जहण्णमंतोमुहुत्तमच्छिय मिच्छत्तं गंतूणुव्वेल्लिय समयूणावलियमेत्तगोवुच्छाण-

---

तक भ्रमण कर और उद्वेलना कर स्थित है। इस क्रमसे अन्तर्मुहूर्त कम दूसरा छयासठ सागर काल व्यतीत होनेतक उतारते जाना चाहिये।

§ २२१. अब इससे नीचे दोनों प्रकारसे उतारना सम्भव है। उसमेंसे पहले एक समय कम आदिके क्रमसे उतारनेकी विधि कहते हैं। वह इस प्रकार है—इस द्रव्यके ऊपर एक परमाणु अधिकके क्रमसे एक समयकम आवलिप्रमाण गोपुच्छाविशेषोंको और विध्यात संक्रमणके द्वारा प्राप्त हुए द्रव्यसे न्यून एक समयमें अपकर्षण द्वारा नाश होनेवाले द्रव्यको बढ़ाना चाहिये। इस जीवके साथ एक अन्य जीव समान है जो प्रथम छयासठ सागर कालके भीतर वेदकसम्यक्त्वके कालके अन्तिम समयमें सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त होकर और सम्यग्मिथ्यात्वके अवस्थित काल तक उसके साथ रहकर फिर सम्यग्मिथ्यात्वके अन्तिम समयमें सम्यक्त्वको ग्रहण कर उसके साथ जघन्य अन्तर्मुहूर्त काल तक रहकर फिर मिथ्यात्वमें जाकर उत्कृष्ट उद्वेलना कालके द्वारा उद्वेलना करके एक समय कम आवलिप्रमाण गोपुच्छा उतरकर स्थित है।

§ २२२. इस प्रकार दो समय कम आदिके क्रमसे सम्यग्मिथ्यात्वके प्रथम समय तक उतारना चाहिये। इस प्रकार उतार कर स्थित हुए जीवके साथ अन्य एक जीव समान है जो प्रथम छयासठ सागर कालके भीतर सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त करनेके स्थानमें सम्यग्मिथ्यावको प्राप्त हुए बिना मिथ्यात्वमें जाकर और उद्वेलना करके स्थित है। इससे आगे एक समयकम आदिके क्रमसे उतारने पर जिस प्रकार दूसरे छयासठ सागर कालको उतरवाया है उसी प्रकार उतरवाना चाहिये।

§ २२३. अब एक साथ उतारने पर दूसरे छयासठ सागर कालके प्रथम समयमें सम्यक्त्वको ग्रहण करके और वहाँ जघन्य अन्तर्मुहूर्त काल तक रहकर फिर मिथ्यात्वमें जाकर

मुवरि समयूणावलियाए गुणिदअंतोमुहुत्तमेत्तगोवुच्छविसेसा तेत्तियमेत्तकालमोकड्डणाए विणासिददव्वं परपयडिसंकमेण गददव्वं च मिच्छत्तादो जहण्णसम्मत्तद्धामेत्तकाल-मप्पणो ढुक्कमाणविज्झादसंकमे दव्वेणूणं वड्ढावेदव्वं । एवं वड्ढिदूण ट्ठिदेण अवरेगो पढमछावट्ठिम्मि सम्मादिट्ठिचरिमसमए मिच्छत्तं गंतूणुव्वेल्लिय ट्ठिदो सरिसो । संपहि एदम्मि दव्वे परमाणुत्तरक्कमेण समयूणावलियमेत्तगोवुच्छविसेसा मिच्छत्तादो सम्मामिच्छत्तस्सागददव्वेणूणओकड्डणाए विणासिददव्वं च सादिरेयं वड्ढावेदव्वं । एवं वड्ढिदेण अण्णेगो समयूणपढमछावट्ठिं भमिय मिच्छत्तं गंतूणुव्वेल्लिय ट्ठिदो सरिसो । एवमोदारेदव्वं जाव अंतोमुहुत्तूणपढमछावट्ठि त्ति ।

§ २२४. संपहि एदस्सुवरि परमाणुत्तरकमेण वड्ढावेदव्वं जाव समयूणावलियाए गुणिदअंतोमुहुत्तमेत्तगोवुच्छविसेसा सविसेसा वड्ढिदा त्ति । एवं वड्ढिदूणच्छिदेण अवरेगो खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण उवसमसम्मत्तं पडिवज्जिय वेदगसम्मत्तं पडिवज्जमाणपढमसमए मिच्छत्तं गंतूणुव्वेल्लिय ट्ठिदो सरिसो। संपहि एदस्सुवरि परमाणुत्तरकमेण समऊणावलियमेत्तगोवुच्छविसेसा एगसमयमुव्वेल्लणसंकमेण गददव्वं च वड्ढावेदव्वं । एवं वड्ढिदूण ट्ठिदेण अवरेगो खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण

और उद्वेलना करके एक समय कम आवलिप्रमाण गोपुच्छाओंके ऊपर एक समयकम आवलिसे गुणित अन्तर्मुहूर्तप्रमाण गोपुच्छाविशेषोंको, उतने ही कालमें अपकर्षणके द्वारा विनाशको प्राप्त हुए द्रव्यको और सम्यक्त्वके जघन्य कालके भीतर विध्यातसंक्रमणके द्वारा मिथ्यात्वमेंसे अपनेमें प्राप्त होनेवाले द्रव्यसे न्यून संक्रमणके द्वारा पर प्रकृतिको प्राप्त होनेवाले द्रव्यको बढ़ाते जाना चाहिए। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके साथ प्रथम छयासठ सागरके भीतर, सम्यग्दृष्टिके अन्तिम समयमें मिथ्यात्वमें जाकर और उद्वेलना करके स्थित हुआ जीव समान है। अब इस द्रव्यमें एक-एक परमाणु अधिकके क्रमसे एक समयकम आवलिप्रमाण गोपुच्छाविशेषोंको और मिथ्यात्वके द्रव्यमेंसे संक्रमण द्वारा जो द्रव्य सम्य-ग्मिथ्यात्वको मिला है उससे कम अपकर्षणद्वारा विनाशको प्राप्त हुए साधिक द्रव्यको बढ़ाते जाना चाहिये। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके साथ एक समय कम प्रथम छयासठ सागर काल तक भ्रमणकर फिर मिथ्यात्वमें जाकर उद्वेलना करके स्थित हुआ जीव समान है। इस प्रकार अन्तर्मुहूर्तकम प्रथम छयासठ सागर काल समाप्त होने तक उतारना चाहिये।

§ २२४. अब इसके ऊपर एक परमाणु अधिकके क्रमसे एक समय कम आवलिसे गुणित अन्तर्मुहूर्तसे कुछ अधिक गोपुच्छाविशेष प्राप्त होनेतक बढ़ाते जाना चाहिये। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके साथ क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर उपशमसम्यक्त्वको प्राप्तकर वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त होनेके पहले समयमें वेदक सम्यक्त्वको प्राप्त किये विना मिथ्यात्वमें जाकर और उद्वेलनाकर स्थित हुआ जीव समान है। अब इसके ऊपर एक-एक परमाणु अधिकके क्रमसे एक समयकम आवलिप्रमाण गोपुच्छाविशेषोंको और एक समयमें उद्वेलना संक्रमणके द्वारा पर प्रकृतिको प्राप्त हुए द्रव्यको बढ़ाते जाना चाहिये। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके साथ क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर वेदक सम्यक्त्वको प्राप्त होनेके पहले ही समयमें उसे प्राप्त किये बिना मिथ्यात्वमें जाकर एक समय कम उत्कृष्ट उद्वेलना

वेदगसम्मत्तं पडिवज्जमाणपढमसमए मिच्छत्तं गंतूण समऊणुव्वेल्लणकालेणुव्वेल्लिय ट्ठिदो सरिसो। एवमुव्वेल्लणकालो समयूण-दुसमयूणादिकमेण ओदारेदव्वो जाव सव्वजहण्णत्तं पत्तो त्ति।

§ २२५. पुणो समयूणावलियमेत्तगोवुच्छाओ चत्तारि पुरिसे अस्सिदूण परमाणुत्तर-कमेण वड्ढावेदव्वाओ जाव उक्कस्सत्तं पत्ताओ त्ति। णवरि पयडिगोवुच्छाओ परमाणुत्तरकमेण वड्ढंति[1] ण विगिदिगोवुच्छाओ, ट्ठिदिखंडए णिवदमाणे अक्कमेण तत्थ अणंताणं परमाणूणं विगिदिगोवुच्छायारेण णिवादुवलंभादो। तेण विगिदिगोवुच्छाए उक्कड्ढं कीरमाणाए पयडिगोवुच्छमस्सिदूण अणंताणि णिरंतरट्ठाणाणि उप्पादिय पुणो एगवारेण विगिदिगोवुच्छा वड्ढावेदव्वा। तं जहा—खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण उवसमसम्मत्तं पडिवज्जिय तस्सेव चरिमसमए मिच्छत्तं गंतूण सव्वजहण्णुव्वेल्लण-कालेणुव्वेल्लिय समयूणावलियमेत्तजहण्णगोवुच्छाणमुवरि परमाणुत्तरं कादूणच्छिदे अण्णमपुणरुत्तट्ठाणं होदि। एवं पयडिगोवुच्छाणमुवरि णिरंतरट्ठाणाणि उप्पादेदव्वाणि जाव पढमुव्वेल्लणकंडए णिवदमाणे समयूणावलियमेत्तगोवुच्छासु पदिददव्वमेत्तट्ठाणाणि उप्पण्णाणि त्ति। एवं वड्ढिदूण ट्ठिदेण[2] अण्णेगो खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण उवसमसम्मत्तं पडिवज्जिय तच्चरिमसमए मिच्छत्तं गंतूण पुणो अंतोमुहुत्तेण पढमुव्वेल्लण-कंडयं पयडिगोवुच्छाए उवरि वड्ढाविदपरमाणुपुंजेणब्भहियं घादिय पुणो विदियादि-

---

कालके द्वारा उद्वेलना करके स्थित हुआ जीव समान है। इस प्रकार एक समय कम दो समय कम आदिके क्रमसे सबसे जघन्य उद्वेलना कालके प्राप्त होने तक उद्वेलना कालको उतारते जाना चाहिये।

§ २२५. फिर एक समय कम आवलिप्रमाण गोपुच्छाओंको चार पुरुषोंकी अपेक्षा एक-एक परमाणु अधिकके क्रमसे उत्कृष्ट द्रव्यके प्राप्त होने तक बढाते जाना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि प्रकृतिगोपुछाएं ही एक-एक परमाणु अधिकके क्रमसे बढ़ती हैं विकृति-गोपुच्छाएं नहीं, क्योंकि स्थितिकाण्डकका पतन होने पर एक साथ ही वहां अनन्त परमाणुओंका विकृतिगोपुच्छारूपसे पतन पाया जाता है, इसलिये विकृतिगोपुच्छाके उत्कृष्ट करने पर प्रकृति गोपुच्छाकी अपेक्षा अनन्त निरन्तर स्थानोंको उत्पन्न करके फिर एक साथ विकृति-गोपुच्छाको बढ़ाना चाहिये। यथा क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर और उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त होकर फिर उसीके अन्तिम समयमें मिथ्यात्वमें जाकर सबसे जघन्य उद्वेलना कालके द्वारा उद्वेलना करके एक समय कम आवलिप्रमाण जघन्य गोपुच्छाओंके ऊपर एक परमाणु अधिक कर स्थित होनेपर अन्य अपुनरुक्त स्थान होता है। इस प्रकार प्रकृतिगोपुच्छाओंके ऊपर, प्रथम उद्वेलनाकाण्डकके पतन होने पर एक समयकम आवालिप्रमाण गोपुच्छाओंमें पतित द्रव्यसे उत्पन्न हुए स्थानोंके प्राप्त होने तक निरन्तर स्थान उत्पन्न करना चाहिये। इसप्रकार बढ़ाकर स्थित हुए इस जीवके साथ अन्य एक जीव समान है जो क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हो उसके अन्तिम समयमें मिथ्यात्वमें जाकर फिर अन्तर्मुहूर्तमें प्रकृतिगोपुच्छाके ऊपर बढ़ाये गये परमाणुपुंजसे अधिक प्रथम उद्वेलनाकाण्डकका

---

१. ता०प्रतौ 'वड्ढिदं त्ति' इति पाठः। २. आ०प्रतौ 'वड्ढिदूणच्छिदेण' इति पाठः।

कंडयाणि पुव्वविहाणेण पत्तजहण्णभावाणि जहण्णुव्वेल्लणकालेण पादिय समयूणावलियमेत्तगोवुच्छाओ धरिय ट्ठिदो सरिसो। सव्वेसु कंडएसु जहण्णेसु संतेसु कथमेगं चेव कंडयमहियत्तमल्लियइ[1] ? ण, ओकड्डुक्कड्डुणवसेण णाणाकालपडिबद्धणाणाजीवेसु एवंविहवड्ढिं पडि विरोहाभावादो। अधवा पयडिगोवुच्छाए वड्ढाविदद्व्वमेत्तं सव्वेसुव्वेल्लणट्ठिदिखंडएसु वड्ढाविय विगिदिगोवुच्छसरूवेण करिय णिरंतरट्ठाणपरूवणा कायव्वा।

§ २२६. संपहि इमं घेत्तूण परमाणुत्तरकमेण[2] पगदिगोवुच्छा वड्ढावेदव्वा जाव विदियकंडएण संछुहमाणदव्वं वड्ढिदं ति। एवं वड्ढिदूण ट्ठिदेण अण्णेगो पुव्वविहाणेणागंतूण पढमविदियकंडयाणि उक्कट्ठाणि करिय घादिय अवसेसकंडयाणि जहण्णाणि चेव घादिय ट्ठिदो सरिसो। एवमेदेण बीजपदेण तदियादिकंडयाणि वड्ढावेदव्वाणि जाव दुचरिमकंडयं ति। चरिमकंडयदव्वं किण्ण वड्ढाविदं ? ण, तस्स मिच्छत्तसरूवेण गच्छंतस्स समयूणउदयावलियाए पदणाभावादो। एवं विगिदिगोवुच्छाओ उक्कस्साओ कादूण[3] पुणो समऊणावलियमेत्तपगदिगोवुच्छाओ परमाणुत्तरकमेण पंचवड्ढीहि

घातकर फिर प्रथमकाण्डकको छोड़कर द्वितीयादि उद्वेलना काण्डकको जघन्यपनेको प्राप्तकर जघन्य उद्वेलना कालके द्वारा पतन कर एक समय कम आवलिप्रमाण गोपुच्छाओंको धारण कर स्थित है।

शंका—सब काण्डकोंके जघन्य रहते हुए एक ही काण्डक अधिकपनेको क्यों प्राप्त होता है।

समाधान—नहीं, क्योंकि अपकर्षण-उत्कर्षणके वशसे नाना कालसम्बन्धी नाना जीवोंमें इस प्रकार वृद्धि माननेमें कोई विरोध नहीं आता।

अथवा प्रकृतिगोपुच्छामें बढ़ाये गये द्रव्यप्रमाण द्रव्यको सब उद्वेलना स्थितिकाण्डकोंमें बढ़ाकर और फिर उसे विकृतिगोपुच्छारूपसे करके निरन्तर स्थानोंका कथन करना चाहिये।

§ २२६. अब इस द्रव्यको लेकर एक-एक परमाणु अधिकके क्रमसे दूसरे स्थितिकाण्डकके द्वारा पतनको प्राप्त हुए द्रव्यके बढ़ने तक प्रकृतिगोपुच्छाको बढ़ाना चाहिये। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके साथ अन्य एक जीव समान है जो पूर्व विधिसे आकर प्रथम व दूसरे काण्डकको उत्कृष्ट कर व उनका घात कर अनन्तर शेष काण्डकोंको जघन्यरूपसे ही घात कर स्थित है। इस प्रकार इस बीज पदका अवलम्बन लेकर द्विचरिम काण्डक तक तीसरे आदि काण्डकको बढ़ाना चाहिये।

शंका—अन्तिम काण्डकके द्रव्यको क्यों नहीं बढ़ाया ?

समाधान—नहीं क्योंकि मिथ्यात्वरूपसे जानेवाले अन्तिमकाण्डकके द्रव्यका एक समय कम उदयावलिमें पतन नहीं होता।

इस प्रकार विकृतिगोपुच्छाओंको उत्कृष्ट करके फिर एक समय कम आवलिप्रमाण प्रकृतिगोपुच्छाओंको एक एक परमाणु अधिकके क्रमसे पांच वृद्धियोंके द्वारा अपने उत्कृष्ट द्रव्यके

---

१. आ०प्रतौ 'चेव फद्दयमहियत्तमल्लियइ' इति पाठः। २. ता० प्रतौ 'परमाणुत्तरादिक्कमेण' इति पाठः। ३. आ०प्रतौ 'गोपुच्छाओ कादूण इति पाठः।

वड्ढावेदव्वाओ जावप्पणो उक्कस्सदव्वं पत्ताओ त्ति। सत्तमपुढविणारगचरिमसमए मिच्छत्तदव्वमुक्कस्सं करिय तिरिक्खेसुववज्जिय पुणो देवेसुववज्जिदूणुवसमसम्मत्तं पडिवज्जिय मिच्छत्तं गंतूण सव्वजहण्णुव्वेल्लणकालेणुव्वेल्लिय समयूणावलियमेत्त-सव्वुक्कस्सपयडिविगिदिगोवुच्छाओ धरेदूण ट्ठिदं जाव पावदि ताव वड्ढिदो त्ति भावत्थो। एवंविहसमयूणावलियमेत्तुक्कस्सगोवुच्छाहिंतो खविदकम्मंसियलक्खणेणा-गंतूण वेछावट्ठीओ भमिय मिच्छत्तं गंतूण दीहुव्वेल्लणकालेणुव्वेल्लिय चरिमफालिं धरेदूण ट्ठिदस्स तप्फालिदव्वं सरिसं होदि। एदं कुदो णव्वदे? 'तदो पदेसुत्तरं दुपदेसुत्तरं णिरंतराणि ट्ठाणाणि उक्कस्सपदेससंतकम्मं' ति एदम्हादो सुत्तादो। दिवड्ढ-गुणहाणिगुणिदेगसमयपबद्धे अंतोमुहुत्तोवट्टिदोकड्डुक्कड्डणभागहारेण किंचूणचरिमगुणसंकम-भागहारगुणिदवेछावट्ठिअण्णोण्णब्भत्थरासिणा दीहुव्वेल्लणकालब्भंतरणाणागुणहाणि-सलागाणमण्णोण्णब्भत्थरासिणा च ओवट्टिदे चरिमफालिदव्वं होदि। समयूणा-वलियमेत्तुक्कस्सगोवुच्छाणं पुण जोगगुणगारमेत्तदिवड्ढगुणहाणिगुणिदेगसमयपबद्धे किंचूण-चरिमगुणसंकमभागहारेण जहण्णुव्वेल्लणकालब्भंतरणाणागुणहाणिसलागाणमण्णोण्ण-ब्भत्थरासिणा समयूणावलियाए अवहरिदचरिमुव्वेल्लणफालीए च ओवट्टिदे पमाणं

प्राप्त होने तक बढ़ाते जाना चाहिये। इस कथनका तात्पर्य यह है कि सातवीं पृथिवीके नारकीके अन्तिम समयमें मिथ्यात्वके द्रव्यको उत्कृष्ट करके तिर्यंचोंमें उत्पन्न हुआ। फिर देवोंमें उत्पन्न होकर और उपशम सम्यक्त्वको प्राप्त कर मिथ्यात्वमें गया। फिर सबसे जघन्य उद्वेलना कालके द्वारा उद्वेलना करके एक समय कम आवलिप्रमाण सर्वोत्कृष्ट प्रकृति और विकृतिगोपुच्छाओंको धारण करके स्थित हुए जीवको प्राप्त होने तक बढ़ाना चाहिये। इस प्रकार एक समय कम आवलिप्रमाण उत्कृष्ट गोपुच्छाओंके, क्षपित कर्मांशकी विधिसे आकर दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण कर और मिथ्यात्वमें जाकर उत्कृष्ट उद्वेलना कालके द्वारा उद्वेलना कर अन्तिम फालिको धारण कर स्थित हुए जीवके उस फालिका द्रव्य समान है।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है।

समाधान—'जघन्य द्रव्यके ऊपर एक प्रदेश अधिक दो प्रदेश अधिक इस प्रकार उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मके प्राप्त होने तक निरन्तर स्थान होते हैं।' इस सूत्रसे जाना जाता है।

डेढ़ गुणहानिसे गुणा किये गये एक समयपबद्धमें अन्तर्मुहूर्तसे भाजित अपकर्षण-उत्कर्षण भागहार, कुछ कम गुणसंक्रमभागहारसे गुणित दो छयासठ सागरकी अन्योन्या-भ्यस्तराशि और उत्कृष्ट उद्वेलना कालके भीतर प्राप्त हुई नानागुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्तराशि इन सब भागहारोंका भाग देने पर अन्तिम फालिका द्रव्य प्राप्त होता है। किन्तु योगके गुणकार प्रमाण डेढ़ गुणहानिसे गुणा किये गये एक समयप्रबद्धमें कुछ कम अन्तिम गुणसंक्रमभागहार, जघन्य उद्वेलना कालके भीतर प्राप्त हुई नाना गुणहानि शलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्तराशि और एक समय कम आवलिके द्वारा भाजित उद्वेलनाकी अन्तिम फालि इन सब भागहारोंका भाग देने पर एक समय कम आवलिप्रमाण

होदि। समयूणावलियमेत्तुक्कस्सगोवुच्छाणं गुणसंकमभागहारादो चरिमफालिगुणसंकम-भागहारो असंखेज्जगुणो, जहण्णदव्वहेदुत्तादो। जहण्णुव्वेल्लणकालण्णोण्णब्भत्थरासीदो चरिमफालीए उव्वेल्लणण्णोण्णब्भत्थरासी असंखेज्जगुणो, उक्कस्सुव्वेल्लणकालम्मि उप्पण्णत्तादो। चरिमफालीदो जोगगुणगारेण समयूणावलियाए ओकड्डुक्कड्डणभागहारेण च गुणिदवेछावट्ठिअण्णोण्णब्भत्थरासी असंखे०गुणो, बहुएहि गुणगारेहि गुणिदत्तादो। तेण चरिमफालिदव्वेण असंखेज्जगुणहीणेण होदव्वं। तदो ण दोण्हं दव्वाणं सरिसत्तमिदि ? तोक्खहि समयूणावलियमेत्तगोवुच्छाणमजहण्णाणुक्कस्सदव्वेण चरिमफालिदव्वं सरिसं ति घेत्तव्वं।

§ २२७. संपहि इमं चरिमफालिदव्वं परमाणुत्तरादिकमेण वड्ढावेदव्वं जाव एगगोवुच्छदव्वं विज्झादसंकमेणागददव्वेणूणं वड्ढिदं ति। एवं वड्ढिदूण ट्ठिदेण अण्णेगो समयूणवेछावट्ठीओ भमिय दीहुव्वेल्लणकालेणुव्वेल्लिय चरिमफालिं धरेदूण ट्ठिदो सरिसो। एवमणेगगोवुच्छदव्वं विज्झादसंकमेणागददव्वेणूणं वड्ढाविय दुसमयूण-तिसमयूणादिकमेण ओदारेदव्वं जाव अंतोमुहुत्तूणं विदियछावट्ठि त्ति। संपहि विदियछावट्ठीए अंतोमुहुत्तस्स चरिमसमए ठविय समऊणादिकमेण ओदारिज्जमाणे

उत्कृष्ट गोपुच्छाओंका प्रमाण होता है।

शंका—एक सयय कम आवलिप्रमाण उत्कृष्ट गोपुच्छाओंके गुणसंक्रम भागहारसे अन्तिम फालिका गुणसंक्रम भागहार असंख्यातगुणा है, क्योंकि यह जघन्य द्रव्यका कारण है। जघन्य उद्वेलना कालकी अन्योन्याभ्यस्त राशिसे अन्तिम फालिकी उद्वेलनाकालकी अन्योन्याभ्यस्तराशि असंख्यातगुणी है, क्योंकि यह उत्कृष्ट उद्वेलना कालमें उत्पन्न हुई है। तथा अन्तिम फालिसे योगगुणकारके द्वारा और एक समय कम आवलिके भीतर प्राप्त अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारके द्वारा गुणा की गई दो छ्यासठ सागरकी अन्योन्याभ्यस्त राशि असंख्यातगुणी है, क्योंकि यह राशि बहुतसे गुणकारोंसे गुणा करके उत्पन्न हुई है, इसलिये अन्तिम फालिका द्रव्य असंख्यातगुणा हीन होना चाहिये, इसलिये दोनों द्रव्य समान हैं यह बात नहीं बनती ?

समाधान—यदि ऐसा है तो एक समय कम आवलिप्रमाण गोपुच्छाओंके अजघन्यानुत्कृष्टके साथ अन्तिम फालिका द्रव्य समान है, ऐसा ग्रहण करना चाहिये।

§ २२७. अब इस अन्तिम फालिके द्रव्यको एक एक परमाणु अधिकके क्रमसे विध्यात संक्रमणके द्वारा प्राप्त हुए द्रव्यसे न्यून एक गोपुच्छाप्रमाण द्रव्यके बढ़ने तक बढ़ाते जाना चाहिये। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके साथ एक समय कम दो छ्यासठ सागर काल तक भ्रमणकर फिर उत्कृष्ट उद्वेलना कालके द्वारा उद्वेलना कर अन्तिम फालिको धारण करके स्थित हुआ एक अन्य जीव समान है। इस प्रकार विध्यातसंक्रमणसे आये हुए द्रव्यसे कम एक-एक गोपुच्छके द्रव्यको बढ़ाकर दो समय कम और तीन समय कम आदिके क्रमसे अन्तर्मुहूर्त कम दूसरा छ्यासठ सागर कालको उतारना चाहिये। अब दूसरे छ्यासठ सागरके पहले अन्तर्मुहूर्तके अन्तिम समयमें ठहराकर एक समय कम आदिके क्रमसे उतारने

पुव्वं व ओदारेदव्वं, विसेसाभावादो। णवरि एगगोवुच्छदव्वं विज्झादसंकमेणागददव्वेणणं सव्वत्थ वड्ढावेदव्वं। एगवारेण ओदारिज्जमाणे वि णत्थि विसेसो। णवरि एगवारेण एत्थ अंतोमुहुत्तमेत्तगोवुच्छाओ अंतोमुहुत्तकालम्मि विज्झादसंकमेणागददव्वेणूणाओ वड्ढावेदव्वाओ। एत्तो प्पहुडि समयूणादिकमेण ताव ओदारेदव्वं जाव अंतोमुहुत्तूणपढमछावट्ठिमोदिण्णो त्ति। पुणो तत्थ ट्ठविय एगगोवुच्छदव्वमुव्वेल्लणसंकमण परपयडीए संकंतदव्वं च वड्ढाविय समयूण-दुसमयूणादिकमेण उव्वेल्लणकालो वि ओदारेदव्वो जाव सव्वजहण्णुव्वेल्लणकालो चेट्ठिदो त्ति। पुणो तत्थ एगवारेण अंतोमुहुत्तमेत्तगोवुच्छाओ तत्थ विज्झादसंकमेणागददव्वेणूणाओ वड्ढावेदव्वाओ। एवं वड्ढिदूण ट्ठिदेण अण्णेगो खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण देवेसुप्पज्जिय उवसमसम्मत्तं पडिवज्जिय मिच्छत्तं गंतूण सव्वजहण्णुव्वेल्लणकालेण सम्मामिच्छत्तमुव्वेल्लिय तच्चरिमफालिं धरेदूण ट्ठिदो सरिसो।

§ २२८. संपहि एदेण दव्वेण जं सरिसं दंसणमोहणीयक्खवगस्स सम्मामिच्छत्तदव्वं घेत्तूण तं कालपरिहाणिं कस्सामो। को दंसणमोहक्खवगो एदेण सरिसो? जो खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण सम्मत्तं पडिवज्जिय पढमछावट्ठीए गुणसंकमभागहारस्स-द्धच्छेदणयमेत्ताओ सव्वजहण्णुव्वेल्लणकालस्स गुणहाणिसलागमेत्ताओ च गुणहाणीओ

पर पहलेके समान उतारना चाहिये, क्योंकि इससे उसमें कोई विशेषता नहीं है। किन्तु इतनी विशेषता है कि सर्वत्र विध्यातसंक्रमणसे आये हुए द्रव्यसे कम एक गोपुच्छप्रमाण द्रव्यको बढ़ाना चाहिये। किन्तु एक साथ उतारा जाय तो भी कोई विशेषता नहीं है। किन्तु इतनी विशेषता है कि यहां एक साथ अन्तर्मुहूर्त कालमें विध्यातसंक्रमणके द्वारा आये हुए द्रव्यसे कम अन्तमुहूर्तप्रमाण गोपुच्छाओंको बढ़ाना चाहिये। फिर यहांसे लेकर अन्तर्मुहूर्तकम प्रथम छयासठ सागर काल उतरने तक उतारते जाना चाहिये। फिर वहां ठहराकर एक गोपुच्छप्रमाण द्रव्यको और उद्वेलना संक्रमणके द्वारा अन्य प्रकृतिमें संक्रान्त हुए द्रव्यको बढ़ाकर एक समय कम और दो समय कम आदि क्रमसे उद्वेलना कालको भी सबसे जघन्य उद्वेलना कालके प्राप्त होनेतक उतारते जाना चहिए। फिर वहां पर विध्यातसंक्रमणके द्वारा आये हुए द्रव्यसे कम अन्तर्मुहूर्तप्रमाण गोपुच्छाओंको बढ़ाना चाहिये। इसप्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके समान एक अन्य जीव है जो क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर और देवोंमें उत्पन्न होकर उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ। अनन्तर मिथ्यात्वमें जाकर सबसे जघन्य उद्वेलनाकालके द्वारा सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलनाकर उसकी अन्तिम फालिको धारण करके स्थित है।

§ २२८. अब इस द्रव्यके साथ दर्शनमोहनीयके क्षपकके सम्यग्मिथ्यात्वका जो द्रव्य समान है उसकी अपेक्षा कालकी हानिका कथन करते हैं—

शंका—दर्शनमोहनीयका क्षपक कौनसा जीव इसके समान है ?

समाधान—जो क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर और सम्यक्त्वको प्राप्त होकर प्रथम छयासठ सागर कालके भीतर गुणसंक्रम भागहारके अर्धच्छेदप्रमाण और सबसे जघन्य उद्वेलना कालकी गुणहानिशलाकाप्रमाण गुणहानियोंको बिताकर फिर दर्शनमोहनीयकी

गंतूण दंसणमोहणीयक्खवणमाढविय मिच्छत्तं सम्मामिच्छत्तम्मि संछुहिय ट्ठिदो सरिसो, दिवड्ढगुणहाणिगुणिदेगेइंदियसमयपबद्धे गुणसंकमभागहारेण सव्वजहण्णुव्वेल्लण-कालब्भंतरणाणागुणहाणिसलागाणमण्णोण्णब्भत्थरासिणा च ओवट्टिदे दोण्हं दव्वाणं पमाणागमणुवलंभादो। संपहि इमं दंसणमोहक्खवगदव्वं घेत्तूण परमाणुत्तरादिकमेण अणंतभागवड्ढि-असंखेज्जभागवड्ढीहि वड्ढावेदव्वं जाव एगगोवुच्छमेत्तमेगसमएण विज्झाद-संकमेणागददव्वेणूणं वड्ढिदं ति। एदेण खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण पढमछावट्ठि-कालब्भंतरे पुव्विल्लं कालं समयूणं भमिय मिच्छत्तं सम्मामिच्छत्तम्मि पक्खिविय ट्ठिदो सरिसो। संपहि इमं घेत्तूण विज्झादसंकमेणागददव्वेणूणएगेगगोवुच्छमेत्तं वड्ढाविय सरिसं कादूण समयूणादिकमेणोदारेदव्वं जाव गुणसंकमच्छेदणयमेत्ताओ उव्वेल्लण-णाणागुणहाणिसलागमेत्ताओ च गुणहाणीओ ओदारिदूण ट्ठिदो त्ति। एदेण खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण मणुस्सेसुववज्जिय गब्भादिअट्ठवस्साणि अंतोमुहुत्त-ब्भहियाणि गमिय दंसणमोहक्खवणमाढविय मिच्छत्तं सम्मामिच्छत्तम्मि संछुहिय ट्ठिदो सरिसो। संपहि एदं दव्वं पंचवड्ढीहि चत्तारि पुरिसे अस्सिदूण वड्ढावेदव्वं जाव सम्मामिच्छत्तस्स ओघुक्कस्सदव्वं जादं ति। एवं खविदकम्मंसियमस्सिदूण कालपरिहाणीए ट्ठाणपरूवणा कदा।

क्षपणाका आरम्भ कर मिथ्यात्वको सम्यग्मिथ्यात्वमें क्षेपण कर स्थित है, क्योंकि डेढ़ गुणहानिसे गुणा किये गये एकेन्द्रियोंके एक समयप्रबद्धमें गुणसंक्रम भागहारका और सबसे जघन्य उद्वेलनाकालके भीतर प्राप्त हुई नाना गुणहानिशलाकाओंको अन्योन्याभ्यस्त राशिका भाग देने पर दोनों द्रव्योंका प्रमाण प्राप्त होता है। अब दर्शनमोहनीयके क्षपकके इस द्रव्यके ऊपर एक-एक परमाणु अधिकके क्रमसे अनन्तभागवृद्धि और असंख्यातभागवृद्धिके द्वारा एक समयमें विध्यातसंक्रमणके द्वारा आये हुए द्रव्यसे कम एक गोपुच्छप्रमाण द्रव्यके बढ़ने तक बढ़ाते जाना चाहिये। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए इस जीवके समान एक अन्य जीव है जो क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर और प्रथम छयासठ सागर कालके भीतर एक समय कम पूर्वोक्त कालतक भ्रमण करके और मिथ्यात्वके द्रव्यको सम्यग्मिथ्यात्वमें निक्षिप्त करके स्थित है। अब इस द्रव्यके ऊपर विध्यातसंक्रमण द्वारा आये हुए द्रव्यसे कम एक गोपुच्छाप्रमाण द्रव्यको बढ़ाकर और समान करके एक समय कम आदि क्रमसे तब तक उतारना चाहिये जब तक गुणसंक्रमके अर्धच्छेदप्रमाण और उद्वेलनाकी नाना गुणहानिशलाकाप्रमाण गुणहानियोंको उतार कर स्थित होवे। इस प्रकार उतार कर स्थित हुए इस जीवके समान एक अन्य जीव है जो क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर और मनुष्योंमें उत्पन्न होकर गर्भसे अन्तर्मुहूर्त अधिक आठ वर्ष कालको बिताकर दर्शनमोहनीयकी क्षपणाका प्रारम्भ करके मिथ्यात्वको सम्यग्मिथ्यात्वमें निक्षिप्त करके स्थित है। अब इस द्रव्यको पांच वृद्धियोंके द्वारा चार पुरुषोंका आश्रय लेकर सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट द्रव्यके प्राप्त होने तक बढ़ाते जाना चाहिये। इस प्रकार क्षपितकर्मांशकी अपेक्षा कालकी हानि द्वारा स्थानोंका कथन किया।

§ २२९. संपहि तस्सेव सम्मामिच्छत्तस्स गुणिदकम्मंसियमस्सिदूण कालपरिहाणीए ट्ठाणपरूवणं कस्सामो। तं जहा—खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण सम्मत्तं पडिवज्जिय वेछावट्ठीओ भमिय मिच्छत्तं गंतूण दीहुव्वेल्लणकालेणुव्वेल्लिय एगणिसेगं दुसमयकालट्ठिदियं धरिदे जहण्णदव्वं होदि। संपहि इमं दव्वं चत्तारि पुरिसे अस्सिदूण पंचहि वड्ढीहि वड्ढावेदव्वं जाव तप्पाओग्गुक्कस्सदव्वं जादं ति। सत्तमपुढविणेरइयचरिमसमए मिच्छत्तदव्वमुक्कस्सं करिय सम्मत्तं पडिवज्जिय वेछावट्ठीओ भमिय दीहुव्वेल्लणकालेण सम्मामिच्छत्तमुव्वेल्लिय एगणिसेगं दुसमयकालट्ठिदियं जाव पावदि ताव वड्ढिदं ति वुत्तं होदि। एवं वड्ढिदूण ट्ठिदेण अवरेगो सत्तमपुढवीए उक्कस्सदव्वं करेमाणो ओघुक्कस्सदव्वस्स किंचूणद्धमेत्तदव्वसंचयं करिय आगंतूण सम्मत्तं पडिवज्जिय वेछावट्ठीओ भमिय दीहुव्वेल्लणकालेणुव्वेल्लिय दोणिसेगे तिसमयकालट्ठिदिगे धरेदूण ट्ठिदो सरिसो।

§ २३० संपहि इमेण अप्पणो ऊणीकददव्वमेत्तं वड्ढिदेण अण्णेगो गुणिदघोलमाणो उक्कस्सदव्वस्स किंचूणदोतिभागमेत्तदव्वं संचयं करिय आगंतूण तिण्णिगोवुच्छाओ धरिय ट्ठिदो सरिसो। संपहि इमेण अप्पणो ऊणीकददव्वमेत्तं तीहि वड्ढीहि वड्ढिदेण किंचूणतिण्णिचदुब्भागमेत्तदव्वसंचयं करिय आगंतूण चत्तारि

---

§ २२९. अब उसी सम्यग्मिथ्यात्वका गुणितकर्मांशकी अपेक्षा कालकी हानिद्वारा स्थानोंका कथन करते हैं जो इस प्रकार है—क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर सम्यक्त्वको प्राप्त हो दो छ्यासठ सागर काल तक भ्रमण करके मिथ्यात्वको प्राप्त हो उत्कृष्ट उद्वेलनाकालके द्वारा उद्वेलना करके दो समयकी स्थितिवाले एक निषेकको धारण करनेवाले जीवके सम्यग्मिथ्यात्वका जघन्य द्रव्य होता है। अब इस द्रव्यको चार पुरुषोंका आश्रय लेकर पांच वृद्धियोंके के द्वारा तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट द्रव्यके प्राप्त होनेतक बढ़ाते जाना चाहिये। भाव यह है कि सातवीं पृथिवीके नारकीके अन्तिम समयमें मिथ्यात्वके द्रव्यको उत्कृष्ट करके फिर क्रमशः सम्यक्त्वको प्राप्त हो दो छ्यासठ सागर काल तक भ्रमण कर पुनः उत्कृष्ट उद्वेलना कालके द्वारा सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना करके दो समयकी स्थितिवाले एक निषेकके प्राप्त होने तक बढ़ाते जाना चाहिये। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके समान एक अन्य जीव है जो सातवीं पृथिवीमें उत्कृष्ट द्रव्यको करता हुआ ओघसे उत्कृष्ट द्रव्यके कुछ कम आधे द्रव्यका संचय करके आया और सम्यक्त्वको प्राप्त हो दो छ्यासठ सागर काल तक भ्रमण करता रहा। फिर उत्कृष्ट उद्वेलना काल द्वारा उद्वेलना करके तीन समयकी स्थितिवाले दो निषेकको धारण करके स्थित है।

§ २३०. अब अपने कम किये गये द्रव्यको बढ़ाकर स्थित हुए इस जीवके समान गुणित घोलमान योगवाला एक अन्य जीव है जो उत्कृष्ट द्रव्यसे कुछ कम दो बटे तीन भागप्रमाण द्रव्यका संचय करके आया और तीन गोपुच्छाओंको धारण करके स्थित है। अब अपने कम किये गये द्रव्यको तीन वृद्धियोंके द्वारा बढ़ाकर स्थित हुए इस जीवके समान एक अन्य जीव है जो कुछ कम तीन बटे चार भागप्रमाण द्रव्यका संचय करके

गोवुच्छाओ धरिय ट्ठिदो सरिसो । एवं किंचूणचदुपंचभागादिकमेण वड्ढाविय ओदारेदव्वं जाव रूवूणुक्कस्ससंखेज्जमेत्तगोवुच्छाओ धरिय ट्ठिदो त्ति । एदेण अण्णेगो उक्कस्ससंखेज्जेण उक्कस्सदव्वं खंडिय तत्थ सादिरेगेगखंडेण ऊणुक्कस्सदव्वसंचयं करिय आगंतूणुक्कस्स-संखेज्जमेत्तगोवुच्छाओ धरिय ट्ठिदो सरिसो। इमो परमाणुत्तरकमेण तीहि वड्ढीहि वड्ढावेदव्वो जावप्पणो उक्कस्सदव्वं पत्तो त्ति ।

§ २३१. संपहि एत्तो हेट्ठा ओदारिज्जमाणे दोहि वड्ढीहि वड्ढाविय ओदारेदव्वं जाव दुसमयूणावलियमेत्तगोवुच्छाओ धरिय ट्ठिदो त्ति । एदेण अवरेगो समयूणा-वलियाए उक्कस्सदव्वं खंडेदूण तत्थ सादिरेगेगखंडेणूणुक्कस्सदव्वसंचयं करियागंतूण समयूणावलियमेत्तगोवुच्छाओ धरिय ट्ठिदो सरिसो । संपहि इमम्मि अप्पणो ऊणीकददव्वे वड्ढाविदे समयूणावलियमेत्तगोवुच्छाओ उक्कस्साओ होंति । एदासिं सव्व-गोवुच्छाणं समऊणावलियमेत्ताणं कालपरिहाणीए कीरमाणाए जहा खविदकम्मंसियस्स कदा तहा पुध पुध कायव्वा । णवरि णेरइयचरिमसमए उक्कस्सं करेमाणो पयदेगेग-गोवुच्छाए विज्झादसंकमेणागच्छमाणसव्वेणूणेगगोवुच्छविसेसेणूणमुक्कस्सदव्वं करिय समयूणवेछावट्ठीओ हिंडावेयव्वो । दोण्हं गोवुच्छाणमोयारणकमो वि एसो चेव । णवरि विज्झादसंकमेणागच्छमाणदव्वेणूणगोवुच्छविसेसेहि पयदगोवुच्छाओ तत्थूणाओ करिय

आया और चार गोपुच्छाओंको धारण करके स्थित है। इस प्रकार एक कम उत्कृष्ट संख्यात प्रमाण गोपुच्छाओंको धारण करके स्थित हुए जीवके प्राप्त होने तक कुछ कम चार बटे पांच भाग आदिके क्रमसे बढ़ाना चाहिये। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए इस जीवके समान एक अन्य जीव है जो उत्कृष्ट द्रव्यके उत्कृष्ट संख्यात प्रमाण खण्ड करके उनमेंसे साधिक एक खण्डसे न्यून उत्कृष्ट द्रव्यका संचय करके आया और उत्कृष्ट संख्यातप्रमाण गोपुच्छाओंको धारण करके स्थित है। फिर इसे एक एक परमाणु अधिकके क्रमसे अपने उत्कृष्ट द्रव्यके प्राप्त होने तक बढ़ाते जाना चाहिये।

§ २३१. अब इससे नीचे उतारने पर दो समय कम एक आवलिप्रमाण गोपुच्छाओंको धारण कर स्थित हुए जीवके प्राप्त होने तक दो वृद्धियोंसे बढ़ाकर उतारना चाहिये। इस प्रकार प्राप्त हुए जीवके समान एक अन्य जीव है जो उत्कृष्ट द्रव्यके एक समय कम आवलिप्रमाण खण्ड करके उनमेंसे साधिक एक खण्डसे न्यून उत्कृष्ट द्रव्यका संचय करके आकर एक समय कम आवलिप्रमाण गोपुच्छाओंको धारण करके स्थित है। अब इसके अपने कम किये गये द्रव्यके बढ़ाने पर एक समय कम आवलिप्रमाण गोपुच्छाएं उत्कृष्ट होती हैं। एक समय कम आवलिप्रमाण इन सब गोपुच्छाओंकी कालकी हानि करने पर जिस प्रकार क्षपितकर्मांशकी की गई उसी प्रकार अलग अलग गुणितकर्मांशकी करनी चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि नारकीके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्त्वको करनेवालेको प्रकृत एक एक गोपुच्छामें विध्यातसंक्रमण द्वारा आनेवाले द्रव्यसे कम जो एक गोपुच्छा विशेष उससे न्यून द्रव्यको उत्कृष्ट करके एक समय कम दो छयासठ सागर काल तक घुमाना चाहिये। दो गोपुच्छाओंके उतारनेका क्रम भी यही है। किन्तु इतनी विशेषता

१. ता०प्रतौ 'दोण्णि णिसेगे' इति पाठः ।

आणेदव्वो । एवमेदेण बीजपदेण समयूणावलियमेत्तकालपरिहाणिपरिवाडीओ चिंतियाणेदव्वाओ । णवरि सव्वपच्छिमवियप्पे विज्झादसंकमेणागच्छमाणदव्वेणूण-समऊणावलियमेत्तगोवुच्छविसेसा ऊणा कायव्वा । संपहि इमाओ समऊणावलिय-मेत्तुक्कस्सगोवुच्छाओ खविदकम्मंसियचरिमफालीए सह सरिसाओ ण होंति, असंखेज्ज-गुणत्तादो । तेण चरिमफालिदव्वं सत्थाणे चेव वड्ढावेयव्वं जाव समयूणावलिय-मेत्तुक्कस्सगोवुच्छपमाणं पत्तं ति । पुणो एत्तो उवरि तिण्णि पुरिसे अस्सिदूण पंचहि वड्ढीहि वड्ढावेदव्वं जाव चरिमफालिदव्वमुक्कस्सं जादं ति ।

§ २३२ संपहि चरिमफालीए उक्कस्सदव्वमस्सिदूण कालपरिहाणीए ठाणपरूवणाए कीरमाणाए सोव्वेल्लणकालवेछावट्ठिसागरोवमाणं जहा खविदकम्मंसियम्मि परिहाणी कदा तहा एत्थ वि अव्वामोहेण कायव्वा । णवरि सम्मत्तकाले ऊणीकदे विज्झाद-संकमेणागददव्वेणूणएगगोवुच्छादव्वेणूणमुक्कस्सदव्वं करिय आणेदव्वो । उव्वेल्लण-काले ऊणीकदे उव्वेल्लणसंकमेण गच्छमाणदव्वेणब्भहियमेगगोवुच्छदव्वं तत्थूणं करिय णिक्कालेयव्वो । संपहि सत्तमपुढवीए मिच्छत्तुक्कस्सं करिया-गंतूण सम्मत्तं पडिवज्जिय पढमछावट्ठिकालब्भंतरे गुणसंकमच्छेदणयमेत्ताओ उव्वेल्लणणाणागुणहाणिसलागमेत्ताओ च गुणहाणीओ उवरि चढिय दंसणमोह-

---

है कि विध्यात संक्रमण द्वारा प्राप्त होनेवाले द्रव्यसे कम जो गोपुच्छविशेष उनसे वहां प्रकृत गोपुच्छाओंको कम करके लाना चाहिये । इस प्रकार इस बीज पद द्वारा एक समय कम आवलिप्रमाण कालकी हानिके क्रमको जानकर ले आना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि सबसे अन्तिम विकल्पमें विध्यात संक्रमण द्वारा आनेवाले द्रव्यसे कम एक समय कम आवलिप्रमाण गोपुच्छाविशेषोंको कम करना चाहिये । अब ये एक समयकम आवलिप्रमाण उत्कृष्ट गोपुच्छा क्षपितकर्मांशकी अन्तिम फालिके समान नहीं होते हैं, क्योंकि ये असंख्यातगुणे हैं, अतः अन्तिम फालिके द्रव्यको एक समय कम आवलिप्रमाण उत्कृष्ट गोपुच्छाओंके प्रमाणके प्राप्त होने तक स्वस्थानमें ही बढ़ाना चाहिये । फिर इससे ऊपर तीन पुरुषोंका आश्रय लेकर पांच वृद्धियोंके द्वारा अन्तिम फालिका द्रव्य उत्कृष्ट होने तक बढ़ाते जाना चाहिये ।

§ २३२. अब अन्तिम फालिके उत्कृष्ट द्रव्यका आश्रय लेकर कालकी हानिद्वारा स्थानोंका कथन करते हैं, अतः जिस प्रकार क्षपितकर्मांशके उद्वेलनाकाल और दो छयासठ सागर कालकी हानिका कथन कर आये उसी प्रकार व्यामोहसे रहित होकर यहां भी करना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वके कालके कम करने पर विध्यात-संक्रमणके द्वारा आये हुए द्रव्यसे कम जो एक गोपुच्छाका द्रव्य उससे कम उत्कृष्ट द्रव्य करके ले आना चाहिए । तथा उद्वेलनाकालके कम करने पर उद्वेलना संक्रमणके द्वारा पर प्रकृतिको प्राप्त होनेवाले द्रव्यसे अधिक जो एक गोपुच्छाका द्रव्य उसे वहाँ कम करके उद्वेलना कालको घटाना चाहिये । अब सातवीं पृथिवीमें मिथ्यात्वको उत्कृष्ट करके आया फिर सम्यक्त्वको प्राप्त कर प्रथम छयासठ सागर कालके भीतर गुणसंक्रमणके अर्धच्छेदप्रमाण और उद्वेलनाकी नाना गुणहानिशलाकाप्रमाण गुणहानियाँ ऊपर चढ़कर फिर दर्शन-

क्खवणमाढविय मिच्छत्तचरिमफालिं सम्मामिच्छत्तस्सुवरि पक्खिविय ट्ठिदो उव्वेल्लणाए उक्कस्सचरिमफालिं धरेदूण ट्ठिदेण सरिसो। एदम्मि खवगदव्वे ओदारिज्जमाणे जहा खविदकम्मंसियस्स समयूणादिकमेणोयारणं कदं तहा ओयारेदव्वं। एवमोदारिय ट्ठिदेण अवरेगो सत्तमपुढवीए मिच्छत्तमुक्कस्सं करियागंतूण तिरिक्खेसुव-वज्जिय पुणो मणुस्सेसुप्पज्जिदूण जोणिणिक्कमणजम्मणेण अट्ठवस्साणि गमिय सम्मत्तं घेत्तूण दंसणमोहक्खवणमाढविय मिच्छत्तचरिलफालिं सम्मामिच्छत्तस्सुवरि पक्खिविय ट्ठिदो सरिसो। एवं विदियपयारेण ट्ठाणपरूवणा कदा।

§ २३३. संपहि संतकम्ममस्सिदूण सम्मामिच्छत्तट्टाणपरूवणं कस्सामो। तं जहा—खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण सम्मत्तं पडिवज्जिय वेछावट्ठीओ भमिय दीहुव्वेल्लणकालेणुव्वेल्लिय एगणिसेगं दुसमयकालट्ठिदियं धरेदूण ट्ठिदम्मि सव्वजहण्ण-संतकम्मट्ठाणं। एदम्मि परमाणुत्तरादिकमेण वड्ढावेदव्वं जाव दुगुणं सादिरेगं जादं ति। एवं वड्ढिदूण ट्ठिदेण अण्णेगो खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण वेछावट्ठीओ भमिय दीहुव्वेल्लणकालेणुव्वेल्लिय दोणिसेगेहि तिसमयकालट्ठिदिए धरेदूण ट्ठिदो सरिसो। पुणो एदस्सुवरि परमाणुत्तरादिकमेण तिचरिमगोवुच्छमेत्तदव्वं वड्ढावेदव्वं। एवं वड्ढिदूण ट्ठिदेण अण्णेगो खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण सम्मत्तं पडिवज्जिय वेछावट्ठीओ भमिय दीहुव्वेल्लणकालेणुव्वेल्लिय तिण्णि गोवुच्छाओ चदुसमयकाल-

मोहनीयकी क्षपणाका आरम्भ कर मिथ्यात्वकी अन्तिम फालिको सम्यग्मिथ्यात्वके ऊपर प्रक्षिप्त करके स्थित हुआ जीव उद्वेलनाकी उत्कृष्ट अन्तिम फालिको धारणकर स्थित हुए जीवके समान है। क्षपकके इस द्रव्यको उतारने पर जिस प्रकार क्षपितकर्मांशको एक समयकम आदिके क्रमसे उतारा है उस प्रकार उतारना चाहिये। इस प्रकार उतारकर स्थित हुए जीवके समान एक अन्य जीव है जो सातवीं पृथिवीमें मिथ्यात्वको उत्कृष्ट करके आया और तिर्यचोंमें उत्पन्न हुआ। फिर मनुष्योंमें उत्पन्न होकर योनिसे निकलनेरूप जन्मसे आठ वर्ष विताकर सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ। फिर दर्शनमोहनीयकी क्षपणाका आरम्भ करके मिथ्यात्वकी अन्तिम फालिको सम्यग्मिथ्यात्वके ऊपर प्रक्षिप्त कर स्थित है। इस प्रकार दूसरे प्रकारसे स्थानोंका कथन किया।

§ २३३. अब सत्कर्मकी अपेक्षा सम्यग्मिथ्यात्वके स्थानोंका कथन करते हैं। वे इस प्रकार हैं—क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर और सम्यक्त्वको प्राप्त हो दो छ्यासठ सागर काल तक भ्रमण करके तथा उत्कृष्ट उद्वेलनाकाल द्वारा उद्वेलना करके दो समयकी स्थितिवाले एक निषेकको धारण करके स्थित हुए जीवके सबसे जघन्य सत्कर्मस्थान होता है। फिर साधिक दूने होने तक इसे एक-एक परमाणु अधिकके क्रमसे बढ़ावे। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके समान अन्य एक जीव है जो क्षतिकर्मांशकी विधिसे आकर और दो छ्यासठ सागर काल तक भ्रमण कर उत्कृष्ट उद्वेलना काल द्वारा उद्वेलनाकर तीन समयकी स्थितिवाले दो निषेकोंको धारण कर स्थित है, फिर इसके ऊपर एक-एक परमाणु अधिकके क्रमसे त्रिचरम गोपुच्छाप्रमाण द्रव्यको बढ़ाना चाहिये। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके समान एक अन्य जीव है जो क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर और सम्यकत्वको प्राप्त हो

ट्ठिदियाओ धरेदूण ट्ठिदो सरिसो। एवं ताव ओदारेदव्वं जाव समयूणावलियमेत्त-गोवुच्छाओ जादाओ त्ति।

§ २३४. संपहि एदम्हादो दव्वादो खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण सम्मत्तं पडिवज्जिय वेछावट्ठीओ भमिय दीहुव्वेल्लणकालेणुव्वेल्लिय चरिमफालिं धरेदूण ट्ठिदस्स दव्वमसंखेज्जगुणं। संपहि तं मोत्तूण इमं घेत्तूण परमाणुत्तरादिकमेण अणंत-भागवड्ढि असंखेज्जभागवड्ढीहि वड्ढावेदव्वं जाव तस्सेवप्पणो दुचरिमसमयम्मि गुणसंकमेण गदफालिदव्वमेत्तं त्थिउक्कसंकमेण गदगोवुच्छमेत्तं च वड्ढिदं ति। एवं वड्ढिदूण ट्ठिदेण अण्णेगो खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण सम्मत्तं पडिवज्जिय वेछावट्ठीओ भमिय दीहुव्वेल्लणकालेणुव्वेल्लिय दोहि फालीहि सह दोगोवुच्छाओ धरिय ट्ठिदो सरिसो। एवमोदारेदव्वं जाव चरिमट्ठिदिखंडयपढमसमओ त्ति।

§ २३५. संपहि चरिमट्ठिदिखंडयपढमसमयम्मि वड्ढाविज्जमाणे पढमसमयम्मि गदगुणसंकमफालिदव्वमेत्तं तम्मि चेव समए त्थिउक्कसंकमेण गदगोवुच्छदव्वमेत्तं च वड्ढावेयव्वं। एवं वड्ढिदूण ट्ठिदेण अवरेगो उव्वेल्लणसंकमचरिमसमयट्ठिदो सरिसो। संपहि एत्थ परमाणुत्तरकमेण उव्वेल्लणचरिमसमए उव्वेल्लणभागहारेण मिच्छत्तसरूवेण गददव्वमेत्तं तत्थेव त्थिउक्कसंकमेण गददव्वमेत्तं च वड्ढावेदव्वं। एवं वड्ढिदूण

दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण कर उत्कृष्ट उद्वेलना काल द्वारा उद्वेलनाकर चार समयकी स्थितिवाली तीन गोपुच्छाओंको धारणकर स्थित है। इस प्रकार एक समयकम एक आवलीप्रमाण गोपुच्छाओंके हो जाने तक उतारते जाना चाहिये।

§ २३४. अब इस द्रव्यसे, क्षपितकर्मांशकी विधि से आकर और सम्यक्त्वको प्राप्त हो दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण कर फिर उत्कृष्ट उद्वेलनाकाल द्वारा उद्वेलना कर अन्तिम फालिको धारण कर स्थित हुए जीवका द्रव्य असंख्यातगुणा है। अब उस जीवको छोड़कर इस जीवकी अपेक्षा एक-एक परमाणु अधिक आदिके क्रमसे अनन्तभागवृद्धि, असंख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागवृद्ध इन तीन वृद्धियों द्वारा द्रव्यको तबतक बढ़ाते जाना चाहिये जब तक उसीके अपने उपान्त्य समयमें गुणसंक्रमणके द्वारा पर प्रकृतिको प्राप्त हुई फालिका द्रव्य और स्तिवुकसंक्रमणके द्वारा पर प्रकृतिको प्राप्त हुआ द्रव्य बढ़ जाय। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीव के समान एक अन्य जीव है जो क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर और सम्यक्त्वको प्राप्त हो फिर दो छ्यासठ सागर कालतक भ्रमणकर और उत्कृष्ट उद्वेलनाकाल द्वारा उद्वेलना कर दो फालियोंके साथ दो गोपुच्छाओंको धारण कर स्थित है। इस प्रकार अन्तिम स्थितिकाण्डकके प्रथम समय तक उतारते जाना चाहिये।

§ २३५. अब अन्तिम स्थितिकाण्डकके प्रथम समयमें द्रव्यके बढ़ाने पर प्रथम समय में गुणसंक्रमण द्वारा अन्य प्रकृतिको प्राप्त हुआ फालिका द्रव्य और उसी समयमें स्तिवुक संक्रमणके द्वारा अन्य प्रकृतिको प्राप्त हुआ गोपुच्छाका द्रव्य बढ़ावे। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके समान एक अन्य जीव है जो उद्वेलना संक्रमणके अन्तिम समयमें स्थित है। अब इसके द्रव्यमें, एक एक परमाणु अधिकके क्रमसे उद्वेलनाके अन्तिम समयमें उद्वेलनाभागहारके द्वारा जितना द्रव्य मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ है उसे और उसी समय स्तिवुक संक्रमणके द्वारा जो द्रव्य पर प्रकृतिको प्राप्त हुआ है उसे बढ़ावे। इस प्रकार

ट्ठिदेण अण्णेगो उव्वेल्लणदुचरिमसमयट्ठिदो सरिसो। एवमोदारेदव्वं जावुव्वेल्लणपढमसमओ त्ति।

§ २३६. संपहि उव्वेल्लणपढमसमए ठाइदूण वड्ढाविज्जमाणे तम्मि चेव समए उव्वेल्लणाए गददव्वमेत्तं त्थिउक्कसंकमेण गददव्वमेत्तं च वड्ढावेदव्वं। एवं वड्ढिदूण ट्ठिदेण अण्णेगो अधापवत्तचरिमसमयट्ठिदो सरिसो। संपहि अधापवत्तचरिमसमए ठ्ठाइदूण वड्ढाविज्जमाणे अधापवत्तसंकमेण त्थिउक्कसंकमेण च गददव्वमेत्तं वड्ढावेदव्वं। एवं वड्ढिदेण अण्णेगो अधापवत्तदुचरिमसमयट्ठिदो सरिसो। एवमोदारेदव्वं जाव अधापवत्तपढमसमओ त्ति।

§ २३७. संपहि तत्थ वड्ढाविज्जमाणे अधापवत्तसंकमेण त्थिवुक्कसंकमेण च गददव्वमेत्तं वड्ढावेयव्वं। एवं वड्ढिदेण अवरेगो सम्मत्तचरिमसमयट्ठिदो सरिसो। संपहि एदम्मि चरिमसमयसम्मादिट्ठिम्मि वड्ढाविज्जमाणे विज्झादसंकमेण सम्मामिच्छत्तादो सम्मत्तं गच्छमाणदव्वेणूणं मिच्छत्तादो विज्झादसंकमेण सम्मामिच्छत्तं गच्छमाणं दव्वं त्थिउक्कसंकमेण सम्मत्तं गच्छमाणदव्वम्मि सोहिय सुद्धसेसमेत्तं वड्ढावेयव्वं। सम्मामिच्छत्तादो सम्मत्तं गच्छमाणदव्वं पेक्खिदूण मिच्छात्तादो सम्मामिच्छत्तं

बढ़ाकर स्थित हुए जीवके समान एक अन्य जीव है जो उद्वेलनाके उपान्त्य समयमें स्थित है। इस प्रकार उद्वेलनाके प्रथम समयके प्राप्त होने तक उतारते जाना चाहिये।

§ २३६. अब उद्वेलनाके प्रथम समयमें ठहराकर द्रव्यके बढ़ाने पर उसी समय जितना द्रव्य उद्वेलना द्वारा पर प्रकृतिको प्राप्त हुआ है और जितना द्रव्य स्तिवुक संक्रमण द्वारा पर प्रकृतिको प्राप्त हुआ है उतना द्रव्य एक एक परमाणु कर बढ़ावे। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके समान एक अन्य जीव है जो अधःप्रवृत्तके अन्तिम समयमें स्थित है। अब अधःप्रवृत्तके अन्तिम समयमें ठहराकर द्रव्यके बढ़ाने पर अधःप्रवृत्तसंक्रमणद्वारा और स्तिवुकसंक्रमणद्वारा जितना द्रव्य अन्य प्रकृतिमें प्राप्त हुआ है उतना द्रव्य एक-एक परमाणु कर बढ़ावे। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके समान एक अन्य जीव है जो अधःप्रवृत्तके उपान्त्य समयमें स्थित है। इस प्रकार अधःप्रवृत्तके प्रथम समयके प्राप्त होने तक उतारना चाहिये।

§ २३७ अब वहां पर द्रव्यके बढ़ाने पर अधःप्रवृत्तसंक्रमणके द्वारा और स्तिवुकसंक्रमणके द्वारा जितना द्रव्य अन्य प्रकृतिको प्राप्त हुआ है उतना द्रव्य एक एक परमाणु कर बढ़ाना चाहिये। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके समान एक अन्य जीव है जो सम्यक्त्वके अन्तिम समयमें स्थित है। अब अन्तिम समयमें स्थित इस सम्यग्दृष्टिके द्रव्यके बढ़ाने पर विध्यात संक्रमणके द्वारा सम्यग्मिथ्यात्वके द्रव्यमेंसे सम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले द्रव्यसे कम मिथ्यात्वमेंसे विध्यात संक्रमणके द्वारा सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त होनेवाले द्रव्यको स्तिवुकसंक्रमणके द्वारा सम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले द्रव्यमेंसे घटाकर जो द्रव्य शेष रहे उतने द्रव्यको एक-एक परमाणु कर बढ़ावे।

शंका—सम्यग्मिथ्यात्वसे सम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले द्रव्यकी अपेक्षा मिथ्यात्वसे

गच्छमाणदव्वमसंखेज्जगुणं ति कुदो णव्वदे ? सम्मामिच्छत्तदव्वं पेक्खिदूण मिच्छत्त-दव्वस्स असंखेज्जगुणत्तुवलंभादो। ण च परिणामभेदेण संकामिज्जमाणदव्वस्स भेदो, एगसमयम्मि एगजीवे णाणापरिणामाणुववत्तीदो। जहा मिच्छत्तादो मिच्छत्तपदेसग्गं सम्मामिच्छत्तं गच्छदि, तहा तत्तो पदेसग्गं तेणेव भागहारेण सम्मत्तं गच्छदि। किंतु तेणेत्थ ण कज्जमत्थि सम्मामिच्छत्तस्स पयदत्तादो। एवं वड्डिदूण ट्ठिदेण अवरेगो दुचरिमसमयसम्मादिट्ठी सरिसो। एदेण विहाणेण वड्डाविय ओदारेयव्वं जाव विदिय-छावट्ठिपढमसमओ त्ति।

§ २३८. संपहि विदियछावट्ठिपढमसमयसम्मादिट्ठिम्मि वड्डाविज्जमाणे सम्मा-मिच्छत्तादो विज्झादसंकमेण त्थिउक्कसंकमेण च सम्मत्तं गददव्वं मिच्छत्तादो विज्झाद-संकमेण सम्मामिच्छत्तस्सागददव्वेणूणं। पुणो पढमछावट्ठिचरिमसमयम्मि ट्ठिद-सम्मामिच्छादिट्ठिउदयगदतिण्णिगोवुच्छदव्वं च वड्डावेयव्वं। एवं वड्डिदूण ट्ठिदेण अण्णेगो चरिमसमयसम्मामिच्छादिट्ठी सरिसो। संपहि चरिमसमयसम्मामिच्छादिट्ठिम्मि वड्डाविज्जमाणे तस्सेवप्पणो दुचरिमगोवुच्छदव्वं पुणो मिच्छत्त-सम्मत्ताणं दोगोवुच्छविसेसा च वड्डावेदव्वा। एवं वड्डिदेण अण्णेगो दुचरिमसमयट्ठिदसम्मामिच्छादिट्ठी सरिसो।

सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त होनेवाला द्रव्य असंख्यातगुणा है यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—चूँकि सम्यग्मिथ्यात्वके द्रव्यकी अपेक्षा मिथ्यात्वका द्रव्य असंख्यातगुणा है, इससे ज्ञात होता है कि सम्यग्मिथ्यात्वसे सम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले द्रव्यकी अपेक्षा मिथ्यात्वसे सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त होनेवाला द्रव्य असंख्यातगुणा है।

यदि कहा जाय कि परिणामोंमें भेद होनेसे संक्रमणको प्राप्त होनेवाले द्रव्यमें भेद होता है, सो भी बात नहीं है, क्योंकि एक समयमें एक जीवके नाना परिणाम नहीं पाये जाते हैं। जिस प्रकार मिथ्यात्वमेंसे मिथ्यात्वके प्रदेश सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त होते हैं उसी प्रकार उसी मिथ्यात्वमेंसे उसके प्रदेश उसी भागहारके द्वारा सम्यक्त्वको प्राप्त होते हैं परन्तु उससे यहां कोई मतलब नहीं है, क्योंकि यहां प्रकरण सम्यग्मिथ्यात्वका है। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके समान एक अन्य जीव है जो उपान्त्य समयवर्ती सम्यग्दृष्टि है। इस विधिसे बढ़ाकर दूसरे छ्यासठ सागरके प्रथम समयके प्राप्त होने तक उतारते जाना चाहिये।

§ २३८. अब दूसरे छ्यासठ सागरके प्रथम समयवर्ती सम्यग्दृष्टिके द्रव्यके बढ़ाने पर मिथ्यात्वमेंसे विध्यात संक्रमणके द्वारा सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त होनेवाले द्रव्यसे कम सम्यग्मिथ्यात्वमें विध्यातसंक्रमणके द्वारा और स्तिवुकसंक्रमणके द्वारा सम्यक्त्वको प्राप्त होने-वाले द्रव्यको और प्रथम छ्यासठ सागरके अन्तिम समयमें स्थित हुए सम्यग्मिथ्यादृष्टिके उदयको प्राप्त हुए तीन गोपुच्छाओंके द्रव्यको बढ़ावे। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके समान अन्य एक जीव है जो अन्तिम समयवर्ती सम्यग्मिथ्यादृष्टि है। अब अन्तिम समयवर्ती सम्यग्मिथ्यादृष्टिके द्रव्यके बढ़ाने पर उसीके अपना उपान्त्य समयसम्बन्धी गोपुच्छके द्रव्यको तथा मिथ्यात्व और सम्यक्त्वके दो गोपुच्छविशेषोंको बढ़ावे। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए

एवमोदारेदव्वं जाव पढमसमयसम्मामिच्छादिट्ठि त्ति।

§ २३९. पुणो पढमसमयसम्मामिच्छादिट्ठिम्मि वड्ढाविज्जमाणे गुणसंकमभागहारस्स संकलणमेत्तगोवुच्छविसेसेहि अब्भहियएगसम्मामिच्छत्तगोवुच्छदव्वं दुरूवाहियगुणसंकमभागहारमेत्तकालम्मि सम्मामिच्छत्तादो सम्मत्तगददव्वेणब्भहियं सम्मत्तत्थिवुक्कगोवुच्छाए दुरूवाहियगुणसंकममेत्तकालम्मि मिच्छत्तादो सम्मामिच्छत्तस्स संकंतदव्वेण च ऊणं वड्ढावेदव्वं। एवं वड्ढिदूण ट्ठिदेण अण्णेगस्स सम्मत्तचरिमसमयादो हेट्ठा दुरूवाहियगुणसंकमभागहारमेत्तमोदरिदूण ट्ठिदसम्मादिट्ठिस्स सम्मामिच्छत्तदव्वं सरिसं। कुदो? गुणसंकमभागहारमेत्तसम्मामिच्छत्तगोवुच्छासु अवणिदगोवुच्छविसेसासु मेलिदासु एगमिच्छत्तगोवुच्छुप्पत्तीदो गोवुच्छविसेससंकलणसहिदेगसम्मामिच्छत्तगोवुच्छाए सम्मामिच्छत्तादो सम्मत्तस्स आगदद्व्वेणब्भहियाए सम्मत्तगोवुच्छाए मिच्छत्तादो सम्मामिच्छत्तं गददव्वेण च ऊणाए वड्ढिदत्तादो। संपहि एत्तो हेट्ठा ओदारिज्जमाणे तस्समयम्मि मिच्छत्तादो सम्मामिच्छत्तमागदद्व्वेणूणसम्मामिच्छत्तत्थिवुक्कगोवुच्छासम्मामिच्छत्तादो विज्झादसंकमेण सम्मत्तं गददव्वं च वड्ढावेदव्वं। एवं वड्ढिदेण अण्णेगो हेट्ठिमसमयम्मि ट्ठिदसम्मादिट्ठी सरिसो। एदेण कमेणोदारेदव्वं जाव पढमछावट्ठीओ आवलियवेदगसम्मादिट्ठि त्ति। संपहि एदेण

इस जीवके समान एक अन्य जीव है जो द्विचरमसमयवर्ती सम्यग्मिथ्यादृष्टि है। इस प्रकार प्रथम समयवर्ती सम्यग्मिथ्यादृष्टिके प्राप्त होने तक उतारते जाना चाहिए।

§ २३९. फिर प्रथम समयवर्ती सम्यग्मिथ्यादृष्टिके द्रव्यके बढ़ाने पर गुणसंक्रमणभागहारके संकलनका जो प्रमाण हो उतने गोपुच्छाविशेषोंसे अधिक सम्यग्मिथ्यात्वके एक गोपुच्छाके द्रव्यको और दो अधिक गुणसंक्रमण भागहारप्रमाण कालके भीतर सम्यग्मिथ्यात्वसे सम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले द्रव्यसे अधिक स्तिवुकसंक्रमणके द्वारा सम्यक्त्वको प्राप्त हुई गोपुच्छाको एक-एक परमाणु कर बढ़ाता जावे। किन्तु इसमेंसे दो अधिक गुणसंक्रमणके कालके भीतर मिथ्यात्वके द्रव्यमेंसे सम्यग्मिथ्यात्वमें संक्रान्त हुए द्रव्यको घटा दे। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके द्रव्यके साथ सम्यक्त्वके अन्तिम समयसे दो अधिक गुणसंक्रमण भागहारका जितना काल है उतना नीचे उतरकर स्थित हुए सम्यग्मिथ्यादृष्टिके सम्यग्मिथ्यात्वका द्रव्य समान है, क्योंकि गुणसंक्रमण भागहारप्रमाण सम्यग्मिथ्यात्वकी गोपुच्छाओंमेंसे गोपुच्छविशेषोंको घटाकर जोड़ने पर मिथ्यात्वकी एक गोपुच्छाकी उत्पत्ति हुई है। तथा गोपुच्छाविशेषोंके जोड़ने पर जो प्रमाण हो उसके साथ सम्यग्मिथ्यात्वकी एक गोपुच्छाकी और मिथ्यात्वके द्रव्यमेंसे सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त होनेवाले द्रव्यको कम करके सम्यग्मिथ्यात्वके द्रव्यमेंसे सम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले द्रव्यसे अधिक सम्यक्त्वकी गोपुच्छाकी वृद्धि हुई है। अब इससे नीचे उतारने पर उसी समय मिथ्यात्वके द्रव्यमेंसे सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त होनेवाले द्रव्यसे कम स्तिवुकसंक्रमणके द्वारा अन्य प्रकृतिको प्राप्त होनेवाली सम्यग्मिथ्यात्वकी गोपुच्छाको और विध्यातसंक्रमणके द्वारा सम्यग्मिथ्यात्वके द्रव्यमेंसे सम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले द्रव्यको बढ़ाना चाहिये। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके समान अन्य एक जीव है जो नीचेके समयमें सम्यग्दृष्टि होकर स्थित है। इस प्रकार इस क्रमसे पहले छ्यासठ सागरके भीतर वेदक सम्यग्दृष्टिके एक आवलिकालके प्राप्त होने

अण्णेगो खविदकम्मंसियो पडिवण्णवेदगसम्मत्तो पढमछावट्ठिअब्भंतरे गुणसंकमभागहार-छेदणयमेत्तगुणहाणीओ गालिय दंसणमोहणीयक्खवणमाढविय मिच्छत्तं सम्मामिच्छत्ते पक्खिविय ट्ठिदो सरिसो।

§ २४० संपहि इमं घेत्तूण एगगोवुच्छमेत्तं वड्ढाविय सरिसं कादूणोदारेदव्वं जाव अंतोमुहुत्तवेदगसम्मादिट्ठी दंसणमोहक्खवणमाढविय मिच्छत्तं सम्मामिच्छत्तम्मि संछुहिय ट्ठिदो त्ति। संपहि एसो खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण मणुसेसुववज्जिय सव्वलहुं जोणिणिक्खमणजम्मणेण अट्ठवस्सिओ होदूण सम्मत्तं घेत्तूण अणंताणुबंधिचउक्कं विसंजोइय दंसणमोहक्खवणमाढविय मिच्छत्तं सम्मामिच्छत्तं पक्खिविय जो अवट्ठिदो सो परमाणुत्तरादिकमेण चत्तारि पुरिसे अस्सिदूण पंचहि वड्ढीहि वड्ढावेदव्वो जाव गुणिदकम्मंसियलक्खणेण सत्तमाए पुढवीए मिच्छत्तमुक्कस्सं करिय पुणो दो-तिण्णि-भवग्गहणाणि पंचिंदिएसु एइंदिएसु च उप्पज्जिय पुणो मणुस्सेसुववज्जिय सव्वलहुं जोणिणिक्कमणजम्मणेण अंतोमुहुत्तब्भहियअट्ठवस्सिओ होदूण पुणो सम्मत्तं पडिवज्जिय अणंताणुबंधिचउक्कं विसंजोइय पुणो अंतोमुहुत्तं गमिय दंसणमोहणीयक्खवणमाढविय मिच्छत्तं सम्मामिच्छत्तम्मि संछुहिय ट्ठिदो। एवमोदारिदे अणंताणं ट्ठाणाणमेगं फद्दयं, विरहाभावादो। एवं तदियपयारेण सम्मामिच्छत्तट्ठाणपरूवणा कदा।

तक उतारते जाना चाहिये। अब इस जीवके समान अन्य एक जीव है जो क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर और वेदक सम्यक्त्वको प्राप्त होकर प्रथम छयासठ सागर कालके भीतर गुणसंक्रम भागहारके अर्धच्छेदप्रमाण गुणाहानियोंको गलाकर और दर्शनमोहनीयकी क्षपणाका आरम्भ करके मिथ्यात्वके द्रव्यको सम्यग्मिथ्यात्वमें प्रक्षिप्त करके स्थित है।

§ २४०. अब इस जीवको लो और इसके एक गोपुच्छाप्रमाण द्रव्यको उत्तरोत्तर बढ़ाते हुए और समान करते हुए तब तक उतारते जाना चाहिये जब तक छयासठ सागरके भीतर अन्तर्मुहूर्तके लिए वेदकसम्यग्दृष्टि होकर और दर्शनमोहनीयकी क्षपणाका आरम्भ करके मिथ्यात्वके द्रव्यको सम्यग्मिथ्यात्वमें क्षेपण करके स्थित होवे। अब यह जीव क्षपितकर्मांशिक लक्षणके साथ आकर मनुष्योंमें उत्पन्न हो सर्व जघन्य कालके द्वारा योनिसे बाहर निकलनेरूप जन्मसे लेकर आठ वर्षका होकर सम्यक्त्वको प्राप्त हो अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजना कर दर्शनमोहनीयकी क्षपणाका आरम्भ करके मिथ्यात्वके द्रव्यको सम्यग्मिथ्यात्वमें प्रक्षिप्त करके स्थित है। फिर चार पुरुषोंका आश्रय लेकर एक-एक परमाणु अधिकके क्रमसे पांच वृद्धियोंके द्वारा तब तक बढ़ावे जब तक गुणितकर्मांशिकलक्षणके साथ सातवीं पृथिवीमें मिथ्यात्वको उत्कृष्ट करके फिर दो तीन भव ग्रहण कर पंचेन्द्रिय और एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न हो फिर मनुष्योंमें उत्पन्न होकर सर्वलघु कालके द्वारा योनिसे निकलनेरूप जन्मसे अन्तर्मुहूर्त सहित आठ वर्षका होकर पुनः सम्यक्त्वको प्राप्त कर अनन्ताबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना कर फिर अन्तर्मुहूर्त जाकर दर्शनमोहनीयकी क्षपणाका आरम्भ करके मिथ्यात्वके द्रव्यको सम्यग्मिथ्यात्वमें क्षेपण करके स्थित होवे। इस प्रकार उतारने पर अनन्त स्थानोंका एक स्पर्धक होता है, क्योंकि मध्यमें विरह (अन्तर) का अभाव है।

इस प्रकार तीसरे प्रकारसे सम्यग्मिथ्यात्वकी स्थानप्ररूपणा की।

§ २४१. संपहि सम्मामिच्छत्तस्स गुणिदकम्मंसियसंतकम्ममस्सिदूण ट्ठाणपरूवणं कस्सामो। तं जहा—खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण सम्मत्तं पडिवज्जिय वेछावट्ठीओ भमिय दीहुव्वेल्लणकालेण सम्मामिच्छत्तमुव्वेल्लिय चरिमफालिं धरेदूण ट्ठिदो परमाणुत्तरकमेण चत्तारि पुरिसे अस्सिदूण पंचहि वड्ढीहि वड्ढावेदव्वो जाव गुणिदकम्मंसिओ सत्तमाए पुढवीए मिच्छत्तमुक्कस्सं कादूण तत्तो णिस्सरिदूण सम्मत्तं पडिवज्जिदूण वेछावट्ठीओ भमिय दीहुव्वेल्लणकालेण सम्मामिच्छत्तमुव्वेल्लिय चरिमफालिं धरेदूण ट्ठिदो त्ति। एवं वड्ढिदेण अण्णेगो सत्तमाए पुढवीए मिच्छत्तमुक्कस्सं करेमाणो जो सम्मामिच्छत्तदुचरिमगुणसंकमफालिदव्वेण तस्सेव त्थिवुक्कसंकमेण गदगोवुच्छदव्वेण च ऊणं करियागंतूण सम्मामिच्छत्तमुव्वेल्लिय तच्चरिमदुचरिमफालीओ धरिय ट्ठिदो सरिसो। संपहि[1] एसो दोफालिधारगो परमाणुत्तरकमेण वड्ढावेदव्वो जावप्पणो ऊणीकददव्वं वड्ढिदं ति[2]। एवमुव्वेल्लण-वेछावट्ठिकालेसु ओदारिज्जमाणेसु जधा खविदकम्मंसियस्स संतमोदारिदं तधा ओदारेदव्वं। णवरि एत्थ इच्छिददव्वमूणं करिय आगंतूण पुणो वड्ढाविय ओदारेदव्वं। संधिज्जमाणे वि जहा खविदस्स संधिदं तहा एत्थ वि संधेदव्वं।

एवं सम्मामिच्छत्तस्स चदुहि पयारेहि ट्ठाणपरूवणा कदा।

---

§ २४१. अब गुणितकर्मांशकी अपेक्षा सम्यग्मिथ्यात्वके सत्कर्मस्थानोंका कथन करते हैं। वे इस प्रकार हैं—क्षपितकर्मांशके लक्षणसे आकर सम्यक्त्वको प्राप्त कर दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण कर उत्कृष्ट उद्वेलना काल द्वारा सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना कर अन्तिम फालिको धारण कर स्थित हुआ जीव एक अन्य जीवके समान है जो चार पुरुषोंके आश्रयसे एक एक परमाणु अधिकके क्रमसे पाँच वृद्धियोंके द्वारा तब तक बढ़ावे जब तक गुणितकर्मांशवाला सातवीं पृथिवीमें मिथ्यात्वको उत्कृष्ट करके वहाँसे निकलकर सम्यक्त्वको प्राप्त कर दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण कर उत्कृष्ट उद्वेलना काल द्वारा सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना कर अन्तिम फालिको धारण कर स्थित होवे। इस प्रकार बढ़े हुए इस जीवके समान एक अन्य जीव समान है जो सातवीं पृथिवीमें मिथ्यात्वको उत्कृष्ट करके सम्यग्मिथ्यात्वकी द्विचरमगुणसंक्रमफालिके द्रव्यको और स्तिवुकसंक्रमणको प्राप्त हुए उसीके गोपुच्छाके द्रव्यको घटाकर सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना करके उसकी अन्तिम और द्विचरमफालिको धारण कर स्थित है। अब उस दो फालिके धारक जीवने जितना अपना द्रव्य कम किया हो उतना द्रव्य उत्तरोत्तर एक एक परमाणुके क्रमसे बढ़ावे। इस प्रकार उद्वेलना व दो छयासठ सागर कालके उतारने पर जिस प्रकार क्षपितकर्मांश जीवके सत्कर्मको उतारा है उस प्रकार उतारते जाना चाहिये। किंतु इतनी विशेषता है कि यहाँ पर इच्छित द्रव्यको कम करते हुए आकर पुनः बढ़ाकर उतारना चाहिये। तथा जोड़ने पर भी जिस प्रकार क्षपितकर्मांशका जोड़ा है उसी प्रकार यहाँ भी जोड़ना चाहिए।

इस प्रकार चारों प्रकारसे सम्यग्मिथ्यात्वकी स्थानप्ररूपणा की।

---

१. आ०प्रतौ 'ट्ठिदो। संपहि, इति पाठः। २. आ०प्रतौ 'वड्ढंति' इति पाठः।

*** एवं चेव सम्मत्तस्स वि ।**

§ २४२. जहा सम्मामिच्छत्तस्स जहण्णट्ठाणादि जाव तदुक्कस्सट्ठाणे त्ति सामित्त-परूवणा चदुहि पयारेहि कदा तहा सम्मत्तस्स वि कायव्वा, विसेसाभावादो । अधापवत्तपढमसमयम्मि वड्ढाविज्जमाणे मिच्छत्तसरूवेण गदअधापवत्तदव्वमेत्तं तम्मि चेव त्थिउक्कसंकमेण गदसम्मत्तगोवुच्छा चरिमसमयसम्मादिट्ठिस्स उदयगदतिण्णि-गोवुच्छाओ च जेणेत्थ वड्ढाविज्जंति तेण जहा सम्मामिच्छत्तस्स परूविदं तहा सम्मत्तस्स परूवेदव्वमिदि ण घडदे ? किं चेत्थ सम्मादिट्ठिम्मि ओदारिज्जमाणे सम्मामिच्छत्त-मिच्छत्तेहिंतो सम्मत्तस्सागदविज्झाददव्वेणूणसम्मत्तगोवुच्छा पुणो मिच्छत्त-सम्मा-मिच्छत्ताणं दोगोवुच्छविसेसा च सव्वत्थ वड्ढाविज्जंति तेणेदेण वि कारणेण ण दोण्हं सामित्ताणं सरिसत्तं । अण्णं च विदियछावट्ठिसम्मत्तपढमसमयदव्वम्मि वड्ढाविज्जमाणे विज्झादभागहारेण मिच्छत्त-सम्मामिच्छत्तेहिंतो सम्मत्तस्सागददव्वेणूणा पढमछावट्ठीए अंतोमुहुत्तं हेट्ठा ओसरिदूण ट्ठिदसम्मादिट्ठिस्स अंतोमुहुत्तमेत्तमिच्छत्त-सम्मामिच्छत्त-गोवुच्छविसेसेहि अब्भहियअंतोमुहुत्तमेत्तसम्मत्तगोवुच्छाओ वड्ढाविज्जंति, अण्णहा विदियछावट्ठिपढमसमयादो अंतोमुहुत्तं हेट्ठा ओदरिदूण ट्ठिदपढमछावट्ठिचरिमसमय-

---

*** इसी प्रकार सम्यक्त्वके स्थानोंके स्वामित्वका भी कथन करना चाहिये ।**

२४२. जिस प्रकार सम्यग्मिथ्यात्वके जघन्य स्थानसे लेकर उसके उत्कृष्ट स्थानके प्राप्त होने तक स्वामित्वका कथन चार प्रकारसे किया है उसी प्रकार सम्यक्त्वका भी करना चाहिये, क्योंकि उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है ।

शंका—अधःप्रवृत्तके प्रथम समयमें द्रव्यके बढ़ाने पर यह द्रव्य बढ़ाया जाता है—एक तो अधःप्रवृत्तभागहारके द्वारा सम्यक्त्वका जितना द्रव्य मिथ्यात्वको प्राप्त होता है उसे बढ़ाया जाता है । दूसरे उसी समय जो स्तिवुक संक्रमणके द्वारा सम्यक्त्वकी गोपुच्छाका द्रव्य मिथ्यात्वको प्राप्त होता है उसे बढ़ाया जाता है और तीसरे सम्यग्दृष्टिके अन्तिम समयमें उदयको प्राप्त हुई तीन गोपुच्छाएँ बढ़ाई जाती हैं। चूँकि इतना द्रव्य बढ़ाया जाता है, इसलिये जिस प्रकार सम्यग्मिथ्यात्वके स्वामीका कथन किया है उस प्रकार सम्यक्त्वके स्वामीका कथन करना चाहिये, यह कथन नहीं बनता है ? दूसरे यहाँ सम्यग्दृष्टिको उतारने पर सम्यग्मिथ्यात्व और मिथ्यात्वके द्रव्यमेंसे विध्यातसंक्रमणके द्वारा सम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले द्रव्यसे कम सम्यक्त्वकी गोपुच्छाको तथा सर्वत्र मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी दो गोपुच्छाविशेषोंको सर्वत्र बढ़ाया जाता है । इसलिये इस कारणसे भी दोनोंका स्वामित्व समान नहीं है ? तीसरे दूसरे छयासठ सागरके प्रथम समयमें सम्यक्त्वके द्रव्यको बढ़ाने पर विध्यात भागहारके द्वारा मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वके द्रव्यमेंसे सम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले द्रव्यसे कम तथा पहले छयासठ सागरमें अन्तर्मुहूर्त नीचे उतर कर स्थित हुए सम्यग्दृष्टिके अन्तर्मुहूर्तप्रमाण मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी गोपुच्छाविशेषोंसे अधिक अन्तर्मुहूर्त प्रमाण सम्यक्त्वकी गोपुच्छाएँ बढ़ाई जाती हैं, अन्यथा दूसरे छयासठ सागरके प्रथम समयसे अन्तर्मुहूर्त नीचे

सम्मादिट्ठिदव्वेण सरिसत्ताणुववत्तीदो। तेण जाणिज्जदे जहा दोण्हं सामित्ताणं ण सरिसत्तमिदि। ण, दव्वट्ठियणयमस्सिदूण सरिसत्तपदुप्पायणादो। एसो विसेसो कत्तो णव्वदे? ण, सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तपयरणवसेणेव तदवगमादो। पज्जवट्ठियपरूवणादो वा तदवगमो। सो पुण किण्ण सुत्ते उच्चदे? ण, तत्थ वक्खाणाइरियभडारयाणं वावारादो। दव्वट्ठियणयवयणकलावो सुत्तं। पज्जवट्ठियवयणकलावो टीका। णेगमणय-वयणकलाओ विहासा त्ति सव्वत्थ दट्ठव्वं।

❀ दोण्हं पि एदेसिं संतकम्माणमेगं फद्दयं।

§ २४३. पदेसुत्तरं दुपदेसुत्तरं णिरंतराणि ट्ठाणाणि उक्कस्ससंतकम्मं ति एदेणेव सुत्तेण सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तसंतकम्मट्ठाणाणं फद्दयत्तमवगम्मदे[1]। ण च णिरंतरट्ठाणेसु अंतरणिबंधणाणमत्थित्तं,[2] विप्पडिसेहादो। तम्हा णिप्फलमिदं सुत्तमिदि? ण, सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तसंतकम्मट्ठाणाणमेगं फद्दयमिदि दोण्हं संतकम्माणमंतराभावपदुप्पायणेण णिप्फलत्तविरोहादो। तं जहा—सम्मामिच्छत्तस्स

उतर कर स्थित हुए जीवका द्रव्य प्रथम छयासठ सागरके अन्तिम समयवर्ती सम्यग्दृष्टिके द्रव्यके समान नहीं हो सकता है। इससे जाना जाता है कि दोनोंके स्वामी एक समान नहीं हैं?

समाधान—नहीं, क्योंकि द्रव्यार्थिक नयकी अपेक्षा दोनोंके स्वामियोंको एक समान कहा है।

शंका—यह विशेष किस प्रमाणसे जाना जाता है?

समाधान—नहीं, क्योंकि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके प्रकरणके वशसे ही यह विशेष जाना जाता है। अथवा पर्यायार्थिक प्ररूपणासे इस प्रकारका विशेष जाना जाता है।

शंका—तो फिर इस विशेषका कथन सूत्रमें क्यों नहीं किया?

समाधान—नहीं, क्योंकि विशेषके कथनका व्याख्यान करना व्याख्यानाचार्योंका काम है। तात्पर्य यह है कि संक्षिप्त वचनोंका समुदाय सूत्र कहलाता है, विस्तृत वचनोंका समुदाय टीका कहलाती है और नैगमरूप वचनोंका समुदाय विभाषा कहलाती है। यही कारण है कि सूत्रमें उभयगत विशेषताका व्याख्यान नहीं किया। इसी प्रकार सर्वत्र जानना चाहिये।

❀ इन दोनों ही सत्कर्मोंका एक स्पर्धक होता है।

२४३. **शंका**—जघन्य सत्कर्म स्थानसे लेकर एक प्रदेश अधिक, दो प्रदेश अधिक इस प्रकार उत्कृष्ट सत्कर्मस्थानके प्राप्त होने तक निरन्तर स्थान पाये जाते हैं। इस सूत्रके द्वारा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके सत्कर्मस्थानोंका एक स्पर्धक है यह बात जानी जाती है। यदि कहा जाय कि निरन्तर स्थानोंके रहते हुए भी उनका अस्तित्व अन्तरका कारण हो जाय, सो भी बात नहीं है, क्योंकि ऐसा माननेमें विरोध आता है, अतएव यह सूत्र निष्फल है?

समाधान—नहीं, क्योंकि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके सत्कर्मस्थानोंका एक स्पर्धक है इस प्रकार यह सूत्र दोनों सत्कर्मोंके अन्तरके अभावका कथन करता है, इसलिये इसे निष्फल नहीं माना जा सकता है। अब आगे इसी बातका खुलासा करते हैं—सम्यग्मिथ्यात्व-

१. ता०प्रतौ '–ट्ठाणा[णं] फद्दयत्त–' आ०प्रतौ '–ट्ठाणा फद्दयत्त–' इति पाठः। २. ता०प्रतौ '–णिबंधणा ट्ठाणा) मत्थित्तं' इति पाठः।

पलिदोवमस्स असंखे०भागमेत्तट्ठिदीओ पूरिय ओदारेदव्वं जाव सम्मत्तमुव्वेल्लिय तदेगणिसेगं दुसमयकालट्ठिदियं पत्तं ति। पुणो तस्समयम्मि गदउव्वेल्लणदव्वे त्थिउक्कसंकमेण गदसम्मत्त-सम्मामिच्छत्तवेगोवुच्छासु च एदस्सुवरि वड्ढाविदासु एदेण दव्वेण सम्मत्तमुव्वेल्लिय तव्वेगोवुच्छाओ तिसमयकालट्ठिदियाओ धरेदूण ट्ठिदो सरिसो। एवमोदारेदव्वं जाव समयूणावलियमेत्तगोवुच्छाओ ओदिण्णाओ त्ति। पुणो तत्थ ठविय वड्ढाविज्जमाणे सम्मामिच्छत्तुव्वेल्लणसम्मत्तचरिमफालिदव्वं पुणो सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तवेगोवुच्छाओ च वड्ढावेदव्वो। एवं वड्ढिदेण तस्सेव हेट्ठिमसमए ओदरिय ट्ठिदो सरिसो।

§ २४४. संपहि सम्मत्तचरिमगुणसंकम-दुचरिमफालिदव्वं सम्मामिच्छत्तुव्वेल्लण-दव्वं त्थिउक्कसंकमेण गदसम्मत्त-सम्मामिच्छत्तदोगोवुच्छाओ च एत्थ वड्ढावेदव्वाओ। एवं वड्ढिदूण ट्ठिदेण अणंतरहेट्ठिमसमयट्ठिदो सरिसो। एवं सरिसं कादूणोदारेदव्वं जाव सम्मत्तदुचरिमट्ठिदिखंडयचरिमसमओ त्ति। पुणो तत्थ वड्ढाविज्जमाणे दोण्हमुव्वेल्लणदव्वमेत्तं वे गोवुच्छाओ च वड्ढावेदव्वाओ। एवं वड्ढिदूण ट्ठिदेण अण्णेगो हेट्ठिमसमयट्ठिदो सरिसो। एवं वड्ढाविय ओदारेयव्वं जाव अधापवत्तसंकमचरिम-समओ त्ति।

की पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितियोंको पूरा कर तब तक उतारना चाहिये जब तक सम्यक्त्वकी उद्वेलना कर उसका दो समयकी स्थितिवाला एक निषेक प्राप्त होवे। फिर उस समय जो उद्वेलनाका द्रव्य अन्य प्रकृतिको प्राप्त हुआ और स्तिवुक संक्रमणके द्वारा जो सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी दो गोपुच्छाएँ अन्य प्रकृतिको प्राप्त हुई उन्हें इसके ऊपर बढ़ाना चाहिये। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए इस जीवके द्रव्यके समान एक अन्य जीवका द्रव्य है जो सम्यक्त्वकी उद्वेलना कर तीन समयकी स्थितिवाले सम्यक्त्वकी दो गोपुच्छाओंको धारण करके स्थित है। इस प्रकार एक समय कम आवलिप्रमाण गोपुच्छाओंके उतरने तक उतारते जाना चाहिये। फिर वहाँ ठहरा कर बढ़ाने पर सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलनासे सम्यक्त्वमें हुए अन्तिम फालिके द्रव्यको और सम्यक्त्व तथा सम्यग्मिथ्यात्वकी दो गोपुच्छाओंको बढ़ाना चाहिये। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके समान एक अन्य जीव है जो उसीके एक समय नीचे उतर कर स्थित है।

§ २४४. अब यहाँ पर सम्यक्त्वके अन्तिम गुणसंक्रमकी द्विचरम फालिके द्रव्यको, सम्यग्मिथ्यात्वके उद्वेलनाके द्रव्यको और स्तिवुक संक्रमणके द्वारा परप्रकृतिको प्राप्त हुई सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी दो गोपुच्छाओंको बढ़ाना चाहिये। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके समान एक अन्य जीव है जो अनन्तर नीचेके समयमें स्थित है। इस प्रकार उत्तरोत्तर समान करके सम्यक्त्वके द्विचरम स्थितिकाण्डकके अन्तिम समय तक उतारते जाना चाहिये। फिर वहाँ पर द्रव्यके बढ़ाने पर दोनोंके उद्वेलनाप्रमाण द्रव्यको और दो गोपुच्छाओंको बढ़ावे। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके समान अन्य एक जीव है जो नीचेके समयमें स्थित है। इस प्रकार बढ़ाकर अधःप्रवृत्त संक्रमके अन्तिम समय तक उतारना चाहिये।

§ २४५. पुणो तत्थ ट्ठविय वड्ढाविज्जमाणे दोहिंतो अधापवत्तचरिमसमयम्मि गदद्व्वं त्थिवुक्कसंकमेण गदवे गोवुच्छाओ च वड्ढावेदव्वाओ। एवं वड्ढिदूण ट्ठिदेण अण्णेगो अधापवत्तदुचरिमसमयट्ठिदो सरिसो। एवमोदारेदव्वं जाव अधापवत्त-पढमसमयमिच्छादिट्ठि त्ति। पुणो तत्थ ट्ठविय वड्ढाविज्जमाणे दोहिंतो अधापवत्तसंकमेण गदद्व्वमेत्तं त्थिउक्कगोवुच्छाओ[1] पुणो सम्मादिट्ठिचरिमसमयम्मि उप्पादाणुच्छेदणएण णिज्जिण्णमिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं तिण्हि गोवुच्छाओ च वड्ढावेदव्वाओ। एवं वड्ढिदूण ट्ठिदेग अण्णेगो चरिमसमयसम्मादिट्ठी सरिसो। पुणो एत्थ दोण्हं मिच्छत्तादो आगदद्व्वेणूणसम्मत्त-सम्मामिच्छत्तवेगोवुच्छाओ मिच्छत्तगोवुच्छविसेसो च वड्ढावेदव्वो। एवं वड्ढिदेण अण्णेगो अणंतरहेट्ठिमसमयट्ठिदो सरिसो। एवं वड्ढाविय सरिसं करिय ओदारेदव्वं जाव पढमछावट्ठिचरिमसमयसम्मामिच्छादिट्ठि त्ति।

§ २४६. संपहि एत्थ वे गोवुच्छाओ एगगोवुच्छविसेसो च वड्ढावेदव्वो। एवं वड्ढिदेण दुचरिमसमयसम्मामिच्छादिट्ठी सरिसो। एत्थ मिच्छत्तादो सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तेसु संकंतदव्वेणूणत्तं किण्ण परूविदं ? ण, सम्मामिच्छादिट्ठिम्मि दंसणतियस्स संकमाभावादो। एवं वड्ढाविय ओदारेदव्वं जाव पढमछावट्ठीए

---

§ २४५. फिर वहाँ ठहरा कर द्रव्यके बढाने पर दोनोंमेंसे अधःप्रवृत्तके अन्तिम समयमें पर प्रकृतिको प्राप्त हुए द्रव्यको और स्तिवुक संक्रमणके द्वारा पर प्रकृतिको प्राप्त हुई दो गोपुच्छाओं-को बढ़ावे। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके समान अन्य एक जीव है जो अधःप्रवृत्त-संक्रमणके उपान्त्य समयमें स्थित है। इस प्रकार अधःप्रवृत्तके प्रथम समयवर्ती मिथ्यादृष्टिके प्राप्त होने तक उतारते जाना चाहिये। फिर वहाँ ठहराकर द्रव्यके बढ़ानेपर दोनोंमेंसे अधःप्रवृत्तसंक्रमणके द्वारा पर प्रकृतिको प्राप्त हुए द्रव्यको और स्तिवुक संक्रमणसंबंधी दो गोपुच्छाओंको तथा सम्यग्दृष्टिके अन्तिम समयमें उत्पादानुच्छेदनयकी अपेक्षा निर्जराको प्राप्त हुई मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व इन तीन गोपुच्छाओंको बढ़ाना चाहिए। इसप्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके समान अन्य एक जीव है जो अन्तिम समयवर्ती सम्यग्दृष्टि है। फिर यहां मिथ्यात्वमेंसे इन दोनों प्रकृतियोंके लिए आये हुए द्रव्यसे कम सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी दो गोपुच्छाओंको तथा मिथ्यात्वके गोपुच्छविशेषको बढ़ाना चाहिए। इसप्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके समान एक अन्य जीव है जो अनन्तर नीचेके समयमें स्थित है। इस प्रकार बढ़ाकर और समान कर प्रथम छ्यासठ सागरमें सम्यग्मिथ्यादृष्टिके अन्तिम समयतक उतारते जाना चहिए।

§ २४६. अब यहांपर दो गोपुच्छाओंको और एक गोपुच्छा विशेषको बढ़ाना चाहिए। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके समान एक अन्य जीव है जो उपान्त्य समयवर्ती सम्यग्मिथ्यादृष्टि है।

शंका—यहां मिथ्यात्वमेंसे सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वमें संक्रान्त हुए द्रव्यसे कम क्यों नहीं कहा ?

समाधान—नहीं, क्योंकि सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें दर्शनमोहनीयकी तीन

---

१. ता०प्रतौ 'गदद्व्वमेत्तं वेति(त्थि)वुक्कगोवुच्छाओ' इति पाठः।

चरिमसमयसम्मादिट्ठि त्ति। संपहि एत्थ मिच्छत्तादो आगददव्वेणूणवे गोवुच्छाओ एगगोवुच्छविसेसो च वड्ढावेदव्वो। एवं वड्ढिदूण हिदेण अणंतरहेट्ठिमसमयहिदो सरिसो। एवं वड्ढाविय ओदारेदव्वं जाव पढमछावट्ठीए आवलियवेदगसम्मादिट्ठि त्ति। पुणो तत्थ ट्ठविय पंचहि वड्ढीहि वड्ढावेदव्वं जाव एत्थतणजहण्णदव्वं गुणसंकमेण गुणिदमेत्तं जादं ति। एदेण जो खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण मणुस्सेसुववज्जिय सव्वलहुं जोणिणिक्कमणजम्मणेण अंतोमुहुत्तब्भहियअट्ठवस्साणि भमिय सम्मत्तं घेत्तूण दंसणमोहक्खवणाए अब्भुट्ठिय मिच्छत्तं सम्मामिच्छत्तस्सुवरि संछुहिय ट्ठिदो सरिसो। कुदो? दिवड्ढगुणहाणिगुणिदेगसमयपबद्धमेत्तमिच्छत्तजहण्णदव्वेण १२ गुणिसंकमेण गुणिदसम्मत्त-सम्मामिच्छत्तदव्वस्स सरिसत्तुवलंभादो |० १२ ९| ९ |।

अधवा संतकम्मसरूवेणोदरिदूण ट्ठिदआवलियवेदगसम्मादिट्ठिणा सह खविद-कम्मंसियलक्खणेणागंतूण पढमछावट्ठिकालब्भंतरे गुणसंकमभागहारछेदणयमेत्तगुण-हाणीओ उवरि चडिय[1] मिच्छत्तं सम्मामिच्छत्तम्मि संछुहिय ट्ठिदो सरिसो, दिवड्ढगुणहाणिगुणिदेगसमयपबद्धे गुणसंकमभागहारेण खंडिदे तत्थ एगखंडपमाणत्तेण दोण्हं दव्वाणं सरिसत्तुवलंभादो। संपहि एदं दव्वं पुव्वविहाणेण ओदरिय परमाणुत्तरकमेण चत्तारि पुरिसे अस्सिदूण पंचहि वड्ढीहि वड्ढावेदव्वं जावप्पणो

प्रकृतियोंका संक्रमण नहीं होता। इस प्रकार बढ़ाकर प्रथम छयासठ सागरके भीतर सम्यग्दृष्टिके अन्तिम समय तक उतारते जाना चाहिए। अब यहाँ मिथ्यात्वके द्रव्यमेंसे आये हुए द्रव्यसे कम दो गोपुच्छाओंको और एक गोपुच्छाविशेषको बढ़ाना चाहिए। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके समान एक अन्य जीव है जो अनन्तर नीचेके समयमें स्थित है। इस प्रकार बढ़ाकर प्रथम छयासठ सागरमें वेदकसम्यग्दृष्टिको एक आवलिकाल होने तक उतारना चाहिये। फिर वहाँ ठहराकर पांच वृद्धियोंके द्वारा तब तक बढ़ाना चाहिये जब तक यहाँके जघन्य द्रव्यको गुणसंक्रमसे गुणा करने पर जितना प्रमाण प्राप्त हो उतना हो जावे। इस प्रकार प्राप्त हुए जीवके समान एक अन्य जीव है जो क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर और मनुष्योंमें उत्पन्न होकर अतिशीघ्र योनिसे निकलनेरूप जन्मसे लेकर अन्तर्मुहूर्त अधिक आठ वर्ष बिताकर और सम्यक्त्वको प्राप्तकर फिर दर्शनमोहनीयकी क्षपणाका प्रारम्भकर मिथ्यात्वको सम्यग्मिथ्यात्वके ऊपर प्रक्षिप्त करके स्थित है, क्योंकि डेढ़ गुणहानि (१२) से गुणा किये गये एक समयप्रबद्धप्रमाण मिथ्यात्वके जघन्य द्रव्यके साथ गुणसंक्रमके द्वारा गुणा किया गया सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका द्रव्य समान है। अथवा सत्कर्मरूपसे उदीरणा करके स्थित हुए आवलिकालवर्ती वेदकसम्यग्दृष्टिके साथ क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर प्रथम छयासठ सागर कालके भीतर गुणसंक्रम भागहारकी अर्धच्छेद प्रमाण गुणहानियां ऊपर चढ़कर मिथ्यात्वको सम्यग्मिथ्यात्वमें निक्षिप्त करके स्थित हुआ एक अन्य जीव समान है, क्योंकि डेढ़ गुणहानिसे गुणा किये गये एक समयप्रबद्धमें गुणसंक्रम भागहारका भाग देने पर वहां जो एक भाग प्राप्त हो तद्रूपसे दोनों द्रव्योंकी समानता पाई जाती है। अब पूर्व विधिसे उतरकर इस द्रव्यको एक-एक परमाणु अधिकके

१. आ०प्रतौ 'उवरि सुचडिय' इति पाठः।

उक्कस्सदव्वं पत्तं ति । संपहि गुणिदकम्मंसियमस्सिदूण वि जाणिदूण दोण्हं कम्माणमेगफद्दयत्तं परूवेदव्वं । तम्हा ण णिप्फलमिदं सुत्तमिदि सिद्धं ।

❀ अट्ठण्हं कसायाणं जहण्णयं पदेससंतकम्मं कस्स ?

§ २४७. **सुगमं** ।

❀ अभवसिद्धियपाओग्गजहण्णयं काऊण तसेसु आगदो संजमासंजमं संजमं सम्मत्तं च बहुसो लद्धूण चत्तारि वारे कसाए उवसामिदूण एइंदिए गदो। तत्थ पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तमच्छिदूण कम्मं हदसमुप्पत्तियं कादूण कालं गदो तसेसु आगदो कसाए खवेदि अपच्छिमे ट्ठिदिखंडए अवगदे अधट्ठिदिगलणाए उदयावलियाए गलंतीए एक्किस्से ट्ठिदीए सेसाए तम्मि जहण्णयं पदं ।

§ २४८. भवसिद्धियपाओग्गजहण्णपदेसपडिसेहट्ठं अभवसिद्धियपाओग्गजहण्णयं कादूणे त्ति णिद्दिट्ठं । संजमासंजम-संजम-सम्मत्तगुणसेढिणिज्जराहि विणा खविदकिरियाए सव्वुक्कस्सेण एइंदिएसु कम्मणिज्जराए कदाए जमवसेसं जहण्णदव्वं तमभवसिद्धियपाओग्गजहण्णदव्वं ति घेत्तव्वं, तिरयणजणिदकम्मणिज्जराभावादो । तसेसु चेव

क्रमसे चार पुरुषोंकी अपेक्षा पाँच वृद्धियों द्वारा अपने उत्कृष्ट द्रव्यके प्राप्त होने तक बढ़ाते जाना चाहिये । अब गुणितकर्मांशकी अपेक्षा भी जानकर दोनों कर्मोंके एक स्पर्धकपनेका कथन करना चाहिये । इसलिये यह सूत्र निष्फल नहीं है यह बात सिद्ध हुई ।

❀ आठ कषायोंका जघन्य प्रदेशसत्कर्म किसके होता है ?

§ २४७. यह सूत्र सुगम है ।

❀ अभव्योंके योग्य जघन्य प्रदेशसत्कर्म करके त्रसोंमें आया। फिर संयमासंयम, संयम और सम्यक्त्वको बहुत बार प्राप्त करके और चार बार कषायोंका उपशम कर एकेन्द्रियोंमें गया । वहाँ पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण काल तक रह कर और कर्मको हतसमुत्पत्तिक करके मरकर त्रसोंमें आया । वहां कषायोंका क्षपण करते समय अन्तिम स्थितिकाण्डकका पतन होनेके बाद अधःस्थितिगलनाके द्वारा उदयावलिके गलते हुए एक स्थितिके शेष रहने पर जघन्य प्रदेशसत्कर्म होता है ।

§ २४८. भव्योंके योग्य जघन्य प्रदेशोंका निषेध करनेके लिये 'अभव्योंके योग्य जघन्य' इस पदका निर्देश किया । संयमासंयम, संयम और सम्यक्त्वके निमित्तसे जो गुणश्रेणि निर्जरा होती है उसके बिना क्षपित क्रियाके द्वारा सबसे उत्कृष्टरूपसे एकेन्द्रियोंके भीतर रहते हुए कर्मकी निर्जरा की जाने पर जो जघन्य द्रव्य शेष रहता है वह अभव्योंके योग्य जघन्य द्रव्य है यह इसका भाव है, क्योंकि यह कर्मनिर्जरा रत्नत्रयके निमित्तसे नहीं

तिरयणजणिदकम्मणिज्जरा होदि त्ति जाणावणट्ठं तसेसु आगदो त्ति भणिदं । थावरकाएसु तिरयणाणि किण्ण उप्पज्जंति ? अच्चंताभावेण पडिसिद्धत्तादो । भव्वजीवकम्मणिज्जरावियप्पपदुप्पायणट्ठं संजमासंजमं संजमं सम्मत्तं च बहुसो लद्धूण चत्तारि वारे कसाए उवसामेदूण त्ति भणिदं । एत्थ बहुसो त्ति जदि वि सामण्णणिद्देसो कदो तो वि पलिदो० असंखे०भागमेत्ताणि चेव तिरिक्ख-मणुस्सेसु संजमासंजमकंडयाणि । सम्मत्तकंडयाणि पुण देवेसु चेव पलिदो० असंखे०भागमेत्ताणि। एदाणि तिरिक्ख-मणुस्सेसु किण्ण घेप्पंति ? ण, तत्थेदेसु संतेसु संजमासंजम-संजमकंडयाणमण्णत्थ असंभवाणमभावप्पसंगादो । सम्मत्ते त्ति वुत्ते अणंताणु-बंधिचउक्कविसंजोयणा घेत्तव्वा, सहचारादो । संजमकंडयाणि अट्ठ चेव मणुस्सेसु। एदेसिमेत्तिया चेव संखा होदि त्ति कुदो णव्वदे ? सुत्ताविरुद्धाइरियवयणादो वेयणादिसुत्तेहिंतो वा । तसेसु आगंतूण संजमासंजम-सम्मत्तेसु पलिदो० असंखे०भागमेत्तं कालमच्छदि त्ति ण घडदे, तिरिक्खेसु संजमासंजमस्स देसूणपुव्वकोडीए अहियकालाणुवलंभादो । ण, तिरिक्खेसु संजमासंजममणुपालिय दसवस्ससहस्साउ-

---

हुई है। त्रसोंमें ही रत्नत्रयके निमित्तसे कर्मोंकी निर्जरा होती है यह जतानेके लिये 'त्रसोंमें आया' यह कहा।

शंका—स्थावरकायिक जीवोंको रत्नत्रयकी प्राप्ति क्यों नहीं होती ?

समाधान—अत्यन्ताभाव होनेसे वहां इसकी प्राप्तिका निषेध है।

भव्य जीवोंके कर्मनिर्जराके विकल्पोंका कथन करनेके लिये 'संयमासंयम, संयम और सम्यक्त्वको अनेकबार प्राप्तकर तथा चार बार कषायोंका उपशमकर' यह कहा। यहाँ सूत्रमें यद्यपि 'अनेकबार' ऐसा सामान्य निर्देश किया है तो भी संयमासंयमकाण्डक पल्यके असंख्यातवें भाग बार तिर्यंच और मनुष्योंमें ही होते हैं। किन्तु सम्यक्त्वकाण्डक पल्यके असंख्यातवें भागवार देवोंमें ही होते हैं।

शंका—ये सम्यक्त्वकाण्डक तिर्यञ्च और मनुष्योंमें क्यों नहीं ग्रहण किये जाते ?

समाधान—नहीं, क्योंकि वहाँ इनको मान लेने पर संयमासंयम और संयमकाण्डक अन्यत्र सम्भव नहीं, इसलिये इनका अभाव प्राप्त होता है। सूत्रमें 'सम्यक्त्व' ऐसा कहने पर इस पदसे अनन्तानुबन्धी चारकी विसंयोजना लेनी चाहिये, क्योंकि सम्यक्त्वके साथ इसका सहचार अविनभाव सम्बन्ध है। अर्थात् सम्यक्त्वके सद्भावमें ही अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना पाई जाती है। संयमकाण्डक आठों ही मनुष्योंमें होते हैं।

शंका—इन सबकी इतनी ही संख्या होती है यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—सूत्राविरुद्ध अचार्योंके वचनसे या वेदना आदिमें आये हुए सूत्रोंसे जाना जाता है।

शंका—त्रसोंमें आकर संयमासंयम और सम्यक्त्वके साथ पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कालतक रहता है यह बात नहीं बनती, क्योंकि तिर्यंचोंमें संयमासंयम कुछ कम पूर्वकोटिसे अधिक काल तक नहीं पाया जाता ?

समधान—नहीं, क्योंकि 'तिर्यंचोंमें संयमासंयमका पालनकर, फिर दस हजार वर्ष

ट्ठिदिदेवेसुप्पज्जिय सम्मत्तं घेत्तूण अणंताणुबंधिविसंजोयणाए तत्थ कम्मणिज्जरं करिय एइंदिए गंतूण पलिदो० असंखे०भागमेत्तकालेण हदसमुप्पत्तियं कम्मं काऊणे त्ति परियट्टणेण तेसिं पलिदो० असंखे०भागमेत्तवाराणमुवलंभादो । कुदो एदं णव्वदे ? उवरिमदेसामासियसुत्तादो । कसायउवसामणवारा जेण चत्तारि चेव उक्कस्सेण तेण चत्तारि वारे कसाए उवसामिदूण एइंदिएसु गदो त्ति णिद्दिट्ठं । एइंदिएसु पलिदो० असंखे०भागमेत्तकालेण विणा कम्मं हदसमुप्पत्तियं ण होदि त्ति जाणावणट्ठं एइंदिएसु पलिदो० असंखे०भागमच्छिदूण कम्मं हदसमुप्पत्तियं काऊण कालं गदो त्ति भणिदं । जेणेदं पलिदो० असंखे०भागग्गहणं देसामासियं तेण संजमं घेत्तूण देवेसुप्पज्जिय तत्थ सम्मत्तं पडिवज्जिय पुणो एइंदिए गंतूण तत्थ पलिदो० असंखे०भागमेत्तकालेण कम्मं हदसमुप्पत्तियं काऊण णिप्पिडिदि त्ति सव्वत्थ वत्तव्वं । उदयावलियट्ठिदीणं खवणादिसु ट्ठिदिखंडयघादो णत्थि त्ति जाणावणट्ठं अपच्छिमे ट्ठिदिखंडए अवगदे अधट्ठिदिगलणाए उदयावलियाए गलंतीए त्ति भणिदं । खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण पलिदो० असंखे०भागमेत्तसंजमासंजमकंडयाणि तत्तो विसेसाहियमेत्ताणि अणंताणुबंधि-विसंजोयणकंडयाणि अट्ठ संजमकंडयाणि चदुक्खुत्तो कसायउवसामणाओ करिय आगंतूण पुणो सुहुमणिगोदेसुववज्जिय तत्थ पलिदोवमस्स असंखे०भागमेत्तकालेण

आयुवाले देवोंमें उत्पन्न हो और सम्यक्त्वको प्राप्त कर अनन्तानुबन्धी चारकी विसंयोजना द्वारा वहाँ कर्मोंकी निर्जराकर फिर एकेन्द्रियोंमें जाकर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कालके द्वारा कर्मको हतसमुत्पत्तिक करके इस प्रकार परिवर्तन द्वारा वे पल्यके असंख्यातवें भाग बार पाये जाते हैं ।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—उपरिम देशामर्षक सूत्रसे जाना जाता है ।

चूंकि कषायोंके उपशमानेके बार अधिकसे अधिक चार ही हैं, इसलिये 'चार बार कषायोंको उपशमाकर एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न हुआ' यह कहा है । एकेन्द्रियोंमें पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कालके बिना कर्म हतसमुत्पत्तिक नहीं होता, यह बात जतानेके लिये 'एकेन्द्रियोंमें पल्यके असंख्यातवें भाग काल तक रहकर और कर्मको हतसमुत्पत्तिक करके मरा' यह कहा है । चूंकि सूत्रमें जो पल्यके असंख्यातवें भाग इस पदका ग्रहण किया है सो यह पद देशामर्षक है, इसलिये सर्वत्र संयमको ग्रहणकर, अनन्तर देवोंमें उत्पन्न होकर वहां सम्यक्त्वको प्राप्तकर फिर एकेन्द्रियोंमें जाकर वहां पल्यके असंख्यातवें कालके द्वारा कर्मको हतसमुत्पत्तिक करके वहाँसे निकलता है यह कथन करना चाहिये । उदयावलिको प्राप्त स्थितियोंका क्षपणा आदिके समय स्थितिकाण्डकघात नहीं होता इस बातके जतानेके लिये 'अन्तिम स्थितिकाण्डकके घात हो जानेपर अधःस्थितिगलनाके द्वारा उदयावलिके गलते समय' यह कहा है । क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर फिर पल्यके असंख्यातवें भाग बार संयमासंयमकाण्डकोंको, उससे विशेष अधिक बार अनन्तानुबन्धीके विसंयोजनाकाण्डकोंको, आठ बार संयमकाण्डकोंको धारण कर अनन्तर चार बार कषायोंको उपशमाकर आया और सूक्ष्म निगोदियोंमें उत्पन्न हुआ । वहां पल्यके असंख्यातवें भाग कालके द्वारा कर्मको

कम्मं हदसमुप्पत्तियं कादूण पुणो बादरेइंदियपज्जत्तेसुववज्जिय तत्थ अंतोमुहुत्तमच्छिय पुणो पुव्वकोडाउअमणुस्सेसुववज्जिय सव्वलहुं जोणिणिक्कमणजम्मणेण अंतोमुहुत्तब्भहिय- अट्ठवस्साणि गमिय पुणो सम्मत्तं संजमं च जुगवं पडिवज्जिय अणंताणुबंधिं विसंजोएदूण पुणो वेदगं पडिवज्जिदूण दंसणमोहणीयं खविय पुणो देसूणपुव्वकोडिं संजमगुणसेढिणिज्जरं करिय पुणे अंतोमुहुत्तावसेसे सिज्झिदव्वए त्ति तिण्णि वि करणाणि करिय चारित्तमोहक्खवणाए अब्भुट्ठिय पुणो अणियट्टिअद्धाए संखेज्जेसु भागेसु गदेसु अट्ठकसायचरिमफालिं परसरूवेण संछुहिय पुणो दुसमयूणावलियमेत्त- गोवुच्छाओ गालिय एगणिसेगे दुसमयकालट्ठिदिगे सेसे अट्ठकसायाणं जहण्णपदं होदि त्ति एसो भावत्थो।

§ २४९. संपहि एत्थ परूवणा पमाणमप्पाबहुअमिदि तीहि अणियोगद्दारेहि संचयाणुगमं कस्सामो। तं जहा—कम्मट्ठिदिआदिसमयप्पहुडि उक्कस्सणिल्लेवण- कालमेत्ता समयपबद्धा जहण्णदव्वे णत्थि। कुदो? साहावियादो। देसूणपुव्वकोडिमेत्ता वि णत्थि, संजमद्धाए अट्ठकसायाणं बंधाभावादो। सेससमयपबद्धाणं कम्मपरमाणू अत्थि। सेसदोअणियोगद्दाराणं परूवणा जाणिय कायव्वा।

§ २५०. एत्थ पयडिगोवुच्छापमाणाणुगमं कस्सामो। तं जहा—दिवड्ढ- गुणिदेगसमयपबद्धे दिवड्ढगुणहाणीए ओवट्टिदे पयडिगोवुच्छा आगच्छदि,

---

हतसमुत्पत्तिक करके फिर बादर एकेन्द्रिय पर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुआ। वहां अन्तर्मुहूर्त काल तक रहा। फिर पूर्वकोटिकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न होकर अतिशीघ्र योनिसे निकलनेरूप जन्मसे लेकर अन्तर्मुहूर्त अधिक आठ वर्ष बिताकर फिर सम्यक्त्व और संयमको एकसाथ प्राप्त करके और अनन्तानुबन्धी चारकी विसंयोजना कर फिर वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त कर और दर्शनमोहनीयकी क्षपणा कर फिर कुछ कम पूर्वकोटि काल तक संयम गुणश्रेणिनिर्जराको करके फिर सिद्ध पदको प्राप्त करनेके लिये जब अन्तर्मुहूर्त काल शेष रह जाय तब तीनों करणोंको करके चरित्रमोहनीयकी क्षपणाके लिये उद्यत हुआ। फिर अनिवृत्तिकरणके कालमें संख्यात बहुभागके व्यतीत होनेपर आठ कषायोंकी अन्तिम फालिको पर प्रकृतिरूपसे निक्षिप्त कर फिर दो समय कम एक आवलि प्रमाण गोपुच्छाओंको गलाकर दो समयकी स्थितिवाले एक निषेकके शेष रहने पर आठ कषायोंका जघन्य पद होता है यह इस सूत्रका भावार्थ है।

§ २४९. अब यहां प्ररूपणा, प्रमाण और अल्पबहुत्व इन तीन अनुयोगोंके द्वारा संचयका विचार करते हैं जो इस प्रकार है—कर्मस्थितिके प्रथम समयसे लेकर उत्कृष्ट निर्लेपन कालप्रमाण समयप्रबद्ध जघन्य द्रव्यमें नहीं हैं क्योंकि ऐसा स्वभाव है। कुछ कम पूर्वकोटि काल प्रमाण समयप्रबद्ध भी जघन्य द्रव्यमें नहीं हैं, क्योंकि संयमकालमें आठ कषायोंका बन्ध नहीं होता। शेष समयप्रबद्धोंके कर्मपरमाणु हैं। शेष दो अनुयोगद्वारोंका कथन जान कर करना चाहिये।

§ २५०. अब यहां प्रकृतिगोपुच्छाके प्रमाणका विचार करते हैं जो इस प्रकार है— एक समयप्रबद्धको डेढ़ गुणहानिसे गुणा करके फिर उसमें गुणहानिका भाग देने पर प्रकृति-

पुव्वकोडिकालम्मि एगगुणहाणीए वि गलणाभावादो। संपहि दिवड्ढगुणिदसमयपबद्धे चरिमफालीए ओवट्टिदे विगिदिगोवुच्छा आगच्छदि। सा वि पयडिगोवुच्छादो असंखेज्जगुणा, चरिमफालिआयामस्स एगगुणहाणीए असंखे०भागत्तादो। पुणो विगिदिगोवुच्छादो अपुव्वाणियट्टिगुणसेढिगोवुच्छा असंखे०गुणा, चरिमफालि-आयामादो गुणसेढिगोवुच्छागमणणिमित्तपलिदोवमासंखेज्जभागमेत्तभागहारस्सासंखेज्ज-गुणहीणत्तादो। एवमेदमेगं ट्ठाणं।

❀ तदो पदेसुत्तरं।

§ २५१. तदो जहण्णट्ठाणादो पदेसुत्तरं हि ट्ठाणमत्थि त्ति संबंधो कायव्वो। जेणेदं देसामासियं तेण दुपदेसुत्तरादिसेसट्ठाणाणं सूचयं।

❀ णिरंतराणि ट्ठाणाणि जाव एगट्ठिदिविसेसस्स उक्कस्सपदं।

§ २५२. पदेसुत्तरादिकमेण णिरंतराणि ट्ठाणाणि ताव गच्छंति जाव एगट्ठिदिविसेसस्स दव्वमुक्कस्सं जादं ति।

❀ एदमेगफद्दयं।

§ २५३. एत्थ अंतराभावादो।

❀ एदेण कमेण अट्ठण्हं पि कसायाणं समयूणावलियमेत्ताणि फद्दयाणि उदयावलियादो।

गोपुच्छा आती है, क्योंकि पूर्वकोटि कालके भीतर एक गुणहानिका भी गलन नहीं होता है। अब डेढ़ गुणहानिसे गुणित एक समयप्रबद्धमें अन्तिम फालिका भाग देने पर विकृतिगोपुच्छा आती है। वह भी प्रकृतिगोपुच्छसे असंख्यातगुणी है, क्योंकि अन्तिम फालिका आयाम एक गुणहानिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। फिर विकृतिगोपुच्छासे अपूर्वकरणकी गुणश्रेणिगोपुच्छा और अनिवृत्तिकरणकी गुणश्रेणिगोपुच्छा असंख्यातगुणी है, क्योंकि गुणश्रेणिगोपुच्छाके प्राप्त करनेके लिये जो पल्यका असंख्यातवां भागप्रमाण भागहार है वह अन्तिम फालिके आयामसे असंख्यातगुणा हीन है। इस प्रकार यह एक स्थान है।

❀ जघन्य स्थानके ऊपर एक प्रदेश बढ़ाने पर दूसरा स्थान होता है।

§ २५१. उससे अर्थात् जघन्य द्रव्यसे एक प्रदेश अधिक करने पर दूसरा स्थान होता है। इस प्रकार इस सूत्रका सम्बन्ध करना चाहिये। चूंकि यह सूत्र देशामर्षक है, इसलिये यह दो प्रदेश अधिक आदि शेष स्थानोंका सूचक है।

❀ इस प्रकार एक स्थितिविशेषके उत्कृष्ट पदके प्राप्त होने तक निरन्तर स्थान होते हैं।

§ २५२. एक-एक प्रदेश अधिक होकर निरन्तर स्थान तब तक प्राप्त होते जाते हैं जब जाकर एक स्थितिविशेषका उत्कृष्ट द्रव्य प्राप्त होता है।

❀ ये सब स्थान मिलकर एक स्पर्धक हैं।

§ २५३. क्योंकि यहाँ अन्तर नहीं पाया जाता।

❀ इस क्रमसे आठों ही कषायोंके उदयावलिसे लेकर एक समयकम आवलि प्रमाण स्पर्धक होते हैं।

२५४. जेण कमेण पढमफद्दयं परूविदमेदेणेव कमेण समयूणावलियमेत्तफद्दयाणि परूवेदव्वाणि त्ति भणिदं होदि। कत्तो ताणि परूविज्जंति ? उदयावलियादो। तं जहा—दोणिसेगे तिसमयकालट्ठिदिगे धरेदूण ट्ठिदस्स[1] विदियं फद्दयं, खविदकम्मंसियदोदोपगदि-विगिदिगोवुच्छाहिंतो दोअपुव्वगुणसेढि[2]गोवुच्छाहिंतो च गुणिदकम्मंसियपयडि-विगिदि-अपुव्वगुणसेढिगोवुच्छाणमसंखेज्जगुणाणं दुचरिमअणियट्टिगुणसेडिगोवुच्छादो असंखेज्ज-गुणहीणत्तुवलंभादो खविद-गुणिदकम्मंसियाणं चरिमअणियट्टिगुणसेढिगोवुच्छाणं सरिसत्तुवलंभादो च।

§ २५५. संपहि जहण्णपगदि-विगिदिअपुव्वगुणसेढिगोवुच्छाओ परमाणुत्तरकमेण छप्पि समयाविरोहेण वड्ढावेदव्वाओ जाव असंखेज्जगुणत्तं पत्ताओ त्ति। णवरि जहण्णविदियफद्दयादो उक्कस्सफद्दयं विसेसाहियं; दोण्हमणियट्टिगुणसेढिगोवुच्छाणं वड्ढीए अभावादो। एवं समयूणावलियमेत्तफद्दयाणमुप्पत्ती पुध पुध परूवेदव्वा। णवरि एदेसिं फद्दयाणमुक्कस्सभावो खविद-गुणिदकम्मंसिएसु देसूणपुव्वकोडिमेत्त-कालेण[3] परिहीणेसु वत्तव्वो।

---

§ २५४. जिस क्रमसे पहला स्पर्धक कहा है उसी क्रमसे एक समय कम आवलि-प्रमाण स्पर्धक कहने चाहिए, यह इस सूत्रका तात्पर्य है।

शंका—इन स्पर्धकोंका कथन कहाँसे लेकर करना चाहिए ?

समाधान—उदयावलिसे लेकर। खुलासा इस प्रकार है—तीन समयकी स्थितिवाले दो निषेकोंको धारणकर स्थित हुए जीवके दूसरा स्पर्धक होता है, क्योंकि क्षपितकर्मांशके दो प्रकृतिगोपुच्छाओं और दो विकृतिगोपुच्छाओंसे तथा अपूर्वकरणकी गुणश्रेणि गोपुच्छासे गुणितकर्मांशके प्रकृति, विकृति और अपूर्वकरणकी गुणश्रेणि गोपुच्छाएं असंख्यातगुणी होती हुई भी अनिवृत्तिकरणकी द्विचरम गुणश्रेणिगोपुच्छासे असंख्यातगुणी हीन पाई जाती हैं। तथा क्षपितकर्मांश और गुणितकर्मांशके अनिवृत्तिकरणकी अन्तिम गुणश्रेणिगोपुछाएं समान पाई जाती हैं।

§ २५५. अब दोनों जघन्य प्रकृतिगोपुच्छाएं, जघन्य दोनों विकृतिगोपुच्छाएं और अपूर्व-करणकी दोनों गुणश्रेणिगोपुच्छाएं इन छहों ही गोपुच्छाओंको एक-एक परमाणु अधिकके क्रमसे असंख्यातगुणी होने तक शास्त्रानुसार बढ़ाओ। किन्तु इतनी विशेषता है कि जघन्य दूसरे स्पर्धकसे उत्कृष्ट स्पर्धक विशेष अधिक है, क्योंकि अनिवृत्तिकरणकी दोनोंके गुणश्रेणि गोपुच्छाएं समान होती हैं, उनमें वृद्धिका अभाव है। इस प्रकार एक समयकम आवलिप्रमाण स्पर्धकोंकी उत्पत्तिका कथन पृथक् पृथक् करना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इन स्पर्धकोंका उत्कृष्टपना कुछ कम पूर्वकोटि कालसे हीन क्षपितकर्मांश और गुणितकर्मांश जीवोंके कहना चाहिये।

---

१. ता०प्रतौ 'ट्ठिदस्स इति पाठः। २. आ०प्रतौ '-गोवुच्छाहिंतो अपुव्वगुणसेढि-' इति पाठः।
३. आ०प्रतौ '-पुव्वकोडिमेत्तं कालेण' इति पाठः।

❀ **अपच्छिमट्ठिदिखंडयस्स[1] चरिमसमयजहण्णपदमादिं[2] कादूण जावुक्कस्सपदेससंतकम्मं ति एदमेगं फद्दयं ।**

§ २५६. दुचरिमादिट्ठिदिखंडयपडिसेहफलो अपच्छिमट्ठिदिखंडयणिद्देसो । तस्स दुचरिमादिफालीणं पडिसेहफलो चरिमसमयणिद्देसो । गुणिदकम्मंसियपडिसेहफलो जहण्णपदणिद्देसो । जहण्णचरिमफालीदो जावट्ठकसायाणमुक्कस्सदव्वं ति एत्थ अंतराभावपदुप्पायणफलो एगफद्दयणिद्देसो । संपहि चरिमफालिजहण्णदव्वं घेत्तूण कालपरिहाणिं काऊण ट्ठाणपरूवणाए कीरमाणाए जहा मिच्छत्तस्स कदा तहा कायव्वा, विसेसाभावादो । णवरि देसूणपुव्वकोडी चेव ओदारेदव्वा, हेट्ठा ओदारणे असंभवादो । संपहि चत्तारि पुरिसे अस्सिदूण पंचहि वड्ढीहि वड्ढावेदव्वं जाव असंखेज्जगुणं ति । पुणो चरिमसमयणेरइएण संधाणं करिय ओघुक्कस्सदव्वं ति वड्ढाविदे खविदकम्मंसियमस्सिदूण कालपरिहाणीए ट्ठाणपरूवणा कदा होदि । एवं गुणिदकम्मंसियं पि अस्सिदूण कालपरिहाणीए ट्ठाणपरूवणा कायव्वा । णवरि एगगोवुच्छाए ऊणं कादूणागदो त्ति वत्तव्वं । एवं परूवणाए कदाए गुणिदकम्मंसियमस्सिदूण कालपरिहाणीए अट्ठकसायाणं ट्ठाणपरूवणा कदा होदि । संपहि खविदकम्मंसियमस्सिदूण संतकम्मे ओदारिज्जमाणे मिच्छत्तस्सेव ओदारेदव्वं जाव मिच्छादिट्ठिचरिम-

---

❀ **तथा अन्तिम स्थितिकाण्डकके अन्तिम समयवर्ती जघन्य द्रव्यसे लेकर उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मके प्राप्त होने तक एक स्पर्धक होता है ।**

§ २५६. द्विचरम आदि स्थितकाण्डकोंका निषेध करनेके लिये 'अन्तिम स्थितिकाण्डक' पदका निर्देश किया है । अन्तिम स्थितिकाण्डककी द्विरम आदि फालियोंका निषेध करनेके लिये 'अन्तिम समय' पदका निर्देश किया है । गुणितकर्मांशका निषेध करनेके लिये 'जघन्य' पदका निर्देश किया है । जघन्य अन्तिम फालिसे लेकर आठ कषायोंके उत्कृष्ट द्रव्यके प्राप्त होने तक इस प्रकार यहाँ अन्तरका अभाव दिखलानेके लिये 'एक स्पर्धक' पदका निर्देश किया है । अब अन्तिम फालिके जघन्य द्रव्यकी अपेक्षा कालकी हानि द्वारा स्थानोंका कथन करने पर जिस प्रकार मिथ्यात्वका कथन किया उसी प्रकार आठ कषायोंका कथन करना चाहिये, क्योंकि उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है । किन्तु इतनी विशेषता है कि कुछ कम पूर्वकोटि काल ही उतारना चाहिये, इससे और नीचे उतारना सम्भव नहीं है । अब चार पुरुषोंकी अपेक्षा पाँच वृद्धियोंके द्वारा असंख्यातगुणा प्राप्त होने तक बढ़ाना चाहिये । फिर अन्तिम समयवर्ती नारकीसे मिलान करके ओघ उत्कृष्ट द्रव्य तक बढ़ाने पर क्षपितकर्मांशकी अपेक्षा कालकी हानि द्वारा स्थानोंका कथन समाप्त होता है । इसी प्रकार गुणितकर्मांशकी अपेक्षा भी कालकी हानिद्वारा स्थानोंका कथन करना चाहिये । इतनी विशेषता है कि एक गोपुच्छा कम करके आया है ऐसा कहना चाहिये । इस प्रकार कथन करने पर गुणितकर्मांशकी अपेक्षा कालकी हानिद्वारा आठ कषायोंके स्थानोंका कथन समाप्त होता है । अब क्षपितकर्मांशकी अपेक्षा सत्कर्मके उतारने पर मिथ्यादृष्टि के अन्तिम समय

---

२. ता०प्रतौ 'अपच्छिमाट्ठिदिखंडयस्स' इति पाठः ३. ता०आ०प्रत्योः '-जहण्णपदमादि' इति पाठः ।

समओ त्ति । पुणो णवकबंधेणूणगुणसेढिगोवुच्छं वड्ढाविय ओदारेदव्वं जाव अपुव्वकरणावलियाए सुहुमणिगोदगोवुच्छं पत्तो त्ति । पुणो एत्थ ट्ठविय पुव्वविहाणेण वड्ढाविय णेरइएण सह संधिय ओघुक्कस्सं ति वड्ढाविदे खविदकम्मंसियमस्सिदूण संतकम्मट्ठाणपरूवणा कदा होदि । संपहि गुणिदकम्मंसियं पि अस्सिदूण संतकम्मट्ठाणाणं जाणिदूण परूवणा कायव्वा ।

❀ अणंताणुबंधिणं मिच्छत्तभंगो ।

§ २५५. जहा मिच्छत्तस्स जहण्णसामित्तं परूविदं तहा अणंताणुबंधीणं पि परूवेदव्वं, खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण असण्णिपंचिंदिएसु पुणो देवेसु च उववज्जिय अंतोमुहुत्ते गदे उवसमसम्मत्तं पडिवज्जिय पुणो अंतोमुहुत्तेण वेदगसम्मत्तं घेत्तूण वेछावट्ठीओ भमिय अणंताणुबंधिचउक्कं विसंजोएदूण दुसमयकालेगणिसेगधारणेण विसेसाभावादो । पज्जवट्ठियणए पुण अवलंबिज्जमाणे अत्थि विसेसो, देवेसुप्पज्जिय उवसमसम्मत्ते गहिदे तत्थ अणंताणुबंधिचउक्कं विसंजोजिय पुणो अंतोमुहुत्तेण मिच्छत्तं गंतूण अधापवत्तेण संकंतकसायदव्वं घेत्तूण वेछावट्ठिसागरोवमाणि तद्दव्वगालणं करिय जहण्णसामित्तविहाणादो । एसो विसेसो सुत्तेणाणुवइट्ठो कुदो णव्वदे ? अणंताणुबंधिचउक्कस्स विसंजोयणपयडित्तण्णहाणुववत्तीदो । ण च विसंजोयणपयडीण-

---

के प्राप्त होने तक मिथ्यात्वकी तरह उतारना चाहिये। फिर नवकबन्धसे न्यून गुणश्रेणि-गोपुच्छाको बढ़ाकर अपूर्वकरणकी आवलिके सूक्ष्म निगोदकी गोपुच्छाको प्राप्त होने तक उतारना चाहिये। फिर यहाँ ठहराकर और पूर्व विधिसे बढ़ाकर नारकीके साथ जोड़कर ओघ उत्कृष्टके प्राप्त होने तक बढ़ाने पर क्षपितकर्मांशकी अपेक्षा सत्कर्मस्थानका कथन समाप्त होता है। अब गुणितकर्मांशकी अपेक्षा भी सत्कर्मस्थानोंका जानकर कथन करना चाहिये।

❀ अनन्तानुबन्धियोंका भंग मिथ्यात्वके समान है।

§ २५७. जिस प्रकार मिथ्यात्वके जघन्य स्वामीका कथन किया उसी प्रकार अनन्तानुबन्धियोंके जघन्य स्वामीका भी कथन करना चाहिये, क्योंकि क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर पहले असंज्ञी पंचेन्द्रियोंमें फिर देवोंमें उत्पन्न होकर अन्तमुहूर्त जाने पर उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हो फिर अन्तमुहूर्त काल द्वारा वेदकसम्यक्त्वको ग्रहण कर और दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण कर अनन्तानुबन्धी चारकी विसंयोजना करके दो समयकी स्थितिवाले एक निषेकको धारण करनेकी अपेक्षा कोई विशेषता नहीं है। परन्तु पर्यायार्थिक नयका अवलम्बन करने पर विशेषता है, क्योंकि देवोंमें उत्पन्न होकर उपशमसम्यक्त्वके ग्रहण करने पर वहाँ अनन्तानुबन्धी चारकी विसंयोजना करके फिर अन्तर्मुहूर्तमें मिथ्यात्वमें जाकर और अधःप्रवृत्तभागहारके द्वारा संक्रमणको प्राप्त हुए कषायके द्रव्यको ग्रहण कर फिर दो छयासठ सागर कालतक उसके द्रव्यको गलाकर जघन्य स्वामित्वका कथन किया है।

शंका—यह विशेषता सूत्रमें नहीं कही फिर कैसे जानी जाती है ?

समाधान—यदि ऐसा न माना जाय तो अनन्तानुबन्धीचतुष्क विसंयोजना प्रकृति नहीं

मण्णहा खविदकम्मंसियत्तं संभवइ, विप्पडिसेहादो। अणंताणुबंधीणं कसाएहिंतो अधापवत्तेण संकंतदव्वं ण प्पहाणं, तस्स अंतोमुहुत्तमेत्तणवकबंधदव्वं वेछावट्ठिकालेण गालिय पुव्वं व विसंजोइय दुसमयकालेगणिसेगम्मि जहण्णपदेण होदव्वं। ण च संकंतदव्वस्स पहाणत्तं, आयस्स वयाणुसारित्तदंसणादो। ण चेदमसिद्धं, खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण तिपलिदोवमिएसु वेछावट्ठिसागरोवमिएसु च संचिदपुरिसवेददव्वस्स मिच्छत्तं गंतूण पुणो सम्मत्तं पडिवज्जिय खवगसेढिमारूढस्स णवुंसयवेदजहण्णपदपरूवयसुत्तादो तस्स सिद्धीए ? एत्थ परिहारो वुच्चदे—ण णवकबंधदव्वस्स पहाणत्तं, अंतोमुहुत्तमेत्तसमयपबद्धेसु गलिदवेछावट्ठिसागरोवममेत्त-णिसेगेसु अवसेसदव्वम्मि एगसमयपबद्धस्स असंखे०भागत्तुवलंभादो। ण च एदं, अणंताणुबंधिचउक्कं विसंजोएंतस्स गुणसेढिणिज्जराए एगसमयपबद्धस्स असंखे०-भागत्तप्पसंगादो। ण च एगसमयपबद्धस्स असंखे०भागेण गुणसेढिणिज्जरा होदि, तत्थ एगसमएण गलंतजहण्णदव्वस्स वि असंखेज्जसमयपबद्धपमाणत्तादो। ण च संतदव्वाणुसारिणी गुणसेढिणिज्जरा, खविद-गुणिदकम्मंसिएसु अणियट्टिपरिणामेहि

हो सकती है। तथा अन्य प्रकारसे विसंयोजनारूप प्रकृतिका क्षपितकर्मांशपना बन नहीं सकता है, क्योंकि अन्य प्रकारसे माननेमें विरोध आता है।

शंका—अधःप्रवृत्त भागहारके द्वारा कषायोंके द्रव्यमेंसे अनन्तानुबन्धियोंमें संक्रमणको प्राप्त हुआ द्रव्य प्रधान नहीं है, क्योंकि वह अन्तर्मुहूर्तप्रमाण समयप्रबद्धोंके असंख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिए अन्तर्मुहूर्त कालके भीतर न्यूतन बँधे हुए द्रव्यको दो छयासठ सागर कालके द्वारा गलाकर और पहलेके समान विसंयोजना करके दो समयकी स्थितिवाला एक निषेक जघन्य द्रव्य होना चाहिये। यदि कहा जाय कि संक्रमणको प्राप्त हुआ द्रव्य प्रधान है, सो भी बात नहीं है, क्योंकि आय व्ययके अनुसार देखा जाता है। यदि कहा जाय कि यह बात असिद्ध है सो भी बात नहीं है, क्योंकि क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर तीन पल्यकी स्थितिवालोंमें और दो छयासठ सागरकी स्थितिवालोंमें पुरुषवेदके द्रव्यका संचय करके मिथ्यात्वको प्राप्त हो फिर सम्यक्त्वको प्राप्त हो क्षपकश्रेणि पर चढ़े हुए जीवके नपुंसक वेदके जघन्य पदका कथन करनेवाले सूत्रसे उसकी सिद्धि होती है ?

समाधान—अब इस शंकाका निराकरण करते हैं—यहाँ नवकबन्धके द्रव्यकी प्रधानता नहीं है, क्योंकि, अन्तर्मुहूर्तप्रमाण समयप्रबद्धोंमेंसे दो छयासठ सागर कालके द्वारा निषेकोंके गल जाने पर जो द्रव्य शेष रहता है वह एक समयप्रबद्धका असंख्यातवाँ भाग पाया जाता है। परन्तु यह बात बनती नहीं है, क्योंकि ऐसा मानने पर अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजना करनेवाले जीवके गुणश्रेणिनिर्जरामें एक समयप्रबद्धके असंख्यातवें भागका प्रसंग प्राप्त होता है। परन्तु एक समयप्रबद्धके असंख्यातवें भागके द्वारा गुणश्रेणि निर्जरा नहीं होती, क्योंकि वहाँ पर एक समय द्वारा गलनेवाला द्रव्य भी असंख्यात समय-प्रबद्धप्रमाण पाया जाता है। यदि कहा जाय कि सत्त्वमें जिस हिसाबसे द्रव्य रहता है उसी हिसाबसे गुणश्रेणिनिर्जरा होती है, सो यह कहना भी ठीक नहीं है, क्योंकि ऐसा

गुणसेढिणिज्जराए समाणत्तण्णहाणुववत्तीदो। किं च ण णवकबंधदव्वस्स पहाणत्तं, 'अणंताणुबंधीणं मिच्छत्तभंगो' त्ति सुत्तेण खविदकम्मंसियत्तस्स परूविदत्तादो। ण च णवकबंधे घेप्पमाणे खविदकम्मंसियत्तं फलवंतं, खविद-गुणिदकम्मंसियाणं संजुत्तद्धाए समाणजोगुवलंभादो। ण च वयाणुसारी चेव आओ त्ति सव्वत्थ अत्थि णियमो, संजुत्तपढमसमयप्पहुडि आवलियमेत्तकालम्मि वओ णत्थि त्ति सेसकसाएहिंतो अधापवत्तसंकमेण अणंताणुबंधीणमागच्छमाणदव्वस्स अभावप्पसंगादो। ण च अभावो, 'बंधे अधापवत्तो' त्ति सुत्तेण सह विरोहादो। ण च बंधणिबंधणस्स संकमस्स संकममवेक्खिय पवुत्ती, विप्पडिसेहादो। ण पडिग्गहदव्वाणुसारी चेव अण्णपयडीहिंतो आगच्छमाणदव्वं ति णियमो वि एत्थ संभवइ, संजुज्जमाणावत्थं मोत्तूण तस्स अण्णत्थ पवुत्तीदो। ण च वयाणुसारी आओ ण होदि चेवे त्ति णियमो वि, सव्वघादीणं पि पदेसग्गेण देसघादीहि समाणत्तप्पसंगादो। ण च अणंताणुबंधीणं वुत्तकमो णवुंसयवेदादिपयडीणं वोत्तुं सक्किज्जदे, विसंजोयणपयडीहि अविसंजोयणपयडीणं समाणत्तविरोहादो। तम्हा संकंतदव्वस्सेव पहाणत्तमिदि दट्ठव्वं।

मानने पर क्षपितकर्मांश और गुणितकर्मांशके अनिवृत्तिकरणरूप परिणामोंके द्वारा गुणश्रेणि निर्जरा समान नहीं बन सकती है। दूसरे इस प्रकार भी नवकबन्धके द्रव्यकी प्रधानता नहीं है, क्योंकि 'अनन्तानुबन्धियोंका भंग मिथ्यात्वके समान है' इस सूत्र द्वारा क्षपितकर्मांशपनेका कथन किया है। परन्तु नवकबन्धके ग्रहण करने पर क्षपितकर्मांशपनेकी कोई सफलता नहीं रहती, क्योंकि क्षपितकर्मांश और गुणितकर्मांश इन दोनोंके अनन्तानुबन्धीसे संयुक्त होनेके कालमें समान योग पाया जाता है। और व्ययके अनुसार ही आय होता है सो यह नियम भी सर्वत्र नहीं है, क्योंकि ऐसा नियम मानने पर अनन्तानुबन्धियोंका संयोग होनेके पहले समयसे लेकर एक आवलि कालके भीतर अनन्तानुबन्धीका व्यय नहीं है इसलिये उस समय शेष कषायोंके द्रव्यमेंसे अधःप्रवृत्त संक्रमणके द्वारा जो अनन्तानुबन्धीका द्रव्य आता है उसका अभाव प्राप्त होता है। परन्तु उसका अभाव तो किया नहीं जा सकता है, क्योंकि ऐसा मानने पर उक्त कथनका 'अधःप्रवृत्त संक्रमण बन्धके समय होता है' इस सूत्रके साथ विरोध आता है। यदि कहा जाय कि जो संक्रम बन्धके निमित्तसे होता है उसकी प्रवृत्ति संक्रमके निमित्तसे होने लगे, सो भी बात नहीं है, क्योंकि इसका निषेध है। यदि यह नियम लागू किया जाय कि ग्रहण किये कये द्रव्यके अनुसार ही अन्य प्रकृतियोंमेंसे द्रव्य आता है सो यह नियम भी यहां सम्भव नहीं है, क्योंकि अनन्तानुबन्धिके संयोगकी अवस्थाके सिवा इस नियमकी अन्यत्र प्रवृत्ति होती है। तथा 'व्ययके अनुसार आय होता ही नहीं' ऐसा भी नियम नहीं है, क्योंकि ऐसा मानने पर सर्वघातियोंके भी प्रदेश देशघातियोंके समान प्राप्त हो जायंगे। तथा अनन्तानुबन्धियोंके लिये जो क्रम कह आये हैं वह नपुंसकवेद आदि प्रकृतियोंके लिये भी कहा जा सकता है, सो भी बात नहीं है, क्योंकि विसंयोनारूप प्रकृतियोंके साथ अविसंयोजनारूप प्रकृतियोंकी समानता माननेमें विरोध आता है। इसलिये यहां संक्रमणको प्राप्त हुए द्रव्यकी ही प्रधानता है। ऐसा जानना चाहिये।

विसंजोइज्जमाणअणंताणुबंधीणं पदेसग्गं किं सव्वघादीसु चेव संकमदि आहो देसघादीसु चेव उभयत्थ वा? ण पढमपक्खो, चरित्तमोहणिज्जे कम्मे बज्झमाणे संते तस्स अपडिग्गहत्तविरोहादो। ण विदियपक्खो वि, तत्थ वि पुव्वुत्तदोससंभवादो। तदो तदियपक्खेण होदव्वं, परिसिट्ठत्तादो। एवं च ट्ठिदे[1] संते संजुत्तावत्थाए सव्वघादीणं चेव दव्वेण अणंताणुबंधिसरूवेण परिणमेयव्वं, अण्णहा अधापवत्तभागहारस्स आणंतियप्पसंगादो। णासंखेज्जत्तं, अणंताणुबंधिदव्वस्स देसघादिपदेसग्गादो असंखेज्जगुणहीणत्तप्पसंगादो। ण च एवं, उवरिभण्णमाणअप्पाबहुअसुत्तेण सह विरोहादो त्ति? ण एस दोसो, अधापवत्तभागहारो सजाइविसओ चेव, असंखेज्जो त्ति अब्भुवगमादो। देसघादिकम्मेहिंतो सव्वघादिकम्माणं संकममाणदव्वस्स पमाणपरूवणा किण्ण कदा? ण, तस्स पहाणत्ताभावादो।

§ २५६. संपहि एत्थ जहण्णदव्वपमाणाणुगमे कीरमाणे पढमं ताव पयडिगोवुच्छपमाणाणुगमं कस्सामो। तं जहा—दिवड्ढगुणहाणिगुणिदेगेइंदियसमयपबद्धे अंतोमुहुत्तेणोवट्टिदओकड्डुकड्डणभागहारेण अंतोमुहुत्तोवट्टिदअधापवत्तेण वेछावट्ठिअब्भंतरणाणागुणहाणिसलागाणमण्णोण्णब्भत्थरासिणा दिवड्ढगुणहाणीए च ओवट्टिदे पयडिगोवुच्छा आगच्छदि। संपहि विगिदिगोवुच्छा पुण दिवड्ढगुण-

शंका—विसंयोजनाको प्राप्त होनेवाले अनन्तानुबन्धियोंके प्रदेश क्या सर्वघाती प्रकृतियोंमें ही संक्रान्त होते हैं या देशघाति प्रकृतियोंमें ही संक्रान्त होते हैं या दोनों प्रकारकी प्रकृतियोंमें संक्रान्त होते हैं? इनमेंसे पहला पक्ष तो ठीक नहीं, क्योंकि चरित्रमोहनीयकर्मका बन्ध होते समय उसे अपद्ग्रह माननेमें विरोध आता है। दूसरा पक्ष भी ठीक नहीं है, क्योंकि वहां भी पूर्वोक्त दोष सम्भव है। इसलिये परिशेष न्यायसे तीसरा पक्ष होना चाहिये। ऐसा होते हुए भी अनन्तानुबन्धीके पुनः संयोगकी अवस्थामें सर्वघातियोंके ही द्रव्यको अनन्तानुबन्धीरूपसे परिणमना चाहिये, अन्यथा अधःप्रवृत्तभागहारको अनन्तपनेका प्रसंग प्राप्त होगा। यदि कहा जाय कि वह असंख्यातरूप रहा आवे सो भी बात नहीं है, क्योंकि ऐसा मानने पर अनन्तानुबन्धीका द्रव्य देशघातिद्रव्यसे असंख्यातगुणा हीन प्राप्त होता है। परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि ऐसा मानने पर आगे कहे जानेवाले सूत्रसे विरोध आता है।

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि अधःप्रवृत्त भागहार अपनी जातिको विषय करता हुआ ही असंख्यातरूप है, ऐसा स्वीकार किया गया है।

शंका—देशघाति कर्मोंमेंसे सर्वघाति कर्मोंमें संक्रमणको प्राप्त होनेवाले द्रव्यके प्रमाणका कथन क्यों नहीं किया?

समाधान—नहीं, क्योंकि उसकी प्रधानता नहीं है।

§ २५६. अब यहां पर जघन्य द्रव्यके प्रमाणका विचार करते समय पहले प्रकृतिगोपुच्छाके प्रमाणका विचार करते हैं जो इस प्रकार है—डेढ़ गुणहानिसे गुणा किये गये एकेन्द्रियके एक समयप्रबद्धमें अन्तर्मुहूर्तसे भाजित अपकर्षण-उत्कर्षण भागहार, अन्तर्मुहूर्तसे भाजित अधःप्रवृत्तभागहार, दो छयासठ सागरके भीतर नानागुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्त राशि और डेढ़ गुणहानि इन सब भागहारोंका भाग देने पर प्रकृतिगोपुच्छा आती है।

1. ता०प्रतौ 'एवं च रि (ट्ठि) दे' आ०प्रतौ 'एवं च रिदे' इति पाठः।

हाणिगुणिदेगेइंदियसमयपबद्धे अंतोमुहुत्तोवट्टिदओकड्डुक्कड्डण-अधापवत्तभागहारेहि वेछावट्ठिअब्भंतरणाणागुणहाणिसलागाणमण्णोण्णब्भत्थरासिणा चरिमफालीए च ओवट्टिदे आगच्छदि। एत्थ जहा मिच्छत्तस्स विगिदिगोवुच्छाए संचयकमो परूविदो तहा परूवेयव्वो, विसेसाभावादो। अपुव्व-अणियट्टिगुणसेढिगोवुच्छाओ पुण मिच्छत्तस्सेव परूवेदव्वाओ, परिणामवसेण तासिं समुप्पत्तीए।

§ २५७. एदम्मि जहण्णदव्वे एगपरमाणुम्मि वड्ढिदे विदियट्ठाणं, दोसु वड्ढिदेसु तदियं। एवं वड्ढावेदव्वं जाव एगगोवुच्छविसेसो एगसमयं विज्झादभागहारेण परपयडीसु संकंतदव्वं च वड्ढिदं ति। एवं वड्ढिदूण ट्ठिदेण अण्णेगो समयूणवेछावट्ठीओ भमिय अणंताणुबंधिचउक्कं विसंजोइय दुसमयकालट्ठिदिमेगणिसेगं धरिय ट्ठिदो सरिसो।

§ २५८. एवमेदेण बीजपदेण दुसमयूणादिकमेण ओदारेदव्वं जाव अंतोमुहुत्तूणवेछावट्ठीओ ओदारिय खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण देवेसुववज्जिय सम्मत्तं घेत्तूण पुणो अणंताणुबंधिचउक्कं विसंजोइय अंतोमुहुत्तेण संजुत्तो होदूण सम्मत्तं पडिवज्जिय पुणो अणंताणुबंधिचउक्कं विसंजोइय दुसमयकालट्ठिदिमेगणिसेगं धरिय ट्ठिदो त्ति।

परन्तु डेढ़ गुणहानिसे गुणा किये गये एकेन्द्रियके एक समयपबद्धमें अन्तर्मुहूर्तसे भाजित अपकर्षण-उत्कर्षणभागहार, अधःप्रवृत्तभागहार, दो छ्यासठ सागरके भीतर प्राप्त हुई नानागुणहानि-शलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्तराशि और अन्तिम फालिका भाग देने पर विकृतिगोपुच्छा प्राप्त होती है। जिस प्रकार मिथ्यात्वकी विकृतिगोपुच्छाके संचयका क्रम कहा है उसी प्रकार यहां भी कहना चाहिये, क्योंकि उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है। परन्तु अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणकी गुणश्रेणिगोपुच्छाओंका कथन मिथ्यात्वके समान ही करना चाहिए, क्योंकि उनकी उत्पत्ति परिणामोंके अनुसार होती है।

§ २५७. इस जघन्य द्रव्यमें एक परमाणु बढ़ाने पर दूसरा स्थान होता है और दो परमाणु बढ़ाने पर तीसरा स्थान होता है। इस प्रकार एक गोपुच्छा विशेष और एक समयमें विध्यात भागहारके द्वारा पर प्रकृतिमें संक्रमणको प्राप्त हुए द्रव्यकी वृद्धि होने तक बढ़ाना चाहिये। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके समान एक अन्य जीव है जो एक समयकम दो छ्यासठ सागर कालतक भ्रमणकर और अनन्तानुबन्धि चतुष्ककी विसंयोजना कर दो समयकी स्थितिवाले एक निषेकको धारण कर स्थित है।

§ २५८. इस प्रकार इस बीजपदसे दो समयकम आदिके क्रमसे तब तक उतारते जाना चाहिये जब तक अन्तर्मुहूर्तकम दो छ्यासठ सागर काल उतार कर वहाँ पर क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर, देवोंमें उत्पन्न हो और सम्यक्त्वको ग्रहणकर फिर अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना कर फिर अन्तर्मुहूर्तमें उससे संयुक्त हो, सम्यक्त्वको प्राप्त कर फिर अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजना कर दो समयकी स्थितिवाले एक निषेकको धारण करके स्थित होवे।

§ २५९. संपहि एसो पंचहि वड्डीहि वड्डावेदव्वो जावप्पणो जहण्णदव्वमधापवत्त-भागहारेण गुणिदमेत्तं जादं त्ति। संपहि एदेण अवरेगो खविदकम्मंसियलक्खणेणा-गंतूण असण्णिपंचिंदिएसु देवेसु च उववज्जिय[1] सम्मत्तं घेत्तूण अणंताणु०चउक्कं विसंजोइय दुसमयकालट्ठिदिमेगणिसेगं धरिय ट्ठिदो सरिसो।

§ २६०. संपहि एत्थतणपगदि-विगिदिगोवुच्छाओ अपुव्वगुणसेढिगोवुच्छा च मिच्छत्तस्सेव वड्डावेदव्वाओ जाव सत्तमाए पुढवीए अणंताणुबंधिदव्वमुक्कस्सं करिय तिरिक्खेसुववज्जिय पुणो देवेसुववज्जिय सम्मत्तं घेत्तूण अणंताणु०चउक्कं विसंजोइय दुसमयकालट्ठिदिमेगणिसेगं धरिय ट्ठिदो त्ति।

§ २६१ संपहि इमेण अण्णेगो सत्तमाए पुढवीए अंतोमुहुत्तेणुक्कस्सदव्वं होहदि त्ति विवरीयं गंतूणप्पणो उक्कस्सदव्वमसंखेज्जभागहीणं काऊण सम्मत्तं पडिवज्जिय पुणो अणंताणु०चउक्कं विसंजोएदूणेगणिसेगं दुसमयकालं धरेदूण ट्ठिदो सरिसो। एदं दव्वं परमाणुत्तरकमेण अप्पणो उक्कस्सदव्वं ति वड्डावेदव्वं। एवमेगफद्दयविसयाणमणंताणं ठाणाणं परूवणा कदा।

§ २६२. संपहि दुसमयूणावलियमेत्तफद्दयविसयट्ठाणाणं परूवणाए कीरमाणाए जहा मिच्छत्तस्स परूवणा कदा तहा परूवेयव्वा। संपहि चरिमफालिपरूवणक्कमो

---

§ २५९. अब इस द्रव्यको पाँच वृद्धियोंके द्वारा अपने जघन्य द्रव्यको अधःप्रवृत्त भागहारसे गुणा करके जितना प्रमाण हो उतना प्राप्त होनेतक बढ़ाते जाना चाहिये। अब इस जीवके समान एक अन्य जीव है जो क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर असंज्ञी पंचेन्द्रिय और देवोंमें उत्पन्न होकर फिर सम्यक्त्वको ग्रहण कर और अनन्तानुबन्धी चारकी विसंयोजना कर दो समयकी स्थितिवाले एक निषेकको धारण करके स्थित है।

§ २६०. अब यहाँकी प्रकृतिगोपुच्छा, विकृतिगोपुच्छा और अपूर्वकरणकी गुणश्रेणि गोपुच्छाको मिथ्यात्वके समान तब तक बढ़ाना चाहिये जब जाकर सातवीं पृथिवीमें अनन्तानुबन्धी चारके द्रव्यको उत्कृष्ट करके तिर्यंचोंमें उत्पन्न हो फिर देवोंमें उत्पन्न हो और वहाँ सम्यक्त्वको ग्रहणकर फिर अनन्तानुबन्धी चारकी विसंयोजना कर दो समयकी स्थितिवाले एक निषेकको धारणकर स्थित होवे।

§ २६१. अब इस जीवके समान एक अन्य जीव है जो सातवीं पृथिवीमें अन्त-र्मुहूर्तमें उत्कृष्ट द्रव्य होगा किन्तु लौटकर और अपने उत्कृष्ट द्रव्यको असंख्यात भागहीन करके सम्यक्त्वको प्राप्त होकर फिर अनन्तानुबन्धीचतुष्कको विसंयोजना करके दो समयकी स्थितिवाले एक निषेकको धारण करके स्थित है। फिर इस द्रव्यको एक परमाणु अधिकके क्रमसे अपना उत्कृष्ट द्रव्य प्राप्त होने तक बढ़ाते जाना चाहिये। इस प्रकार एक स्पर्धकके विषयभूत अनन्त स्थानोंका कथन किया।

§ २६२. अब दो समय कम आवलिप्रमाण स्पर्धकोंके विषयभूत स्थानोंका कथन करने पर जिस प्रकार मिथ्यात्वका कथन किया है उसी प्रकार कथन करना चाहिये।

---

1. आ०प्रतौ 'देवेसु च एत्थुववज्जिय' इति पाठः।

वुच्चदे। तं जहा—खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण देवेसुववज्जिय सम्मत्तं घेत्तूण अणंताणुबंधिचउक्कं विसंजोएदूण संजुत्तो होदूण सम्मत्तं पडिवज्जिय वेछावट्ठीओ भमिय अणंताणु०चउक्कं विसंजोइय चरिमफालिं धरेदूण ट्ठिदम्मि अणंतभागवड्ढि-असंखेज्ज-भागवड्ढीहि एगगोवुच्छा एगसमयं विज्झादेण गददव्वं च वड्ढावेदव्वं। एवं वड्ढिदेण अण्णेगो पुव्वविहाणेण[1] आगंतूण समयूणवेछावट्ठीओ भमिय चरिमफालिं धरेदूण ट्ठिदो सरिसो। एवमेगगोवुच्छं वड्ढाविय समयूणादिकमेण ओदारेदव्वं जाव पढमछावट्ठी अंतोमुहुत्तूणा त्ति। पुणो तत्थ ट्ठविय पुव्वविहाणेण वड्ढाविय सत्तमपुढविणेरइएण सह संधाणं करिय गेण्हिदव्वं।

§ २६३. संपहि गुणिदकम्मंसियमस्सिदूण कालपरिहाणीए ट्ठाणपरूवणं कस्सामो। तं जहा—खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण सयलवेछावट्ठीओ भमिय अणंताणुबंधिचउक्कं विसंजोएदूण एगणिसेगं दुसमयकालं धरेदूण ट्ठिदम्मि जहण्णदव्वं होदि। एत्थ परमाणुत्तरकमेण चत्तारि पुरिसे अस्सिदूण वड्ढावेदव्वं जाव पयडि-विगिदिगोवुच्छाओ अपुव्वगुणसेढिगोवुच्छा च उक्कस्सा जादा त्ति। णवरि अणियट्टिगुणसेढिगोवुच्छा वड्ढिविवज्जिदा, खविद-गुणिदकम्मंसिएसु अणियट्टिपरिणामाणं

अब अन्तिम फालिके कथन करनेका क्रम कहते हैं जो इस प्रकार है—क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर देवोंमें उत्पन्न हुआ। फिर सम्यक्त्वको ग्रहणकर अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजना की। फिर उससे संयुक्त हो सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ। फिर दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण कर और अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजना कर अन्तिम फालिको धारण कर स्थित होने पर अनन्तभागवृद्धि और असंख्यातभागवृद्धिके द्वारा एक गोपुच्छाको और एक समयमें विध्यातभागहारके द्वारा पर प्रकृतिको प्राप्त हुए द्रव्यको बढ़ाना चाहिये। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके समान एक अन्य जीव है जो पूर्व विधिसे आकर और एक समयकम दो छयासठ सागर काल तक भ्रमणकर अन्तिम फालिको धारणकर स्थित है। इस प्रकार एक-एक गोपुच्छाको बढ़ाकर एक समयकम आदिके क्रमसे अन्तर्मुहुर्त कम प्रथम छयासठ सागर काल तक उतारना चाहिये। फिर वहां ठहरा कर और पूर्वविधिसे बढ़ा कर सातवीं पृथिवीके नारकीके साथ मिलान करके ग्रहण करना चाहिए।

§ २६३. अब गुणितकर्मांशकी अपेक्षा कालकी हानि द्वारा स्थानोंका कथन करते हैं जो इस प्रकार है—क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर पूरे दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण कर फिर अनन्तानुबन्धी चतुष्कका विसंयोजन करके दो समयकी स्थितिवाले एक निषेकको धारण करके स्थित हुए जीवके जघन्य द्रव्य होता है। यहां चार पुरुषोंकी अपेक्षा एक एक परमाणु अधिकके क्रमसे प्रकृतिगोपुच्छा, विकृतिगोपुच्छा और अपूर्वकरणकी गुणश्रेणि गोपुच्छा इनके उत्कृष्ट होने तक बढ़ाते जाना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि अनिवृत्तिकरणकी गुणश्रेणिगोपुच्छा वृद्धिसे रहित है क्योंकि क्षपितकर्मांश और गुणितकर्मांशके अनिवृत्तिकरणके परिणाम तीनों कालोंमें वृद्धि और

१. आ०प्रतौ 'अण्णेगो अपुव्वविहाणेण' इति पाठः।

तिकालविसयाणं वड्ढि-हाणीणमभावादो ।

§ २६४. एदेण सह अण्णेगो गुणिदकम्मंसिओ एगगोवुच्छाविसेसेणूणुक्कस्सदव्वं करिय पुव्वविहाणेणागंतूण समयूणवेछावट्ठीओ भमिय विसंजोएदूण एगणिसेगं दुसमयकालं धरेदूण ट्ठिदो सरिसो । संपहि एदेण अप्पणो ऊणीकददव्वे वड्ढाविदेण सह अण्णेगो सत्तमपुढवीए ऊणीकदगोवुच्छाविसेसो भमिददुसमऊणवेछावट्ठिसागरोवमो धरिददुसमयकालेगणिसेगो सरिसो ।

§ २६५. एदेण कमेण वेछावट्ठीओ ओदारेदव्वाओ जाव सत्तमाए पुढवीए उक्कस्सदव्वं करियागंतूण दोतिण्णिभवग्गहणाणि तिरिक्खेसुववज्जिय पुणो देवेसुववज्जिय सम्मत्तं घेत्तूण अणंताणुबंधिचउक्कं विसंजोइय संजुत्तो होदूण सम्मत्तं पडिवज्जिय सव्वजहण्णमंतोमुहुत्तमच्छिय पुणो विसंजोएदूण दुसमयकालमेगणिसेगं धरेदूण ट्ठिदो त्ति । संपहि एदेण अण्णेगो णारगउक्कस्सदव्वमधापवत्तभागहारेण खंडेदूण तत्थ एगखंडमेत्तदव्वसंचयं करिय आगंतूण तिरिक्खेसु देवसु च उववज्जिय सम्मत्तं घेतूण पुणो अणंताणुबंधिचउक्कं विसंजोइय दुसमयकालमेगणिसेगं धरिय ट्ठिदो सरिसो । पुणो इमेणप्पणो ऊणीकददव्वं वड्ढाविय पुणो णेरइएण सह संधाणं करिय पुणो तत्थ ट्ठविय वड्ढावेदव्वं जावुक्कस्सदव्वं जादं ति । एवमेगफद्दयमस्सिदूण अणंताणं ट्ठाणाणं परूवणा कदा ।

हानिसे रहित होते हैं ।

§ २६४. इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए इस जीवके समान एक अन्य गुणितकर्मांश जीव है जो एक गोपुच्छाविशेषसे कम उत्कृष्ट द्रव्यको करके पूर्व विधिसे आकर एक समय कम दो छ्यासठ सागर काल तक भ्रमण कर और अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजना कर दो समयकी स्थितिवाले एक निषेकको धारण कर स्थित है । अब अपने कम किये गये द्रव्यको बढ़ाकर स्थित हुए इस जीवके समान एक अन्य जीव है जो सातवीं पृथ्वीमें गोपुच्छा विशेषसे कम उत्कृष्ट द्रव्यको करके और दो समय कम दो छ्यासठ सागर कालतक भ्रमण कर दो समयकी स्थितिवाले एक निषेकको धारण कर स्थित है ।

§ २६५. इस क्रमसे दो छ्यासठ सागर काल तब तक उतारते जाना चाहिए जब जाकर सातवीं पृथ्वीमें उत्कृष्ट द्रव्य करनेके बाद आकर और तिर्यंचोंके दो तीन भव धारण कर फिर देवोंमें उत्पन्न हुआ । पश्चात् सम्यक्त्वको ग्रहण कर अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजना की । फिर उससे संयुक्त होकर और सम्यक्त्वको प्राप्त हो सबसे जघन्य अन्तर्मुहूर्तकाल तक रहा फिर विसंयोजना कर दो समयकी स्थितिवाले एक निषेकको धारण कर स्थित हुआ । अब इस जीवके समान अन्य एक जीव है जो, नारकियोंके उत्कृष्ट द्रव्यमें अधःप्रवृत्तभागहारका भाग दो जो एक भाग प्राप्त हो, उतने द्रव्यका संचय कर और आकर तिर्यंचों व देवोंमें उत्पन्न हुआ । फिर सम्यक्त्वको ग्रहण कर और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना कर दो समयकी स्थितिवाले एक निषेकको धारण कर स्थित है । फिर इसके कम किये गये द्रव्यको बढ़ाकर और नारकीके साथ मिलान कर और वहां ठहराकर अपने उत्कृष्ट द्रव्यके प्राप्त होने तक बढ़ाता जाय । इस प्रकार एक स्पर्धककी अपेक्षा अनन्त स्थानोंका

§२६६. संपहि एदेण कमेण दुसमयूणावलियमेत्तफद्दयट्ठाणाणं परूवणा कायव्वा, विसेसाभावादो । संपहि जहण्णसामित्तविहाणेणागंतूण वेछावट्ठीओ भमिय विसंजोएदूण धरिदचरिमफालिदव्वं जदि वि जहण्णं तो वि समयूणावलियमेत्तफद्दयाणमुक्कस्सदव्वादो असंखे०गुणं, सगलफालिदव्वस्स असंखे०भागस्सेव गुणसेढीए अवट्ठिदत्तादो गुणसेढिदव्वस्स वि असंखे०भागस्सेव उदयावलिआए उवलंभादो । संपहि एवंविहचरिमफालिदव्वं परमाणुत्तरकमेण चत्तारि पुरिसे अस्सिदूण पचहि वड्ढीहि वड्ढावेदव्वं जावप्पणो उक्कस्सदव्वं पत्तं ति । एदेणण्णेगो गुणिदकम्मंसिओ सत्तमाए पुढवीए कदगोवुच्छूणुक्कस्सदव्वो देवेसु सम्मत्तं पडिवज्जिय अणंताणुबंधिचउक्कं विसंजोएदूण अंतोमुहुत्तेण संजुत्तो होदूण सम्मत्तं पडिवज्जिय भमिदसमऊणवेछावट्ठिसागरोवमो पुणो विसंजोइय धरिदचरिमफालिदव्वो सरिसो । एवं समयूणादिकमेण जाणिदूणोदारेदव्वं जाव पढमछावट्ठिअंतोमुहुत्तूणा त्ति । पुणो तत्थ ठविय जहा गुणिदसेढिगोवुच्छाणं संधाणं कदं तहा कादव्वं । पुणो एदेण दव्वेण सरिसं चरिमसमयणेरइयदव्वं घेत्तूण परमाणुत्तरकमेण[1] वड्ढावेदव्वं जावप्पणो उक्कस्सदव्वं पत्तं ति ।

कथन किया ।

§ २६६. अब इसी क्रमसे दो समयकम आवलिप्रमाण स्पर्धकोंके स्थानोंका कथन करना चाहिये, क्योंकि उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है । अब जघन्य स्वामित्वकी विधिसे आकर और दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण करता रहा । अन्तमें विसंयोजना कर अन्तिम फालिका द्रव्य प्राप्त होने पर वह यद्यपि जघन्य है तो भी एक समय कम आवलिप्रमाण स्पर्धकोंके उत्कृष्ट द्रव्यसे असंख्यातगुणा है, क्योंकि पूरे फालिके द्रव्यके असंख्यातवें भागका ही गुणश्रेणिरूपमें अवस्थान पाया जाता है । तथा गुणश्रेणिके द्रव्यका भी असंख्यातवां भाग ही उदयावलिमें पाया जाता है । अब इस प्रकारके अन्तिम फालिके द्रव्यको चार पुरुषोंकी अपेक्षा एक एक परमाणु अधिकके क्रमसे पांच वृद्धियोंके द्वारा अपने उत्कृष्ट द्रव्यके प्राप्त होने तक बढ़ाते जाना चाहिये । इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए इस जीवके समान गुणितकर्मांश एक अन्य जीव है जो सातवीं पृथिवीमें एक गोपुच्छासे कम उत्कृष्ट द्रव्यको करके क्रमसे देवोंमें उत्पन्न हुआ और सम्यक्त्वको प्राप्त हो अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना कर अन्तर्मुहूर्तमें उससे संयुक्त हो सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ । फिर एक समय कम दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण कर और पुनः अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजनाकर अन्तिम फालिके द्रव्यको धारण कर स्थित है । इस प्रकार एक समय कम आदिके क्रमसे जानकर अन्तर्मुहूर्त कम प्रथम छयासठ सागर कालके समाप्त होने तक उतारते जाना चाहिये । फिर वहां ठहराकर जिस प्रकार गुणित श्रेणिगोपुच्छाओंका सन्धान किया है उस प्रकार करना चाहिये । फिर इस द्रव्यके समान अन्तिम समयवर्ती नारकीके द्रव्यको लेकर एक एक परमाणु अधिक आदिके क्रमसे अपने उत्कृष्ट द्रव्यके प्राप्त होने तक बढ़ाते जाना चाहिये ।

1. आ०प्रतौ 'परमाणुत्तरादिकमेण' इति पाठः ।

§ २६७. संपहि खविदकम्मंसियस्स संतकम्ममस्सिदूण हाणपरूवणं[1] कस्सामो। तं जहा—खविदकम्मंसियलक्खणेणागदचरिमफालीए उवरि परमाणुत्तरकमेण वड्ढावेदव्वं जावप्पणो गुणसंकमेण गददुचरिमफालिदव्वं त्थिवुकसंकमेण गदगुणसेढिदव्वं च वड्ढिदं ति। पुणो एदेण अण्णेगो जहण्णसामित्तविहाणेणागंतूण अप्पणो दुचरिमफालिं धरिय ट्ठिदो सरिसो। एदेण कमेण वड्ढाविय ओदारेदव्वं जाव दुचरिमट्ठिदिखंडयचरिमसमओ त्ति। पुणो दुचरिमट्ठिदिखंडयप्पहुडि फालिदव्वं ण वड्ढावेदव्वं, तस्स सत्थाणे चेव पदणुवलंभादो। किं तु तस्स त्थिवुकगुणसेढिगोवुच्छं गुणसंकमदव्वं वड्ढाविय ओदारेदव्वं जाव आवलियअणियट्टि त्ति।

§ २६८. पुणो तत्थ ठाइदूण वड्ढाविज्जमाणे तस्समयम्मि त्थिवुकसंकमेण गदअपुव्वगुणसेढिगोवुच्छागुणसंकमेण गददव्वं च वड्ढावेदव्वं। एवं वड्ढिदूण ट्ठिदेण अण्णेगो जहण्णसामित्तविहाणेणागंतूण समयूणावलियअणियट्टी होदूण ट्ठिदो सरिसो। एवमोदारेदव्वं जाव आवलियअपुव्वकरणं पत्तो त्ति। संपहि एत्तो हेट्ठा अपुव्वगुणसेढिगोवुच्छा ण वड्ढाविज्जदि, अपुव्वकरणम्मि उदयादिगुणसेढीए अभावादो। तेण एत्तो प्पहुडि एगगोवुच्छं गुणसंकमदव्वं च वड्ढाविय ओदारेदव्वं जाव अपुव्वकरणपढमसमओ त्ति।

---

§ २६७. अब क्षपितकर्मांशके सत्कर्मकी अपेक्षा कथन करते हैं जो इस प्रकार है—क्षपितकर्मांशकी विधिसे आये हुए जीवके अन्तिम फालिके ऊपर एक एक परमाणु अधिकके क्रमसे गुणसंक्रमके द्वारा पर प्रकृतिको प्राप्त हुआ अपनी द्विचरम फालिका द्रव्य और स्तिवुक संक्रमणके द्वारा पर प्रकृतिको प्राप्त हुआ गुणश्रेणिका द्रव्य बढ़ने तक बढ़ाते जाना चाहिए। फिर इसके समान एक अन्य जीव है जो जघन्य स्वामित्वकी विधिसे आकर अपनी द्विचरम फालिको धारणकर स्थित है। इस क्रमसे बढ़ाकर द्विचरम स्थितिकाण्डकके अन्तिम समय तक उतारना चाहिये। फिर द्विचरम स्थितिकाण्डकसे लेकर फालि द्रव्यको नहीं बढ़ाना चाहिये, क्योंकि उसका पतन स्वस्थानमें ही देखा जाता है। किन्तु इसके स्तिवुकसंक्रमणके द्वारा परप्रकृतिको प्राप्त हुई गुणश्रेणि गोपुच्छाको और गुणसंक्रमके द्रव्यको अनिवृत्तिकरणके एक आवलि काल तक उतारना चाहिये।

§ २६८. फिर वहाँ ठहराकर बढ़ाने पर उस समयमें स्तिवुकसंक्रमणके द्वारा पर प्रकृतिको प्राप्त हुई अपूर्वकरणसम्बन्धी गुणश्रेणिकी गोपुच्छाको और गुणसंक्रमके द्वारा पर प्रकृतिको प्राप्त हुए द्रव्यको बढ़ाना चाहिये। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके समान एक अन्य जीव है जो जघन्य स्वामित्वकी विधिसे आकर अनिवृत्तिकरणमें एक समय कम एक आवलि काल जाकर स्थित है। इस प्रकार अपूर्वकरणमें एक आवलि काल प्राप्त होने तक उतारना चाहिए। अब इससे नीचे अपूर्वकरणकी गुणश्रेणिगोपुच्छा नहीं बढ़ाई जा सकती, क्योंकि अपूर्वकरणमें उदयादि गुणश्रेणिका अभाव है, इसलिए यहाँसे लेकर एक गोपुच्छाको और गुणसंक्रमके द्रव्यको बढ़ाते हुए अपूर्वकरणके प्रथम समय तक उतारना चाहिये।

---

१. आ० प्रतौ 'मस्सिदूण परूवणं' इति पाठः।

§ २६९. संपहि एत्थ वड्ढाविज्जमाणे तस्समयम्मि[1] गदगुणसंकमदव्वं एगगोवुच्छदव्वं च वड्ढावेदव्वं । एवं वड्ढिदूण ट्ठिदेण अवरेगो अधापवत्त-चरिमसमयट्ठिदो सरिसो ।

§ २७०. संपहि एत्थ वड्ढाविज्जमाणे तस्समयम्मि गदविज्झाददव्वमेत्तं त्थिवुक्कसंकमेण गदगोवुच्छदव्वं च वड्ढावेदव्वं । एवं वड्ढिदेण अण्णेगो दुचरिमसमयअधापवत्तो सरिसो । एवमोदारेदव्वं जाव वेछावट्ठिपढमसमओ त्ति । पुणो तत्थतणदव्वं वड्ढावेदव्वं जावप्पणो जहण्णदव्वमधापवत्तभागहारेण गुणिदमेत्तं जादं ति । संपहि एदेण अण्णेगो खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण देवेसुववज्जिय सम्मत्तं घेत्तूण अणंताणुबंधिविसंजोयणाए अब्भुट्ठिय अधापवत्तकरणचरिमसमयट्ठिदो सरिसो । संपहि एदम्मि दव्वे विज्झादेण संकंतदव्वं गोवुच्छदव्वं च वड्ढावेदव्वं । पुणो एदेण अण्णेगो खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण सम्मत्तं पडिवज्जिय अधापवत्त-दुचरिमसमयट्ठिदो सरिसो त्ति । एवं जाणिदूण हेट्ठा ओदारेदव्वं जाव पढमसमयउवसम-सम्माइट्ठि त्ति ।

§ २७१. संपहि एत्थ पढमसमयसम्मादिट्ठिम्मि वड्ढाविज्जमाणे तस्समयम्मि गदविज्झाददव्वं त्थिवुक्कगुणसेढिगोवुच्छादव्वं पुणो चरिमसमयमिच्छादिट्ठिगुणसेढि-

§ २६९. अब यहाँ बढ़ाने पर उस समयमें पर प्रकृतिको प्राप्त हुए गुणसंक्रमके द्रव्य को और एक गोपुच्छाके द्रव्यको बढ़ाना चाहिये । इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके समान एक अन्य जीव है जो अधःवृत्तकरणके अन्तिम समयमें स्थित है ।

§ २७०. अब यहाँ पर द्रव्यके बढ़ाने पर उस समयमें पर प्रकृतिको प्राप्त हुए विध्यात-संक्रमणके द्रव्यको और स्तिवुकसंक्रमणके द्वारा पर प्रकृतिको प्राप्त हुए गोपुच्छाके द्रव्यको बढ़ाना चाहिये । इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके समान एक अन्य जीव है जो अधःप्रवृत्तकरणके उपान्त्य समयमें स्थित है । इस प्रकार दो छ्यासठ सागरके प्रथम समयके प्राप्त होने तक उतारना चाहिए । फिर वहाँ स्थित जीवके द्रव्यको, अपने जघन्य द्रव्यको अधःप्रवृत्त भागहारसे गुणा करने पर जितना प्रमाण हो उतना होने तक, बढ़ाना चाहिये । अब इसके समान एक अन्य जीव है जो क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर देवोंमें उत्पन्न हो सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ फिर अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनाके लिये उद्यत होकर अधःप्रवृत्त-करणके अन्तिम समयमें स्थित है । अब इस द्रव्यमें विध्यातके द्वारा पर प्रकृतिमें संक्रान्त हुए द्रव्यको और गोपुच्छाके द्रव्यको बढ़ाना चाहिए । फिर इसके समान एक अन्य जीव है जो क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर और सम्यक्त्वको प्राप्त हो अधःप्रवृत्तकरणके उपान्त्य समयमें स्थित है । इस प्रकार जान कर उपशमसम्यग्दृष्टिके प्रथम समय तक नीचे उतारते जाना चाहिये ।

§ २७१. अब यहाँ प्रथम समयवर्ती सम्यग्दृष्टिके द्रव्यके बढ़ाने पर उस समय अन्य प्रकृतिको प्राप्त हुए विध्यातसंक्रमणके द्रव्यको, स्तिवुक संक्रमणके द्वारा अन्य प्रकृतिको प्राप्त हुए गुणश्रेणिगोपुच्छाके द्रव्यको तथा अन्तिम समयवर्ती मिथ्यादृष्टिके गुणश्रेणिकी गोपुच्छाको

1. आ० प्रतौ 'तस्स समयम्मि' इति पाठः ।

गोवुच्छा च वड्ढावेदव्वा । एवं वड्ढिदूण ट्ठिदपढमसमयसम्मादिट्ठिणा अण्णेगो चरिमसमयमिच्छादिट्ठी सरिसो । पुणो एत्थ वड्ढाविज्जमाणे तस्समयणवकबंधेणूणं दुचरिमगुणसेढिगोवुच्छादव्वं च वड्ढावेदव्वं । एवं वड्ढिदेण अण्णेगो दुचरिमसमयमिच्छादिट्ठी सरिसो। एवमोदारेदव्वं जाव आवलियअपुव्वकरणो त्ति । संपहि हेट्ठा ओदारेदुं ण सक्कदे, उदए गलिदएइंदियसमयपबद्धमेत्तगोवुच्छादो वज्झमाणपंचिंदियसमयपबद्धस्स असंखे०गुणत्तुवलंभादो। तेण इमं दव्वं चत्तारि पुरिसे अस्सिदूण परमाणुत्तरकमेण पंचहि वड्ढीहि वड्ढावेदव्वं जावप्पणो उक्कस्सदव्वं पत्तं ति । संपहि इमेण अण्णेगो णेरइओ तप्पाओग्गुक्कस्ससंतकम्मिओ सरिसो। संपहि णेरइयदव्वं परमाणुत्तरकमेण वड्ढावेदव्वं जावप्पणो ओघुक्कस्सदव्वं पत्तं ति। एवं खविदकम्मंसियसंतमस्सिदूण णिरंतरट्ठाणपरूवणा कदा ।

§ २७२. संपहि गुणिदकम्मंसियसंतमस्सिदूण ठाणपरूवणाए कीरमाणाए ऊणदव्वं संधीओ च जाणिय परूवणा कायव्वा ।

❀ णवुंसयवेदस्स जहण्णयं पदेससंतकम्मं कस्स ?

§ २७३. सुगमं।

❀तधा चेव अभवसिद्धियपाओग्गेण जहण्णेण संतकम्मेण तसेसु आगदो संजमासंजमं संजमं सम्मत्तं च बहुसो लद्धूण चत्तारि वारे

बढाना चाहिये। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए प्रथम समयवर्ती सम्यग्दृष्टिके समान एक अन्य जीव है जो अन्तिम समयवर्ती मिथ्यादृष्टि है। फिर यहाँ पर बढ़ाने पर नवकबन्धके बिना उस समय सम्बन्धी द्रव्यको और द्विचरम गुणश्रेणि गोपुच्छाके द्रव्यको बढ़ाना चाहिये। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके समान एक अन्य जीव है जो उपान्त्य समयवर्ती मिथ्यादृष्टि है। इस प्रकार अपूर्वकरणमें एक आवलि काल प्राप्त होनेतक उतारना चाहिये। अब नीचे उतारना शक्य नहीं है, क्योंकि यहाँ उदयमें गलित हुए एकेन्द्रियके समयप्रबद्धप्रमाण गोपुच्छाके द्रव्यसे बँधनेवाला पंचेन्द्रिय सम्बन्धी समयप्रबद्ध असंख्यातगुणा है इसलिए इस द्रव्यको चार पुरुषोंकी अपेक्षा एक एक परमाणु अधिकके क्रमसे पाँच वृद्धियोंके द्वारा अपने उत्कृष्ट द्रव्यके प्राप्त होने तक बढ़ाना चहिये। अब इसके समान एक अन्य नारकी जीव है जो तद्योग्य उत्कृष्ट सत्कर्मवाला है। अब नारकीके द्रव्यको एक-एक परमाणु अधिकके क्रमसे अपने ओघ उत्कृष्ट द्रव्यके प्राप्त होने तक बढ़ाते जाना चाहिये। इस प्रकार क्षपितकर्मांशके सत्कर्मकी अपेक्षा निरंतर स्थानोंका कथन किया।

§ २७२. अब गुणितकर्मांशके सत्कर्मकी अपेक्षा स्थानोंका कथन करने पर कम द्रव्य और सधिन्योंको जानकर कथन करना चाहिये।

❀ नपुंसकवेदका जघन्य प्रदेशसत्कर्म किसके होता है।

§ २७३. यह सूत्र सुगम है।

❀ उसी प्रकार अभव्योंके योग्य जघन्य सत्कमके साथ त्रसोंमें आया। वहाँ संयमासंयम, संयम और सम्यक्त्वको बहुत बार प्राप्त कर तथा चार बार कषायोंको

कसाए उवसामिदूण तदो तिपलिदोवमिएसु उववण्णो। तत्थ अंतोमुहुत्तावसेसे जीविदव्वए त्ति सम्मत्तं घेत्तूण वेछावट्ठिसागरोवमाणि सम्मत्तद्धमणुपालियूण मिच्छत्तं गंतूण णवुंसयवेदमणुस्सेसु उववण्णो। सव्वचिरं संजममणुपालिदूण खवेदुमाढत्तो। तदो तेण अपच्छिमट्ठिदिखंडयं संछुहमाणं संछुद्धं। उदओ णवरि विसेसो तस्स चरिमसमयणवुंसयवेदस्स जहण्णयं पदेससंतकम्मं।

§ २७४ एत्थ संजमासंजम-संजम-सम्मत्ताणं पडिवज्जणवारा सव्वुक्कस्सा ण होंति, उक्कस्सेसु संतेसु णिव्वाणगमणं मोत्तूण तिण्णिपलिदोवमब्भहियवेछावट्ठिसागरोवमेसु भमणाणुववत्तीदो। तिण्णिपलिदोवमेसु किमट्ठमुप्पाइदो ? तत्थतणणवुंसयवेदस्स बंधाभावेण एइंदिएसु संचिदपदेसग्गस्स परिसादणट्ठं। तिपलिदोवमिएसु चेव सम्मत्तं किमिदि पडिवज्जाविदो ? ण, मिच्छत्तेण सह देवेसुप्पण्णस्स अंतोमुहुत्तकालब्भंतरे णवुंसयवेदस्स बंधे संते भुजगारप्पसंगादो त्ति। वेछावट्ठिसागरोवमाणि सम्मत्तद्धमणुपालियूण मिच्छत्तं किमिदि गदो ? णवुंसयवेदमणुस्सेसु उप्पज्जणट्ठं।

उपशमा कर अनन्तर तीन पल्यकी आयुवाले जीवोंमें उत्पन्न हुआ। वहां जीवनमें अन्तर्मुहूर्त शेष रहने पर सम्यक्त्वको ग्रहण किया। फिर दो छ्यासठ सागर काल तक सम्यक्त्वका पालन कर और फिर मिथ्यात्वको प्राप्त हो नपुंसकवेदवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ। वहां सबसे अधिक काल तक संयमका पालन कर क्षपणाका आरम्भ किया। फिर उसने संक्रमित होनेवाले अन्तिम स्थितिकाण्डकका संक्रमण किया। उदयमें इतनी विशेषता है कि उसके अन्तिम समयमें नपुंसकवेदका जघन्य प्रदेशसत्कर्म होता है।

§ २७४. यहां संयमासंयम, संयम और सम्यक्त्वको प्राप्त करनेके बार सर्वोत्कृष्ट नहीं होते हैं, क्योंकि उनके उत्कृष्ट होने पर निर्वाणगमनके सिवा फिर तीन पल्य अधिक दो छ्यासठ सागर काल तक परिभ्रमण करना नहीं बन सकता है।

शंका—तीन पल्यवाले जीवोंमें किसलिए उत्पन्न कराया है ?

समाधान—वहां नपुंसकवेदका बन्ध न होनेसे एकेन्द्रियोंमें संचित नपुंसकवेदके प्रदेशोंका क्षय करानेके लिये तीन पल्यकी आयुवाले जीवोंमें उत्पन्न कराया है।

शंका—तीन पल्यकी आयुवाले जीवोंमें ही सम्यक्त्व क्यों प्राप्त कराया है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि यदि मिथ्यात्वके साथ देवोंमें उत्पन्न कराया जाय तो अन्तर्मुहूर्त कालके भीतर नपुंसकवेदका बन्ध होने पर भुजगारका प्रसंग प्राप्त होता है। यह न हो इसलिये तीन पल्य की आयुवाले जीवों में ही सम्यक्त्व उत्पन्न कराया है।

शंका—यह जीव दो छ्याठस सागर काल तक सम्यक्त्वकालका पालन कर मिथ्यात्वको क्यों प्राप्त कराया गया ?

णवुंसयवेदोदएण विणा अण्णवेदोदएण किमट्ठं ण उप्पाइज्जदि ? ण, परोदएण चडिदस्स पलिदोवमस्स असंखे०भागमेत्तचरिमफालिट्ठिददव्वं मोत्तूण एगुदयणिसेगदव्वाणुवलंभादो। जदि एगुदयणिसेगदव्वं चेव जहण्णदव्वं होदि तो तिण्णि पलिदोवमब्भहियवेछावट्ठिसागरोवमेसु पुणो ण हिंडावेदव्वो, खविदगुणिदकम्मंसिएसु समाणपरिणामेसु गुणसेढिणिसेगं पडि भेदाभावादो ? ण, तिण्णि पलिदोवमब्भहियवेछावट्ठिसागरोवमाणि परिभमिदखवगस्स एगट्ठिदिपगदि-विगिदिगोवुच्छाहिंतो तत्थ अभमिदखवगस्स एगट्ठिदिपगदिविगिदिगोवुच्छाणमसंखेज्जगुणत्तुवलंभादो। जदि एवं तो एसो ण मिच्छत्तं पडिवज्जावेदव्वो, तिण्णिपलिदोवमब्भहियवेछावट्ठिसागरोवमेसु संचिदपुरिसवेददव्वे दिवड्ढगुणहाणिगुणिदेगपंचिंदियसमयपबद्धमेत्ते अधापवत्तभागहारेण खंडिदे तत्थ एगखंडे णवुंसयवेदम्मि संकंते अभवसिद्धियपाओग्गजहण्णसंतकम्मेण खवगसेढिमारूढणवुंसयवेदखवगस्स पगदि-विगिदिगोवुच्छाहिंतो एदस्स पगदि-विगिदिगोवुच्छाणमसंखेज्जगुणत्तुवलंभादो ? ण एस दोसो, बंधपयडीणं सव्वासिं पि

समाधान—नपुंसकवेदवाले मनुष्योंमें उत्पन्न करानेके लिये।

शंका—नपुसंकवेदके सिवा अन्य वेदके उदयसे क्यों नहीं उत्पन्न कराया गया ?

समाधान—नहीं, क्योंकि अन्य वेदके उदयसे चढ़े हुए जीवके क्षपणाके अन्तिम समयमें पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण अन्तिम फालिमें स्थित नपुंसकवेदका द्रव्य पाया जाता है, उदयगत एक निषेकका द्रव्य नहीं पाया जाता, इसलिये नपुंसकवेदके सिवा अन्य वेदके उदयसे नहीं उत्पन्न कराया।

शंका—यदि उदयगत एक निषेकका द्रव्य ही जघन्य सत्कर्मरूपसे विवक्षित है तो तीन पल्य अधिक दो छयासठ सागर कालके भीतर पुनः नहीं घुमाना चाहिये, क्योंकि समान परिणामवाले क्षपितकर्मांश और गुणितकर्मांश जीवके गुणश्रेणिके निषेक समान होते हैं, उनमें कोई भेद नहीं पाया जाता ?

समाधान—नहीं, क्योंकि जो तीन पल्य अधिक दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण करनेके बाद क्षपक हुआ है उसके एक स्थितिगत प्रकृतिगोपुच्छा और विकृतिगोपुच्छासे वहां नहीं भ्रमण करके जो क्षपक हुआ है उसकी एक स्थितिगत प्रकृतिगोपुच्छा और विकृतिगोपुच्छा असंख्यातगुणी पाई जाती है।

शंका—यदि ऐसा है तो (घुमाने के बाद) इस जीवको मिथ्यात्वमें नहीं ले जाना चाहिये, क्योंकि तीन पल्य अधिक दो छयासठ सागर कालके भीतर पुरुषवेदका डेढ़ गुणहानिगुणित पंचेन्द्रियका एक समयप्रबद्धप्रमाण जो द्रव्य संचित होता है उसमें अधःप्रवृत्त भागहारका भाग देने पर उसमेंसे एक भागका नपुंसकवेदमें संक्रमण होता है। अब यदि कोई जीव अभव्यके योग्य जघन्य सत्कर्मके साथ क्षपकश्रेणिपर चढ़ा तो उसके नपुंसकवेदके उदयके अन्तिम समयमें जो प्रकृतिगोपुच्छा और विकृतिगोपुच्छा होगी उससे इस पूर्वोक्त जीवके प्रकृतिगोपुच्छा और विकृतिगोपुच्छा असंख्यातगुणी पाई जाती है ?

समाधान—यही कोई दोष नहीं है, क्योंकि सभी बन्ध प्रकृतियोंकी आय व्ययके

वयाणुसारिआयस्सुवलंभादो । जदि एवं तो तिपलिदोवमिएहिंतो मिच्छत्तेणेव देवेसुप्पाइय किण्ण सम्मत्तं णीदो ? ण, बंधमस्सिदूण णवुंसयवेदसंतस्स तत्थ भुजगारप्पसंगादो । एत्थ वि अंतोमुहुत्तब्भहियअट्ठवस्सेसु बंधं पडुच्च णवुंसयवेदसंतस्स भुजगारो होदि त्ति ण मिच्छत्तं णेदव्वो ? ण, एस दोसो, एदम्हादो संचयादो असंखेज्जगुणदव्वस्स संजमबलेण गुणसेढीए णिज्जरुवलंभादो, अण्णहा णवुंसयवेदोदयक्खवगस्स एयट्ठिदिं घेत्तूण सामित्तविहाणाणुववत्तीदो च । मिच्छत्ते पडिवण्णे णवुंसयवेदस्स वयाणुसारी आओ त्ति कुदो णव्वदे ? तिण्णि पलिदोवमब्भहिय-वेछावट्ठिसागरोवमहिंडावणसुत्तण्णहाणुववत्तीदो । ण च णिप्फलं सुत्तं, णिद्दोस-जिणवयणस्स णिप्फलत्ताणुववत्तीदो । वयाणुसारी आओ ण होदि, जोगगुणगारादो असंखेज्जगुणहीणस्स अधापवत्तभागहारस्स असंखेज्जगुणत्तप्पसंगादो । णाववादट्ठाणं मोत्तूण अण्णत्थतण अधापवत्तभागहारादो जोगगुणगारस्स असंखेज्जगुणत्तुवलंभादो ।

अनुसार ही पाई जाती है ।

शंका—यदि ऐसा है तो तीन पल्यवालोंमेंसे मिथ्यात्वके साथ ही देवोंमें उत्पन्न करा कर फिर सम्यक्त्वको क्यों नहीं प्राप्त कराया ?

समाधान—नहीं, क्योंकि बन्धके आश्रयसे नपुंसकवेदके सत्त्वका वहाँ भुजगार होनेका प्रसंग प्राप्त होता है, इसलिये मिथ्यात्वके साथ देवोंमें नहीं उत्पन्न कराया ।

शंका—यहां भी अन्तर्मुहूर्त अधिक आठ वर्षके भीतर बन्धके आश्रयसे नपुंसकवेदके सत्त्वका भुजकार प्राप्त होता है, इसलिए इस जीवको मिथ्यात्वमें नहीं ले जाना चाहिये ।

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि मिथ्यात्वकालमें होनेवाले इस संचयसे असंख्यातगुणे द्रव्यको संयमके बलसे गुणश्रेणिनिर्जरा पाई जाती है । यदि ऐसा न होता तो नपुंसकवेदके उदयवाले क्षपकके जो एक स्थितिकी अपेक्षा जघन्य स्वामित्वका निर्देश किया है वह नहीं करना चाहिये था ।

शंका—मिथ्यात्वके प्राप्त होने पर नपुंसकवेदकी व्ययके अनुसार आय होती है यह किस प्रमाण से जाना जाता है ।

समाधान—मिथ्यात्वको प्राप्त होनेसे पहले तीन पल्य अधिक दो छयासठ सागर काल तक घूमनेका कथन करनेवाला सूत्र अन्यथा बन नहीं सकता, इससे जाना जाता है कि मिथ्यात्वमें नपुंसकवेदके व्ययके अनुसार आय होती है । यदि कहा जाय कि उक्त सूत्र निष्फल है सो भी बात नहीं है, क्योंकि निर्दोष जिन भगवानका वचन निष्फल नहीं हो सकता ।

शंका—व्ययके अनुसार आय होती है यह बात नहीं बनती, क्योंकि ऐसा मानने पर योग गुणकारसे असंख्यातगुणा हीन अधःप्रवृत्तभागहार उससे असंख्यातगुणा प्राप्त होता है ।

समाधान—नहीं, क्योंकि अपवादरूप स्थानको छोड़कर अन्यत्र अधःप्रवृत्तभागहारसे योगगुणकार असंख्यातगुणा उपलब्ध होता है ।

अधापवत्तभागहारो अणवट्ठिदो त्ति कुदो णव्वदे ? एदम्हादो चेव सुत्तादो। जदि वयाणुसारी चेव आओ तो णवुंसयवेदस्सेव संजुत्तावत्थाए अणंताणुबंधीणं वओ णत्थि त्ति अण्णपयडीहिंतो आएण ण होदव्वं ? ण, विसंजोयणाविसंजोयणपयडीणं अच्चंतराणं साहम्माभावादो। खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण एइंदिएसु उववज्जिय पुणो सण्णिपंचिंदिएसु उववज्जिय दाणेण दाणाणुमोदेण वा तिपलिदोवमिएसु उववज्जिय छहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदस्स णवुंसयवेदबंधो थक्कइ। पुणो तिण्णि पलिदोवमाणि णवुंसयवेदं त्थिउक्कसंकमेण विज्झादसंकमेण च गालिय अंतोमुहुत्तावसेसे सम्मत्तं पडिवज्जिय पढमछावट्ठिं भमिय सम्मामिच्छत्तं गंतूण पुणो सम्मत्तं पडिवज्जिय विदियछावट्ठिं भमिय पुणो मिच्छत्तं गंतूण णवुंसयवेदो होदूण पुव्वकोडाउअमणुस्सेसुववज्जिय सव्वलहुं जोणिणिक्खमणजम्मणेण अंतोमुहुत्तब्भहियअट्ठवस्सिओ होदूण सम्मत्तं संजमं च जुगवं पडिवज्जिय अणंताणुबंधिचउक्कं विसंजोइय दंसणमोहणीयं खविय देसूणपुव्वकोडिं संजमगुणसेढिणिज्जरं करिय अंतोमुहुत्तावसेसे सिज्झणकाले चारित्तमोहक्खवणाए अब्भुट्ठिय पुणो अणियट्टिअद्धाए संखेज्जेसु भागेसु गदेसु अट्ठकसाए

शंका—अधःप्रवृत्तभागहार अनवस्थित है अर्थात् वह सर्वत्र एकसा नहीं है यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—इसी सूत्रसे जाना जाता है।

शंका—यदि व्ययके अनुसार ही आय होती है तो नपुंसकवेदके समान अन्य प्रकृतियोंकी भी आय-व्यय माननी पड़ती है। चूँकि विसंयोजनाके बाद पुनः संयोग होने पर एक आवलिकाल तक अनन्तानुबन्धीका व्यय नहीं है, इसलिये अन्य प्रकृतियोंमेंसे उसमें आय भी नहीं होनी चाहिये ?

समाधान—नहीं, क्योंकि विसंयोजनारूप प्रकृतियां और विसंयोजनाको नहीं प्राप्त होनेवाली प्रकृतियां अत्यन्त भिन्न है, इसलिये उनमें समानता नहीं हो सकती।

क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न हो फिर संज्ञी पंचेन्द्रियोंमें उत्पन्न हुआ। अनन्तर दान देनेसे या दानकी अनुमोदना करनेसे तीन पल्यकी आयुवालोंमें उत्पन्न हुआ। वहां छह पर्याप्तियोंसे पर्याप्त होनेके बाद नपुंसकवेदका बन्ध रुक जाता है। फिर तीन पल्य काल तक नपुंसकवेदको स्तिवुकसंक्रमण और विध्यातसंक्रमणके द्वारा गलाकर अन्तर्मुहूर्त काल शेष रह जाने पर सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ। फिर प्रथम छयासठ सागर काल तक भ्रमणकर सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ। फिर सम्यक्त्वको प्राप्त हो दूसरे छयासठ सागर काल तक भ्रमण किया। फिर मिथ्यात्वमें गया और नपुंसक वेदके उदयके साथ पूर्वकोटिकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ। अनन्तर अतिशीघ्र योनिसे निकलनेरूप जन्मसे लेकर अन्तर्मुहूर्त अधिक आठ वर्षका होकर सम्यक्त्व और संयमको एक साथ प्राप्त हुआ। फिर अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजनाकर दर्शनमोहनीयकी क्षपणा की। फिर कुछ कम एक पूर्व कोटि काल तक संयमसम्बन्धी गुणश्रेणिकी निर्जरा करता हुआ सिद्ध होनेके लिये अन्तर्मुहूर्त कालके शेष रह जाने पर चारित्रमोहनीयकी क्षपणाके लिए उद्यत हुआ। फिर अनिवृत्तिकरणके कालके संख्यात बहुभाग व्यतीत होने पर आठ कषाय,

तेरसणामकम्माणि थीणगिद्धितियं च खविय पुणो बारसकम्माणमणुभागस्स देसघादिबंधं करिय पुणो अंतरकरणं समाणिय णवुंसयवेदस्स खवणं पारभिय पुणो अंतोमुहुत्ते बोलीणे णवुंसयवेदचरिमफालिं सव्वसंकमेण पुरिसवेदस्सुवरि संछुहिय एगणिसेगे एगसमयकालट्ठिदिगे सेसे जहण्णदव्वं होदि त्ति भावत्थो।

§ २७५. संपहि एत्थ उवसंहारम्मि संचयाणुगमो वुच्चदे। तं जहा—कम्मट्ठिदिआदिसमयप्पहुडि उक्कस्सणिल्लेवण-तिण्णिपलिदोवम-वेछावट्ठिसागरोवम-पुव्वकोडिमेत्ताणं कम्मट्ठिदिपढमसमयप्पहुडि समयपबद्धाणं जहण्णपदम्मि एगो वि परमाणू णत्थि, कम्मट्ठिदीदो उवरि सव्वसमयपबद्धाणमवट्ठाणाभावादो। अवसेससमयपबद्धाणं एगो वा दो वा एवमणंता वा परमाणू अत्थि।

§ २७६. संपहि एत्थ पगदि-विगिदिगोवुच्छाणं गवेसणाकीरमाणाए जहा मिच्छत्तस्स परूवणा कदा तहा कायव्वा। उक्कड्डणाए विज्झादेण च आयव्वयणिरूवणाए मिच्छत्तभंगो। तेण दिवड्ढगुणहाणिगुणिदेगेइंदियसमयपबद्धे अंतोमुहुत्तेणोवट्टिदओकड्डुक्कड्डणभागहारेण तिण्णिपलिदोवमणाणागुणहाणिसलागाण-मण्णोण्णब्भत्थरासिणा वेछावट्ठिणाणागुणहाणिसलागाणमण्णोण्णब्भत्थरासिणा दिवड्ढ-गुणहाणीए च खंडिदे पयडिगोवुच्छा होदि। ओकड्डणभागहारो पलिदो० असंखे०भागमेत्तो। तेण भागहारेण खंडिदेगखंडमेत्तदव्वे सव्वगोवुच्छाहिंतो समयं

नामकर्मकी तेरह प्रकृतियां और तीन स्त्यानगृद्धि इन सबकी क्षपणा की। फिर बारह कर्मोंके अनुभागका देशघातिबन्ध किया। फिर अन्तरकरण करके नपुंसकवेदकी क्षपणाका प्रारम्भ किया। फिर अन्तर्मुहूर्त कालको बिताकर नपुंसकवेदकी अन्तिम फालिको सर्वसंक्रमणके द्वारा पुरुषवेदके ऊपर निक्षिप्त किया। अनन्तर एक समयकी स्थितिवाले एक निषेकके शेष रहने पर जघन्य द्रव्य होता है यह इसका भाव है।

§ २७५. अब यहां उपसंहारका प्रकरण है। उसमें पहले संचयानुगमका कथन करते हैं जो इस प्रकार है—कर्मस्थितिके पहले समयसे लेकर उत्कृष्ट निर्लेपनरूप तीन पल्य, दो छयासठ सागर और एक पूर्वकोटि प्रमाण समयबद्धोंका एक भी परमाणु जघन्य द्रव्यमें नहीं है, क्योंकि कर्मस्थितिके ऊपर सब समयप्रबद्धोंका अवस्थान नहीं पाया जाता है। अवशेष समयप्रबद्धोंके एक परमाणु अथवा दो परमाणु इसी प्रकार अथवा अनन्त परमाणु जघन्य द्रव्यमें हैं।

§ २७६. अब यहां प्रकृतिगोपुच्छा और वकृतिगोपुच्छाका विचार करने पर जिस प्रकार मिथ्यात्वका कथन किया है उसप्रकार करना चाहिये, क्योंकि उत्कर्षण और विध्यातके निमित्तसे होनेवाले आय और व्ययका कथन मिथ्यात्वके समान है। इसलिये डेढ़ गुणहानिसे गुणा किये गये एकेन्द्रियके एक समयप्रबद्धमें अन्तर्मुहूर्तसे भाजित अपकर्षण-उत्कर्षणभागहार, तीन पल्यकी नाना गुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्त राशि दो छयासठ सागरकी नाना गुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्त राशि और डेढ़ गुणहानि इन सब भागहारोंका भाग देने पर प्रकृतिगोपुच्छा प्राप्त होती है।

शंका—अपकर्षण भागहार पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। इस भागहारका

पडि गलमाणे पलिदो० असंखे०भागमेत्तकालेण णवुंसयवेदेण णिस्संतेण होदव्वं, णिरायत्तादो। ण च णिकाचिदत्तादो ण ओकड्डिज्जदि, सव्वगोवुच्छाणं सव्वप्पणा णिकाचणाणुववत्तीदो। ओकड्डणाभागहारस्स पलिदो० असंखे०भागपमाणत्तं फिट्टिदूण असंखेज्जलोगाणं तत्तप्पसंगादो च। तम्हा ण एस भागहारो[1] वेछावट्ठिसागरोवमपरिभमणं च जुज्जदे? एत्थ परिहारो वुच्चदे—आएण विणा बहुअं कालमच्छमाणाणं[2] पयडीणमोकड्डणभागहारेण विज्झादभागहारेणेव अंगुलस्स असंखे०भागेण तत्तो बहुएण वा होदव्वं, अण्णहा पुव्वुत्तदोसप्पसंगादो। ओकड्डणभागहारो पलिदो० असंखे०भागो चेव त्ति वक्खाणप्पाबहुएण विरोहो होदि त्ति णासंकणिज्जं उक्कड्डणाविणाभाविओकड्डणाए तत्थ पलिदो० असंखे०भागपमाणत्तप्परूवणादो। सुत्तेण वक्खाणेण वा विणा कधमेदं णादुं सक्किज्जदे? ण, वेछावट्ठिसागरोवमेसु सादिरेगेसु हिंडिदेसु वि णवुंसयवेदसंतकम्मं ण णिल्लेविज्जदि त्ति सुत्तण्णहाणुववत्तीए तस्स सिद्धीदो। तम्हा पयडिगोवुच्छभागहारो पुव्वुत्तो चेव णिरवज्जो त्ति घेत्तव्वं।

भाग देने पर एक भागप्रमाण द्रव्य सब गोपुच्छाओंमेंसे प्रतिसमय गलता है, इसलिये पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कालके द्वारा नपुंसकवेद निःसत्त्व हो जाना चाहिए, क्योंकि नपुंसकवेदकी आय नहीं पाई जाती। यदि कहा जाय कि निकाचित होनेसे अपकर्षण नहीं होता सो भी बात नहीं है, क्योंकि सब गोपुच्छाओंको पूरी तरहसे निकाचना नहीं बन सकती और अपकर्षण भागहार पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण न रहकर या तो असंख्यात लोकप्रमाण प्राप्त होता है या अनन्तप्रमाण प्राप्त होता है। इसलिए जो प्रकृतिगोपुच्छाको प्राप्त करनेके लिए भागहार कहा है वह नहीं बनता और न दो छयासठ सागर कालतक परिभ्रमण करना बनता है?

समाधान—अब इस शंकाका समाधान करते हैं—आयके बिना बहुत कालतक विद्यमान रहनेवाली प्रकृतियोंका अपकर्षण भागहार या तो विध्यातभागहारके समान अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण होना चाहिये या उससे भी बड़ा होना चाहिये, अन्यथा पूर्वोक्त दोष आता है। यदि कहा जाय कि अपकर्षण भागहार पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है इस प्रकारका व्याख्यान करनेवाले अल्पबहुत्वके साथ पूर्वोक्त कथनका विरोध आता है सो ऐसी आशंका भी नहीं करनी चाहिये, क्योंकि वहाँ पर उत्कर्षणका अविनाभावी अपकर्षणको ही पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है।

शंका—सूत्र या व्याख्यानके बिना यह बात कैसे जानी जा सकती है?

समाधान—नहीं, क्योंकि साधिक दो छयासठ सागर काल तक घूमने पर भी नपुंसकवेदका सत्कम निःशेष नहीं होता, इस प्रकार सूत्रका कथन अन्यथा बन नहीं सकता, इससे उक्त कथनकी सिद्धि होती है।

इसलिये प्रकृतिगोपुच्छाका भागहार जो पहले कहा है वही निर्दोष है यह यहां स्वीकार करना चाहिये।

---

१. आ० प्रतौ 'एसो भागहारो' इति पाठः। २. आ०प्रतौ 'काल गच्छमाणाणं' इति पाठः।

§ २७७. संपहि विगिदिगोवुच्छापमाणे इच्छिज्जमाणे दिवड्ढमवणिय चरिमफालिभागहारे ठविदे विगिदिगोवुच्छा आगच्छदि। एवं विहपयडि-विगिदि-गोवुच्छाओ अपुव्व-अणियट्टिगुणसेढिगोवुच्छाओ च घेत्तूण णवुंसयवेदस्स जहण्णयं पदं।

❀ तदो पदेसुत्तरं।

§ २७८. तदो जहण्णसंतकम्मादो ओकड्डणवसेण पदेसुत्तरे संतकम्मे संते अण्णमपुणरुत्तट्ठाणं होदि। एदं सुत्तं देसमासियं ति कट्टु दुपदेसुत्तर-तिपदेसुत्तरादि-अणंताणं णिरंतरट्ठाणाणं परूवणा कायव्वा।

❀ णिरंतराणि ट्ठाणाणि जाव तप्पाओग्गो उक्कस्सओ उदओ त्ति।

§ २७९. तिण्हं पलिदोवमाणं वेछावट्ठिसागरोवमाणं देसूणपुव्वकोडीए च समयरचणं काऊण णवुंसयवेदट्ठाणाणं परूवणा कीरदे। तं जहा—जहण्णदव्वम्मि परमाणुत्तरकमेण एगगोवुच्छविसेसे विज्झाददव्वेणब्भहिए वड्ढिदे अणंताणि णिरंतरट्ठाणाणि उप्पज्जंति। एवं वड्ढिदूणच्छिदेण अण्णेगो जहण्णसामित्तविहाणेण समयूणवेछावट्ठीओ अंतोमुहुत्तूणाओ भमिय मिच्छत्तं गंतूण मणुसेसुववज्जिय पुणो जोणिणिक्खमणजम्मणेण[1] अंतोमुहुत्तब्भहियअट्ठवस्साणि गमिय सम्मत्तं संजमं च

---

§ २७७. अब विकृतिगोपुच्छाका प्रमाण लानेकी इच्छा होने पर पिछले प्रकृतिगोपुच्छाके भागहारमेंसे डेढ़ गुणहानिको निकालकर उसके स्थानमें अन्तिम फालिको भागहाररूपसे स्थापित करने पर विकृतिगोपुच्छा आती है। इस प्रकार प्रकृतिगोपुच्छा, विकृतिगोपुच्छा, अपूर्वकरणकी गुणश्रेणिगोपुच्छा और अनिवृत्तिकरणकी गुणश्रेणिगोपुच्छा इन चार गोपुच्छाओंको मिलाने पर नपुंसकवेदका जघन्य सत्त्वस्थान होता है।

❀ जघन्य द्रव्यमें एक प्रदेश मिलाने पर दूसरा स्थान होता है।

§ २७८. उससे अर्थात् जघन्य सत्कर्मसे अपकर्षणाके कारण एक प्रदेश अधिक सत्कर्मके होने पर एक दूसरा अपुनरुक्त स्थान होता है। चूंकि यह सूत्र देशामर्षक है इसलिये इसीप्रकार दो प्रदेश अधिक, तीन प्रदेश अधिक आदि अनन्त निरन्तर स्थानोंका कथन करना चाहिये।

❀ इस प्रकार तद्योग्य उत्कृष्ट उदय प्राप्त होने तक निरन्तर स्थान होते हैं।

§ २७९. तीन पल्य, दो छ्यासठ सागर और कुछ कम एक पूर्वकोटि इन सबके समयोंको एक पंक्तिरूपसे रचकर नपुंसकवेदके स्थानोंका कथन करते हैं जो इस प्रकार हैं—जघन्य द्रव्यमें उत्तरोत्तर एक एक परमाणुके क्रमसे विध्यातद्रव्यसे अधिक एक गोपुच्छविशेष बढ़ाने पर अनन्त निरन्तर स्थान उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके साथ एक अन्य जीव समान है जो जघन्य स्वामित्वकी विधिसे आया। अनन्तर एक समय कम दो छयासठ सागरमेंसे अन्तर्मुहूर्त कम कालतक भ्रमण करता रहा। पश्चात् मिथ्यात्वमें जाकर मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ। वहाँ योनिसे निकलनेरूप जन्मसे

---

1. ता०प्रतौ 'णिक्कमणजम्मणेण' इति पाठः।

घेत्तूण देसूणपुव्वकोडिं विहरिय चारित्तमोहक्खवणाए अब्भुट्ठिय णवुंसयवेदस्स एगणिसेगमेगसमयकालं धरेदूण ट्ठिदो सरिसो। एवमोदारेदव्वं जाव विदियछावट्ठि-पढमसमओ त्ति। पढमछावट्ठीए ओदारिज्जमाणाए सम्मामिच्छत्तकालब्भंतरे णत्थि विसेसो त्ति पढमछावट्ठी वि पुव्वविहाणेण ओदारेदव्वा जाव खविदकम्मंसियलक्खणेणा-गंतूण तिपलिदोवमिएसु उववज्जिय पुणो अंतोमुहुत्तावसेसे जीविदव्वे त्ति सम्मत्तं घेत्तूण दिवड्ढपलिदोवमाउएसु देवेसुप्पज्जिय तत्थ अंतोमुहुत्तावसेसे आउए मिच्छत्तं गंतूण पुव्वकोडीए उप्पज्जिय पुणो जोणिणिक्खमणजम्मणेण[1] अंतोमुहुत्तब्भहियअट्ठवस्साणि गमिय सम्मत्तं संजमं च जुगवं घेत्तूण देसूणपुव्वकोडिं विहरिय चारित्तमोहक्खवणाए अब्भुट्ठिय णवुंसयवेदस्स एगणिसेगमेगसमयकालं धरिय ट्ठिदो त्ति।

§ २८०. संपहि देवाउअमोदारेदुं ण सक्किज्जदि, सोहम्मे समुप्पज्जमाणसम्मादिट्ठीणं दिवड्ढपलिदोवमादो हेट्ठा जहण्णाउआभावादो। सम्मादिट्ठी समऊण-दिवड्ढपलिदोवमाउएसु देवेसु ण उप्पज्जदि त्ति कुदो णव्वदे? सुत्तसमाणाइरियवयणादो। संपहि तिण्णिपलिदोवमाणि ओदारेहामो। तं जहा—खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण

लेकर अन्तर्मुहूर्त अधिक आठ वर्ष बिताकर सम्यक्त्व और संयमको एकसाथ प्राप्त हुआ। पश्चात् कुछ कम एक पूर्वकोटि काल तक विहार कर चरित्रमोहनीयकी क्षपणाके लिए उद्यत हुआ। पश्चात् जो नपुंसकवेदकी एक समयकी स्थितिवाले एक निषेकको धारण कर स्थित है। इस प्रकार दूसरे छयासठ सागरके प्रथम समयके प्राप्त होने तक उतारते जाना चाहिये। प्रथम छयासठ सागर कालके उतारने पर सम्यग्मिथ्यात्व कालके भीतर कोई विशेषता नहीं है, इसलिये प्रथम छयासठ सागर कालको भी पूर्व विधिके अनुसार क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर, तीन पल्यकी आयुवालोंमें उत्पन्न हो पश्चात् जीवनमें अन्तर्मुहूर्त शेष रहने पर सम्यक्त्वको प्राप्त कर अनन्तर डेढ़ पल्यकी आयुवाले देवोंमें उत्पन्न होकर और वहां आयुमें अन्त-र्मुहूर्त शेष रहने पर मिथ्यात्वमें जाकर पश्चात् पूर्वकोटिकी आयुवले मनुष्योंमें उत्पन्न होकर फिर योनिसे निकलनेरूप जन्मसे लेकर अन्तर्मुहूर्त अधिक आठ वर्ष बिताकर सम्यक्त्व और संयमको एक साथ प्राप्त हो पश्चात् कुछ कम एक पूर्वकोटि काल तक विहार करनेके बाद चरित्रमोहनीयकी क्षपणाके लिए उद्यत हो नपुंसकवेदके एक समयकी स्थितिवाले एक निषेकको धारण करके स्थित हुए जीवके प्राप्त होने तक उतारते जाना चाहिये।

§ २८०. अब देवायुको उतारना शक्य नहीं है, क्योंकि सौधर्म स्वर्गमें उत्पन्न होनेवाले सम्यग्दृष्टियोंके डेढ़ पल्यसे कम जघन्य आयु नहीं होती।

शंका—सम्यग्दृष्टि जीव एक समय कम डेढ़ पल्यकी आयुवाले देवोंमें नहीं उत्पन्न होता यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

समाधान—सूत्रके समान आचार्यवचनसे जाना जाता है।

अब तीन पल्यको उतारकर बतलाते हैं जो इसप्रकार है—क्षपितकर्मांशकी विधिसे

---

1. आ०प्रतौ -जोणिणिक्कमणजम्मणेण' इति पाठः।

समऊणतिपलिदोवमिएसुववज्जिय सम्मत्तं घेत्तूण दिवड्डपलिदोवमाउअसोहम्मदेवेसुप्पज्जिय पच्छा मिच्छत्तं गंतूण पुव्वकोडीए उववज्जिय खवणाए अब्भुट्ठिय णवुंसयवेदस्स एगणिसेगमेगसमयकालं धरेदूण ट्ठिदो पुव्विल्लेण सरिसो।

२८१. संपहि इमो परमाणुत्तरकमेण एगगोवुच्छविसेसं विज्झादेण गददव्वेणब्भहियं वड्ढावेदव्वो। पुणो एदेण अण्णेगो खविदकम्मंसियलक्खणेण दुसमयूणतिपलिदोवमिएसुववज्जिय सम्मत्तं घेत्तूण दिवड्डपलिदोवमाउअसोहम्मदेवेसुववज्जिय मिच्छत्तं गंतूण पुव्वकोडीए उववज्जिय खवणाए अब्भुट्ठिय णवुंसयवेदस्स एगणिसेगमेगसमयकालं धरिय ट्ठिदो सरिसो। एवं तिण्णि पलिदोवमाणि हेट्ठा ओदारेद णि जाव समयाहियपुव्वकोडी सेसा त्ति। संपहि एत्तो हेट्ठा ओदारेदुं ण सक्कदे स... ाहियपुव्वकोडीदो हेट्ठा असंखेज्जवस्साउआणं सव्वजहण्णाउअभावादो।

२८२. संपहि एदेण अण्णेगो खविदकम्मंसिओ सण्णिपंचिंदिएसुप्पण्णो संतो पुणो समयाहियपुव्वकोडीए समहियदिवड्डपलिदोवमट्ठिदिएसु देवेसु उववज्जिय अंतोमुहुत्तं गमिय सम्मत्तं पडिवज्जिय पुणो देवाउअं सव्वमणुपालिय मिच्छत्तं गंतूण पुव्वकोडीए उववज्जिय सम्मत्तं संजमं च घेत्तूण सव्वं पुव्वकोडिं संजमगुणसेढिणिज्जरं

आकर एक समयकम तीन पल्यकी आयुवालोंमें उत्पन्न हुआ। पश्चात् सम्यक्त्वको ग्रहणकर डेढ़ पल्यकी आयुवाले सौधर्म स्वर्गके देवोंमें उत्पन्न हुआ। पश्चात् मिथ्यात्वको प्राप्तकर पूर्व कोटिकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ। फिर क्षपणाके लिये उद्यत हो नपुंसकवेदके एक समयकी स्थितिवाले एक निषेकको धारणकर स्थित हुआ जीव पूर्वोक्त जीवके समान है।

§ २८१. अब इस जीवके द्रव्यके ऊपर उत्तरोत्तर एक-एक परमाणु अधिकके क्रमसे एक गोपुच्छविशेषको और विध्यातभागहारके द्वारा पर प्रकृतिको प्राप्त हुए द्रव्यको बढ़ाना चाहिए। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए इस जीवके समान एक अन्य जीव है जो क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर दो समय कम तीन पल्यकी आयुवाले जीवोंमें उत्पन्न हुआ। फिर सम्यक्त्वको ग्रहण कर डेढ़ पल्यकी आयुवाले सौधर्म स्वर्गके देवोंमें उत्पन्न हुआ। फिर मिथ्यात्वमें जाकर पूर्वकोटिके आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ। फिर क्षपणाके लिये उद्यत हो नपुंसकवेदकी दो समयकी स्थितिवाले एक निषेकको धारण कर स्थित है। इस प्रकार एक समय अधिक एक पूर्वकोटि काल शेष रहने तक तीन पल्य कालको उतारते जाना चाहिये। अब इससे नीचे उतारना शक्य नहीं है, क्योंकि असंख्यात वर्षकी आयुवालोंकी एक समय अधिक एक पूर्वकोटि सबसे जघन्य आयु है। उनकी इससे और नीचे आयु नहीं पाई जाती।

§ २८२. अब इस जीवके समान एक अन्य जीव है जो क्षपितकर्मांश जीव संज्ञी पंचेन्द्रियोंमें उत्पन्न हो, फिर एक समय अधिक पूर्वकोटिकी आयुवालोंमें और एक समय अधिक डेढ़ पल्यकी आयुवाले देवोंमें उत्पन्न हो अनन्तर अन्तर्मुहूर्तके बाद सम्यक्त्वको प्राप्त हो फिर सब देवायुको पालकर मिथ्यात्वको प्राप्त हो पूर्वकोटिकी आयुवालोंमें उत्पन्न हुआ। अनन्तर सम्यक्त्व और संयमको एक साथ ग्रहण कर पूरे पूर्वकोटि काल तक

---

१. आ०प्रतौ 'समयाहिय' इति पाठः।

करिय णवुंसयवेदं खवेदूण ट्ठिदो सरिसो।

§ २८३. संपहि देवाउअं समयूणदुसमयूणादिकमेणोदारेदव्वं जाव खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण दसवस्ससहस्साउअदेवेसुववज्जिय सम्मत्तं घेत्तूण पुणो अंतोमुहुत्तावसेसे मिच्छत्तं गंतूण सयलपुव्वकोडीए उववज्जिय णवुंसयवेदं खविय एगणिसेगमेगसमयकालं धरेदूण ट्ठिदो त्ति। संपहि देवाउअं समऊणादिकमेण ण ओहट्टदि दसवस्ससहस्सेहिंतो ऊणदेवाउआभावादो। तदो समयूण-दुसमयूणादिकमेण पुव्वकोडी ओहट्टावेदव्वा जाव समयूणदसवस्ससहस्सूणपुव्वकोडि[1] त्ति।

§ २८४. पुणो एदेणवट्टिदतप्पाओग्गदव्वेण अण्णेगो खविदकम्मंसियलक्खणेण दसवस्ससहस्साउअदेवेसुववज्जिय अंतोमुहुत्तं गमिय तत्थ सम्मत्तं घेत्तूण पुणो अंतोमुहुत्तावसेसे जीविदव्वए त्ति मिच्छत्तं गंतूण तदो दसवस्ससहस्साणि ऊणपुव्वकोडीए उववज्जिय णवुंसयवेदं खविय एगणिसेगमेगसमयकालं धरेदूण ट्ठिदो सरिसो।

§ २८५. संपहि एदेण अण्णेगो खविदकम्मंसियलक्खणे देवे मोत्तूण संपुण्णपुव्वकोडाउअमणुस्सेसु[2] उववण्णो तत्थ जोणिणिक्खमणजम्मणेण[3] अंतोमुहुत्तब्भहियअट्ठवस्साणि गमिय पुणो सम्मत्तं संजमं च जुगवं घेत्तूण

संयमसम्बन्धी गुणश्रेणि निर्जरा करता हुआ नपुंसकवेदका क्षय करके स्थित है।

§ २८३. अब देवायुको उत्तरोत्तर एक समय कम और दो समय कम आदि क्रमसे क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर दस हजार वर्षकी आयुवाले देवोंमें उत्पन्न होकर, सम्यक्त्वको ग्रहण करके, फिर अन्तर्मुहूर्त आयु शेष रहने पर मिथ्यात्वमें जाकर, पूरी एक पूर्वकोटिकी आयु लेकर उत्पन्न हो नपुंसकवेदका क्षय करता हुआ एक समयकी स्थितिवाले एक निषेकको धारणकर स्थित हुए जीवके प्राप्त होने तक उतारते जाना चाहिये। अब देवायुको एक समय कम आदि क्रमसे और घटाना शक्य नहीं है, क्योंकि देवायु दस हजार वर्षसे और कम नहीं होती। इसलिए पूर्वकोटिको एक समय कम दो समय कम आदि क्रमसे एक समय न्यून दस हजार वर्ष कम पूर्वकोटिके प्राप्त होनेतक घटाते जाना चाहिये।

§ २८४. अब तद्योग्य अवस्थित द्रव्यको धारणकर स्थित हुए इस जीवके समान एक अन्य जीव है जो क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर, दस हजार वर्षकी आयुवाले देवोंमें उत्पन्न हो फिर अन्तर्मुहूर्तके बाद वहाँ सम्यक्त्वको ग्रहण कर अनन्तर जीवनमें अन्तर्मुहूर्त शेष रहने पर मिथ्यात्वको प्राप्त हो फिर दस हजार वर्ष कम एक पूर्वकोटिकी आयुवालोंमें उत्पन्न हो नपुंसकवेदका क्षय करता हुआ एक समयकी स्थितिवाले एक निषेकको धारण कर स्थित है।

§ २८५. अब इसके समान एक अन्य जीव है जो क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर देवोंमें उत्पन्न हुए बिना पूरी एक पूर्वकोटिकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ। वहाँ योनिसे निकलनेरूप जन्मसे लेकर अन्तर्मुहूर्त अधिक आठ वर्ष बिताकर फिर सम्यक्त्व

1. '–दसवस्सूणपुव्वकोडि' इति पाठः। २. आ०प्रतौ 'पुव्वकोडीए आउअमणुस्सेसु' इति पाठः।
३. आ०प्रतौ 'जोणिणिक्कमणजम्मणेण' इति पाठः।

संजमगुणसेढिणिज्जरं करिय पुणो सिज्झणकालेण सव्वजहण्णमंतोमुहुत्तावसेसे चारित्तमोहक्खवणाए अब्भुट्ठिय णवुंसयवेदचरिमफालिं पुरिसवेदसरूवेण संचारिय एगणिसेगमेगसमयकालं धरेदूण ट्ठिदो सरिसो।

§ २८६. संपहि एदस्स दव्वं परमाणुत्तरकमेण एगगोवुच्छविसेसमेत्तं वड्ढावेदव्वं। एवं वड्ढिदेण अण्णेगो समयूणपुव्वकोडीए उववज्जिय णवुंसयवेदं खविय एगणिसेगमेगसमयकालं धरिय ट्ठिदो सरिसो। एवं समयूणादिकमेण सव्वा पुव्वकोडी ओदारेदव्वा जाव अंतोमुहुत्तब्भहियअट्ठवस्साणि चेट्ठिदाणि त्ति। खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण मणुस्सेसुववज्जिय सव्वलहुं जोणिणिक्खमणजम्मणेण[1] अंतोमुहुत्तब्भहियअट्ठवस्साणि गमिय पुणो सम्मत्तं संजमं च जुगवं घेत्तूण अणंताणुबंधिचउक्कं विसंजोइय दंसणमोहणीयं खविय चारित्तमोहक्खवणाए अब्भुट्ठिय खविय एगणिसेगमेगसमयकालं धरेदूण ट्ठिदं पावदि ताव ओदिण्णो त्ति घेत्तव्वं।

§ २८७. संपहि एदं दव्वं खविदकम्मंसियमस्सिदूण दोहि वड्ढीहि खविद-गुणिद-घोलमाणे अस्सिदूण पंचहि वड्ढीहि गुणिदकम्मंसियमस्सिदूण दोहि वड्ढीहि वड्ढावेदव्वं जाव एगो गुणिदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण ईसाणदेवेसुववज्जिय पुणो तत्थ णवुंसयवेदमुक्कस्सं करिय मणुस्सेसुववज्जिय पुणो जोणिणिक्खमणजम्मणेण[2]

और संयमको एक साथ प्राप्त हुआ। अनन्तर संयमसम्बन्धी गुणश्रेणिकी निर्जरा करता हुआ जब सिद्ध होनेके लिये सबसे जघन्य अन्तर्मुहूर्त काल शेष रह जाय तब चारित्रमोहनीयकी क्षपणाके लिए उद्यत हो और नपुंसकवेदकी अन्तिम फालिको धारण करके स्थित है।

§ २८६. अब इसके द्रव्यको उत्तरोत्तर एक एक परमाणुके क्रमसे एक गोपुच्छविशेषके बढ़नेतक बढ़ाते जाना चाहिये। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए इस जीवके समान एक अन्य जीव है जो एक समय कम पूर्वकोटिकी आयुके साथ उत्पन्न हो नपुंसकवेदका क्षय करता हुआ दो समयकी स्थितिवाले एक निषेकको धारण कर स्थित है। इस प्रकार उत्तरोत्तर एक समय कमके क्रमसे अन्तर्मुहूर्त अधिक आठ वर्ष रहने तक पूरी पूर्वकोटिको उतारते जाना चाहिये। तात्पर्य यह है कि क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर मनुष्योंमें उत्पन्न हो, अतिशीघ्र योनिसे निकलनेरूप जन्मसे लेकर अन्तर्मुहूर्त अधिक आठ वर्ष बिताकर फिर सम्यक्त्व और संयमको एक साथ प्राप्त कर, अनतानुबन्धीचतुष्कको विसंयोजना कर, दर्शनमोहनीयकी क्षपणा कर, चरित्रमोहनीयकी क्षपणाके लिए उद्यत हो नपुंसकवेदका क्षय करते हुए एक समयकी स्थितिवाले एक निषेकको धारण कर स्थित हुए जीवके प्राप्त होनेतक उतारना चाहिये।

§ २८७. अब इस द्रव्यको क्षपितकर्मांशकी अपेक्षा दो वृद्धियोंके द्वारा क्षपितोगुणित और घोलमान कर्मांशकी अपेक्षा पाँच वृद्धियोंके द्वारा और गुणितकर्मांशकी अपेक्षा द वृद्धियोंके द्वारा तब तक बढ़ाते जाना चाहिये जब जाकर गुणितकर्मांशकी विधिसे आकर ईशान स्वर्गके देवोंमें उत्पन्न हो फिर वहाँ नपुंसकवेदको उत्कृष्ट करके पश्चात् मनुष्योंमें

---

१. आ०प्रतौ 'जोणिणिक्कमणजम्मणेण' इति पाठः। २. आ०प्रतौ 'जोणिणिक्कमणजम्मणेण' इति पाठः।

अंतोमुहुत्तब्भहियअट्ठवस्सिओ होदूण चारित्तमोहक्खवणाए अब्भुट्ठिय णवुंसयवेदचरिमफालिं पुरिसवेदस्स संचारिय एगणिसेगमेगसमयकालं धरेदूण ट्ठिदो त्ति। णवरि पढमवारमपुव्वगुणसेढिगोवुच्छा विदियवारं विगिदिगोवुच्छा तदियवारं पयडिगोवुच्छा समयाविरोहेण वड्ढावेदव्वा। एवं वड्ढाविदे अणंतेहि ठाणेहि एगं फद्दयं होदि।

§ २८८. संपहि गुणिदकम्मंसियमस्सिदूण कालपरिहाणीए ठाणपरूवणं कस्सामो। तं जहा—खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण तिण्णि पलिदोवमाणि वेछावट्ठीओ च भमिय मिच्छत्तं गंतूण पुणो पुव्वकोडीए उववज्जिय णवुंसयवेदं खविय एगणिसेगं एगसमयकालं धरेदूण ट्ठिदम्मि जहण्णदव्वं होदि। संपहि एदस्स जहण्णदव्वस्स वड्ढावणक्कमो वुच्चदे। तं जहा—अपुव्वकरणपरिणामेसु अंतोमुहुत्तकालब्भंतरे पुध पुध पंतियागारेण संठिदेसु तत्थ पढमसमयम्हि सव्वजहण्णपरिणामप्पहुडि जाव असंखेज्जलोगमेत्तपरिणामट्ठाणाणि उवरि गच्छंति ताव एदेहि परिणामेहि ओकड्डिदूण कीरमाणपदेसगुणसेढी सरिसा। कुदो? साभावियादो। पुणो एत्तियमेत्तमद्धाणं गंतूण ट्ठिदपरिणामं परिणममाणस्स पदेसग्गं विसेसाहियं। केत्तियमेत्तेण? जहण्णदव्वे असंखेज्जलोगेहि खंडिदे तत्थ एयखंडमेत्तेण। पुणो वि एत्तो उवरि असंखेज्जलोगमेत्तमद्धाणं

उत्पन्न हो फिर योनिसे निकलनेरूप जन्मसे लेकर अन्तर्मुहुर्त अधिक आठ वर्षका होकर चारित्रमोहनीयकी क्षपणाके लिए उद्यत हो नपुंसकवेदकी अन्तिम फालिको पुरुषवेदके ऊपर प्रक्षिप्त करके एक समयकी स्थितिवाले एक निषेकको धारण कर स्थित होवे। किन्तु इतनी विशेषता है कि पहली बार अपूर्वकरणकी गुणश्रेणिगोपुच्छाको दूसरी बार विकृतिगोपुच्छाको और तीसरी बार प्रकृतिगोपुच्छाको यथाविधि बढ़ाना चाहिये। इस प्रकार बढ़ाने पर अनन्त स्थानोंको मिलाकर एक स्पर्धक होता है।

§ २८८. अब गुणितकर्मांशकी अपेक्षा कालकी हानि द्वारा स्थानोंका कथन करते हैं जो इस प्रकार हैं—जो क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर तथा तीन पल्य और दो छ्यासठ सागर काल तक भ्रमण कर अनन्तर मिथ्यात्वको प्राप्त हो फिर एक पूर्वकोटिकी आयुके साथ उत्पन्न हो नपुंसकवेदका क्षय करते हुए एक समयकी स्थितिवाले एक निषेकको धारण करके स्थित हुए जीवके जघन्य द्रव्य होता है। अब इस जघन्य द्रव्यको बढ़ानेका क्रम कहते हैं जो इस प्रकार है—अपूर्वकरणके परिणामोंको अन्तर्मुहूर्त कालके भीतर अलग अलग पंक्तिरूपसे स्थापित करे। फिर इनमेंसे पहले समयमें सबसे जघन्य परिणामसे लेकर असंख्यात लोकमात्र परिणामस्थान ऊपर जाने तक इन परिणामोंके द्वारा अपकर्षण होकर जो प्रदेशोंकी गुणश्रेणि रचना की जाती है वह समान है, क्योंकि ऐसा स्वभाव है। फिर इतना ही स्थान जाकर जो परिणाम स्थित है उससे प्राप्त होनेवाले प्रदेश विशेष अधिक है।

शंका—कितने अधिक हैं?

समाधान—जघन्य द्रव्यमें असंख्यात लोकका भाग देनेपर जो एक भाग प्राप्त हो उतने अधिक हैं।

फिर भी यहांसे आगे असंख्यात लोकमात्र स्थानोंके प्राप्त होने तक इन परिणामोंके

---

1. आ०प्रतौ 'कीरमाणा' इति पाठः।

जाव गच्छदि ताव एदेहि परिणामेहि कीरमाणं गुणसेढिदव्वं सरिसं चेव। कुदो? साहावियादो। पुणो एत्तियमद्धाणं गंतूण जो ट्ठिदो परिणामो सो विसेसाहियपदेसग्गस्स कारणं। एवं णेदव्वं जाव उक्कस्सपरिणामट्ठाणे त्ति।

§ २८९. संपहि एत्थ विसेसाहियपदेसकारणपरिणामट्ठाणाणि चेव उच्चिणिदूण तस्सरिससेसासेसपरिणामट्ठाणाणि अवणिय एदेसिमुच्चिणिदूण गहिदपरिणामाण-मपुव्वपढमसमयम्मि परिवाडीए रचणाए कदाए एदे वि असंखेज्जलोगमेत्ता परिणामवियप्पा होंति। एवं विदियसमयप्पहुडि जाव चरिमसमओ त्ति ताव ट्ठिदपरिणामपंतीसु पदेसग्गविणाससंखं पडि समाणपरिणामाणमवणयणं काऊण तत्थ तं पडि विसरिसपरिणामाणं चेव रचणा कायव्वा। संपहि पयडिगोवुच्छाए उवरि परमाणुत्तरादिकमेण अणंता परमाणू वड्ढावेदव्वा। एवं वड्ढाविय ट्ठिदेण अण्णेगो जहण्णसामित्तविहाणेणागंतूण पुणो अपुव्वकरणपढमसमयविदियपरिणामेण गुणसेढिं कादूण पुणो विदियसमयप्पहुडि सव्वजहण्णपरिणामेहि चेव गुणसेढिं करिय एगणिसेगमेगसमयकालं धरेदूण ट्ठिदो सरिसो।

§ २९०. एवमेदेण बीजपदेण जाणिदूण वड्ढावेदव्वं जाव अपुव्वगुणसेढिदव्व-मुक्कस्सं जादं ति। एवं वड्ढिदेण अण्णेगो खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण पुणो अपुव्वपढमसमयप्पहुडि जाव चरिमसमओ त्ति उक्कस्सपरिणामेहि चेव गुणसेढिं

द्वारा क जानेवाली गुणश्रेणिका द्रव्य समान ही है, क्योंकि ऐसा स्वभाव है। फिर इतना ही स्थान जाकर जो परिणाम स्थित है वह विशेष अधिक प्रदेशोंका कारण है। इस प्रकार उत्कृष्ट परिणामस्थानके प्राप्त होने तक ले जाना चाहिए।

§ २८९. अब यहां विशेष अधिक प्रदेशोंके कारणभूत परिणामस्थानोंको ही संग्रह कर तथा उन्हींके समान बाकीके सब परिणामस्थानोंको निकाल कर और इनका संग्रह करके ग्रहण किये गये इन सब परिणामोंका अपूर्वकरणके प्रथम समयमें परीपाटीसे रचना करने पर ये परिमाणविकल्प भी असंख्यात लोकप्रमाण होते हैं। इस प्रकार दूसरे समयसे अन्तिम समय तककी स्थापित की हुई परिणामोंकी पंक्तिमेंसे, विशेष अधिक प्रदेशोंके कारण भूत असंख्यात असमान परिणामोंकी रचना करनी चाहिये तथा इन्हींके समान परिणामोंको छोड़ देना चाहिये। अब प्रकृतिगोपुच्छाके ऊपर उत्तरोत्तर एक-एक परमाणुके क्रमसे अनन्त परमाणुओंको बढ़ाना चाहिये। इस प्रकार बढ़ा कर स्थित हुए जीवके समान अन्य एक जीव है जो जघन्य स्वामित्वकी विधिसे आकर फिर अपूर्वकरणके प्रथम समयवर्ती दूसरे परिणामके द्वारा गुणश्रेणि करके फिर दूसरे समयसे लेकर सबसे जघन्य परिणामोंके द्वारा ही गुणश्रेणि करके एक समय की स्थितिवाले एक निषेकको धारण करके स्थित है।

§ २९०. इस प्रकार इस बीज पदके अनुसार जानकर अपूर्वकरणकी गुणश्रेणिके द्रव्यके उत्कृष्ट होनेतक बढ़ाना चाहिए। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए इस जीवके समान अन्य एक जीव है जो क्षपितकर्मांशको विधिसे आकर फिर अपूर्वकरणके प्रथम समयसे लेकर अन्तिम सयय तक उत्कृष्ट परिणामोंके द्वारा ही गुणश्रेणिको करके एक समयकी स्थिति-

---

१. ता० प्रतौ 'गहिदपरिणायमपुव्व' इति पाठः।

काऊणेगणिसेगमेगसमयं कालं धरेदूण ट्ठिदो सरिसो। एवं वड्ढाविदे अपुव्वगुणसेढी चेव उक्कस्सा जादा, ण पयडि-विगिदिगोवुच्छाओ।

§ २९१. संपहि विगिदिगोवुच्छावड्ढावणकमो वुच्चदे। तं जहा—जहण्णसामित्तविहाणेणागदपयडिगोवुच्छाए उवरि दोहि वड्ढीहि अणंता परमाणू वड्ढावेदव्वा। एवं वड्ढिदेण अण्णेगो खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण चारित्तमोहक्खवणाए अब्भुट्ठिय पुणो उक्कस्सपरिणामेहि अपुव्वगुणसेढिं करिय पुणो अणियट्टिअद्धाए संखेज्जे भागे गंतूण पढमट्ठिदिखंडयं घादियमाणेण तेण ट्ठिदिखंडएण सह पव्वं वड्ढाविददव्वमेत्तं जहण्णविगिदिगोवुच्छाए उवरि पक्खिविय पुणो विदियादिखंडयाणि पुव्वविहाणेण घादिय एगणिसेगमेगसमयकालं धरिय ट्ठिदो सरिसो। एदेण कमेण विदियट्ठिदिखंडयप्पहुडि अधियदव्वं पक्खिविय पक्खिविय वड्ढावेदव्वं जाव दुचरिमखंडयं ति। एवं वड्ढाविदविगिदिगोवुच्छा वि उक्कस्सत्तमुगगया।

§ २९२. संपहि पयडिगोवुच्छा वड्ढाविज्जदे। तं जहा—जहण्णपयडिगोवुच्छा-परमाणुत्तरादिकमेण चत्तारि पुरिसे अस्सिदूण पंचहि वड्ढीहि वड्ढावेदव्वा जावुक्कस्सा जादा त्ति। विगिदिगोवुच्छाए उक्कस्सीए संतीए कथमेक्किस्से पयडिगोवुच्छाए चेव जहण्णत्तं? ण, सव्वट्ठिदिगोवुच्छासु उक्कस्सासु संतीसु वि एगगोवुच्छाए

वाले एक निषेकको धारण करके स्थित है। इस प्रकार बढ़ाने पर अपूर्वकरणकी गुणश्रेणि ही उत्कृष्ट होती है प्रकृतिगोपुच्छा और विकृतिगोपुच्छा नहीं।

§ २९१. अब विकृतिगोपुच्छाके बढ़ानेका क्रम कहते हैं जो इस प्रकार है—जघन्य स्वामित्वकी विधिसे आये हुए जीवके प्रकृतिगोपुच्छाके ऊपर दो वृद्धियोंके द्वारा अनन्त परमाणु बढ़ाना चाहिये। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके समान अन्य एक जीव है जो क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर चारित्रमोहनीयकी क्षपणाके लिए उद्यत हो फिर उत्कृष्ट परिणामोंके द्वारा अपूर्वकरणसम्बन्धी गुणश्रेणिको करके फिर अनिवृत्तिकरणके कालके संख्यात बहुभागको बिताकर, प्रथम स्थितिकाण्डकका घात करते हुए उस स्थितिकाण्डकके साथ पहले बढ़ाये गये द्रव्यप्रमाण द्रव्यको जघन्य विकृतिगोपुच्छाके ऊपर प्रक्षिप्त करके फिर पूर्व विधिके अनुसार दूसरे आदि काण्डकोंका घात करके एक समयकी स्थितिवाले एक निषेकको धारण करके स्थित है। इस क्रमसे दूसरे स्थितिकाण्डकसे लेकर अधिक द्रव्यको पुनः पुनः मिलाकर द्विचरम स्थितिकाण्डकके प्राप्त होने तक बढ़ाना चाहिए। इस प्रकार बढ़ाई गई विकृतिगोपुच्छा भी उत्कृष्टपनेको प्राप्त हो गई।

§ २९२. अब प्रकृतिगोपुच्छाको बढ़ाते हैं जो इस प्रकार है—जघन्य प्रकृतिगोपुच्छाको उत्तरोत्तर एक एक परमाणुके क्रमसे चार पुरुषोंकी अपेक्षा पांच वृद्धियोंके द्वारा उत्कृष्ट प्रकृतिगोपुच्छाके प्राप्त होने तक बढ़ाते जाना चाहिये।

शंका—विकृतिगोपुच्छाके उत्कृष्ट रहते हुए एकमात्र प्रकृतिगोपुच्छाको ही जघन्यपना कैसे प्राप्त हो सकता है?

समाधान—नहीं, क्योंकि सब स्थितियोंकी गोपुच्छाओंके उत्कृष्ट रहते हुए भी एक

ओकड्डणमस्सिदूण असंखेज्जगुणहीणत्तं पडि विरोहाभावादो। एवं वड्डिदूण ट्ठिदेण अण्णेगो गुणिदकम्मंसिओ ईसाणदेवेसु णवुंसयवेददव्वमुक्कस्सं करियागंतूण पुणो तिपलिदोवमिएसुववज्जिय सम्मत्तं घेत्तूण वेछावट्ठीओ भमिय मिच्छत्तं गंतूण पुव्वकोडीए उववज्जिय पुणो उक्कस्सअपुव्वपरिणामेहि गुणसेढिं करिय खवेदूण एगणिसेगमेगसमयकालं धरेदूण ट्ठिदो सरिसो। एवं वड्ढाविदे पयडि-विगिदिगोवुच्छाओ अपुव्वगुणसेढिगोवुच्छा च उक्कस्साओ जादाओ। पुणो एदेण अण्णेगो ईसाणदेवेसु णवुंसयवेदमुक्कस्सं करेमाणो तत्थ विज्झाददव्वसहिदएगगोवुच्छविसेसेणूणमुक्कस्सदव्वं करियागंतूण पुणो समऊणवेछावट्ठीओ भमिय णवुंसयवेदं खवेदूण एगणिसेगमेगसमयकालं धरेदूण ट्ठिदो सरिसो। एवं संधीओ जाणिय खविदकम्मंसियम्मि भणिदविहाणेण ओदारेदव्वं जाव अंतोमुहुत्तब्भहियअट्ठवस्साणि त्ति। एवं खविद-गुणिदकम्मंसिए अस्सिदूण णवुंसयवेदस्स एगफद्दयपरूवणा कदा।

§ २९३. संपहि एत्थ णवुंसयवेदम्मि समयूणावलियमेत्तफद्दयाणि णत्थि, दुचरिमसमयसवेदम्मि चरिमफालीए उवलंभादो। तिण्हं वेदाणं दुचरिमसमयसवेदे चरिमफालीओ अत्थि त्ति कुदो णव्वदे? उवरि भण्णमाणखवणचुण्णिसुत्तादो।

❀ एदमेगं फद्दयं।

गोपुच्छा अपकर्षणकी अपेक्षा असंख्यातगुणी हीन होती है इसमें कोई विरोध नहीं है।

इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए एक जीवके समान अन्य एक जीव है गुणितकर्मांशवाला जो जीव ईशानस्वर्गके देवोंमें नपुंसक वेदको उत्कृष्ट करके आया फिर तीन पल्यकी आयुवालोंमें उत्पन्न होकर अन्तमें सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ फिर दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण कर मिथ्यात्वमें गया और एक पूर्वकोटिकी आयुके साथ उत्पन्न हुआ। फिर अपूर्वकरणके उत्कृष्ट परिणामोंके द्वारा गुणश्रेणिको करके क्षय करता हुआ एक समयकी स्थितिवाले एक निषेकको धारण कर स्थित है। इस प्रकार बढ़ाने पर प्रकृतिगोपुच्छा, विकृतिगोपुच्छा और अपूर्वकरणकी गुणश्रेणिगोपुच्छा उत्कृष्टपनेको प्राप्त होती हैं। फिर इस जीवके समान एक अन्य जीव है जो ईशान स्वर्गके देवोंमें नपुंसकवेदको उत्कृष्ट करता हुआ वहाँ विध्यातके द्रव्यके साथ एक गोपुच्छा विशेषसे कम उत्कृष्ट द्रव्यको प्राप्त हो आया और एक समय कम दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण कर नपुंसकवेदका क्षय करता हुआ एक समयकी स्थितिवाले एक निषेकको धारण कर स्थित है। इस प्रकार सन्धियोंको जानकर क्षपितकर्मांशिकको अन्तर्मुहूर्त अधिक आठ वर्ष तक उतारते जाना चाहिये। इस प्रकार क्षपितकर्मांश और गुणितकर्मांशकी अपेक्षा नपुंसक वेदके एक स्पर्धकका कथन किया।

§ २९३. अब यहां नपुंसकवेदमें एक समयकम आवलिप्रमाण स्पर्धक नहीं हैं, क्योंकि सवेद भागके द्विचरम समयमें अन्तिम फालि पाई जाती है।

शंका—तीनों वेदोंके सवेद भागके द्विचरम समयमें चरम फालियां रहती हैं यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

समाधान—आगे कहे जानेवाले क्षपणाविषयक चूर्णिसूत्रसे जाना जाता है।

❀ यह सब मिलकर एक स्पर्धक होता है।

§ २९४ किंफलमेदं सुत्तं ? समयूणावलियमेत्तफद्दयपडिसेहफलं । उवरि भण्णमाणखवणसुत्तादो चेव दुचरिमसमयसवेदम्मि चरिमफाली अत्थि त्ति णव्वदे। तेण तत्तो चेव समयूणावलियमेत्तफद्दयाणं अभावो सिज्झदि त्ति णाढवेदव्वमिदं सुत्तं ? ण, अंतरिदसुत्तेसु एत्थाणिय भण्णमाणेसु सिस्साणं मदिवामोहो होदि त्ति तप्पडिसेहट्ठमेदस्स पवुत्तीदो।

❀ **अपच्छिमस्स ट्ठिदिखंडयस्स चरिमसमयजहण्णपदममादिं कादूण जाव उक्कस्सपदेससंतकम्मं णिरंतराणि ट्ठाणाणि ।**

§ २९५. दुचरिमादिट्ठिदिखंडयपडिसेहफलो अपच्छिमस्स ट्ठिदिखंडयस्से त्ति णिद्देसो। दुचरिमादिफालीणं पडिसेहफलो चरिमसमयणिद्देसो। गुणिदचरिमफालि-पडिसेहफलो जहण्णपदणिद्देसो। एदं जहण्णपदमादिं कादूण जाव तस्सेव उक्कस्सपदेससंतकम्मं ति णिरंतराणि पदेससंतकम्मट्ठाणाणि होंति, विरहकारणाभावादो। संपहि खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण तिपलिदोवमिएसुववज्जिय वेछावट्ठीए अंतोमुहुत्तावसेसाए मिच्छत्तं गंतूण पुव्वकोडीए उववज्जिय णवुंसयवेदोदएण चारित्त-मोहक्खवणाए अब्भुट्ठिय णवुंसयवेदचरिमफालिं धरेदूण ट्ठिदं गेण्हिय ट्ठाणपरूवणं

---

§ २९४ **शंका**—इस सूत्रका क्या कार्य है ?

समाधान—एक समय कम आवलिप्रमाण स्पर्धकोंका निषेध करना इस सूत्रका कार्य है।

शंका—आगे कहे जानेवाले क्षपणाविषयक सूत्रसे ही सवेदभागके द्विचरम समयमें अन्तिम फालि पाई जाती है यह बात जानी जाती है, इसलिए उसी सूत्रसे ही एक समय कम आवलिप्रमाण स्पर्धकोंका अभाव सिद्ध होता है अतएव इस सूत्रके आरम्भ करनेकी कोई आवश्यकता नहीं रहती ?

समाधान—नहीं, क्योंकि वह सूत्र बहुत अन्तरके बाद आया है। अब यदि उसे यहाँ लाकर कहा जाता है तो शिष्योंको मतिव्यामोह होना सम्भव है, इसलिये उसके प्रतिषेधके लिए अर्थात् एक समय कम आवलिप्रमाण स्पर्धकोंके निषेधके लिए इस सूत्रकी प्रवृत्ति हुई है यह सिद्ध होता है।

❀ **अन्तिम स्थितिकाण्डकके अन्तिम सययवर्ती जघन्य द्रव्यसे लेकर उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मके प्राप्त होने तक निरन्तर स्थान होते हैं।**

§ २९५. 'अन्तिम स्थितिकाण्डकके' इस पद द्वारा द्विचरम आदि स्थितिकाण्डकोंका निषेध किया है। द्विचरम आदि फालियोंका निषेध करनेके लिए 'अन्तिम समय' यह पद दिया है। गुणितकर्मांशकी अन्तिम फालिका निषेध करने के लिए 'जघन्य' पदका निर्देश किया है। इस जघन्य द्रव्यसे लेकर उसीके उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मके प्राप्त होने तक निरन्तर प्रदेशसत्कर्म स्थान होते हैं, क्योंकि कोई विरहका कारण नहीं पाया जाता। अब कोई एक जीव क्षपितकर्मांशकी विधिसे आया, तीन पल्यकी आयुवालोंमें उत्पन्न हुआ, अनन्तर दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण करता रहा। अनन्तर अन्तर्मुहूर्त शेष रह जाने पर मिथ्यात्वमें जाकर नपुंसकवेदके उदयके साथ एक पूर्वकोटिकी आयुवालोंमें उत्पन्न हुआ। फिर चारित्रमोहनीयकी क्षपणाके लिए उद्यत हो नपुंसकवेदकी अन्तिम फालिको धारण करके

कस्सामो। विदियछावट्ठीए मिच्छत्तमगंतूण पुव्वकोडीए उववज्जिय पुरिसवेदोदएण खवगसेढिं चडिदस्स णवुंसयवेदचरिमफालिदव्वं जहण्णं होदि। वेछावट्ठिसागरोवम-कालसंचिदपुरिसवेददव्वे दिवड्ढगुणहाणिमेत्ते समयपबद्धे अधापवत्तभागहारेण खंडिदे तत्थ एगखंडमेत्तदव्वस्स णवुंसयवेदम्मि अभावादो। तेणिमं चरिमफालिं घेत्तूण ट्ठाणवरूवणा किण्ण[1] कीरदे ? ण, वयाणुसारी चेव आओ होदि त्ति पुव्वं दत्तुत्तरत्तादो। वेछावट्ठिकालब्भंतरे गलिदसेसणवुंसयवेददव्वादो जदि वि अधापवत्तभागहारेण खंडिदेगखंडमेत्तं पुरिसवेददव्वमसंखेज्जगुणं होदि तो वि ण तत्थ दोसो, एगणिसेगट्ठिदजहण्णदव्वग्गहणादो त्ति ? ण, पयडि-विगिदिगोवुच्छाणं पुव्विल्लपयडि-विगिदिगोवुच्छाहिंतो असंखेज्जगुणत्तप्पसंगादो। ओकड्डणाए जदि वि पयडिगोवुच्छदव्वं जहण्णभावेण चेव चेट्ठदि तो वि विगिदिगोवुच्छादव्वेण असंखेज्जगुणेण होदव्वं। दुचरिमादिट्ठिदिखंडएसु ट्ठिददव्वे चरिमफालिसरूवेण विहंजिदूण पदिदे तस्स जहण्णभावेणावट्ठाणविरोहादो। तम्हा वयाणुसारी चेव एत्थ आओ त्ति दट्ठव्वं, अण्णहा वेछावट्ठिकालपरियट्टणस्स विहलत्तप्पसंगादो। जदि किह वि

स्थित हुआ। इस प्रकार स्थित हुए इस जीवकी अपेक्षा स्थानोंका कथन करते हैं—

शंका—दूसरे छयासठ सागरके अन्तमें मिथ्यात्वको प्राप्त हुए बिना पूर्वकोटिक आयुवालोंमें उत्पन्न होकर पुरुषवेदके उदयसे क्षपकश्रेणि पर चढ़नेवाले जीवके नपुंसक वेदकी अन्तिम फालिका द्रव्य जघन्य होता है, क्योंकि दो छयासठ सागर कालके द्वारा संचित हुए डेढ़ गुणहानिसे गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण पुरुषवेदके द्रव्यमें अधःप्रवृत्तभागहारका भाग देनेपर वहां जो एक भाग द्रव्य प्राप्त होता है उतना द्रव्य नपुंसकवेदमें नहीं गया। इसलिये इस अन्तिम फालिकी अपेक्षा स्थानोंका कथन क्यों नहीं किया जाता ?

समाधान—नहीं, क्योंकि व्ययके अनुसार ही आय होती है यह उत्तर पहले दिया जा चुका है।

शंका—यद्यपि दो छयासठ सागर कालके भीतर गलकर शेष बचे नपुंसकवेदके द्रव्यसे अधःप्रवृत्त भागहारके द्वारा खण्ड करके प्राप्त हुआ एक खण्डप्रमाण पुरुषवेदका द्रव्य असंख्यातगुणा है तो भी वहाँ कोई दोष नहीं है, क्योंकि जघन्य द्रव्यके प्रकरणमें एक निषेकमें स्थित जघन्य द्रव्यका ग्रहण किया है, इसलिये व्ययके अनुसार ही आय होती है इस नियमकी कोई आवश्यकता नहीं रहती।

समाधान—नहीं, क्योंकि इसप्रकार प्रकृतिगोपुच्छा और विकृतिगोपुच्छाको पूर्वोक्त प्रकृतिगोपुच्छा और विकृतिगोपुच्छासे असंख्यातगुणी होनेका प्रसंग प्राप्त होता है। अपकर्षणके द्वारा यद्यपि प्रकृतिगोपुच्छाका द्रव्य जघन्यरूपसे ही रहता है तो भी विकृतिगोपुच्छाका द्रव्य असंख्यातगुणा होना चाहिये, क्योंकि द्विचरम आदि स्थितिकाण्डकोंमें स्थित हुए द्रव्य के अन्तिम फालिरूपसे विभक्त होकर पतित होने पर विकृतिगोपुच्छाका जघन्यरूपसे अवस्थान होनेमें विरोध आता है, इसलिये यहां व्ययके अनुसार ही आय है यह जानना चाहिये, अन्यथा दो छयासठ सागर कालतक परिभ्रमणकी विफलता प्राप्त होती है।

1. आ॰प्रतौ 'ट्ठाणपरूवणाणि किण्ण' इति पाठः।

वयादो आओ बहुओ होदि तो पुरिसवेदोदएण खवगसेढिं चढिय णवुंसयवेदक्खवणपदेसादो उवरिमअद्धाए गुणसंकमेण णवुंसयवेदादो पुरिसवेदं गच्छमाणदव्वस्स असंखे०भागो चेव अहिओ होदि, ण तत्तो बहुओ त्ति णिच्छओ कायव्वो। कुदो एवं परिच्छिज्जदे ? सोदएण सामित्तविहाणण्णहाणुववत्तीदो। किं च जदि सुत्तुद्दिट्ठक्खविदकम्मंसियस्स अपच्छिमट्ठिदिखंडयचरिमफालीए जहण्णपदं ण होदि तो तिस्से जहण्णपदसामियस्स पुध परूवणं करेज्ज, अण्णहा तज्जहण्णावगमोवाया-भावादो। ण च पुध परूवणं कदं, तम्हा सुत्तुत्तखविदकम्मंसियस्सेव अपच्छिमट्ठिदिखंडय-चरिमसमए चरिमफालीए जहण्णपदं ति घेत्तव्वं।

§ २९६. संपहि एदिस्से चरिमफालीए उवरि परमाणुत्तरादिकमेण एगगोवुच्छा विज्झादेण गच्छमाणदव्वं च वड्ढावेयव्वं। एवं वड्ढिदेण अण्णेगो खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण समऊणवेछावट्ठीओ भमिय णवुंसयवेदचरिमफालिं धरेमाणट्ठिदो सरिसो। एवमेगेगगोवुच्छं ससंकंतदव्वं वड्ढाविय वड्ढाविय वेछावट्ठीओ ओदारेदव्वाओ जाव पढमछावट्ठीए दिवड्ढपलिदोवमं सेसं ति। संपहि इमं संधिं तिण्णि पलिदोवमसव्वसंधीओ च णादूण जहा खविदकम्मंसियस्स एगफद्दयपरूवणाए परूविदं

यद्यपि किसी प्रकारसे व्ययसे आय बहुत होती है तो भी पुरुषवेदके उदयसे क्षपकश्रेणि पर चढ़कर नपुंसकवेदके क्षय होनेवाले द्रव्यसे आगेके कालमें गुणसंक्रमके द्वारा नपुंसकवेदमेंसे पुरुषवेदको प्राप्त होनेवाला द्रव्य असंख्यातवां भाग ही अधिक होता है उससे अधिक नहीं होता, इसलिये पुरुषवेदके उदयसे चढ़नेवालेकी अपेक्षा नपुंसकवेदसे चढ़नेवालेका द्रव्य अधिक नहीं होता यहाँ ऐसा निश्चय करना चाहिये।

शंका—इसप्रकार किस प्रमाणसे जाना ?

समाधान—अन्यथा स्वोदयसे स्वामित्वका कथन नहीं बन सकता। दूसरे यदि सूत्रमें कहे गये क्षपितकर्मांशके अन्तिम स्थितिकाण्डककी अन्तिम फालिमें जघन्य पद नहीं होता है तो उसके जघन्य पदके स्वामीका अलगसे कथन करते, अन्यथा उसके जघन्यका ज्ञान होने का अन्य कोई उपाय नहीं है। परन्तु अलगसे कथन नहीं किया है अतएव सूत्रमें कहे गये क्षपितकर्मांशिक जीवके ही अन्तिम स्थितिकाण्डकके अन्तिम समयमें प्राप्त अन्तिम फालिमें जघन्य पद होता है ऐसा ग्रहण करना चाहिए।

§ २९६. अब इस अन्तिम फालिके ऊपर उत्तरोत्तर एक एक परमाणुके क्रमसे एक गोपुच्छाको और विध्यातभागहारके द्वारा पर प्रकृतिको प्राप्त होनेवाले द्रव्यको बढ़ाना चाहिये। इसप्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके समान अन्य एक जीव है जो क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर और एक समय कम दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण कर नपुंसकवेदकी अन्तिम फालिको धारण कर स्थित है। इस प्रकार संक्रान्त होनेवाले द्रव्यके साथ एक एक गोपुच्छाको बढ़ाते हुए दो छयासठ सागर कालको तब तक उतारना चाहिए जब उतारते उतारते प्रथम छयासठ सागरमें डेढ़ पल्य शेष रह जाय। अब इस सन्धिको और तीन पल्यकी सब सन्धियोंको जानकर जिस प्रकार क्षपितकर्मांशके एक स्पर्धकके कथनके समय प्रतिपादन

तहा परूवेदव्वं । एवमोदारेदव्वं जाव अंतोमुहुत्तब्भहियअट्ठवस्समेत्तमोदरिदूण ट्ठिदो त्ति ।

§ २९७. संपहि एदं चरिमफालिदव्वं चत्तारि पुरिसे अस्सिदूण परमाणुत्तरकमेण पंचहि वड्ढीहि वड्ढावेदव्वं जाव गुणिदकम्मंसिएण ईसाणदेवेसु णवुंसयवेदस्स कदउक्कस्सदव्वेण मणुसेसुववज्जिय सव्वलहुओ जोणिणिक्खमणजम्मणेण[1] अंतोमुहुत्तब्भहियअट्ठवस्साणि गमिय सम्मत्तं संजमं च जुगवं घेत्तूण अणंताणुबंधिचउक्कं विसंजोइय चारित्तमोहणीयं खवेदूण णवुंसयवेदचरिमफालिं धरिय ट्ठिदेण सरिसं जादं ति । एवं वड्ढिददव्वमीसाणदेवेसु संधिय पुणो परमाणुत्तरकमेण दोहि वड्ढीहि वड्ढावेदव्वं जाव णवुंसयवेदस्स ओघुक्कस्सदव्वं पत्तं ति । एवं खविदकम्मंसियकालपरिहाणीए चरिमफालिं पडुच्च ट्ठाणपरूवणा कदा ।

§ २९८. संपहि गुणिदकम्मंसियमस्सिदूण ट्ठाणपरूवणं कस्सामो । तं जहा—खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण तिसु पलिदोवमेसुववज्जिय वेछावट्ठीओ भमिय अंतोमुहुत्तावसेसे मिच्छत्तं गंतूण पुव्वकोडीए उववज्जिय पुणो णवुंसयवेदोदएण चारित्तमोहक्खवणाए अब्भुट्ठिय णवुंसयवेदचरिमफालिं धरेदूण ट्ठिदस्स णवुंसयवेददव्वं चत्तारि पुरिसे अस्सिदूण परमाणुत्तरकमेण पंचहि वड्ढीहि वड्ढावेदव्वं जाव

किया उसी प्रकार प्रतिपादन करना चाहिए । इस प्रकार अन्तर्मुहूर्त अधिक आठ वर्ष तक उतार कर स्थित हुए जीवके प्राप्त होने तक उतारना चाहिये ।

§ २९७. अब इस अन्तिम फालिके द्रव्यको चार पुरुषोंकी अपेक्षा उत्तरोत्तर एक एक परमाणुके क्रमसे पांच वृद्धियोंके द्वारा तब तक बढ़ाना चाहिये जब जाकर यह द्रव्य जिस गुणितकर्मांशने ईशान स्वर्गके देवोंमें नपुंसकवेदके द्रव्यको उत्कृष्ट किया है फिर जो मनुष्योंमें उत्पन्न होकर अतिशीघ्र योनिसे निकलनेरूप जन्मके द्वारा अन्तर्मुहूर्त अधिक आठ वर्ष बिताकर फिर सम्यक्त्व और संयमको एक साथ ग्रहण करके फिर अनन्तानुबन्धी चारकी विसंयोजना कर और चारित्रमोहनीयकी क्षपणा कर नपुंसकवेदकी अन्तिम फालिको धारण कर स्थित है उसके द्रव्यके समान हो जावे । इस प्रकार बढ़े हुए द्रव्यकी ईशानस्वर्गके देवोंमें संधि करे फिर उत्तरोत्तर एक एक परमाणुके क्रमसे दो वृद्धियोंके द्वारा नपुंसकवेदके ओघ उत्कृष्ट द्रव्यके प्राप्त होने तक बढ़ाता जाय । इस प्रकार क्षपितकर्मांशके कालकी हानि द्वारा अन्तिम फालिकी अपेक्षा स्थानोंका कथन किया ।

§ २९८. अब गुणितकर्मांशकी अपेक्षा स्थानोंका कथन करते हैं जो इस प्रकार है—क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर तीन पल्यकी आयुवालोंमें उत्पन्न हो अनन्तर दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण कर अन्तर्मुहूर्त कालके शेष रहने पर मिथ्यात्वमें जाकर अनन्तर पूर्वकोटि की आयुवालोंमें उत्पन्न हो फिर नपुंसकवेदके उदयसे चारित्रमोहनीयकी क्षपणाके लिए उद्यत हो जो नपुंसकवेदकी अन्तिम फालिको धारण कर स्थित है उसके नपुंसकवेदके इस द्रव्यको चार पुरुषोंकी अपेक्षा उत्तरोत्तर एक एक परमाणुके क्रमसे पांच वृद्धियों द्वारा

---

१. आ०प्रतौ 'जोणिणिक्कमणजम्मणेण' इति पाठः ।

गुणिदकम्मंसियचरिमफालीए सह सरिसं जादं ति। पुणो एवं वड्ढिदूण ट्ठिदेण अण्णेगो गुणिककम्मंसिओ ईसाणदेवेसु णवुंसयवेदमुक्कस्सं करेमाणो सादिरेगेग-गोवुच्छाए ऊणमुक्कस्सदव्वं करियागंतूण तिरिक्खेसुववज्जिय दाणेण दाणाणुमोदेण वा तिपलिदोवमिएसुववण्णो कथं तिरिक्खाणं दाणाणुमोदं मोत्तूण दाणसंभवो ? ण, दादुमिच्छाए तत्थ वि संभवं पडि विरोहाभावादो। अत्रोपयोगी श्लोक :—

सदा संप्रतीक्ष्यातिथीनन्नकाले नरो वल्भते चेदलाभेऽपि तेषाम्।
भवेत्स प्रदानाप्रदानं हि सन्तः प्रदाने प्रयत्नं नृणामामनंति॥ ५॥

§ २९९. पुणो समऊणवेछावट्ठीओ भमिय मिच्छत्तं गंतूण पुव्वकोडीए उववज्जिय संजमं सम्मत्तं च जुगवं घेत्तूण चारित्तमोहणीयं खवेदूण चरिमफालिं धरेदूण ट्ठिदो सरिसो। संपहि इमेणप्पणो ऊणिददव्वं परमाणुत्तरादिकमेण वड्ढावेदव्वं। एवं वड्ढिदूण ट्ठिदेण अण्णेगो ईसाणदेवेसु उक्कस्सदव्वं करेमाणो सादिरेगगोवुच्छाए ऊणं करियागंतूण तिसु पलिदोवमेसुववज्जिय विसमयूणवेछावट्ठीओ भमिय चारित्तमोहणीयं खविय चरिमफालिं धरेदूण ट्ठिदो सरिसो। एवं खविदकम्मंसियस्स भणिदविहाणेण ओदारिय गेण्हिदव्वं।

गुणितकर्मांशकी अन्तिम फालिके द्रव्यके समान द्रव्यके प्राप्त होने तक बढ़ाना चाहिये। फिर इस प्रकार बढ़ा कर स्थित हुए इस जीवके समान अन्य एक जीव है गुणितकर्मांशकी विधिसे आकर जो ईशानस्वर्गके देवोंमें नपुंसकवेदके द्रव्यको उत्कृष्ट कर रहा है और जो उत्कृष्ट द्रव्यको समधिक एक एक गोपुच्छा न्यून करके आया फिर तिर्यंचोंमें उत्पन्न होकर दानसे या दानकी अनुमोदनासे तीन पल्यकी आयुवालोंमें उत्पन्न हुआ।

शंका—तिर्यंचोंके दानकी अनुमोदनाके सिवा दान देना कैसे सम्भव है ?

समधान—नहीं, क्योंकि देनेकी इच्छा होने पर वहां भी दान देनेकी सम्भावना मान लेनेमें कोई विरोध नहीं है। इस विषयमें यह श्लोक उपयोगी है—

अतिथिलाभ सम्भव न होने पर भी यदि मनुष्य भोजनके समय सदा अतिथियोंकी प्रतीक्षा करके ही भोजन करता है तो भी वह दाता है, क्योंकि सन्त पुरुषोंने दान देनेके लिये किये गये मनुष्योंके प्रयत्नको ही सच्चा दान माना है॥५॥

§ २९९. फिर जो एक समय कम दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण कर मिथ्यात्वमें गया। अनन्तर पूर्वकोटिकी आयुके साथ उत्पन्न होकर सम्यक्त्व और संयमको एकसाथ प्राप्त हुआ अनन्तर जो चारित्रमोहनीयकी क्षपणा कर अन्तिम फालिको धारण कर स्थित है। अब इसके अपने कमती द्रव्यको उत्तरोत्तर एक एक परमाणुके क्रमसे बढ़ाना चाहिये। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए इस जीवके समान अन्य एक जीव है जो ईशानस्वर्गके देवोंमें द्रव्यको उत्कृष्ट करता हुआ साधिक गोपुच्छासे न्यून करके आया और तीन पल्यकी आयुवालोंमें उत्पन्न होकर फिर दो समय कम दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण करता रहा। अनन्तर जो चारित्रमोहनीयकी क्षपणा करके अन्तिम फालिको धारण करके स्थित है। इस प्रकार क्षपितकर्मांशकी कही गई विधिके अनुसार उतार कर ग्रहण करना चाहिये।

§ ३००. संपहि संतकम्ममस्सिदूण ट्ठाणपरूवणं कस्सामो । तं जहा—खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण तिपलिदोवमिएसुप्पज्जिय पुणो बेछावट्ठीओ भमिय मिच्छत्तं गंतूण पुव्वकोडाउअमणुस्सेसुववज्जिय दंसणमोहणीयं खविय चारित्तमोहक्खवणाए अब्भुट्ठिय णवुंसयवेदचरिमफालिं धरेदूण[1] ट्ठिदम्मि जहण्णदव्वं होदि । संपहि एत्थ जहण्णदव्वे दुचरिमगुणसेढिगोवुच्छागुणसंकमेण गददुचरिमफालिदव्वं च परमाणुत्तरकमेण वड्ढावेदव्वं । एवं वड्ढिदूण ट्ठिदेण अण्णेगो दुचरिमफालिं धरेदूण ट्ठिदो सरिसो । एवमोदारेदव्वं जाव चरिमट्ठिदिखंडयं धरेदूण ट्ठिदो त्ति ।

३०१. पुणो उदयगदगुणसेढिगोवुच्छा गुणसंकमेण गददव्वं च वड्ढावेदव्वं । एवं वड्ढिदूण ट्ठिदेण अण्णेगो दुचरिमखंडयचरिमफालिं धरेदूण ट्ठिदो सरिसो । एवमोदारेदव्वं जाव अंतरचरिमफालिगदसमओ आवलियं अपत्तो[2] त्ति । पुणो तत्थ ट्ठविय परमाणुत्तरकमेण वड्ढावेदव्व जाव गुणसंकमेण गददव्वमेत्तं तिण्हं वेदाणं णवुंसयवेदसरूवेण उदयमागंतूण गदगुणसेढिगोवुच्छदव्वं च वड्ढिदं ति । एवं वड्ढिदूण ट्ठिदो अण्णेगो तदणंतरहेट्ठिमसमए ट्ठिदो च सरिसो । एत्तो हेट्ठा हेट्ठिमतिण्णिगुणसेढिगोवुच्छसहिदगुणसंकमदव्वम्मि उवरिमा दोगुणसेढिगोवुच्छाओ

---

§ ३००. अब सत्कर्मकी अपेक्षा स्थानोंका कथन करते हैं जो इस प्रकार है—क्षपितकर्मांशकी विधिसे आया और तीन पल्यकी आयुवालोंमें उत्पन्न हुआ । फिर दो छयासठ सागर कालतक भ्रमण कर मिथ्यात्वमें गया । अनन्तर पूर्वकोटिकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न होकर दर्शनमोहनीयकी क्षपणा कर अनन्तर जो चारित्रमोहनीयकी क्षपणाके लिये उद्यत हो नपुंसकवेदकी अन्तिम फालिको धारण करके स्थित है उसके नपुंसकवेदका जघन्य द्रव्य होता है । अब यहां जघन्य द्रव्यमें उपान्त्य गुणश्रेणिकी गोपुच्छा और गुणसंक्रमके द्वारा पर प्रकृतिको प्राप्त हुई उपान्त्य फालिके द्रव्यको उत्तरोत्तर एक एक परमाणुके क्रमसे बढ़ाना चाहिये । इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए इस जीवके समान एक अन्य जीव है जो द्विचरम फालिको धारण कर स्थित है । इस प्रकार अन्तिम स्थितिकाण्डकको धारण कर स्थित हुए जीवके प्राप्त होने तक उतारते जाना चाहिये ।

§ ३०१. अनन्तर उदयको प्राप्त हुई गुणश्रेणिकी गोपुच्छाको और गुणसंक्रमणके द्वारा पर प्रकृतिको प्राप्त हुए द्रव्यको बढ़ाना चाहिये । इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए इस जीवके समान एक अन्य जीव है जो द्विचरम स्थितिकाण्डककी अन्तिम फालिको धारण कर स्थित है । इस प्रकार अन्तरकरणकी अन्तिम फालिके समयसे एक आवलि पहले तक उतारते जाना चाहिये । फिर वहां ठहरा कर गुणसंक्रमके द्वारा जितना द्रव्य अन्य प्रकृतिको प्राप्त हो उसको, नपुंसकवेदरूपसे उदयमें आये हुए तीनों वेदोंके द्रव्यको और गुणश्रेणि गोच्पुछाके द्रव्यको बढ़ाना चाहिये । इस प्रकार बढ़ा कर स्थित हुए इस जीवके समान एक अन्य जीव है जो उससे अनन्तरवर्ती नीचेके समयमें स्थित है । अब इससे नीचे तीन गुणश्रेणिगोपुच्छाओंके साथ गुणसंक्रमके द्रव्यमेंसे ऊपरकी दो गुणश्रेणिकी गोपुच्छाओंको घटाने पर जो द्रव्य शेष

---

1. ता०प्रतौ 'चरिमफालीए धरेदूण' इति पाठः । 2. आ०प्रतौ 'आवलिय अपत्तो' इति पाठः ।

सोहिय सुद्धसेसं वड्ढावेदूण ओदारेदव्वं जाव आवलियअपुव्वकरणो त्ति। पुणो तत्तो हेट्ठा ओदारिज्जमाणे दोगोवुच्छविसेससहिदगुणसेढिगोवुच्छं गुणसंकमदव्वं च वड्ढावेदव्वं। एवमोदारेदव्वं जाव अधापवत्तकरणचरिमसमओ त्ति।

§ ३०२. संपहि एदं दव्वं परमाणुत्तरकमेण वड्ढावेदव्वं जाव तम्मि गदविज्झादसंकमदव्वमेत्तं उदयगदगुणसेढिगोवच्छदव्वं दोगोवुच्छविसेससहिदं वड्ढिदं ति। एवं वड्ढिदूण ट्ठिदेण अण्णेगो दुचरिमसमयअधापवत्तो सरिसो। एवमोदारेदव्वं जाव आवलियसंजदो त्ति। पुणो तत्थ विज्झादसंकमेण गददव्वं दोगोवुच्छविसेसाहियगोवुच्छदव्वं च वड्ढावेदव्वं। एवं वड्ढाविदूण ओदारेदव्वं जाव मिच्छादिट्ठिचरिमसमओ त्ति। तत्तो हेट्ठा ओदारेदुं ण सक्किज्जदे[1], उदयविसेसं पेक्खिदूण णवकबंधदव्वस्स असंखे०गुणत्तादो। सव्वमेदं थूलकमेण परूविदं।

§ ३०३ सुहुमदिट्ठीए[2] पुण णिहालिज्जमाणे एयंताणुवड्ढिसंजदचरिमगुणसेढिसीसयप्पहुडि हेट्ठा सव्वत्थेवमोदारेदुं ण सक्कदे, हेट्ठिल्लदव्वं पेक्खिदूण उवरिमसमयट्ठियणवुंसयवेददव्वस्स बहुत्तुवलंभादो। तं पि कुदो? हेट्ठिमथिवुक्कगुणसेढिगोवुच्छलाभादो उवरिमतल्लाभस्स असंखेज्जगुणत्तदंसणादो। ण च

रहे उसे बढ़ाकर अपूर्वकरणकी एक आवलि काल तक उतारते जाना चाहिये। फिर इससे नीचे उतारने पर दो गोपुच्छाविशेषोंके साथ गुणश्रेणिकी गोपुच्छाको और गुणसंक्रमके द्रव्यको बढ़ाना चाहिये और इस प्रकार अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयके प्राप्त होने तक उतारते जाना चाहिये।

§ ३०२. अब इस द्रव्यको उत्तरोत्तर एक एक परमाणुके क्रमसे तब तक बढ़ाना चाहिये जब जाकर इसी समय विध्यातसंक्रमणके द्वारा जितना द्रव्य अन्य प्रकृतिको प्राप्त हो उतना द्रव्य तथा दो गोपुच्छविशेषोंके साथ उदयको प्राप्त हुआ गुणश्रेणिगोपुच्छाका द्रव्य बढ़ जाय। इसप्रकार बढ़ाकर स्थित हुए इस जीवके समान एक अन्य जीव है जो अधःप्रवृत्तकरणके उपान्त्य समयमें स्थित है। इस प्रकार संयतके एक आवलि काल तक उतारते जाना चाहिये। फिर वहां विध्यातसंक्रमणके द्वारा पर प्रकृतिको प्राप्त हुए द्रव्यको और दो गोपुच्छाविशेषोंके साथ गोपुच्छाके द्रव्यको बढ़ाना चाहिये। इस प्रकार बढ़ाकर मिथ्यादृष्टिके अन्तिम समय तक उतारना चाहिये। अब इससे और नीचे उतारना शक्य नहीं है, क्योंकि उदयविशेषकी अपेक्षा नवकबन्धका द्रव्य असंख्यातगुणा है। यह सब स्थूल क्रमसे कहा है।

§ ३०३. सूक्ष्मदृष्टिसे विचार करने पर एकान्तानुवृद्धिसंयतकी अन्तिम गुणश्रेणिके शीर्षसे लेकर नीचे सर्वत्र इस प्रकार उतारना शक्य नहीं है, क्योंकि नीचेके द्रव्यकी अपेक्षा ऊपरके समयमें स्थित नपुंसकवेदका द्रव्य बहुत पाया जाता है।

शंका— ऐसा क्यों होता है।

समाधान—क्योंकि नीचे स्तिवुकसंक्रमणके द्वारा जो गुणश्रेणि गोपुच्छाका लाभ होता है उससे ऊपर स्तिवुक संक्रमणके द्वारा प्राप्त होनेवाली गुणश्रेणि गोपुच्छाका लाभ

---

१. आ०प्रतौ 'सक्किदे' इति पाठः। २. ता०प्रतौ 'सुहुमद्दिदोए' इति पाठः।

हेट्ठिमं वड्ढाविय उवरिमेण संधाणं जुज्जंतयं, संतकम्मोदारणे तहाविहपइज्जाभावादो। तेणेदं मोत्तूण चरिमसमयअसंजदसम्मादिट्ठिसंतं घेत्तूण संतकम्मट्ठाणाणं परूवणं कस्सामो। तं जहा—चरिमसमयअसंजदसम्मादिट्ठिसंतम्मि एगगोवुच्छा सादिरेगा वड्ढावेदव्वा। एवं वड्ढिदूण ट्ठिदेण अण्णेगो दुचरिमसमयअसंजदसम्मादिट्ठी सरिसो। एवमोदारेदव्वं जाव वेछावट्ठीओ तिण्णि पलिदोवमाणि च ओदरिय छपज्जत्तीहि पज्जत्तयदपढमसमओ त्ति।

§ ३०४. संपहि एत्तो हेट्ठा ओदारेदुं ण सक्कदे, थिवुक्कस्स गोवुच्छं पेक्खिदूण णवकबंधस्स असंखेज्जगुणत्तुवलंभादो। तेणेदं परमाणुत्तरकमेण[1] चत्तारि पुरिसे अस्सिदूण पंचहि वड्ढीहि वड्ढावेदव्वं जाव गुणिदकम्मेण ईसाणदेवेसु णवुंसयवेदमावूरिय पुणो तिरिक्खेसु उप्पज्जिय तत्थ अंतोमुहुत्तं जीविदूण दाणेण दाणाणुमोदेण वा कुरवाउअं बंधिदूण छप्पज्जत्तीओ समाणेदूण ट्ठिदपढमसमओ त्ति। संपहि इमेण सरिसमीसाणदेवचरिमसमयदव्वं घेत्तूण परमाणुत्तरकमेण दोहि वड्ढीहि वड्ढावेदव्वं जावप्पणो ओघुक्कस्सदव्वं पत्तं ति। संपहि गुणिदस्स वि एदेणेव कमेण संतमस्सिदूण ट्ठाणपरूवणा कायव्वा। णवरि ऊणं कादूण संधाणं कायव्वं।

असंख्यातगुणा देखा जाता है।

यदि कहा जाय कि नीचेके द्रव्यको बढ़ाकर ऊपरके द्रव्यके साथ सन्धिस्थलमें जोड़ देंगे, सो भी कहना ठीक नहीं है क्योंकि सत्कर्मको उतारनेके सम्बन्धमें इस प्रकारकी प्रतिज्ञा नहीं की है, इसलिए इस द्रव्यको यहीं छोड़कर असंयतसम्यग्दृष्टिके अन्तिम समयवर्ती सत्त्वकी अपेक्षा सत्कर्मस्थानोंका कथन करते हैं जो इस प्रकार है—सम्यग्दृष्टिके अन्तिम समयवर्ती सत्त्वमें साधिक एक गोपुच्छाको बढ़ाना चाहिये। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए इस जीवके साथ एक अन्य जीव समान है जो उपान्त्य समयवर्ती असंयतसम्यग्दृष्टि है। इस प्रकार दो छयासठ सागर और तीन पल्य उतर कर छह पर्याप्तियोंसे पर्याप्त होनेके प्रथम समयके प्राप्त होने तक उतारते जाना चाहिये।

§ ३०४. अब इससे नीचे उतारना शक्य नहीं है, क्योंकि स्तिवुककी गोपुच्छाकी अपेक्षा नवक बन्ध असंख्यातगुणा पाया जाता है, इसलिये इसके द्रव्यको चार पुरुषोंकी अपेक्षा उत्तरोत्तर एक एक परमाणुके क्रमसे पाँच वृद्धियोंके द्वारा तब तक बढ़ाना चाहिये जब जाकर एक गुणितकर्मांश जीव नपुंसकवेदको पूराकर फिर तिर्यंचोंमें उत्पन्न होकर और वहां अन्तर्मुहूर्त काल तक जाकर दान या दानकी अनुमोदनासे कुरुक्षेत्रकी आयुको बाँधकर और वहाँ उत्पन्न होनेके बाद छह पर्याप्तियोंको पूरा कर तदनन्तर पहले समयमें स्थित होवे। अब इसके समान ईशान स्वर्गके देवके अन्तिम समयके द्रव्यको लेकर उत्तरोत्तर एक एक परमाणुके क्रमसे दो वृद्धियोंके द्वारा अपने उत्कृष्ट द्रव्यके प्राप्त होने तक बढ़ाते जाना चाहिये। अब गुणितके भी इसी क्रमसे सत्त्वकी अपेक्षा स्थानोंका कथन करना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि कम करके सन्धान कर लेना चाहिये।

---

१. आ०प्रतौ 'तेणेदाव्वं परमाणुत्तरकमेण' इति पाठः।

❀ **एवं णवुंसयवेदस्स दोफद्दयाणि।**

§ ३०५. कुदो ? तिप्पहुडिफद्दयाणमेत्थ संभवाभावादो।

❀ **एवमित्थिवेदस्स। णवरि तिपलिदोवमिएसु णो उववण्णो।**

§ ३०६. जहा णवुंसयवेदस्स सामित्तपरूवणा कदा तहा इत्थिवेदस्स वि कायव्वा, विसेसाभावादो। णवरि तिपलिदोवमिएसु णो उप्पादेदव्वो, कुरवेसु वि इत्थिवेदस्स बंधुवलंभादो।

❀ **पुरिसवेदस्स जहण्णयं पदेससंतकम्मं कस्स ?**

§ ३०७. सुगमं ?

❀ **चरिमसमयपुरिसवेदोदयक्खवगेण घोलमाणजहण्णजोगट्ठाणे वट्टमाणेण जं कम्मं बद्धं तं कम्ममावलियसमयअवेदो संकामेदि। जत्तो पाए संकामेदि तत्तो पाए सो समयपबद्धो आवलियाए अकम्मं होदि। तदो एगसमयमोसक्किदूण जहण्णयं पदेससंतकम्मट्ठाणं।**

§ ३०८. चरिमसमयपुरिसवेदोदयक्खवगेण बद्धसमयपबद्धो चेव एत्थ किमट्ठं घेप्पदे ? ण, हेट्ठिमेसु घेप्पमाणेसु बहुदव्वप्पसंगादो। एदेसिं पच्चग्गबद्धसमयपबद्धाण-

---

❀ **इस प्रकार नपुंसकवेदके दो स्पर्धक होते हैं।**

§ ३०५. शंका—नपुंसकवेदके दो ही स्पर्धक क्यों सम्भव हैं।

समाधान—क्योंकि नपुंसकवेदमें तीन आदि स्पर्धक सम्भव नहीं हैं।

❀ **इसी प्रकार स्त्रीवेदके जघन्य स्वामित्वका कथन करना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि इसे तीन पल्यकी आयुवाले जीवोंमें नहीं उत्पन्न कराना चाहिये।**

§ ३०६. जिस प्रकार नपुंसकवेदके स्वामित्वका कथन किया उसी प्रकार स्त्रीवेदके स्वामित्वका भी कथन करना चाहिये, क्योंकि उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है। किन्तु इतनी विशेषता है कि तीन पल्यकी आयुवालोंमें नहीं उत्पन्न कराना चाहिये, क्योंकि कुरुओंमें भी स्त्रीवेदका बन्ध पाया जाता है।

❀ **पुरुषवेदका जघन्य प्रदेशसत्कर्म किसके होता है ?**

§ ३०७. यह सूत्र सुगम है।

❀ **जघन्य परिणाम योगस्थानमें विद्यमान क्षपकने पुरुषवेदके उदयके अन्तिम समयमें जिस कर्मका बन्ध किया वह कर्म अपगतवेदके एक आवलि काल जाने पर तदनन्तर समयसे संक्रमणको प्राप्त होता है और जबसे संक्रमणको प्राप्त होता है तबसे वह समयप्रबद्ध एक आवलिके भीतर अकर्मभावको प्राप्त होता है, इसलिए इससे एक समय पीछे जाकर विद्यमान जीवके पुरुषवेदका जघन्य प्रदेशसत्कर्मस्थान होता है।**

§ ३०८. शंका—पुरुषवेदके उदयके अन्तिम समयमें क्षपकके द्वारा बांधे गये समयप्रबद्धको ही यहाँ किसलिये ग्रहण किया गया है ?

मक्कमेण विणासो[1] चिराणसंतकम्मस्सेव किण्ण होदि ? ण, दोहि आवलियाहि विणा जहण्णेण वि बद्धकम्मस्स विणासाभावादो । अवेदो पुरिसवेदं किण्ण बंधइ ? साहावियादो । जेसिं जोगट्ठाणाणं वड्ढी हाणी अवट्ठाणं च संभवइ ताणि घोलमाणजोगट्ठाणाणि णाम । परिणामजोगट्ठाणाणि त्ति भणिदं होदि । एदेण उववाद-एयंताणुवड्ढिजोगट्ठाणाणं पडिसेहो[2] कदो, तत्थ घोलमाणत्ताभावादो । एयंतेण वड्ढणं[3] ण घोलमाणत्तं, हाणि-अवट्ठाणेहि विणा वड्ढीए चेव तदणुववत्तीदो । तेण ण एयंताणुवड्ढिजोगट्ठाणाणं घोलमाणत्तं । घोलमाणजोगो जहण्णओ अजहण्णओ वि[4] अत्थि, तत्थ अजहण्णपडिसेहट्ठं जहण्णणिद्देसो कदो । किमट्ठं जहण्णजोगट्ठाणस्स गहणं कीरदे ? थोवपदेसग्गहणट्ठं । चरिमसमयपुरिसवेदोदयक्खवगेण घोलमाणजहण्णजोगट्ठाणे वट्टमाणेण जं बद्धं कम्मं तमावलियसमयअवेदो संकामेदि, बंधावलियादिक्कंतत्तादो । बंधावलियाए किण्ण संकामेदि[5] । साहावियादो । जत्तो पाए संकामेदि तत्तो पाए सो

समाधान—नहीं, क्योंकि इससे नीचेके समयप्रबद्धोंके ग्रहण करने पर बहुत द्रव्यका प्रसंग प्राप्त होता है ।

शंका—इन न्यूतन बंधे हुए समयप्रबद्धोंका प्राचीन सत्कर्मके समान युगपत् विनाश क्यों नहीं होता ?

समाधान—नहीं क्योंकि जघन्यरूपसे भी बँधे हुए कर्मका दो आवलियोंके बिना विनाश नहीं होता ।

शंका—अपगतवेदी जीव पुरुषवेदको क्यों नहीं बाँधता है ?

समाधान—क्योंकि ऐसा स्वभाव है ।

जिन योगस्थानोंको वृद्धि, हानि और अवस्थान सम्भव हैं वे घोलमान योगस्थान कहलाते हैं । ये ही परिणामयोगस्थान हैं यह इस कथनका तात्पर्य है । इससे उपपाद और एकान्तानुवृद्धि योगस्थानोंका निषेध किया है, क्योंकि वहां घोलमानता नहीं पाई जाती । एकान्तसे बढ़ना घोलमानपना नहीं है, क्योंकि घोलमानमें हानि और अवस्थानके बिना केवल वृद्धि नहीं बनती । इसलिये एकान्तानुवृद्धिरूप योगस्थानोंको घोलमान नहीं माना जा सकता । घोलमान योगस्थान जघन्य भी है और अजघन्य भी है, अतः वहाँ अजघन्यका निषेध करनेके लिये जघन्य पदका निर्देश किया है ।

शंका—जघन्य योगस्थानका ग्रहण किसलिये किया है ?

समाधान—थोड़े प्रदेशोंका ग्रहण करनेके लिये पुरुषवेदके अन्तिम समयमें घोलमान जघन्य योगस्थानमें विद्यमान क्षपकने जो कर्म बाँधा उसका अपगतवेद होनेके एक आवलि बाद संक्रमण करता है, क्योंकि इसकी बन्धावलि व्यतीत हो चुकी है ।

शंका—बन्धावलिके भीतर क्यों नहीं संक्रमण होता ?

समाधान—क्योंकि ऐसा स्वभाव है । जिस समयसे लेकर संक्रमण करता है उस

---

१. आ०प्रतौ '-मक्कमेणाविणासो' इति पाठः । २. ता०प्रतौ '-जोगट्ठाणाणि(णं)पडिसेहो' आ०प्रतौ 'जोगट्ठाणाणि पडिसेहो' इति पाठः । ३. ता०प्रतौ 'वड्ढणं' इति पाठः । ४. आ०प्रतौ 'जहण्णओ वि' इति पाठः । ५. ता०प्रतौ 'सकमदि' इति पाठः ।

समयपबद्धो आवलियाए अकम्मं होदि। णवगसमयपबद्धं आवलियमेत्तकालेणेव खवेदि त्ति भणिदं होदि। जहा चिराणसंतकम्ममंतोमुहुत्तेण कालेण संकामिज्जदि तहा णवगसमयपबद्धो तेण कालेण किण्ण संकामिज्जदि? साहावियादो। जम्मि पदेसे चरिमसमयसवेदेण बद्धसमयपबद्धो अकम्मं होदि तत्तो हेट्ठा एगसमयमोसक्किदूण ओसरिदूण तस्स चरिमफालिं धरेदूण ट्ठिदस्स जहण्णयं पदेससंतकम्मं।

❀ **तस्स कारणमिमा परूवणा कायव्वा।**

§ ३०९. तस्स चरिमसमयसवेदेण बद्धसमयपबद्धस्स चरिमफालिसेसस्स जहण्णत्तपदुप्पायणट्ठं इमा परूवणा कीरदे।

❀ **पढमसमयअवेदगस्स केत्तिया समयपबद्धा।**

§ ३१० सुगममेदं।

❀ **दोआवलियाओ दुसमऊणाओ।**

§ ३११. दोसु आवलियासु दुसमऊणासु जत्तिया समया तत्तियमेत्ता समयपबद्धा पढमसमयअवेदे अत्थि।

❀ **केण कारणेण?**

§ ३१२. दोसु आवलियासु केण कारणेण दो समया ऊणा किज्जंति त्ति भणिदं

समयसे लेकर वह समयप्रबद्ध एक आवलि कालके भीतर अकर्मभावको प्राप्त हो जाता है। इसका यह तात्पर्य है कि नवक समयप्रबद्धकी एक आवलि कालके द्वारा ही क्षपणा करता है।

शंका—जिस प्रकार प्राचीन सत्कर्मका अन्तर्मुहूर्त कालके द्वारा संक्रमण करता है उसी प्रकार उतने ही कालके द्वारा नवक समयप्रबद्धका क्यों नहीं संक्रमण करता है?

समाधान—क्योंकि ऐसा स्वभाव है। सवेदीके द्वारा अपने अन्तिम समयमें बांधा गया समयप्रबद्ध जिस स्थानमें अकर्मभावको प्राप्त होता है उससे नीचे एक समय सरककर पुरुषवेदकी अन्तिम फालिको धारणकर स्थित हुए जीवके पुरुषवेदका जघन्य प्रदेशसत्कर्म होता है।

❀ **अब इस जघन्य सत्कर्म के लिये यह आगेकी प्ररूपणा करनी चाहिए।**

§ ३०९. उसके अर्थात् अन्तिम समयवर्ती सवेदीके द्वारा बांधे गये समयप्रबद्धकी शेष रही अन्तिम फालिके जघन्यपनेको बतलानेके लिये यह कथन करते हैं।

❀ **प्रथम समयवर्ती अपगतवेदीके कितने समयप्रबद्ध होते हैं?**

§ ३१०. यह सूत्र सुगम है।

❀ **दो समय कम दो आवलिप्रमाण समयप्रबद्ध होते हैं।**

§ ३११. दो समय कम दो आवलियोंमें जितने समयप्रबद्ध होते हैं उतने समयप्रबद्ध प्रथम समयवर्ती अपगतवेदीके होते हैं।

❀ **इसका कारण क्या है?**

§ ३१२. दो आवलियोंमें दो समय किस कारणसे कम किये गये, यह सूत्र इस शंकाको

होदि। एदस्स कारणपदुप्पायणट्ठमुत्तरसुत्तकलावं भणदि जइवसहभडारओ।

❀ जं चरिमसमयसवेदेण बद्धं तमवेदस्स विदियाए आवलियाए तिचरिमसमयादो त्ति दिस्सदि। दुचरिमसमए अकम्मं होदि।

§ ३१३. अवगदवेदस्स पढमसमयादो उवरिमआवलियमेत्तकालो अवगदवेदस्स पढमावलिया णाम। तत्तो उवरिमआवलियमेत्तकालो तस्सेव विदियावलिया, अवगदवेदसंबंधित्तादो। तिस्से विदियावलियाए जाव तिचरिमसमओ त्ति ताव जं चरिमसमयसवेदेण बद्धं कम्मं तं दिस्सदि, समयूणदोआवलियाओ मोत्तूण णवकबंधस्स अवट्ठाणाभावादो। तं जहा—अवगदवेदस्स समयूणावलियाए सो समयपबद्धो ण णिल्लेविज्जदि, बंधावलियकालम्मि तस्स परपयडिसंकंतीए अभावादो। संकमे पारद्धे वि ण समयूणावलियमेत्तकालं णिल्लेविज्जदि, संकमणावलियाए चरिमसमए तदभावुवलंभादो। तम्हा अवेदस्स विदियाए आवलियाए तिचरिमसमओ त्ति सो समयपबद्धो दिस्सदि त्ति जुज्जदे। तिस्से दुचरिमसमए अकम्मं होदि, चरिमसमयवेदादो गणिज्जमाणे तत्थ संपुण्णदोआवलियाणमुवलंभादो।

❀ जं दुचरिमसमयसवेदेण बद्धं तमवेदस्स विदियाए आवलियाए चदुचरिमसमयादो त्ति दिस्सदि। तिचरिमसमए अकम्मं होदि।

प्रकट करता है। अब इसका कारण बतलानेके लिये यतिवृषभभट्टारक आगेके सूत्रोंको कहते हैं—

❀ अन्तिम समयवर्ती सवेदीने जो कर्म बांधा वह अपगतवेदीके दूसरी आवलिके त्रिचरम समय तक दिखाई देता है और द्विचरम समयमें अकर्मभावको प्राप्त होता है।

§ ३१३. अपगतवेदीके प्रथम समयसे लेकर आगेको एक आवलिप्रमाण काल अपगतवेदकी प्रथमावलि है। और इससे आगेकी दूसरी आवलिप्रमाण काल उसीकी दूसरी आवलि है, क्योंकि इनका सम्बन्ध अपगतवेदसे है। उस दूसरी आवलिके त्रिचरम समय तक अन्तिम समयवर्ती सवेदीके द्वारा बांधा गया कर्म दिखाई देता है, क्योंकि एक समय कम दो आवलिके सिवा और अधिक काल तक विवक्षित नवक समयप्रबद्धका अवस्थान नहीं पाया जाता। खुलासा इस प्रकार है—अपगतवेदीके एक समय कम एक आवलि काल तक वह समयप्रबद्ध निर्लेप नहीं होता अर्थात् तदवस्थ रहता है, क्योंकि बन्धावलि कालमें उसका अन्य प्रकृतिमें संक्रमण नहीं होता। तथा संक्रमणका प्रारंभ होने पर भी एक समय कम एक आवलि प्रमाण कालमें वह निर्लेप नहीं होता, क्योंकि संक्रमणावलिके अन्तिम समयमें उसका अभाव पाया जाता है। इसलिये अपगतवेदीकी दूसरी आवलिके तीसरे समय तक वह समयप्रबद्ध दिखाई देता है यह कथन बन जाता है। तथा उस दूसरी आवलिके द्विचरम समयमें अकर्मभावको प्राप्त होता है, क्योंकि सवेदीके अन्तिम समयसे गिनने पर वहां पूरी दो आवलियां पाई जाती हैं।

❀ उपान्त्य समयवर्ती सवेदीने जो कर्म बांधा वह अपगतवेदीके दूसरी आवलिके चार अन्तिम समय तक दिखाई देता है। त्रिचरम समयमें अकर्मपनेको

§ ३१४. कुदो ? अवेदस्स पढमावलियाए दुसमयूणाए बंधावलियं गमिय पढमावलियदुचरिमसमए तस्स समयपबद्धस्स संकमपारंभादो। तिचरिमसमए अकम्मं होदि, बद्धसमयादो गणिज्जमाणे तत्थ संपुण्णाणं दोण्हमावलियाणमुवलंभादो।

❀ एदेण कमेण चरिमावलियाए पढमसमयसवेदेण जं बद्धं तमवेदस्स पढमावलियाए चरिमसमए अकम्मं होदि।

§ ३१५. पुव्विल्लकमं संभरिदूण णिज्जदि त्ति जाणावणट्ठमेदेण कमेणे त्ति णिद्देसो कदो। जं तिचरिमसमयसवेदेण बद्धं तमवेदस्स विदियाए आवलियाए पंचचरिमसमयादो त्ति दिस्सदि। जं चदुचरिमसमयसवेदेण बद्धं तमवेदस्स विदियाए आवलियाए छचरिमसमयादो त्ति दिस्सदि। एवं णेदव्वमिदि भणिदं होदि। सवेदचरिमावलियाए पढमसमए वट्टमाणसवेदेण जं बद्धं तमवेदस्स पढमावलियाए चरिमसमए अकम्मं होदि। कुदो ? बद्धसमयादो गणिज्जमाणे अवगदवेदस्स पढमावलियाए चरिमसमए बंधावलिया संकमणावलिया त्ति संपुण्णाणं दोण्हमावलियाणं पमाणुवलंभादो। ण च णवगसमयपबद्धो समयूणदोआवलियाहिंतो अहियं कालमच्छदि, विप्पडिसेहादो।

❀ जं सवेदस्स दुचरिमाए आवलियाए पढमसमए पबद्धं तं चरिम-

प्राप्त होता है।

§ ३१४. क्योंकि अपगतवेदीकी दो समय कम पहली आवलिसे बन्धावलिको बिताकर पहली आवलिके द्विचरम समयमें उस समयप्रबद्धके संक्रमणका प्रारम्भ होता है और अपगतवेदीकी दूसरी आवलिके त्रिचरम समयमें वह समयप्रबद्ध अकर्मभावको प्राप्त होता है, क्योंकि बन्ध समयसे लेकर यहां तक गिनने पर पूरी दो आवलियां पाई जाती हैं।

❀ इस क्रमसे अन्तिम आवलिके प्रथम समयवर्ती सवेदीने जो कर्म बांधा वह अवेदीके पहली आवलिके अन्तिम समयमें अकर्मभावको प्राप्त होता है।

§ ३१५. पहलेके क्रमका स्मरण करके आगे लेजाना चाहिये यह जतानेके लिये सूत्रमें 'इस क्रमसे' इस पदका निर्देश किया है। जो कर्म सवेदीने अपने द्विचरम समयमें बांधा है वह अपगतवेदीके दूसरी आवलिके पाँच चरम समय तक दिखाई देता है। जो कर्म सवेदीने अपने चार चरम समयमें बांधा है वह अपगतवेदीके दूसरी आवलिके छह चरम समय तक दिखलाई देता है। इसी प्रकार लेजाना चाहिये यह 'एदेण कमेण' इस पदके देने का तात्पर्य है। सवेद भागकी अन्तिम आवलिके प्रथम समयमें विद्यमान सवेदीने जो कर्म बांधा वह अपगतवेदीके प्रथम आवलिके अन्तिम समयमें अकर्मभावको प्राप्त होता है, क्योंकि कर्मबन्धके समयसे गिनती करने पर अपगतवेदीके पहिली आवलिके अन्तिम समयमें बन्धावलि और संक्रमणावलि इस प्रकार वहां तक पूरी दो आवलियोंका प्रमाण पाया जाता है और नवक समयप्रबद्ध एक समय कम दो आवलिसे अधिक काल तक रहता नहीं है, क्योंकि और अधिक काल तक इसके रहनेका निषेध है।

❀ सवेदीने अपनी द्विचरमावलीके प्रथम समयमें जो कर्म बांधा वह सवेदीके

समयसवेदस्स अकम्मं होदि ।

§ ३१६. कुदो ? बद्धपढमसमयादो गणिज्जमाणे तत्थ संपुण्णाणं दोण्हमावलियाणमुवलंभादो ।

❀ जं तिस्से चेव दुचरिमसमयसवेदावलियाए विदिसमए बद्धं तं पढमसमयअवेदस्स अकम्मं होदि ।

§ ३१७. कुदो ? बद्धपढमसमयादो अवगदवेदपढमसमयम्मि संपुण्णाणं दोण्हमावलियाणमुवलंभादो । तं वि कुदो ? सवेदस्स आवलिया सवेदावलिया । दुचरिमा च सा सवेदावलिया च दुचरिमसवेदावलिया । तिस्से विदियसमए पबद्धसमयपबद्धस्स णिरुद्धत्तादो ।

❀ एदेण कारणेण बेसमयपबद्धे ण लहदि अवगदवेदो ।

§ ३१८. जेणेवं दुचरिमसवेदावलियाए पढम-विदियसमएसु बद्धसमयपबद्धा पढमसमयअवेदस्स णत्थि तेण कारणेण बेसमयपबद्धे सो ण लहदि त्ति दट्ठव्वं । तेणेत्तिया समयपबद्धा तत्थ अत्थि त्ति जाणावणट्ठमुत्तरसुत्तमागदं—

❀ सवेदस्स दुचरिमावलियाए दुसमयूणाए चरिमावलियाए सव्वे

अन्तिम समयमें अकर्मभावको प्राप्त होता है ।

§ ३१६. क्योंकि नवकबन्धके पहले समयसे लेकर गिनती करने पर वहां पर पूरी दो आवलियां पाई जाती हैं ।

❀ जो कर्म सवेदीकी उसी द्विचरमावलिके दूसरे समयमें बांधा वह अपगतवेदीके पहले समयमें अकर्मभावको प्राप्त होता है ।

§ ३१७. क्योंकि नवकबन्धके पहले समयसे लेकर अपगतवेदके प्रथम समयमें पूरी दो आवलियाँ पाई जाती हैं ।

शंका—वहाँ जाकर पूरी दो आवलियाँ क्यों होती हैं ?

समाधान—क्योंकि सवेद भागकी आवलि सवेदावलि कहलाती है और यदि वह सवेदावलि द्विचरम हो तो द्विचरम सवेदावलि कहलाती है । अब इसके दूसरे समयमें बंधे हुए समयप्रबद्धको विषय करनेवाला काल लेना है, इससे ज्ञात होता है कि अपगतवेदके प्रथम समय तक दो आवलियाँ पूरी होजाती हैं ।

❀ इस कारणसे अपगतवेदी जीवको दो समयप्रबद्धोंका लाभ नहीं होता ।

§ ३१८. यतः इस प्रकार सवेद भागकी द्विचरमावलिके प्रथम और द्वितीय समयमें बंधे हुए समयप्रबद्ध अपगतवेदीके प्रथम समयमें नहीं हैं अतः उसके दो समयप्रबद्ध नहीं पाये जाते ऐसा जानना चाहिये ।

अब इतने समयप्रबद्ध वहाँ पर अर्थात् अपगतवेदीके हैं इस बातको बतलानेके लिये आगेका सूत्र आया है—

❀ किन्तु अपगतवेदीके सवेद भागकी दो समय कम द्विचरमावलि और चरमावलि

च एदे समयपबद्धे अवेदो लहदि ।

§ ३१९. जेण एत्तिए समयपबद्धे पढमसमयअवेदो लहदि त्ति तेण जं पुव्वं भणिदं पढमसमयअवेदो दोआवलियाओ दुसमयूणाओ लहदि त्ति तं सुहासियं। पढमसमयअवेदम्मि एत्तिया समयपबद्धा अत्थि त्ति किमट्ठं परूवणा कीरदे ? अवगदवेदपढमसमए जहण्णसामित्तं किण्ण दिण्णमिदि पच्चवट्ठिदसिस्सस्स विप्पडिवत्तिणिराकरणट्ठं । जेणेदं सुत्तं देसामासियं तेण विदियसमयअवगदवेदो वि ण जहण्णदव्वसामी, तत्थ तिसमयूणदोआवलियमेत्तसमयपबद्धाणमुवलंभादो। तदियसमयअवगदवेदो वि ण जहण्णदव्वसामी, चदुसमयूणदोआवलियमेत्तसमयपबद्धाणं तत्थुवलंभादो। एवं गंतूण तिसमयूणदोआवलियअवगदवेदो वि ण जहण्णदव्वसामी, तत्थ दोण्हं समयपबद्धाणमुवलंभादो। दुसमयूणदोआवलियअवगदवेदो पुण जहण्णदव्वसामी होदि, तत्थ घोलमाणजहण्णजोगेण बद्धेगसमयपबद्धस्स चरिमफालीए चेव उवलंभादो ।

❀ एसा ताव एक्का परूवणा ।

§ ३२०. एसा परूवणा जहण्णदव्वपमाणपरूवणट्ठं अवगदवेदेसुप्पज्जमाणट्ठाणाणं णिबंधणावगमणट्ठं च कदा ।

सम्बन्धी ये सब समयप्रबद्ध पाये जाते हैं ।

§ ३१९. चूंकि इतने समयप्रबद्ध अपगतवेदी जीव अपने प्रथम समयमें प्राप्त करता है, इसलिये पहले जो यह कहा है कि प्रथम समयवर्ती अपगतवेदीके दो समय कम दो आवलिप्रमाण समयप्रबद्ध पाये जाते हैं वह ठीक ही कहा है ।

शंका—अपगतवेदीके प्रथम समयमें इतने समयप्रबद्ध हैं यह कथन किसलिये किया है ?

समाधान—पुरुषवेदका जघन्य स्वामी अपगतवेदके प्रथम समयमें क्यों नहीं बतलाया इस प्रकार जिस शिष्यको शंका है उसके निराकरण करनेके लिये उक्त कथन किया है ।

चूंकि यह सूत्र देशामर्षक है इसलिये इससे यह भी निष्कर्ष निकलता है कि द्वितीय समयवर्ती अपगतवेदी भी जघन्य द्रव्यका स्वामी नहीं है, क्यों कि वहाँ पर तीन समय कम दो आवलिप्रमाण समयप्रबद्ध पाये जाते हैं। तीसरे समयमें स्थित अपगतवेदी भी जघन्य द्रव्यका स्वामी नहीं है, क्योंकि उसके चार समय कम दो आवलिप्रमाण समयप्रबद्ध पाये जाते हैं। इस प्रकार जाकर जिसे अपगतवेदी हुए तीन समय कम दो आवलि हो गये हैं वह भी जघन्य द्रव्यका स्वामी नहीं है, क्योंकि वहाँ दो समयप्रबद्ध पाये जाते हैं। किन्तु जिसे अपगतवेदी हुए दो समय कम दो आवलि हुए हैं वह जघन्य द्रव्यका स्वामी है, क्योंकि वहाँ पर जघन्य परिणामयोगके द्वारा बाँधे गये एक समयप्रबद्धकी अन्तिम फालि ही पाई जाती है।

❀ यह एक प्ररूपणा है ।

§ ३२०. जघन्य द्रव्यके प्रमाणका कथन करनेके लिये और अपगतवेदियोंमें उत्पन्न होनेवाले स्थानोंके कारणका ज्ञान करानेके लिये यह प्ररूपणा की है।

✽ इमा अण्णा परूवणा ।

§ ३२१. पुव्विल्लपरूवणादो एसा परूवणा अण्णा पुधभूदा, परूविज्जमाणस्स भेदुवलंभादो ।

✽ दोहि चरिमसमयसवेदेहि तुल्लजोगेहि बद्धं कम्मं तेसिं तं संतकम्मं चरिमसमयअणिल्लेविदं पि तुल्लं ।

§ ३२२. दोहि चरिमसमयसवेदेहि तुल्लजोगेहि जं बद्धं कम्मं तं तुल्लमिदि संबंधो कायव्वो । सरिसे जोगे संते पदेसबंधस्स विसरिसत्ताणुववत्तीदो । तेसिं संतकम्मं जं चरिमसमयअणिल्लेविदं तं पि तुल्लं, अणियट्टिपरिणामेहि अधापवत्तसंकमेण कोधसंजलणे संकममाणपदेसग्गस्स समयं पडि दोण्हं पि समाणत्तादो । ण च समाणदव्वाणं समाणव्वयाणं सेसस्स विसरिसत्तं, विप्पडिसेहादो ।

✽ दुचरिमसमयअणिल्लेविदं पि तुल्लं ।

§ ३२३. सुगममेदं, पुव्वमवगयकारणत्तादो ।

✽ एवं सव्वत्थ ।

§ ३२४. तिचरिमसमयअणिल्लेविदं पि तुल्लं । चदुचरिमसमयअणिल्लेविदं पि तुल्लं ति वत्तव्वं जाव बद्धपढमसमयो त्ति । ओकड्डणाए उदए णिवदिय गलमाणे दोण्हं

✽ यह दूसरी प्ररूपणा है ।

§ ३२१. पहली प्ररूपणासे यह प्ररूपणा भिन्न अर्थात् पृथग्भूत है, क्योंकि कथन किये जानेवाले विषयमें पूर्वोक्त प्ररूपणासे भेद पाया जाता है ।

✽ तुल्य योगवाले अन्तिम समयवर्ती वेदवले दो जीवोंने जो कर्म बांधा वह समान है । तथा उनके जो सत्कर्म अन्तिम समयमें अवशिष्ट है वह भी समान है ।

§ ३२२. समान योगवाले अन्तिम समयवर्ती वेदवाले दो जीवोंने जो कर्म बाँधा वह समान है इस प्रकार यहां सम्बन्ध कर लेना चाहिये । क्योंकि सदृश योगके रहते हुए प्रदेसबन्धमें असमानता बन नहीं सकती । तथा इन दोनों जीवोंका जो सत्कर्म अन्तिम समयमें निर्जीर्ण नहीं हुआ वह भी समान है, क्योंकि अनिवृत्तिकरणरूप परिणामोंके निमित्तसे अधःप्रवृत्तसंक्रमणके द्वारा क्रोध संज्वलनमें संक्रमणको प्राप्त होनेवाले प्रदेश प्रत्येक समयमें दोनोंके ही समान हैं । और यह हो नहीं सकता कि दो समान द्रव्योंमेंसे एक समान व्ययके होते हुए जो शेष रहे वह असमान होवे, क्योंकि ऐसा माननेमें विरोध आता है ।

✽ उपान्त्य समयमें जो द्रव्य अवशिष्ट है वह भी समान है ।

§ ३२३. यह सूत्र सुगम है, क्योंकि इसके कारणका ज्ञान पहले किया जा चुका है ।

✽ इसी प्रकार सर्वत्र जानना चाहिए ।

§ ३२४. त्रिचरम समयमें जो द्रव्य अनिर्लेपित है वह भी समान है । चतुश्चरम समयमें जो द्रव्य अनिर्लेपित है वह भी समान है । इस प्रकार बन्ध होनेके पहले समय तक

---

१. आ० प्रतौ 'सरिसजोगे' इति पाठः ।

समयपबद्धाणं सेसदव्वस्स विसरिसत्तं किण्ण जायदे ? ण, विदियट्ठिदीए अवट्ठिदत्तणेण अवगदवेदम्मि पुरिसवेदपढमट्ठिदीए अभावादो च विसरिसत्तासंभवादो[1]। दुचरिमावलियाए पबद्धाणं पढमट्ठिदी अत्थि त्ति उदए परिगलणं पडुच्च विसरिसत्तं किण्ण जायदे ? ण, आवलिय-पडिआवलियासु सेसासु आगाल-पडिआगालवोच्छेदेण विदियट्ठिदीए ट्ठिददव्वस्स पढमट्ठिदीए आगमणाभावादो। तेण सिद्धं सव्वसमयपबद्धाणं[2] सरिसत्तं।

❀ एदाहि दोहि परूवणाहि पदेससंतकम्मट्ठाणाणि परूवेदव्वाणि।

§ ३२५. एगसमयपबद्धमादिं कादूण जाव दुसमयूणदोआवलियमेत्तसमयपबद्धाणं परूवणा एगं बीजपदं, जहण्णजोगट्ठाणप्पहुडि सव्वजोगट्ठाणाणि अवलंबिय सांतराणं संतकम्मट्ठाणाणमुप्पत्तिणिमित्तत्तादो। णिरंतराणि ठाणाणि एत्थ किण्ण होंति ? ण, एगजोगपक्खेवेण एगसमयपबद्धस्स असंखे०भागमेत्तकम्मपरमाणूणमागमणुवलंभादो। बंधावलियादीदसमयपबद्धाणं परपयडिसंकमो सांतरसंतकम्मट्ठाणाणं विदियं बीजपदं।

कथन करना चाहिये।

शंका—अपकर्षणके द्वारा उदयमें डालकर गलन हो जाने पर दोनों समयप्रबद्धोंका शेष द्रव्य विसदृश क्यों नहीं हो जाता ?

समाधान—नहीं, क्योंकि दूसरी स्थितिमें अवस्थित होनेके कारण और अपगतवेद अवस्थामें पुरुषवेदकी प्रथम स्थितिका अभाव होनेसे उनका विसदृश होना सम्भव नहीं है।

शंका—द्विचरमावलिमें बंधे हुए समयप्रबद्धोंकी प्रथम स्थिति है, इसलिये इनका द्रव्य उदयको प्राप्त होकर गलता रहता है, अतएव इनमें विसदृशता क्यों नहीं पाई जाती ?

समाधान—नहीं, क्योंकि आवलि और प्रत्यावलिके शेष रहने पर आगाल और प्रत्यागालकी व्युच्छित्ति हो जानेके कारण दूसरी स्थितिमें स्थित द्रव्यका प्रथम स्थितिमें आगमन नहीं पाया जाता, इसलिये समयप्रबद्धकी समानता सिद्ध होती है।

❀ इन दोनों प्ररूपणाओंके द्वारा प्रदेशसत्कर्मस्थानोंका कथन करना चाहिये।

§ ३२५. एक समयप्रबद्धसे लेकर दो समय कम दो आवलिप्रमाण समयप्रबद्धोंकी प्ररूपणा यह एक बीजपद है, क्योंकि यह जघन्य योगस्थानसे लेकर सब योगस्थानोंकी अपेक्षा सान्तर सत्कर्मस्थानोंकी उत्पत्तिका निमित्त है।

शंका—यहां निरन्तर स्थान क्यों नहीं होते ?

समाधान—नहीं, क्योंकि एक योगके एक प्रक्षेप द्वारा एक समयप्रबद्धके असंख्यातवें भागप्रमाण कर्मपरमाणुओंका आगमन पाया जाता है।

बन्धावलिके बाद समयप्रबद्धोंका अन्य प्रकृतिमें संक्रमण होना यह सान्तर सत्कर्मस्थानोंका दूसरा बीजपद है।

---

१. आ०प्रतौ 'च 'सरिसत्तासंभवादो' इति पाठः। २. आ०प्रतौ 'सिद्धं समयपबद्धाणं' इति पाठः।

संकममस्सिदूण परूविज्जमाणसंतकम्मट्ठाणाणं सांतरत्तं कुदो णव्वदे ? पढमवारसंकंतदव्वं पेक्खिदूण एगसमयपबद्धादो विदियवारसंकंतदव्वस्स असंखे० भागहीणत्तुवलंभादो। एगसमयपबद्धादो संकंतदव्वं पेक्खिदूण अण्णेगसमयपबद्धादो संकंतदव्वं पदेसुत्तरं पदेसहीणं वा किण्ण जायदे ? ण, तुल्लजोगीहि बद्धसमयपबद्धस्स संकमणावलियाए सव्वत्थ सरिसत्तुवलंभादो।

§ ३२६. एत्थ संदिट्ठीए समजोगिजीवसमयपबद्धाणं पमाणमेदं | २५६ / २५६ | पुणो दोण्हं पि समयपबद्धाणं पढमसमयसंकमफालिप्पहुडि जाव आवलियमेत्तफालीण- मेसा संदिट्ठी—

१८	१६	१४	१२	१०	८	६	१७२
१८	१६	१४	१२	१०	८	६	१७२

।

§ ३२७. अथवा अधापवत्तभागहारो ९ एत्तियमेत्तो त्ति संकप्पिय एदेण |४३०४६७२१| एत्तियमेत्तसमयपबद्धसंदिट्ठिमोवट्टिय जहाकममुप्पाइदपढमादिफालीण- मेसा संदिट्ठी दट्ठव्वा—|४७८२९६९|४२५१५२८|३७७९१३६|३३५९२३२|२९८५९८४| |२६५४२०८|२३५९२९६|१८८७४३६८| एदमेत्थ पहाणं, अत्थाणुसारित्तादो। एदेहि

शंका—आगे कहे जानेवाले सत्कर्मस्थान संक्रमकी अपेक्षा सान्तर होते हैं यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—क्योंकि पहली बार जितना द्रव्य संक्रान्त होता है उसकी अपेक्षा एक समयप्रबद्धमेंसे दूसरी बार संक्रान्त होनेवाला द्रव्य असंख्यातवें भाग हीन पाया जाता है, इससे जाना जाता है कि प्रदेशसत्कर्मस्थान संक्रमणकी अपेक्षा सान्तर होते हैं।

शंका—एक समयप्रबद्धमेंसे संक्रान्त होनेवाले द्रव्यको अपेक्षा दूसरे एक समयप्रबद्धमेंसे संक्रान्त होनेवाला द्रव्य एक प्रदेश अधिक या एक प्रदेश हीन क्यों नहीं होता ?

समाधान—नहीं क्योंकि समान योगवाले जीवोंके द्वारा बांधा गया समयप्रबद्ध संक्रमणावलिके भीतर सर्वत्र समान पाया जाता है।

§ ३२६. यहाँ अंकसंदृष्टिकी अपेक्षा समान योगवाले दो जीवोंके दो समयप्रबद्धोंका यह प्रमाण है—२५६, २५६, पुनः दोनों ही समयप्रबद्धोंकी प्रथम समयवर्ती संक्रमफालिसे लेकर आवलिप्रमाण फालियोंकी यह संदृष्टि है—

१८	१६	१४	१२	१०	८	६	१७२
१८	१६	१४	१२	१०	८	६	१७२

विशेषार्थ—यहां अंकसंदृष्टिकी अपेक्षा आवलिका प्रमाण आठ है, इसलिये पूर्वोक्त २५६ प्रमाण एक समयप्रबद्धको आठ समयोंमें बांट दिया है।

§ ३२७. अथवा अधःप्रवृत्त भागहारका प्रमाण ९ है ऐसा मानकर इसके द्वारा ४३०४६७२१ इतने समयप्रबद्धको भाजित करने पर क्रमसे जो प्रथम आदि फालियां उत्पन्न होती हैं उनकी यह संदृष्टि जाननी चाहिये। प्रथम फालि ४७८२९६९, द्वितीय फालि ४२५१५२८, तृतीय फालि ३७७९१३६, चतुर्थ फालि ३३५९२३२, पांचवीं फालि २९८५९८४, छठी फालि २६५४२०८, सातवीं फालि २३५९२९६, आठवीं फालि १८८७४३६८। यह संदृष्टि यहां मुख्य है,

दोहि बीजपदेहि पुरिसवेदस्स संतकम्मट्ठाणाणि परूवेदव्वाणि । तत्थ पढममत्थपदमस्सिदूण ट्ठाणपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तकलावो आगओ ।

❀ जहा—जो चरिमसमयसवेदेण बद्धो समयपबद्धो तम्हि चरिमसमयअणिल्लेविदे घोलमाणजहण्णजोगट्ठाणमादिं कादूण जत्तियाणि जोगट्ठाणाणि तत्तियमेत्ताणि संतकम्मट्ठाणाणि ।

§ ३२८. 'जहा' तं जहा त्ति अंतेवासिपुच्छा जइवसहाइरियाणमासंका वा । चरिमसमयसवेदेण जीवेण जो बद्धो समयपबद्धो तम्हि ताव सांतरट्ठाणाणं पमाणं परूवेमि त्ति जइवसहाइरियाणमेसा पइज्जा । केरिसे तम्हि त्ति वुत्ते चरिमसमयअणिल्लेविदे चरिमफालिमेत्तावसेसे भणामि त्ति भावत्थो । एदिस्से जहण्णदव्वचरिमफालीए पमाणाणुगमं कस्सामो । तं जहा—घोलमाणजहण्णजोगेण चरिमसमयसवेदेण बद्धेगसमयपबद्धे बंधावलियादिक्कंते अधापवत्तभागहारेण खंडिदे तत्थ एगखंडं परसरूवेण संकामेदि । पुणो विदियसमए सेसदव्वमधापवत्तभागहारेण खंडिदूण तत्थ एगखंडं परसरूवेण संकामेदि । णवरि पढमसमयम्मि संकंतदव्वादो विदियसमयम्हि संकंतदव्वमसंखे०भागूणं, पढमसमयम्मि संकंतदव्वे अधापवत्तभागहारेण खंडिदे तत्थ एगखंडमेत्तेण तत्तो विदियसमयसंकंत-

---

क्योंकि यह मूल अर्थके अनुसार बनाई गई है । इन दोनों बीज पदोंकी अपेक्षा पुरुषवेदके सत्कर्मस्थानोंका कथन करना चाहिये । उनमेंसे पहले अर्थकी अपेक्षा स्थानोंका कथन करनेके लिये आगेका सूत्रसमुच्चय आया है—

❀ यथा—अन्तिम समयवर्ती सवेदीने जो समयप्रबद्ध बाँधा उसके अन्तिम फालि मात्र शेष रहने पर घोलमान जघन्य योगस्थानसे लेकर जितने योगस्थान होते हैं उतने ही सत्कर्मस्थान होते हैं ।

§ ३२८. सूत्रमें 'जहा' पद 'तं जहा' के अर्थमें आया है । इसके द्वारा अन्तेवासीकी पृच्छा या स्वयं यतिवृषभ आचार्यने अपनी आशंका प्रकट की है । अन्तिम समयवर्ती सवेदी जीवने जो समयप्रबद्ध बाँधा उसमें सर्व प्रथम सान्तर स्थानोंके प्रमाणका कथन करते हैं यह यतिवृषभ आचार्यकी प्रतिज्ञा है । वह कैसा ऐसा पूछने पर चरम समय अनिर्लेपित रहने पर अर्थात् अन्तिम फालिमात्र शेष रहने पर यह उक्त कथनका तात्पर्य है । अब इस जघन्य द्रव्यरूप अन्तिम फालिके प्रमाणका विचार करते हैं । यथा—अन्तिम समयवर्ती सवेदी जीव जघन्य परिणामयोगके द्वारा जिस एक समयप्रबद्धका बन्ध करता है उसमें अधःप्रवृत्त भागहारका भाग देने पर जो एक भाग प्राप्त हो उसका बन्धावलिके बाद प्रथम समयमें पर प्रकृतिरूपसे संक्रमण होता है । फिर शेष द्रव्यमें अधःप्रवृत्तभागहारका भाग देने पर जो एक भाग प्राप्त हो उसका दूसरे समयमें पर प्रकृतिरूपसे संक्रमण होता है । किन्तु इतनी विशेषता है कि प्रथम समयमें जितने द्रव्यका संक्रमण होता है उससे दूसरे समयमें संक्रमणको प्राप्त हुआ द्रव्य असंख्यातवें भागप्रमाण कम होता है, क्योंकि प्रथम समयमें जो द्रव्य संक्रमणको प्राप्त हुआ है उसमें अधःप्रवृत्तभागहारका भाग देने पर जो एक भाग प्राप्त हो, दूसरे समयमें

दव्वस्स ऊणत्तुवलंभादो। विदियसमयसंकंतदव्वादो वि तदियसमयसंकंतदव्वमसंखे०-भागहीणं, विदियसमयसंकंतदव्वे अधापवत्तभागहारेण खंडिदे तत्थ एयखंडमेत्तदव्वेण तत्तो तस्स परिहीणत्तुवलंभादो। एवं चउत्थसमयादीणं पि णेदव्वं जाव संकामग-दुचरिमसमओ त्ति। पढमफालीए सह सव्वफालीओ सरिसाओ त्ति घेत्तूण पुणो समयूणावलियाए ओवट्टिदअधापवत्तभागहारेण एगसमयपबद्धे भागे हिदे एगसमय-पबद्धादो परपयडीए संकंतदव्वं होदि। सेसरूवूणविरलणाए धरिदखंडाणं समुदओ जहण्णपदेससंतकम्मट्ठाणं होदि। संपहि एत्थ एदं समयपबद्धमस्सिदूण घोलमाण-जहण्णजोगट्ठाणमादिं कादूण जत्तियाणि जोगट्ठाणाणि तत्तियाणि चेव संतकम्मट्ठाणाणि होंति।

§ ३२९. एत्थ ताव ट्ठाणाणं साहणट्ठं समयपबद्धपक्खेवपमाणाणुगमं कस्सामो। तं जहा—सुहुमणिगोदजहण्णजोगट्ठाणपक्खेवभागहारे सेढीए असंखे०-भागमेत्ते तप्पाओग्गेण पलिदो०असंखे०भागेण गुणिदे घोलमाणजहण्णजोगपक्खेवभागहारो होदि। संपहि इमं विरलेदूण चरिमसमयसवेदेण बद्धेगसमयपबद्धे समखंडं कादूण दिण्णे तत्थ एक्केक्कस्स रूवस्स एगेगो सगलपक्खेवो होदि। संपहि एदिस्से विरलणाए हेट्ठा अधापवत्तभागहारं विरलेदूण एगसगलपक्खेवे समखंडं कादूण दिण्णे तत्थ एगखंडमवेदपढमावलियचरिमसमए एगसगलपक्खेवादो संकंतदव्वं होदि। संपहि

संक्रमणको प्राप्त हुआ द्रव्य उतना कम पाया जाता है। इसी प्रकार दूसरे समयमें संक्रमणको प्राप्त हुए द्रव्यसे भी तीसरे समयमें संक्रमणको प्राप्त हुआ द्रव्य असंख्यातवें भागप्रमाण न्यून है, क्योंकि दूसरे समयमें संक्रमणको प्राप्त हुए द्रव्यमें अधःप्रवृत्तभागहारका भाग देनेपर वहाँ जो एक भाग प्राप्त हो, तीसरे समयमें संक्रमणको प्राप्त हुआ द्रव्य उतना कम पाया जाता है। इसी प्रकार संक्रामकके उपान्त्य समय तक चौथे आदि समयोंमें भी संक्रमणका क्रम उक्त प्रकारसे जानना चाहिये। प्रथम फालिके समान सब फालियां हैं ऐसा समझकर फिर एक समय कम एक आवलिसे भाजित अधःप्रवृत्तभागहारका एक समयप्रबद्धमें भाग देने पर एक समयप्रबद्धमेंसे पर प्रकृतिमें संक्रमणको प्राप्त हुआ द्रव्य प्राप्त होता है और शेष एक कम विरलनके ऊपर प्राप्त खण्डोंका जोड़ जघन्य प्रदेशसत्कर्म होता है। यहां इस समयप्रबद्धकी अपेक्षा जघन्य परिणामयोगस्थानसे लेकर जितने योगस्थान होते हैं उतने ही सत्कर्मस्थान होते हैं।

§ ३२९. अब यहाँ स्थानोंकी सिद्धिके लिये समयप्रबद्धके प्रक्षेपके प्रमाणका विचार करते हैं। यथा—सूक्ष्म निगोदियाके जघन्य योगस्थानका प्रक्षेप भागहार जगश्रेणिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसे तद्योग्य पल्यके असंख्यातवें भागसे गुणा करने पर जघन्य परिणाम योगस्थानका प्रक्षेप भागहार होता है। अब इसका विरलन करके इस पर अन्तिम समयवर्ती सवेदीके द्वारा बाँधे गये एक समयप्रबद्धके समान खण्ड करके देयरूपसे देने पर प्रत्येक एकके प्रति एक एक सकल प्रक्षेप प्राप्त होता है। अब इस विरलनके नीचे अधःप्रवृत्त भागहारका विरलन करके उस पर एक सकलप्रक्षेपको समान खण्ड करके देयरूपसे देने पर वहाँ प्राप्त हुआ एक खण्ड, अपगतवेदीकी प्रथम आवलिके अन्तिम समयमें एक सकल प्रक्षेपमेंसे संक्रान्त हुए द्रव्यका प्रमाण होता है। अब इस प्रमाणको आगे श्रेणिके असंख्यातवें भाग-

एदेण पमाणेण उवरिमसेढीए[1] असंखे०भागमेत्तसयलपक्खेवेसु अवणिदे सेसं[2] विदियादिफालिपमाणं होदि। संपहि इमाओ अवणेदूण ट्ठविदपढमफालीओ सयलपक्खेवसंबंधिणीओ सयलपक्खेवपमाणेण कस्सामो। तं जहा—अधापवत्त-भागहारमेत्तपढमफालीओ घेत्तूण जदि एगो सयलपक्खेवो लब्भदि तो सेढीए असंखे०-भागमेत्तपढमफालीणं केत्तिए सयलपक्खेवे लभामो त्ति अधापवत्तभागहारेण उवरिम-भागहारे सेढीए असंखे०भागमेत्ते खंडिदे तत्थ एयखंडमेत्ता सयलपक्खेवा लब्भंति।

§ ३३०. संपहि पढमफालिं विदियादिसेसफालिपमाणेण कस्सामो। तं जहा—रूवूणअधापवत्तभागहारमेत्तपढमफालीहिंतो जदि एगं विदियादिफालिपमाणं[3] लब्भदि तो सेढीए असंखे०भागमेत्तपढमफालीसु केत्तियं विदियादिसेसपमाणं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए रूवूणअधापवत्त[4]भागहारेण उवरिमविरलणाए खंडिदाए तत्थ एगखंडमेत्ताओ विदियादिसेससलागाओ लब्भंति २।

प्रमाण सकल प्रक्षेपोंमेंसे घटाकर जो शेष रहे वह दूसरी आदि फालियोंका प्रमाण होता है। अब इन फालियोंको घटाकर सकल प्रक्षेप सम्बन्धी जो प्रथम फालियाँ स्थापित हैं उन्हें सकल प्रक्षेपके प्रमाणसे करते हैं। यथा—अधःप्रवृत्तभागहारप्रमाण प्रथम फालियोंको एकत्रित करने पर यदि एक सकल प्रक्षेप प्राप्त होता है तो जगश्रेणिके असंख्यातवें भागप्रमाण प्रथम फालियोंको एकत्रित करने पर कितने सकल प्रक्षेप प्राप्त होंगे इस प्रकार त्रैराशिक करके अधः-प्रवृत्त भागहारका आगेके भागहार श्रेणिके असंख्यातवें भागमें भाग देने पर वहां एक खण्ड प्रमाण सकल प्रक्षेप प्राप्त होते हैं?

उदाहरण अधःप्रवृत्तभागहार ९, जगश्रेणिका असंख्यातवां भाग ३६, प्रथम फलि ४७८२९६९,

९ बार प्रथम फलि ४७८२९६९ को जोड़ने पर एक सकल प्रक्षेप ४३०४६७२१ प्रमाण संख्या प्राप्त होती है तो जगश्रेणिके असंख्यातवें भाग ३६ बार प्रथम फालि ४७८२९६९ को जोड़ने पर ४ सकलप्रक्षेप प्राप्त होंगे यह स्पष्ट ही है।

§ ३३०. अब प्रथम फालिको दूसरी आदि शेष फालियोंके प्रमाणसे करते हैं। यथा—एक कम अधःप्रवृत्तभागहार प्रमाण प्रथम फालियोंके जोड़ने पर यदि एक बार दूसरी फालियोंका प्रमाण प्राप्त होता है तो जगश्रेणिके असंख्यातवें भागप्रमाण फालियोंके जोड़ने पर कितनी दूसरी आदि शेष फालियोंका प्रमाण प्राप्त होगा इस प्रकार त्रैराशिक करके फलराशिसे गुणित इच्छाराशिमें प्रमाण राशिका भाग देने पर उपरिम विरलनमें अधःप्रवृत्तभागहारका भाग देने पर वहाँ एक भागप्रमाण दूसरी आदि शेष फालियां प्राप्त होती हैं २।

उदाहरण—यहाँ एक कम अधःप्रवृत्तभागहार ८ है। इतनी बार प्रथम फालियोंको जोड़ने पर एक बार दूसरी आदि सब फालियोंका प्रमाण ३८२६३७५२ प्राप्त होता है अतः जगश्रेणिके असंख्यातवें भाग ३६ बार प्रथम फालियोंको जोड़नेसे ३६ में ८ का भाग देने पर लब्ध ४½ बार दूसरी आदि फालियोंका जोड़ प्राप्त होगा।

---

१. आ०प्रतौ 'उवरि सेढीए' इति पाठः। २. आ०प्रतौ 'अवणिदसेसं' इति पाठः। ३. ता०प्रतौ 'जदि एवमेगं विदियादिफालिपमाणं' इति पाठः। ४. आ०प्रतौ 'अवट्टिदाए अधापवत्त' इति पाठः।

§ ३३१. संपहि पढमफालीओ पढमसेसपमाणेण कस्सामो। किं सेसं? विदियादिफालिपमाणं। तं जहा—अधापवत्तभागहारमेत्तपढमफालीहिंतो जदि एगं पढमसेसपमाणं लब्भदि तो उवरिमविरलणमेत्तपढमफालीसु किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए अधापवत्तभागहारेण ओवट्टिदउवरिमविरलणमेत्ता पढमसेसा लब्भंति ३।

§ ३३२. संपहि विदियादिसेसं पढमफालिपमाणेण कस्सामो। तं जहा—एगविदियादिसेसादो जदि रूवूणअधापवत्तभागहारमेत्तपढमफालीओ लब्भंति तो सेढीए असंखे०भागमेत्तविदियादिसेसेसु केत्तियाओ लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए रूवूणअधापवत्तेण गुणिदसेढीए असंखे०भागमेत्ताओ पढमफालीओ लब्भंति ४।

§ ३३३. संपहि विदियादिसेसं सयलपक्खेवपमाणेण कस्सामो। तं जहा—अधापवत्तभागहारमेत्तसेसाणं जदि रूवूणअधापवत्तभागहारमेत्तसयलपक्खेवा लब्भंति तो सेढीए असंखे०भागमेत्तसेसाणं केत्तिए सयलपक्खेवे लभामो त्ति अधापवत्तेण सेढीए

---

§ ३३१. अब प्रथम फालियोंको प्रथम शेषके प्रमाणसे करते हैं।

शंका—शेष किसे कहते हैं?

समाधान—दूसरी आदि फालियोंके प्रमाणको शेष कहते हैं। यथा अधःप्रवृत्तभागहार प्रमाण प्रथम फालियोंके जोड़ने पर यदि एक बार प्रथम शेषका अर्थात् प्रथम फालिके साथ शेष फालियोंका प्रमाण प्राप्त होता है तो उपरिम विरलन प्रमाण प्रथम फालियोंमें क्या प्राप्त होगा इस प्रकार त्रैराशिक करके फल राशिसे गुणित इच्छाराशिमें प्रमाण राशिका भाग देने अधःप्रवृत्तभागहारसे भाजित उपरिम विरलनप्रमाण प्रथम शेष प्राप्त होते हैं ३।

उदाहरण—अधःप्रवृत्त भागहार ९ है। इतनी बार प्रथम फालियोंके जोड़ने पर प्रथम आदि सब फालियोंका जोड़ ४३०४६७२१ प्राप्त होता है, अतः उपरिम विरलन ३६ बार प्रथम फालियोंके जोड़नेसे ३६ में ९ का भाग देने पर लब्ध ४ बार प्रथम शेष प्राप्त होंगे।

§ ३३२, अब द्वितीयादि शेषको प्रथम फालिके प्रमाणसे करते हैं। यथा एक द्वितीयादि शेषसे यदि एक कम अधःप्रवृत्त भागहार प्रमाण प्रथम फालियाँ प्राप्त होती हैं तो जगश्रेणिके असंख्यातवें भागप्रमाण द्वितीयादि शेषोंमें कितनी प्रथम फालियाँ प्राप्त होंगी इस प्रकार त्रैराशिक करके फलराशिसे गुणित इच्छाराशिमें प्रमाणराशिका भाग देने पर एक कम अधःप्रवृत्तभागहारसे गुणित जगश्रेणिका असंख्यातवां भाग प्राप्त हो उतनी प्रथम फालियाँ प्राप्त होती हैं ४।

उदाहरण—दूसरी फालिसे लेकर शेष सब फालियां द्वितीयादि शेष कहलाती हैं। अंकसंदृष्टिसे इसका प्रमाण ३८२६३७५२ है। इसमें ४७८२९६९ के बराबर एक कम अधप्रवृत्त-भागहार ८ प्रमाण प्रथम फालियां प्राप्त होती हैं अतः उपरिम विरलन ३६ बार प्रथम शेषोंमें ८×३६=२८८ प्रथम फालियाँ प्राप्त होंगी।

§ ३३३. अब द्वितीयादि शेषको सकल प्रक्षेपके प्रमाणसे करते हैं। यथा—अधःप्रवृत्त भागहार प्रमाण द्वितीयादि शेषोंके यदि एक कम अधःप्रवृत्तभागहार प्रमाण सकल प्रक्षेप प्राप्त होते हैं तो जगश्रेणिके असंख्यातवें भागप्रमाण शेषोंके कितने सकल प्रक्षेप प्राप्त होंगे

असंखे०भागं खंडेदूण तत्थेगखंडे रूवूणअधापवत्तेण गुणिदे सयलपक्खेवा लब्भंति ५।

§ ३३४. संपहि विदियादिसेसं पढमसेसपमाणेण कस्सामो। एत्थ जाणिदूण तेरासियं कायव्वं ६।

§ ३३५. संपहि सयलपक्खेवम्मि पढमफालिमवणिय अवणिदसेसमधापवत्तभागहारं विरलिय समखंडं कादूण दिण्णे सयलपक्खेवमस्सिदूण विदियफालिपमाणं पावदि। पुणो एदेण पमाणेण सेढीए असंखे०भागमेत्तसव्वसेसेसु अवणिदूण पुध दुवेदव्वं। एसा अवणेदूण पुध दुविदा विदिया फाली पढमफालीए अधापवत्तभागहारेण खंडिदाए तत्थ एगखंडेणूणा। संपहि एदं विदियफालिदव्वं पढमफालिपमाणेण कस्सामो। तं जहा—अधापवत्तभागहारमेत्तविदियफालीणं जदि रूवूणअधापवत्तमेत्तपढमफालीओ लब्भंति तो सेढीए असंखे०भागमेत्तविदियफालीसु केत्तियाओ पढमफालीओ लभामो

इस प्रकार त्रैराशिक करके अधःप्रवृत्त भागहारका जगश्रेणिके असंख्यातवें भागमें भाग देकर जो एक भाग प्राप्त हो उसका एक कम अधःप्रवृत्त भागहारसे गुणा करने पर जितना लब्ध आवे उतने सकल प्रक्षेप प्राप्त होते हैं ५।

उदाहरण—अधःप्रवृत्त भागहार ९ है और द्वितीयादि शेष ३८२६३७५२ है। इसे ९ से गुणा करने पर ३४४३७३७६८ होते हैं। इस राशिमें सकल प्रक्षेप ८ प्राप्त होते हैं। यह ८ एक कम अधःप्रवृत्त भागहारप्रमाण है अतः जगश्रेणिके असंख्यातवें भाग ३६ बार द्वितीयादि शेषोंमें ३२ सकल प्रक्षेप प्राप्त होंगे।

§ ३३४. अब द्वितीयादि शेषको प्रथम शेषके प्रमाणसे करते हैं। यहां जान कर त्रैराशिक करना चाहिये ६।

उदाहरण—प्रथमादि शेष और सकल प्रक्षेपका एक ही अर्थ है अतः अधःप्रवृत्त भागहार ९ प्रमाण द्वितीयादि शेषोंमें ८ प्रथम शेष प्राप्त होंगे और इसी हिसाबसे जगश्रेणिके असंख्यातवें भाग ३६ प्रमाण द्वितीयादि शेषोंमें ३२ प्रथम शेष प्राप्त होंगे। त्रैराशिकके क्रमसे इसका यों कथन होगा—अधःप्रवृत्तभागहार प्रमाण द्वितीयादि शेषोंके यदि एक कम अधःप्रवृत्तभागहार प्रमाण प्रथम शेष प्राप्त होंगे तो जगश्रेणिके असंख्यातवें भागप्रमाण द्वितीयादि शेषोंके कितने प्रथम शेष प्राप्त होंगे। इसप्रकार त्रैराशिक करने पर अधःप्रवृत्त भागहारका जगश्रेणिके असंख्यातवें भागमें भाग देकर जो एक भाग लब्ध आवे उसे एक कम अधःप्रवृत्तभागहारसे गुणा करने पर प्रथम शेषोंका प्रमाण प्राप्त होता है।

§ ३३५. अब सकल प्रक्षेपमेंसे प्रथम फालिको निकालकर निकालनेके बाद जो शेष बचे उसे अधःप्रवृत्तभागहार प्रमाण विरलनोंके ऊपर समान खण्ड करके देने पर सकल प्रक्षेपकी अपेक्षा प्रत्येक एक विरलनके प्रति दूसरी फालिका प्रमाण प्राप्त होता है। फिर इस प्रमाणको जगश्रेणिके असंख्यातवें भागप्रमाण सब शेषोंमेंसे घटाकर अलग स्थापित करना चाहिये। यह घटाकर अलग स्थापित की गई दूसरी फालि है जो प्रथम फालिमें अधःप्रवृत्त भागहारका भाग देने पर जो एक भाग प्राप्त हो उतना प्रथम फालिसे न्यून है। अब इस दूसरी फालिके द्रव्यको पहली फालिके प्रमाणसे करते हैं। यथा—अधःप्रवृत्तभागहारप्रमाण दूसरी फालियोंकी यदि एक कम अधःप्रवृत्तभागहार प्रमाण प्रथम फालियां प्राप्त होती हैं तो जगश्रेणिके असंख्यातवें भागप्रमाण दूसरी फालियोंमें कितनी प्रथम फालियाँ प्राप्त होंगी ? इस

त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए पढमफालिपमाणमागच्छदि ७।

§ ३३६. संपहि विदियफालिदव्वं सेसपमाणेण कस्सामो। तं जहा—रूवूण-अधापवत्तमेत्तविदियफालीणं जदि एगं सेसं पमाणं लब्भदि तो सेढीए असंखे०भाग-मेत्तविदियफालीसु किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए सेसपमाण-मागच्छदि ८।

§ ३३७. संपहि विदियफालिं सगलपक्खेवपमाणेण कस्सामो। तं जहा—अधापवत्तभागहारवग्गमेत्तविदियफालीणं जदि रूवूणअधापवत्तभागहारमेत्तसयलपक्खेवा लब्भंति तो सेढीए असंखे०भागमेत्तविदियफालीणं किं लभामो त्ति पमाणेण फल-गुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए अधापवत्तभागहारवग्गेण सेढीए असंखे०भागं खंडेदूण तत्थ लद्धेगखंडे रूवूणअधापवत्तभागहारेण गुणिदे जत्तियाणि रूवाणि तत्तियमेत्ता सयल-पक्खेवा लब्भंति ९।

प्रकार त्रैराशिक करके फलराशिसे गुणित इच्छाराशिमें प्रमाणराशिका भाग देने पर प्रथम फालियोंका प्रमाण प्राप्त होता है ७।

उदाहरण—सकल प्रक्षेप ४३०४६७२१—४७८२९६९, प्रथम फालि ३८२६३७५२, अधःप्रवृत्तभागहार ९, दूसरी फालि ४२५१५२८, जगश्रेणिका असंख्यातवाँ भाग ३६।

४२५१५२८/१, ४२५१५२८/१, ४२५१५२८/१, ४२५१५२८/१, ४२५१५२८/१, ४२५१५२८/१,

४२५१५२८/१, ४२५१५२८/१, ४२५१५२८/१

अब जगश्रेणिके असंख्यातवें भाग प्रमाण ३६ बार सब शेष स्थापित करो और प्रत्येक उसमेंसे दूसरी फालि ४२५१५२८ को घटाकर अलग रखो। अब इन सब दूसरी फालियोंको त्रैराशिक विधिसे प्रथम फालिरूपसे किया जाता है तो ३६ दूसरी फालियोंकी ३२ प्रथम फालियाँ बनती हैं।

§ ३३६. अब दूसरी फालिके द्रव्यको शेषके प्रमाणसे करते हैं। यथा—एक कम अधः-प्रवृत्तप्रमाण द्वितीय फालियोंका यदि एक शेष प्रमाण प्राप्त होता है तो जगश्रेणिके असंख्यातवें भागप्रमाण द्वितीय फालियोंमें कितने शेष प्राप्त होंगे इस प्रकार त्रैराशिक करके फलराशिसे गुणित इच्छाराशिमें प्रमाणराशिका भाग देने पर शेषका प्रमाण आता है ८।

उदाहरण—एक कम अधःप्रवृत्त प्रमाण ८, द्वितीय फालि ४२५१५२८, शेषका प्रमाण ३४०१२२३४, जगश्रेणिके असंख्यातवें भाग प्रमाण ३६ यदि ८×४२५१४२८=३४०१२३३४, ३६×४२५१५२८ बराबर होंगे ३६/८ × ६४२५१५२८, अर्थात ४½ शेष।

§ ३३७. अब दूसरी फालिको सकल प्रक्षेपके प्रमाणरूपसे करते हैं। यथा—अधः-प्रवृत्त भागहारके वर्गप्रमाण द्वितीय फालियोंके यदि एक कम अधःप्रवृत्त भागहारप्रमाण सकल प्रक्षेप प्राप्त होते हैं तो जगश्रेणिके असंख्यातवें भागप्रमाण द्वितीय फालियोंके कितने सकल प्रक्षेप प्राप्त होंगे इस प्रकार त्रैराशिक करके फलराशिसे गुणित इच्छाराशिमें प्रमाण-राशिका भाग देने पर, अधःप्रवृत्तभागहारके वर्गद्वारा जगश्रेणिके असंख्यातवें भागको भाजित करके वहाँ जो एक भाग प्राप्त हो उसे एक कम अधःप्रवृत्तभागहारसे गुणित करने पर, जितनी संख्या आवे उतने सकल प्रक्षेप प्राप्त होते हैं ९।

§ ३३८. संपहि विदियफालिदव्वे पढमफालिदव्वम्मि सोहिदे सुद्धसेसं पढमफालिपक्खेवविसेसो णाम। संपहि एदे विसेसा पुव्विल्लकिरियाए समुप्पण्णा उवरिमविरलणाए सेढीए असंखे०भागमेत्ता अत्थि। संपहि एदे अवणिदविसेसे पढमफालिपमाणेण कस्सामो। तं जहा—अधापवत्तभागहारमेत्तपढमफालिविसेसाणं जदि एगा पढमफाली लब्भदि तो सेढीए असंखे०भागमेत्तविसेसेसु केत्तियाओ पढमफालीओ लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए पढमफालीओ लब्भंति १०।

§ ३३९. संपहि सयलपक्खेवपमाणेण कस्सामो। तं जहा—अधापवत्तभागहारवग्गमेत्तविसेसाणं जदि एगो सयलपक्खेवो लब्भदि तो सेढीए असंखे०भागमेत्तविसेसाणं केत्तियसयलपक्खेवे लभामो त्ति अधापवत्तभागहारवग्गेण सेढीए असंखे०भागे खंडिदे तत्थ एगखंडमेत्ता सयलपक्खेवा लब्भंति ११।

§ ३४०. संपहि ते विसेसे विदियफालिपमाणेण कस्सामो। तं जहा—रूवूणअधापवत्तभागहारमेत्तविसेसेहिंतो जदि एगा विदियफाली लब्भदि तो सेढीए

उदाहरण—अधःप्रवृत्तभागहार ९ का वर्ग ८१; ४२५१५२८×८१=३४४३७३७६८=८×४३०४६७२१;

$\frac{३६}{८१}$८×४३०४६७२१=$\frac{३६×८}{८१}$ सकल प्रक्षेप।

§ ३३८. अब दूसरी फालिके द्रव्यको पहली फालिके द्रव्यमेंसे घटा देने पर जो शेष रहे वह प्रथम फालिसम्बन्धी प्रक्षेपविशेष है। अब ये विशेष पूर्वोक्त विधिसे उत्पन्न करने पर उपरिम विरलनमें जगश्रेणिके असंख्यातवें भागप्रमाण होते हैं। अब इन घटाये हुए विशेषोंको प्रथम फालिके प्रमाणरूपसे करते हैं। यथा—अधःप्रवृत्त भागहारप्रमाण विशेषोंकी यदि एक प्रथम फालि प्राप्त होती है तो जगश्रेणिके असंख्यातवें भागप्रमाण विशेषोंकी कितनी प्रथम फालियाँ प्राप्त होंगी इस प्रकार त्रैराशिक करके फलराशिसे गुणित इच्छाराशिमें प्रमाणराशिका भाग देने पर जो लब्ध आवे उतनी प्रथम फालियाँ प्राप्त होती हैं १०।

उदाहरण—प्रथम फालि ४७८२९६९; द्वितीय फालि ४२५१५२८; विशेष ४७८२९६९–४२५१५२८=५३१४४१; यदि ९×५३१४४१=४७८२९६९ (प्रथम फालि) तो ३६×५३१४४१=$\frac{३६}{९}$ प्रथमफालि अर्थात् ४ प्रथमफालि प्राप्त होंगी।

§ ३३९. अब दूसरी फालिके द्रव्यको पहली फालिके द्रव्यमेंसे घटा देने पर जो शेष रहे उस विशेषको सकल प्रक्षेपके प्रमाणरूपसे करते हैं। यथा—अधःप्रवृत्तभागहारके वर्गप्रमाण विशेषोंका यदि एक सकल प्रक्षेप प्राप्त होता है तो जगश्रेणिके असंख्यातवें भागप्रमाण विशेषोंके कितने सकल प्रक्षेप प्राप्त होंगे इस प्रकार अधःप्रवृत्तभागहारके वर्गसे जगश्रेणिके असंख्यातवें भागको खंडित करने पर एक भागप्रमाण सकल प्रक्षेप प्राप्त होते हैं ११।

उदाहरण—अधःप्रवृत्तभागहार ९ का वर्ग ८१, विशेष ५३१४४१; यदि ८१×५३१४४१ का एक सकल प्रक्षेप ४३०४६७२१ होता है तो जगश्रेणिके असंख्यातवें भाग ३६ के कितने सकलप्रक्षेप होंगे? $\frac{३६}{८१}$ सकलप्रक्षेप होंगे।

§ ३४०. अब उन्हीं विशेषोंको द्वितीय फालिके प्रमाणरूपसे करते हैं। यथा—एक कम अधःप्रवृत्त भागहारप्रमाण विशेषोंकी यदि एक द्वितीय फालि होती है तो जगश्रेणिके असंख्यातवें

असं०भागमेत्तविसेसाणं केत्तियाओ लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए रूवूणअधापवत्तेण खंडिदसेढीए असंखे०भागमेत्ताओ विदियफालीओ लब्भंति १२।

§ ३४१. संपहि सेढीए असंखे०भागमेत्तसयलपक्खेवेसु पढम-विदियफालीए अवणेदूण पुणो अवणिदसेसं विदियफालिपमाणेण कस्सामो। तं जहा—एगसेस-पमाणम्मि जदि रूवूणअधापवत्तमेत्तविदियफालीओ लब्भंति तो सेढीए असंखे०-भागमेत्तसेसाणं केत्तियाओ विदियफालीओ लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए सेढीए असंखे०भागमेत्ताओ विदियफालीओ होंति १३।

§ ३४२. संपहि तं चेव विदियसेसपमाणेण कस्सामो। तं जहा—अधापवत्त-भागहारमेत्तसेसाणं जदि रूवूणअधापवत्तमेत्तविदियसेसपमाणं लब्भदि तो सेढीए असंखे०भागमेत्तसेसाणं किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए अधापवत्तेण सेढीए असंखे०भागे खंडिदे तत्थेगखंडं रूवूणअधापवत्तेण गुणिदमेत्तं होदि १४।

भागप्रमाण विशेषोंकी कितनी द्वितीय फालियाँ प्राप्त होंगी इस प्रकार फलराशिसे गुणित इच्छाराशिमें प्रमाणराशिका भाग देने पर एक कम अधःप्रवृत्तभागहारसे भाजित जगश्रेणिके असंख्यातवें भागप्रमाण द्वितीय फालियाँ प्राप्त होंगी।

उदाहरण—एक कम अधःप्रवृत्तभागहार ९-१=८; विशेष=५३१४४१; यदि ८X ५३१४४१=द्वितीयफालि ४२५१५२८ जगश्रेणिका अ० भा० ३६X५३१४४१=$\frac{३६}{८}$ द्वितीय फालियाँ।

§ ३४१. अब जगश्रेणिके असंख्यातवें भागप्रमाण सकल प्रक्षेपोंमेंसे प्रथम और द्वितीय फालियोंको घटाकर फिर जो शेष रहे उसे दूसरी फालिके प्रमाणरूपसे करते हैं। यथा—एक बार शेष रहे प्रमाणमें यदि एक कम अधःप्रवृत्तभागहारप्रमाण दूसरी फालियाँ प्राप्त होती हैं तो जगश्रेणिके असंख्यातवें भागप्रमाण शेषोंमें कितनी दूसरी फालियाँ प्राप्त होंगी इस प्रकार फलराशिसे गुणित इच्छाराशिमें प्रमाणराशिका भाग देने पर एक कम अधःप्रवृत्त भागहारसे गुणित जगश्रेणिके असंख्यातवें भागप्रमाण दूसरी फालियाँ प्राप्त होती हैं १२।

उदाहरण—सकल प्रक्षेप ४३०४६७२१; प्रथमफालि ४७८२९६९; द्वितीयफालि ४२५१४२८; ४३०४६७२१-(४७८२९६९+४२५१५२८) = ३४०१२२२४; यदि ३४०१२२२४=८X ४२५१५२८ द्वितीयफालि तो जगश्रेणिका असंख्यातवाँ भाग ३६X३४०१२२२४=३६X८ द्वितीय फालियाँ।

§ ३४२. अब उसीको द्वितीय शेषके प्रमाणरूपसे करते हैं। यथा—अधःप्रवृत्तभाग-हारप्रमाण शेषोंके यदि एक कम अधःप्रवृत्तभागहारप्रमाण द्वितीय शेष प्राप्त होते हैं तो जग-श्रेणिके असंख्यातवें भागप्रमाण शेषोंके कितने द्वितीय शेष प्राप्त होंगे इस प्रकार फलराशिसे गुणित इच्छाराशिमें प्रमाणराशिका भाग देने पर अधःप्रवृत्तभागहारसे जगश्रेणिके असंख्यातवें भागको भाजित करके वहाँ जो एक भाग प्राप्त हो उसे एक कम अधःप्रवृत्तभागहारसे गुणित करने पर जो लब्ध आवे उतने द्वितीय शेष होंगे १४।

उदाहरण—पूर्वोक्त शेष ३४०१२२२४; सकलप्रक्षेप ४३०४६७२१—प्रथमफालि ४७८२९६९ =३८२६३७५२ द्वितीय शेष; यदि ९X३४०१२२२४=८X३८२६३७५२ तो ३६X

§ ३४३. एवं सेसदुसमऊणावलियमेत्तफालीणं जाणिदूण एसा परूवणा कायव्वा। संपहि चरिमसमयादो हेट्ठा ओदारिज्जमाणे जो कमो तं वत्तइस्सामो। तं जहा—दुसमयूणआवलियाए ओवट्टिदअधापवत्तभागहारं विरलिय पुणो एगसयलपक्खेवे समखंडं करिय दिण्णे तत्थ एगखंडं दुसमयूणावलियाए गलिदद्व्वं होदि।

§ ३४४. संपहि अणेण पमाणेण घोलमाणजहण्णजोगपक्खेवभागहारमेत्तसगलपक्खेवेसु अवणयणं कायव्वं। अवणिदसेसं चरिम-दुचरिमफालीणं पमाणं होदि।

§ ३४५. संपहि हेट्ठा अधापवत्तभागहारं विरलेदूण एगचरिम-दुचरिमफालिपमाणे समखंडं कादूण दिण्णे तत्थेगेगरूवस्स दुचरिमफालिपमाणं पावदि। पुणो एदम्मि सेढीए असंखेज्जदिभागमेत्तचरिम-दुचरिमफालीसु अवणिदे सेसं चरिमफालिपमाणेण चेट्ठदि।

३४०१२२२४ = ३२ द्वितीय शेष।

§ ३४३. इसी प्रकार शेषकी दो समयकम आवलिप्रमाण फालियोंको जान कर यह कथन करना चाहिये। अब अन्तिम समयसे नीचे उतारनेका जो क्रम है उसे बतलाते हैं। यथा—दो समयकम एक आवलिका अधःप्रवृत्तभागहारमें भाग दो जो लब्ध आवे उसका विरलन करो फिर उसपर एक सकल प्रक्षेपको समान खण्ड करके दो, इस प्रकार जो एक खण्ड प्राप्त हो उतना दो समयकम एक आवलिमें गलनेवाले द्रव्यका प्रमाण है।

उदाहरण—आवलिका प्रमाण ८ समय; दो समयकम आवलि ८ − २=६; अध.प्रवृत्तभागहार ९; $\frac{९}{६} = \frac{३}{२}$; १$\frac{१}{२}$; सकलप्रक्षेप ४३०४६७२१; $\frac{२८६९७८१४}{१}$ $\frac{१४३४८९०७}{२}$, दो समय कम एक आवलिमें गलनेका प्रमाण २८६९७८१४।

§ ३४४. अब इस प्रमाणको जघन्य परिणाम योगस्थानके प्रक्षेप भागहारप्रमाण सकल प्रक्षेपोंमेंसे घटा देना चाहिये। घटाने पर जो शेष रहे वह चरम और द्विचरम फालियोंका प्रमाण होता है।

उदाहरण—४३०४६७२१ − २८६९७८१४ = १४३४८९०७ चरम और द्विचरम फालियोंका प्रमाण।

§ ३४५. अब नीचे अधःप्रवृत्तभागहारका विरलनकर उसपर एक चरम और द्विचरम फालिके प्रमाणको समान खण्ड करके देयरूपसे देनेपर वहां प्रत्येक एकके प्रति द्विचरम फालिका प्रमाण प्राप्त होता है। फिर इसे जगश्रेणिके असंख्यातवें भागप्रमाण चरम और द्विचरम फालियोंमेंसे घटा देने पर शेष अन्तिम फालियोंका प्रमाण रहता है।

उदाहरण—अधःप्रवृत्तभागहारका प्रमाण ९; चरम और द्विचरम फालिका प्रमाण १४३४८९०७ $\frac{१५९४३२३}{१}$ $\frac{१५९४३२३}{१}$ $\frac{१५९४३२३}{१}$ $\frac{१५९४३२३}{१}$ $\frac{१५९४३२३}{१}$ $\frac{१५९४३२३}{१}$ $\frac{१५९४३२३}{१}$ $\frac{१५९४३२३}{१}$ $\frac{१५९४३२३}{१}$ द्विचरम फालिका प्रमाण १५९४३२३; चरमफालि = १४३४८९०७ − १५९४३२३ = १२७५४५८४; जगश्रेणिके असंख्यातवें भाग ३६ प्रमाण चरम द्विचरम फालि द्रव्य ३६ × १४३४८९०७ मेंसे जगश्रेणिप्रमाण द्विचरम फालिका द्रव्य ३६ × १५९४३२३ घटा देने पर जगश्रेणिप्रमाण अन्तिम फालियोंका द्रव्य होता है ३६ × १२७५४५८४।

§ ३४६. संपहि इममवणेदूण पुध ट्ठविददुचरिमफालिं चरिमफालिपमाणेण कस्सामो। तं जहा—रूवूणअधापवत्तमेत्तदुचरिमफालीणं जदि एगा चरिमफाली लब्भदि तो सेढीए असंखे०भागमेत्तदुचरिमाणं केत्तियाओ चरिमफालीओ लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए रूवूणअधापवत्तभागहारेण खंडिदसयलपक्खेवभागहारमेत्ताओ चरिमफालीओ लब्भंति १।

§ ३४७. संपहि दुचरिमफालियाओ चरिम-दुचरिमपमाणेण कस्सामो। तं जहा—अधापवत्तमेत्तदुचरिमफालीणं जदि एगं चरिम-दुचरिमफालिपमाणं लब्भदि तो सेढीए असंखे०भागमेत्तदुचरिमाणं केत्तियाओ चरिम-दुचरिमफालीओ लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए चरिम-दुचरिमफालिपमाणं लब्भदि २।

§ ३४८. संपहि पुध ट्ठविदसेढीए असंखे०भागमेत्तचरिमफालीओ दुचरिमफालिपमाणेण कस्सामो। तं जहा—एगचरिमफलियाए जदि रूवूणअधापवत्तभागहारमेत्तदुचरिमफालीओ लब्भंति तो सेढीए असंखेज्जदिभागमेत्त-चरिमफालीणं किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए दुचरिमफालीओ लब्भंति ३।

---

§ ३४६. अब इसे घटाकर पृथक् स्थापित द्विचरम फालिको अन्तिम फालिके प्रमाण-रूपसे करते हैं। यथा—एक कम अधःप्रवृत्त भागहारप्रमाण द्विचरम फालियोंकी यदि एक चरम फालि प्राप्त होती है तो जगश्रेणिके असंख्यातवें भागप्रमाण द्विचरम फालियोंकी कितनी चरम फालियां प्राप्त होंगी इस प्रकार त्रैराशिक करके फलराशिसे गुणित इच्छाराशिमें प्रमाणराशिका भाग देनेपर एक कम अधःप्रवृत्तभागहारसे भाजित सकल प्रक्षेपके भागहार-प्रमाण अन्तिम फालियां प्राप्त होती हैं १।

उदाहरण—एक कम अधःप्रवृत्तभागहार ९−१=८; द्विचरमफालि १५९४३२३; यदि ८×१५९४३२३=१२७५४५८४ चरम फालि तो सकल प्रक्षेपका भागहार ३६×१५९४३२३= $\frac{३६}{८}$ चरम फालियां।

§ ३४७. अब द्विचरम फालियोंको चरम और द्विचरम फालियोंके प्रमाणरूपसे करते हैं। यथा—अधःप्रवृत्तभागहारप्रमाण द्विचरम फालियोंकी यदि एक चरम और द्विचरम फालिका प्रमाण प्राप्त होता है तो जगश्रेणिके असंख्यातवें भागप्रमाण द्विचरम फालियों में कितनी चरम और द्विचरम फालियां प्राप्त होंगी, इसप्रकार त्रैराशिक करके फलराशिसे गुणित इच्छाराशिमें प्रमाणराशिका भाग देनेपर चरम और द्विचरम फालियोंका प्रमाण प्राप्त होता है २।

उदाहरण—अधःप्रवृत्तभागहार ९; द्विचरम फालि १५९४३२३; यदि ९×१५९४३२३= चरम और द्विचरम फालि १४३४८९०७ के तो ३६×१५९४३२३= $\frac{३६}{९}$ चरम और द्विचरम फालि।

§ ३४८. अब पृथक् स्थापित जगश्रेणिके असंख्यातवें भागप्रमाण चरम फालियोंको द्विचरमफालियोंके प्रमाणरूपसे करते हैं। यथा—एक अन्तिम फालिमें यदि एक कम अधः-प्रवृत्तभागहारप्रमाण द्विचरम फालियां प्राप्त होती हैं तो जगश्रेणिके असंख्यातवें भागप्रमाण चरम फालियोंमें क्या प्राप्त होगा इस प्रकार फलराशिसे गुणित इच्छाराशिमें प्रमाणराशिका भाग देने पर द्विचरम फालियाँ प्राप्त होती हैं ३।

§ ३४९. संपहि ताओ चेव चरिम-दचरिमपमाणेण कस्सामो। तं जहा—अधापवत्तभागहारमेत्तचरिमफालीणं जदि रूवूणअधापवत्तमेत्तचरिम-दुचरिमफालीओ लब्भंति तो सेढीए असंखे०भागमेत्तचरिमफालीणं केत्तियाओ चरिम-दुचरिमफालीओ[1] लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए चरिम-दुचरिमफालिपमाणं लब्भदि४।

§ ३५०. संपहि तिसमयूणावलियाए ओवट्टिदअधापवत्तभागहारं विरिलिय एगसगलपक्खेवे समखंडं कादूण दिण्णे एगसगलपक्खेवमस्सिदूण तिसमयूणावलियाए गलिददव्वं होदि। पुणो एत्थ एगरूवधरिदपमाणे घोलमाणजहण्णजोगपक्खेव-भागहारभूदसेढीए असंखे०भागमेत्तसगलपक्खेवेसु अवणिदे अवणिदसेसं चरिम-दुचरिम-तिचरिमफालिपमाणं होदूण चिट्ठदि। संपहि तिचरिमफालीए इच्छिज्जमाणाए अधापवत्तं विरलिय चरिम-दुचरिम-तिचरिमफालीसु समखंडं कादूण दिण्णासु तत्थतणएगेगरूवस्स तिचरिमफालिपमाणं पावदि। संपहि एसा तिचरिमफाली सेढीए असंखेज्जदिभागमेत्तचरिम-दुचरिम-तिचरिमफालीसु अवणेदव्वा।

उदाहरण—यदि चरमफालि १२७५४५८४ की ९−१ =८× द्विचरमफालि १५९४३२३ प्राप्त होती हैं तो ३६×१२७५४५८४ की $\frac{३६}{८}$ द्विचरमफालि प्राप्त होंगी।

§ ३४९. अब उन्हींको अर्थात् जगश्रेणिके असंख्यातवें भागप्रमाण चरमफालियोंको चरम और द्विचरम फालियोंके प्रमाणरूपसे करते हैं। यथा—अधःप्रवृत्तभागहारप्रमाण चरम फालियोंमें यदि एक कम अधःप्रवृत्तभागहारप्रमाण चरम और द्विचरम फालियां प्राप्त होती हैं तो जगश्रेणिके असंख्यातवें भागप्रमाण चरम फालियोंमें कितनी चरम और द्विचरम फालियां प्राप्त होंगी इस प्रकार त्रैराशिक करके फलराशिसे गुणित इच्छाराशिमें प्रमाणराशिका भाग देने पर चरम और द्विचरम फालियोंका प्रमाण प्राप्त होता है ४।

उदाहरण—यदि अधःप्रवृत्तभागहार ९, चरम फालियों १२७५४५८४ की एक कम अधःप्रवृत्तभागहार ९−१=८ चरम और द्विचरम फालि १४३४८६०७ प्राप्त होती हैं तो जगश्रेणिके असंख्यातवें भाग प्रमाण ३६ चरमफालि १२७५४५८४ की $\frac{३६}{९}$×८ चरम द्विचरम फालि प्राप्त होंगी अर्थात ३२ चरम और द्विचरमफालि प्राप्त होंगी।

§ ३५०. अब तीन समय कम एक आवलिसे भाजित अधःप्रवृत्तभागहारका विरलन करके उसपर एक सकल प्रक्षेपको समान खण्ड करके देयरूपसे देनेपर एक सकल प्रक्षेपके आश्रयसे तीन समयकम एक आवलिके भीतर गलनेवाले द्रव्यका प्रमाण प्राप्त होता है। फिर यहां विरलनके एक अंकपर प्राप्त प्रमाणको जघन्य परिणामयोगके प्रक्षेपभागहाररूप जगश्रेणिके असंख्यातवें भागप्रमाण सकल प्रक्षेपोंमेंसे घटा देने पर जो शेष रहे उतना चरम, द्विचरम और त्रिरचम फालियोंका प्रमाण प्राप्त होता है। अब त्रिचरमफालिको लाना इष्ट है अतः अधःप्रवृतभागहारका विरलन करके और उसपर अन्तिम, द्विचरम और त्रिचरम फालियोंको समान खण्ड करके देयरूपसे देनेपर वहां प्रत्येक एकके प्रति त्रिचरम फालियोंका प्रमाण प्राप्त होता है। अब इस त्रिचरमफालिको जगश्रेणिके असंख्यातवें भागप्रमाण चरम, द्विचरम, और त्रिचरमफालियोंमेंसे घटा देना चाहिये। इस प्रकार घटाकर जो शेष रहे वह चरम और द्विचरम फालियोंका प्रमाण होता है। अब घटाकर अलग

---

१. आ०प्रतौ 'चरिमफालीओ' इति पाठः।

अवणिदसेसं चरिम-दुचरिमफालिपमाणं होदि । संपहि अवणेदूण पुध ट्ठविदतिचरिमफालिं दुचरिमफालिपमाणेण कस्सामो । तं जहा—रूवूणअधापवत्तमेत्ततिचरिमफालीणं जदि अधापवत्तमेत्तदुचरिमफालीओ लब्भंति तो सेढीए असंखे०भागमेत्ततिचरिमफालीणं केत्तियाओ दुचरिमफालीओ लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए दुचरिमपमाणं होदि ५ ।

§ ३५१. संपहि तिचरिमफालीओ चरिमफालिपमाणेण कस्सामो । तं जहा—रूवूणअधापवत्तभागहारवग्गमेत्ततिचरिमाणं जदि अधापवत्तभागहारमेत्तचरिमफालीओ लब्भंति तो सेढीए असंखे०भागमेत्ततिचरिमफालीणं केत्तियाओ चरिमफालीओ लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए चरिमफालीओ लब्भंति ६ ।

§ ३५२. संपहि तिचरिमफालीओ चरिम-दुचरिमपमाणेण कस्सामो । तं जहा—रूवूणअधापवत्तमेत्ततिचरिमाणं जदि एगं चरिम-दुचरिमपमाणं लब्भदि तो सेढीए

स्थापित त्रिरचम फालिको द्विचरम फालिके प्रमाणरूपसे करते हैं। यथा—एक कम अधःप्रवृत्तभागहारप्रमाण त्रिचरम फालियोंमें यदि अधःप्रवृत्तभागहारप्रमाण द्विचरम फालियां प्राप्त होती हैं तो जगश्रेणिके असंख्यातवें भागप्रमाण त्रिचरम फालियोंमें कितनी द्विचरम फालियां प्राप्त होंगी, इस प्रकार फलराशिसे गुणित इच्छाराशिमें प्रमाणराशिका भाग देनेपर द्विचरम फालियोंका प्रमाण प्राप्त होता है ५ ।

उदाहरण—आवलिकी संदृष्टि ८; अधःप्रवृत्त ९; सकलप्रक्षेप ४३०४६७२१;९ ÷ तीन समय कम आवली ८ − ३ = ५ = $\frac{९}{५}$ भागहार; ४३०४६७२१ ÷ $\frac{९}{५}$ = २३९१४८४५; तीन समय कम एक आवलीमें गलनेवाला द्रव्य २३९१४८४५; तीन चरम समयोंका द्रव्य ४३०४६७२१ − २३९१४८४५ = १९१३१८७६; त्रिचरम समयका द्रव्य १९१३१८७६ ÷ ९ = २१२५७६४, द्विचरम और चरम समयका द्रव्य १९१३१८७६−२१२५७६४ = १७००६११२, द्विचरम समयका द्रव्य १७००६११२ ÷ ९ = १८८९५६८, यदि ९−१ − ८ त्रिचरम समय २१२५७६४ के ९ द्विचरम समय १८८९५६८ प्राप्त होते हैं तो ३६ × २१२५७६४ के $\frac{३६}{८}$ × ८ द्विचरम समय प्राप्त होंगे अर्थात् ३२ द्विचरम समय प्राप्त होंगे ।

§ ३५१. अब त्रिचरम फालियोंको चरम फालियोंके प्रमाण रूपसे करते हैं । यथा—एक कम अधःप्रवृत्त भागहारके वर्गप्रमाण त्रिचरम फालियोंमें यदि अधःप्रवृत्तभागहार प्रमाण अन्तिम फालियां प्राप्त होती हैं तो जगश्रेणिके असंख्यातवें भागप्रमाण त्रिचरम फालियोंमें कितनी चरम फालियां प्राप्त होंगी इस प्रकार त्रैराशिक करके फलराशिसे गुणित इच्छाराशिमें प्रमाणराशिका भाग देने पर चरम फालियां प्राप्त होती हैं ६ ।

उदाहरण—चरम फालिका द्रव्य १७००६११२—१८८९५६८ = १५११६५४४; एक कम अधःप्रवृत्त भागहारका वर्ग (९-१)^{२} = ६४, यदि ६४ त्रिचरम फालि २१२५७६४ की ९ चरमफालि १५११६५४४ प्राप्त होती हैं तो जगश्रेणिके असंख्यातवें भाग ३६ त्रिचरम फालिकी $\frac{३६ \times ९}{६४}$ चरम फालि प्राप्त होंगी ।

§ ३५२. अब त्रिचरम फालियोंको चरम और द्विचरम फालियोंके प्रमाणरूपसे करते हैं । यथा—एक कम अधःप्रवृत्तभागहारप्रमाण त्रिचरम फालियोंमें यदि एक चरम और द्विचरम

असंखे०भागमेत्ततिचरिमाणं किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए चरिम-दुचरिमफालीणं पमाणं लब्भदि ७।

§ ३५३. संपहि दुचरिमफालीए विरलणमेत्ततिचरिमफालीसु सोहिदासु सुद्धसेसं तिचरिमफालिविसेसो[1]। संपहि इमे विसेसे तिचरिमफालिपमाणेण कस्सामो। तं जहा—अधापवत्तमेत्ततिचरिमविसेसाणं जदि एगा तिचरिमफाली लब्भदि तो सेढीए असंखे०भागमेत्ततिचरिमफालिविसेसाणं किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए तिचरिमफालीओ लब्भंति ८।

§ ३५४. संपहि तिचरिमफालिविसेसे दुचरिमफालिपमाणेण कस्सामो। तं जहा—रूवूणअधापवत्तमेत्ततिचरिमफालिविसेसाणं जदि एगा दुचरिमफाली लब्भदि तो सेढीए असंखे०भागमेत्ततिचरिमफालिविसेसाणं किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए दुचरिमफालीओ लब्भंति ९।

फालि प्राप्त होती है तो जगश्रेणिके असंख्यातवें भागप्रमाण त्रिचरम फालियोंमें कितनी चरम और द्विचरम फालियाँ प्राप्त होंगी, इस प्रकार त्रैराशिक करके फलराशिसे गुणित इच्छाराशिमें प्रमाणराशिका भाग देने पर चरम और द्विचरम फालियोंका प्रमाण प्राप्त होता है ७।

उदाहरण—यदि एक कम अधःप्रवृत्त भागहार (९–१)=८; त्रिचरम फालि २१२५७६४; ८×२१२५७६४ की एक चरम और द्विचरम फालि १७००६११२ प्राप्त होती हैं तो ३६×२१२५७६४ के $\frac{३६}{८}$×१७००६११२ अर्थात् ४½ चरम और द्विचरम फालि प्राप्त होंगी।

§ ३५३. अब विरलनमात्र त्रिचरम फालियोंमेंसे द्विचरम फालिके घटा देने पर जो शेष रहे उतना त्रिचरम फालिविशेष प्राप्त होता है। अब इन विशेषोंको त्रिचरम फालिके प्रमाणरूपसे करते हैं। यथा—अधःप्रवृत्तभागहारप्रमाण त्रिचरम फालिविशेषोंमें यदि एक त्रिचरम फालि प्राप्त होती है तो जगश्रेणिके असंख्यातवें भागप्रमाण त्रिचरम फालि विशेषोंमें कितनी त्रिचरम फालियां प्राप्त होंगी, इस प्रकार त्रैराशिक करके फलराशिसे गुणित इच्छाराशिमें प्रमाणराशिका भाग देने पर त्रिचरम फालियां प्राप्त होती हैं ८।

उदाहरण—त्रिचरम फालिविशेष २१२५७६४–१८८९५६८=२३६१९६। यदि ९×२३६१९६ की एक त्रिचरम फालि २१२५७६४ प्राप्त होती है तो ३६×२३६१९६ की $\frac{३६}{९}$× २१२५७६४ अर्थात् ४ त्रिचरम फालि प्राप्त होंगी।

§ ३५४. अब त्रिचरम फालि विशेषोंको द्विचरम फालियोंके प्रमाणरूपसे करते हैं। यथा—एक कम अधःप्रवृत्त भागहार प्रमाण त्रिचरम फालिविशेषोंमें यदि एक द्विचरम फालि प्राप्त होती है तो जगश्रेणिके असंख्यातवें भागप्रमाण त्रिचरम फालिविशेषोंमें कितनी द्विचरम फालियां प्राप्त होंगी, इस प्रकार फलराशिसे गुणित इच्छाराशिमें प्रमाणराशिका भाग देने पर द्विचरम फालियोंका प्रमाण प्राप्त होता है ९।

उदाहरण—एक कम अधःप्रवृत्तभागहार (९–१) ८; त्रिचरमफालिविशेषों ८×२३६१९६ की एक द्विचरम फालि १८८९५६८ प्राप्त होती है तो ३६×२३६१९६ की $\frac{३६}{८}$×१८८९५६८ अर्थात् ४½ द्विचरम फालि प्राप्त होंगी।

---

१. आ०प्रतौ 'सोहिदासु सुद्धसेसं तिचरिमफालिविसेसा' आ०प्रतौ सोहिदाए सुद्धसेसे तिचरिमफालिविसेसो' इति पाठः।

३५५. संपहि ते चेव चरिमफालिपमाणेण कस्सामो । तं जहा—रूवूणअधापवत्तवग्गमेत्ततिचरिमफालिविसेसाणं जदि एगा चरिमफाली लब्भदि तो सेढीए असंखे०भागमेत्ततिचरिमफालिविसेसाणं किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए चरिमफालीओ लब्भंति १० ।

§ ३५६. एवं चरिम-दुचरिम-तिचरिम-चदुचरिमादीणं पि परूवणं करिय सिस्साणं संसकारो उप्पादेदव्वो । संपहि उप्पण्णसंसकारसिस्साणमइसंसकारमुप्पायणट्ठं घोलमाणजहण्णजोगमादिं कादूण जाव सण्णिपंचिंदियपज्जत्तयदउक्कस्सजोगो त्ति ताव एदेसिं सेढीए असंखे०भागमेत्तजोगट्ठाणाणमेगसेढिआगारेण रयणं कादूण पुणो सवेदचरिम-दुचरिमआवलियाणमवगदवेदपढम-विदियआवलियाणं च समयरयणा कायव्वा । एवं काऊण पुणो पुरिसवेदस्स ट्ठाणपरूवणं कस्सामो । तं जहा—जो चरिमसमयसवेदेण जहण्णपरिणामजोगेण बद्धो समयपबद्धो बंधावलियादिक्कंतपढमसमयप्पहुडि परपयडीसु संकंतदुचरिमादिफालिकलावो चरिमफालिमेत्तावसेसो सो जहण्णपदेससंतकम्मट्ठाणं होदि । संपहि एदस्सुवरि एगपरमाणुत्तरादिकमेण ट्ठाणाणि ण उप्पज्जंति, पदेससंकमस्स एगजोगेण बद्धेगसमयपबद्धविसयस्स सव्वजीवेसु समाणत्तादो अवगदवेदम्मि

---

§ ३५५. अब उन्हीं त्रिचरम फालिविशेषोंको चरम फालियोंके प्रमाणरूपसे करते हैं। यथा—एक कम अधःप्रवृत्तभागहारके वर्गप्रमाण त्रिचरम फालिविशेषोंमें यदि एक चरम फालि प्राप्त होती है तो जगश्रेणिके असंख्यातवें भागप्रमाण त्रिचरम फालिविशेषोंमें कितनी अन्तिम फालियां प्राप्त होंगी, इस प्रकार त्रैराशिक करके फलराशिसे गुणित इच्छाराशिमें प्रमाण राशिका भाग देने पर चरम फालियां प्राप्त होती हैं १० ।

उदाहरण—यदि एक कम अधःप्रवृत्तभागहारका वर्ग $(9-1)^2 = 64$; त्रिचरम फालि विशेषों 64×236196 की एक चरम फालि १५११६५४४ प्राप्त होती है तो 36×236196 की $\frac{36}{64} \times 15116544$ अर्थात् $\frac{9}{16}$ चरम फालि प्राप्त होंगी ।

§ ३५६. इस प्रकार चरम, द्विचरम, त्रिचरम और चतुःचरम आदि फालियोंका भी कथन करके शिष्योंमें संस्कार उत्पन्न करना चाहिये । अब जिन शिष्योंमें संस्कार उत्पन्न हो गये हैं उनमें और अधिक संस्कारोंके उत्पन्न करनेके लिये जघन्य परिणाम योगस्थानसे लेकर संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तकके उत्कृष्ट योगके प्राप्त होने तक जगश्रेणिके असंख्यातवें भागप्रमाण इन योगस्थानोंकी एक पंक्तिमें रचना करके फिर सवेद भागकी चरम और द्विचरम आवलियोंके और अपगतवेदकी प्रथम और द्वितीय आवलियोंके समयोंकी रचना करनी चाहिये । ऐसा करनेके बाद अब पुरुषवेदके स्थानोंका कथन करते हैं । यथा–अन्तिम समयवर्ती सवेदीने जघन्य परिणाम योगके द्वारा जो समयप्रबद्ध बांधा उसमेंसे बन्धावलिके बाद प्रथम समयसे लेकर द्विचरम फालि तकका द्रव्य पर प्रकृतियोंमें संक्रान्त होकर जो चरम फालि मात्र शेष रहता है वह जघन्य प्रदेशसत्कर्म है । अब इसके आगे उत्तरोत्तर एक एक परमाणु अधिकके क्रमसे स्थान नहीं उत्पन्न होते हैं, क्योंकि एक योगके द्वारा बांधा गया समयप्रबद्ध-सम्बन्धी प्रदेशसंक्रम अनिवृत्तिकरण गुणस्थानवर्ती सब जीवोंके समान होता है । तथा अपगतवेदीके पुरुषवेदका उदय नहीं होनेसे अधःस्थितिकी निर्जरा नहीं पाई जाती, इसलिये

उदयाभावेण अधट्ठिदीए गलणाभावादो च। तेणेत्थ सांतरट्ठाणाणि चेवुप्पज्जंति। त्ति। चरिमसमयसवेदेण जहण्णजोगट्ठाणादो पक्खेवुत्तरजोगेण परिणमिय बद्धसमयपबद्धेण परपयडीए संकंतदुचरिमादिफालिकलावेण चरिमफालीए धरिदाए अणंताणि ट्ठाणाणि अंतरिदूण अण्णमपुणरुत्तट्ठाणं होदि। एवं णाणाजीवे अस्सिदूण घोलमाणजहण्ण-जोगट्ठाणप्पहुडि पक्खेवुत्तरकमेण परिणमाविय णेदव्वं जाव उक्कस्सजोगट्ठाणे त्ति। एवं णीदे चरिमसमयअणिल्लेविदम्मि घोलमाणजहण्णजोगट्ठाणमादिं कादूण जत्तियाणि जोगट्ठाणाणि तत्तियमेत्ताणि संतकम्मट्ठाणाणि होंति।

❀ चरिमसमयसवेदेण उक्कस्सजोगेण त्ति दुचरिमसमयसवेदेण जहण्णजोगट्ठाणेण त्ति एत्थ जोगट्ठाणमेत्ताणि [संतकम्मट्ठाणाणि] लब्भंति।

§ ३५७. चरिमसमय सवेदेण उक्कस्सजोगेण बद्धचरिम-दुचरिमफालिदव्वं दुचरिम-समयसवेदेण जहण्णजोगेण बद्धसमयपबद्धस्स चरिमफालिदव्वं च घेत्तूण अण्णमपुणरुत्तट्ठाणं होदि। दुचरिमसमयसवेदो जदि जहण्णजोगेण परिणदो होदि तो चरिमसमयसवेदो उक्कस्स-जोगट्ठाणेण ण परिणमदि, संखेज्जेहि वारेहि विणा उक्कस्सजोगट्ठाणेण परिणमण-सत्तीए अभावादो। अह जइ चरिमसमयसवेदो उक्कस्सजोगट्ठाणेण परिणदो होदि तो दुचरिमसमयसवेदो ण जहण्णजोगो, अच्चंताभावेण पडिसिद्धत्तादो त्ति ? ण एस

यहां सान्तर स्थान ही उत्पन्न होते हैं। अब एक ऐसा चरम समयवर्ती सवेदी जीव है जिसे योगस्थानमें प्रक्षेप करनेसे दूसरा योगस्थान प्राप्त हुआ है, उसने उसके द्वारा एक समयप्रबद्धका बन्ध किया। अनन्तर द्विचरम फालिसे लेकर प्रारम्भकी फालि तकके द्रव्यको पर प्रकृतिरूपसे संक्रान्त कर दिया और अन्तिम फालिको धारण करके स्थित है तो उसके अनन्त स्थानोंका अन्तर देकर दूसरा अपुनरुक्त स्थान प्राप्त होता है। इस प्रकार नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्य परिणाम योगस्थानसे लेकर उत्कृष्ट योगस्थानके प्राप्त होने तक प्रक्षेपोत्तरके क्रमसे परिणमाते हुए ले जाना चाहिए। इस प्रकार ले जाने पर अन्तिम समयवर्ती अनिर्लेपित द्रव्यमें जघन्य परिणाम योगस्थानसे लेकर जितने योगस्थान होते हैं उतने सत्कर्मस्थान उत्पन्न होते हैं।

❀ चरम समयवर्ती सवेदी जीवके द्वारा उत्कृष्ट योगसे तथा द्विचरम समयवर्ती सवेदी जीवके द्वारा जघन्य योगस्थानसे बन्ध करने पर यहां पर योगस्थानप्रमाण सत्कर्मस्थान प्राप्त होते हैं।

§ ३५७. अन्तिम समयवर्ती सवेदी जीवके द्वारा उत्कृष्ट योगका आलम्बन लेकर बाँधे गये समयप्रबद्धके अन्तिम और उपान्त्य फालिके द्रव्यको तथा उपान्त्य समयवर्ती सवेदी जीवके द्वारा जघन्य योगका आलम्बन लेकर बाँधे गये समयप्रबद्धके अन्तिम फालिके द्रव्यको ग्रहण कर अन्य अपुनरुक्त स्थान होता है।

शंका—उपान्त्य समयवर्ती सवेदी जीव यदि जघन्य योगसे परिणत होता है तो अन्तिम समयवर्ती सवेदी जीव उत्कृष्ट योगस्थानरूपसे परिणत नहीं हो सकता, क्योंकि संख्यात बार हुए बिना उत्कृष्ट योगरूपसे परिणमन करनेकी शक्तिका अभाव है। और यदि अन्तिम समयवर्ती सवेदी जीव उत्कृष्ट योगरूपसे परिणत होता है तो उपान्त्य समयवर्ती सवेदी जीव

दोसो, चरिमसमयसवेदे उक्कस्सजोगे संते दुचरिमसमयसवेदस्स जं पाओग्गं जहण्ण-जोगट्ठाणं तस्सेत्थ गहणादो। एदस्स चेव एत्थ गहणं होदि, ओघजहण्णस्स ण होदि त्ति कुदो णव्वदे? तंतजुत्तीदो सुत्ताविरुद्धवक्खाणाइरियवयणेण वा। चरिमसमयसवेदेण बद्धसमयपबद्धस्स चरिम-दुचरिमफालीओ दुचरिमसमयसवेदेण बद्धसमयपबद्धस्स चरिमफालिं च धरेदूण पुव्विल्लसमयादो हेट्ठा ओदरिय ट्ठिदतिण्णिफालिक्खवगदव्वं पुव्विल्लदव्वादो असंखे०भागब्भहियं, उक्कस्सजोगेण बद्धदोचरिमफालीसु सरिसा त्ति अवणिदासु उक्कस्सजोगेण बद्धदुचरिमफालीए सह जहण्णजोगेण बद्धचरिमफालीए अहियत्तुवलंभादो।

§ ३५८. संपहि अंतरपमाणपरूवणट्ठमिमा परूवणा कीरदे। तं जहा—उक्कस्स-जोगपक्खेवभागहारभूदसेढीए असंखे०भागमेत्तदुचरिमफालीओ चरिमफालिपमाणेण कस्सामो। तं जहा—रूवूणअधापवत्तभागहारमेत्तदुचरिमफालीणं जदि एगा चरिम-फाली[1] लब्भदि तो सेढीए असंखे०भागमेत्तदुचरिमफालीणं किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए उक्कस्सजोगट्ठाणपक्खेवभागहारं रूवूणअधापवत्तभागहारेण

जघन्य योगवाला नहीं हो सकता, क्योंकि अत्यन्त अभाव होनेसे उसका प्रतिषेध है?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि अन्तिम समयवर्ती सवेदी जीवके उत्कृष्ट योगके रहते हुए उपान्त्य समयवर्ती सवेदी जीवके योग्य जो जघन्य योगस्थान होता है उसका यहां पर ग्रहण किया गया है।

शंका—इसीका यहां पर ग्रहण होता है ओघ जघन्यका नहीं होता है यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

समाधान—आगम और युक्तिसे तथा सूत्रके अवरोधी आचार्य वचनसे जाना जाता है।

अन्तिम सममवर्ती सवेदी जीवके द्वारा बाँधे गये समयप्रबद्धकी अन्तिम और उपान्त्य फालियोंको तथा उपान्त्य समयवर्ती सवेदी जीवके द्वारा बाँधे गये समयप्रबद्धकी अन्तिम फालिको ग्रहण करके पहलेके समयसे नीचे उतरकर स्थित हुआ तीन फालियों सम्बन्धी क्षपक द्रव्य पहलेके द्रव्यसे असंख्यातवें भागप्रमाण अधिक है, क्योंकि उत्कृष्ट योगके द्वारा बाँधी गई दो चरम फालियाँ समान हैं ऐसा जान कर उनके अलग कर देने पर उत्कृष्ट योगके द्वारा बाँधी गई उपान्त्य फालिके साथ जघन्य योगके द्वारा बाँधी गई अन्तिम फालि अधिक उपलब्ध होती है।

§ ३५८. अब अन्तरके प्रमाणका कथन करनेके लिये यह प्ररूपणा करते हैं। यथा—उत्कृष्ट योगके प्रक्षेपके भागहाररूप जगश्रेणिके असंख्यातवें भागप्रमाण द्विचरम फालियोंको अन्तिम फालिके प्रमाणरूपसे करते हैं। यथा—एक कम अधःप्रवृत्तभागहारप्रमाण द्विचरम फालियोंकी यदि एक चरमफालि प्राप्त होती है तो जगश्रेणिके असंख्यातवें भागप्रमाण द्विचरम फालियोंमें क्या प्राप्त होगा इस प्रकार फलराशिसे गुणित इच्छाराशिमें प्रमाणराशिका भाग देने पर उत्कृष्ट योगस्थानके प्रक्षेपभागहारको एक कम अधःप्रवृत्त भागहारसे भाजित कर

१. आ०प्रतौ 'एगो चरिमफाली' इति पाठः।

खंडिय तत्थ एयखंडम्मि तप्पाओग्गजहण्णजोगट्ठाणपक्खेवभागहारेण अब्भहियम्मि जत्तियाणि रूवाणि तत्तियमेत्तचरिमफालीहि अंतरिदूण एदमपुणरुत्तट्ठाणमुप्पज्जदि। संपहि तप्पाओग्गजहण्णजोगेण बंधिदूणागददुचरिमसमयसवेदो पक्खेवुत्तरकमेण वड्ढावेदव्वो जाव उक्कस्सजोगट्ठाणं पत्तो त्ति। एवं वड्ढाविदे तिण्णि वि फालीओ उक्कस्साओ जादाओ। तेण एत्थ जोगट्ठाणमेत्ताणि संतकम्मट्ठाणाणि लब्भंति त्ति जं भणिदं तं सुट्ठु समंजसं। तप्पाओग्गजहण्णजोगट्ठाणादो उवरिमअद्धाणमेत्ताणि चेव जेणेत्थ पदेससंतकम्मट्ठाणाणि उप्पण्णाणि तेण जोगट्ठाणमेत्ताणि संतकम्मट्ठाणाणि एत्थ लब्भंति त्ति णेदं घडदे ? ण एस दोसो, हेट्ठिमजोगट्ठाणद्धाणस्स सव्वजोगट्ठाणद्धाणादो असंखे०भागत्तेण पाधण्णियाभावादो।

❀ **चरिमसमयसवेदो उक्कस्सजोगो दुचरिमसमयसवेदो उक्कस्सजोगो तिचरिमसमयसवेदो अण्णदरजोगट्ठाणे त्ति एत्थ पुण जोगट्ठाणमेत्ताणि पदेससंतकम्मट्ठाणाणि [लब्भंति]।**

§ ३५९. अण्णदरजोगट्ठाणे त्ति भणिदे अण्णदरतप्पाओग्गजहण्णजोगट्ठाणे त्ति संबंधो कायव्वो। एवं संबंधो कीरदि त्ति कुदो णव्वदे ? एत्थ जोगट्ठाणमेत्ताणि संतकम्मट्ठाणाणि लब्भंति त्ति सुत्तणिद्देसण्णहाणुववत्तीदो। सवेदस्स तिचरिमसमए

वहां प्राप्त हुए तत्प्रायोग्य जघन्य योगस्थानके प्रक्षेपभागहारसे अधिक एक भागमें जितने रूप उपलब्ध होते हैं तत्प्रमाण चरम फालियोंका अन्तर देकर यह अपुनरुक्त स्थान उत्पन्न होता है। अब तत्प्रायोग्य जघन्य योगके द्वारा बन्ध कर आये हुए द्विचरम समयवर्ती सवेदी जीवको एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे उत्कृष्ट योगस्थानके प्राप्त होनेतक बढ़ाना चाहिए। इस प्रकार बढ़ाने पर तीनों ही फालियाँ उत्कृष्ट हो जाती हैं। इसलिए यहां पर योगस्थानप्रमाण सत्कर्मस्थान प्राप्त होते हैं यह जो कहा है वह भले प्रकार ठीक ही कहा है।

शंका—तत्प्रायोग्य जघन्य योगस्थानसे लेकर उपरिम अध्वानमात्र ही चूंकि यहां पर प्रदेशसत्कर्मस्थान उत्पन्न होते हैं, इसलिए योगस्थानप्रमाण सत्कर्मस्थान यहां पर उपलब्ध होते हैं यह कथन घटित नहीं होता ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि अधस्तन योगस्थानअध्वान सब योगस्थान-अध्वानके असंख्यातवें भागप्रमाण होनेसे उसकी प्रधानता नहीं है।

❀ **जो चरम समयवर्ती सवेदी जीव उत्कृष्ट योगवाला है, द्विचरम समयवर्ती सवेदी जीव उत्कृष्ट योगवाला है और त्रिचरम समयवर्ती सवेदी जीव अन्यतर योगवाला है उसके बन्ध करने पर यहां पर योगस्थानप्रमाण प्रदेशसत्कर्मस्थान प्राप्त होते हैं।**

§ ३५९. सूत्रमें 'अन्यतर योगस्थान' ऐसा कहने पर 'अन्यतर जघन्य योगस्थान' ऐसा सम्बन्ध करना चाहिए।

शंका—इस प्रकार सम्बन्ध किया जाता है यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—यहां पर 'योगस्थानप्रमाण सत्कर्मस्थान प्राप्त होते हैं' ऐसा सूत्रका निर्देश अन्यथा बन नहीं सकता, इससे जाना जाता है कि सूत्रमें आये हुए 'अन्यतर योगस्थान' पदका अर्थ 'अन्यतर जघन्य योगस्थान' लिया गया है।

तप्पाओग्गजहण्णजोगेण तस्सेव दुचरिम-चरिमसमएसु[1] उक्कस्सजोगेण बंधिदूण अधियार-तिचरिमसमयम्मि ट्ठिदस्स छप्फालीओ भवंति। संपहि चरिमसमयसवेदेण बद्धसमय-पबद्धस्स चरिम-दुचरिमफालीओ दुचरिमसमयसवेदेण बद्धसमयपबद्धस्स चरमफालि-सहिदाओ तिण्णि फालीओ पुव्विल्लुक्कस्सतिण्णिफालीहि सरिसाओ[2]। संपहि चरिम-समयसवेदस्स तिचरिमफाली दुचरिमसमयसवेदस्स दुचरिमफाली तप्पाओग्गजहण्ण-जोगेण बद्धतिचरिमसमयसवेदस्स चरिमफाली च अंतरं होदूण एदं छप्फालिट्ठाण-मुप्पण्णं। णवरि पुव्विल्लंतरादो इदमंतरं विसेसाहियं, उक्कस्सजोगेण बद्धसमयपबद्धस्स तिचरिमफालीए अहियत्तुवलंभादो। संपहि इदमंतरं[3] चरिमफालिपमाणेण कस्सामो। तं जहा—रूवूणअधापवत्तभागहारमेत्तदुचरिमफालीणं जदि एगं चरिमफालिपमाणं लब्भदि तो उक्कस्सजोगट्ठाणपक्खेवभागहारं रूवूणअधापवत्तभागहारेण खंडेदूण तत्थ[4] एगखंडेणब्भहियदुगुणुक्कस्सजोगट्ठाणपक्खेवभागहारमेत्तदुचरिमफालीणं किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए चरिमफालीओ लब्भंति। एदासु तप्पाओग्ग-जहण्णजोगतिचरिमसमयसवेदचरिमफालीसु पक्खित्तासु अंतरपमाणं होदि। संपहि तिचरिमसमयसवेदतप्पाओग्गजहण्णजोगट्ठाणप्पहुडि पक्खेवुत्तरकमेण वड्ढावेदव्वं जाव

जो सवेदी जीव त्रिचरम समयमें तत्प्रायोग्य जघन्य योगसे तथा द्विचरम और चरम समय में उत्कृष्ट योगसे बन्ध करके विवक्षित त्रिचरम समयमें स्थित है उसीके छह फालियाँ हैं। अब द्विचरम सवेदी जीवके द्वारा बाँधे गये समयप्रबद्धकी अन्तिम फालिके साथ अन्तिम समयवर्ती सवेदी जीवके द्वारा बांधे गये समयप्रबद्धकी अन्तिम और द्विचरम फालि मिलकर ये तीन फालियाँ पहलेकी उत्कृष्ट तीन फालियोंके समान हैं। अब अन्तिम समयवर्ती सवेदी जीवकी त्रिचरम फालि, द्विचरम समयवर्ती सवेदी जीवकी द्विचरम फालि और त्रिचरम समयवर्ती सवेदी जीवकी तत्प्रायोग्य जघन्य योगसे बाँधी गई चरम फालि इनका अन्तर होकर यह छह फालिरूप स्थान उत्पन्न हुआ है। इतनी विशेषता है कि पहलेके अन्तरसे यह अन्तर विशेष अधिक है, क्योंकि उत्कृष्ट योगसे बाँधा गया समय-प्रबद्ध त्रिचरम फालिरूपसे अधिक पाया जाता है। अब इस अन्तरको अन्तिम फालिके प्रमाणरूपसे करते हैं। यथा—एक कम अधःप्रवृत्त भागहारप्रमाण द्विचरम फालियोंमें यदि एक अन्तिम फालिका प्रमाण उपलब्ध होता है तो उत्कृष्ट योगस्थानके प्रक्षेप भागहारको एक कम अधःप्रवृत्तभागहारसे खण्डित करके वहां पर एक खण्डसे अधिक दुगुणे उत्कृष्ट योग-स्थानके प्रक्षेप भागहारमात्र द्विचरम फालियोंमें क्या प्राप्त होगा, इसप्रकार फलराशिसे गुणित इच्छाराशिमें प्रमाणराशिका भाग देने पर अन्तिम फालियाँ प्राप्त होती हैं। इनमें तत्प्रायोग्य जघन्य योगसे प्राप्त त्रिचरम समयवर्ती सवेदी जीवकी चरम फालियोंके प्रक्षिप्त करने पर अन्तरका प्रमाण होता है। अब त्रिचरम समयवर्ती सवेदी जीवके तत्प्रायोग्य जघन्य योग स्थानसे लेकर उत्कृष्ट योगस्थानके प्राप्त होने तक एक-एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे बढ़ाना

---

१. ता०प्रतौ 'दुचरिमसमएसु' इति पाठः। २. आ०प्रतौ '–तिण्णिफालीओ सरिसाओ' इति पाठः। ३. आ०प्रतौ 'इदमुत्तरं' इति पाठः। ४. आ०प्रतौ 'खंडेदूण ण तत्थ' इति पाठः।

उक्कस्सजोगट्ठाणं पत्तं ति। एवं वड्ढाविदे छप्फालीओ उक्कस्साओ जादाओ सेढीए असंखे०भागमेत्ताणि पदेससंतकम्मट्ठाणाणि अपुणरुत्ताणि लद्धाणि भवंति।

❀ एवं जोगट्ठाणाणि दोहि आवलियाहि दुसमयूणाहि पदुप्पण्णाणि। एत्तियाणि अवेदस्स पदेससंतकम्मट्ठाणाणि सांतराणि सव्वाणि।

§ ३६०. संपहि चदुचरिमसवेदस्स दसप्फालिप्पहुडि एदेण कमेणोदारेदव्वं जाव चरिमसमयसवेदस्स पढमफाली दिस्सदि त्ति जाव एद्दूरं ओदरिदि ताव अंतराणि विसरिसाणि अण्णोण्णं पेक्खिदूण विसेसाहियाणि। संपहि एत्तो प्पहुडि जाव अवेद-पढमसमओ त्ति ताव हेट्ठा अंतराणि सरिसाणि, एगसमयपबद्धत्तणेण समाणत्तादो। अत्थदो पुण विसरिसाणि, सव्वसमयपबद्धाणमेगजहण्णजोगट्ठाणेण बंधासंभवादो। संपहि एवमोदारिदे दुसमयूणदोआवलियमेत्तसमयपबद्धा ओदिण्णा होंति। दुसमयूणाहि दो-आवलियाहि सव्वजोगट्ठाणेसु गुणिदेसु जत्तियमेत्ताणि रूवाणि तत्तियमेत्ताणि पुरिस-वेदसंतकम्मट्ठाणाणि होंति त्ति जं भणिदं तण्ण घडदे। तं जहा—चरिमसमयसवेदस्स चरिमफालियाए घोलमाणजहण्णजोगप्पहुडि जावुक्कस्सजोगट्ठाणे त्ति एवडियाणि पदेससंतकम्मट्ठाणाणि लद्धाणि। तिसमयूणदोआवलियमेत्तसेसचरिमफालियाहि तप्पाओग्गजहण्णजोगट्ठाणप्पहुडि जावुक्कस्सजोगट्ठाणं ति तत्तियमेत्ताणि चेव पदेस-संतकम्मट्ठाणाणि लद्धाणि। संपहि चरिमसमयसवेदस्स चरिमफालियाए लद्धपदेस-

---

चाहिये। इस प्रकार बढ़ाने पर छह फालियाँ उत्कृष्ट होकर जगश्रेणिके असंख्यातवें भाग-प्रमाण अपुनरुक्त प्रदेशसत्कर्मस्थान प्राप्त होते हैं।

❀ इस प्रकार दो समय कम दो आवलियोंके द्वारा योगस्थान उत्पन्न होकर अवेदी जीवके इतने सब सान्तर प्रदेशसत्कर्मस्थान होते हैं।

§ ३६०. अब चतुःसमयवर्ती सवेदी जीवके दस फालियोंसे लेकर अन्तिम समयवर्ती सवेदी जीवके जितने दूर उतरकर प्रथम फालि दिखाई देती है उतने दूर तक इस क्रमसे उतारना चाहिए। इसप्रकार इतने दूर उतरने तक अन्तर विसदृश होकर एक दूसरेको देखते हुए विशेष अधिक होते हैं। अब इससे लेकर अपगतवेदी जीवके प्रथम समयके प्राप्त होने तक नीचे अन्तर समान होते हैं, क्योंकि एक समयप्रबद्धपनेकी अपेक्षा उनमें समानता है। परन्तु वास्तवमें वे विसदृश होते हैं, क्योंकि सब समयप्रबद्धोंका एक जघन्य योगके द्वारा बन्ध होना असम्भव है। अब इसप्रकार उतारने पर दो समय कम दो आवलिप्रमाण समयप्रबद्ध उतरे हुए होते हैं।

शंका—दो समय कम दो आवलियोंके द्वारा सब योगस्थानोंके गुणित करनेपर जितने रूप प्राप्त होते हैं उतने पुरुषवेदके सत्कर्मस्थान होते हैं ऐसा जो कहा है वह घटित नहीं होता। खुलासा इस प्रकार है—अन्तिम समयवर्ती सवेदी जीवके अन्तिम फालिके घोलमान जघन्य योगसे लेकर उत्कृष्ट योगस्थानके प्राप्त होने तक इतने प्रदेशसत्कर्मस्थान लब्ध होते हैं। तीन समय कम दो आवलिप्रमाण शेष अन्तिम फालियोंके द्वारा तत्प्रायोग्य जघन्य योगस्थानसे लेकर उत्कृष्ट योगस्थानके प्राप्त होने तक उतने ही प्रदेशसत्कर्मस्थान प्राप्त होते हैं।

संतकम्मट्ठाणेसु तप्पाओग्गजहण्णजोगट्ठाणप्पहुडि उवरिमद्धाणं मोत्तूण हेट्ठिमद्धाणं सेढीए असंखे०भागमेत्तं घेत्तूण पुध ट्ठवेदव्वं । एवं सेसफालियासु वि सव्वजहण्णट्ठाण-संखाफालियाए जहण्णट्ठाणादो हेट्ठिमासेसट्ठाणाणि घेत्तूण पुव्वं पुध ट्ठविदट्ठाणाणमुवरि ढोएदूण ठवेदव्वाणि । एवं ठविय पुणो ताणि दुसमयूणदोआवलियमेत्तखंडाणि कादूण तत्थ एगेगखंडं घेत्तूण दुसमयूणदोआवलियमेत्तट्ठाणपंतीए हेट्ठा संधाणे कदे एगेगपंतीए आयामो किंचूणजोगट्ठाणद्धाणमेत्तो चेव होदि ण संपुण्णो, हेट्ठिमतदसंखेज्जदिभागमेत्त-ट्ठाणाणमणुवलंभादो । तेण दुसमयूणाहि दोहि आवलियाहि जोगट्ठाणेसु गुणिदेसु पुरिसवेदस्स पदेससंतकम्मट्ठाणाणि ण उप्पज्जंति, तट्ठाणेहिंतो समहियट्ठाणुप्पत्ति-दंसणादो त्ति ? ण एस दोसो, दव्वट्ठियणयावलंबणाए दुसमयूणदोआवलियमेत्तगुण-गारुवलंभादो । तिसमयूणदोआवलियमेत्तगुणगाररूवाणमत्थित्तं होदु णाम, तेसिं गुणिज्जमाणस्स जोगट्ठाणद्धाणपमाणत्तुवलंभादो । णावरेगरूवस्स[1] अत्थित्तं, तत्थ गुणिज्ज-माणस्स सगहेट्ठिमासंखेज्जदिभागेणूणजोगट्ठाणद्धाणपमाणत्तुवलंभादो त्ति ? ण, रूवावयव-क्खए रूवस्स क्खयाभावादो । ण च अवयवेहिंतो अवयवी अभिण्णो, णाणेगसंखाणं

अब अन्तिम समयवर्ती सवेदी जीवके अन्तिम फालिरूपसे प्राप्त हुए प्रदेशसत्कर्मस्थानोंमें तत्प्रायोग्य योगस्थानसे लेकर उपरिम अध्वानको छोड़कर जगश्रेणिके असंख्यातवें भागप्रमाण अधस्तन अध्वानको ग्रहण कर पृथक् स्थापित करना चाहिए। इस प्रकार शेष फालियोंमें भी सब जघन्य स्थानकी संख्याप्रमाण फालिके जघन्य स्थानसे नीचेके सब स्थानोंको ग्रहण कर पहले पृथक् स्थापित किये गये स्थानोंके ऊपर लाकर स्थापित करना चाहिए। इस प्रकार स्थापित करके पुनः उनके दो समय कम दो आवलिप्रमाण खण्ड करके उनमेंसे एक एक खण्डको ग्रहणकर दो समय कम दो आवलिप्रमाण स्थानोंकी पंक्तिके नीचे मिलाने पर एक एक पंक्तिका आयाम कुछ कम योगस्थानके अध्वानप्रमाण ही होता है संपूर्ण नहीं होता, क्योंकि नीचेके उसके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थान नहीं पाये जाते। इसलिए दो समय कम दो आवलियोंसे योगस्थानोंके गुणित करने पर पुरुषवेदके प्रदेशसत्कर्मस्थान नहीं उत्पन्न होते हैं, क्योंकि उन स्थानोंसे कुछ अधिक स्थानोंकी उत्पत्ति देखी जाती है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि द्रव्यार्थिकनयका आलम्बन करने पर दो समय कम दो आवलिप्रमाण गुणकार उपलब्ध होता है।

शंका—तीन समय कम दो आवलिप्रमाण गुणकार रूपोंका अस्तित्व होवे, क्योंकि वे गुण्यमानके योगस्थान अध्वानप्रमाण उपलब्ध होते हैं। परन्तु अन्य रूपका अस्तित्व नहीं प्राप्त होता, क्योंकि वहाँ पर गुण्यमान अपने अधस्तन असंख्यातवें भाग कम योगस्थान अध्वानप्रमाण उपलब्ध होता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि रूपके अवयवका क्षय होने पर रूपके क्षयका अभाव है। यदि कहा जाय कि अवयवोंसे अवयवी अभिन्न है सो यह कहना भी ठीक नहीं है, क्योंकि अवयव नाना संख्यावाले होते हैं, अवयवी एक संख्यावाला होता है, दोनों ही अलग अलग

---

१. आ०प्रतौ 'णवरि एगरूवस्स' इति पाठः ।

भिण्णबुद्धिगेज्झाणं भिण्णकज्जाणं च एयत्तविरोहादो। ण च अण्णम्मि विणट्ठे अण्णस्स विणासो, अइप्पसंगादो। तम्हा दुसमयूणदोआवलियपदुप्पण्णजोगट्ठाणमेत्ताणि संतकम्मट्ठाणाणि पुरिसवेदस्स होंति त्ति घडदे।

§ ३६१. अथवा अण्णेण पयारेण दुसमयूणदोआवलियगुणगारसाहणं कस्सामो। तं जहा—चरिमसमयसवेदेण घोलमाणजहण्णजोगेण जो बद्धो समयपबद्धो सो सवेदचरिमसमयप्पहुडि समयूणदोआवलियमेत्तमद्धाणं गंतूण जहण्णसंतकम्मट्ठाणं होदि, दुचरिमादिफालीणं तत्थाभावादो। संपहि जहण्णदव्वस्सुवरि णाणाजीवे अस्सिदूण घोलमाणजहण्णजोगप्पहुडि पक्खेवुत्तरकमेण चरिमसमयसवेदो वड्ढावेदव्वो जावुक्कस्सजोगट्ठाणं पत्तो त्ति। एवं वड्ढाविदे एगचरिमफाली उक्कस्सा होदि। संपहि अण्णेगेण दुचरिमसमयम्मि तप्पाओग्गजहण्णजोगेण चरिमसमयम्मि उक्कस्सजोगेण पबद्धे तिण्णि फालीओ दीसंति, अहियारदुचरिमसमयम्मि अवट्ठिदत्तादो। संपहि इमस्स दुचरिमसमयसवेदस्स[1] तप्पाओग्गजहण्णजोगो घोलमाणजहण्णजोगादो असंखे०गुणो, दुचरिमसमयम्मि घोलमाणजहण्णजोगेण परिणदस्स संखेज्जवारेहि विणा विदियसमए चेव

बुद्धिग्राह्य हैं और अलग अलग कार्यवाले हैं, इसलिए उनके एक होनेमें विरोध आता है। यदि कहा जाय कि अन्यका विनाश होने पर अन्यका विनाश हो जाता है सो यह कहना भी ठीक नहीं है, क्योंकि ऐसा होने पर अतिप्रसङ्ग दोष आता है। इसलिए दो समय कम दो आवलियोंसे उत्पन्न हुए योगस्थानप्रमाण पुरुषवेदके सत्कर्मस्थान होते हैं यह बात बन जाती है।

§ ३६१. अथवा अन्य प्रकारसे दो समय कम दो आवलिप्रमाण गुणकारोंकी सिद्धि करते हैं। यथा—अन्तिम समयवर्ती सवेदी जीवने घोलमान जघन्य योगके द्वारा जो समयप्रबद्ध बाँधा वह सवेदी जीवके अन्तिम समयसे लेकर एक समय कम दो आवलिप्रमाण स्थान जाकर जघन्य सत्कर्मस्थान होता है, क्योंकि द्विचरम आदि फालियोंका वहाँ पर अभाव है। अब जघन्य द्रव्यके ऊपर नाना जीवोंका आश्रयकर घोलमान जघन्य योगसे लेकर एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे उत्कृष्ट योगस्थानके प्राप्त होने तक अन्तिम समयवर्ती सवेदी जीवको बढ़ाना चाहिए। इस प्रकार बढ़ाने पर एक अन्तिम फालि उत्कृष्ट होती है। अब अन्य एक जीवके द्वारा द्विचरम समयमें तत्प्रायोग्य जघन्य योगका अवलम्बन लेकर और अन्तिम समयमें उत्कृष्ट योगका अवलम्बन लेकर बन्ध करने पर तीन फालियाँ दिखलाई देती हैं, क्योंकि वे विवक्षित द्विचरम समयमें अवस्थित हैं। अब इस द्विचरम समयवर्ती सवेदी जीवका तत्प्रायोग्य जघन्य योग घोलमान जघन्य योगसे असंख्यातगुणा है, क्योंकि द्विचरम समयमें घोलमान जघन्य योगरूपसे परिणत हुए उसके संख्यात बारके बिना दूसरे समयमें ही उत्कृष्ट

१. आ०प्रतौ 'इमस्स चरिमसमयसवेदस्स' इति पाठः।

उक्कस्सजोगेण परिणमणसत्तीए अभावादो। संपहि एत्थतणउक्कस्सजोगचरिमफाली पुव्विल्लचरिमफाली च सरिसाओ, उक्कस्सजोगट्ठाणपरिणामेण समाणत्तादो।

§ ३६२. संपहि उक्कस्सजोगदुचरिमफाली तप्पाओग्गजहण्णजोगेण बद्धचरिमफाली च एत्थ[1] अंतरं होदि। एदेण अंतरेण विणा जहा तिण्णिफालिखवगट्ठाणमुप्पज्जदि तहा वत्तइस्सामो। तं जहा—उक्कस्सजोगस्स सेढीए असंखे०भागमेत्तपक्खेवभागहारपमाणदुचरिमफालीओ ताव चरिम-दुचरिमपमाणेण कस्सामो। अधापवत्तमेत्तदुचरिमाणं जदि एगं चरिम-दुचरिमपमाणं लब्भदि तो सेढीए असंखे०भागमेत्तचरिम-दुचरिमाणं[2] केत्तियाओ चरिम-दुचरिमफालीओ लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए अधापवत्तेण उक्कस्सजोगट्ठाणद्धाणं खंडेदूण तत्थ एगखंडमेत्ताओ होंति। एत्तियमेत्तमद्धाणं दोफालिसामीओ ओदारेदव्वो। एवमोदारिदे दुचरिमफालिमस्सिदूण जमंतरं तं णट्ठं ति दट्ठव्वं।

§ ३६३. संपहि तप्पाओग्गजहण्णजोगचरिमफालिजणिदअंतरपरिहाणिं कस्सामो। तं जहा—अधापवत्तभागहारमेत्तचरिमफालीणं जदि रूवूणअधापवत्तभागहारमेत्तचरिम-दुचरिमफालीओ लब्भंति तो तप्पाओग्गजहण्णजोगिणो हेट्ठिमअद्धाणादो

योगरूपसे परिणमन करनेकी शक्तिका अभाव है। अब यहाँकी उत्कृष्ट योगसम्बन्धी अन्तिम फालि और पहलेकी अन्तिम फालि समान है, क्योंकि उत्कृष्ट योगस्थानके परिणामरूपसे समानता है।

§ ३६२. अब उत्कृष्ट योगसम्बन्धी द्विचरम फालि और तत्प्रायोग्य जघन्य योग द्वारा बद्ध चरम फालि यहाँ पर अन्तर होता है। इस अन्तरके विना जिस प्रकार तीन फालिरूप क्षपकस्थान उत्पन्न होता है उस प्रकार बतलाते हैं। यथा—उत्कृष्ट योगकी जगश्रेणिके असंख्यातवें भागमात्र प्रक्षेपभागहारप्रमाण द्विचरम फालियोंको चरम और द्विचरम प्रमाणरूपसे करते हैं। अधःप्रवृत्तमात्र द्विचरमोंका यदि एक चरम और द्विचरमप्रमाण उपलब्ध होता है तो जगश्रेणिके असंख्यातवें भागप्रमाण चरम और द्विचरमोंकी कितनी चरम और द्विचरम फालियाँ प्राप्त होंगी, इस प्रकार फलराशिसे गुणित इच्छाराशिमें प्रमाणराशिका भाग देने पर अधःप्रवृत्तसे उत्कृष्ट योगस्थान अध्वानको भाजित करके वहाँ एक खण्डप्रमाण होती हैं। दो फालियोंके स्वामीको इतना मात्र अध्वान उतारना चाहिए। इस प्रकार उतारने पर द्विचरम फालिका आश्रय लेकर जो अन्तर है वह नष्ट हो गया ऐसा जानना चाहिए।

§ ३६३. अब तत्प्रायोग्य जघन्य योगकी अन्तिम फालिसे उत्पन्न हुए अन्तरकी परिहानिको करते हैं। यथा—अधःप्रवृत्तभागहारप्रमाण अन्तिम फालियोंकी यदि एक कम अधःप्रवृत्तभागहारप्रमाण चरम और द्विचरम फालियाँ उपलब्ध होती हैं तो तत्प्रायोग्य जघन्य योग-

---

१. आ०प्रतौ 'बद्धचरिमफालीए च एत्थ' इति पाठः। २. आ०प्रतौ '–भागमेत्तदुचरिमाणं' इति पाठः।

विसेसाहियपक्खेवभागहारमेत्तचरिमाणं केत्तियाओ चरिम-दुचरिमफालीओ लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए एत्थतणपक्खेवभागहारमधापवत्तेण खंडेदूण तत्थ लद्धेगखंडे रूवूणअधापवत्तभागहारेण गुणिदे तत्थ जत्तियाणि रूवाणि तत्तियमेत्ताओ लब्भंति। पुणो एत्तियमेत्तजोगट्ठाणाणि पुणरवि दोफालिसामीओ ओदारेदव्वाओ[1] एवमेदेहि जोगट्ठाणेहि परिणमिय बद्धपुरिसवेदतिण्णिफालिदव्वमुक्कस्सजोगेण बद्धपुरिसवेदचरिमफालिदव्वेण सरिसं होदि, विणट्ठंतरत्तादो। पुणो दुचरिमसमयसवेदे पक्खेवुत्तरजोगेण बंधाविदे एगफालिसामिणो पुव्वुप्पण्णुक्कस्सपदेससंतकम्मट्ठाणादो उवरि अण्णमपुणरुत्तट्ठाणमुप्पज्जदि। एवं दुचरिमसमयसवेदे पक्खेवुत्तरकमेण वड्ढाविज्जमाणे केत्तियमेत्तजोगट्ठाणेसु उवरि चडिदेसु सव्वमंतरं पक्खेवुत्तरकमेण पविसदि त्ति भणिदे तप्पाओग्गजहण्णजोगिणो विसेसाहियहेट्ठिमअद्धाणमेत्तं पुणो उक्कस्सजोगट्ठाणद्धाणं रूवूणअधापवत्तभागहारेण खंडिय तत्थ एगखंडमेत्तं च उवरि चडिदे पक्खेवुत्तरकमेण सव्वमंतरं पविसदि। संपहि पुणरवि दुचरिमसमयसवेदो पक्खेवुत्तरकमेण वड्ढावेदव्वो जावुक्कस्सजोगट्ठाणं पत्तो त्ति। संपहि अण्णेगेण दुचरिमसमए दोफालिखवगजोगेहि परिणामिय चरिमसमए

वाले जीवके अधस्तन अध्वानसे विशेष अधिक प्रक्षेप भागहारप्रमाण चरमोंकी कितनी चरम और द्विचरम फालियाँ प्राप्त होंगी, इस प्रकार फलराशिसे गुणित इच्छाराशिमें प्रमाणराशिका भाग देने पर यहाँके प्रक्षेपभागहारको अधःप्रवृत्तसे भाजित करके वहाँ प्राप्त हुए एक खण्डको एक कम अधःप्रवृत्तभागहारसे गुणित करने पर वहाँ जितने रूप हैं उतना प्राप्त होता है। पुनः इतने मात्र योगस्थानोंको फिर भी दो फालियोंके स्वामियोंके आश्रयसे उतारना चाहिए। इस प्रकार इन योगस्थानरूपसे परिणमाकर बद्ध पुरुषवेदकी तीन फालियोंका द्रव्य उत्कृष्ट योगसे बद्ध पुरुषवेदकी अन्तिम फालिके द्रव्यके समान होता है, क्योंकि अन्तरका विनाश हो गया है। पुनः द्विचरम समयवर्ती सवेदी जीवके प्रक्षेप अधिक योगके द्वारा बन्ध कराने पर एक फालिके स्वामीके पूर्वोत्पन्न उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मस्थानसे ऊपर अन्य अपुनरुक्त स्थान उत्पन्न होता है। इसी प्रकार द्विचरम समयवर्ती सवेदी जीवके एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे वृद्धि कराने पर कितने योगस्थान ऊपर चढ़ने पर सब अन्तर एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे प्रवेश करते हैं ऐसा पूछने पर उत्तर देते हैं कि तत्प्रायोग्य जघन्य योगवाले जीवके विशेष अधिक अधस्तन अध्वानमात्रको पुनः उत्कृष्ट योगस्थान अध्वानको एक कम अधःप्रवृत्तभागहारसे भाजित करके वहाँ एक भागमात्र ऊपर चढ़ने पर एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे सब अन्तर प्रवेश करता है। अब फिर भी द्विचरम समयवर्ती सवेदी जीवको एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे उत्कृष्ट योगस्थानके प्राप्त होने तक बढ़ाना चाहिए। अब अन्य एक जीवके

१. ता०प्रतौ 'ओदारेदव्वो' इति पाठः।

उक्कस्सजोगेण परिणमिय पुरिसवेदे बद्धे पुव्विल्लतिण्णिफालिदव्वादो एदासिं तिण्हं फालीणं दव्वं विसेसाहियं होदि, एगफालिसामिणो द्विदजोगट्ठाणादो उवरिमजोगट्ठाणमेत्तदुचरिमाणमब्भहियत्तुवलंभादो।

§ ३६४. संपहि इमाओ अहियदुचरिमफालीओ चरिमफालिपमाणेण कस्सामो। तं जहा—रूवूणअधापवत्तमेत्तदुचरिमफालीणं जदि एगा चरिमफाली लब्भदि तो एगदोफालीणमंतरालट्ठिदजोगट्ठाणमेत्तदुचरिमफालीसु केत्तियाओ लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए जं लद्धं तत्तियमेत्ताओ चरिमफालीओ लब्भंति। एवं लब्भंति त्ति कादूण एदासिमवणयणट्ठमेत्तियमद्धाणमेगफालिसामिओ पुणरवि ओदारेदव्वो। संपहि एगफालिखवगे पक्खेवुत्तरकमेण वड्ढाविज्जमाणे केत्तिए अद्धाणे उवरि चडिदे दुचरिमसमयवेदस्स चरिमफाली सयलजोगट्ठाणद्धाणं लहदि त्ति भणिदे तप्पाओग्गजहण्णजोगहेट्ठिममद्धाणमेत्तजोगट्ठाणेसु उवरि चडिदेसु दुचरिमसमयसवेदस्स चरिमफाली उक्कस्सजोगट्ठाणमेत्तद्धाणं संपुण्णं लहइ। एवमेत्थ दोजोगट्ठाणद्धाणमेत्तपदेससंतकम्मट्ठाणाणि लद्धाणि। संपहि उवरिमसेसद्धाणम्मि वड्ढाविज्जमाणे चरिमसमयसवेदस्स दुचरिमफाली वि उक्कस्सा होदि,

---

द्वारा द्विचरम समयमें दो फालिरूप क्षपक योगरूपसे परिणमा कर तथा अन्तिम समयमें उत्कृष्ट योगरूपसे परिणमा कर पुरुषवेदका बन्ध करने पर पहलेकी तीन फालियोंके द्रव्यसे इन तीन फालियोंका द्रव्य विशेष अधिक होता है, क्योंकि एक फालिके स्वामीके स्थित हुए योगस्थानसे उपरिम योगस्थानमात्र द्विचरमोंका अधिकपना उपलब्ध होता है।

§ ३६४. अब इन अधिक द्विचरम फालियोंको अन्तिम फालिके प्रमाणरूपसे करते हैं। यथा—एक कम अधःप्रवृत्तमात्र द्विचरम फालियोंकी यदि एक चरम फालि प्राप्त होती है तो एक दो फालियोंके अन्तरालमें स्थित योगस्थानमात्र द्विचरम फालियोंमें कितना प्राप्त होगा, इस प्रकार फलराशिसे गुणित इच्छाराशिमें प्रमाणराशिका भाग देने पर जो लब्ध आवे उतनी अन्तिम फालियाँ लब्ध आती हैं। इतनी लब्ध आती हैं ऐसा समझकर इनको निकालनेके लिए इतने अध्वान तक एक फालिके स्वामीको पुनरपि उतारना चाहिए। अब एक फालि क्षपकके एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे बढ़ाने पर कितना अध्वान ऊपर चढ़ने पर द्विचरम समयवर्ती सवेदी जीवकी चरम फालि सकल योगस्थान अध्वानको प्राप्त करती है इस प्रकार पूछने पर उत्तर देते हैं कि तत्प्रायोग्य जघन्य योगके अधस्तन अध्वानमात्र योगस्थानोंके ऊपर चढ़ने पर द्विचरम समयवर्ती सवेदी जीवकी अन्तिम फालि सम्पूर्ण उत्कृष्ट योगस्थानमात्र अध्वानको प्राप्त करती है। इस प्रकार यहाँ पर दो योगस्थान अध्वानमात्र प्रदेशसत्कर्मस्थान प्राप्त हुए। अब उपरिम शेष अध्वानके बढ़ाने पर अन्तिम समयवर्ती सवेदी जीवकी द्विचरम फालि भी उत्कृष्ट होती है, क्योंकि एक कम अधःप्रवृत्तभागहारका योगस्थान अध्वानमें भाग देने पर

रूवूणअधापवत्तभागहारेण जोगट्ठाणद्धाणे खंडिदे एगखंडमेत्तट्ठाणाणं तत्थुवलंभादो। एत्थ संदिट्ठी १२८।२। अहियद्धाणपमाणमेदं $\frac{१३८}{१५}$।

§ ३६५. संपहि अण्णेगे खवगे सवेदतिचरिमसमयम्मि तप्पाओग्गजहण्णजोगेण दुचरिमसमए चरिमसमए च उक्कस्सजोगेण बंधिय अधियारतिचरिमसमए चेट्ठिदे छफ्फालीओ लब्भंति। संपहि एदाओ छफ्फालीओ पुव्विल्लुक्कस्सतिण्णिफालीहिंतो विसेसाहियाओ, उक्कस्सजोगट्ठाणपक्खेवभागहारमेत्तदुचरिम-तिचरिमफालीणं तिचरिमसमयसवेदेण तप्पाओग्गजहण्णजोगेण बद्धचरिमफालीए च अहियत्तुवलंभादो। संपहि एदस्स अंतरस्स हायणकमो वुच्चदे। तं जहा—अधापवत्तमेत्तदुचरिमफालीणं जदि एगं चरिम-दुचरिमफालिपमाणं लब्भदि तो उक्कस्सजोगट्ठाणद्धाणमेत्तदुचरिमाणं केत्तियाओ चरिम-दुचरिमफालीओ लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए अधापवत्तेण उक्कस्सजोगट्ठाणद्धाणे खंडिदे तत्थ एयखंडसादिरेयदोरूवगुणिदे जत्तियाणि रूवाणि तत्तियमेत्ताओ चरिम-दुचरिमफालीओ लब्भंति। कुदो? सादिरेयदुगुणत्तं तिचरिमफालिफलेण सह जोगादो लद्धमेदं पुध ट्ठविय पुणो तप्पाओग्गजहण्णजोग-पक्खेवभागहारमधापवत्तेण खंडेदूण तत्थतणएगखंडे रूवूणअधापवत्तेण गुणिदे जं लद्धं तं पुव्विल्लद्धम्मि पक्खिविय तत्थ जत्तियमेत्ताणि रूवाणि तत्तियमेत्तजोगट्ठाणाणि

एक खण्डमात्र स्थान वहाँ उपलब्ध होते हैं। यहाँ पर संदृष्टि—१२८, २। अधिक अध्वानका प्रमाण यह है— $\frac{१३८}{१५}$।

§ ३६५. अब अन्य एक क्षपकके सवेद भागके त्रिचरम समयमें तत्प्रायोग्य जघन्य योगसे तथा द्विचरम समय और चरम समयमें उत्कृष्ट योगसे बन्ध करके अधिकृत त्रिचरम समयमें स्थित होने पर छह फालियाँ होती हैं। अब ये छह फालियाँ पहले की उत्कृष्ट तीन फालियोंसे विशेष अधिक हैं, क्योंकि उत्कृष्ट योगस्थान प्रक्षेपभागहारमात्र द्विचरम और त्रिचरम फालियाँ तथा त्रिचरम समयवर्ती सवेदी जीवके द्वारा तत्प्रायोग्य जघन्य योगसे बाँधी गई चरम फालि अधिक पाई जाती हैं। अब इस अन्तरके कम होनेके क्रमका कथन करते हैं। यथा—अधःप्रवृत्तमात्र द्विचरम फालियोंमें यदि एक चरम और द्विचरम फालिका प्रमाण प्राप्त होता है तो उत्कृष्ट योगस्थान अध्वानमात्र द्विचरमोंकी कितनी चरम और द्विचरम फालियाँ प्राप्त होंगी, इस प्रकार फलराशिसे गुणित इच्छाराशिमें प्रमाणराशिका भाग देने पर अधःप्रवृत्तके द्वारा उत्कृष्ट योगस्थान अध्वानके भाजित करने पर वहाँ प्राप्त एक भागको साधिक दो रूपोंसे गुणित करने पर जितने रूप आते हैं उतनी चरम और द्विचरम फालियाँ प्राप्त होती हैं, क्योंकि त्रिचरम फालिरूप फलके साथ योगसे लब्ध हुई इस साधिक द्विगुणी संख्याको पृथक् स्थापित करके पुनः तत्प्रायोग्य जघन्य योगके प्रक्षेपभागहारको अधःप्रवृत्तभाग-हारसे भाजित कर वहाँ प्राप्त हुए एक भागको एक कम अधःप्रवृत्तसे गुणित करने पर जो लब्ध आवे उसे पहलेके लब्धमें मिलाकर वहाँ जितने रूप हों, उत्कृष्ट योगस्थानसे उतने योग-स्थान जाने तक द्विचरम समयवर्ती सवेदी जीवको उतारना चाहिए। इस प्रकार उतारने पर

उक्कस्सजोगट्ठाणादो दुचरिमसमयसवेदो ओदारेदव्वो । एवमोदारिदे तिण्ह फालीणमुक्कस्सदव्वेण छप्फालिदव्वं सरिसं होदि, तिचरिमसमए तप्पाओग्गजहण्णजोगेण सवेददुचरिमसमए उक्कस्सजोगट्ठाणादो पुव्विल्लं तं लद्धमेत्तमोदारिदूण ट्ठिदजोगेण चरिमसमए उक्कस्सजोगेण बंधिय अधियारतिचरिमसमयम्मि अवट्ठिदत्तादो ।

§ ३६६. संपहि तप्पाओग्गजहण्णजोगेण परिणदतिचरिमसमयसवेदो पक्खेवुत्तरकमेण वड्ढावेयव्वो । एवं वड्ढाविज्जमाणे केत्तिएसु जोगट्ठाणेसु चडिदेसु सव्वमंतरं पविसदि त्ति चे ? तस्सेवप्पणो हेट्ठिमअद्धाणमेत्तेसु पुणो उक्कस्सजोगट्ठाणमद्धाणं रूवूणअधापवत्तेण खंडिदूण तत्थ एगखंडं दुगुणं करिय विसेसाहिए च कदे तत्तियमेत्तेसु च जोगट्ठाणेसु चडिदेसु सव्वमंतरं[1] पक्खेवुत्तरकमेण पविसदि । संपहि उवरिमअसंखेज्जा भागा पक्खेवुत्तरकमेण वड्ढावेदव्वा जावुक्कस्सजोगट्ठाणं पत्तं ति । संपहि एदं पेक्खिदूण सवेदतिचरिमसमए दुचरिमसमयसवेदेण परिणदजोगट्ठाणेण परिणमिय[2] दुचरिमसमए चरिमसमए च उक्कस्सजोगट्ठाणेण परिणमिय पुरिसवेदं बंधिय अधियारतिचरिमसमयट्ठिदस्स छप्फालिदव्वं विसेसाहियं होदि, चडिदद्धाणमेत्त-दुचरिमाहि अहियत्तुवलंभादो ।

तीन फालियोंके उत्कृष्ट द्रव्यके साथ छह फालियोंका द्रव्य समान होता है, क्योंकि त्रिचरम समयमें तत्प्रायोग्य जघन्य योगका अवलम्बन लेकर सवेद भागके द्विचरम समयमें उत्कृष्ट योगस्थानसे पहलेका जो लब्ध है तत्प्रमाण उतर कर स्थित हुए योगके साथ अन्तिम समयमें उत्कृष्ट योगसे बन्ध करके अधिकृत त्रिचरम समयमें अवस्थित है ।

§ ३६६. अब तत्प्रायोग्य जघन्य योगसे परिणत हुए त्रिचरम समयवर्ती सवेदी जीवको एक एक प्रक्षेप-अधिकके क्रमसे बढ़ाना चाहिए ।

शंका—इस प्रकार बढ़ाने पर कितने योगस्थानोंके चढ़नेपर सब अन्तर प्रवेश करता है ?

समाधान—उसीके अपने अधस्तन अध्वानमात्र योगस्थानोंके और उत्कृष्ट योगस्थान अध्वानको एक कम अधःप्रवृत्तसे भाजित करके वहाँ जो एक भाग लब्ध आवे उसे दूना करके विशेष अधिक करने पर जितने योगस्थान हों उतने योगस्थानोंके चढ़ने पर सब अन्तर एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे प्रवेश करता है ।

अब उपरिम असंख्यात बहुभागको एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे उत्कृष्ट योगस्थानके प्राप्त होने तक बढ़ाना चाहिए । अब इसको देखकर सवेद भागके त्रिचरम समयमें द्विचरम समयवर्ती सवेदी जीवके द्वारा परिणत हुए योगस्थानरूपसे परिणमा कर तथा द्विचरम समयमें और चरम समयमें उत्कृष्ट योगस्थानरूपसे परिणमा कर पुरुषवेदका बन्ध कर अधिकृत त्रिचरम समयमें स्थित हुए जीवके छह फालियोंका द्रव्य विशेष अधिक होता है, क्योंकि जितना अध्वान ऊपर गये हैं उतने द्विचरमोंसे वह अधिक पाया जाता है ।

---

१. ता०प्रतौ 'चढिदेसु लद्धमंतरं' इति पाठः । २. आ०प्रतौ 'परिणदजोगट्ठाणं परिणमिय' इति पाठः ।

§ ३६७. पुणो इमाओ दुचरिमफालीओ चरिमफालिपमाणेण कस्सामो। तं जहा—रूवूणअधापवत्तमेत्ताणं दचरिमफालीणं जदि एगा चरिमफाली लब्भदि तो ओदिण्णद्धाणमेत्ताणं दुचरिमफालीणं किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए लद्धमेत्ता अचरिमफालीओ लब्भंति। पुणो एत्तियमद्धाणं पुणरवि तिचरिमसमयसवेदो ओदारेदव्वो। संपहि इमम्मि तिचरिमसमयसवेदे तप्पाओग्गजहण्णजोगादो हेट्ठिमद्धाणमेत्ताणि जोगट्ठाणाणि उवरि चडिदे चरिमफालियाए उक्कस्सजोगट्ठाणद्धाणपरिवाडी सयला लद्धा होदि। पुणो एत्तो उवरिमजोगट्ठाणेसु परिणमाविय णाणाजीवे अस्सिदूण वड्ढावेदव्वं जावुक्कस्सजोगट्ठाणं पत्तं ति। एवं वड्ढाविदे उक्कस्सजोगेण बद्धचरिमसमयसवेदस्स तिचरिमफाली तस्सेव दुचरिमफाली च उक्कस्सा जादा। एवमेत्थ पुव्विल्लट्ठाणेहि सह तिगुणजोगट्ठाणद्धाणमेत्तसंतकम्मट्ठाणाणि समधियाणि समुप्पज्जंति १२८|$\frac{१२८}{१५}$|२[1]।

§ ३६८. संपहि एदेण कमेण जाणिदूण ओदारेदव्वं जाव अवगदवेदपढमसमओ त्ति। एवमोदारिदे अवगदवेदपढमसमयम्मि तिसमयूणदोआवलियमेत्तसमयपबद्धाणं सव्वचरिमफालियाहि पादेक्कं सयलजोगट्ठाणद्धाणमेत्तसंतकम्मट्ठाणाणि लद्धाणि त्ति।

---

§ ३६७. पुनः इन द्विचरम फालियोंको चरम फालिके प्रमाणरूपसे करते हैं। यथा—एक कम अधःप्रवृत्तमात्र द्विचरम फालियोंकी यदि एक चरम फालि प्राप्त होती है तो जितना अध्वान नीचे गये हैं उतनी द्विचरम फालियोंमें क्या प्राप्त होगा, इस प्रकार फलराशिसे गुणित इच्छाराशिमें प्रमाणराशिका भाग देने पर जो लब्ध आवे तत्प्रमाण चरम फालियाँ लब्ध आती हैं। पुनः इतना अध्वान जाने तक फिर भी त्रिचरम समयवर्ती सवेदी जीवको उतारना चाहिए। अब इस त्रिचरम समयवर्ती सवेदी जीवके तत्प्रायोग्य जघन्य योगस्थानसे अधस्तन अध्वानमात्र योगस्थान ऊपर चढ़ने पर चरम फालिकी समस्त उत्कृष्ट योगस्थान अध्वान परिपाटी लब्ध हो जाती है। पुनः इससे आगे उपरिम योगस्थानोंमें परिणमन कराते हुए नाना जीवोंका आश्रय लेकर उत्कृष्ट योगस्थानके प्राप्त होने तक बढ़ाना चाहिए। इस प्रकार बढ़ाने पर उत्कृष्ट योगसे बाँधी गई चरम समयवर्ती सवेदी जीवकी त्रिचरम फालि और उसीकी द्विचरम फालि उत्कृष्ट हो जाती है। इस प्रकार यहाँ पर पहलेके स्थानोंके साथ, साधिक तिगुने योगस्थान अध्वानमात्र सत्कर्मस्थान उत्पन्न होते हैं २२८ $\frac{१}{५}$ ३।

§ ३६८. अब इस क्रमसे जानकर अपगतवेदी जीवको प्रथम समयके प्राप्त होने तक उतारना चाहिए। इस प्रकार उतारने पर अपगतवेदी जीवके प्रथम समयमें तीन समयकम दो आवलिमात्र समयप्रबद्धोंकी सब अन्तिम फालियोंके साथ अलग अलग समस्त योगस्थान अध्वान मात्र सत्कर्मस्थान लब्ध आते हैं। इन्हें पृथक् स्थापित करना चाहिए। पुनः चरम समयवर्ती

---

१. ता०प्रतौ '१२८, २, $\frac{२}{२}$, १२८, २।' इति पाठः।

एदाणि पुध ठवेदव्वाणि। पुणो चरिमसमयसवेदस्स चरिमफालियाए घोलमाणजहण्णजोगप्पहुडि उवरिमजोगट्ठाणमेत्ताणि चेव पदेससंतकम्मट्ठाणाणि लद्धाणि ण हेट्ठिमाणि। पुणो तिस्से चेवप्पणो समयूणावलियमेत्तदुचरिमादिफालियासु तत्थ एगदुचरिमफालियाए लद्धट्ठाणमसंखेज्जाणि खंडाणि कादूण तत्थ एगखंडे घोलमाणजहण्णजोगस्स हेट्ठा आणेदूण संधिदे तीए वि उक्कस्सजोगट्ठाणद्धाणमेत्ताणि पदेससंतकम्मट्ठाणाणि लद्धाणि त्ति कादूण एगम्मि सयलजोगट्ठाणद्धाणे दुसमयूणदोआवलियाहि विसेसाहियाहि गुणिदे सव्वपदेससंतकम्मट्ठाणाणि होंति। किमट्ठं दुसमयूणदोआवलियाओ विसेसाहियाओ कदाओ? ण, दुचरिमादिफालियाहि लद्धट्ठाणेसु मेलाविदेसु सव्वजोगट्ठाणाणमसंखेज्जदिभागस्सुवलंभादो। तं जहा—इमं संदिट्ठिं ठविय एत्थ दुसमयूणदोआवलियमेत्तसव्वचरिमफालीओ सव्वसुण्णाणि च अवणेदूण सेसखेत्तं पदरावलियपमाणेण कस्सामो। तं जहा—दुसमयूणावलियसंकलणखेत्ते सेसखेत्तादो अवणिय पुध ठविदे उव्वरिदखेत्तं समयूणावलियवग्गमेत्तं ति तस्स पुध विणासो कायव्वो—

१													
१	१												
१	१	१											
१	१	१	१										
१	१	१	१	१									
१	१	१	१	१	१								
१	१	१	१	१	१	१							
१	१	१	१	१	१	१	१						
०	१	१	१	१	१	१	१	१					
०	०	१	१	१	१	१	१	१	१				
०	०	०	१	१	१	१	१	१	१	१			
०	०	०	०	१	१	१	१	१	१	१	१		
०	०	०	०	०	१	१	१	१	१	१	१	१	
०	०	०	०	०	०	१	१	१	१	१	१	१	१

१	१	१	१	१	१	१
१	१	१	१	१	१	१
१	१	१	१	१	१	१
१	१	१	१	१	१	१
१	१	१	१	१	१	१
१	१	१	१	१	१	१
१	१	१	१	१	१	१

संपहि सेसखेत्तस्स समकरणे कदे समयूणावलियायामं दुसमयूणावलियाए विक्खंभखेत्तं अद्धं होदूण चेट्ठदि। तस्स

सवेदी जीवकी अन्तिम फालिमें घोलमान जघन्य योगसे लेकर उपरिम योगस्थानमात्र ही प्रदेशसत्कर्मस्थान लब्ध आते हैं, अधस्तन नहीं। पुनः उसकी ही जो अपनी एक समय कम आवलिमात्र द्विचरम आदि फालियाँ हैं उनमेंसे एक द्विचरम फालिके प्राप्त हुए स्थानके असंख्यात खण्ड करके उनमेंसे एक खण्डको घोलमान जघन्य योगके नीचे लाकर मिलाने पर उसके भी उत्कृष्ट योगस्थानअध्वानमात्र प्रदेशसत्कर्मस्थान लब्ध आते हैं ऐसा समझकर एक पूरे योगस्थान अध्वानको विशेष अधिक दो समय कम दो आवलियोंसे गुणित करने पर सब प्रदेशसत्कर्मस्थान होते हैं।

शंका—दो समय कम दो आवलियाँ विशेष अधिक क्यों की हैं?

समाधान—नहीं, क्योंकि द्विचरम आदि फालिरूपसे प्राप्त हुए स्थानोंके मिलाने पर सब योगस्थानोंका असंख्यातवाँ भाग उपलब्ध होता है। यथा—(यहां पर मूलमें दी गई संदृष्टि देखिए)। इस संदृष्टिको स्थापित करके यहाँ पर दो समय कम दो आवलिमात्र सब चरम फालियोंको और सब शून्योंको अलग करके शेष क्षेत्रको प्रतरावलिके प्रमाणरूपसे करते हैं। यथा-दो समय कम आवलिप्रमाण संकलन क्षेत्रको शेष क्षेत्रमेंसे निकालकर पृथक् स्थापित करने पर बाकी बचा क्षेत्र एक समयकम आवलिके वर्गप्रमाण होता है, इसलिए उसका अलगसे विन्यास करना चाहिए (मूलमें दी गई संदृष्टि यहां पर लिजिए)। अब शेष क्षेत्रका समीकरण करने पर एक समय कम आवलिप्रमाण आयामको लिए

पमाणमेदं—

१	१	१
१	१	१
१	१	१
१	१	१
१	१	१
१	१	१
१	१	१

। पुणो एत्थ समयूणावलियायामाओ दोफालीओ घेत्तूण पुव्विल्लखेत्तस्स दोसु वि फासेसु फालिय संधिदासु दोसु फासेसु आवलियमेत्ता-यामं सेसदोफासेसु समयूणावलियमेत्तं होदूण चेट्ठदि, एगफालियाए वग्गमेत्तेणूणत्तादो। तं चेदं—

१	१	१	१	१	१	१	०
१	१	१	१	१	१	१	१
१	१	१	१	१	१	१	१
१	१	१	१	१	१	१	१
१	१	१	१	१	१	१	१
१	१	१	१	१	१	१	१
१	१	१	१	१	१	१	१
१	१	१	१	१	१	१	१

। पुणो गहिद-सेसं समयूणावलियायामं दुसमयूणावलियाए अद्धं दुरूवूणमेत्तविक्खंभं होदूण चेट्ठदि। तस्स पमाणमेदं—

१
१
१
१
१
१
१

। पुणो एदस्स आयामे विक्खंभेण गुणिदे जं फलं तत्थ एगरूवं घेत्तूण पुव्वुत्तूणखेत्तम्मि ट्ठविदे संपुण्णा पदरावलिया होदि। सा एसा—

१	१	१	१	१	१	१	१
१	१	१	१	१	१	१	१
१	१	१	१	१	१	१	१
१	१	१	१	१	१	१	१
१	१	१	१	१	१	१	१
१	१	१	१	१	१	१	१
१	१	१	१	१	१	१	१
१	१	१	१	१	१	१	१

। संपहि एदाओ फालियाओ जदि वि सरिसाओ ण होंति तो वि बुद्धीए दुचरिमफालिसमाणाओ त्ति घेत्तव्वं। पुणो एदाओ चरिमफालिपमाणेण कस्सामो। तं जहा—रूवूणअधापवत्तमेत्तदुचरिमफालियाणं जदि एगचरिमफाली लब्भदि तो उक्कस्सजोगट्ठाणपक्खेवभागहारमेत्त-दुचरिमफालीणं केत्तियाओ चरिमफालीओ लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए रूवूणअधापवत्तभागहारेण उक्कस्सजोगट्ठाण-

---

हुए और दो समय कम आवलिके अर्धभागप्रमाण विष्कम्भको लिए हुए होकर क्षेत्र स्थित होता है। उसका प्रमाण यह है—(संदृष्टि मूलमें देखिए।) पुनः यहां पर एक समय कम आवलिप्रमाण आयामवाली दो फालियोंको ग्रहण करके पहलेके क्षेत्रके दोनों ही पार्श्वोंमें फाड़कर मिला देने पर दोनों ही पार्श्वोंमें आवलिप्रमाण आयामवाला तथा शेष दो पार्श्वोंमें एक समयकम आवलिप्रमाण क्षेत्र स्थित होता है, क्योंकि एक फालिके वर्गसे वह न्यून है। वह क्षेत्र यह है—(संदृष्टि मूलमें देखिए।) पुनः ग्रहण किये गयेसे शेष बचा क्षेत्र एक समय कम आवलिप्रमाण लम्बा तथा दो समय कम आवलिके अर्धभागमें से दो रूप कम करने पर जो शेष बचे उतना विष्कम्भवाला होकर स्थित होता है। उसका प्रमाण यह है—(संदृष्टि मूलमें देखिए)। पुनः इसके आयामको विष्कम्भसे गुणित करने पर जो फल प्राप्त हो उसमेंसे एक रूपको ग्रहणकर पूर्वोक्त न्यून क्षेत्रमें स्थापित करने पर सम्पूर्ण प्रतरावलि होती है। वह यह है—(संदृष्टि मूलमें देखिये)।

अब ये फालियाँ यद्यपि समान नहीं होती हैं तो भी बुद्धिसे द्विचरम फालिके समान हैं ऐसा ग्रहण करना चाहिये। पुनः इनको अन्तिम फालिके प्रमाणरूपसे करते हैं। यथा—एक कम अधःप्रवृत्तप्रमाण द्विचरम फालियोंकी यदि एक चरम फालि प्राप्त होती है तो उत्कृष्ट योगस्थानके प्रक्षेप भागहारप्रमाण द्विचरम फालियोंकी कितनी चरम फालियाँ प्राप्त होती हैं, इस प्रकार फलराशिसे गुणित इच्छाराशिमें प्रमाणराशिका भाग देने पर एक कम अधस्तन भागहारका उत्कृष्ट योगस्थानके प्रक्षेप भागहारमें भाग देने पर वहाँ एक खण्डप्रमाण

पक्खेवभागहारे खंडिदे तत्थ एयखंडमेत्ताओ चरिमफालियाओ लब्भंति ।

§ ३६९. संपहि एक्किस्से दुचरिमफालियाए जदि सगलजोगट्ठाणद्धाणं रूवूणअधापवत्तेण खंडेदूण तत्थ एगखंडमेत्ताओ चरिमफालियाओ लब्भंति तो किंचूणअद्धाहियपदरावलियमेत्तदुचरिमाणं किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए साद्धपदरावलियाए खंडियरूवूणअधापवत्तभागहारेण उक्कस्सजोगट्ठाणपक्खेव-भागहारे ओवट्टिदे लद्धम्मि जत्तियाओ चरिमफालीओ तत्तियमेत्ताणि चेव पदेससंतकम्मट्ठाणाणि लब्भंति । एदाणि सव्वट्ठाणाणि सयलजोगट्ठाणस्स असंखे०भागमेत्ताणि होंति त्ति । एदेसिमागमणट्ठं गुणगारम्मि एगरूवस्स असंखे०भागो पक्खिविदव्वो । तम्हा दोहि आवलियाहि दुसमयूणाहि पदुप्पण्णजोगट्ठाणमेत्ताणि पुरिसवेदस्स पदेससंतकम्मट्ठाणाणि होंति त्ति सिद्धं ।

§ ३७०. अथवा अण्णेण पयारेण जोगट्ठाणाणं दुसमयूणदोआवलियगुणगारसाहणं च कस्सामो । तं जहा—चरिमसमयसवेदेण घोलमाणजहण्णजोगेण बद्धजहण्णदव्वस्सुवरि पक्खेवुत्तरादिकमेण वड्ढाविय णेदव्वं जाव उक्कस्सजोगट्ठाणं पत्तं ति । एवं णीदे एगा चरिमफाली उक्कस्सा जादा । संपहि अण्णेगो दुचरिमसमए चरिमसमए वि अद्धजोगेण चेव बंधिदूण पुणो अधियारदुचरिमसमए अवट्ठिदो तस्स तिण्णि फालीओ दीसंति । संपहि एगफालिउक्कस्सदव्वादो तिण्णिफालिखवगस्स दव्वं विसेसाहियं । दोसु अद्धजोगचरिमफालिसु एगुक्कस्सजोगचरिमफाली होदि त्ति अवणिदासु

चरम फालियाँ प्राप्त होती हैं ।

§ ३६९. अब यदि एक द्विचरम फालिके समस्त योगस्थान अध्वानको एक कम अधःप्रवृत्तसे भाजित कर वहाँ एक भागप्रमाण चरम फालियाँ प्राप्त होती हैं तो कुछ कम अर्धभाग अधिक प्रतरावलिमात्र द्विचरमोंमें क्या प्राप्त होगा, इसप्रकार फलराशिसे गुणित इच्छाराशिमें प्रमाणराशिका भाग देने पर अर्धभागसहित प्रतरावलिसे भाजित एक कम अधःप्रवृत्तभागहारका उत्कृष्ट योगस्थानके प्रक्षेपभागहारमें भाग देने पर लब्ध रूपमें जितनी अन्तिम फालियां हों उतने ही प्रदेशसत्कर्मस्थान प्राप्त होते हैं । ये सब स्थान समस्त योगस्थानके असंख्यातवें भाग-प्रमाण होते हैं, इसलिए इनके लाने के लिए गुणकारमें एक रूपका असंख्यातवां भाग मिलाना चाहिए । इसलिए दो समय कम दो आवलियोंसे उत्पन्न योगस्थानप्रमाण पुरुषवेदके सत्कर्म-स्थान होते हैं यह सिद्ध हुआ ।

§ ३७०. अथवा अन्य प्रकारसे योगस्थानोंके दो समय कम दो आवलिप्रमाण गुणकारकी सिद्धि करते हैं । यथा—चरम समयवर्ती सवेदी जीवके द्वारा घोलमान जघन्य योगसे बांधे गये जघन्य द्रव्यके ऊपर एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे बढ़ाकर उत्कृष्ट योगस्थानके प्राप्त होने तक लेजाना चाहिये । इस प्रकार ले जाने पर एक चरम फालि उत्कृष्ट हुई । अब एक अन्य जीव द्विचरम समयमें और चरम समयमें भी अर्ध योगसे ही बांधकर पुनः अधिकृत द्विचरम समयमें अवस्थित है उसके तीन फालियाँ दिखलाई देती हैं । अब एक फालिके उत्कृष्ट द्रव्यसे तीन फालि क्षपकका द्रव्य विशेष अधिक है । दो अर्ध योग चरम

चरिमसमयसवेदेण अद्धजोगेण बद्धदुचरिमफालीए अहियत्तुवलंभादो। संपहि अद्धजोगपक्खेवभागहारमेत्तदुचरिमफालीओ चरिमफालिपमाणेण कीरमाणाओ रूवूणअधापवत्तभागहारेण ओवट्टिदअद्धजोगपक्खेवभागहारमेत्ताओ होंति त्ति तेत्तियमेत्तमद्धाणं दुचरिमसमयसवेदो अद्धजोगादो हेट्ठा ओदारेदव्वो। एवमेदेहि जोगेहि परिणदखवगतिण्णिफालीओ उक्कस्सजोगेण परिणदखवगेगफालीओ समाणाओ, ओवट्टिदअधियदव्वत्तादो।

§ ३७१. संपधि इमो दुचरिमसमयसवेदो पक्खेवुत्तरकमेण वड्ढावेदव्वो जाव अद्धजोगं पत्तो त्ति। एवं वड्ढाविदे पुव्विल्लअद्धजोगेण बद्धदुचरिमफाली पक्खेवुत्तरकमेण सयला वड्ढिदा त्ति। संपहि अद्धजोगादो उवरि दुचरिमसमयसवेदे पक्खेवुत्तरकमेण जावुक्कस्सजोगट्ठाणं ति ताव वड्ढमाणे चरिमफालियाए अद्धजोगपक्खेवभागहारमेत्तट्ठाणाणि लद्धाणि होंति। संपहि सवेदचरिमसमए उक्कस्सजोगेण दुचरिमसमए अद्धजोगेण पुरिसवेदं बंधिय अधियारदुचरिमसमए ट्ठिदस्स तिण्णिफालिदव्वं पुव्विल्लतिण्णिफालि-दव्वादो विसेसाहियं, चडिदद्धाणमेत्तदुचरिमफालीणमहियाणमुवलंभादो। पुणो एदाओ अधियदुचरिमफालीओ चरिमफालिपमाणेण कीरमाणाओ रूवूणअधापवत्तभागहारेणो-वट्टिदअद्धजोगपक्खेवभागहारमेत्ताओ चरिमफालीओ होंति त्ति पुणरवि अद्धजोगादो

फालियोंमें एक उत्कृष्ट योग चरम फालि होती है, इसलिए उनके अलग कर देने पर चरम समयवर्ती सवेदी जीवके द्वारा अर्ध योगसे बद्ध द्विचरम फालि अधिक उपलब्ध होती है। अब अर्ध योग प्रक्षेप भागहारमात्र द्विचरम फालियोंको चरम फालिके प्रमाणसे करनेपर वे एक कम अधःप्रवृत्त भागहारसे भाजित अर्ध योग प्रक्षेपभागहारप्रमाण होती हैं, इसलिए द्विचरम समयवर्ती सवेदी जीवको अर्ध योगसे नीचे उतने अध्वानप्रमाण उतारना चाहिये। इस प्रकार इन योगोंसे परिणत हुए क्षपककी तीन फालियां उत्कृष्ट योगसे परिणत हुए क्षपककी एक फालि समान हैं, क्योंकि अधिक द्रव्यका अपवर्तन हो गया है।

§ ३७१. अब इस द्विचरम समयवर्ती सवेदी जीवको एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे अर्ध योगके प्राप्त होने तक बढ़ाना चाहिए। इस प्रकार बढ़ाने पर पहले अर्ध योगसे बांधी गई द्विचरम फालि एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे समस्त बढ़ गई है। अब अर्ध योगसे ऊपर द्विचरम समयवर्ती सवेदी जीवके एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे उत्कृष्ट योगस्थानके प्राप्त होने तक बढ़ाने पर चरम फालिके अध भाग प्रक्षेप भागहारमात्र स्थान प्राप्त होते हैं। अब सवेदी जीवके चरम समयमें उत्कृष्ट योगसे तथा द्विचरम समयमें अर्ध योगसे पुरुषवेदको बाँधकर अधिकृत द्विचरम समयमें स्थित हुए जीवके तीन फालियोंका द्रव्य पहलेकी तीन फालियोंके द्रव्यसे विशेष अधिक है, क्योंकि जितने स्थान आगे गये हैं उतनी द्विचरम फालियां अधिक उपलब्ध होती हैं। पुनः इन अधिक द्विचरम फालियोंको चरम फालिके प्रमाणसे करने पर एक कम अधःप्रवृत्त भागहारसे भाजित अर्ध योग प्रक्षेप भागहार प्रमाण चरम फालियां होती हैं, इसलिए फिर भी अर्ध योगसे नीचे

---

१. आ०प्रतौ '-कमेण वड्ढावेदव्वं। एवं णेदव्वं-' इति पाठः।

हेट्ठा एत्तियमेत्तमद्धाणं दुचरिमसमयसवेदो ओदारेदव्वो। एवमेदेहि जोगेहि परिणमिय अधियारदुचरिमसमयट्ठिदस्स तिण्णिफालिदव्वं पुव्विल्लतिण्णिफालिदव्वेण सरिसं, ओवट्टिदअहियदव्वत्तादो।

§ ३७२. संपहि दुचरिमसमयसवेदो पक्खेवुत्तरकमेण वड्ढावेदव्वो जाव अद्धजोगं पत्तो त्ति। एवं वड्ढाविदे दुचरिमफाली उक्कस्सा जादा, रूवूणअधापवत्तभागहारेण ओवट्टिदअद्धजोगपक्खेवभागहारे दुगुणिदे रूवूणअधापवत्तभागहारेणोवट्टिदउक्कस्सजोगपक्खेवभागहारपमाणाणुवलंभादो[1]। संपहि अद्धजोगादो उवरि पक्खेवुत्तरकमेण दुचरिमसमयसवेदो वड्ढावेदव्वो जाव उक्कस्सजोगट्ठाणं पत्तो त्ति। एवं वड्ढाविदे चरिमफालियाए सयलजोगट्ठाणद्धाणमेत्ताणि पदेससंतकम्मट्ठाणाणि लद्धाणि, अद्धजोगपक्खेववेभागहारमेत्तसंतकम्मट्ठाणाणं दोवारमुवलंभादो। एत्थ एत्तियाणि चेव पदेससंतकम्मट्ठाणाणि[2] लब्भंति, तिण्हं फालीणमुक्कस्सभावुवलंभादो।

§ ३७३. संपहि अण्णेगो सवेदस्स चरिम-दुचरिम-तिचरिमसमएसु तिभागूणुक्कस्सजोगेण बंधिय अधियारतिचरिमसमए अवट्ठिदो एदम्मि छप्फालीओ दीसंति। एदासिं छण्हं फालीणं दव्वं पुव्विल्लतिण्णिफालिदव्वादो विसेसाहियं, तिण्हं चरिमफालीणं वेतिभागेहि दोउक्कस्सचरिमफालीओ होंति दुचरिमफालीए दोहि वेतिभागेहि सतिभागा एगा उक्कस्सजोगदुचरिमफाली होदि त्ति पुव्विल्लतिण्णिफालिदव्वादो एदं दव्वं सरिसं

द्विचरम समयवर्ती सवेदी जीवको इतनामात्र अध्वान उतारना चाहिये। इस प्रकार इन योगोंसे परिणमा कर अधिकृत द्विचरम समयमें स्थित हुए जीवकी तीन फालियोंका द्रव्य पहलेकी तीन फालियोंके द्रव्यके समान है, क्योंकि अधिक द्रव्यका अपवर्तन हो गया है।

§ ३७२. अब द्विचरम समयवर्ती सवेदी जीवको एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे अर्ध योगके प्राप्त होने तक बढ़ाना चाहिए। इस प्रकार बढ़ाने पर द्विचरम फालि उत्कृष्ट हो जाती है, क्योंकि एक कम अधःप्रवृत्त भागहारसे भाजित अर्ध योग प्रक्षेप भागहारके द्विगुणित करने पर एक कम अधःप्रवृत्त भागहारसे भाजित उत्कृष्ट योग प्रक्षेपभागहारका प्रमाण उपलब्ध होता है। अब अर्धयोगके ऊपर एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे उत्कृष्ट योगस्थानके प्राप्त होने तक द्विचरम समयवर्ती सवेदी जीवको बढ़ाना चाहिये। इस प्रकार बढ़ाने पर चरम आवलिके समस्त योगस्थान अध्वानमात्र प्रदेशसत्कर्मस्थान लब्ध आते हैं, क्योंकि अर्ध योग प्रक्षेपके दो भागहारमात्र सत्कर्मस्थान दो बार उपलब्ध होते हैं। यहां पर इतने ही प्रदेशसत्कर्मस्थान लब्ध आते हैं, क्योंकि तीन फालियोंकी उत्कृष्टता उपलब्ध होती है।

§ ३७३. अब अन्य एक जीव सवेद भागके चरम, द्विचरम और त्रिचरम समयोंमें तृतीय भाग कम उत्कृष्ट योगसे बन्ध कर अधिकृत स्थितिके त्रिचरम समयमें अवस्थित है। तब इसके छह फालियां दिखलाई देती हैं। इन छह फालियोंका द्रव्य पहलेकी तीन फालियोंके द्रव्यसे विशेष अधिक है जो तीन चरम फालियोंके दो त्रिभागके साथ दो उत्कृष्ट चरम फालियाँ होती हैं तथा द्विचम फालिके दो त्रिभागोंके साथ एक त्रिभागसहित उत्कृष्ट योग द्विचरम

---

१. ता०प्रतौ 'पमाणावलंभादो' इति पाठः। २. आ०प्रतौ 'चेव संतकम्मट्ठाणाणि' इति पाठः।

त्ति अवणिदे चरिमसमयसवेदस्स दुचरिमफालियाए तिभागेण सह तस्सेव तिचरिमफालियाए वेतिभागाणमहियाणमुवलंभादो। तिभागूणुक्कस्सजोगेणेगजीवस्स णिरंतरतिसु समएसु परिणामो विरुज्झदि त्ति ण पच्चवट्ठेयं, बालजणाणुग्गहट्ठं तहापदुप्पायणाए विरोहाभावादो। संपहि एदम्मि अहियदव्वे चरिमफालिपमाणेण कीरमाणे रूवूणअधापवत्तभागहारेणोवट्टिदउक्कस्सजोगट्ठाणपक्खेवभागहारमेत्ताओ सविसेसाओ चरिमफालीओ होंति त्ति तिचरिमसमयसवेदो तिभागूणुक्कस्सजोगट्ठाणादो हेट्ठा एत्तियमेत्तमद्धाणमोदारेदव्वं। एवमोदारिदे पुव्विल्लुक्कस्सतिण्णिफालिदव्वेण एदं छप्फालिदव्वं सरिसं होदि, ओवट्टिदअहियदव्वत्तादो। संपहि इमो चरिमसमयसवेदो पक्खेवुत्तरकमेण वड्ढावेदव्वो जाव तिभागूणुक्कस्सजोगं पत्तो त्ति। एवं वड्ढाविदे सव्वमंतरं पक्खेवुत्तरकमेण पविट्ठं होदि। संपहि एत्तो उवरिं पि पक्खेवुत्तरकमेण वड्ढावेदव्वो जाव उक्कस्सजोगट्ठाणं पत्तो त्ति। एवं वड्ढाविदे तिचरिमसमयसवेदस्स चरिमफालियाए उक्कस्सजोगट्ठाणपक्खेवभागहारस्स तिभागमेत्ताणि संतकम्मट्ठाणाणि लद्धाणि होंति। संपहि सवेदतिचरिमसमए तिभागूणुक्कस्सजोगेण तद्दुचरिमसमए उक्कस्सजोगेण चरिमसमए वि तिभागूणुक्कस्सजोगेण

फालि होती है, इसलिए पहलेकी तीन फालियोंके द्रव्यसे यह द्रव्य समान है, इसलिए अलग कर देने पर चरम समयवर्ती सवेदी जीवके द्विचरम फालिके त्रिभागके साथ उसीके त्रिचरम फालिके दो त्रिभाग अधिक उपलब्ध होते हैं।

शंका—तृतीय भाग कम उत्कृष्ट योगसे एक जीवके निरन्तर तीन समयोंमें परिणमन विरोधको प्राप्त होता है ?

समाधान—ऐसा निश्चय नहीं करना चाहिए, क्योंकि बाल जनोंके अनुग्रहके लिए उस प्रकारका कथन करने पर कोई विरोध नहीं आता।

अब इस अधिक द्रव्यके अन्तिम फालिके प्रमाणसे करने पर एक कम अधःप्रवृत्त भागहारसे भाजित उत्कृष्ट योगस्थानके सविशेष प्रक्षेप भागहारप्रमाण चरम फालियाँ होती हैं, इसलिए त्रिचरम समयवर्ती सवेदी जीवको तृतीय भाग कम उत्कृष्ट योगस्थानसे नीचे इतने मात्र अध्वान उतारना चाहिए। इस प्रकार उतारने पर पहलेके उत्कृष्ट तीन फालियोंके द्रव्यसे यह छह फालियोंका द्रव्य समान होता है, क्योंकि अधिक द्रव्यका अपवर्तन हो गया है। अब इस चरम समयवर्ती सवेदी जीवको एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे तृतीय भाग कम उत्कृष्ट योगके प्राप्त होने तक बढ़ाना चाहिए। इस प्रकार बढ़ाने पर सब अन्तर एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे प्रविष्ट होता है। अब इसके ऊपर भी एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे उत्कृष्ट योगस्थानके प्राप्त होने तक बढ़ाना चाहिए। इस प्रकार बढ़ाने पर त्रिचरम समयवर्ती सवेदी जीवके चरम फालिके उत्कृष्ट योगस्थान प्रक्षेप भागहारके त्रिभागप्रमाण सत्कर्मस्थान लब्ध आते हैं। अब सवेदी जीवके त्रिचरम समयमें त्रिभाग कम उत्कृष्ट योगसे, उसके द्विचरम समयमें उत्कृष्ट योगसे तथा चरम समयमें भी त्रिभाग कम उत्कृष्ट योगसे ही पुरुषवेदका बन्ध

---

१. ता०प्रतौ 'जोगेणतदुचरिमसमए' इति पाठः।

चेव पुरिसवेदं बंधिय अधियारतिचरिमसमए ट्ठिदतिभागूणुक्कस्सक्खवगछप्फालीओ पव्विल्लछप्फालीहिंतो विसेसाहियाओ, चडिदद्धाणमेत्तदुचरिमफालीणमहियत्तुवलंभादो ।

३७४. संपहि इमाओ अहियदुचरिमफालीओ चरिमफालिपमाणेण कीरमाणाओ रूवूणअधापवत्तभागहारेणोवट्टिदुक्कस्सजोगट्ठाणपक्खेवभागहारतिभागमेत्ताओ चरिमफालीओ होंति त्ति तिचरिमसमयसवेदो पुणरवि हेट्ठा एत्तियमेत्तमोदारेदव्वो। एवमोदारिय पुणो इमो पक्खेवुत्तरकमेण वड्ढावेदव्वो जाव उक्कस्सजोगट्ठाणं पत्तो त्ति । एवं वड्ढाविदे दुचरिमफालिणिमित्तमोदरियमद्धाणं तिचरिमसमयसवेदस्स विदियतिभागमेत्तजोगट्ठाणद्धाणं च लद्धं होदि[1] । संपहि सवेदचरिमसमए दुचरिमसमए च उक्कस्सजोगेण तिचरिमसमए तिभागूणुक्कस्सजोगेण पुरिसवेदं बंधिय अधियारतिचरिमसमयम्मि ट्ठिदस्स छप्फालिदव्वं पुव्विल्लछप्फालिदव्वादो विसेसाहियं, उक्कस्सजोगट्ठाणपक्खेवभागहारस्स तिभागमेत्ताणं दुचरिम-तिचरिमफालीणमहियत्तुवलंभादो ।

§ ३७५. संपहि इमाओ दुचरिम-तिचरिमफालीओ चरिमफालिपमाणेण कीरमाणाओ रूवूणअधापवत्तभागहारेणोवट्टिदुक्कस्सजोगट्ठाणभागहारस्स सादिरेयवेतिभागमेत्ताओ चरिमफालीओ होंति त्ति पुणरवि एत्तियमेत्तमद्धाणं तिचरिमसमयसवेदो हेट्ठा ओदारेदव्वो । संपहि इमो तिचरिमसमयसवेदो पक्खेवुत्तरकमेण वड्ढावेदव्वो जाव

कर अधिकृत त्रिचरम समयमें स्थित हुई त्रिभाग कम उत्कृष्ट क्षपकसम्बन्धी छह फालियाँ पहलेकी छह फालियोंसे विशेष अधिक हैं, क्योंकि जितने स्थान आगे गये हैं उतनी द्विचरम फालियोंकी अधिकता पाई जाती है ।

§ ३७४. अब इन अधिक द्विचरम फालियोंको चरम फालिके प्रमाणसे करने पर एक कम अधःप्रवृत्तभागहारसे भाजित उत्कृष्ट योगस्थान प्रक्षेप भागहारके त्रिभागप्रमाण चरम फालियाँ होती हैं, इसलिए त्रिचरम समयवर्ती सवेदी जीवको फिर भी नीचे इतना उतारना चाहिए। इस प्रकार उतार कर पुनः इसे एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे उत्कृष्ट योगस्थानके प्राप्त होने तक बढ़ाना चाहिए। इस प्रकार बढ़ाने पर द्विचरम फालिका निमित्तभूत अवतरित अध्वान और त्रिचरम समयवर्ती सवेदी जीवके द्वितीय त्रिभागमात्र योगस्थान अध्वान लब्ध होता है । अब सवेद भागके अन्तिम समयमें और द्विचरम समयमें तथा उत्कृष्ट योगसे त्रिचरम समयमें तृतीय भाग कम उत्कृष्ट योगसे पुरुषवेदको बाँध कर अधिकृत त्रिचरम समयमें स्थित हुए जीवके छह फालिका द्रव्य पहलेकी छह फालियोंके द्रव्यसे विशेष अधिक है, क्योंकि उत्कृष्ट योगस्थानके प्रक्षेप भागहारके तृतीय भागप्रमाण द्विचरम और त्रिचरम फालियोंकी अधिकता पाई जाती है ।

§ ३७५. अब इन द्विचरम और त्रिचरम फालियोंको चरम फालिके प्रमाणसे करने पर एक कम अधःप्रवृत्तभागहारसे भाजित उत्कृष्ट योगस्थान भागहारकी साधिक दो तीन भागप्रमाण चरम फालियाँ होती हैं, इसलिए फिर भी त्रिचरम समयवर्ती सवेदी जीवको इतना मात्र अध्वान नीचे उतारना चाहिए। अब इस त्रिचरम समयवर्ती सवेदी जीवको एक

---

१. आ०प्रतौ '–जोगट्ठाणद्धाणं वत्तव्वं होदि–' इति पाठः ।

तिभागूणुक्कस्सजोगट्ठाणं पत्तो त्ति । एवं वड्ढाविदे पुव्विल्लमूणिददव्वं पक्खेवुत्तरकमेण पविट्ठं होदि । संपहि उवरिमतिभागं पि तिचरिमसमयसवेदो वड्ढाविय णेदव्वो जाव उक्कस्सजोगट्ठाणं पत्तो त्ति । एवं णीदे तिचरिमसमयसवेदस्स चरिमफालियाए सगलजोगट्ठाणद्धाणमेत्ताणि पदेससंतकम्मट्ठाणाणि लद्धाणि, उक्कस्सजोगट्ठाणभागहारस्स तीहि तिभागेहि सयलजोगट्ठाणद्धाणसमुप्पत्तीए । एवं छप्फालीओ उक्कस्सभावं णीदाओ । एवं चदुब्भागूणादिजोगट्ठाणेसु समयाविरोहेण परिणमाविय ओदारेदव्वं जाव अवगदवेदपढमसमओ त्ति । एवमोदारिय पुणो पदेससंतकम्मट्ठाणाणं पमाणपरूवणाए कीरमाणाए सादिरेयदुसमयूणदोआवलियमेत्तो सयलजोगट्ठाणद्धाणस्स गुणगारो पुव्वं व साहेयव्वो ।

§ ३७६. अहवा अण्णेण पयारेण दुसमयूणदोआवलियमेत्तगुणगारुप्पायणं कस्सामो । तं जहा—घोलमाणजहण्णजोगट्ठाणप्पहुडि पक्खेवुत्तरकमेण चरिमसमयसवेदो वड्ढावेदव्वो जाव घोलमाणजहण्णजोगट्ठाणादो सादिरेयदुगुणमेत्तं जोगट्ठाणं पत्तो त्ति । संपहि एदेण दव्वेण अण्णेगो सवेददुचरिमसमए चरिमसमए च घोलमाणजहण्णजोगेण पुरिसवेदं बंधिय अधियारदुचरिमसमयम्मि तिण्णि फालीओ धरिय ट्ठिदो सरिसो, घोलमाणजहण्णजोगट्ठाणपक्खेवभागहारं रूवूणअधापवत्तभागहारेण खंडिय तत्थ एगखंडेणब्भहियतब्भागहारमेत्तमुवरि चढिय एगफालिखवगस्स अवट्ठाणुवलंभादो । पुणो

एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे तृतीय भाग कम उत्कृष्ट योगस्थानके प्राप्त होने तक बढ़ाना चाहिए । इस प्रकार बढ़ाने पर पहलेका कम किया गया द्रव्य एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे प्रविष्ट होता है । अब त्रिचरम समयवर्ती सवेदी जीव उपरिम त्रिभागको भी बढ़ाकर उत्कृष्ट योगस्थानके प्राप्त होने तक ले जावे । इस प्रकार ले जाने पर त्रिचरम समयवर्ती सवेदी जीवके चरम फालिके समस्त योगस्थानके अध्वानप्रमाण प्रदेशसत्कर्मस्थान लब्ध होते हैं, क्योंकि उत्कृष्ट योगस्थान भागहारके तीन त्रिभागोंके द्वारा सकल योगस्थान अध्वानकी उत्पत्ति होती है । इस प्रकार छह फालियाँ उत्कृष्टपनेको ले जाई गई हैं । इस प्रकार चतुर्थ भाग कम आदि योगस्थानोंमें समयके अविरोधरूपसे परिणमा कर अपगतवेदके प्रथम समय तक उतारना चाहिए । इस प्रकार उतार कर पुनः प्रदेशसत्कर्मस्थानोंके प्रमाणकी प्ररूपणा करने पर सकल योगस्थान अध्वानका गुणकार साधिक दो समय कम दो आवलिप्रमाण पहलेके समान साधना चाहिए ।

§ ३७६. अथवा अन्य प्रकारसे दो समय कम दो आवलिप्रमाण गुणकारकी उत्पत्ति करनी चाहिए । यथा—घोलमान जघन्य योगस्थानसे लेकर एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे चरम समयवर्ती सवेदी जीवको घोलमान जघन्य योगस्थानसे साधिक दुगुने योगस्थानके प्राप्त होने तक बढ़ाना चाहिए । अब इस द्रव्यके साथ एक अन्य जीव समान है जो सवेद भागके द्विचरम और चरम समयमें घोलमान जघन्य योगसे पुरुषवेदका बन्ध कर अधिकृत द्विचरम समयमें तीन फालियोंको धारण कर स्थित है, क्योंकि घोलमान जघन्य योगस्थानके प्रक्षेप भागहारको एक कम अधःप्रवृत्तभागहारसे भाजित कर वहाँ एक खण्डसे अधिक उसके भागहारप्रमाण ऊपर चढ़कर एक फालि क्षपकका अवस्थान उपलब्ध होता है । पुनः द्विचरम

दुचरिमसमयसवेदो पक्खेवुत्तरकमेण उवरि वड्ढावेदव्वो जाव घोलमाणजहण्णजोगट्ठाणादो सादिरेयदुगुणमेत्तं वड्ढिदं ति । एवं वड्ढिदूण ट्ठिदो च अण्णेगो सवेदतिचरिम-दुचरिम-चरिमसमएसु घोलमाणजहण्णजोगेण पुरिसवेदं बंधिय अधियारतिचरिमसमयम्मि ट्ठिदस्स छप्फालिदव्वं पुव्विल्लतिण्णिफालिदव्वेण सरिसं, घोलमाणजहण्णजोगट्ठाण-पक्खेवभागहारमेत्तजोगट्ठाणाणि उवरि चढिय पुणो रूवूणअधापवत्तभागहारेण दुगुणं चढिदद्धाणं खंडिय तत्थ सादिरेयमेयखंडमुवरि चढिय एयफालिखवगस्स अवट्ठाणुवलंभादो । एवं सरिसं कादूणोदारेदव्वं जाव दुसमयूणदोआवलियमेत्तसमयपबद्धा उप्पण्णा त्ति । एवमोदारिदसव्वसमयपबद्धा जहण्णा चेव । दुसमयूणदोआवलियमेत्त-कालमेगजोगट्ठाणेण परिणमेदुं संभवो णत्थि त्ति सव्वे समयपबद्धा जहण्णा चेवे त्ति वयणं णोववण्णमिदि ण पच्चवट्ठेयं, ओघजहण्णं मोत्तूणोघादेसजहण्णसामण्णस्स एत्थ ग्गहणादो । संपहि इमाओ सव्वफालीओ उक्कस्साओ कस्सामो । तं जहा—सवेदस्स दुचरिमावलियाए तदियसमयम्मि बद्धएगेगसमयपबद्धस्स एगफालिं धरेदूण ट्ठिदखवगो पक्खेवुत्तरकमेण वड्ढावेदव्वो जाव तप्पाओग्गमसंखेज्जगुणजोगं वड्ढिदूण ट्ठिदो त्ति । जेण जोगेणेगसमयं परिणमिय पुणो णंतरविदियसमए घोलमाणजहण्णजोगट्ठाणेण परिणमणसमत्थो होदि तारिसेण जोगट्ठाणेण सवेददुचरिमावलियाए तदियसमयम्मि

समयवर्ती सवेदी जीवको एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे उससे ऊपर घोलमान जघन्य योग-स्थानसे साधिक दुगुनेकी वृद्धि होने तक बढ़ाना चाहिए । इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुआ अन्य एक जीव सवेद भागके त्रिचरम, द्विचरम और चरम समयमें घोलमान जघन्य योगसे पुरुषवेदका बन्ध करके अधिकृत त्रिचरम समयमें स्थित हुए जीवका छह फालियोंका द्रव्य पहलेकी तीन फालियोंके द्रव्यके साथ समान है, क्योंकि घोलमान जघन्य योगस्थानके प्रक्षेप भागहारमात्र योगस्थान ऊपर चढ़ कर पुनः एक कम अधःप्रवृत्त भागहारसे दूने आगे गये हुए स्थानोंको भाजित कर वहाँ साधिक एक भाग ऊपर चढ़कर एक फालि क्षपकका अवस्थान उपलब्ध होता है । इस प्रकार समान करके दो समय कम दो आवलिप्रमाण समयप्रबद्ध उत्पन्न होने तक उतारना चाहिए । इस प्रकार उतारे गये सब समयप्रबद्ध जघन्य ही हैं ।

शंका—दो समय कम दो आवलिप्रमाण काल तक एक योगस्थानरूपसे परिणमाना सम्भव नहीं है, इसलिए सब समयप्रबद्ध जघन्य ही हैं यह वचन नहीं बन सकता है ?

समाधान—ऐसा निश्चय करना ठीक नहीं है, क्योंकि ओघ जघन्यको छोड़कर ओघ आदेश जघन्य सामान्यका यहाँ पर ग्रहण किया है ।

अब इन सब फालियोंको उत्कृष्ट करते हैं । यथा—सवेद भागकी द्विचरमावलिके तृतीय समयमें बन्धको प्राप्त हुए एक एक समयप्रबद्धकी एक फालिको धारण कर स्थित हुए क्षपकको तत्प्रायोग्य असंख्यातगुणे योगको बढ़ाकर स्थित होने तक एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे बढ़ाना चाहिए । जिस योगसे एक समय तक परिणमन करके पुनः अनन्तर द्वितीय समयमें घोलमान जघन्य योगस्थानरूपसे परिणमन करनेमें समर्थ होता है उस प्रकारके योगस्थान रूपसे सवेद भागकी द्विचरमावलिके तृतीय समयमें परिणत हुआ है यह उक्त कथनका भावार्थ है ।

परिणदो त्ति भावत्थो। संपहि सवेददुचरिमावलियाए तदियसमयम्मि जहण्णजोगेण चउत्थसमयम्मि तप्पाओग्गअसंखेज्जगुणजोगेण सेससमएसु जहण्णजोगेणेव पुरिसवेदं बंधिय अवगदवेदपढमसमए ट्ठिदखवगदव्वं पुव्विल्लदव्वादो सादिरेयं, चडिदद्धाणमेत्तदुचरिमफालीणमहियाणमुवलंभादो।

§ ३७७. संपहि एगफालिखवगो हेट्ठा ओदारेदुं ण सक्किज्जइ, सव्वजहण्णजोगट्ठाणे अवट्ठिदत्तादो। दोफालिखवगो वि हेट्ठा ओदारेदुं ण सक्किज्जइ, एगवारेण चरिम-दुचरिमफालीणं परिहाणिदंसणादो। तेणेत्थ अधापवत्तमेत्तदुचरिमाणं जदि एगं चरिम-दुचरिमपमाणं लब्भदि तो चडिदद्धाणमेत्तदुचरिमाणं केत्तियं लभामो त्ति अधापवत्तेणोवट्टिदचडिदद्धाणमेत्तमक्कमेण दोफालिखवगो ओदारेदव्वो। अधापवत्तेण चडिदद्धाणमोवट्टिज्जमाणं णिरग्गं[1] होदि त्ति कुदो णव्वदे? आइरियभडारयाणमुवदेसादो। अणिरग्गे संते णोयरणं संभवइ, दोण्हं जोगट्ठाणाणं विचाले ट्ठाणंतरस्साभावादो। एवं पुव्वुप्पण्णट्ठाणेण सह एदं ट्ठाणं सरिसं होदि। संपहि एगफालिक्खवगो पक्खेवुत्तरकमेण वड्ढावेदव्वो जाव तेण पुव्वं चडिदद्धाणं चडिदो त्ति।

§ ३७८. संपहि सवेददुचरिमावलियाए तदियसमयम्मि जहण्णजोगेण चउत्थ-पंचमसमएसुतप्पा ओग्गअसंखेज्जगुणजोगेसु सेससमएसु तप्पाओग्गजहण्णजोगेसु-

---

अब सवेद भागकी द्विचरमावलिके तृतीय समयमें जघन्य योगसे, चतुर्थ समयमें तत्प्रायोग्य असंख्यातगुणे योगसे और शेष समयोंमें जघन्य योगसे ही पुरुषवेदका बन्ध करके अपगत वेदके प्रथम समयमें स्थित हुआ क्षपक द्रव्य पहलेके द्रव्यसे अधिक होता है, क्योंकि जितना अध्वान आगे गये हैं उतनी द्विचरम फालियोंकी अधिकता उपलब्ध होती है।

§ ३७७. अब एक फालि क्षपकको नीचे उतारना शक्य नहीं है, क्योंकि सबसे जघन्य योगस्थानमें अवस्थित है। दो फालि क्षपकको भी नीचे उतारना शक्य नहीं है, क्योंकि एक बारमें चरम और द्विचरम फालियोंकी हानि देखी जाती है। इसलिए यहाँ पर अधःप्रवृत्तमात्र द्विचरमोंका यदि एक चरम और द्विचरम प्रमाण प्राप्त होता है तो जितना अध्वान आगे गये हैं उतने द्विचरमोंका कितना प्राप्त होगा, इस प्रकार अधःप्रवृत्तसे भाजित जितना अध्वान आगे गये हैं तत्प्रमाण दो फालि क्षपकको युगपत् उतारना चाहिए।

शंका—अधःप्रवृत्तसे जितना अध्वान आगे गये हैं उसका अपवर्तन करने पर वह अग्र रहित होता है यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

समाधान—आचार्य भट्टारकोंके उपदेशसे जाना जाता है। साग्र होने पर उतरना सम्भव नहीं है, क्योंकि दोनों योगस्थानोंके मध्यमें स्थानान्तरका अभाव है।

इस प्रकार उतारने पर पहले उत्पन्न हुए स्थानके साथ यह स्थान सदृश होता है। अब एक फालि क्षपकको वह जितना अध्वान चढ़ा है उतना स्थान चढ़ने तक एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे बढ़ाना चाहिए।

§ ३७८. अब सवेद भागकी द्विचरमावलिके तृतीय समयमें जघन्य योगसे, चौथे और पाँचवें समयमें तत्प्रायोग्य असंख्यातगुणे योगोंके होने पर तथा शेष समयोंमें तत्प्रायोग्य जघन्य

---

1. ता०प्रतौ 'मोवट्टिमाणायं णिरग्गं इति पाठः।

पुरिसवेदं बंधिय अवगदवेदपढमसमयट्ठिददव्वं पुव्विल्लदव्वादो सादिरेयं, चडिदद्धाणमेत्तदुचरिम-तिचरिमफालियाहि अहियत्तुवलंभादो। संपहि एदासिं दुचरिम-तिचरिमफालीणं दव्वे चरिम-दुचरिमफालिपमाणेण कीरमाणे चडिदद्धाणं दुगुणं सादिरेयमधापवत्तभागहारेण खंडिदं होदि त्ति एत्तियमेत्तमद्धाणं दोफालिखवगो पुणरवि हेट्ठा ओदारेदव्वो। एवमोदारिदे पुव्विल्लदव्वेण सरिसं होदि, अहियदव्वस्स कयहाणित्तादो। एवं चत्तारि-पंच-छप्पहुडि जाव दुसमयूणं¹ दोआवलियमेत्तसमयपबद्धा तप्पाओग्गमसंखे०गुणं पत्ता त्ति ताव वड्ढावेदव्वं। णवरि एगफालिखवगो घोलमाणजहण्णजोगट्ठाणे चेव ट्ठिदो त्ति दट्ठव्वो। संपहि एगफालिक्खवगो पक्खेवुत्तरकमेण ताव वड्ढावेदव्वो जाव सव्वफालीणं चडिदद्धाणं वोलेदूण तप्पाओग्गं तत्तो असंखेज्जगुणं जोगं पत्तो त्ति। संपहि एगफालिक्खवगजोगेण दोफालिक्खवगेण एगफालिक्खवगेण वि दोफालिखवगजोगेण पुरिसवेदे बद्धे पुव्विल्लपदेससंतकम्मट्ठाणादो एदं पदेससंतकम्मट्ठाणं चडिदद्धाणमेत्तदुचरिमफालियाहि अहियं होदि, सेससमयक्खवगाणं जोगेण भेदाभावादो। एदं चडिदद्धाणं रूवूणअधापवत्तेण खंडिय तत्थ एयखंडमेत्तं पुणरवि एगफालिक्खवगो हेट्ठा ओदारेदव्वो, अण्णहा अहियदव्वस्स परिहाणीए विणा पुव्विल्लदव्वेण सरिसत्ताणुववत्तीदो। पुणो एगफालिक्खवगो पक्खेवुत्तरकमेण ताव वड्ढावेदव्वो जाव दोफालिक्खवगजोगट्ठाणं पत्तो त्ति।

योगके रहते हुए पुरुषवेदका बन्ध कर अपगतवेदके प्रथम समयमें स्थित हुआ द्रव्य पहलेके द्रव्यसे साधिक है, क्योंकि जितना अध्वान आगे गये हैं तत्प्रमाण द्विचरम और त्रिचरम फालियोंके साथ अधिकता पाई जाती है। अब इन द्विचरम और त्रिचरम फालियोंके द्रव्यको चरम और द्विचरम फालियोंके प्रमाणरूपसे करने पर जितना अध्वान आगे गये हैं वह साधिक दूना अधःप्रवृत्तभागहारसे भाजितमात्र होता है, इसलिए दो फालि क्षपकको इतना मात्र अध्वान फिर भी नीचे उतारना चाहिए। इसप्रकार उतारने पर पहलेके द्रव्यके समान होता है, क्योंकि अधिक द्रव्यकी हानि की गई है। इसप्रकार चार, पाँच और छहसे लेकर दो समय कम दो आवलिप्रमाण समयप्रबद्ध तत्प्रायोग्य असंख्यातगुणे प्राप्त होने तक बढ़ाना चाहिए। इतनी विशेषता है कि एक फालि क्षपक घोलमान जघन्य योगस्थानमें ही स्थित है ऐसा जानना चाहिए। अब एक फालि क्षपकको सब फालियोंका जितना अध्वान आगे गये हैं उसे बिताकर तत्प्रायोग्य उससे असंख्यातगुणे योगके प्राप्त होने तक बढ़ाना चाहिए। अब एक फालि क्षपक योगरूप दो फालि क्षपकके द्वारा तथा एक फालि क्षपकरूप भी दो फालि क्षपक योगके द्वारा पुरुषवेदका बन्ध होने पर पहलेके प्रदेशसत्कर्मस्थानसे यह प्रदेशसत्कर्मस्थान जितना अध्वान आगे गये हैं उतनी द्विचरम फालियोंसे अधिक होता है, क्योंकि शेष समयवर्ती क्षपकोंका योगसे भेद नहीं है। इस आगे गये हुए अध्वानको एक कम अधःप्रवृत्तसे भाजितकर वहां एक फालि क्षपकको फिर भी एक खण्डमात्र नीचे उतारना चाहिए, अन्यथा अधिक द्रव्यकी हानि हुए बिना पहलेके द्रव्यके साथ समानता नहीं बन सकती है। पुनः एक फालि क्षपकको एक-एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे दो फालि क्षपक योगस्थानके प्राप्त होने तक बढ़ाना चाहिए।

---

१. ता० प्रतौ 'जाव समयूण-' इति पाठः।

§ ३७९. संपहि एगफालिक्खवगजोगेण तिण्णिफालिक्खवगं तिण्णिफालिक्खवगजोगेण एगफालिक्खवगं परिणमाविय सेससमयखवगेसु समाणजोगेसु संतेसु एदं पदेससंतकम्मट्ठाणं पुव्विल्लट्ठाणादो चडिदद्धाणमेत्तदुचरिम-तिचरिमफालियाहि अहियं होदि। तेणेदं चडिदद्धाणं रूवूणअधापवत्तेण खंडेदूण तत्थ एयखंडं दुगुणं सादिरेयमेत्तं पुणरवि एगफालिक्खवगो हेट्ठा ओदारेदव्वो। एवमोदारिय पुव्विल्लदव्वेण सरिसं करिय पुणो एगफालिक्खवगो पक्खेवुत्तरकमेण वड्ढावेदव्वो जाव पुव्वं चडिदजोगट्ठाणं पत्तो त्ति। संपहि एगफालिक्खवगजोगम्मि चत्तारिफालिक्खवगे एगफालिक्खवगे च चत्तारिफालिक्खवगजोगम्मि ट्ठविदे चडिदद्धाणमेत्ताओ दुचरिम-तिचरिम-चदुचरिमफालीओ अहिया होंति, चरिमफालीणं सरिसत्तुवलंभादो। पुणो रूवूणअधापवत्तेण चढिदद्धाणं खंडिय तत्थ एयखंडं तिगुणं सादिरेयमेत्तमेयफालिक्खवगो हेट्ठा ओदारेदव्वो। एवं पंचादिफालीओ वि वड्ढावेदव्वाओ जाव सव्वफालीओ विदियवारसंकंताओ त्ति। संपहि एवंविहेहि संखेज्जपरियट्टणवारेहि सव्वफालीओ उक्कस्सजोगं पावेंति। एदं कुदो णव्वदे? आइरियभडारयाणमुवदेसादो। णिरंतरमुक्कस्सजोगेण परिणमणकालपमाणं 'वे चेव समया' त्ति सुत्तेण सह एदं वयणं किण्ण विरुज्झदे? ण, आदेसुक्कस्सस्स वि उक्कस्सत्तब्भुवगमादो। तेण दुसमयूणदोआवलियाणमब्भंतरे जत्तिएसु समएसु उक्कस्सजोगट्ठाणेण परिणमिदुं

---

§ ३७९. अब एक फालि क्षपक योग द्वारा तीन फालि क्षपकको तथा तीन फालि क्षपक योग द्वारा एक फालि क्षपकको परिणमाकर शेष समयवर्ती क्षपकोंके समान योगवाले होनेपर यह प्रदेशसत्कर्मस्थान पहलेके स्थानसे जितना अध्वान आगे गये हैं उतनी द्विचरम और त्रिचरम फालियोंसे अधिक होता है, इसलिए इस आगे गये हुए अध्वानको एक कम अधःप्रवृत्तसे भाजितकर वहां एक फालि क्षपकको फिर भी एक खण्डको साधिक दूना करके जो हो उतना नीचे उतारना चाहिए। इस प्रकार उतारकर और पहलेके द्रव्यके समानकर पुनः एक फालि क्षपकको पहले आगे गये हुए योगस्थानके प्राप्त होने तक एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे बढ़ाना चाहिए। अब एक फालि क्षपक योगरूप चार फालि क्षपक और एक फालि क्षपकके चार फालि क्षपक योगमें स्थापित करने पर आगे गये हुए अध्वानमात्र द्विचरम, त्रिचरम और चतुश्चरम फालियाँ अधिक होती हैं, क्योंकि चरम फालियोंकी समानता पाई जाती है। पुनः एक कम अधःप्रवृत्तसे आगे गये हुए अध्वानको भाजितकर वहां पर एक फालि क्षपकको एक खण्डको साधिक तिगुना करके जो हो उतना नीचे उतारना चाहिए। इस प्रकार सब फालियोंके दूसरी बार संक्रान्त होने तक पाँच आदि फालियोंको भी बढ़ाना चाहिये। अब इस प्रकारके संख्यात परिवर्तनरूप बारोंके द्वारा सब फालियाँ उत्कृष्ट योगको प्राप्त होती हैं।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

समाधान—आचार्य भट्टारकोंके उपदेशसे जाना जाता है

शंका—निरन्तर उत्कृष्ट योग रूपसे परिणमन करनेरूप कालका प्रमाण दो ही समय है, इस सूत्रके साथ यह वचन विरोधको क्यों नहीं प्राप्त होता?

समाधान—नहीं, क्योंकि आदेश उत्कृष्टको भी उत्कृष्टरूपसे स्वीकार किया है।

इसलिए दो समय कम दो आवलियोंके भीतर जितने समयोंमें उत्कृष्ट योगस्थानरूपसे

संभवो तत्तियमेत्तसमएसु सांतरं णिरंतरं वा तेण परिणमिय अवसेससमएसु आदेसुक्कस्सजोगट्ठाणेसु परिणमिय बंधदि त्ति भणिदं होदि। एवं वड्ढाविदे दुसमयूणदोआवलियमेत्तसमयपबद्धा उक्कस्सा जादा। संपहि सयलजोगट्ठाणद्धाणस्स पुव्वं व दुसमयूणदोआवलियगुणगारो एत्थ साहेयव्वो। जोगस्स ट्ठाणाणि जोगट्ठाणाणि त्ति अभिण्णछट्ठिमवलंबिय भणंताणमाइरियाणमहिप्पायपणासणट्ठमेसा परूवणा कदा।

§ ३८०. संपहि एदस्स जइवसहाइरियमुहविणिग्गयस्स सुत्तस्स देसामासियभावेण पयासिदसगासेसट्ठस्स जहत्थपरूवणं कस्सामो। तं जहा—चरिमफालिमस्सिदूण पुव्वुप्पाइदा सेसट्ठाणाणि पुव्वं व उप्पाइय संपहि तदंतरेसु पदेससंतकम्मट्ठाणाणं परूवणाए कीरमाणाए सवेदस्स चरिम-दुचरिमसमएसु घोलमाणजहण्णजोगेण बंधिय अधियारदुचरिमसमए ट्ठिदतिण्णिफालिक्खवगो ताव अवलंबेयव्वो। एदं तिण्णिफालिपदेससंतकम्मट्ठाणं पुणरुत्तं, घोलमाणजहण्णजोगादो सादिरेयदुगुणजोगट्ठाणेण बद्धपुरिसवेदचरिमसमयसवेदस्स एगफालिपदेससंतकम्मट्ठाणेण समाणत्तादो। संपहि एगफालिक्खवगं जहण्णजोगेण बंधाविय दोफालिक्खवगे पक्खेवुत्तरकमेण बंधाविदे अण्णमपुणरुत्तपदेससंतकम्मट्ठाणं होदि, अक्कमेण चरिम-दुचरिमफालीणं पवेसुवलंभादो। वड्ढिदचरिम-दुचरिमफालीसु तत्थ एगचरिमफालिं घेत्तूण पुव्विल्लसरिसीकदट्ठाणम्मि

परिणमाना सम्भव है उतने ही समयोंमें सान्तर अथवा निरन्तर क्रमसे उस रूपसे परिणमाकर अवशेष समयोंमें आदेश उत्कृष्ट योगस्थानोंमें परिणमाकर बन्ध करता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इस प्रकार बढ़ाने पर दो समय कम दो आवलिप्रमाण समयप्रबद्ध उत्कृष्ट हो जाते हैं। अब सकल योगस्थान अध्वानका पहलेके समान दो समय कम दो आवलिप्रमाण गुणकार यहां पर साध लेना चाहिये। योगके स्थान योगस्थान इसप्रकार अभेदरूप षष्ठी विभक्तिका अवलम्बन करके कथन करनेवाले आचार्योंके अभिप्रायका प्रकाशन करनेके लिए यह प्ररूपणा की है।

§ ३८०. अब यतिवृषभ आचार्यके मुखसे निकले हुए तथा देशामर्षकभावसे अपने समस्त अर्थका प्रकाशन करनेवाले इस सूत्रका यथा स्थित कथन करते हैं। यथा—चरम फालिका आश्रय करके पहले उत्पन्न किये गये समस्त स्थानोंको पहलेके समान उत्पन्न करके अब उनके अन्तरालोंमें प्रदेशसत्कर्मस्थानोंकी प्ररूपणा करने पर सवेद भागके चरम और द्विचरम समयोंमें घोलमान जघन्य योगसे बन्ध करके अधिकृत द्विचरम समयमें स्थित हुए तीन फालि क्षपकका तब तक अवलम्बन करना चाहिए। यह तीन फालि प्रदेशसत्कर्मस्थान पुनरुक्त है, क्योंकि घोलमान जघन्य योगसे साधिक दुगुणे योगस्थानके द्वारा बाँधे गये पुरुषवेदके चरम समयवर्ती सवेदी जीवके एक फालि प्रदेशसत्कर्मस्थानके साथ समानता है। अब एक फालि क्षपकको जघन्य योगसे बन्ध कराकर दो फालि क्षपकके एक एक प्रक्षेप अधिक योगके द्वारा बन्ध कराने पर अन्य अपुनरुक्त प्रदेशसत्कर्मस्थान होता है, क्योंकि अक्रमसे चरम और द्विचरम फालियोंका प्रवेश उपलब्ध होता है। बढ़ी हुई चरम और द्विचरम फालियोंमेंसे वहां पर एक चरम फालिको ग्रहणकर पहलेके समान किये गये

पक्खित्ते पुणरुत्तट्ठाणं होदि। पुणो तत्थ दुचरिमफालीए पक्खित्ताए उवरिमफालिट्ठाणमपावेदूण विच्चाले चेव अण्णट्ठाणमुप्पज्जदि त्ति भणिदं होदि।

§ ३८१. संपहि दोफालिखवगं पक्खेवुत्तरजोगम्मि चेव ट्ठविय एगफालिखवगे पक्खेवुत्तरजोगेण बंधाविदे अण्णमपुणरुत्तट्ठाणं होदि। एवमेगफालिक्खवगो चेव पक्खेवुत्तरकमेण ताव वड्ढावेदव्वो जाव घोलमाणजहण्णजोगट्ठाणादो तप्पाओग्गमसंखेज्जगुणं जोगट्ठाणं पत्तो त्ति। संपहि उवरि वड्ढावेदुं ण सक्किज्जदे, एत्तो उवरिमजोगट्ठाणेहि परिणदस्स पुणो अणंतरविदियसमए घोलमाणजहण्णजोगट्ठाणेण परिणमणाणुववत्तीए। संपहि अण्णेगस्स खवगस्स सवेददुचरिमसमए घोलमाणजहण्णजोगट्ठाणेण तस्सेव चरिमसमए घोलमाणजहण्णजोगट्ठाणादो असंखेज्जगुणजोगेण पुरिसवेदं बंधिय अधियारदुचरिमसमए अवट्ठिदस्स पदेससंतकम्मट्ठाणं पुव्विल्लपदेससंतकम्मट्ठाणादो विसेसाहियं, चडिदद्धाणमेत्तदुचरिमफालीहि अहियत्तुवलंभादो।

§ ३८२. पुणो एदाओ अहियदुचरिमफालीओ चरिम-दुचरिमपमाणेण कस्सामो। तं जहा—अधापवत्तभागहारमेत्तदुचरिमाणं जदि एगं चरिम-दुचरिमफालिपमाणं लब्भदि तो चडिदद्धाणमेत्तदुचरिमफालीणं किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए जं लद्धं तत्तियमेत्तं दोफालिक्खवगे हेट्ठा ओदारिदे एदस्स संतकम्मट्ठाणं

स्थानमें मिलाने पर पुनरुक्त स्थान होता है। पुनः वहां पर द्विचरम फालिके प्रक्षिप्त करने पर उपरिम फालिस्थानको नहीं प्राप्तकर बीचमें ही अन्य अपुनरुक्त स्थान उत्पन्न होता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

§ ३८१. अब दो फालि क्षपकको एक एक प्रक्षेप अधिकरूप योगमें ही स्थापितकर एक फालि क्षपकके एक एक प्रक्षेप अधिकरूप योगके द्वारा बन्ध कराने पर अन्य अपुनरुक्त स्थान होता है। इस प्रकार एक फालि क्षपकको ही एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे घोलमान जघन्य योगस्थानसे लेकर तत्प्रायोग्य असंख्यातगुणे योगस्थानके प्राप्त होने तक बढ़ाना चाहिए। अब ऊपर बढ़ाना शक्य नहीं है, क्योंकि इससे उपरिम योगस्थानोंरूपसे परिणत हुए जीवके पुनः अनन्तर द्वितीय समयमें घोलमान जघन्य योगस्थानरूपसे परिणमन नहीं बन सकता। अब एक अन्य क्षपक जीव जो कि उसीके चरम समयमें घोलमान जघन्य योगस्थानसे असंख्यतागुणे योगरूप ऐसे सवेदभागके द्विचरम समयमें घोलमान जघन्य योगस्थानके द्वारा पुरुषवेदका बन्ध करके अधिकृत द्विचरम समयमें अवस्थित है उसका प्रदेशसत्कर्मस्थान पहलेके प्रदेशसत्कर्मस्थानसे विशेष अधिक है, क्योंकि आगे गये हुए अध्वानमात्र द्विचरम फालिरूपसे अधिकता उपलब्ध होती है।

§ ३८२. पुनः इन अधिक द्विचरम फालियोंको चरम और द्विचरमके प्रमाणरूपसे करते हैं। यथा—अधःप्रवृत्त भागहारमात्र द्विचरमोंका यदि एक चरम और द्विचरम फालिका प्रमाण प्राप्त होता है तो जितना अध्वान आगे गये हैं उतनी द्विचरम फालियोंका क्या प्राप्त होगा, इस प्रकार फलराशिसे गुणित इच्छाराशिमें प्रमाणराशिका भाग देने पर जो भाग लब्ध आवे तत्प्रमाण दो फालिक्षपकको नीचे उतारने पर इसका सत्कर्मस्थान पहलेके सत्कर्मस्थानके समान

पुव्विल्लसंतकम्मट्ठाणेण सरिसं, चरिमफालिट्ठाणुप्पायणट्ठं पुव्विल्लदोफालिखवगस्स घोलमाणजहण्णजोणट्ठाणे अवट्ठिदत्तादो। संपहियदोफालिक्खवगे पक्खेवुत्तरजोगट्ठाणं णीदे चरिमफालिट्ठाणं फिट्टिदूण दुचरिमफालिट्ठाणमुप्पज्जदि, चरिम-दुचरिमफालीणमक्कमेण पविट्ठत्तादो।

३८३. संपहि दोफालिक्खवगमेत्थेव ट्ठविय एगफालिक्खवगे जहण्णजोगट्ठाणादो पक्खेवुत्तरकमेण वड्ढमाणे अपुणरुत्ताणि दुचरिमफालिट्ठाणाणि उप्पज्जंति त्ति कट्टु एगफालिक्खवगो ताव वड्ढावेदव्वो जाव दोफालिक्खवगजोगट्ठाणादो तप्पाओग्गमसंखेज्ज-गुणं जोगट्ठाणं पत्तो त्ति। संपहि एत्तो उवरि वड्ढावेदुं ण सक्किज्जइ, दोफालिक्खवग-जोगट्ठाणम्मि विदियसमए पदणाणुववत्तीदो। तेणेत्थुद्देसे किज्जमाणकज्जभेदो उच्चदे— एगफालिक्खवगो दोफालिक्खवगजोगट्ठाणादो अणंतरहेट्ठिमजोगट्ठाणेण दोफालिक्खवगो वि एगफालिक्खवगजोगट्ठाणेण बंधावेदव्वो। एवं बद्धे पुव्विल्लसंतकम्मट्ठाणादो एदं संतकम्मट्ठाणं चडिदद्धाणमेत्तदुचरिमफालीहि अब्भहियं होदि। संपहि इमाओ दुचरिमफालीओ चरिमफालिपमाणेण कीरमाणाओ[1] चडिदद्धाणे रूवूणअधापवत्तभाग-हारेण खंडिदे तत्थ एयखंडमेत्ताओ होंति त्ति एगफालिखवगो पुणरवि एत्तियमेत्त-जोगट्ठाणाणि ओदारेदव्वो। एवमोदारिदे एदं संतकम्मट्ठाणं चरिमफालिट्ठाणेण सरिसं

है, क्योंकि चरम फालिस्थानके उत्पन्न करनेके लिए पहलेका दो फालिक्षपक घोलमान जघन्य योगस्थानमें अवस्थित है। साम्प्रतिक दो फालिक्षपकके एक एक प्रक्षेप अधिकरूप योगस्थानको ले जाने पर चरम फालिस्थान न रहकर उसके स्थानमें द्विचरम फालिस्थान उत्पन्न होता है, क्योंकि चरम और द्विचरम फालियोंका अक्रमसे प्रवेश हुआ है।

§ ३८३. अब दो फालिक्षपकको यहीं पर स्थापित करके एक फालि क्षपकके जघन्य योगस्थानसे एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे बढ़ाने पर अपुनरुक्त द्विचरम फालिस्थान उत्पन्न होते हैं ऐसा समझकर एक फालिक्षपकको दो फालिक्षपक योगस्थानसे लेकर तत्प्रायोग्य असंख्यातगुणे योगस्थानके प्राप्त होने तक बढ़ाना चाहिए। अब इसके ऊपर बढ़ाना शक्य नहीं है, क्योंकि दो फालिक्षपक योगस्थानमें दूसरे समयमें पतन नहीं बन सकता। इसलिये इस स्थान पर किये जानेवाले कार्यभेदका कथन करते हैं—एक फालिक्षपकको दो फालिक्षपक योगस्थानसे तथा अनन्तर अधस्तन योगस्थानसे दो फालिक्षपकको भी एक फालिक्षपक योगस्थानरूपसे वन्ध कराना चाहिए। इस प्रकार बन्ध होनेपर पहलेके सत्कर्मस्थानसे यह सत्कर्मस्थान आगे गए हुए अध्वानमात्र द्विचरम फालियोंसे अधिक होता है। अब इन द्विचरम फालियोंको चरमफालिके प्रमाणसे करते हुए आगे गये हुए अध्वानको एक कम अधःप्रवृत्तभागहारसे भाजित करने पर वहां एक भागप्रमाण होती हैं, इसलिए एक फालि क्षपकको फिर भी इतने मात्र योगस्थान उतारना चाहिए। इस प्रकार उतारने पर यह सत्कर्म-स्थान अन्तिम फालिस्थानके समान हो गया, इसलिए दो फालि क्षपकको एक एक प्रक्षेप

1. आ०प्रतौ 'एवं बद्धे पुव्विल्लसंतकम्मट्ठाणादो एदं संतकम्माणेण कीरमाणाओ' इति पाठः।

जादं ति दोफालिक्खवगो पक्खेवुत्तरजोगं णेदव्वो। एवं णीदे पुव्विल्लदुचरिम-फालिट्ठाणेणेदं ट्ठाणं समाणं होदि, पुव्वं पल्लट्टाविदचरिम-दुचरिमफालीणमक्कमेण पविट्ठत्तादो। तेणेदं ट्ठाणं पुणरुत्तं।

३८४. संपहि दोफालिक्खवगमेत्थेव जोगट्ठाणे ठविय एगफालिक्खवगे पक्खेवुत्तरकमेण वड्ढमाणे दुचरिमफालिट्ठाणाणि चेव उप्पज्जंति त्ति एगफालिक्खवगो पक्खेवुत्तरकमेण वड्ढावेदव्वो जाव दुचरिमफालिक्खवगट्ठिदजोगादो असंखेज्जगुणं जोगं पत्तो त्ति। एवं संखेज्जपरियट्टणवारे गंतूण एगफालिक्खवगो अद्धजोगं पत्तो। दोफालिखवगो वि अद्धजोगादो हेट्ठा असंखेज्जगुणहीणं जोगं पत्तो। अण्णेगेण सवेददुचरिमसमए दोफालिखवगो जोगादो अणंतरहेट्ठिमजोगेण तस्सेव चरिमसमए अद्धजोगेण बद्धे एदस्स पदेससंतकम्मट्ठाणं पुव्विल्लपदेससंतकम्मट्ठाणादो चडिदद्धाणमेत्तदुचरिमफालियाहि अहियं होदि, पुव्विल्लट्ठाणम्मि चरिम-दुचरिम-फालीणमभावादो।

§ ३८५. संपहि एदाओ दुचरिमफालीओ चरिमफालिपमाणेण कीरमाणाओ रूवूणअधापवत्तभागहारेण खंडिदचडिदद्धाणमेत्ताओ होंति त्ति एगफालिक्खवगो पुणरवि हेट्ठा एत्तियमेत्तमद्धाणमोसारेदव्वो। एवमोसारिय दोफालिक्खवगे पक्खेवुत्तर-मद्धजोगं णीदे पुणरुत्तं दुचरिमफालिट्ठाणमुप्पज्जदि। पुणो एदं दोफालिक्खवगमेत्थेव

अधिकरूप योगस्थानको प्राप्त कराना चाहिए। इस प्रकार प्राप्त कराने पर यह स्थान पहलेके द्विचरम फालिस्थानके समान होता है, क्योंकि पहले पलटा कर चरम और द्विचरम फालियोंका अक्रमसे प्रवेश हुआ है, इसलिए यह स्थान पुनरुक्त है।

§ ३८४. अब दो फालिक्षपकको यहीं ही योगस्थानमें स्थापित कर एक फालि क्षपकके एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे बढ़ने पर द्विचरम फालिस्थान ही उत्पन्न होते हैं, इसलिए एक फालि क्षपकको द्विचरम फालि क्षपकके स्थित योगसे असंख्यातगुणे योगके प्राप्त होने तक एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे बढ़ाना चाहिए। इस प्रकार संख्यात परिवर्तन बार जाकर एक फालि क्षपक अर्ध योगको प्राप्त हुआ। दो फालि क्षपक भी अर्धयोगसे नीचे असंख्यातगुणे हीन योगको प्राप्त हुआ। अन्य एकके द्वारा सवेद भागके द्विचरम समयमें दो फालिक्षपक योगसे अनन्तर अधस्तन योगसे उसीके चरम समयमें अर्धयोगसे बन्ध करने पर इसका प्रदेशसत्कर्मस्थान पहलेके प्रदेशसत्कर्मस्थानसे आगे गये हुए अध्वानमात्र द्विचरम फालियोंसे अधिक होता है, क्योंकि पहलेके स्थानमें चरम और द्विचरम फालियोंका अभाव है।

§ ३८५. अब इन द्विचरम फालियोंको चरम फालिके प्रमाणसे करने पर एक कम अधःप्रवृत्त भागहारसे भाजित होकर वे आगे गये हुए अध्वानमात्र होती हैं, इसलिए एक फालि क्षपकको फिर भी नीचे इतनामात्र अध्वान अपसारित करना चाहिए। इस प्रकार अपसारित करके दो फालिक्षपकको प्रक्षेप अधिक अर्धयोगको प्राप्त कराने पर पुनरुक्त द्विचरम फालिस्थान उत्पन्न होता है। पुनः इस दो फालि क्षपकको यहीं पर स्थापित कर एक फालि क्षपकको

---

१. ता०प्रतौ '-क्खवगमेत्त (त्थे) व' आ०प्रतौ '-क्खवगमेत्तेव' इति पाठः।

ड्ढविय एगफालिक्खवगो पक्खेवुत्तरकमेण वड्डावेदव्वो जाव अद्धजोगपक्खेवभागहारं रूवूणअधापवत्तभागहारेण खंडिदूण तत्थ एगखंडं दुरूवाहियमेत्तमद्धजोगादो हेट्ठा ओसरिदूण ट्ठिदो त्ति। एवं वड्ढाविदे एगफालिसामिणो उक्कस्सट्ठाणं ति ताव सव्वचरिमफालिट्ठाणाणमंतरेसु दुचरिमफालिट्ठाणाणि उप्पण्णाणि होंति, सवेददुचरिमसमए रूवूणअधापवत्तभागहारेणोवट्टिदअद्धजोगपक्खेवभागहारमेत्तमद्धाणमद्धजोगादो हेट्ठा ओसरिय ट्ठिदजोगेण चरिमसमए अद्धजोगेण बंधिय ट्ठिदस्स तिण्णिफालिसंतकम्मट्ठाणेण एगफालिक्खवगुक्कस्ससंतकम्मट्ठाणस्स सरिसत्तुवलंभादो। दुरूवाहियमद्धाणं किमिदि ओसारिदो? अद्धजोगादो उवरिमपक्खेवुत्तरजोगम्मि दोफालिक्खवगे अवट्ठिदे संते दुरूवाहियत्तेण विणा एगफालिक्खवगस्स दुचरिम-चरिमफालिट्ठाणाणमंतरे[1] दुचरिमफालिट्ठाणुप्पत्तीए अणुववत्तीदो।

§ ३८६. संपहि एगफालिक्खवगो पक्खेवुत्तरकमेण पुव्वविहाणेण पुणरवि वड्ढावेयव्वो जाव उक्कस्सजोगट्ठाणं पत्तो त्ति। पुणो दोफालिक्खवगे अद्धजोगम्मि ठविदे चरिमफालिट्ठाणं होदि, पुव्विल्लदुचरिमफालिट्ठाणादो अक्कमेण चरिमदुचरिमफालीणमभावुवलंभादो। संपहि एदम्हादो पदेससंतकम्मट्ठाणादो दुचरिमसमए अद्धजोगेण चरिमसमए उक्कस्सजोगेण बंधिय अहियारदुचरिमसमए ट्ठिदस्स पदेससंतकम्मट्ठाणं

एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे वहां तक बढ़ावे जहां जाकर अर्धयोग प्रक्षेपभागहारको एक कम अधःप्रवृत्तभागहारसे भाजित कर वहां जो एक भाग लब्ध आवे उतना दो रूप अधिक मात्र अर्धयोगसे नीचे सरककर स्थित होवे। इस प्रकार बढ़ाने पर एक फालि स्वामीके उत्कृष्ट स्थानके प्राप्त होने तक सब चरम फालिस्थानोंके अन्तरालोंमें द्विचरम फालिस्थान उत्पन्न होते हैं, क्योंकि सवेद भागके द्विचरम समयमें एक कम अधःप्रवृत्तभागहारसे भाजित अर्धयोग प्रक्षेप भागहारमात्र अध्वान अर्धयोगसे नीचे सरककर स्थित योगसे तथा अन्तिम समयमें अर्धयोगसे बाँधकर जो स्थित है उसके तीन फालि सत्कर्मस्थानके साथ एक फालि क्षपकके उत्कृष्ट सत्कर्मस्थानकी समानता उपलब्ध होती है।

शंका—दो रूप अधिक अध्वानको किसलिए अपसारित किया है?

समाधान—क्योंकि अर्धयोगसे ऊपर प्रक्षेप अधिक योगमें दो फालि क्षपकके अवस्थित रहने पर दो रूप अधिक हुए विना एक फालि क्षपकके द्विचरम और चरम फालिस्थानोंके अन्तरालमें द्विचरम फालिस्थानोंकी उत्पत्ति नहीं बन सकती।

§ ३८६. अब एक फालि क्षपकको उत्कृष्ट योगस्थानके प्राप्त होने तक एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे पूर्व विधिसे फिर भी बढ़ाना चाहिए। पुनः दो फालिक्षपकके अर्धयोगमें स्थापित करने पर अन्तिम फालिस्थान होता है, क्योंकि पहलेके द्विचरम फालिस्थानसे युगपत् चरम और द्विचरम फालियोंका अभाव उपलब्ध होता है। अब इस प्रदेशसत्कर्मस्थानसे द्विचरम समयमें अर्धयोगसे तथा चरम समयमें उत्कृष्ट योगसे बन्धकर अधिकृत द्विचरम समयमें जो स्थित है उसके प्रदेशसत्कर्मस्थान आगे गये हुए अध्वानमात्र द्विचरम फालियोंसे अधिक होता

---

१. ता०आ०प्रत्योः 'चरिमदुचरमचरिमफालिट्ठाणाणमंतरे' इति पाठः।

चडिदद्धाणमेत्तदुचरिमफालियाहि अहियं होदि। संपहि एदाओ दुचरिमफालीओ[1] चरिमफालिपमाणेण कीरमाणाओ रूवूणअधापवत्तभागहारेणोवट्टिदचडिदद्धाणमेत्ताओ होंति त्ति अद्धजोगादो हेट्ठा एगफालिक्खवगो पुणरवि एत्तियमद्धाणं ओदारेयव्वो। एवमोदारिदे चरिमफालिट्ठाणपमाणं जादं।

§ ३८७. संपहि दोफालिक्खवगो उक्कस्सजोगट्ठाणादो रूवूणअधापवत्तभागहार-मेत्तजोगट्ठाणाणि हेट्ठा ओदारिय पुणो पक्खेवुत्तरजोगं णेदव्वो, अण्णहा दुचरिमफालि-पडिबद्धपदेससंतकम्मट्ठाणाणमुप्पत्तीए अभावादो। पुणो एदमेत्थेव ट्ठविय एगफालि-क्खवगो पक्खेवुत्तरकमेण वड्ढावेदव्वो जाव उक्कस्सजोगट्ठाणं पत्तो त्ति। एवं वड्ढाविदे तिण्णिफालिक्खवगुक्कस्सचरिमफालिट्ठाणादो हेट्ठा दुरूवूणअधापवत्तभागहारमेत्तचरिम-फालिट्ठाणंतराणि मोत्तूण सेसट्ठाणंतरेसु सव्वत्थ दुचरिमफालिट्ठाणाणि उप्पण्णाणि होंति।

§ ३८८. संपहि तिण्णिफालिखवगमस्सिदूण दुचरिमफालिट्ठाणाणि एत्तियाणि चेव उप्पज्जंति त्ति एदं[2] मोत्तूण छप्फालिखवगमस्सिदूण सेसट्ठाणाणं परूवणं कस्सामो। तं जहा—पुव्विल्लं तिण्णिफालिट्ठाणं चरिमफालिट्ठाणेण सरिसं करिय एदेण सरिस-छप्फालिट्ठाणं वत्तइस्सामो। चरिम-दुचरिम-तिचरिमसमएसु तिभागूणुक्कस्सजोगेण बंधिय अधियारतिचरिमसमए ट्ठिदस्स छप्फालिट्ठाणं तिण्णिफालीणमुक्कस्सट्ठाणादो विसेसाहियं, सादिरेयउक्कस्सजोगट्ठाणपक्खेवभागहारमेत्तदुचरिमफालीणमहियत्तुव-

---

है। अब इन द्विचरम फालियोंको चरम फालिके प्रमाणसे करने पर वे एक कम अधःप्रवृत-भागहारसे भाजित आगे गये हुए अध्वानमात्र होती हैं, इसलिए अर्धयोगसे नीचे एक फालि क्षपकको फिर भी उतना अध्वान उतारना चाहिए। इस प्रकार उतारने पर चरम फालिका प्रमाण हो जाता है।

§ ३८७. अब दोफालि क्षपकको उत्कृष्ट योगस्थानसे एक कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र योगस्थान नीचे उतारकर पुनः प्रक्षेप अधिक योगको प्राप्त कराना चाहिये, अन्यथा द्विचरम फालिसे प्रतिबद्ध प्रदेशसत्कर्मस्थानोंकी उत्पत्ति नहीं हो सकती। पुनः इसे यहीं पर स्थापित करके एक फालि क्षपकको उत्कृष्ट योगस्थानके प्राप्त होने तक एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे बढ़ाना चाहिए। इस प्रकार बढ़ाने पर तीन फालि क्षपकके उत्कृष्ट चरम फालिस्थानसे नीचे दो रूप कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र चरम फालिस्थानोंके अन्तरालोंको छोड़कर शेष स्थानोंके अन्तरालोंमें सर्वत्र द्विचरम फालिस्थान उत्पन्न होते हैं।

§ ३८८. अब तीन फालिक्षपकका आश्रय करके द्विचरम फालिस्थान इतने ही उत्पन्न होते हैं, इसलिए इसे छोड़कर छह फालिक्षपकका आश्रय लेकर शेष स्थानोंका कथन करते हैं। यथा—पहलेके तीन फालिस्थानको चरम फालिस्थानके समान करके इसके समान छह फालिस्थानको बतलाते हैं। चरम, द्विचरम और त्रिचरम समयमें त्रिभाग कम उत्कृष्ट योगसे बन्ध करके अधिकृत त्रिचरम समयमें जो स्थित है उसके छह फालिस्थान तीन फालियोंके उत्कृष्ट स्थानसे विशेष अधिक होता है, क्योंकि साधिक उत्कृष्ट योगस्थान प्रक्षेप भागहारमात्र

---

१. आ०प्रतौ 'एदाओ चरिमफालिओ' इति पाठः। २. ता०प्रतौ 'उप्पज्जंति एदं' इति पाठः।

लंभादो। पुणो एदाओ चरिमफालिपमाणेण कीरमाणाओ रूवूणअधापवत्तभागहारेणो-वट्टिदसादिरेयउक्कस्सजोगट्ठाणपक्खेवभागहारमेत्ताओ होंति त्ति तिभागूणुक्कस्स-जोगट्ठाणादो हेट्ठा एगफालिक्खवगो एत्तियमेत्तमद्धाणमोदारेयव्वो। एवमोदारिदे एदं छप्फालिखवगट्ठाणं तिण्णिफालिक्खवगस्स उक्कस्सट्ठाणेण सरिसं होदि।

§ ३८९. संपहि एगफालिक्खवगो अधापवत्तभागहारमेत्तजोगट्ठाणाणि पुणरवि ओदारेदव्वो, अण्णहा णिरुद्धतिण्णिफालिखवगट्ठाणेण सरिसत्ताणुववत्तीदो। एवं सरिसं करिय पुणो दोफालिक्खवगे पक्खेवुत्तरजोगं णीदे दुचरिमफालिट्ठाणमुप्पज्जदि। पुणो एदमेत्थेव ट्ठविय एगफालिक्खवगो पक्खेवुत्तरकमेण दुरूवूणअधापवत्तभागहारमेत्त-जोगट्ठाणाणं परिवाडीए णेदव्वो। एवं णीदे तिण्णिफालिक्खवगस्स सव्वचरिमफालिट्ठाणंतरेसु दुचरिमफालिट्ठाणाणि उप्पण्णाणि होंति। पुणरवि एगफालिक्खवगो पक्खेवुत्तरकमेण वड्ढावेदव्वो जाव उक्कस्सजोगट्ठाणं पत्तो त्ति। संपहि दोफालिक्खवगं तिभागूणुक्कस्सजोगम्मि ट्ठविय चरिमफालिट्ठाणं कादूणेदम्हादो सवेदतिचरिम-दुचरिमसमएसु तिभागूणुक्कस्सजोगेण चरिमसमए उक्कस्सजोगेण बंधिय अधियारतिचरिमसमए ट्ठिदस्स छप्फालिट्ठाणं विसेसाहियं, चडिदद्धाणमेत्तदुचरिम-तिचरिमफालीणमहियत्तुवलंभादो।

द्विचरम फालियोंकी अधिकता उपलब्ध होती है। पुनः इनको चरम फालिप्रमाणसे करने पर वे एक कम अधःप्रवृत्तभागहारसे भाजित साधिक उत्कृष्ट योगस्थानके प्रक्षेप भागहारमात्र होती हैं, इसलिए त्रिभाग कम उत्कृष्ट योगस्थानसे नीचे एक फालिक्षपकको इतना मात्र अध्वान उतारना चाहिए। इस प्रकार उतारनेपर यह छह फालिक्षपकस्थान तीन फालिक्षपकके उत्कृष्ट स्थानके समान होता है।

§ ३८९. अब एक फालिक्षपकको अधःप्रवृत्तभागहारमात्र योगस्थानप्रमाण फिर भी उतारना चाहिए, अन्यथा रुके हुए तीन फालिक्षपकस्थानके साथ समानता नहीं बन सकती। इस प्रकार समान करके पुनः दो फालिक्षपकके प्रक्षेप अधिक योगको प्राप्त कराने पर द्विचरम फालिस्थान उत्पन्न होता है। पुनः इसे यहीं पर स्थापित करके एक फालि-क्षपकको एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे दो रूप कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र योगस्थानोंकी परिपाटीसे ले जाना चाहिए। इसप्रकार ले जाने पर तीन फालिक्षपकके सब चरम फालिस्थानोंके अन्तरालोंमें द्विचरमफालिस्थान उत्पन्न होते हैं। अब फिर भी एक फालिक्षपकको उत्कृष्ट योगस्थानके प्राप्त होने तक एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे बढ़ाना चाहिए। अब दो फालिक्षपकको तृतीय भाग कम उत्कृष्ट योगमें स्थापित कर चरम फालि-स्थानको करके इससे सवेदभागके त्रिचरम और द्विचरम समयोंमें तृतीय भागकम उत्कृष्ट योगसे चरम समयमें उत्कृष्ट योगसे बन्ध कराकर अधिकृत त्रिचरम समयमें जो स्थित है उसकेछह फालिस्थान विशेष अधिक होता है, क्योंकि आगे गये हुए अध्वानमात्र द्विचरम और चरम त्रिफालियोंकी अधिकता उपलब्ध होती है।

§ ३९०. संपहि एदाओ अहियफालीओ चरिमफालिपमाणेण कीरमाणीओ रूवूणअधापवत्तभागहारेणोवट्टिदसादिरेयदुगुणचडिदद्धाणमेत्ताओ होंति त्ति पुणरवि एगफालिक्खवगो एत्तियमेत्तमद्धाणमोदारेदव्वो। एवमोदारिय दोफालिक्खवगे पक्खेवुत्तरजोगं णीदे पुव्वं णियत्ताविददुचरिमफालिट्ठाणे पुणरुत्तमुप्पज्जदि। संपहि इमं दोफालिखवगमेत्थेव ट्ठविय एगफालिखवगो पक्खेवुत्तरादिकमेण वड्ढावेदव्वो जावुक्कस्सजोगट्ठाणं पत्तो त्ति। एवं वड्ढाविय दोफालिखवगं णियत्ताविय चरिमफालिट्ठाणेण सरिसं कादूण ट्ठिदट्ठाणादो तिचरिमसमए तिभागूणुक्कस्सजोगेण चरिम-दुचरिमसमएसु उक्कस्सजोगेण बंधिदूण अधियारतिचरिमसमए अवट्ठिदस्स पदेससंतकम्मट्ठाणं विसेसाहियं, चडिदद्धाणमेत्तदुचरिमफालीणमहियत्तुवलंभादो। पुणो एदाओ दुचरिमफालियाओ चरिमफालिपमाणेण कीरमाणाओ रूवूणअधापवत्तभागहारेण खंडिद-चडिदद्धाणमेत्ताओ होंति त्ति एगफालिक्खवगो पुणरवि एत्तियमेत्तमद्धाणमोदारेदव्वो। एवमोदारिय रूवूणअधापवत्तभागहारमेत्तजोगट्ठाणाणं दोफालिक्खवगे हेट्ठा ओदारिदे अधापवत्तभागहारमेत्ताणि चरिमफालिट्ठाणाणि णिवदंति त्ति सगट्ठाणादो रूवूणअधापवत्तमेत्तजोगट्ठाणाणि ओदारेदव्वो। एवमोदारिय दोफालिक्खवगे पक्खेवुत्तरं जोगं णीदे दुचरिमफालिट्ठाणमुप्पज्जदि।

§ ३९१. संपहि इमं एत्थेव ट्ठविय पुणो एगफालिक्खवगो पक्खेवुत्तरादिकमेण

§ ३९० अब इन अधिक फालियोंको चरम फालिके प्रमाणसे करने पर वे एक कम अधःप्रवृत्त भागहारसे भाजित साधिक दूने आगे गये हुए अध्वानमात्र होती हैं, इसलिए फिर भी एक फालिक्षपकको इतनामात्र अध्वान उतारना चाहिए। इसप्रकार उतारकर दो फालिक्षपकके प्रक्षेप अधिक योगको प्राप्त कराने पर पहले निवृत्त कराया गया द्विचरम फालिस्थानमें पुनरुक्त उत्पन्न होता है। अब इस दो फालिक्षपकको यहीं पर स्थापित करके एक फालिक्षपकको उत्कृष्ट योगस्थानके प्राप्त होने तक एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे बढ़ाना चाहिए। इस प्रकार बढ़ाकर दो फालिक्षपकको निवृत्त कराकर चरम फालिस्थानके समान करके स्थित हुए स्थानसे त्रिचरम समयमें तृतीय भाग कम उत्कृष्ट योगसे तथा चरम और द्विचरम समयमें उत्कृष्ट योगसे बन्ध कराकर अधिकृत त्रिचरम समयमें जो अवस्थित है उसका प्रदेशसत्कर्मस्थान विशेष अधिक होता है, क्योंकि आगे गये हुए अध्वानमात्र द्विचरम फालियोंकी अधिकता उपलब्ध होती है। पुनः इन द्विचरम फालियोंको चरम फालिके प्रमाणसे करने पर वे एक कम अधःप्रवृत्त भागहारसे भाजित आगे गये हुए अध्वानमात्र होती हैं, इसलिए एक फालिक्षपकको फिर भी इतना मात्र अध्वान उतारना चाहिए। इसप्रकार उतारकर एक कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र योगस्थानोंके दो फालिक्षपकको नीचे उतारनेपर अधःप्रवृत्तभागहारमात्र चरम फालिस्थान पतित होते हैं इसलिए अपने स्थानसे एक कम अधःप्रवृत्तमात्र योगस्थान उतारना चाहिए। इसप्रकार उतारकर दो फालि क्षपकको प्रक्षेप अधिक योगको प्राप्त कराने पर द्विचरम फालिस्थान उत्पन्न होता है।

§ ३९१. अब इसे यहीं पर स्थापित करके पुनः एक फालिक्षपकको उत्कृष्ट योगके प्राप्त

वड्ढावेदव्वो जावुक्कस्सजोगं पत्तो त्ति । एवं वड्ढाविदे छप्फालिसामिणो उक्कस्सपदेससंतकम्मट्ठाणादो हेट्ठा दुरूवूणअधापवत्तभागहारमेत्तचरिमफालिट्ठाणाणि मोत्तूण अण्णत्थ सव्वत्थ दुचरिमफालिट्ठाणाणि उप्पण्णाणि । संपहि छप्फालिखवगमस्सिदूण दुचरिमफालिट्ठाणाणमुप्पायणसंभवो णत्थि त्ति चदुब्भागूणउक्कस्सजोगट्ठिददसफालिक्खवगं छफालीणमुक्कस्सजोगट्ठाणेण सरिसत्तविहाणट्ठं रूवूणअधापवत्तभागहारेण खंडिददिवड्ढजोगट्ठाणमेत्तं सादिरेयं चदुचरिमसमए हेट्ठा ओदारिय ट्ठिदजोगं अप्पिदट्ठाणेण सरिसत्तविहाणट्ठं पुणरवि चदुचरिमसमए ओदिण्णअधापवत्तभागहारमेत्तजोगट्ठाणं दुचरिमफालिपदेससंतकम्मुप्पायणट्ठं तिचरिमसमए पुणो संकंतपक्खेवुत्तरजोगमस्सिदूण दुचरिमफालिट्ठाणाणमुप्पायणं पुव्वं व कायव्वं । एवं पंच-छ-सत्तभागूणादिफालीओ इच्छिद-इच्छिदट्ठाणेण समयाविरोहेण विहिदसरिसत्ताओ अस्सिदूण दुचरिमफालिट्ठाणाणि उप्पाएदव्वाणि जाव दुसमऊण-दोआवलियमेत्तसमयपबद्धाणमुक्कस्सट्ठाणादो हेट्ठा दुरूवूणअधापवत्तभागहारमेत्त-चरिमफालिट्ठाणाणमंतराणि मोत्तूण अवरासेसंतरेसु उप्पण्णाणि त्ति ।

§ ३९२. संपहि चरिमफालिट्ठाणंतरेसु दोहि दुचरिमफालियाहि अहियाणं पदेससंतकम्मट्ठाणाणमुप्पत्तिं वत्तइस्सामो । तं जहा—सवेदचरिम-दुचरिमसमएसु घोलमाणजहण्णजोगेण बंधिय अधियारदुचरिमसमए ट्ठिदस्स तिण्णिफालिट्ठाणं पुणरुत्तं,

---

होने तक एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे बढ़ाना चाहिये। इस प्रकार बढ़ाने पर छह फालिस्वामीके उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मस्थानसे नीचे दो रूप कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र चरम फालिस्थानोंको छोड़कर अन्यत्र सर्वत्र द्विचरम फालिस्थान उत्पन्न हुए हैं। अब छह फालि क्षपकका आश्रय लेकर द्विचरम फालिस्थानोंको उत्पन्न कराना सम्भव नहीं है, इसलिए चतुर्थ भाग कम उत्कृष्ट योगमें स्थित दस फालिक्षपकको छह फालियोंके उत्कृष्ट योगस्थानके समान बनानेके लिए एक कम अधःप्रवृत्तभागहारसे भाजित साधिक डेढ़ योगस्थानमात्र चतुश्चरम समयमें नीचे उतारकर स्थित हुए योगको विवक्षित स्थानके समान करनेके लिए फिर भी चतुश्चरम समयमें अवतीर्ण हुए अधःप्रवृत्तभागहारमात्र योगस्थानको द्विचरम फालिके प्रदेशसत्कर्मको उत्पन्न करनेके लिए त्रिचरम समयमें पुनः संक्रमणको प्राप्त हुए एक प्रक्षेप अधिक योगका आश्रय लेकर द्विचरम फालिस्थानोंको उत्पन्न करनेके लिए पहलेके समान करना चाहिए। इस प्रकार इच्छित इच्छित स्थानके आश्रयसे समयके अवरोधपूर्वक सदृश की गई पाँच, छह और सात भाग कम आदि फालियोंका आश्रय लेकर दो समयकम दो आवलिमात्र समयप्रबद्धोंके उत्कृष्ट स्थानसे नीचे दो रूपकम अधःप्रवृत्त-भागहारमात्र चरम फालिस्थानोंके अन्तरालोंको छोड़कर शेष समस्त अन्तरालोंमें उत्पन्न होने तक द्विचरम फालिस्थानोंको उत्पन्न कराना चाहिए।

§ ३९२. अब चरम फालिस्थानोंके अन्तरालोंमें दो द्विचरम फालियोंसे अधिक प्रदेश-सत्कर्मस्थानोंकी उत्पत्तिको बतलाते हैं। यथा—सवेद भागके चरम और द्विचरम समयोंमें घोलमान जघन्य योगसे बन्धकर अधिकृत द्विचरम समयमें जो स्थित है उसका तीन

घोलमाणजहण्णजोगट्ठाणपक्खेवभागहारादो सादिरेयमेत्तद्धाणमुवरि चडिय ट्ठिदजोगेण बद्धेगफालिक्खवगट्ठाणेण समाणत्तादो । एदेण कारणेण सवेददुचरिमसमए घोलमाणजहण्णजोगेण चरिमसमए दुपक्खेउत्तरजोगेण बंधिय अधियारदुचरिमसमए ट्ठिदस्स पदेससंतकम्ममपुणरुत्तं पुव्विल्लसरिसीभूदसंतकम्मट्ठाणादो दोहि चरिम-दुचरिमफालियाहि अहियत्तुवलंभादो । दुचरिमफालिमस्सिऊण समुप्पण्णत्तादो पुव्विल्लदुचरिमफालिट्ठाणाणं अंतो णिवददि त्ति णासंकणिज्जं, चरिमफालिट्ठाणादो एगदुचरिमफालीए अहियसंतकम्मट्ठाणेण दोहि दुचरिमफालियाहि अहियसंतकम्मट्ठाणस्स समाणत्तविरोहादो ।

§ ३९३. संपहि एदं दोफालिक्खवगमेत्थेव ट्ठविय पुणो एगफालिक्खवगो पक्खेउत्तरकमेण ताव वड्ढावेदव्वो जाव तप्पाओग्गमसंखेज्जगुणं जोगं पत्तो त्ति । संपहि दुचरिमसमए घोलमाणजहण्णजोगेण चरिमसमए तप्पाओग्गअसंखेज्जगुणजोगेण बंधिय अधियारदुचरिमसमए ट्ठिदस्स चडिदद्धाणमेत्ताओ दुचरिमफालीओ अधिया होंति, पुव्विल्लट्ठाणस्स चरिमफालिट्ठाणपमाणेण कदत्तादो । संपहि अधापवत्तभागहारेणोवट्टिद-चडिदद्धाणमेत्तं दोफालिक्खवगमोदारिय पुणो दुपक्खेउत्तरजोगं णीदे पुणरुत्तट्ठाणं होदि, पुव्वं णियत्ताविदट्ठाणेण समाणत्तादो । संपहि इममेत्थेव ट्ठविय एगफालिक्खवगो पक्खेउत्तरकमेण ताव वड्ढावेदव्वो जाव असंखेज्जगुणजोगं पावेदूण पुणो

फालिस्थान पुनरुक्त है, क्योंकि घोलमान जघन्य योगस्थानके प्रक्षेपभागहार से साधिक अध्वान ऊपर चढ़कर स्थित हुए योगसे बन्धको प्राप्त हुए एक फालि क्षपकस्थानके समान है । इस कारणसे सवेद भागके द्विचरम समयमें घोलमान जघन्य योगसे चरम समयमें दो प्रक्षेप अधिक योगसे बन्ध कर अधिकृत द्विचरम समयमें जो स्थित है उसका प्रदेश-सत्कर्म अपुनरुक्त है, क्योंकि पहलेके समान हुए सत्कर्मस्थानसे दो चरम और द्विचरम फालियोंकी अपेक्षा अधिकता पाई जाती है । द्विचरम फालिका आश्रय कर उत्पन्न हुई है, इसलिए पहलेकी द्विचरम फालिस्थानोंके भीतर पतित होती है ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि चरम फालिस्थानसे एक द्विचरम फालिकी अपेक्षा अधिक सत्कर्मस्थानसे दो द्विचरम फालियोंकी अपेक्षा अधिक सत्कर्मस्थानके समान होनेमें विरोध आता है ।

§ ३९३. अब इस दो फालि क्षपकको यहीं पर स्थापित कर पुनः एक फालि क्षपकको तत्प्रायोग्य असंख्यातगुणे योगके प्राप्त होने तक एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे बढ़ाना चाहिए । अब द्विचरम समयमें घोलमान जघन्य योगद्वारा और चरम समयमें तत्प्रायोग्य असंख्यात-गुणे योगद्वारा बन्ध करके अधिकृत द्विचरम समयमें स्थित हुए जीवके आगे गये हुए अध्वान-मात्र द्विचरम फालियाँ अधिक होती हैं, क्योंकि पहलेके स्थानको चरम फालिस्थानके प्रमाण-रूपसे किया है । अब अधःप्रवृत्तभागहारसे भाजित आगे गये हुए अध्वानमात्र दो फालि-क्षपकको उतार कर पुनः दो प्रक्षेप अधिक योगको प्राप्त कराने पर पुनरुक्तस्थान होता है, क्योंकि पहले निवृत्त कराये गये स्थानके समान है । अब इसे यहीं पर स्थापित कर एक फालिक्षपकको, असंख्यातगुणे योगको प्राप्त कर पुनः दो फालिक्षपकके योगसे असंख्यातगुणे

दोफालिक्खवगजोगादो असंखेज्जगुणं जोगं पत्तो त्ति । एवं ताव णेदव्वो जाव संखेज्ज-परियट्टणवारेहि अद्धजोगं पत्तो त्ति । पुणो तत्थ चरिमसमयसवेदे दुपक्खेउत्तराद्धजोगेण रूऊणधापवत्तभागहारेणोवट्टिदअद्धजोगपक्खेवभागहारं तिरूवाहियमेत्तं हेट्ठा ओदारिय ट्ठिदजोगेण दुचरिमसमयसवेदे बंधाविदे एगफालिसामिणो उक्कस्सट्ठाणादो हेट्ठिमासेसट्ठाणंतरेसु दुचरिमफालिट्ठाणाणं विदियपरिवाडीए पदेससंतकम्मट्ठाणाणि उप्पण्णाणि ।

§ ३९४. संपहि इममेत्थेव ट्ठविय एगफालिक्खवगो पुणरवि वड्ढावेदव्वो जाव उक्कस्सजोगं पत्तो त्ति । पुणो दोफालिक्खवगमद्धजोगं णेदूण ट्ठविय पुणो अण्णेगेण सवेददुचरिमसमए अद्धजोगेण चरिमसमए उक्कस्सजोगेण बंधिय तिण्णिफालीसु दरिदासु एदं ट्ठाणं पुव्विल्लट्ठाणादो विसेसाहियं, चडिदद्धाणमेत्तदुचरिमफालीण-महियत्तुवलंभादो । पुव्विल्लट्ठाणेण समीकरणट्ठं रूवूणधापवत्तभागहारेणोवट्टिद-चडिदद्धाणमेत्तं पुणरवि एगफालिक्खवगो ओदारेदव्वो । एवमोदारिय पुणो दोफालिक्खवगो रूऊणधापवत्तभागहारमेत्तमोदारिय पुणो दुपक्खेउत्तरजोगं णेदव्वो । एवं णीदे पुणरुत्तट्ठाणं होदि, णियत्ताविदट्ठाणेण समाणत्तादो । एदमेत्थेव ट्ठविय पुणो एगफालिक्खवगो पक्खेउत्तरकमेण वड्ढावेदव्वो जावुक्कस्सजोगट्ठाणं पत्तो त्ति । एवं तिण्णिफालिसामिणो उक्कस्सट्ठाणादो हेट्ठा तिरूवूणअधापवत्तभागहारमेत्तचरिमफालि-

---

योगके प्राप्त होने तक एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे बढ़ाना चाहिये। इस प्रकार संख्यात परिवर्तन बारोंके द्वारा अर्धयोगके प्राप्त होने तक ले जाना चाहिये। पुनः वहाँ पर सवेद भागके चरम समयमें एक कम अधःप्रवृत्त भागहाररूप दो प्रक्षेप अधिक अर्ध योगसे भाजित अर्धयोग प्रक्षेप भागहारको तीन रूप अधिक मात्र नीचे उतार कर स्थित हुए योग द्वारा सवेद भागके द्विचरम समयमें बन्ध कराने पर एक फालि स्वामीके उत्कृष्ट स्थानसे नीचेके समस्त स्थानोंके अन्तरालोंमें द्वितीय परिपाटीसे द्विचरम फालिस्थानोंके प्रदेशसत्कर्मस्थान उत्पन्न हुए।

§ ३९४. अब इसे यहीं पर स्थापित कर उत्कृष्ट योगके प्राप्त होने तक एक फालि क्षपकको फिर भी बढ़ाना चाहिए। पुनः दो फालि क्षपकको अर्ध योगको प्राप्त करा कर स्थापित करके पुनः सवेद भागके द्विचरम समयमें अन्य एक अर्ध योगके द्वारा और चरम समयमें उत्कृष्ट योगके द्वारा बन्ध करके तीन फालियोंके दारित होने पर यह स्थान पहलेके स्थानसे विशेष अधिक है, क्योंकि आगे गये हुए स्थानमात्र द्विचरम फालियाँ अधिक पाई जाती हैं। पहलेके स्थानके साथ समीकरण करनेके लिए एक कम अधःप्रवृत्तभागहारसे भाजित आगे गये हुए अध्वानमात्र एक फालिक्षपकको फिर भी उतारना चाहिए। इस प्रकार उतार कर पुनः दो फालि क्षपकको एक कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र उतारकर पुनः दो प्रक्षेप अधिक योगको प्राप्त कराना चाहिए। इसप्रकार प्राप्त कराने पर पुनरुक्त स्थान होता है, क्योंकि यह निवृत्त कराये गये स्थानके समान है। इसे यहीं पर स्थापित करके पुनः एक फालि क्षपकको उत्कृष्ट योगस्थानके प्राप्त होने तक एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे बढ़ाना चाहिए। इसप्रकार तीन फालियोंके स्वामीके उत्कृष्ट योगसे नीचे तीन रूप कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र चरम

ट्ठाणंतराणि मोत्तूण सेसासेसट्ठाणंतरेसु विदियपरिवाडीए दुचरिमफालिट्ठाणाणि समुप्पण्णाणि । एवमुवरि छद्दसादिफालिक्खवगे अस्सिदूण विदियपरिवाडीए दुचरिमफालिट्ठाणाणि उप्पादेदव्वाणि । णवरि दुसमयूणदोआवलियमेत्तसमयपबद्धाण-मुक्कस्सट्ठाणादो हेट्ठा तिरूवूणअधःपवत्तभागहारमेत्तचरिमफालिट्ठाणंतरेसु ण उप्पण्णाणि, तिभागूण-चदुब्भा णादिजोगट्ठाणेसु ट्ठविय अणंतरादीदट्ठाणेण संधाणकम्मो जाणिय कायव्वो। पुव्विल्लदुचरिमफालिट्ठाणेहिंतो विदियपरिवाडीए समुप्पण्णट्ठाणाणि समाणाणि, हेट्ठदो ऊणेगट्ठाणस्स उवरिमेगट्ठाणपवेसदंसणादो । एदमत्थपदमुवरि भण्णमाणतदियादिपरिवाडीसु सव्वत्थ वत्तव्वं। एवं दुचरिमफालिट्ठाणाणं विदियपरिवाडी समत्ता ।

§ ३९५. संपहि तीहि दुचरिमफालीहि अधियट्ठाणाणं परूवणं कस्सामो। तं जहा—सवेदचरिम-दुचरिमसमएसु घोलमाणजहण्णजोगेण बंधिय पुणो अधियारदुचरिमसमयम्मि ट्ठिदस्स तिण्णिफालीओ जहण्णजोगादो सादिरेयदुगुणमेत्तमद्धाणं गंतूण ट्ठिदएगफालिक्खवगजोगेण सरिसाओ होंति त्ति पुणरुत्तमिदं ट्ठाणं। संपहि एगफालिक्खवगं घोलमाणजहण्णजोगम्मि ट्ठविय दोफालिक्खवगे तिपक्खेउत्तरजोगं णीदे दुचरिमफालिट्ठाणाणं तदियपरिवाडीए पढममपुणरुत्तट्ठाणं। पुणो एदमेत्थेव ट्ठविय एगफालिखवगो पक्खेउत्तरकमेण वड्ढावेदव्वो जाव जहण्णजोगट्ठाणादो असंखेज्जगुणं

फालिस्थानोंके अन्तरालोंको छोड़कर शेष समस्त स्थानोंके अन्तरालोंमें द्वितीय परिपाटीसे द्विचरम फालिस्थान उत्पन्न हुए। इस प्रकार ऊपर छह और दस आदि फालिक्षपकोंका आश्रय लेकर द्वितीय परिपाटीसे द्विचरम फालिस्थान उत्पन्न करने चाहिए। इतनी विशेषता है कि दो समय कम दो आवलिमात्र समयप्रबद्धोंके उत्कृष्ट स्थानसे नीचे तीन रूप कम अधःप्रवृत्त भागहार मात्र चरम फालिस्थानोंके अन्तरालोंमें नहीं उत्पन्न हुए, अतः तीन भाग कम और चार भाग कम आदि योगस्थानोंमें स्थापित कर अनन्तर अतीत स्थानके साथ सन्धानका क्रम जानकर करना चाहिए। पहलेके द्विचरम फालिस्थानोंसे द्वितीय परिपाटीके अनुसार उत्पन्न हुए स्थान समान हैं, क्योंकि नीचेसे कम एक स्थानका उपरिम एक स्थानमें प्रवेश देखा जाता है। यह अर्थपद ऊपर कही जानेवाली तृतीय आदि परिपाटियोंमें सर्वत्र कहना चाहिए। इस प्रकार द्विचरम फालिस्थानोंकी द्वितीय परिपाटी समाप्त हुई।

§ ३९५. अब तीन द्विचरम फालियोंके आश्रयसे अधिक स्थानोंका कथन करते हैं। यथा—सवेद भागके चरम और द्विचरम समयोंमें घोलमान जघन्य योगसे बन्ध करके पुनः अधिकृत द्विचरम समयमें स्थित हुए जीवके तीन फालियाँ जघन्य योगसे साधिक दूनामात्र अध्वान जाकर स्थित एक फालिक्षपकस्थानके समान होती हैं, इसलिए यह स्थान पुनरुक्त है। अब एक फालिक्षपकको घोलमान जघन्य योगमें स्थापित करके दो फालिक्षपकको तीन प्रक्षेप अधिक योगको प्राप्त कराने पर द्विचरम फालिस्थानोंका तृतीय परिपाटीके अनुसार प्रथम अपुनरुक्त स्थान होता है। पुनः इसे यहीं पर स्थापित करके एक फालिक्षपकको जघन्य योगस्थानसे असंख्यातगुणे योगके प्राप्त होने तक एक-एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे बढ़ाना चाहिए। इस

जोगं पत्तो त्ति । एवमुवरिमासेसकिरियं जाणिदूण णेयव्वं जाव दुसमयूणदोआवलिय-मेत्तसमयपबद्धा वड्ढिदा त्ति । एवं वड्ढाविदे दुसमयूणदोआवलियमेत्तसमयपबद्धाण-मुक्कस्सट्ठाणादो हेट्ठा चदुरूऊणअधापवत्तभागहारमेत्तचरिमफालिट्ठाणाणमंतराणि मोत्तूण सेसासेसट्ठाणंतरेसु तदियपरिवाडीए दुचरिमफालिट्ठाणाणि समुप्पण्णाणि ।

§ ३९६. संपहि चउत्थपरिवाडीए दुचरिमफालिट्ठाणाणं परूवणं कस्सामो । तं जहा—दोसु समएसु घोलमाणजहण्णजोगेण बंधिय अहियारदुचरिमसमयम्मि ट्ठिदखवगट्ठाणघोलमाणजहण्णजोगादो सादिरेयदुगुणजोगट्ठाणं गंतूण ट्ठिदेगफालिट्ठाणेण सह सरिसं होदि त्ति पुणरुत्तं । संपहि अपुणरुत्तट्ठाणुप्पायणट्ठं दोफालिक्खवगो एगवारेण चदुपक्खेवुत्तरजोगं णेदव्वो । एवं णीदे चउत्थपरिवाडीए पढमपुणरुत्तट्ठाणं, चरिमफालिट्ठाणं पेक्खिदूण चदुहि दुचरिमफालिट्ठाणेहि अहियत्तुवलंभादो । संपहि एदमेत्थेव ट्ठविय एगफालिक्खवगो पक्खेवुत्तरकमेण वड्ढावेदव्वो जाव जहण्णजोग-ट्ठाणादो असंखेज्जगुणं जोगं पत्तो त्ति । एवं सव्वसंधीओ जाणिदूण णेदव्वं जाव दुसमयूण-दोआवलियमेत्तसमयपबद्धा वड्ढिदा त्ति । एवं वड्ढाविदे दुसमयूणदोआवलियमेत्त-समयपबद्धाणमुक्कस्सएगफालिट्ठाणादो हेट्ठा पंचरूऊणअधापवत्तभागहारमेत्तट्ठाणंतराणि मोत्तूण सेसासेसट्ठाणंतरेसु चउत्थपरिवाडीए दुचरिमफालिट्ठाणाणि समुप्पण्णाणि ।

प्रकार उपरिम समस्त क्रियाको जानकर दो समयकम दो आवलिमात्र समयप्रबद्धोंकी वृद्धि होने तक ले जाना चाहिए। इस प्रकार बढ़ाने पर दो समय कम दो आवलिमात्र समयप्रबद्धोंके उत्कृष्ट स्थानसे नीचे चार रूपकम अधःप्रवृत्त भागहारमात्र चरम फालिस्थानोंके अन्तरालोंको छोड़कर शेष समस्त स्थानोंके अन्तरालोंमें तृतीय परिपाटीके अनुसार द्विचरम फालिस्थान उत्पन्न हुए।

§ ३९६. अब चतुर्थ परिपाटीके अनुसार द्विचरम फालिस्थानोंका कथन करते हैं। यथा—दो समयोंमें घोलमान जघन्य योगसे बन्ध कर अधिकृत द्विचरम समयमें स्थित क्षपकस्थानके घोलमान जघन्य योगसे साधिक दूने योगस्थान जाकर स्थित हुए एक फालि-स्थानके समान होता है, इसलिए पुनरुक्त है। अब अपुनरुक्त स्थानके उत्पन्न करनेके लिये दो फालिक्षपकको एक बारमें चार प्रक्षेप अधिक योग तक ले जाना चाहिये। इस प्रकार ले जाने पर चतुर्थ परिपाटीके अनुसार पहला अपुनरुक्त स्थान होता है, क्योंकि चरम फालि-स्थानको देखते हुए इसमें चार द्विचरम फालिस्थान रूपसे अधिकता उपलब्ध होती है। अब इसे यहीं पर स्थापित करके एक फालिक्षपकको जघन्य योगस्थानसे असंख्यातगुणे योगके प्राप्त होने तक एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे बढ़ाना चाहिए। इस प्रकार सब सन्धियोंको जान कर दो समय कम दो आवलिमात्र समयप्रबद्धोंकी वृद्धि होने तक बढ़ाना चाहिए। इस प्रकार बढ़ाने पर दो समय कम दो आवलिमात्र समयप्रबद्धोंके उत्कृष्ट एक फालिस्थानसे नीचे पाँच रूप कम अधःप्रवृत्त भागहारमात्र स्थानोंके अन्तरालोंको छोड़कर शेष समस्त स्थानोंके अन्त-रालोंमें चतुर्थ परिपाटीके अनुसार द्विचरम फालिस्थान उत्पन्न हुए। इस प्रकार एक एक द्विचरम

एवमेगेगदुचरिमफालिमधियं काऊण दुचरिमफालिट्ठाणाणं पंचमादिपरिवाडीओ जाव तिरूऊणअधापवत्तभागहारमेत्ताओ जाणिदूण परूवेदव्वाओ।

§ ३९७. संपहि सव्वपच्छिमं दुचरिमफालिट्ठाणपरूवणं कस्सामो। तं जहा—चरिम-दुचरिमसमयम्मि घोलमाणजहण्णजोगेण बंधिय अधियारदुचरिमसमयम्मि ट्ठिदस्स पदेससंतकम्मट्ठाणं जहण्णजोगादो सादिरेयदुगुणमद्धाणं गंतूण ट्ठिदएगफालिक्खवग-संतकम्मट्ठाणेण समाणत्तादो पुणरुत्तं। संपहि अपुणरुत्तदुचरिमफालिपदेससंतकम्म-ट्ठाणाणमुप्पायणट्ठं दोफालिक्खवगो अक्कमेण दुरूऊणअधापवत्तभागहारमेत्त-पक्खेउत्तरजोगं णेदव्वो। एवं णोदे दुरूऊणधापवत्तभागहारमेत्तचरिमफालिट्ठाणाणि बोलेदूण उवरिमचरिमफालिट्ठाणमपावेदूण दोण्हं पि विचाले अपुणरुत्तं होदूण एदं ट्ठाणमुप्पज्जदि। रूऊणधापवत्तभागहारमेत्तपक्खेउत्तरजोगस्स दोफालिक्खवगो किं ण ढोइदो ? ण, रूऊणधापवत्तभागहारमेत्तदुचरिमफालीहिंतो एगचरिमफालीए समुप्पत्तीए। ण च एवं, दुचरिमफालिट्ठाणं मोत्तूण चरिमफालिट्ठाणस्स उप्पत्तिप्पसंगादो। ण च एवं, पुणरुत्तट्ठाणुप्पत्तीए। तम्हा दुरूवूणधापवत्तभागहारमेत्तपक्खेवाहियजोगं चेव णेदव्वो। संपहि एदमेत्थेव ट्ठविय एगफालिक्खवगो पक्खेउत्तरकमेण वड्ढावेदव्वो जाव तप्पाओग्गमसंखेज्जगुणं जोगं पत्तो त्ति।

फालिको अधिक करके द्विचरम फालिस्थानोंकी पञ्चम आदि परिपाटियोंको तीन रूप कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र जानकर प्ररूपणा करनी चाहिए।

§ ३९७. अब सबसे अन्तिम द्विचरम फालिस्थानका कथन करते हैं। यथा—चरम और द्विचरम समयमें घोलमान जघन्य योगसे बन्ध कर अधिकृत द्विचरम समयमें स्थित हुए जीवके प्रदेशसत्कर्मस्थान पुनरुक्त है, क्योंकि वह जघन्य योगसे साधिक दुगुना अध्वान जाकर स्थित एक फालि क्षपकके सत्कर्मस्थानके समान है। अब अपुनरुक्त द्विचरम फालि प्रदेशसत्कर्म-स्थानोंके उत्पन्न करनेके लिये दो फालि क्षपकको युगपत् दो रूप कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र प्रक्षेप अधिक योग तक ले जाना चाहिये। इस प्रकार ले जाने पर दो रूप कम अधःप्रवृत्तभाग-हारमात्र चरम फालिस्थानोंको बिताकर उपरिम चरम फालिस्थानको नहीं प्राप्त होकर दोनोंके ही मध्यमें अपुनरुक्त होकर यह स्थान उत्पन्न होता है।

शंका—एक कम अधःप्रवृत्त भागहारमात्र प्रक्षेप अधिक योगका दो फालिक्षपक क्यों नहीं ढोया गया ?

समाधान—नहीं, क्योंकि एक कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र द्विचरम फालियोंसे एक चरम फालिकी उत्पत्ति होती है। परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि ऐसा होने पर द्विचरम फालिके स्थानको छोड़कर चरम फालिस्थानकी उत्पत्तिका प्रसङ्ग आता है। परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि ऐसा होने पर पुनरुक्त स्थानकी उत्पत्ति होती है। इसलिये दो रूप कम अधःप्रवृत्तभागहार-मात्र प्रक्षेप अधिक योगको ही प्राप्त कराना चाहिये।

अब इसे यहीं पर स्थापित करके एक फालिक्षपकको तत्प्रायोग्य असंख्यातगुणे योगके प्राप्त होने तक एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे बढ़ाना चाहिए।

§ ३९८. संपहि चरिमफालिट्ठाणेण समाणत्तविहाणट्ठं दोफालिक्खवगं जहण्णजोगम्मि ट्ठविय समीकरणं कस्सामो । तं जहा—सवेददुचरिमसमए जहण्णजोगेण चरिमसमए असंखेज्जगुणजोगेण बंधिय अधियारदुचरिमसमए ट्ठिदक्खवगट्ठाणं पुव्विल्लट्ठाणादो विसेसाहियं, चडिदद्धाणमेत्तदुचरिमफालीणमहियत्तुवलंभादो । संपहि अधापवत्तभागहारेण खंडिदचडिदद्धाणमेत्तं दोफालिक्खवगमोदारिय पुणो दुरूवूणअधापवत्तभागहारमेत्तपक्खेवाहियजोगट्ठाणं णीदे पुणरुत्तदुचरिमफालिट्ठाणं होदि । संपहि इमं एत्थेव ट्ठविय पुणो एगफालिखवगो पक्खेउत्तरादिकमेण वड्ढावेदव्वो जाव दोफालिक्खवगजोगट्ठाणादो असंखेज्जगुणं जोगं पत्तो त्ति ।

§ ३९९. संपहि एत्थ ट्ठविय पुव्वं व समीकरणं कायव्वं । एवं एदेण कमेण ताव वड्ढावेदव्वं जाव संखेज्जपरियट्टणवाराओ गंतूण अद्धजोगं पत्तो त्ति । एवं वड्ढाविज्जमाणे एगफालिखवगे कम्मि उद्देसे संते एगफालिखवगस्स उक्कस्सट्ठाणादो हेट्ठा दुचरिमफालिट्ठाणाणि समुप्पण्णाणि त्ति भणिदे जाधे दोफालिखवगो अद्धजोगादो उवरि दुरूवूणधापवत्तभागहारमेत्तपक्खेवाहियजोगं गदो, एगफालिखवगो वि रूवूणधापवत्तभागहारेण अद्धजोगपक्खेवभागहारं खंडिदेयखंडमेत्तं पुणो रूऊणधापवत्तभागहारमेत्तं च अद्धजोगादो हेट्ठा ओदरिय ट्ठिदो ताधे एगफालिक्खवगस्स सव्वफालिट्ठाणंतरेसु दुचरिमफालिट्ठाणाणि समुप्पण्णाणि । संपहि एगफालिक्खवगो पक्खेउत्तरकमेण ताव

---

§ ३९८. अब चरम फालिस्थानके साथ समानताका विधान करनेके लिये दो फालि क्षपकको जघन्य योगमें स्थापित करके समीकरण करते हैं । यथा—सवेद भागके द्विचरम समयमें जघन्य योगसे और चरम समयमें असंख्यातगुणे योगसे बन्ध कर अधिकृत द्विचरम समयमें स्थित हुआ क्षपकस्थान पहलेके स्थानसे विशेष अधिक है, क्योंकि आगे गये हुए अध्वानमात्र द्विचरम फालियोंकी अधिकता उपलब्ध होती है । अब अधःप्रवृत्तभागहारसे भाजित आगे गये हुए अध्वानमात्र दो फालिक्षपकको उतारकर पुनः दो रूप कम अधःप्रवृत्तभागहार मात्र प्रक्षेप अधिक योगस्थान तक ले जाने पर पुनरुक्त द्विचरम फालिस्थान होता है । अब इसे यहीं पर स्थापित कर पुनः एक फालिक्षपकको दो फालिक्षपकके योगस्थानसे असंख्यातगुणे योगके प्राप्त होने तक एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे बढ़ाना चाहिए ।

§ ३९९. अब यहीं पर स्थापित कर पहलेके समान समीकरण करना चाहिए । इस प्रकार इस क्रमसे संख्यात परिवर्तन बार जाकर अर्धयोगके प्राप्त होने तक बढ़ाना चाहिए । इस प्रकार बढ़ाने पर एक फालिक्षपकके किस स्थानमें रहते हुए एक फालिक्षपकके उत्कृष्ट स्थानसे नीचे द्विचरम फालिस्थान उत्पन्न हुए हैं ऐसा पूछने पर जहाँ पर दो फालि क्षपक अर्धयोगसे ऊपर दो रूप कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र प्रक्षेप अधिक योगको प्राप्त हुआ तथा एक फालिक्षपक भी एक कम अधःप्रवृत्तभागहारसे अर्धयोग प्रक्षेपभागहारको भाजित कर प्राप्त हुए एक भागमात्रको पुनः एक कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्रको अर्धयोगसे नीचे उतार-कर स्थित है तब जाकर एक फालिक्षपकके सब फालिस्थानोंके अन्तरालोंमें द्विचरम फालि-स्थान उत्पन्न हुए । अब एक फालिक्षपकको उत्कृष्ट योगके प्राप्त होने तक एक-एक प्रक्षेप अधिकके

वड्ढावेदव्वो जावुक्कस्सजोगं पत्तो त्ति। पुणो दोफालिखवगमद्धजोगम्मि ट्ठविय संपहि किरियंतरं परूवेमो। तं जहा—सवेदचरिमसमए उक्कस्सजोगेण दुचरिमसमए अद्धजोगेण बंधिय अधियारदुचरिमसमए अवट्ठिदखवगट्ठाणं पुव्विल्लट्ठाणादो विसेसाहियं, चडिदद्धाणमेत्तदुचरिमफालीणमहियत्तुवलंभादो। पुणो रूवूणधापवत्तभागहारेणोवट्टिद-चडिदद्धाणमेत्तमेगफालिक्खवगमद्धजोगादो हेट्ठा ओदारिय पुणो उक्कस्सजोगादो हेट्ठा दोफालिखवगे रूऊणधापवत्तभागहारमेत्तजोगट्ठाणाणि ओदारिय दुरूऊणअधापवत्त-भागहारमेत्तजोगट्ठाणस्स पुणो उवरि चडाविदे दुचरिमफालिट्ठाणं पुणरुत्तमुप्पज्जदि।

§ ४००. संपहि इममेत्थेव ट्ठविय एगफालिक्खवगो ताव वड्ढावेदव्वो जाव उक्कस्सजोगट्ठाणं पत्तो त्ति। एवं वड्ढाविदे तिण्णिफालिक्खवगस्स उक्कस्सट्ठाणादो हेट्ठिम-चरिमफालिट्ठाणंतरं मोत्तूण अवसेसासेसट्ठाणंतरेसु दुचरिमफालिट्ठाणाणि समुप्पण्णाणि। एवं उवरिं वि तिभागूण-चदुब्भागूणादिकमेण बंधाविय पुणो सरिसं कादूण णेदव्वं जाव दुसमयूणदोआवलियमेत्तसमयपबद्धा उक्कस्सजोगं पत्ता त्ति। एवं वड्ढाविदे दुसमयूणदोआवलियमेत्तसमयपबद्धाणमुक्कस्सट्ठाणादो हेट्ठिमाणंतरट्ठाणंतरं मोत्तूण सेसट्ठाणंतरेसु सव्वत्थ दुचरिमफालिट्ठाणाणि समुप्पण्णाणि। संपहि दुचरिमफालीओ अस्सिदूण एक्केक्कचरिमफालिट्ठाणंतरेसु दुरूऊणअधापवत्तभागहारमेत्ताणि चेव दुचरिमफालिट्ठाणाणि उप्पज्जंति, रूऊणअधापवत्तभागहारमेत्तदुचरिमफालीहि

क्रमसे बढ़ाना चाहिए। पुनः दो फालिक्षपकको अर्धयोगमें स्थापित कर अब क्रियान्तरका कथन करते हैं। यथा—सवेद भागके चरम समयमें उत्कृष्ट योगसे तथा द्विचरम समयमें अर्धयोगसे बन्ध कर अधिकृत द्विचरम समयमें अवस्थित क्षपकस्थान पहलेके स्थानसे विशेष अधिक है, क्योंकि आगे गये हुए अध्वानमात्र द्विचरम फालियोंकी अधिकता उपलब्ध होती है। पुनः एक कम अधःप्रवृत्तभागहारसे भाजित आगे गये हुए अध्वानमात्र एक फालिक्षपकको अर्धयोगसे नीचे उतारकर पुनः उत्कृष्ट योगसे नीचे दो फालिक्षपकको एक कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र योगस्थानोंको उतार कर दो रूप कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र योगस्थानके ऊपर पुनः चढ़ाने पर द्विचरम फालिस्थान पुनरुक्त उत्पन्न होता है।

§ ४००. अब इसे यहीं पर स्थापित कर एक फालिक्षपकको उत्कृष्ट योगस्थानके प्राप्त होने तक बढ़ाना चाहिए। इस प्रकार बढ़ाने पर तीन फालिक्षपकके उत्कृष्ट स्थानसे नीचेके चरमफालि स्थानान्तरको छोड़कर बाकीके समस्त फालिस्थानोंके अन्तरालोंमें द्विचरम फालिस्थान उत्पन्न हुए। इस प्रकार ऊपर भी त्रिभाग कम और चार भाग कम आदिके क्रमसे बन्ध कराकर पुनः समान करके दो समय कम दो आवलिमात्र समयप्रबद्धोंके उत्कृष्ट योगको प्राप्त होने तक ले जाना चाहिए। इस प्रकार बढ़ाने पर दो समय कम दो आवलिमात्र समयप्रबद्धोंके उत्कृष्ट स्थानसे अधस्तन अनन्तर स्थानके अन्तरालको छोड़कर शेष स्थानोंके अन्तरालोंमें सर्वत्र द्विचरम फालिस्थान उत्पन्न हुए। अब द्विचरम फालियोंका आश्रय लेकर एक एक चरम फालिस्थानोंके अन्तरालोंमें दो कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र ही द्विचरम फालिस्थान उत्पन्न होते हैं, क्योंकि एक कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र द्विचरम फालियोंसे

एगचरिमफालीए समुप्पत्तीदो। णवरि सव्वचरिमफालिट्ठाणंतरेसु दुरूऊणअधापवत्त-भागहारमेत्ताणि चेव दुचरिमफालिट्ठाणंतराणि होंति त्ति णत्थि णियमो, हेट्ठिम-उवरिमरूऊणधापवत्तभागहारमेत्तचरिमफालिट्ठाणंतरेसु एगादिएगुत्तरकमेण दुचरिमफालिट्ठाणाणं अवट्ठाणुवलंभादो। एवं दुचरिमफालीओ अस्सिदूण पुरिसवेदस्स पदेससंतकम्मट्ठाणाणं परूवणा कदा।

§ ४०१. संपहि तिचरिमफालिविसेसमस्सियूण पदेससंतकम्मट्ठाणाणं परूवणं कस्सामो। तं जहा—सवेदचरिम-दुचरिम-तिचरिमसमएसु घोलमाणजहण्णजोगेण बंधिय अधियारतिचरिमसमए ट्ठिदस्स छप्फालीओ घोलमाणजहण्णजोगादो उवरि सादिरेयतिगुणमेत्तजोगट्ठाणेण परिणदएगफालिखवगदव्वेण सह सरिसाओ होंति त्ति पुणरुत्ताओ। संपहि केत्तियमेत्तेण एदं तिगुणमद्धाणं सादिरेयं? रूऊण-अधापवत्तभागहारेणोवट्टिदतिगुणघोलमाणजहण्णजोगपक्खेवभागहारमेत्तं होदूण पुणो रूऊणधापवत्तभागहारवग्गेणोवट्टिदघोलमाणजहण्णजोगभागहारमेत्तेण समहियं। संपहि एग-दोफालिक्खवगेसु पक्खेउत्तरादिकमेण वड्ढमाणेसु पुणरुत्तट्ठाणाणि चेव उप्पज्जंति त्ति तेहि विणा तिण्णिफालिक्खवगो चेव पक्खेउत्तरजोगं णेदव्वो। एवं णीदे अपुणरुत्तट्ठाणं होदि। एगचरिमफालीए दोहि दुचरिमफालीहि एगेण तिचरिमफालिविसेसेण च अहियत्तादो। णेदं चरिमफालिट्ठाणं, दोण्हं चरिमफालिट्ठाणाणमंतरे समुप्पण्णत्तादो। ण

एक चरम फालि उत्पन्न हुई है। इतनी विशेषता है कि सब चरम फालिस्थानोंके अन्तरालोंमें दो कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र ही द्विचरम फालिस्थानोंके अन्तराल होते हैं ऐसा कोई नियम नहीं है, क्योंकि अधस्तन और उपरिम एक कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र चरम फालिस्थानोंके अन्तरालोंमें एकसे लेकर एक एक अधिकके क्रमसे द्विचरम फालिस्थानोंका अवस्थान उपलब्ध होता है। इस प्रकार द्विचरम फालियोंका आश्रय लेकर पुरुषवेदके प्रदेशसत्कर्मस्थानोंकी प्ररूपणा की।

§ ४०१. अब त्रिचरमफालि विशेषका आश्रय लेकर प्रदेशसत्कर्मस्थानोंका कथन करते हैं। यथा—सवेद भागके चरम, द्विचरम और त्रिचरम समयोंमें घोलमान जघन्य योगसे बन्ध कर अधिकृत त्रिचरम समयमें स्थित हुए जीवके छह फालियाँ घोलमान जघन्य योगसे ऊपर साधिक तिगुणे योगस्थानके द्वारा परिणत हुए एक फालिक्षपक द्रव्यके साथ समान होती हैं, इसलिए पुनरुक्त हैं।

शंका—अब कितने मात्रसे यह त्रिगुणा अध्वान साधिक होता है ?

समाधान—एक कम अधःप्रवृत्तभागहारसे भाजित तिगुना घोलमान जघन्य योग-प्रक्षेपभागहारमात्र होकर पुनः एक कम अधःप्रवृत्तभागहारके वर्गसे भाजित घोलमान जघन्य योगभागहारमात्रसे अधिक होता है।

अब एक और दो फालिक्षपकोंके एक एक प्रक्षेप अधिक आदिके क्रमसे बढ़ने पर पुनरुक्त स्थान ही उत्पन्न होते हैं, इसलिए उनके विना तीन फालिक्षपकको ही प्रक्षेप अधिक योगको प्राप्त कराना चाहिए। इस प्रकार ले जाने पर अपुनरुक्त स्थान होता है। इसमें एक चरम फालि, दो द्विचरम फालियाँ और एक त्रिचरम फालिविशेष अधिक है। इसलिए यह चरम फालिस्थान नहीं है, क्योंकि दो चरम फालिस्थानोंके अन्तरालमें उत्पन्न हुआ है।

दुचरिमफालिट्ठाणं पि, दोदुचरिमफालीओ बोलेदूण तदियदुचरिमफालीए हेट्ठिमअंतरे समुप्पण्णत्तादो। तम्हा एदं ट्ठाणमपुणरुत्तं चेवे त्ति दट्ठव्वं। संपहि इममेत्थेव ट्ठविय एगफालिक्खवगे पक्खेउत्तरजोगं णीदे अपुणरुत्तं ट्ठाणं होदि, उवरिमचरिमफालिट्ठाणं बोलेदूण विदिय-तदियदुचरिमफालिट्ठाणाणमंतरे समुप्पण्णत्तादो। एवं एगफालिक्खवगो चेव पक्खेवुत्तरादिकमेण वड्ढावेदव्वं जाव तप्पाओग्गमसंखेज्जगुणं जोगं पत्तो त्ति।

§ ४०२. संपहि तिण्णिफालिक्खवगमणंतरहेट्ठिमजोगं णेदूण चरिमफालिट्ठाणेण समाणं करिय पुणो एत्थुववज्जंतं किरियाकप्पं वत्तइस्सामो। तं जहा—अण्णेगो तिचरिम-चरिमसमएसु जहण्णजोगेण दुचरिमसमए तप्पाओग्गअसंखेज्जगुणजोगेण बंधिय अधियारतिचरिमसमए अवट्ठिदो। एदस्स ट्ठाणं पुव्विल्लट्ठाणादो विसेसाहियं, चडिदद्धाणमेत्त-दुचरिमफालीणमहियत्तुवलंभादो। पुणो अधापवत्तभागहारेणोवट्टिदचडिदद्धाणमेत्तं दोफालिक्खवगमोदारिय तिण्णिफालिक्खवगे पक्खेवुत्तरजोगं णीदे पुणरुत्तं तिचरिमफालिविसेसट्ठाणं होदि। संपहि इममेत्थेव ट्ठविय पुणो एगफालिक्खवगो पक्खेवुत्तरकमेण वड्ढावेदव्वो जाव तप्पाओग्गमसंखेज्जगुणं जोगं पत्तो त्ति।

§ ४०३. संपहि इममेत्थेव ट्ठविय तिण्णिफालिक्खवगं जहण्णजोगं णेदूण चरिमफालिट्ठाणेण समाणं करिय पुणो एत्थुववज्जंतं किरियाकप्पं वत्तइस्सामो। तं जहा—सवेदतिचरिमसमए घोलमाणजहण्णजोगेण चरिम-दुचरिमसमएसु

यह द्विचरम फालिस्थान भी नहीं है, क्योंकि दो द्विचरम फालियोंको उल्लंघन कर तृतीय द्विचरमफालिके अधःस्तन अन्तरालमें उत्पन्न हुआ है, इसलिए यह स्थान अपुनरुक्त ही है ऐसा जानना चाहिए। अब इसे यहीं पर स्थापित कर एक फालिक्षपकके प्रक्षेप अधिक योग तक ले जाने पर अपुनरुक्त स्थान होता है, क्योंकि उपरिम चरम फालिस्थानको उल्लंघनकर दूसरे और तीसरे द्विचरम फालिस्थानोंके अन्तरालमें उत्पन्न हुआ है। इस प्रकार एक फालिक्षपकको ही तत्प्रायोग्य असंख्यातगुणे योगको प्राप्त होने तक एक एक प्रक्षेप अधिक आदिके क्रमसे बढ़ाना चाहिए।

§ ४०२. अब तीन फालिक्षपकको अनन्तर अधस्तन योगको ले जाकर चरम फालिस्थानके समान करके पुनः यहाँ पर उत्पन्न होनेवाले क्रियाकलापको बतलाते हैं। यथा—अन्य एक जीव त्रिचरम और चरम समयोंमें जघन्य योगसे तथा द्विचरम समयमें तत्प्रायोग्य असंख्यातगुणे योगसे बन्ध करके अधिकृत चरम समयमें अवस्थित है। इसका स्थान पहलेके स्थानसे विशेष अधिक है, क्योंकि आगे गये हुए अध्वानमात्र द्विचरम फालियोंकी अधिकता उपलब्ध होती है। पुनः अधःप्रवृत्तभागहारसे भाजित आगे गये हुए अध्वानमात्र दो फालिक्षपकको उतार कर तीन फालिक्षपकके प्रक्षेप अधिक योगको प्राप्त कराने पर पुनरुक्त त्रिचरम फालिविशेषरूप स्थान होता है। अब इसे यहीं पर स्थापित कर पुनः एक फालिक्षपकको तत्प्रायोग्य असंख्यातगुणे योगके प्राप्त होने तक एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे बढ़ाना चाहिए।

§ ४०३. अब इसे यहीं पर स्थापित कर तीन फालिक्षपकको जघन्य योगको प्राप्त कराकर चरम फालिस्थानके समान कर पुनः यहाँ पर उत्पन्न हुए क्रियाकलापको बतलाते हैं। यथा—सवेद भागके त्रिचरम समयमें घोलमान जघन्य योगसे तथा चरम और द्विचरम समयोंमें तत्प्रायोग्य

तप्पाओग्गअसंखेज्जगुणजोगेण बंधिय अधियारतिचरिमसमए ट्ठिदखवगट्ठाणं पुव्विल्लट्ठाणादो विसेसाहियं, चडिदद्धाणमेत्तदुचरिम-तिचरिमफालीणमहियत्तुवलंभादो। संपहि अधापवत्तभागहारेणोवट्टिदं दुगुणं चडिदद्धाणं सादिरेयमेत्तं दोफालिक्खवगमोदारिय पुणो तिण्णिफालिक्खवगे पक्खेवुत्तरजोगं णीदे तिचरिमफालिविसेसट्ठाणं पुणरुत्तं होदि, पुव्वं णियत्ताविदट्ठाणस्सेव समुप्पण्णत्तादो। संपहि इममेत्थेव ट्ठविय पुणो एगफालिक्खवगपक्खेवुत्तरजोगं णीदे ट्ठाणमपुणरुत्तं होदि, एगचरिमफालिट्ठाणं दुचरिमफालिट्ठाणाणि च बोलिय समुप्पण्णत्तादो। एवं जाणिदूण णेदव्वं जावुक्कस्सजोगादो हेट्ठा तिभागजोगं पत्तो त्ति।

§ ४०४. पुणो एत्थेगो अधिकंतत्थो उच्चदे। तं जहा—एदाणि तिचरिमफालिविसेसट्ठाणाणि समुप्पज्जमाणाणि एगफालिसामिणो उक्कस्सट्ठाणादो हेट्ठिममंतरं कत्थ ट्ठिदस्स पत्ताणि त्ति जो सवेदतिचरिमसमए पक्खेउत्तरतिभागजोगेण दुचरिमसमए उक्कस्सजोगस्स तिभागजोगेण तिचरिमसमए रूऊणधापवत्तभागहारेणोवट्टिदतिभागजोगपक्खेवभागहारं तिगुणमेत्तं पुणो रूऊणधापवत्तभागहारवग्गेणोवट्टिदतिभागजोगपक्खेवभागहारमेत्तं चदुरूवाहियं हेट्ठा ओदरिदूण ट्ठिदजोगेण बंधिय अधियारतिचरिमसमए ट्ठिदक्खवगट्ठाणं तत्थंतरे समुप्पज्जदि, छण्णं फालीणं सव्वदव्वे मेलाविदे एगफालिसामिणो चरिम-दुचरिमफालिट्ठाणाणमंतरे अवट्ठाणुवलंभादो।

असंख्यातगुणे योगसे बन्ध कर अधिकृत त्रिचरम समयमें स्थित हुआ क्षपकस्थान पहलेके स्थानसे विशेष अधिक है, क्योंकि आगे गये हुए अध्वानमात्र द्विचरम और त्रिचरम फालियोंकी अधिकता उपलब्ध होती है। अब अधःप्रवृत्तभागहारसे भाजित दुगुने साधिक आगे गये हुए अध्वानमात्र दो फालिक्षपकको उतार कर पुनः तीन फालिक्षपकके प्रक्षेप अधिक योगको प्राप्त कराने पर त्रिचरम फालिविशेषरूप स्थान पुनरुक्त होता है, क्योंकि पहले प्राप्त कराया गया स्थान ही उत्पन्न हुआ है। अब इसे यहीं पर स्थापित कर पुनः एक फालिक्षपकके प्रक्षेप अधिक योगको प्राप्त कराने पर स्थान अपुनरुक्त होता है, क्योंकि एक चरम फालिस्थानको और द्विचरम फालिस्थानोंको उल्लंघन कर यह उत्पन्न हुआ है। इस प्रकार जान कर उत्कृष्ट योगसे नीचे त्रिभाग योगके प्राप्त होने तक ले जाना चाहिए।

§ ४०४. पुनः यहाँ पर एक अधिकृत अर्थ का कथन करते हैं। यथा—ये त्रिचरम फालिविशेषस्थान उत्पन्न होते हुए फालिस्वामीके उत्कृष्ट स्थानसे अधस्तन अन्तरालमें कहां पर स्थित हुए जीवके प्राप्त होते हैं—ये सवेद भागके त्रिचरम समयमें प्रक्षेप अधिक त्रिभागयोगसे, द्विचरम समयमें उत्कृष्ट योगके त्रिभाग योगसे तथा त्रिचरम समयमें एक कम अधःप्रवृत्त भागहारसे भाजित त्रिभाग योगके प्रक्षेप भागहार तिगुणामात्र पुनः एक कम अधःप्रवृत्त भागहारके वर्गसे भाजित त्रिभाग योग प्रक्षेप भागहारमात्र चार रूप अधिक नीचे उतार कर स्थित हुए योगसे बन्ध करा कर अधिकृत त्रिचरम समयमें स्थित क्षपकस्थान वहां अन्तरालमें उत्पन्न होता है, क्योंकि छह फालियोंके सब द्रव्यके मिलाने पर एक फालिके स्वामीका चरम और द्विचरम फालिस्थानोंके अन्तरालमें अवस्थान उपलब्ध होता है।

§ ४०५. संपहि एगफालिक्खवगे पक्खेउत्तरजोगं णीदे एगफालिसामिणो उक्कस्सट्ठाणं, तदुवरिमदोण्णि दुचरिमफालिट्ठाणाणि च बोलेदूण तदियदुचरिमफालिट्ठाण-मपावेदूण अंतराले समुप्पण्णत्तादो अपुणरुत्तट्ठाणं होदि। एवं णेदव्वं जाव उक्कस्सजोगट्ठाणादो हेट्ठा तिभागूणजोगं पत्तो त्ति। पुणो तत्थ सवेदचरिमसमए पक्खेवुत्तरतिभागूणुक्कस्सजोगेण दुचरिमसमए तिभागूणुक्कस्सजोगेण तिचरिमसमए रूऊणधापवत्तभागहारेणोवट्टिद-तिभागूणुक्कस्सजोगपक्खेवभागहारं तिगुणं सादिरेयं दुरूवाहियमोदरियूण ट्ठिदजोगेण बंधिय अधियारतिचरिमसमए ट्ठिदक्खवगस्स छप्फालिट्ठाणं तिण्णिप्फालिसामिणो उक्कस्सचरिमफालिट्ठाणादो हेट्ठिमअंतरे उप्पण्णं ति तिण्णिफालिसामिणो सव्वचरिमफालि-ट्ठाणंतरेसु तिचरिमविसेसट्ठाणाणं समुप्पत्ती दट्ठव्वा। संपहि एगफालिक्खवगे पक्खेउत्तरजोगं णीदे तिण्णिफालिसामिणो उक्कस्सचरिमफालिट्ठाणादो उवरिमदोण्णिदुचरिमफालिट्ठाणाणि बोलेदूण तदियदुचरिमट्ठाणमपावेदूण अंतराले अपुणरुत्तट्ठाणं उप्पज्जदि, अक्कमेण एगचरिमफालीए वड्ढिदत्तादो। एवं एगफालिक्खवगो पक्खेउत्तरकमेण बड्ढावेदव्वो जाव उक्कस्सजोगं पत्तो त्ति।

§ ४०६. संपहि तिण्णिफालिक्खवगं तिभागूणुक्कस्सजोगं णेदूण चरिमफालिट्ठाणेण समाणं करिय पुणो एत्थ किरियाविसेसं वत्तइस्सामो। तं जहा—सवेददुचरिमसमए उक्कस्सजोगेण चरिम-तिचरिमसमएसु तिभागूणुक्कस्सजोगेण बंधिय अधियारतिचरिमसमए

---

§ ४०५. अब एक फालिक्षपकके प्रक्षेप अधिक योगको प्राप्त कराने पर एक फालि-स्वामीके उत्कृष्ट स्थान अपुनरुक्त होता है, क्योंकि उससे उपरिम दो द्विचरम फालिस्थानों-को उल्लंघन कर तृतीय द्विचरम फालिस्थानको नहीं प्राप्त कर अन्तरालमें वह उत्पन्न हुआ है। इस प्रकार उत्कृष्ट योगस्थानसे नीचे तृतीय भाग कम योगके प्राप्त होने तक ले जाना चाहिए। पुनः वहाँ पर सवेद भागके त्रिचरम समयमें प्रक्षेप अधिक त्रिभाग कम उत्कृष्ट योगसे, द्विचरम समयमें त्रिभाग कम उत्कृष्ट योगसे तथा त्रिचरम समयमें एक कम अधःप्रवृत्त भागहारसे भाजित त्रिभाग कम उत्कृष्ट योगप्रक्षेपभागहार तिगुना साधिक दो रूप अधिक उतर कर स्थित हुए योगसे बन्ध करके अधिकृत त्रिचरम समयमें स्थित हुए क्षपकका छह फालिस्थान तीन फालियोंके स्वामीके उत्कृष्ट चरम फालिस्थानसे अधस्तन अन्तरालमें उत्पन्न हुआ है, इसलिए तीन फालियोंके स्वामीके सब चरम फालिस्थनोंके अन्तरालोंमें त्रिचरम विशेष स्थानोंकी उत्पत्ति जाननी चाहिए। अब एक फालि क्षपकके प्रक्षेप अधिक योगको प्राप्त कराने पर तीन फालियोंके स्वामीके उत्कृष्ट चरम फालिस्थानसे उपरिम दो द्विचरम फालिस्थानोंको उल्लंघन कर तृतीय द्विचरमस्थानको नहीं प्राप्त होकर अन्तरालमें अपुनरुक्त स्थान उत्पन्न होता है, क्योंकि युगपत् एक चरम फालिकी वृद्धि हुई है। इस प्रकार एक फालिक्षपकको उत्कृष्ट योगके प्राप्त होने तक एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे बढ़ाना चाहिए।

§ ४०६. अब तीन फालियोंके क्षपकको तृतीय भाग कम उत्कृष्ट योगको प्राप्त करा कर चरम फालिस्थानके समान कर पुनः यहाँ पर क्रियाविशेषको बतलाते हैं। यथा—सवेद भागके द्विचरम समयमें उत्कृष्ट योगसे तथा चरम और त्रिचरम समयोंमें त्रिभाग कम उत्कृष्ट योगसे बन्ध कर अधिकृत त्रिचरम समयमें अवस्थित क्षपकस्थान पहलेके स्थानसे विशेष अधिक है,

अवट्ठिदक्खवगट्ठाणं पुव्विल्लट्ठाणादो विसेसाहियं, चडिदद्धाणमेत्तदुचरिमफालीणं अहियत्तुवलंभादो। तेण रूऊणधापवत्तभागहारेणोवट्टिदचडिदद्धाणमेत्तमेगफालिक्खवगमोदरिय तिण्णिफालिक्खवगे पक्खेवुत्तरतिभागूणुक्कस्सजोगं णीदे तिचरिमफालिविसेसट्ठाणं पुणरुत्तं होदि, पुव्वं णियत्ताविदट्ठाणस्सेव समुप्पण्णत्तादो। संपहि इममेत्थेव ट्ठविय पुणो एगफालिक्खवगो पक्खेवुत्तरक्कमेण वड्ढावेदव्वो जावुक्कस्सजोगं पत्तो त्ति।

§ ४०७. संपहि तिण्णिफालिक्खवगं तिभागूणुक्कस्सजोगं णेदूण चरिमफालिट्ठाणेण समाणं करिय पुणो एत्थ किरियाविसेसो उच्चदे। तं जहा—सवेदचरिमसमए दुचरिमसमए च उक्कस्सजोगेण तिचरिमसमए तिभागूणुक्कस्सजोगेण बंधिय अधियारतिचरिमसमए अवट्ठिदक्खवगट्ठाणं पुव्विल्लट्ठाणादो विसेसाहियं, चडिदद्धाणमेत्तदुचरिम-तिचरिम-फालीणमहियत्तुवलंभादो। संपहि रूवूणधापवत्तभागहारेणोवट्टिदचडिदद्धाणं दुगुणमेत्तं रूऊणधापवत्तभागहारवग्गेणोवट्टिदचडिदद्धाणमेत्तं च एगफालिक्खवगमोदारिय पुणो उक्कस्सजोगट्ठाणादो तिण्णिफालिक्खवगो रूवूणधापवत्तभागहारमेत्तजोगट्ठाणाणि दोफालिक्खवगो वि दुरूऊणधापवत्तभागहारमेत्तजोगट्ठाणाणि ओदारेदव्वो। एवमोदारिदे चरिमफालिट्ठाणं होदि, अक्कमेण दुगुणिदअधापवत्तभागहारमेत्तचरिमफालिट्ठाणाणं पडिणियत्तत्तादो। पुणो तिण्णिफालिक्खवगे पक्खेउत्तरजोगं णीदे तिचरिमफालिविसेसट्ठाणं होदि, अक्कमेणेगचरिम-दुचरिम-तिचरिमफालीणं वड्ढिदत्तादो। संपहि इममेत्थेव ट्ठविय

क्योंकि आगे गये हुए अध्वानमात्र द्विचरम फालियोंकी अधिकता उपलब्ध होती है, इसलिए एक कम अधःप्रवृत्तभागहारसे भाजित आगे गये हुए अध्वानमात्र एक फालि क्षपकको उतार कर तीन फालिक्षपकके प्रक्षेप अधिक त्रिभाग कम उत्कृष्ट योगको प्राप्त होने पर त्रिचरम फालिविशेष स्थान पुनरुक्त होता है, क्यों कि पहले प्राप्त कराया गया स्थान ही उत्पन्न हुआ है। अब इसे यहीं पर स्थापित करके पुनः एक फालिक्षपकको उत्कृष्ट योगके प्राप्त होने तक एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे ले जाना चाहिए।

§ ४०७. अब तीन फालिक्षपकको त्रिभाग कम उत्कृष्ट योगको प्राप्त करा कर चरम फालिस्थानके समान करके पुनः यहाँ पर क्रियाविशेषको बतलाते हैं। यथा—सवेद भागके चरम समयमें और द्विचरम समयमें तथा उत्कृष्ट योगसे त्रिचरम समयमें त्रिभागकम उत्कृष्ट योगसे बन्धकर अधिकृत त्रिचरम समयमें अवस्थित क्षपकस्थान पहलेके स्थानसे विशेष अधिक है, क्योंकि आगे गये हुए अध्वानमात्र द्विचरम और त्रिचरम फालियाँ अधिक पाई जाती हैं। अब एक कम अधःप्रवृत्तभागहारसे भाजित आगे गये हुए अध्वानको दूनामात्र और एक कम अधःप्रवृत्तभागहारके वर्गसे भाजित आगे गये हुए अध्वानमात्र एग फालिक्षपकको उतारकर पुनः उत्कृष्ट योगस्थानसे तीन फालिक्षपकको एक कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र योगस्थान दो फालिक्षपकको भी दो रूप कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र योगस्थान उतारना चाहिए। इस प्रकार उतारने पर चरम फालिस्थान होता है, क्योंकि अक्रमसे द्विगुणित अधःप्रवृत्तभागहारमात्र चरम फालिस्थानोंकी निवृत्ति हुई है। पुनः तीन फालिक्षपकके एक प्रक्षेप अधिक योगको प्राप्त कराने पर त्रिचरम फालि विशेष स्थान होता है, क्योंकि अक्रमसे एक चरम, द्विचरम और त्रिचरम फालियोंकी वृद्धि हुई है। अब इसे यहीं पर स्थापित कर

पुणो एगफालिक्खवगो वड्ढावेदव्वो जाव उक्कस्सजोगट्ठाणं पत्तो त्ति। एवं वड्ढाविदे छप्फालिसामिणो उक्कस्सचरिमफालिट्ठाणादो हेट्ठा दुगुणरूऊणधापवत्तभागहारमेत्त-चरिमफालिट्ठाणाणमंतराणि मोत्तूण अण्णत्थ सव्वत्थ वि तिचरिमफालिविसेसट्ठाणाणि समुप्पणाणि।

§ ४०८. संपहि छप्फालीओ अस्सिदूण एत्तियाणि चेव उप्पज्जंति ण वड्ढिमाणि। तेण दसफालीओ घेत्तूण तिचरिमविसेसट्ठाणाणं परूवणं कस्सामो। तं जहा—सवेदचरिम-दुचरिम-तिचरिम-चदुचरिमसमएसु चदुभागूणुक्कस्सजोगेण बंधिय अधियारचदुचरिमसमए अवट्ठिदक्खवगस्स दसफालिट्ठाणं उक्कस्सछप्फालिट्ठाणादो विसेसाहियं। पुणो एत्थ समकरणविधाणं जाणिदूण कायव्वं। एवं पंचभागूण-छब्भागूणादि-फालीओ घेत्तूण सरिसं करिय जाणिदूण वत्तव्वं जाव दुसमयूणदोआवलियमेत्तसमय-पबद्धाणमुक्कस्सचरिमफालिट्ठाणादो हेट्ठा दुगुणदुरूवूणअधापवत्तभागहारमेत्तचरिमफालि-ट्ठाणंतराणि मोत्तूण अण्णत्थ सव्वत्थ वि तिचरिमफालिविसेसट्ठाणाणि समुप्पण्णाणि त्ति। एवं तिचरिमविसेसट्ठाणेसु पढमपरिवाडी समत्ता।

§ ४०९. संपहि तेसिं चेव विदियपरिवाडी उच्चदे। तं जहा—चरिम-दुचरिम-तिचरिम-समएसु घोलमाणजहण्णजोगेण बंधिय अधियारतिचरिमसमए ट्ठिदखवगछप्फालिट्ठाणं घोलमाणजहण्णजोगादो तिगुणं सादिरेयमेत्तद्धाणं गंतूण ट्ठिदएगफालिक्खवगट्ठाणेण

पुनः एक फालिक्षपकको उत्कृष्ट योगस्थानको प्राप्त होने तक बढ़ाना चाहिए। इस प्रकार बढ़ाने पर छह फालिस्वामीके उत्कृष्ट चरम फालिस्थानसे नीचे दूने एक कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र चरम फालिस्थानोंके अन्तरालोंको छोड़कर अन्यत्र सर्वत्र ही त्रिचरम फालि विशेषस्थान उत्पन्न हुए।

§ ४०८. अब छह फालियोंका आश्रय कर इतने ही उत्पन्न होते हैं वृद्धिरूप नहीं, इसलिए दस फालियोंको ग्रहण कर त्रिचरम विशेषस्थानोंका कथन करते हैं। यथा—सवेद भागके चरम, द्विचरम, त्रिचरम और चतुश्चरम समयोंमें चतुर्थ भाग कम उत्कृष्ट योगसे बन्धकर अधिकृत चतुश्चरम समयमें अवस्थित हुए क्षपकका दस फालिस्थान उत्कृष्ट छह फालिस्थानसे विशेष अधिक है। पुनः यहां पर समीकरण विधानको जानकर करना चाहिए। इस प्रकार पाँच भाग कम और छह भाग कम आदि फालियोंको ग्रहणकर तथा सदृशकर दो समय कम दो आवलिमात्र समयप्रबद्धोंके उत्कृष्ट चरम फालिस्थानोंसे नीचे दूने दो रूप कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र चरम फालिस्थानोंके अन्तरालोंको छोड़कर अन्यत्र सर्वत्र ही त्रिचरम फालिविशेषस्थानोंके उत्पन्न होने तक जानकर कहना चाहिए। इस प्रकार त्रिचरम विशेषस्थानोंमें प्रथम परिपाटी समाप्त हुई।

§ ४०९. अब उन्हींकी दूसरी परिपाटीका कथन करते हैं। यथा—चरम, द्विचरम और त्रिचरम समयोंमें घोलमान जघन्य योगसे बन्धकर अधिकृत त्रिचरम समयमें स्थित हुए क्षपकका छह फालिस्थान घोलमान जघन्य योगसे साधिक तिगुणे मात्र अध्वान जाकर स्थित हुए एक फालिक्षपक स्थानके समान होता है, इसलिए पुनरुक्त है। अब दो फालिक्षपकके

सरिसं होदि त्ति पुणरुत्तं। संपहि दोफालिक्खवगे तिण्णिफालिक्खवगे च एगवारेण पक्खेउत्तरजोगं णीदे अपुणरुत्तट्ठाणं होदि, पुव्विल्लचरिमफालिट्ठाणादो दोहि चरिमफालीहि तिहि दुचरिमफालीहि एगेण तिचरिमफालिविसेसेण च अहियत्तुवलंभादो। पुव्वं सरसीकदचरिमफालिट्ठाणादो उवरि दोचरिमफालिट्ठाणाणि तिण्णिदुचरिमफालिट्ठाणाणि च बोलिय चउत्थदुचरिमफालिट्ठाणं अपावेदूण अंतराले उप्पण्णमिदि भणिदं होदि।

§ ४१०. संपहि इममेत्थेव ट्ठविय एगफालिक्खवगे पक्खेउत्तरजोगं णीदे उवरिमगंथट्ठाणस्सुवरिमतिण्णिअत्थट्ठाणाणि बोलेदूण चउत्थमत्थट्ठाणमपाविय दोण्हं पि विच्चाले विदियपरिवाडीए अण्णमत्थट्ठाणमुप्पज्जदि। गंथत्थट्ठाणाणं को विसेसो? ग्रंथः सूत्रं तेन साक्षादुक्तस्थानानि ग्रंथस्थानानि। अर्थस्थानानि अर्थात्सामर्थ्यादुत्पन्नानि। सूत्रेण सूचितस्थानानि अर्थस्थानानीति यावत्। एवं पक्खेउत्तरकमेण एगफालिक्खवगं वड्ढाविय अत्थट्ठाणाणि उप्पादेदूण णेदव्वं जाव उक्कस्सजोगस्स हेट्ठा तिभागजोगं पत्तो त्ति।

§ ४११. पुणो तत्थ सवेददुचरिम-चरिमसमएसु पक्खेवुत्तरतिभागजोगेण तिचरिमसमए तिभागजोगपक्खेवभागहारं रूऊणधापवत्तभागहारेण खंडेदूण तत्थ एगखंडं तिगुणं सादिरेयं तिरूवाहियं हेट्ठा ओदरिदूण ट्ठिदजोगेण बंधिय अधियारतिचरिमसमए

और तीन फालिक्षपकके एक बारमें प्रक्षेप अधिक योगको प्राप्त करने पर अपुनरुक्त स्थान होता है; क्योंकि पहलेके चरम फालिस्थानसे दो चरम फालि, तीन द्विचरम फालि और एक त्रिचरम फालिविशेषरूपसे अधिकता उपलब्ध होती है। पहले समान किये गये चरम फालिस्थानसे ऊपर दो चरम फालिस्थानोंको और तीन द्विचरम फालिस्थानोंको बिताकर चतुर्थ द्विचरम फालिस्थानको नहीं प्राप्तकर अन्तरालमें उत्पन्न हुआ है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

§ ४१०. अब इसे यहीं पर स्थापित कर एक फालिक्षपकके प्रक्षेप अधिक योगको प्राप्त करने पर उपरिम ग्रन्थस्थानके उपरिम तीन अर्थस्थानोंको बिताकर चतुर्थ अर्थस्थानको नहीं प्राप्तकर दोनोंके ही मध्यमें द्वितीय परिपाटीके अनुसार अन्य अर्थस्थान उत्पन्न होता है।

शंका—ग्रन्थस्थान और अर्थस्थानमें क्या विशेष है?

समाधान—ग्रन्थ सूत्रको कहते हैं। उसके आश्रयसे साक्षात् कहे गये स्थान ग्रन्थस्थान कहलाते हैं। तथा अर्थसे अर्थात् सामर्थ्यसे उत्पन्न हुए स्थान अर्थस्थान कहलाते हैं। सूत्रसे सूचित हुए स्थान अर्थस्थान हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

इस प्रकार एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे एक फालिक्षपकको बढ़ाकर अर्थस्थानोंको उत्पन्न कराकर उत्कृष्ट योगके नीचे त्रिभाग योगके प्राप्त होने तक ले जाना चाहिए।

§ ४११. पुनः वहां पर सवेदभागके द्विचरम और चरम समयमें तथा प्रक्षेप अधिक त्रिभाग योगसे त्रिचरम समयमें त्रिभाग योगके प्रक्षेप भागहारको एक कम अधःप्रवृत्तभागहारसे भाजितकर वहां तिगुणे साधिक एक खण्डको तीन रूप अधिक नीचे उतरकर स्थित हुए योगसे बन्धकर अधिकृत त्रिचरम समयमें स्थित हुआ क्षपकस्थान एक फालिस्वामीके

ट्ठिदखवगट्ठाणं एगफालिसामिणो उक्कस्सगंथट्ठाणादो हेट्ठिमदुरूऊणअधापवत्तभागहारमेत्त-दुचरिमफालिट्ठाणेसु तदियादो उवरि चउत्थादो हेट्ठा उप्पज्जदि त्ति एगफालिक्खवगस्स हेट्ठिमसव्वगंथट्ठाणंतरेसु विदियपरिवाडीए तिचरिमफालिविसेसट्ठाणाणि उप्पण्णाणि त्ति घेत्तव्वं। एवं उवरि वि जाणिदूण णेदव्वं जाव तिभागूणुक्कस्सजोगो त्ति। एत्थंतरे तिण्णिफालिसामिणो उक्कस्सगंथट्ठाणादो हेट्ठा सव्वत्थ विदियपरिवाडीए तिचरिमफालिविसेसट्ठाणाणि उप्पज्जंति, सवेदचरिम-दुचरिमसमएसु पक्खेउत्तरतिभागूण-जोगे तिचरिमसमए उक्कस्सजोगपक्खेवभागहारं रूऊणधापवत्तभागहारेण खंडिय तत्थेगखंडं विसेसाहियं हेट्ठा ओदरिदूण ट्ठिदजोगट्ठाणेण बंधाविय अधियारतिचरिमसमए अवट्ठिदक्खवगट्ठाणस्स तिण्णिफालिक्खवगुक्कस्सगंथट्ठाणस्स हेट्ठिमअंतरे समुप्पत्तिदंसणादो।

§ ४१२. पुणो एगफालिक्खवगो पक्खेउत्तरकमेण वड्ढावेदव्वो जावुक्कस्सजोगं पत्तो त्ति। एवं वड्ढाविय पुणो गंथट्ठाणेण सह सरिसं कादूण एत्थतणकिरियाकप्पो उच्चदे। तं जहा—सवेददुचरिमसमए उक्कस्सजोगेण चरिम-तिचरिमसमएसु तिभागूणुक्कस्सजोगेण बंधिय अधियारतिचरिमसमए अवट्ठिदखवगट्ठाणं पुव्विल्लगंथट्ठाणादो विसेसाहियं, चडिदद्धाणमेत्तदुचरिमफालीणं अहियत्तुवलंभादो। संपहि समीकरणट्ठं रूऊणधापवत्तभागहारेणोवट्ठिदचडिदद्धाणमेगफालिक्खवगो ओदारेदव्वो। एवमोदारिय

उत्कृष्ट ग्रन्थस्थानसे नीचे दो रूप कम अधप्रवृत्तभागहारमात्र द्विचरम फालिस्थानोंमें तृतीयसे ऊपर और चतुर्थसे नीचे उत्पन्न होता है, इसलिए एक फालिक्षपकके अधस्तन सब ग्रन्थस्थानोंके अन्तरालोंमें द्वितीय परिपाटीके अनुसार त्रिचरिम फालिविशेषस्थान उत्पन्न हुए हैं ऐसा यहाँ पर ग्रहण करना चाहिए। तथा इसी प्रकार ऊपर भी त्रिभाग कम उत्कृष्ट योगके प्राप्त होने तक जानकर ले जाना चाहिए। यहां अन्तरालमें तीन फालिस्वामीके उत्कृष्ट ग्रन्थस्थानसे नीचे सर्वत्र द्वितीय परिपाटीके अनुसार त्रिचरम फालिविशेषस्थान उत्पन्न होते हैं, क्योंकि सवेदभागके चरम और द्विचरम समयमें प्रक्षेप अधिक त्रिभाग योगरूप त्रिचरम समयमें उत्कृष्ट योग प्रक्षेपभागहारको एक कम अधःप्रवृत्त भागहारसे भाजितकर वहां विशेष अधिक एक खण्ड नीचे उतरकर स्थित हुए योगस्थानके द्वारा बन्ध कराकर अधिकृत त्रिचरम समयमें अवस्थित हुए क्षपकस्थानकी तीन फालिक्षपकसम्बन्धी उत्कृष्ट ग्रन्थस्थानके नीचे अन्तरालमें उत्पत्ति देखी जाती है।

§ ४१२. पुनः एक फालिक्षपकको एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे उत्कृष्ट योगके प्राप्त होने तक बढ़ाना चाहिए। इस प्रकार बढ़ाकर पुनः ग्रन्थस्थानके साथ सदृश करके यहाँके क्रियाकल्पका कथन करते हैं। यथा—सवेद भागके द्विचरम समयमें उत्कृष्ट योगसे तथा चरम और त्रिचरम समयमें त्रिभाग कम उत्कृष्ट योगसे बन्धकर अधिकृत त्रिचरम समयमें अवस्थित क्षपकस्थान पहलेके ग्रन्थस्थानसे विशेष अधिक है, क्योंकि आगे गये हुए अध्वानमात्र द्विचरम फालियोंकी अधिकता उपलब्ध होती है। अब समीकरण करनेके लिए एक कम अधःप्रवृत्तभागहारसे भाजित आगे गये हुए अध्वानमात्र एक फालिक्षपकको उतारना चाहिए।

पुणो उक्कस्सजोगट्ठाणादो दोफालिक्खवगे दुरूऊणधापवत्तभागहारमेत्तमोदिण्णे तिण्णिफालिक्खवगे च तिभागूणुक्कस्सजोगादो रूऊणधापवत्तभागहारमेत्तमोदिण्णे दुगुणअधापवत्तभागहारमेत्तगंत्थट्ठाणाणि पल्लट्टंति । एवं पल्लट्टाविय पुणो दोफालिक्खवगे तिण्णिफालिक्खवगे च एगवारेण पक्खेउत्तरजोगं णीदे दोगंत्थट्ठाणाणि तिण्णि दुचरिमफालिट्ठाणाणि च वोलेदूण चउत्थमपाविय दोण्हं अंतराले तिचरिमफालिविसेसट्ठाणमुप्पज्जदि ।

§ ४१३. संपहि इमे दो वि क्खवगे एत्थेव ट्ठविय पुणो एगफालिक्खवगो पक्खेउत्तरक्कमेण वड्ढावेदव्वो जाउक्कस्सजोगं पत्तो त्ति । एवं वड्ढाविय पुणो गंत्थट्ठाणेण सरिसं करिय ट्ठिदट्ठाणादो सवेदचरिमसमए उक्कस्सजोगेण तिचरिमसमए तिभागूणुक्कस्सजोगेण दुचरिमसमए वि उक्कस्सजोगेण बंधिय अधियारतिचरिमसमए अवट्ठिदखवगट्ठाणं विसेसाहियं,चडिदद्धाणमेत्त दुचरिम-तिचरिमफालीहि अहियत्तुवलंभादो। पुणो एदाओ चरिमफालिपमाणेण करिय चरिमफालिसलागमेत्तजोगट्ठाणाणि एगफालिक्खवगं हेट्ठा ओदारिय तिण्णिफालिक्खवगे उक्कस्सजोगट्ठाणादो रूऊणधापवत्तभागहारमेत्तं दोफालिक्खवगे दुरूऊणअधापवत्तभागहारं हेट्ठा ओदिण्णे पुव्वं णियत्ताविदगंत्थट्ठाणमुप्पज्जदि । पुणो दुचरिम-तिचरिमसमयसवेदेसु पक्खेउत्तरजोगं णीदेसु पुव्वं णियत्ताविदमत्थट्ठाणमुप्पज्जदि ।

§ ४१४. संपहि इमे एत्थेव ट्ठविय पुणो एगफालिक्खवगो पक्खेउत्तरादिक्कमेण

इस प्रकार उतारकर पुनः उत्कृष्ट योगस्थानसे दो फालिक्षपकके दो रूप कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र उतारने पर और तीन फालिक्षपकके त्रिभाग कम उत्कृष्ट योगसे रूप कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र उतारने पर द्विगुणे अधःप्रवृत्तभागहारमात्र ग्रन्थस्थान बदलते हैं। इस प्रकार बदलवाकर पुनः दो फालिक्षपकके और तीन फालिक्षपकके एक बारमें प्रक्षेप अधिक योगको प्राप्त कराने पर दो ग्रन्थस्थानोंको और तीन द्विचरम फालिस्थानोंको बिताकर चतुर्थको नहीं प्राप्तकर दोनोंके अन्तरालमें त्रिचरम फालिविशेषस्थान उत्पन्न होता है।

§ ४१३. अब इन दोनों क्षपकोंको यहीं पर स्थापितकर पुनः एक फालिक्षपकको प्रक्षेप अधिकके क्रमसे उत्कृष्ट योगके प्राप्त होने तक बढ़ाना चाहिए। इस प्रकार बढ़ाकर पुनः ग्रन्थस्थानके समान करके स्थित हुए स्थानसे सवेद भागके चरम समयमें उत्कृष्ट योगसे त्रिचरम समयमें त्रिभाग कम उत्कृष्ट योगसे और द्विचरम समयमें भी उत्कृष्ट योगसे बन्ध करके अधिकृत त्रिचरम समयमें अवस्थित क्षपकस्थान विशेष अधिक है, क्योंकि आगे गये हुए अध्वानमात्र द्विचरम और त्रिचरम फालियोंके द्वारा अधिकता उपलब्ध होती है। पुनः इनको चरमफालिके प्रमाणसे करके चरम फालिशलाकामात्र योगस्थानोंको एक फालिक्षपक नीचे उतारकर तीन फालिक्षपकके उत्कृष्ट योगस्थानसे एक कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र दो फालिक्षपकके दो रूपकम अधःप्रवृत्तभागहार नीचे उतारने पर पहले निवृत्त कराया गया ग्रन्थस्थान उत्पन्न होता है। पुनः द्विचरम और त्रिचरमसमयवर्ती सवेदीके प्रक्षेप अधिक योगको प्राप्त कराने पर पहले निवृत्त कराया गया अर्थस्थान उत्पन्न होता है।

§ ४१४. अब इन्हें यहीं पर स्थापित कर पुनः एक फालि क्षपकको एक एक प्रक्षेप

वड्ढावेदव्वो जाव उक्कस्सजोगं पत्तो त्ति। एवं वड्ढाविदे छप्फालिक्खवगुक्कस्सगंथट्ठाणादो हेट्ठा तिरूऊणदुगुणअधापवत्तभागहारमेत्तगंथट्ठाणाणं विचालाणि मोत्तूण सेसासेसगंथट्ठाणविचालेसु अत्थट्ठाणाणि समुप्पण्णाणि। संपहि दसफालिक्खवगट्ठाणमेदेण ट्ठाणेण समाणं घेत्तूण पुव्वविहाणेण वड्ढावेदव्वं जावप्पणो उक्कस्सजोगं पत्तं ति। णवरि एत्थतणउक्कस्सजोगट्ठाणादो हेट्ठा तिरूऊणदुगुणधापवत्तभागहारमेत्तगंथट्ठाणविचालाणि मोत्तूण सेसासेसगंथट्ठाणविचालेसु अत्थट्ठाणाणि समुप्पण्णाणि। एवमुवरि वि जाणिदूण वड्ढावेदव्वं जाव दुसमयूणदोआवलियमेत्तसमयपबद्धा उक्कस्सजोगं पत्ता त्ति। एवं वड्ढाविदे दुसमयूणदोआवलियमेत्तसमयपबद्धाणमुक्कस्सगंथट्ठाणादो हेट्ठा तिरूऊणदुगुणधापवत्तभागहारमेत्तगंथट्ठाणविचालाणि मोत्तूण सेसासेसविचालेसु तिचरिमफालिविसेसट्ठाणाणि समुप्पण्णाणि त्ति दट्ठव्वं। एवं विदियपरिवाडी समत्ता।

§ ४१५. संपहि तिस्से चेव तदियपरिवाडी उच्चदे—सवेदचरिम-दुचरिम-तिचरिमसमएसु समयाविरुद्धघोलमाणजहण्णजोगेण बद्धछप्फालिखवगगंथट्ठाणं तिगुणं सादिरेयं गंतूण ट्ठिदगंथट्ठाणेण समाणत्तादो पुणरुत्तं। पुणो तिण्णिफालिक्खवगे पक्खेउत्तरजोगं दोफालिखवगे च दुपक्खेउत्तरजोगं णोदे अपुणरुत्तट्ठाणं होदि, तिण्हं चरिमफालीणं चदुण्हं दुचरिमफालीणं एक्कस्स तिचरिमफालिविसेसस्स च अहियत्तुवलंभादो। तिण्णिगंथट्ठाणाणि चत्तारिदुचरिमफालिट्ठाणाणि च बोलेदूण पंचमदुचरिमप्फालिट्ठाणस्स

अधिकके क्रमसे उत्कृष्ट योगके प्राप्त होने तक बढ़ाना चाहिए। इस प्रकार बढ़ाने पर छह फालिक्षपक उत्कृष्ट ग्रन्थस्थानसे नीचे तीन रूपकम द्विगुणे अधःप्रवृत्तभागहारमात्र ग्रन्थस्थानोंके अन्तरालोंको छोड़कर शेष समस्त ग्रन्थस्थानोंके अन्तरालोंमें अर्थस्थान उत्पन्न हुए। अब दस फालिक्षपकस्थानको इस स्थानके समान ग्रहणकर पूर्व विधिसे अपने उत्कृष्ट योगके प्राप्त होने तक बढ़ाना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यहांके उत्कृष्ट योगस्थानसे नीचे तीन रूपकम दुगुणे अधःप्रवृत्तभागहारमात्र ग्रन्थस्थानोंके अन्तरालोंको छोड़कर शेष समस्त ग्रन्थस्थानोंके अन्तरालोंमें अर्थस्थान उत्पन्न हुए हैं। इसी प्रकार ऊपर भी जानकर तब तक बढ़ाना चाहिए जब जाकर दो समय कम दो आवलिमात्र समयप्रबद्ध उत्कृष्ट योगको प्राप्त हुए। इस प्रकार बढ़ाने पर दो समयकम दो आवलिमात्र समयप्रबद्धोंके उत्कृष्ट ग्रन्थस्थानसे नीचे तीन रूप कम दूने अधःप्रवृत्तभागहारमात्र ग्रन्थस्थानोंके अन्तरालोंको छोड़कर शेष समस्त अन्तरालोंमें त्रिचरम फालिविशेषस्थान उत्पन्न हुए हैं ऐसा जानना चाहिए। इस प्रकार दूसरी परिपाटी समाप्त हुई।

§ ४१५. अब उसीकी तृतीय परिपाटीका कथन करते हैं—सवेद भागके चरम, द्विचरम और त्रिचरम समयोंमें यथाशास्त्र घोलमान जघन्य योगसे बाँधा गया छह फालिक्षपक ग्रन्थस्थान तिगुणा साधिक जाकर स्थित हुए ग्रन्थस्थानके समान होनेसे पुनरुक्त है। पुनः तीन फालिक्षपकके प्रक्षेप अधिक योगको और दो फालिक्षपकके दो प्रक्षेप अधिक योगको प्राप्त करने पर अपुनरुक्त स्थान होता है, क्योंकि तीन चरम फालि, चार द्विचरम फालि और एक त्रिचरम फालि विशेष अधिक उपलब्ध होते हैं। तीन ग्रन्थस्थानोंको और चार द्विचरम फालिस्थानोंको बिताकर पाँचवें द्विचरम फालिस्थानके नीचे उत्पन्न हुआ है यह उक्त कथनका

हेट्ठा उप्पण्णमिदि भावत्थो। संपहि एदे एत्थेव ट्ठविय पुणो एगफालिखवगो चेव पुव्वविहाणेण सव्वसंधीओ जाणिय वड्ढावेदव्वो जाव दुसमयूणदोआवलियमेत्तसमयपबद्धा उक्कस्सजोगं पत्ता त्ति। एवं वड्ढाविदे दुसमयूणदोआवलियमेत्तसमयपबद्धाणमुक्कस्स-गंथट्ठाणादो हेट्ठा चदुरूऊणदुगुणधापवत्तभागहारमेत्तगंथट्ठाणविचालाणि मोत्तूण सेसासेसविचालेसु तदियपरिवाडीए ट्ठाणाणि समुप्पण्णाणि। एवं तदियपरिवाडी समत्ता।

§ ४१६. संपहि चउत्थपरिवाडी उच्चदे—सवेदचरिम-दुचरिम-तिचरिमसमएसु समयाविरुद्धघोलमाणजहण्णजोगेण बद्धछप्फालिक्खवगट्ठाणं सादिरेयतिगुणजोगट्ठाणेण बद्धेगफालिक्खवगगंथट्ठाणेण समाणत्तादो पुणरुत्तं। संपहि एगफालिक्खवगं तत्थेव ट्ठविय तिण्णिफालिक्खवगं पक्खेउत्तरजोगं णेदूण दोफालिक्खवगे तिपक्खेउत्तरजोगं णीदे अपुणरुत्तट्ठाणं होदि, चत्तारिचरिमफालिट्ठाणाणि पंचदुचरिमफालिट्ठाणाणि च बोलेदूण छद्दुचरिमफालिट्ठाणस्स हेट्ठा समुप्पण्णत्तादो। संपहि एदे एत्थेव ट्ठविय एगफालिक्खवगो पक्खेउत्तरकमेण वड्ढावेदव्वो जाव जहण्णजोगट्ठाणादो असंखेज्जगुणं जोगं पत्तो त्ति। एवं सव्वसंधीओ जाणिदूण णेदव्वं जाव दुसमयूणदोआवलियमेत्तसमयपबद्धा उक्कस्सजोगं पत्ता त्ति। एवं णीदे दुसमयूणदोआवलियमेत्तसमयपबद्धाणमुक्कस्सगंथट्ठाणादो हेट्ठा पंचरूऊणदुगुणअधापवत्तभागहारमेत्तगंथट्ठाणाणं विचालाणि मोत्तूण अण्णत्थ सव्वत्थ वि अपुणरुत्तट्ठाणाणि समुप्पण्णाणि। एवं चउत्थपरिवाडी समत्ता। एवमेगफालिखवगं

तात्पर्य है। अब इन्हें यहीं पर स्थापित कर पुनः एक फालिक्षपकको ही पूर्व विधिसे सब सन्धियोंको जानकर दो समय कम दो आवलिमात्र समयप्रबद्धोंके उत्कृष्ट योगको प्राप्त होने तक बढ़ाना चाहिए। इस प्रकार बढ़ाने पर दो समय कम दो आवलिमात्र समयप्रबद्धोंके उत्कृष्ट ग्रन्थस्थानसे नीचे चार रूप कम दुगुणे अधःप्रवृत्तभागहारमात्र ग्रन्थस्थानोंके अन्तरालोंको छोड़कर शेष समस्त अन्तरालोंमें तृतीय परिपाटीके स्थान हुए। इस प्रकार तृतीय परिपाटी समाप्त हुई।

§ ४१६. अब चतुर्थ परिपाटीका कथन करते हैं—सवेद भागके चरम, द्विचरम और त्रिचरम समयोंमें यथाशास्त्र घोलमान जघन्य योगसे बाँधा गया छह फालि क्षपकस्थान साधिक तिगुने योगस्थानसे बाँधे गये एक फालिक्षपक ग्रन्थस्थानके समान होनेसे पुनरुक्त है। अब एक फालिक्षपकको वहीं पर स्थापित कर तीन फालिक्षपकको प्रक्षेप अधिक योगको प्राप्त कराकर दो फालिक्षपकके तीन प्रक्षेप अधिक योगको प्राप्त करने पर अपुनरुक्त स्थान होता है, क्योंकि चार चरम फालिस्थानोंको और पाँच द्विचरम फालिस्थानोंको बिताकर छह द्विचरम फालिस्थानके नीचे उत्पन्न हुआ है। अब इन्हें यहीं पर स्थापित कर एक फालिक्षपकको एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे जघन्य योगस्थानसे असंख्यातगुणे योगके प्राप्त होने तक बढ़ाना चाहिए। इस प्रकार सब सन्धियोंको जानकर दो समयकम दो आवलिमात्र समयप्रबद्धोंके उत्कृष्ट योगको प्राप्त होने तक ले जाना चाहिए। इस प्रकार ले जाने पर दो समय कम दो आवलिमात्र समयप्रबद्धोंके उत्कृष्ट ग्रन्थस्थानसे नीचे पाँच रूप कम दुगुणे अधःप्रवृत्तभागहारमात्र ग्रन्थस्थानोंके अन्तरालोंको छोड़कर अन्यत्र सर्वत्र ही अपुनरुक्त स्थान उत्पन्न हुए। इस प्रकार चतुर्थ परिपाटी समाप्त हुई। इस प्रकार एक

तिण्णिफालिक्खवगं च परिवाडीए जहण्णजोगपक्खेवउत्तरजहण्णजोगेसु ट्ठविय पुणो दोफालिक्खवगं एगेगपरिवाडिं पडि चदुपक्खेउत्तरादिजोगं णेदूण पंचमादिपरिवाडीओ उप्पादेदव्वाओ जाव दुरूऊणधापवत्तभागहारमेत्तपरिवाडीओ समत्ताओ त्ति ।

§ ४१७. संपहि सव्वपच्छिमपरिवाडी उच्चदे । तं जहा—सवेदचरिम-दुचरिम-तिचरिमसमएसु घोलमाणजहण्णजोगेण बद्धछप्फालीओ सादिरेयतिगुणमेत्तजोगट्ठाणेण बद्धएगफालिक्खवगट्ठाणेण समाणाओ त्ति पुणरुत्ताओ । पुणो तिण्णिफालिक्खवगं पक्खेउत्तरजोगं णेदूण दोफालिक्खवगमेगवारेण दुरूऊणधापवत्तभागहारमेत्तजोगट्ठाणं णीदे अपुणरुत्तट्ठाणं होदि, अधापवत्तभागहारमेत्तचरिमफालीहि एगतिचरिमफालीए च अहियत्तुवलंभादो । संपहि इमे एत्थेव ट्ठविय एगफालिक्खवगो चेव पक्खेउत्तरादिकमेण वड्ढाविय णेदव्वो जाव तप्पाओग्गमसंखेज्जगुणं जोगं पत्तो त्ति । एवमुवरि सव्वसंधीओ जाणिदूण णेदव्वं जाव दुसमयूणदोआवलियमेत्तसमयपबद्धा उक्कस्सजोगं पत्ता त्ति । एवं वड्ढाविदे दुसमयूणदोआवलियमेत्तसमयपबद्धाणं उक्कस्सगंथट्ठाणादो हेट्ठा रूऊणधापवत्तभागहारमेत्तगंथट्ठाणाणमंतराणि मोत्तूण पुणो हेट्ठिमासेसट्ठाणंतरेसु तिचरिमफालिविसेसट्ठाणाणि समुप्पण्णाणि । एवमेसा पढमपरूवणा समत्ता ।

§ ४१८. संपहि दोण्णितिचरिमविसेसे अस्सिदूण ट्ठाणपरूवणं कस्सामो । तं जहा—छप्फालिक्खवगट्ठाणमेगफालिक्खवगट्ठाणेण सरिसं काऊण पुणो तिण्णिफालिक्खवगे

फालिक्षपकको और तीन फालिक्षपकको परिपाटीक्रमसे जघन्य योग प्रक्षेप अधिक जघन्य योगोंके ऊपर स्थापित कर पुनः दो फालिक्षपकको एक एक परिपाटीके प्रति चार प्रक्षेप अधिक आदि योगको ले जाकर पञ्चम आदि परिपाटियोंको दो रूप कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र परिपाटियोंके समाप्त होने तक उत्पन्न कराना चाहिए ।

§ ४१७. अब सबसे अन्तिम परिपाटी का कथन करते हैं । यथा—सवेद भागके चरम, द्विचरम और त्रिचरम समयोंमें घोलमान जघन्य योगसे बद्ध छह फालियाँ साधिक तिगुणेमात्र योगस्थानसे बद्ध एक फालिक्षपकस्थानके समान हैं, इसलिए पुनरुक्त हैं । पुनः तीन फालिक्षपकको प्रक्षेप अधिक योगको प्राप्त करा कर दो फालिक्षपकको एक बारमें दो रूप कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र योगस्थानको प्राप्त कराने पर अपुनरुक्त स्थान होता है, क्योंकि अधःप्रवृत्तभागहारमात्र चरम फालियाँ और एक त्रिचरम फालि अधिक पाई जाती हैं । अब इन्हें यहीं पर स्थापित कर एक फालिक्षपकको ही एक एक प्रक्षेप अधिक आदिके क्रमसे तत्प्रायोग्य असंख्यातगुणे योगके प्राप्त होने तक बढ़ा कर ले जाना चाहिए । इस प्रकार ऊपर सब सन्धियोंको जानकर दो समय कम दो आवलिमात्र समयप्रबद्धोंके उत्कृष्ट योगको प्राप्त होने तक ले जाना चाहिए । इस प्रकार बढ़ाने पर दो समयकम दो आवलिमात्र समयप्रबद्धोंके उत्कृष्ट ग्रन्थस्थानसे नीचे एक कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र ग्रन्थस्थानोंके अन्तरालोंको छोड़कर पुनः नीचेके अशेष स्थानोंके अन्तरालोंमें त्रिचरम फालिविशेषस्थान उत्पन्न हुए । इस प्रकार यह प्रथम प्ररूपणा समाप्त हुई ।

§ ४१८. अब दो त्रिचरम विशेषोंका आश्रय कर स्थानोंका कथन करते हैं । यथा—छह फालिक्षपकस्थानको एक फालिक्षपकस्थानके साथ समान करके पुनः तीन फालिक्षपकके अक्रमसे

अक्कमेण दुपक्खेउत्तरजोगं णीदे अपुणरुत्तट्ठाणं होदि, दोण्णिचरिमफालियाहि चत्तारिदुचरिमफालियाहि दोतिचरिमफालिविसेसेहि अहियत्तुवलंभादो। संपहि इमं तिण्णिफालिक्खवगमेत्थेव ट्ठविय एगफालिक्खवगो पक्खेउत्तरादिकमेण वड्ढावेदव्वो। एवं सव्वसंधीओ जाणिय सरिसं करिय ताव वत्तव्वं जाव दुसमयूणदोआवलियमेत्त-समयपबद्धा उक्कस्सजोगं पत्ता त्ति। एवं दोण्हं तिचरिमविसेसट्ठाणाणं परूवणाए पढमपरिवाडी समत्ता।

§ ४१९. संपहि विदियपरिवाडी उच्चदे। तं जहा—तिण्णिफालिक्खवगं दुपक्खेउत्तरजोगं णेदूण दोफालिक्खवगे पक्खेउत्तरं जोगं णीदे अण्णमपुणरुत्तट्ठाणं होदि। एवं जाणिदूण णेदव्वं जाव विदियपरिवाडी समत्ता त्ति। संपहि तदियपरिवाडी उच्चदे। तं जहा—एगफालिट्ठाणेण छप्फालिट्ठाणं सरिसं करिय अक्कमेण तिण्णिफालिक्खवगे दोफालिक्खवगे च दुपक्खेउत्तरजोगं णीदे अण्णमपुणरुत्तट्ठाणं होदि। पुणो एवं जाणिदूण णेदव्वं जाव दुरूऊणधापवत्तभागहारमेत्ततिचरिमविसेसट्ठाणाणं परिवाडीओ गदाओ त्ति।

§ ४२०. संपहि तत्थ सव्वपच्छिमतिचरिमफालिविसेसट्ठाणपरिवाडी उच्चदे। तं जहा—सवेदतिचरिमसमए दुचरिमसमए च घोलमाणजहण्णजोगेण बंधिय चरिमसमए दुरूवूणधापवत्तभागहारमेत्तमुवरि चडिदूण ट्ठिदजोगेण बंधिय अधियारतिचरिमसमए

दो प्रक्षेप अधिक योगको प्राप्त करने पर अपुनरुक्तस्थान होता है, क्योंकि दो चरम फालियाँ, चार द्विचरम फालियाँ और दो त्रिचरम फालिविशेष अधिक पाये जाते हैं। अब इस तीन फालिक्षपकको यहीं पर स्थापित कर एक फालिक्षपकको प्रक्षेप अधिक आदिके क्रमसे बढ़ाना चाहिए। इस प्रकार सब सन्धियोंको जानकर और समान करके दो समय कम दो आवलिमात्र समयप्रबद्धोंके उत्कृष्ट योगको प्राप्त होने तक कथन करना चाहिए। इस प्रकार दो त्रिचरम विशेषस्थानोंकी प्ररूपणा करने पर प्रथम परिपाटी समाप्त हुई।

§ ४१९. अब द्वितीय परिपाटीका कथन करते हैं। यथा—तीन फालिक्षपकको दो प्रक्षेप अधिक योगको प्राप्त कराकर दो फालिक्षपकके प्रक्षेप अधिक योगको प्राप्त कराने पर अन्य अपुनरुक्त स्थान होता है। इस प्रकार द्वितीय परिपाटीके समाप्त होने तक जानकर ले जाना चाहिए। अब तृतीय परिपाटीका कथन करते हैं। यथा—एक फालिस्थानके साथ छह फालिस्थानको समान करके अक्रमसे तीन फालिक्षपकके और दो फालिक्षपकके दो प्रक्षेप अधिक योगको प्राप्त करने पर अन्य अपुनरुक्त स्थान होता है। पुनः इस प्रकार जानकर दो रूप कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र त्रिचरम विशेषस्थानोंकी परिपाटियोंके जाने तक ले जाना चाहिए।

§ ४२०. अब वहाँ सबसे अन्तिम त्रिचरम फालिविशेषस्थानपरिपाटीका कथन करते हैं। यथा—सवेदभागके त्रिचरम समयमें और द्विचरम समयमें घोलमान जघन्य योगसे बन्ध करके चरम समयमें दो रूप कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र ऊपर चढ़कर स्थित हुए योगसे बन्ध कर अधिकृत त्रिचरम समयमें स्थित हुआ छह फालिक्षपकस्थान अपुनरुक्त है,

ट्ठिदछप्फालिक्खवगट्ठाणं अपुणरुत्तं, दुरूवूणअधापवत्तभागहारमेत्तचरिम-दुचरिम-तिचरिमेहि अहियत्तुवलंभादो। संपहि दुरूऊणधापवत्तभागहारमेत्ततिचरिमफालिविसेसेसु अवणेदूण पुध ट्ठविदेसु अवसेसाओ दुचरिमफालीओ दुरूऊणदुगुणअधापवत्तभागहारमेत्ताओ त्ति। तत्थ रूऊणअधापवत्तभागहारमेत्तदुचरिमफालियाहि एगं चरिमफालिपमाणं होदि त्ति दुरूऊणअधापवत्तभागहारमेत्तचरिमफालियासु पक्खित्तासु सरिसीकदगंथट्ठाणादो उवरि तावदिमं गंथट्ठाणमुप्पज्जदि। पुणो सेसतिरूऊणअधापवत्तभागहारमेत्तदुचरिम-फालियासु संपहि उप्पण्णगंथट्ठाणस्सुवरि पक्खित्तासु तत्तियाणि चेव दुचरिमफालिट्ठाणाणि उप्पज्जंति। पुणो तत्थ अवणेदूण ट्ठविददुरूवूणधापवत्तभागहारमेत्ततिचरिमफालिविसेसेसु परिवाडीए पक्खित्तेसु तावदियाणि चेव तिचरिमफालिविसेसट्ठाणाणि उप्पज्जंति। तम्हा एदं ट्ठाणमपुणरुत्तं।

§ ४२१. संपहि तिण्णिफालिक्खवगमेत्थेव ट्ठविय पुणो एगफालिक्खवगो पक्खेउत्तर-दुपक्खेउत्तरकमेण वड्ढावेदव्वो जाव तप्पाओग्गमसंखेज्जगुणं जोगं पत्तो त्ति। संपहि उवरि वड्ढावेदुं ण सक्किज्जदे, विदियादिसमएसु जहण्णजोगेण परिणमणोवायाभावादो। संपहि एदम्मि गंथट्ठाणसमाणे कदे रूऊणअधापवत्तभागहारमेत्तगंथट्ठाणाणि णियत्तंति। एवं णियत्ताविदट्ठाणेण सरिसट्ठाणपरूवणट्ठमिदमुवक्कमदे। तं जहा—सवेददुचरिमसमए तप्पाओग्गअसंखेज्जगुणजोगेण चरिम-तिचरिमसमएसु घोलमाणजहण्णजोगेण बंधिय

क्योंकि दो रूप कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र चरम, द्विचरम और त्रिचरमकी अपेक्षा अधिकता उपलब्ध होती है। अब दो रूप कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र त्रिचरम फालिविशेषोंको निकाल कर पृथक् स्थापित करने पर अवशेष द्विचरम फालियाँ दो रूप कम दुगुनी अधःप्रवृत्तभागहार-मात्र हैं। वहाँ एक कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र द्विचरम फालियोंका अवलम्बन लेकर एक चरम फालिका प्रमाण होता है, इसलिए दो रूप कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र चरम फालियोंके प्रक्षिप्त करने पर सदृश किये गये ग्रन्थस्थानसे ऊपर तावत्प्रमाण ग्रन्थस्थान उत्पन्न होता है। पुनः शेष तीन रूप कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र द्विचरम फालियोंके इस समय उत्पन्न हुए ग्रन्थस्थानके ऊपर प्रक्षिप्त करने पर उतने ही द्विचरम फालिस्थान उत्पन्न होते हैं। पुनः वहाँ निकाल कर स्थापित किए गये दो रूप कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र त्रिचरम फालिविशेषों को परिपाटीके क्रमसे प्रक्षिप्त करने पर उतने ही त्रिचरम फालिविशेषस्थान उत्पन्न होते हैं, इसलिए यह स्थान अपुनरुक्त है।

§ ४२१. अब तीन फालिक्षपकको यहीं पर स्थापित करके पुनः एक फालिक्षपकको प्रक्षेप अधिक और दो प्रक्षेप अधिकके क्रमसे तत्प्रायोग्य असंख्यातगुणे योगके प्राप्त होने तक बढ़ाना चाहिए। अब ऊपर बढ़ाना शक्य नहीं है, क्योंकि द्वितीय आदि समयोंमें जघन्य योगसे परिणमनका उपाय नहीं पाया जाता। अब इसे ग्रन्थस्थानके समान करने पर एक कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र ग्रन्थस्थान निवृत्त होते हैं। इस प्रकार निवृत्त कराये गये स्थानके समान स्थानका कथन करनेके लिए इसका उपक्रम करते हैं। यथा—सवेद भागके द्विचरम समयमें तत्प्रायोग्य असंख्यातगुणे योगसे चरम और त्रिचरम समयोंमें

अधियारतिचरिमट्ठिदक्खवगट्ठाणं पुव्विल्लट्ठाणादो विसेसाहियं, चडिदद्धाणमेत्त-दुचरिमफालीणमहियत्तुवलंभादो। पुणो अधापवत्तभागहारेणोवट्टिदचडिदद्धाणमेत्तं दोफालिक्खवगे ओदारिदे गंथट्ठाणसमाणं होदि। एवं सरिसं कादूण तिण्णिफालिक्खवगे दुरूऊणअधापवत्तभागहारमेत्तजोगं णीदे पुव्वं णियत्ताविदट्ठाणमुप्पज्जदि।

§ ४२२. संपहि एदमेत्थेव ट्ठविय पुणो एगफालिक्खवगो चेव जाणिदूण वड्ढावेदव्वो जावुक्कस्सजोगट्ठाणादो हेट्ठिमतिभागजोगं पत्तो त्ति। एवं वड्ढाविज्जमाणे एग-दो-तिण्णिफालिक्खवगेसु कम्हि कम्हि जोगट्ठाणे अवट्ठिदेसु एगफालिसामिणो उक्कस्सट्ठाणादो हेट्ठिमसव्वअंतरेसु अपयदअत्थट्ठाणाणि उप्पज्जंति त्ति चे तिण्णिफालिक्खवगे तिभागजोगट्ठाणादो उवरि दुरूऊणअधापवत्तभागहारमेत्तपक्खेवाहियजोगट्ठाणे एगफालिक्खवगे रूऊणअधापवत्तभागहारेणोवट्टिदतिभागजोगपक्खेवभागहारं तिगुणं सादिरेयं। पुणो अधापवत्तभागहारमेत्तं च हेट्ठा ओदरिय ट्ठिदजोगट्ठाणे दोफालिक्खवगे तिभागजोगम्मि वट्टमाणे एगफालिसामिणो उक्कस्सगंथट्ठाणादो हेट्ठिमसव्वट्ठाणंतरेसु पच्छिमतिचरिमफालिविसेसट्ठाणाणि उप्पज्जंति। एवमुवरि सव्वसंधीओ जाणिय सरिसं करिय णेदव्वं जाव दुसमयूणदोआवलियमेत्तसमयपबद्धा उक्कस्सजोगं पत्ता त्ति। एवं वड्ढाविदे दुसमयूणदोआवलियमेत्तसमयपबद्धाणमुक्कस्सगंथट्ठाणादो हेट्ठिमरूऊण-अधापवत्तभागहारमेत्तगंथट्ठाणविच्चालाणि मोत्तूण सेसासेसविच्चालेसु पयदअत्थट्ठाणाणि

घोलमान जघन्य योगसे बन्ध कराकर अधिकृत त्रिचरम समयमें स्थित हुआ क्षपकस्थान पहलेके स्थानसे विशेष अधिक है, क्योंकि आगे गये हुए अध्वानमात्र द्विचरम फालियोंकी अधिकता उपलब्ध होती है। पुनः अधःप्रवृत्तभागहारसे भाजित आगे गये हुए अध्वानमात्र दो फालिक्षपकके उतारने पर ग्रन्थस्थानके समान होता है। इस प्रकार सदृश करके तीन फालिक्षपकके दो रूप कम अधःप्रवृत्त भागहारमात्र योगको प्राप्त कराने पर पहले निवृत्त कराया गया स्थान उत्पन्न होता है।

§ ४२२. अब इसे यहीं पर स्थापित कर पुनः एक फालिक्षपकको ही जानकर उत्कृष्ट योग-स्थानसे अधस्तन त्रिभाग योगको प्राप्त होने तक बढ़ाना चाहिए। इस प्रकार बढ़ाने पर एक, दो और तीन फालिक्षपकोंके किस किस योगस्थानमें अवस्थित होने पर एक फालिस्वामीके उत्कृष्ट स्थानसे अधस्तन सब अन्तरालोंमें अप्रकृत अर्थस्थान उत्पन्न होते हैं, इसलिए तीन फालिक्षपकके त्रिभाग योगस्थानसे ऊपर दो रूप कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र प्रक्षेप अधिक योगस्थानरूप एक फालिक्षपकके रहते हुए एक कम अधःप्रवृत्तभागहारसे भाजित त्रिभाग योग प्रक्षेपभागहार साधिक तिगुणा होता है। पुनः अधःप्रवृत्तभागहारमात्र नीचे उतरकर स्थित हुए योगस्थानमें दो फालिक्षपकके त्रिभाग योगमें वर्त्तमान रहते हुए एक फालिस्वामीके उत्कृष्ट ग्रन्थस्थानसे अधस्तन सर्व स्थानोंके अन्तरालमें अन्तिम त्रिचरम फालिविशेषस्थान उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार ऊपर सब सन्धियोंको जानकर और सदृश करके दो समय कम दो आवलिमात्र समयप्रबद्धोंके उत्कृष्ट योगको प्राप्त होने तक ले जाना चाहिए। इस प्रकार बढ़ाने पर दो समय कम दो आवलिमात्र समयप्रबद्धोंके उत्कृष्ट ग्रन्थस्थानसे अधस्तन एक कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र ग्रन्थस्थानोंके अन्तरालोंको छोड़कर शेष समस्त अन्तरालोंमें

समुप्पण्णाणि। एवं तिचरिमफालिविसेसट्ठाणाणं सव्वपच्छिमपत्थारे पढमपरिवाडी समत्ता।

§ ४२३. संपहि विदियपरिवाडी उच्चदे। तं जहा—सवेदचरिमसमए घोलमाण-जहण्णजोगादो दुरूऊणअधापवत्तभागहारमेत्तपक्खेवाहियजोगेण दुचरिमसमए एगपक्खेउत्तरजोगेण तिचरिमसमए घोलमाणजहण्णजोगेण बंधिय अधियारतिचरिमसमए ट्ठिदक्खवगट्ठाणमपुणरुत्तं। पुणो एगफालिक्खवगमेगेगपक्खेउत्तरकमेण वड्ढाविय अपुणरुत्तट्ठाणाणि सव्वसंधीओ जाणिय उप्पादेदव्वाणि जाव दुसमयूणदोआवलियमेत्त-समयपबद्धा उक्कस्सजोगं पत्ता त्ति। एवं विदियपरिवाडी समत्ता।

§ ४२४. संपहि तदियपरिवाडी उच्चदे। तं जहा—सवेदचरिमसमए घोलमाणजहण्णजोगादो दुरूऊणअधापवत्तभागहारमेत्तपक्खेवुत्तरजोगेण दुचरिमसमए दुपक्खेउत्तरजोगेण तिचरिमसमए घोलमाणजहण्णजोगेण बंधिय अधियारतिचरिमसमए ट्ठिदखवगट्ठाणमपुणरुत्तं होदूण तदियपरिवाडीए आदिमं होदि। पुणो एगफालिक्खवगमेगेग-पक्खेउत्तरकमेण वड्ढाविय सव्वसंधीओ अवहारिय णेदव्वं जाव दुसमयूणदोआवलियमेत्त-समयपबद्धा उक्कस्सजोगं पत्ता त्ति। एवं वड्ढाविदे तदियपरिवाडी समप्पदि। संपहि चउत्थ-पंचमादिपरिवाडीसु भण्णमाणासु तिण्णिफालिक्खवगं दुरूऊणअधापवत्तभागहार-मेत्तपक्खेउत्तरजहण्णजोगम्मि चेव ट्ठविय दोफालिक्खवगं परिवाडिं पडि

प्रकृत अर्थस्थान उत्पन्न हुए। इस प्रकार त्रिचरम फालिविशेषस्थानोंके सबसे अन्तिम प्रस्तारमें प्रथम परिपाटी समाप्त हुई।

§ ४२३. अब द्वितीय परिपाटीका कथन करते हैं। यथा—सवेदभागके चरम समयमें घोलमान जघन्य योगसे और दो रूप कम अधःप्रवृत्त भागहारमात्र प्रक्षेप अधिक योगसे, द्विचरम समयमें एक प्रक्षेप अधिक योगसे तथा त्रिचरम समयमें घोलमान जघन्य योगसे बन्ध कर अधिकृत त्रिचरम समयमें स्थित हुआ क्षपकस्थान अपुनरुक्त है। पुनः एक फालिक्षपकको एक एक प्रक्षेप अधिक क्रमसे बढ़ाकर अपुनरुक्त स्थान सब सन्धियोंको जानकर दो समय कम दो आवलिमात्र समयप्रबद्धोंके उत्कृष्ट योगको प्राप्त होने तक उत्पन्न कराना चाहिए। इस प्रकार दूसरी परिपाटी समाप्त हुई।

§ ४२४. अब तृतीय परिपाटीका कथन करते हैं। यथा—सवेद भागके चरम समयमें घोलमान जघन्य योगसे और दो रूप कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र प्रक्षेप अधिक योगसे, द्विचरम समयमें दो प्रक्षेप अधिक योगसे तथा त्रिचरम समयमें घोलमान जघन्य योगसे बन्धकर अधिकृत त्रिचरम समयमें स्थित हुआ क्षपकस्थान अपुनरुक्त होकर तृतीय परिपाटीके अनुसार प्रथम होता है। पुनः एक फालिक्षपकको एक एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे बढ़ाकर सब सन्धियोंका अवधारण कर दो समय कम दो आवलिमात्र समयप्रबद्धोंके उत्कृष्ट योगको प्राप्त होने तक ले जाना चाहिए। इस प्रकार बढ़ाने पर तृतीय परिपाटी समाप्त होती है। अब चतुर्थ और पञ्चम आदि परिपाटियोंका कथन करने पर तीन फालिक्षपकको दो रूप कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र प्रक्षेप अधिक जघन्य योगमें ही स्थापित कर तथा दो फालिक्षपकको परिपाटीके प्रति एक एक

एगेगपक्खेवाहियजोगट्ठाणम्मि ट्ठविय णेयव्वं जाव दुरूऊणअधापवत्तभागहारमेत्त-परिवाडीओ समत्ताओ त्ति ।

§ ४२५. संपहि तत्थ सव्वपच्छिमपरिवाडी उच्चदे। तं जहा—सवेदतिचरिमसमए घोलमाणजहण्णजोगेण चरिम-दुचरिमसमएसु दुरूऊणअधापवत्त-भागहारमेत्तपक्खेवाहियजोगेण बंधिय अधियारतिचरिमसमए ट्ठिदखवगट्ठाणं अपुणरुत्तं होदूण सव्वपच्छिमअत्थट्ठाणपरिवाडीए आदिमं होदि । एवमुवरि सव्वसंधीओ जाणिय णेदव्वं जाव दुसमयूणदोआवलियमेत्तसमयपबद्धा उक्कस्सजोगं पत्ता त्ति । एवं वड्ढाविय तिचरिमफालिविसेसमस्सिदूण गंथट्ठाणाणमंतरेसु दुरूऊणधापवत्तभागहारमेत्ताणि अत्थट्ठा-णाणि समुप्पण्णाणि ण वड्ढिमाणि, रूऊणअधापवत्तभागहारमेत्ततिचरिमफालिविसेसेहि एगदुचरिमफालीए समुप्पत्तीदो । एवं तिचरिमफालिविसेसे अस्सिदूण अत्थट्ठाणपरूवणा कदा । चदुचरिमादिफालिविसेसे वि अस्सिदूण अत्थट्ठाणपरूवणा कायव्वा । एगफालिक्खवगस्स गंथट्ठाणाणि जोगट्ठाणमेत्ताणि । ताणि पडिरासिय दुरूऊणअधापवत्तभागहारेण गुणिदेसु एगफालिखवगस्स गंथट्ठाणंतरेसुप्पण्णदुचरिमफालि-ट्ठाणाणि होंति । एदाणि पडिरासिय दुरूऊणअधापवत्तभागहारेण गुणिदेसु तत्थुप्पण्ण-तिचरिमफालिविसेसट्ठाणाणि होंति । एवमणंतराणंतरुप्पण्णट्ठाणाणि पडिरासिय दुरूऊणअधापवत्तभागहारेण गुणिय णेदव्वं जाव समयूणआवलियमेत्तं ति । एवमेदेसु

प्रक्षेप अधिक योगस्थानमें स्थापित कर दो रूप कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र परिपाटियोंके समाप्त होने तक ले जाना चाहिए।

§ ४२५. अब वहाँ पर सबसे अन्तिम परिपाटीका कथन करते हैं। यथा—सवेद भागके त्रिचरम समयमें घोलमान जघन्य योगसे तथा चरम और द्विचरम समयमें दो रूप कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र प्रक्षेप अधिक योगसे बन्धकर अधिकृत त्रिचरम समयमें स्थित हुआ क्षपकस्थान अपुनरुक्त होकर सबसे अन्तिम अर्थस्थान परिपाटीमें प्रथम होता है। इस प्रकार ऊपर सब सन्धियोंको जानकर दो समय कम दो आवलिमात्र समयप्रबद्धोंके उत्कृष्ट योगको प्राप्त होने तक ले जाना चाहिए। इस प्रकार बढ़ाने पर त्रिचरम-फालिविशेषका आश्रय कर ग्रन्थस्थानोंके अन्तरालोंमें दो रूप कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र अर्थस्थान उत्पन्न हुए, बढ़े हुए नहीं, क्योंकि एक कम अधःप्रवृत्तभागहारमात्र त्रिचरम फालिविशेषोंसे एक द्विचरम फालि उत्पन्न हुई है। इस प्रकार त्रिचरम फालिविशेषोंका आश्रय कर अर्थस्थान प्ररूपणा की। चतुश्चरम आदि फालिविशेषोंका भी आश्रय कर अर्थस्थानोंकी प्ररूपणा करनी चाहिए। एक फालिक्षपकके ग्रन्थस्थान योगस्थानप्रमाण हैं। उन्हें प्रतिराशि करके दो रूप कम अधःप्रवृत्तभागहारसे गुणित करने पर एक फालिक्षपकके ग्रन्थस्थानोंके अन्तरालोंमें उत्पन्न हुए द्विचरम फालिस्थान होते हैं। इन्हें प्रतिराशि करके दो रूप कम अधःप्रवृत्तभागहारसे गुणित करने पर वहाँ पर उत्पन्न हुए त्रिचरम फालिविशेष स्थान होते हैं। इस प्रकार अनन्तर अनन्तर उत्पन्न हुए अनन्त स्थानोंको प्रतिराशि करके दो रूप कम अधःप्रवृत्तभागहारसे गुणित कर एक समय कम आवलिमात्र तक ले जाना चाहिये। इस

सव्वट्ठाणेसु मेलाविदेसु एगफालिविसए समुप्पण्णट्ठाणाणि होंति। एदेसिं जोगट्ठाणाणि त्ति सण्णा, कज्जे कारणोवयारादो। एदेसु जोगट्ठाणेसु दुसमयूणदोआवलियाहि गुणिदेसु अवगदवेदम्मि समुप्पण्णसांतरट्ठाणाणि होंति।

❀ चरिमसमयसवेदस्स एगं फद्दयं।

§ ४२६. खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण पुणो पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तसंजमासंजमकंडयाणि तत्तियमेत्ताणि चेव सम्मत्तकंडयाणि अणंताणुबंधिविसंजोयणाए सहियाणि अट्ठसंजमकंडयाणि चदुक्खुत्तो कसायउवसामणाओ च करिय चरिमभवम्मि पुव्वकोडाउएसु मणुस्सेसुववज्जिय पुणो तत्थ संजमं घेत्तूण देसूणपुव्वकोडीए संजमगुणसेढिणिज्जरं करिय पुणो चारित्तमोहक्खवणाए अब्भुट्ठिय जहण्णपरिणामेहि चेव अपुव्वगुणसेढिं करिय पुणो पुरिसवेदचरिमफालिमवणिय सवेदचरिमसमए ट्ठिदस्स पुरिसवेदट्ठाणमंतरिदूण समुप्पण्णत्तादो अण्णमेगं फद्दयं। किं पमाणमेत्थंतरं? दुसमयूणदोआवलियमेत्तउक्कस्ससमयपबद्धेहिंतो असंखेज्जगुणं। कुदो? दुसमयूणदोआवलियमेत्तुक्कस्ससमयपबद्धेसु समयूणदोआवलियमेत्तजहण्णसमयपबद्धसहिदअसंखेज्जसमयपबद्धमेत्तपयडि-विगिदिगोउच्छाहिंतो तत्तो असंखेज्जगुणअपुव्वअणियट्टिगुणसेढिगोउच्छाहिंतो च सोहिदेसु सुद्धसेसम्मि असंखेज्जाणं समयपबद्धाणं उवलंभादो।

प्रकार इन सब स्थानोंके मिलाने पर एक फालिके विषयमें उत्पन्न हुए स्थान होते हैं। कार्यमें कारणका उपचार करनेसे इनकी योगस्थान ऐसी संज्ञा है। इन योगस्थानोंके दो समय कम दो आवलियोंसे गुणित करने पर अपगतवेदमें उत्पन्न हुए सान्तर स्थान होते हैं।

❀ चरम समयवर्ती सवेदी जीवका एक स्पर्धक है।

§ ४२६. क्षपित कर्मांशिकलक्षणसे आकर पुनः पल्यके असंख्यातवें भागमात्र संयमासंयमकाण्डकोंको और उतने ही सम्यक्त्वकाण्डकोंको तथा अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनाके साथ आठ संयमकाण्डकोंको और चार बार कषायोंकी उपशमना करके अन्तिम भवमें पूर्वकोटिकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न होकर पुनः वहाँ पर संयमको ग्रहण कर कुछ कम पूर्वकोटिके द्वारा संयमगुणश्रेणिकी निर्जरा करके पुनः चारित्रमोहनीयकी क्षपणाके लिये उद्यत होकर जघन्य परिणामोंके द्वारा ही अपूर्व गुणश्रेणि करके पुनः पुरुषवेदकी अन्तिम फालिका अपनयन करके जो सवेद भागके अन्तिम समयमें स्थित है उसके पुरुषवेदके स्थानका अन्तर देकर उत्पन्न होनेसे अन्य एक स्पर्धक होता है।

शंका—यहाँ पर अन्तरका क्या प्रमाण है?

समाधान—उसका प्रमाण दो समय कम दो आवलिमात्र उत्कृष्ट समयप्रबद्धोंसे असंख्यातगुणा है, क्योंकि दो समय कम दो आवलिमात्र उत्कृष्ट समयप्रबद्धोंके एक समय कम दो आवलिमात्र जघन्य समयप्रबद्ध सहित असंख्यात समयप्रबद्धमात्र प्रकृति और विकृति गोपुच्छाओंमेंसे तथा उनसे असंख्यातगुणी अपूर्व और अनिवृत्ति गुणश्रेणि गोपुच्छाओंमेंसे घटा देने पर जो शेष रहे उसमें असंख्यात समयप्रबद्ध उपलब्ध होते हैं।

§ ४२७. संपहि एत्थ पयडि-विगिदिगोउच्छाओ जहण्णजोगेण बद्धसमयूणदोआवलियमेत्तसमयपबद्धे च अपुव्वगुणसेढिगोउच्छं च अस्सिदूण ट्ठाणपरूवणं कस्सामो। तं जहा— पयडिगोउच्छाए उवरि परमाणुत्तर-दुपरमाणुत्तरादिकमेण एगचरिमफालिपक्खेवमेत्तं वड्ढावेदव्वं। एवं वड्ढिदूण ट्ठिदेण अण्णेगो सवेददुचरिमावलियाए विदियसमयम्मि पक्खेउत्तरघोलमाणजहण्णजोगेण बंधिय पुणो चरिमसमयसवेदो होदूण ट्ठिदो सरिसो। णवरि पयडिगोउच्छा विगिदिगोउच्छा अपुव्व-अणियट्टिगुणसेढिगोवुच्छाओ च जहण्णाओ चेव, तत्थ वड्ढीए अभावादो। संपहि एदेण कमेण चरिमफाली वड्ढावेदव्वा जाव जहण्णजोगादो तप्पाओग्गमसंखेज्जगुणं जोगं पत्ता त्ति। एवं वड्ढाविय पुणो पयडिगोउच्छाए उवरि चरिम-दुचरिमफालिपक्खेवमेत्तं वड्ढावेदव्वं। एवं वड्ढिदूण ट्ठिदेण अण्णेगो दुचरिमावलियाए विदियसमयम्मि असंखेज्जगुणजोगेण तदियसमयम्मि पक्खेउत्तरजहण्णजोगेण बंधिय चरिमसमयसवेदो होदूण ट्ठिदो सरिसो। एवं वड्ढावेदव्वो जाव दुचरिमावलियाए तदियसमयपबद्धो वि तप्पाओग्गमसंखेज्जगुणत्तं पत्तो त्ति।

§ ४२८. संपहि एदेण कमेण समयूणदोआवलियमेत्तसव्वसमयपबद्धा ताव वड्ढावेदव्वा जाव तप्पाओग्गमसंखेज्जगुणं जोगं पत्तो त्ति। एवं संखेज्जवारं सव्वसमयपबद्धा वड्ढावेदव्वा जाव उक्कस्सजोगं पत्ता त्ति। पुणो पयडिगोउच्छमस्सियूण-परमाणुत्तरकमेण अपुव्वगुणसेढिगोउच्छा विगिदिगोवुच्छा च वड्ढावेदव्वा जाव सगुक्कस्सत्तं

---

§ ४२७. अब यहाँ पर प्रकृति तथा विकृतिगोपुच्छाओंका, जघन्य योगसे बद्ध एक समय कम दो आवलिमात्र समयप्रबद्धोंका और अपूर्वगुणश्रेणिगोपुच्छाका आश्रय कर स्थानका कथन करते हैं। यथा—प्रकृतिगोपुच्छाके ऊपर परमाणु अधिक और दो परमाणु अधिक आदिके क्रमसे एक चरम फालिप्रक्षेपमात्र बढ़ाना चाहिये। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके साथ एक अन्य जीव समान है जो सवेद भागकी द्विचरमावलिके द्वितीय समयमें प्रक्षेप अधिक घोलमान जघन्य योगसे बन्ध कर पुनः अन्तिम समयवर्ती सवेदी होकर स्थित है। इतनी विशेषता है कि प्रकृतिगोपुच्छा, विकृतिगोपुच्छा, अपूर्वकरणगुणश्रेणिगोपुच्छा और अनिवृत्तिकरणगुणश्रेणिगोपुच्छा जघन्य ही हैं, क्योंकि उनमें वृद्धिका अभाव है। अब इस क्रमसे चरम फालिको जघन्य योगसे तत्प्रायोग्य असंख्यातगुणे योगको प्राप्त होने तक बढ़ाना चाहिए। इस प्रकार बढ़ाकर पुनः प्रकृतिगोपुच्छाके ऊपर चरम और द्विचरम फालिप्रक्षेप मात्र बढ़ाना चाहिये। इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुए जीवके साथ अन्य एक जीव समान है जो द्विचरमावलिके द्वितीय समयमें असंख्यातगुणे योगसे तथा तृतीय समयमें प्रक्षेप अधिक जघन्य योगसे बन्ध कर चरम समयवर्ती सवेदी होकर स्थित है। इस प्रकार द्विचरमावलिका तृतीय समयप्रबद्ध भी तत्प्रायोग्य असंख्यातगुणे योगको प्राप्त होने तक बढ़ाना चाहिए।

§ ४२८. अब इस क्रमसे एक समय कम दो आवलिमात्र सब समयप्रबद्ध तत्प्रायोग्य असंख्यातगुणे योगको प्राप्त होने तक बढ़ाने चाहिए। इस प्रकार उत्कृष्ट योगके प्राप्त होने तक सब समयप्रबद्धोंको संख्यात बार बढ़ाना चाहिए। पुनः प्रकृतिगोपुच्छाका आश्रय कर परमाणु अधिकके क्रमसे अपूर्वकरणगुणश्रेणिगोपुच्छा और विकृतिगोपुच्छाको अपने उत्कृष्ट-

पत्ताओ त्ति । पुणो पयडिगोउच्छा वि परमाणुत्तरकमेण पंचहि वड्ढीहि चत्तारि पुरिसे अस्सिदूण वड्ढावेदव्वा जावप्पणो उक्कस्सदव्वं पत्ता त्ति । एवं वड्ढाविदे अणंतट्ठाणसहियमेगं फद्दयं जादं ।

❀ दुचरिमसमयसवेदस्स चरिमट्ठिदिक्खंडगं चरिमसमय विणट्ठं ।

§ ४२९. जो दुचरिमसमयसवेदो तत्थ पुरिसवेदस्स चरिमट्ठिदिक्खंडयं चरिमसमयविणट्ठं होदि । ट्ठिदिखंडयाणं सव्वेसिं पि एक्कत्थेव विणासो होदि त्ति ट्ठिदिक्खंडयविणासो चरिमसद्देण ण विसेसियव्वो । सच्चमेदं जदि दव्वट्ठियणओ अवलंबिओ होज्ज, किंतु एदं णेगमणएण णिद्दिट्ठं तेण चरिमट्ठिदिखंडयपढमफालियाए विणट्ठाए ट्ठिदखंडयं पढमसमयविणट्ठं । कधं फालियाए ट्ठिदखंडयववएसो ? ण, अंतोमुहुत्तमेत्तफालियाहिंतो वदिरित्तट्ठिदिखंडयाभावादो । तोक्खहि एक्कम्मि ट्ठिदिखंडए बहुए [हि] ट्ठिदक्खंडएहि होदव्वमिदि ण, ट्ठिदिखंडयविहाणस्स दव्वट्ठिदणयमवलंबिय अवट्ठिदत्तादो । दव्व-पज्जवट्ठियणए अवलंबिय ट्ठिदणेगमणयमस्सिदूण जेणेसा देसणा तेण ट्ठिदिखंडयस्स चरिमसमयविणट्ठत्तं ण विरुज्झदि त्ति भावत्थो । सवेददुचरिमसमए

पनेको प्राप्त होने तक बढ़ानी चाहिये । पुनः प्रकृतिगोपुच्छाको भी परमाणु अधिकके क्रमसे पाँच वृद्धियोंके द्वारा चार पुरुषोंका आश्रय लेकर अपने उत्कृष्ट द्रव्यके प्राप्त होने तक बढ़ाना चाहिये । इस प्रकार बढ़ाने पर अनन्त स्थानोंसे युक्त एक स्पर्धक हो गया ।

❀ द्विचरम समयवर्ती सवेदी जीवके चरम स्थितिकाण्डक चरम समयमें विनष्ट हो गया ।

§ ४२९. जो द्विचरम समयवर्ती सवेदी जीव है उसके पुरुषवेदका चरम स्थितिकाण्डक चरम समयमें विनष्ट होता है ।

शंका—सभी स्थितिकाण्डकोंका एक स्थानमें ही विनाश होता है, इसलिये स्थितिकाण्डक-विनाशको चरम शब्दसे विशेषित नहीं करना चाहिए ?

समाधान—यह सत्य है यदि द्रव्यार्थिकनयका अवलम्बन होवे किन्तु यह नैगमनयकी अपेक्षा निर्दिष्ट किया है, इसलिये चरमस्थितिकाण्डककी प्रथम फालिके विनिष्ट होने पर स्थितिकाण्डक प्रथम समयमें विनष्ट हुआ ऐसा कहा है ।

शंका—फालिकी स्थितिकाण्डक संज्ञा कैसे है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि अन्तर्मुहूर्तप्रमाण फालियोंको छोड़कर स्थितिकाण्डकका अभाव है ।

शंका—तो एक स्थितिकाण्डकमें बहुत स्थितिकाण्डक होने चाहिए ?

समाधान—नहीं, क्योंकि स्थितिकाण्डकविधान द्रव्यार्थिक नयका अवलम्बन लेकर अवस्थित है । द्रव्य-पर्यायार्थिक नयका अवलम्बन लेकर स्थित हुए नैगमनयके आश्रयसे चूंकि यह देशना है, इसलिए स्थितिकाण्डकका चरम समयोंमें विनष्ट होना विरोधको प्राप्त नहीं होता यह उक्त कथनका भावार्थ है ।

संतस्स चरिमट्ठिदिखंडयस्स कुदो चरिमसमयविणट्ठत्तं ? ण, दव्वट्ठियणयावलंबणाए संतस्सेव विणट्ठत्तदंसणादो।

❀ तस्स दुचरिमसमयसवेदस्स जहण्णगं संतकम्ममादिं कादूण जाव पुरिसवेदस्स ओघुक्कस्सपदेससंतकम्मं ति एदमेगं फद्दयं।

§ ४३०. पुव्वं वड्ढाविदसव्वदव्वं पेक्खिदूण असंखेज्जगुणत्तादो। ण च असंखेज्ज-गुणत्तमसिद्धं, तिण्हं वेदाणं दिवड्ढगुणहाणिमेत्तएइंदियसमयपबद्धेहि चरिमफालीए णिप्पण्णत्तादो। एदं जहण्णसंतकम्ममादिं कादूण जाव ओघुक्कससंतकम्मं ति एगं फद्दयमिदि णेदं घडदे। अधापवत्तकरणचरिमसमयट्ठिदिसंतकम्ममादिं कादूण जाव पुरिसवेदस्स ओघक्कस्ससंतकम्मं ति एगं फद्दयमिदि वत्तव्वं, दुचरिमसमयसवेदस्स जहण्णसंतकम्मं पेक्खिदूण अधापवत्तकरणचरिमसमयपुरिसवेददव्वस्स संखेज्जगुणहीणत्तुव-लंभादो। जं जहण्णं दव्वं तं फद्दयस्स आदी होदि ण महल्लं, अव्ववत्था-पसंगादो त्ति ? एत्थ परिहारो उच्चदे। तं जहा—चरिमसमयसवेदो त्ति उत्ते अधा-पवत्तकरणचरिमसमयसवेदस्स ग्गहणं, एगजीवदव्वं पडि भेदाभावादो। एदस्सेव गहणं होदि त्ति कुदो णव्वदे ? तस्स जहण्णगं संतकम्ममादिं कादूण त्ति सुत्तवयणादो।

शंका—सवेद भागके द्विचरम समयमें सद्रूप चरम स्थितिकाण्डकका चरम समयमें विनाश होना कैसे है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि द्रव्यार्थिक नयका अवलम्बन लेने पर सद्रूपका ही विनाश होना देखा जाता है।

❀ इस द्विचरम समयवर्ती सवेदी जीवके जघन्य सत्कर्मसे लेकर पुरुषवेदके ओघ उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मके प्राप्त होने तक यह एक स्पर्धक है।

§ ४३०. क्योंकि पहले बढ़ाये गये सब द्रव्यकी अपेक्षा यह असंख्यातगुणा है। इसका असंख्यातगुणा होना असिद्ध है यह बात नहीं है, क्योंकि तीनों वेदोंके डेढ़ गुणहानिमात्र एकेन्द्रियसम्बन्धी समयप्रबद्धोंसे चरम फालि निष्पन्न हुई है।

शंका—इस जघन्य सत्कर्मसे लेकर ओघ उत्कृष्ट सत्कर्म तक एक स्पर्धक है यह घटित नहीं होता, इसलिए अधःप्रवृत्तकरणके चरम समयवर्ती स्थितिसत्कर्मसे लेकर पुरुषवेदके ओघ उत्कृष्ट सत्कर्मके प्राप्त होने तक एक स्पर्धक है ऐसा कहना चाहिए, क्योंकि द्विचरम समयवर्ती सवेदी जीवके जघन्य सत्कर्मको देखते हुए अधःप्रवृत्तकरणके चरम समयवर्ती पुरुषवेदका द्रव्य संख्यातगुणा हीन उपलब्ध होता है। जो जघन्य द्रव्य है वह स्पर्धकको आदि होता है। बड़ा द्रव्य नहीं, क्योंकि अन्यथा अव्यवस्थाका प्रसंग आता है ?

समाधान—यहां पर इस शंकाका परिहार करते हैं। यथा—चरम समयवर्ती सवेदी ऐसा कहने से अधःप्रवृत्तकरणके चरमसमयवर्ती सवेदी जीवका ग्रहण किया है, क्योंकि एक जीव द्रव्यके प्रति इनमें कोई भेद नहीं है।

शंका—इसीका ग्रहण होता है यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—'उसके जघन्य सत्कर्मसे लेकर' इस सूत्रवचन से जाना जाता है।

ण च उवरि संतकम्मं जहण्णं होदि, पडिच्छिदइत्थि-णउंसयवेददव्वपुरिसवेदस्स जहण्णत्त-विरोहादो। तम्हा अधापवत्तकरणस्स चरिमसमए जं जहण्णं संतकम्मं तमादिं करिय जाव पुरिसवेदओघुक्कस्सदव्वं ति णिरंतरसरूवेण ट्ठाणपरूवणा कायव्वा। तं जहा—एदं पुरिसवेदजहण्णदव्वं परमाणुत्तरादिकमेण अणंतभागवड्ढि-असंखेज्जभागवड्ढि-संखेज्ज-भागवड्ढि-संखेज्जगुणवड्ढीहि ताव वड्ढावेदव्वं जाव पज्जवट्ठियणयविसयदुचरिमसमय-सवेदस्स पुरिसवेदजहण्णचरिमफालीए सरिसं जादं ति। पुणो चरिमफालिदव्वं घेत्तूण परमाणुत्तरकमेण वड्ढावेदव्वं जाव णवकबंधेणूणतिचरिमगुणसेढिगोउच्छाअधापवत्त-संकमेण गददुचरिमफालिदव्वेणब्भहिया वड्ढिदा त्ति। एवं वड्ढिदूण ट्ठिददुचरिमसमय-सवेदेण खविदकम्मंसियलक्खणेणागदतिचरिमसमयसवेदो सरिसो। एदेण कमेण ओदारिय वड्ढावेदव्वं जावित्थिवेदचरिमफालिं पडिच्छिदूण ट्ठिदपढमसमओ त्ति। पुणो एत्थ ट्ठविय परमाणुत्तरकमेण पंचवड्ढीहि वड्ढावेदव्वं जाव पुरिसवेदोघुक्कस्सदव्वं ति।

❀ कोधसंजलणस्स जहण्णयं पदेससंतकम्मं कस्स।

§ ४३१. सुगमं।

❀ चरिमसमयकोधवेदगेण खवगेण जहण्णजोगट्ठाणे जं बद्धं तं जं वेलं चरिमसमयअणिल्लेविदं तस्स जहण्णयं संतकम्मं।

और ऊपर सत्कर्म जघन्य नहीं है, क्योंकि जिसमें स्त्रीवेद और नपुंसकवेद निक्षिप्त हुआ है ऐसे पुरुषवेदको जघन्य होनेमें विरोध आता है, इसलिए अधःप्रवृत्तकरणके चरम समयमें जो जघन्य सत्कर्म है उससे लेकर पुरुषवेदके ओघ उत्कृष्ट द्रव्यके प्राप्त होने तक निरन्तररूपसे स्थानप्ररूपणा करनी चाहिए। यथा—यह पुरुषवेदका जघन्य द्रव्य एक एक परमाणु अधिक आदिके क्रमसे अनन्तभागवृद्धि, असंख्यातभागवृद्धि संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धिके द्वारा पर्यायार्थिकनयके विषयभूत द्विचरम समयवर्ती सवेदी जीवके पुरुषवेदकी जघन्य अन्तिम फालिके समान होने तक बढ़ाना चाहिए। पुनः चरम फालिके द्रव्यको ग्रहण कर एक एक परमाणु अधिकके क्रमसे नवक बन्धसे न्यून त्रिचरम गुणश्रेणि-गोपुच्छाके अधःप्रवृत्त संक्रमके द्वारा गये हुए द्विचरम फालिके द्रव्यसे अधिक वृद्धि होने तक बढ़ाना चाहिए। इस प्रकार बढ़ा कर स्थित हुए द्विचरम समयवर्ती सवेदी जीवके साथ क्षपित कर्मांशलक्षणसे आकर स्थित हुआ त्रिचरम समयवर्ती सवेदी जीव समान है। इस क्रमसे उतारकर स्त्रीवेदकी चरम फालिको संक्रामित कर स्थित हुए प्रथम समयके प्राप्त होने तक बढ़ाना चाहिए। पुनः यहां पर स्थापित कर एक एक परमाणु अधिकके क्रमसे पांच वृद्धियोंके द्वारा पुरुषवेदके ओघ उत्कृष्ट द्रव्यके प्राप्त होने तक बढ़ाना चाहिए।

❀ क्रोधसंज्वलनका जघन्य प्रदेशसत्कर्म किसके होता है।

§ ४३१. यह सूत्र सुगम है।

❀ चरम समयवर्ती क्रोधका वेदन करनेवाले क्षपक जीवने जघन्य योगस्थानमें जो कर्म बाँधा वह निर्जीर्ण होता हुआ चरम समयमें जब अनिर्लेपित रहता है तब उसके क्रोध संज्वलनका जघन्य प्रदेशसत्कर्म होता है।

§ ४३२. कोधवेदगणिद्देसो किमट्ठं कदो ? परोदएण बद्धणवगसमयपबद्धो चिराणसंतकम्मेण सह विणस्सदि त्ति जाणावणट्ठं। चरिमसमयणिद्देसो किं फलो ? अहियारसमए दुचरिमादिसमयपबद्धाणं अभावपदुप्पायणफलो। जहण्णजोगणिद्देसो किं फलो ? जहण्णदव्वगहणट्ठं। दुचरिमादिफालीणं गालणफलो चरिमसमयअणिल्लेविद-णिद्देसो। सेसं सुगमं।

❀ जहा पुरिसवेदस्स दोआवलियाहि दुसमयूणाहि जोगट्ठाणाणि पदुप्पण्णाणि एवदियाणि संतकम्मट्ठाणाणि सांतराणि। एवमावलियाए समऊणाए जोगट्ठाणाणि पदुप्पण्णाणि एत्तियाणि कोधसंजलणस्स सांतराणि संतकम्मट्ठाणाणि।

§ ४३३. दोहि आवलियाहि दुसमयूणाहि जोगट्ठाणाणि पदुप्पण्णाणि संताणि जावदियाणि होंति एवदियाणि पुरिसवेदसांतराणि संतकम्मट्ठाणाणि होंति। जहा एदेसिं ट्ठाणाणं पुव्वं परूवणा कदा एवं कोधसंजलणस्स ट्ठाणाणं पि परूवणा कायव्वा, विसेसाभावादो। णवरि समयूणाए आवलियाए जोगट्ठाणेसु पदुप्पण्णेसु जं पमाणमेत्तियाणि कोधसंजलणस्स सांतराणि पदेससंतकम्मट्ठाणाणि।

---

§ ४३२. **शंका**—सूत्रमें 'क्रोधवेदक' पदका निर्देश किसलिए किया है ?

समाधान—परोदयसे बाँधा गया नवक समयप्रबद्ध प्राचीन सत्कर्मके साथ विनाशको प्राप्त होता है इस बातका ज्ञान करानेके लिए किया है।

शंका—सूत्रमें 'चरम समय' पदके निर्देशका क्या फल है।

समाधान—अधिकृत समयमें द्विचरम आदि समयप्रबद्धोंके अभावका कथन करना इसका फल है।

शंका—सूत्रमें 'जघन्य योग' पदका निर्देश किसलिए किया है ?

समाधान—जघन्य द्रव्यका ग्रहण करनेके लिए इसका निर्देश किया है।

द्विचरम आदि फालियोंका गालन हो जाता है यह दिखलानेके लिए सूत्रमें 'चरम समय अनिर्लेपित' पदका निर्देश किया है। शेष कथन सुगम है।

❀ जिस प्रकार पुरुषवेदके दो समय कम दो आवलियोंसे योगस्थान उत्पन्न होकर उतने ही सान्तर सत्कर्मस्थान होते हैं उसी प्रकार एक समय कम आवलिके द्वारा योगस्थान उत्पन्न होकर उतने ही क्रोधसंज्वलनके सान्तर सत्कर्मस्थान होते हैं।

§ ४३३. दो समय कम दो आवलियोंके द्वारा योगस्थान उत्पन्न होकर जितने होते हैं उतने ही पुरुषवेदके सान्तर सत्कर्मस्थान होते हैं। जिस प्रकार इनके स्थानोंकी पहले प्ररूपणा की है उसी प्रकार क्रोधसंज्वलनके स्थानों की भी प्ररूपणा करनी चाहिए, क्योंकि उक्त प्ररूपणासे इस प्ररूपणामें कोई विशेषता नहीं है। इतनी विशेषता है कि एक समय कम आवलिके आलम्बनसे योगस्थानोंके उत्पन्न होने पर जो प्रमाण हो उतने क्रोधसंज्वलनके सान्तर प्रदेशसत्कर्मस्थान होते हैं।

समयूणदोआवलियमेत्तो जोगट्ठाणाणमेत्थ गुणयारो किं ण होदि ? ण, उच्छिट्ठावलियाए अंतो समयूणावलियमेत्तगुणसेढिगोउच्छासु असंखेज्जसमयपबद्धमेत्तासु संतीसु णवकबंधस्स पाहण्णियाभावादो।

❀ कोधसंजलणस्स उदए वोच्छिण्णे जा पढमावलिया तत्थ गुणसेढी पविट्ठिल्लिया।

§ ४३४. कोधसंजलणस्स उदयवोच्छिण्णे संते जा पढमावलिया तत्थ गुणसेढी किमट्ठं पविट्ठा ? ण, सगोदयकालादो आवलियब्भहियपढमट्ठिदीए करणादो। किमट्ठमेवं कीरदे ? साहावियादो।

❀ तिस्से आवलियाए चरिमसमए एगं फद्दयं।

§ ४३५. कुदो ? पुव्विल्लसमयूणावलियमेत्तउक्कस्ससमयपबद्धेहिंतो एत्थ असंखेज्जगुणसमयपबद्धाणं उवलंभादो। पगदि-विगिदि-अपुव्वगुणसेढिगोउच्छाओ एत्थ णत्थि अणियट्टिगुणसेढिगोउच्छा एक्कल्लिया चेव, विदियट्ठिदिपदेससंतकम्मं ओकड्डिदूण अंतरम्मि गुणसेढिकरणादो। तेण तत्तो असंखेज्जगुणं ण जुज्जदि त्ति ण पच्चवट्ठेयं, पगदि-विगिदि-अपुव्वगुणसेढिगोउच्छाहिंतो अणियट्टिगुणसेढीए असंखेज्जगुणभावेण तासिं

शंका—यहां पर योगस्थानोंका गुणकार एक समय कम दो आवलिप्रमाण क्यों नहीं है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि उच्छिष्टावलिके भीतर एक समय कम आवलिमात्र गुणश्रेणि गोपुच्छाओंके असंख्यात समयप्रबद्धप्रमाण होते हुए नवकबन्धकी प्रधानता नहीं है।

❀ क्रोधसंज्वलनके उदयके व्युच्छिन्न होने पर जो प्रथम आवलि है उसमें गुणश्रेणि प्रविष्ट होती है।

§ ४३४. **शंका**—क्रोधसंज्वलनके उदयके व्युच्छिन्न होने पर जो प्रथम आवलि है उसमें गुणश्रेणि किसलिए प्रविष्ट हुई है ?

समाधान—नहीं, अपने उदयकालसे प्रथम स्थितिको एक आवलिप्रमाण अधिक किया है।

शंका—ऐसा किसलिए करते हैं ?

समाधान—स्वाभाविकरूपसे ऐसा करते हैं ?

❀ उस आवलिके चरम समयमें एक स्पर्धक होता है।

§ ४३५. क्योंकि पहलेके एक समय कम आवलिमात्र उत्कृष्ट समयप्रबद्धोंसे यहां पर असंख्यातगुणे समयप्रबद्ध उपलब्ध होते हैं।

शंका—यहां पर प्रकृति, विकृति और अपूर्वकरण गुणश्रेणि गोपुच्छाएं नहीं हैं, एक मात्र अनिवृत्तिकरण गुणश्रेणिगोपुच्छा ही है, क्योंकि द्वितीय स्थितिके प्रदेशसत्कर्मका अपकर्षण करके अन्तरमें गुणश्रेणि की गई है, इसलिए यह उनसे असंख्यातगुणी नहीं बनती ?

समाधान—ऐसा निश्चय करना ठीक नहीं है, क्योंकि प्रकृति, विकृति और अपूर्वकरण गुणश्रेणि गोपुच्छाओंसे अनिवृत्तिकरण गुणश्रेणि असंख्यातगुणी होनेसे यहां उनकी प्रधानता नहीं है।

पाहणियाभावादो। एदस्स फद्दयस्स जहण्णट्ठाणमादिं कादूण जाव एदस्सेव फद्दयस्स उक्कस्सट्ठाणं ति ताव असंखेज्जाणं सांतरट्ठाणाणं परूवणा कायव्वा। अणंताणि ट्ठाणाणि एत्थ किं ण होंति? ण, पगदिगोउच्छाए अभावेण परमाणुत्तरकमेण पदेसउड्ढीए अभावादो। ण च अणियट्टिगुणसेढीए उड्ढी अत्थि, खविदगुणिदकम्मंसियअणियट्टीसु परिणामभेदाभावादो। तम्हा एत्थ आवलियमेत्तजहण्णजोगेण बद्धसमयपबद्धे घेत्तूण जोगट्ठाणाणि चरिमादिफालीओ च अस्सिदूण जोगट्ठाणेहिंतो असंखेज्जगुणमेत्तपदेससंतकम्मट्ठाणाणि उप्पादेदव्वाणि।

❀ दुचरिमसमए अण्णं फद्दयं।

§ ४३६. पुव्विल्लउक्कस्सफद्दयादो एदस्स जहण्णफद्दयस्स अणंताणि ट्ठाणाणि अंतरिय अवट्ठिदत्तादो। केत्तियमेत्तमेत्थ अंतरं? असंखेज्जसमयपबद्धमेत्तं। अणियट्टिचरिमगुणसेढिसीसयादो पुव्विल्लादो एत्थतणअणियट्टिगुणसेढिसीसयं सरिसं ति अवणिय समयाहियावलियमेत्तजहण्णसमयपबद्धब्भहियअणियट्टिदुचरिमगुणसेढि-गोउच्छादो आवलियमेत्तुक्कस्ससमयपबद्धेसु सोहिदेसु सुद्धसेसम्मि असंखेज्जसमयपबद्धाण-मुवलंभादो। पुणो एदं जहण्णट्ठाणमादिं कादूण असंखेज्जजोगट्ठाणमेत्ताणं पदेससंतकम्मट्ठाणाणं परूवणा कायव्वा।

इस स्पर्धकके जघन्य स्थानसे लेकर इसी स्पर्धकके उत्कृष्ट स्थानके प्राप्त होने तक असंख्यात सान्तर स्थानोंका कथन करना चाहिए।

शंका—यहां पर अनन्त स्थान क्यों नहीं होते?

समाधान—नहीं, क्योंकि प्रकृतिगोपुच्छाका अभाव होनेके कारण एक एक परमाणु अधिक क्रमसे यहाँ पर प्रदेशवृद्धिका अभाव है, इसलिए यहां पर आवलिमात्र जघन्य योगसे बन्धको प्राप्त हुए समयप्रबद्धोंको ग्रहण कर योगस्थानों और अन्तिम फालिका आश्रय कर योगस्थानोंसे असंख्यातगुणे प्रदेशसत्कर्मस्थान उत्पन्न करने चाहिए।

❀ द्विचरम समयमें अन्य स्पर्धक होता है।

§ ४३६. क्योंकि पहलेके उत्कृष्ट स्पर्धकसे इस जघन्य स्पर्धकके अनन्त स्थानोंका अन्तर देकर अवस्थित है।

शंका—यहां पर कितनामात्र अन्तर है।

समाधान—असंख्यात समयमात्र अन्तर है, क्योंकि अनिवृत्तिकरणके पहलेके गुणश्रेणिशीर्षकसे यहां का अनिवृत्तिकरण गुणश्रेणिशीर्षक समान है, इसलिए इसे अलग करके एक समय अधिक आवलिमात्र जघन्य समयप्रबद्ध अधिक अनिवृत्तिकरण द्विचरम गुणश्रेणिगोपुच्छामेंसे आवलिमात्र उत्कृष्ट समयप्रबद्धोंके घटाने पर जो शेष रहे उसमें असंख्यात समयप्रबद्ध उपलब्ध होते हैं।

पुनः इस जघन्य स्थानसे लेकर असंख्यात योगस्थानमात्र प्रदेशसत्कर्मस्थानोंका कथन करना चाहिए।

❀ एवमावलियसमयूणमेत्ताणि फद्दयाणि ।

§ ४३७. उच्छिट्ठावलियाए अंतो समयूणावलियमेत्ताणि चेव फद्दयाणि होंति, पढमगुणसेढिगोउच्छाए त्थिउक्कसंकमेण माणागारेण परिणयत्तादो। एदेसिं फद्दयाणं जहण्णफद्दयमादिं कादूण जाउक्कस्सफद्दयं ति ताव जोगट्ठाणेहिंतो असंखेज्जगुणसांतरट्ठाणाणं परूवणा पुव्वं व कायव्वा, विसेसाभावादो।

*** चरिमसमयकोधवेदयस्स खवयस्स चरिमसमयअणिल्लेविदं खंडयं होदि।**

§ ४३८. जहा सवेददुचरिमसमए पुरिसवेदस्स चरिमट्ठिदिखंडयं चरिमसमयअणिल्लेविदं जादं तहा एत्थ ण होदि। किं तु चरिमसमयकोधवेदयस्स खवगस्स चरिमसमयअणिल्लेविदं चरिमट्ठिदिखंडयं होदि। कुदो? साहावियादो।

❀ तस्स जहण्णसंतकम्ममादिं कादूण जाव ओघुक्कस्सं कोधसंजलणस्स संतकम्मं ति एदमेगं फद्दयं।

§ ४३९. तस्स चरिमसमयकोधेण विसेसिदजीवस्स जं कोधजहण्णसंतकम्मं तमादिं कादूण जाव ओघुक्कस्सदव्वं ति एदमेगं फद्दयं ति उत्ते खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण अधापवत्तकरणचरिमसमयावट्ठिदखवगस्स जहण्णदव्वमादिं कादूणे त्ति घेत्तव्वं, हेट्ठोवरि जहण्णत्ताणुवलंभादो। एदस्स गहणं होदि त्ति कुदो णव्वदे? तस्से त्ति

❀ इस प्रकार एक समय कम आवलिमात्र स्पर्धक होते हैं।

§ ४३७. उच्छिष्टावलिके भीतर एक समय कम आवलिमात्र ही स्पर्धक होते हैं, क्योंकि प्रथम गुणश्रेणिगोपुच्छा स्तिवुक संक्रमण के द्वारा मानरूपसे परिणत हुई है। इन स्पर्धकोंके जघन्य स्पर्धकसे लेकर उत्कृष्ट स्पर्धक तक योगस्थानोंसे असंख्यातगुणे सान्तर स्थानोंकी प्ररुपणा पहलेके समान करनी चाहिए, क्योंकि कोई विशेषता नहीं है।

❀ चरम समयवर्ती क्रोधवेदक क्षपकके चरम समयमें अनिर्लेपित काण्डक होता है।

§ ३४८. जिस प्रकार सवेदभागके द्विचरम समयमें पुरुषवेदका चरम स्थितिकाण्डक चरम समयमें अनिर्लेपित हुआ उस प्रकार यहाँ पर नहीं होता है, किन्तु चरम समयवर्ती क्रोधवेदक क्षपकके चरम समयमें अनिर्लेपित चरम स्थितिकाण्डक होता है, क्योंकि ऐसा होना स्वाभाविक है।

❀ उसके जघन्य सत्कर्मसे लेकर क्रोधसंज्वलनके ओघ उत्कृष्ट सत्कर्म तक यह एक स्पर्धक होता है।

§ ४३९. उसके अर्थात् चरम समयमें क्रोधसे युक्त जीवके जो क्रोधका जघन्य सत्कर्म है उससे लेकर ओघ उत्कृष्ट द्रव्यके प्राप्त होने तक यह एक स्पर्धक है ऐसा कहने पर क्षपित कर्मांशिक लक्षणोंसे आकर अधःप्रवृत्तकरणके चरम समयमें स्थित क्षपकके जघन्य द्रव्यसे लेकर ऐसा ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि नीचे और ऊपर जघन्यपना उपलब्ध नहीं होता है।

शंका—इसका ग्रहण होता है यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

वयणेण खवगजीवदव्वगहणादो। समयूणावलियमेत्तउक्कस्सफद्दएहिंतो जदि वि चरिमफालिदव्वं असं०गुणं तो वि चरिमफालिजहण्णदव्वादो चरिमसमयअधापवत्तकरणजहण्णदव्वं संखे०गुणहीणं ति कट्टु एदं फद्दयस्सादीए कायव्वं। पुणो एदं परमाणुत्तरकमेण वड्ढावेदव्वं जाव पंचगुणं होदूण कोधसंजलणचरिमफालिदव्वेण सह सरिसं जादं ति। पुणो पुव्विल्लं दव्वं मोत्तूण इमं चरिमफालिदव्वं घेत्तूण परमाणुत्तरकमेणवड्ढाविय ओदारेदव्वं जाव पुरिसवेद-च्छण्णोकसायाणं चरिमफालीओ पडिच्छिदूण ट्ठिदपढमसमओ त्ति। पुणो तत्थ ट्ठविय चत्तारि पुरिसे अस्सिदूण परमाणुत्तरकमेण पंचहि वड्ढीहि वड्ढावेदव्वं जाव ओघुक्कस्सं कोधसंजलणस्स संतकम्मं ति।

❀ जहा कोधसंजलणस्स तहा माण-मायासंजलणाणं।

§ ४४०. जहा कोधसंजलणस्स जहण्णट्ठाणप्पहुडि जाव उक्कस्सपदेससंतकम्मट्ठाणं ति सव्वसंतकम्मट्ठाणाणं सामित्तपरूवणा कदा तहा माण-मायासंजलणाणं सव्वसंतकम्मट्ठाणाणं सामित्तपरूवणा कायव्वा, विसेसाभावादो। णवरि अधापवत्तचरिमसमए सगसगजहण्णदव्वं जहाकमेण छग्गुणं सत्तगुणं वड्ढाविय अप्पप्पणो जहण्णचरिमफालियाहि सरिसं करिय पुणो पुव्विल्लदव्वं मोत्तूण सगसगजहण्णचरिमफालिदव्वं घेत्तूण ओदारेदव्वं जाव परिवाडीए कोध-माणसंजलणाण चरिमफालीओ पडिच्छिद-

---

समाधान—क्योंकि 'तस्स' इस वचनसे क्षपक जीवके द्रव्यका ग्रहण हुआ है।

एक समय आवलिमात्र उत्कृष्ट स्पर्धकोंसे यद्यपि चरम फालिका द्रव्य असंख्यातगुणा है तो भी चरम फालिके जघन्य द्रव्यसे चरम समयवर्ती अधःप्रवृत्तकरणका जघन्य द्रव्य संख्यातगुणा हीन है ऐसा मानकर स्पर्धकके आदिमें करना चाहिए। पुनः इसे एक एक परमाणु अधिकके क्रमसे पाँच गुणा होकर क्रोध संज्वलनके चरम फालि द्रव्यके साथ समान होने तक बढ़ाना चाहिए। पुनः पहलेके द्रव्यको छोड़कर इस चरम फालिके द्रव्यको ग्रहणकर एक एक परमाणु अधिकके क्रमसे बढ़ाकर पुरुषवेद और छह नोकषायोंकी चरम फालियोंको संक्रमित कर स्थित हुए प्रथम समय तक उतारना चाहिए। पुनः वहां पर स्थापित कर चार पुरुषोंका आश्रय कर एक एक परमाणु अधिकके क्रमसे पाँच वृद्धियोंके द्वारा क्रोधसंज्वलनके ओघ उत्कृष्ट सत्कर्मके प्राप्त होने तक बढ़ाना चाहिए।

❀ जिस प्रकार क्रोधसंज्वलनके सत्कर्मस्थानोंका स्वामित्व कहा है उस प्रकार मान और मायासंज्वलनके सत्कर्मस्थानोंका स्वामित्व कहना चाहिए।

§ ४४०. जिस प्रकार क्रोधसंज्वलनके जघन्य स्थानोंसे लेकर उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मस्थानके प्राप्त होने तक सत्कर्मस्थानोंके स्वामित्वकी प्ररूपणा की है उस प्रकार मान संज्वलन और माया संज्वलनके सब सत्कर्मस्थानोंके स्वामित्वकी प्ररूपणा करनी चाहिए, क्योंकि उससे इस प्ररूपणामें कोई विशेषता नहीं है। इतनी विशेषता है कि अधःप्रवृत्तकरणके चरम समयमें अपने अपने जघन्य द्रव्यको यथाक्रमसे छहगुना और सातगुना बढ़ाकर अपनी अपनी जघन्य फालियोंके द्वारा सदृश करके पुनः पहलेके द्रव्यको छोड़कर अपने अपने जघन्य फालिके द्रव्यको ग्रहणकर परिपाटी क्रमसे क्रोध और मानसंज्वलनकी चरम फालियोंके

पढमसमओ त्ति । पुणो तत्थ ट्ठविय चत्तारि पुरिसे अस्सिदूण परमाणुत्तरकमेण वड्ढावेदव्वं जाव माण-मायासंजलणाणमोघुक्कस्सदव्वं ति ।

❀ लोभसंजलणस्स जहण्णगं पदेससंतकम्मं कस्स ?

§ ४४१. सुगमं ।

❀ अभवसिद्धियपाओग्गेण जहण्णगेण कम्मेण तसकायं गदो। तम्मि संजमासंजमं संजमं च बहुवारं लद्धाउओ। कसाए ण उवसामिदाउओ। तदो कमेण मणुस्सेसुववण्णो। दीहं संजमद्धं अणुपालेदूण कसायक्खवणाए अब्भुट्ठिदो तस्स चरिमसमयअधापवत्तकरणे जहण्णगं लोभसंजलणस्स पदेससंतकम्मं।

§ ४४२. सम्मत्त-संजमासंजम-संजमकंडएहि विणा जं खविदकम्मंसियलक्खणेहि त्थोवीभूदं पदेससंतकम्मं तमभवसिद्धियपाओग्गं णाम, भव्वाभव्वाणं साहारणत्तादो। तेण संतकम्मेण तसकायं गदो। थावरपाओग्गं जहण्णसंतकम्मं कादूण तसकायं गदो त्ति भणिदं होदि। किमट्ठं तसकायिएसु पच्छा हिंडाविदो ? ण, सम्मत्त-संजमासंजम-संजमगुणसेढिणिज्जराहि तद्दव्वक्खवणट्ठं तत्थुप्पाइयत्तादो। जदि एवं तो

संक्रमित होनेके प्रथम समयतक उतारना चाहिए। पुनः वहां पर स्थापितकर चार पुरुषोंका आश्रय कर एक एक परमाणु अधिकके क्रमसे मानसंज्वलन और मायासंज्वलनके ओघ उत्कृष्ट द्रव्यके प्राप्त होने तक बढ़ाना चाहिए।

❀ लोभसंज्वलनका जघन्य प्रदेशसत्कर्म किसके होता है।

§ ४४१. यह सूत्र सुगम है।

❀ जो अभव्योंके योग्य जघन्य कर्मके साथ त्रसकायको प्राप्त हुआ। वहां पर संयमासंयम और संयमको बहुत बार प्राप्त किया। किन्तु कषायोंको उपशमित नहीं किया। उसके बाद क्रमसे मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ। वहां पर दीर्घ कालतक संयमका पालन कर कषायोंकी क्षपणाके लिये उद्यत हुआ उसके अधःप्रवृत्तकरणके चरम समयमें लोभसंज्वलनका जघन्य प्रदेशसत्कर्म होता है।

§ ४४२. सम्यक्त्वकाण्डक, संयमासंयमकाण्डक और संयमकाण्डकोंके बिना जो क्षपितकर्मांशिकलक्षणसे प्रदेशसत्कर्म स्तोक हो जाता है उस प्रदेशसत्कर्मकी अभव्यप्रायोग्य संज्ञा है, क्योंकि यह भव्य और अभव्य दोनोंमें साधारण है। उस सत्कर्मके साथ त्रसकायको प्राप्त हुआ। स्थावरोंके योग्य जघन्य सत्कर्म करके त्रसकायको प्राप्त हुआ यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

शंका—त्रसकायिक जीवोंमें बादमें किसलिए घुमाया ?

समाधान—नहीं, क्योंकि सम्यक्त्व, संयमासंयम और संयम गुणश्रेणिनिर्जराओंके द्वारा उस द्रव्यका क्षपण करनेके लिए वहां पर उत्पन्न कराया है।

कसाया तेण किं ण उवसामिदा ? ण, तत्थ गुणसेढीए णिज्जरिज्जमाणदव्वादो लोभ-संजलणस्स आगच्छमाणदव्वस्स बहुत्तुवलंभादो। ओकड्डणभागहारादो अधापवत्तभागहारो असं०गुणो त्ति आयादो वओ तत्थ असं०गुणो किं ण जायदे ? ण, ओकड्डिददव्वस्स असं०भागमेत्तदव्वस्सेव गुणसेढिसरूवेण रयणुवलंभादो। किं च वयादो आओ असं०-गुणो, अपुव्वकरणपढमसमयप्पहुडि जावाणुपुव्विसंकमपढमसमओ त्ति इत्थि-णउंसय-वेद-छण्णोकसायदव्वस्स गुणसंकमेण लोभसंजलणम्मि संकंतिदंसणादो। जेणेवमुवसम-सेढिं चडमाणजीवलोभसंजलणदव्वस्स वड्डी चेव तेण कसाया सकिं पि ण उवसामिदा त्ति सुहासियं। एवं सेससुत्तावयवाणं पि जाणिदूण अत्थपरूवणा कायव्वा।

❀ एदमादिं काढूण जावुक्कस्सयं संतकम्मं णिरंतराणि ट्ठाणाणि।

§ ४४३. एदस्स जहण्णदव्वस्सुवरि परमाणुत्तरादिकमेण वड्डावेदव्वं जाव णिज्जराए ऊणपढमसमयअपुव्वकरणम्मि संचिददव्वं ति। ण तत्थ संचओ असिद्धो, अधापवत्तसंजदगुणसेढिणिज्जरादो गुणसंकमेण अपुव्वकरणपढमसमए आगय-दव्वस्स असं०गुणत्तुवलंभादो। एवं वड्डिदूण ट्ठिदेण सह पढमसमयापुव्वकरणस्स लोभसंजलणदव्वं सरिसं। संपहि एदेण कमेण वड्डाविय उवरि चडावेदव्वं जाव मायादव्वं पडिच्छिदूण ट्ठिदपढमसमओ त्ति। पुणो तत्थ ट्ठविय चत्तारि पुरिसे

शंका—यदि ऐसा है तो उसके द्वारा कषायोंका उपशम क्यों नहीं कराया गया।

समाधान—नहीं, क्योंकि वहां पर गुणश्रेणिके द्वारा निर्जराको प्राप्त होनेवाले द्रव्यसे लोभसंज्वलनको प्राप्त होनेवाला द्रव्य बहुत होता है।

शंका—अपकर्षणभागहारसे अधःप्रवृत्तभागहार असंख्यातगुणा है, इसलिए वहाँ पर आयसे व्यय असंख्यातगुणा क्यों नहीं हो जाता है।

समाधान—नहीं, क्योंकि अपकर्षणको प्राप्त हुए द्रव्यका असंख्यातवां भागमात्र द्रव्य ही गुणश्रेणिरूपसे रचनाको प्राप्त होता है। दूसरे व्ययसे आय असंख्यातगुणी होती है, क्योंकि अपूर्वकरणके प्रथम समयसे लेकर आनुपूर्वीसंक्रमके प्रथम समय तक स्त्रीवेद, नपुंसकवेद और छह नोकषायोंके द्रव्यका गुणसंक्रमण देखा जाता है। चूंकि इस प्रकार उपशमश्रेणि पर चढ़नेवाले जीवके लोभ संज्वलनके द्रव्यकी वृद्धि ही होती है, इसलिए कषायोंका उपशम नहीं कराया है ऐसा जो कहा है वह ठीक ही कहा है।

इस प्रकार सूत्रके शेष पदोंकी भी जानकर प्ररूपणा करनी चाहिए।

❀ इससे लेकर उत्कृष्ट सत्कर्मके प्राप्त होने तक निरन्तर स्थान होते हैं।

§ ४४३. इस जघन्य द्रव्यके ऊपर एक एक परमाणु अधिकके क्रमसे निर्जरासे रहित अपूर्वकरणके प्रथम समयमें सञ्चित हुए द्रव्यके प्राप्त होने तक बढ़ाना चाहिए। और वहां पर सञ्चय असिद्ध नहीं है, क्योंकि अधःप्रवृत्तसंयत गुणश्रेणि निर्जरासे गुणसंक्रमके द्वारा अपूर्वकरणके प्रथम समयमें आया हुआ द्रव्य असंख्यातगुणा उपलब्ध होता है। इस प्रकार बढ़ कर स्थित हुए द्रव्यके साथ प्रथम समयवर्ती अपूर्वकरण लोभसंज्वलनसम्बन्धी द्रव्य समान है। अब इस क्रमसे बढ़ाकर मायाके द्रव्यको संक्रमित कर स्थित हुए प्रथम समयके प्राप्त होने तक ऊपर चढ़ाना चाहिए। पुनः वहाँ पर स्थापित कर चार पुरुषोंका आश्रय कर

अस्सिदूण परमाणुत्तरकमेण पंचहि वड्ढीहि वड्ढावेदव्वं जाव अप्पणो उक्कस्सदव्वं पत्तं ति। अधवा अधापवत्तकरणचरिमसमयदव्वं परमाणुत्तरादिकमेण वड्ढावेदव्वं जाव अट्ठगुणं जादं ति। ताधे एदं दव्वं पडिच्छिदमायासंजलणलोभदव्वेण सरिसं ति पुव्विल्लदव्वं मोत्तूण एदं घेत्तूण पंचहि वड्ढीहि ट्ठाणपरूवणा कायव्वा। अधवा अधापवत्तचरिमसमयजहण्णदव्वं किंचूणमट्ठगुणं वड्ढाविय पुणो चरिमसमयसुहुमसांपराइय-दव्वेण सरिसं जादं ति एदं मोत्तूण चरिमसमयसुहुमसांपराइयदव्वं घेत्तूण खविदगुणिदे अस्सिदूण देसूणपुव्वकोडिविसयकालपरिहाणीए कीरमाणाए जहा वेयणाए मोहणीयस्स कदा तहा कायव्वा। णवरि संतकम्मे ओदारिज्जमाणे सुहुमसांपराइयचरिमसमयप्पहुडि ओदारेदव्वं जाव मायासंजलणं पडिच्छिदपढमसमओ त्ति। पुणो तत्थ ट्ठविय परमाणुत्तरकमेण वड्ढावेदव्वं जाव लोभसंजलणस्स उक्कस्सदव्वं ति।

❀ छण्णोकसायाणं जहण्णयं पदेससंतकम्मं कस्स।

§ ४४४. सुगमं।

❀ अभवसिद्धियपाओग्गेण जहण्णएण कम्मेण तसेसु आगदो। तत्थ संजमासंजमं संजमं च बहुसो लद्धो। चत्तारि वार कसाये उवसामेदूण तदो कमेण मणुसो जादो। तत्थ दीहं संजमद्धं कादूण खवणाए अब्भुट्ठिदो

एक एक परमाणु अधिकके क्रमसे पाँच वृद्धियोंके द्वारा अपने उत्कृष्ट द्रव्यके प्राप्त होने तक बढ़ाना चाहिए। अथवा अधःप्रवृत्तकरणके चरम समयके द्रव्यको एक एक परमाणु अधिकके क्रमसे आठगुणे होने तक बढ़ाना चाहिए। उस समय यह द्रव्य मायासंज्वलनके संक्रमणके बाद प्राप्त हुए लोभ संज्वलनके द्रव्यके समान होता है, इसलिए पहलेके द्रव्यको छोड़कर और इस द्रव्यको ग्रहण कर पाँच वृद्धियोंके द्वारा स्थानोंकी प्ररूपणा करनी चाहिए। अथवा अधःप्रवृत्तकरणके चरम समयके जघन्य द्रव्यको कुछ कम आठ गुणा बढ़ाकर चरम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिकके द्रव्यके समान हो गया इसलिए इसे छोड़कर चरम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिकके द्रव्यको ग्रहण कर क्षपित और गुणित विधिका आश्रय कर कुछ कम पूर्वकोटिके विषयरूप कालसे हीन करने पर जिस प्रकार वेदना अनुयोगद्वारमें मोहनीयका किया है उस प्रकार करना चाहिए। इतनी विशेषता है कि सत्कर्मके उतारने पर सूक्ष्म-साम्परायिकके अन्तिम समयसे लेकर मायासंज्वलनको संक्रमित कर प्राप्त हुए प्रथम समय तक उतारना चाहिये। पुनः वहाँ पर स्थापित कर एक एक परमाणु अधिकके क्रमसे लोभ-संज्वलनके उत्कृष्ट द्रव्यके प्राप्त होने तक बढ़ाना चाहिए।

❀ छह नोकषायोंका जघन्य प्रदेशसत्कर्म किसके होता है।

§ ४४४. यह सूत्र सुगम है।

❀ अभव्योंके योग्य जघन्य सत्कर्मके साथ त्रसोंमें आया। वहां पर संयमासंयम और संयमको अनेक बार प्राप्त किया। चार बार कषायोंका उपशम कर अनन्तर क्रमसे मनुष्य हुआ। वहां पर दीर्घ संयमकालको करके क्षपणाके लिए उद्यत हुआ

तस्स चरिमसमयट्ठिदिक्खंडए चरिमसमयअणिल्लेविदे छण्णं कम्मंसाणं जहण्णयं पदेससंतकम्मं ।

§ ४४५. एइंदियपाओग्गसव्वजहण्णसंतकम्मग्गहणट्ठं अभवसिद्धियपाओग्गणिद्देसो कदो। तस्स जहण्णदव्वस्स असं०गुणाए सेढीए समयं पडि पदेसगालणट्ठं संजमासंजमं संजमं च बहुसो लद्धो त्ति णिद्देसो कदो। संजमासंजम-संजमगुणसेढिणिज्जराहिंतो पडिसमयमसंखेज्जगुणाए सेढीए कम्मणिज्जरणट्ठं गुणसंकमेण सगपदेसे परसरूवेण संकामणट्ठं च चत्तारिवारं कसाया उवसामिदा। पुव्विल्लासेसगुणसेढिहि दीहेण वि कालेण णिज्जरिददव्वादो असं०गुणदव्वणिज्जरणट्ठं खवणाए अब्भुट्ठाविदो। चरिमट्ठिदिखंडगस्स दुचरिमादिफालीओ गालिय चरिमफालिगहणट्ठं चरिमट्ठिदिखंडगे चरिमसमयअणिल्लेविदे त्ति भणिदं। एवमेदीए किरियाए णिप्पण्णछण्णोकसायाणं जहण्णयं पदेससंतकम्मं होदि।

❀ **तदादियं जाव उक्कस्सियादो एगमेव फद्दयं ।**

§ ४४६. एत्थ एगं चेव फद्दयं, जहण्णदव्वे परमाणुत्तरकमेण जाव चरिमसमयणेरयियउक्कस्सदव्वं ति वड्ढमाणे विरहाभावादो। एवमोघजहण्णगं समत्तं।

§ ४४७. संपहि चुण्णिसुत्तसामित्तपरूवणं करिय उच्चारणाइरियसामित्तपरूवणं कस्सामो। जहण्णए पयदं। दुवि०—ओघे० आदे०। ओघे० मिच्छत्त० जह० पदेस०

उसके चरम समयवर्ती स्थितिकाण्डकके चरमसमयमें अनिर्लेपित रहते हुए छह नोकषायोंका जघन्य प्रदेशसत्कर्म होता है।

§ ४४५. एकेन्द्रियोंके योग्य सबसे जघन्य सत्कर्मका ग्रहण करनेके लिए अभव्यसिद्ध-प्रायोग्य पदका निर्देश किया है। उस जघन्य द्रव्यके असंख्यातगुणी श्रेणिरूपसे प्रत्येक समयमें प्रदेशोंको गलानेके लिए संयमासंयम और संयमको अनेक बार प्राप्त किया ऐसा निर्देश किया है। संयमासंयम और संयम गुणश्रेणिनिर्जराओंसे प्रत्येक समयमें असंख्यातगुणी श्रेणिरूपसे कर्मोंकी निर्जरा करनेके लिए और गुणसंक्रमणके द्वारा अपने प्रदेशोंका पररूपसे संक्रमण करानेके लिए चार बार कषायोंका उपशम कराया है। पहलेकी समस्त गुणश्रेणियोंके द्वारा बहुत बड़े कालमें भी होनेवाली निर्जराके द्रव्यसे असंख्यातगुणे द्रव्यकी निर्जरा करानेके लिए क्षपणाके लिए उद्यत कराया है। चरम स्थितिकाण्डककी द्विचरम आदि फालियोंको गला कर चरम फालिका ग्रहण करनेके लिए चरम स्थितिकाण्डकके चरम समयमें अनिर्लेपित रहने पर ऐसा कहा है। इस प्रकार इस क्रिया द्वारा उत्पन्न हुआ छह नोकषायोंका जघन्य प्रदेशसत्कर्म होता है।

❀ **उससे लेकर उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मके प्राप्त होने तक एक ही स्पर्धक होता है।**

§ ४४६. यहाँ पर एक ही स्पर्धक है, क्योंकि जघन्य द्रव्यके एक एक परमाणु अधिकके क्रमसे चरम समयवर्ती नारकीके उत्कृष्ट द्रव्य तक बढ़ने पर बीचमें अन्तरालका अभाव है।

इस प्रकार ओघ जघन्य स्वामित्व समाप्त हुआ।

§ ४४७. अब चूर्णिसूत्रसम्बन्धी स्वामित्वका कथन करके उच्चारणाचार्यके अनुसार स्वामित्वका कथन करते हैं। जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्वका जघन्य प्रदेशसत्कर्म किसके होता है? जो अन्यतर क्षपित

कस्स ? अण्णदरो जो खविदकम्मंसिओ तसेसु आगदो। संजमासंजमं संजमं च बहुसो लद्धो। चत्तारिवारे कसाए उवसामेदूण एइंदिए गदो। तत्थ पलिदोवमस्स असं०भागेण कालेण उवसामगसमयपबद्धे णिज्जरिदूण पुणो तसेसु आगंतूण बेच्छावट्ठीओ सम्मत्तमणुपालेदूण तदो दंसणमोहणीयं खवेदि। अपच्छिमं ट्ठिदिखंडयं अवणिज्जमाणमवणियं उदयावलियाए जं तं गलमाणं गलिदं। जाधे एक्किस्से ट्ठिदीए दुसमयकालट्ठिदिगं सेसं ताधे मिच्छत्तस्स जहण्णयं पदेससंतकम्मं। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमेसेव जीवो मिच्छत्तं गदो। दीहाए उव्वेल्लणद्धाए उव्वल्लिदूण एया ट्ठिदी दुसमयकालट्ठिदी जस्स सेसा तस्स जहण्णिया पदेसविहत्ती। अट्ठण्हं कसायाणं जहण्णिया पदेसविहित्ती कस्स ? अण्णदर० अभवसिद्धियपाओग्गं जहण्णसंतं काऊण तसेसु आगदो। संजमासंजमं संजमं च बहुसो लद्धूण चत्तारिवारे कसाए उवसामेदूण एइंदियं गदो। तत्थ पलि० असं०भागमच्छिदूण तसेसु आगदो। कसाए खवेदि। तस्स पच्छिमे ट्ठिदिखंडए अवगदे आवलियपविट्ठं गलमाणं गलिदं। एया ट्ठिदी दुसमयकालट्ठिदी सेसं तस्स जहण्णयं पदेससंतकम्मं। अणंताणु०चउक्क० एवं चेव। णवरि चत्तारिवारे कसाए उवसामेदूण अणंताणु० विसंजोएदूण पुणो संजोएदो सव्वलहुं पुणो वि सम्मत्तं पडिवण्णो। बेच्छावट्ठीओ सम्मत्तमणुपालेदूण अणंताणुबंधिविसंजोएंतस्स जस्स एया ट्ठिदी दुसमयकालट्ठिदी सेसा तस्स जहण्णयं पदेससंतकम्मं। णवुंस० जह०

कर्मांशिक जीव त्रसोंमें आया। वहाँ संयमासंयम और संयमको बहुत बार प्राप्त किया। चार बार कषायोंका उपशम कर एकेन्द्रियोंमें चला गया। वहाँ पल्यके असंख्यातवें भाग-प्रमाण कालके द्वारा उपशामकसम्बन्धी समयप्रबद्धोंकी निर्जरा कर पुनः त्रसोंमें आकर दो छयासठ सागर काल तक सम्यक्त्वका पालन कर अनन्तर दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करता हुआ अपनीयमान अन्तिम स्थितिकाण्डकका अपनयन कर उदयावलिमें जो गलमान है उसका गालन कर दिया। किन्तु जब एक स्थितिमें दो समय काल स्थितिवाला प्रदेशसत्कर्म शेष है तब मिथ्यात्वका जघन्य प्रदेशसत्कर्म होता है। इसी जीवके मिथ्यात्वको प्राप्त होकर दीर्घ उद्वेलना कर जब सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी दो समय कालवाली एक स्थिति शेष रहती है तब उसके उनकी जघन्य प्रदेशविभक्ति होती है। आठ कषायोंकी जघन्य प्रदेशविभक्ति किसके होती है ? जो अन्यतर जीव अभव्योंके योग्य जघन्य सत्कर्म करके त्रसोंमें आया। वहां संयमासंयम और संयमको बहुत बार प्राप्त कर और चार बार कषायोंको उपशमा कर एकेन्द्रियोंमें गया। वहां पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण काल तक रहकर त्रसोंमें आया और कषायोंका क्षय किया। उसके अन्तिम स्थितिकाण्डकके चले जाने पर आवलिके भीतर प्रविष्ट हुआ द्रव्य गलता हुआ गला, जब दो समय कालप्रमाण स्थितिवाली एक स्थिति शेष रही तब उसके उक्त आठ कर्मोंका जघन्य प्रदेशसत्कर्म होता है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कके जघन्य प्रदेशसत्कर्मका स्वामित्व इसी प्रकार है। इतनी विशेषता है कि चार बार कषायोंको उपशमा कर और अनन्तानुबन्धीचतुष्कका बन्ध कर पुनः संयुक्त होकर अतिशीघ्र फिर भी सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ और दो छयासठ सागर काल तक सम्यक्त्वका पालन कर अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करनेवाले जिसके दो समय कालवाली एक स्थिति शेष है उसके अनन्तानुबन्धीचतुष्कका जघन्य

कस्स ? अण्ण० खविदकम्मंसिओ अभवसिद्धियपाओग्गेण जहण्णेण संतकम्मेण तसेसु आगदो। सम्मत्तं संजमं संजमासंजमं च बहुसो लद्धूण चत्तारिवारं कसाए उवसामेदूण बेच्छाहीओ सम्मत्तमणुपालेदूण खवेदुमाढत्तो। णउंसयवेदस्स अपच्छिमं ट्ठिदिखंडयं संच्छुहमाणं संच्छुद्धं। उदओ णवरि सेसो। तस्स चरिमसमयणउंसयस्स जहण्णयं पदेससंतकम्मं। एवं चेव इत्थिवेदस्स। पुरिसवेद० जह० पदेस० चरिमसमयपुरिसेण घोलमाणजहण्णजोगट्ठाणे वट्टमाणेण जं बद्धं चरिमसमयअसंकामिदं तस्स जहण्णयं पदेससंतकम्मं। कोधसंज० जह० पदेसवि० कस्स ? चरिमसमयकोधवेदगे खवगेण जहण्णेण जोगट्ठाणेण बद्धं तं जं वेलं चरिमसमयअणिल्लेविदं तस्स जहण्णयं पदेससंतकम्मं। एवं माण-मायाणं। लोभसंज० जह० कस्स ? अण्ण० अभवसिद्धियपाओग्गेण जहण्णएण कम्मेण तसकायं गदो। तम्मि सम्मत्तं संजमं संजमासंजमं च बहुसो लहिदाउओ। सकिं पि कसाए ण उवसामिदाओ। कसायक्खवणाए अब्भुट्ठिदो तस्स अधापवत्तकरणचरिमसमए जहण्णयं लोभसंजलणस्स संतकम्मं। छण्णोकसायाणं जह० पदे०वि० कस्स ? अण्ण० खविदकम्मंसिओ तसेसु आगदो। तत्थ संजमासंजमं संजमं सम्मत्तं च बहुसो लद्धाउओ। चत्तारिवारे कसाए उवसामेदूण कसायक्खवणाए अब्भुट्ठिदो तस्स चरिमे ट्ठिदिखंडए चरिमसमयअणिल्लेविदे छण्णं

प्रदेशसत्कर्म होता है। नपुंसकवेदका जघन्य प्रदेशसत्कर्म किसके होता है ? जो अन्यतर क्षपितकर्मांशिक जीव अभव्योंके योग्य जघन्य प्रदेशसत्कर्मके साथ त्रसोंमें आया। सम्यक्त्व, संयम और संयमासंयमको बहुत बार प्राप्त कर तथा चार बार कषायोंको उपशमाकर दो छयासठ सागर काल तक सम्यक्त्वको पाल कर क्षय करनेके लिए उद्यत हुआ। अन्तिम स्थितिकाण्डकका संक्रमण करते हुए संक्रमण किया। जब उदय शेष रहा तब उसके चरम समयमें नपुंसकवेदका जघन्य प्रदेशसत्कर्म होता है। इसी प्रकार स्त्रीवेदके जघन्य प्रदेशसत्कर्मका स्वामी जानना चाहिए। पुरुषवेदका जघन्य प्रदेशसत्कर्म किसके होता है ? जघन्य योगस्थानमें विद्यमान चरम समयवर्ती पुरुषने जो बन्ध किया तथा चरम समयमें संक्रमित नहीं किया उसके पुरुषवेदका जघन्य प्रदेशसत्कर्म होता है। क्रोधसंज्वलनका जघन्य प्रदेशसत्कर्म किसके होता है ? चरम समयमें क्रोधका वेदन करनेवाले क्षपकने जघन्य योगस्थानका अवलम्बन लेकर बन्ध किया। फिर उसका संक्रमण करते हुए अन्तिम समयमें जब अनिर्लेपित रहता है तब उसके क्रोधसंज्वलनका जघन्य प्रदेशसत्कर्म होता है। इसी प्रकार मानसंज्वलन और मायासंज्वलनका जघन्य स्वामी जानना चाहिए। लोभसंज्वलनका जघन्य प्रदेशसत्कर्म किसके होता है ? जो अन्यतर जीव अभव्योंके योग्य जघन्य प्रदेशसत्कर्मके साथ त्रसकायको प्राप्त हुआ। वहाँ पर सम्यक्त्व, संयम और संयमासंयमको बहुत बार प्राप्त किया। एक बार भी कषायोंका उपशम नहीं किया। कषायोंके क्षयके लिए उद्यत हुआ उसके अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें लोभसंज्वलनका जघन्य प्रदेशसत्कर्म होता है। छह नोकषायोंका जघन्य प्रदेशसत्कर्म किसके होता है ? जो अन्यतर क्षपितकर्मांशिक जीव त्रसोंमें आया। वहां पर संयमासंयम, संयम और सम्यक्त्वको बहुत बार प्राप्त हुआ। चार बार कषायोंको उपशमा कर कषायोंका क्षय करनेके लिए उद्यत हुआ उसके अन्तिम

कम्मंसाणं जहण्णयं पदेससंतकम्मं ।

§ ४४८. आदेसेण० णेर० मिच्छ० जह० पदेस० वि० कस्स । जो खविदकम्मंसिओ विवरीयं गंतूण दीहाउट्ठिदिएसु उववण्णो । सव्वलहुं सव्वाहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो सव्वविसुद्धो सम्मत्तं पडिवण्णो । पुणो अणंताणुबंधिं विसंजोइत्ता दीहाउट्ठिदिं सम्मत्तमणुपालिय से काले मिच्छत्तं गाहदि त्ति तस्स जहण्णपदेसविहित्ती । एवमित्थि-णउंसयवेदाणं । णवरि मिच्छत्तं गंतूण अंतोमुहुत्ते गदे अप्पप्पणो पडिवक्खबंधगद्धा-चरिमसमए जहण्णसंतकम्मं । सम्मत्त-सम्मामि० जह० पदे०वि० कस्स ? अण्ण० जो खविदकम्मंसिओ मिच्छत्तं गदो । दीहाए उव्वेल्लणद्धाए उव्वेल्लमाणओ णेरइएसु उववण्णो तस्स एया हिदी दुसमयकालट्ठिदिसेसे जहण्णयं संतकम्मं । अणंताणु० ज० कस्स ? अण्ण० जो खविदकम्मंसिओ विवरीयं गंतूण दीहाउट्ठिदिएसु णेरइएसुववण्णो । पुणो अंतोमुहुत्तेण सम्मत्तं पडिवज्जिय अणंताणुबंधि० विसंजोइय पुणो संजुत्तो होदूण सव्वलहुं पुणो वि सम्मत्तं पडिवण्णो । तत्थ दीहं भवट्ठिदिं सम्मत्तमणुपालेदूण थोवावसेसे जीविदव्वए त्ति अणंताणुबंधि० विसंजोइदुं आढत्तो । अपच्छिमट्ठिदिखंडयं संच्छुहमाणं सच्छद्धं । उदयावलियाए गलमाणं गलिदं । जाधे एया हिदी दुसमयकालट्ठिदिसेसं तस्स जहण्णयं पदेससंतकम्मं । बारसकसाय-भय-दुगुंच्छाणं

स्थितिकाण्डकके अन्तिम समयमें अनिर्लेपित रहने पर छह नोकषायोंका जघन्य प्रदेशसत्कर्म होता है ।

§ ४४८. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्वकी जघन्य प्रदेशविभक्ति किसके होती है ? जो क्षपितकर्मांशिक जीव विपरीत जाकर दीर्घ आयुवाले नारकियोंमें उत्पन्न हुआ । अतिशीघ्र सब पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हुआ । सर्वविशुद्ध होकर सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ । पुनः अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनाकर दीर्घ आयुस्थिति काल तक सम्यक्त्वका पालन कर अनन्तर समयमें मिथ्यात्वको प्राप्त होगा उसके मिथ्यात्वकी जघन्य प्रदेशविभक्ति होती है । इसी प्रकार स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका जघन्य स्वामित्व जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वमें जाकर अन्तर्मुहूर्त जाने पर अपने अपने प्रतिपक्ष बन्धक कालके अन्तिम समयमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म होता है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका जघन्य प्रदेशसत्कर्म किसके होता है ? जो अन्यतर क्षपितकर्मांशिक जीव मिथ्यात्वमें गया । दीर्घ उद्वेलनाके द्वारा उद्वेलना करता हुआ नारकियोंमें उत्पन्न हुआ उसके दो समय कालप्रमाण स्थितिवाली एक स्थितिके शेष रहने पर जघन्य प्रदेशसत्कर्म होता है । अनन्तानुबन्धीचतुष्कका जघन्य प्रदेशसत्कर्म किसके होता है ? जो अन्यतर क्षपितकर्मांशिक जीव विपरीत जाकर दीर्घ आयुस्थितिवाले नारकियोंमें उत्पन्न हुआ । पुनः अन्तर्मुहूर्तके द्वारा सम्यक्त्वको प्राप्त कर अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना कर तथा पुनः संयुक्त होकर अतिशीघ्र फिर भी सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ । वहां दीर्घ भवस्थिति तक सम्यक्त्वका पालनकर स्तोक जीवितव्यके शेष रहने पर अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना करनेके लिये उद्यत हुआ । अन्तिम स्थितिकाण्डकका संक्रमण द्वारा संक्रमण किया । उदयावलिका क्रमसे गलन हुआ । जब दो समय कालप्रमाण स्थिति शेष रही तब उसके अनन्तानुबन्धीचतुष्कका जघन्य प्रदेशसत्कर्म होता है । बारह

जह० पदे० कस्स ? अण्ण० जो खविदकम्मंसिओ विवरीयं गंतूण णेरइएसुववण्णो तस्स पढमसमयउववण्णल्लयस्स । एवं पुरिसवेद-हस्स-रदि-अरदि-सोगाणं । णवरि अंतोमुहुत्तमुववण्णस्स पडिवक्खबंधगद्धाचरिमसमए जहण्णयं पदेससंतकम्मं । एवं सत्तमाए पुढवीए । पढमादि जाव छट्ठि त्ति एवं चेव । णवरि मिच्छत्तित्थि-णउंसयवेदाणं चरिमसमयणिप्पिदमाणस्स ।

§ ४४९. तिरिक्खगदीए तिरिक्खेसु मिच्छत्तस्स जह० पदे०वि० कस्स ? अण्ण० जो खविदकम्मंसिओ विवरीयं गंतूण तिपलिदोवमिएसु तिरिक्खेसुववण्णो । सव्वलहुं सम्मत्तं पडिवण्णो । अंतोमुहुत्तेण अणंताणुबंधिचउक्कं विसंजोएदूण तत्थ भवट्ठिदिं तिपलिदोवममणुपालेदूण चरिमसमयणिप्पिदमाणस्स जहण्णयं संतकम्मं । सम्मत्त-सम्मामिच्छत्त-बारसकसाय-सत्तणोकसायाणं णेरइयभंगो । अणंताणुबंधिचउक्क० जह० कस्स ? अण्ण० जो खविदकम्मंसिओ विवरीदं गंतूण दीहाउट्ठिदिएसु तिरिक्खेसुववण्णो । अंतोमुहुत्तेण सम्मत्तं पडिवण्णो । पुणो अणंताणुबंधिचउक्कं विसंजोइय संजुत्तो होदूण सव्वलहुं सम्मत्तं पडिवण्णो । तत्थ य भवट्ठिदिआउअमणुपालिदूण थोवावसेसे जीविदव्वए त्ति अणंताणुबंधिचउक्कं विसंजोइदुं आढत्तो । तत्थ चरिमे ट्ठिदिखंडए अवगदे एया ट्ठिदी दुसमयकालट्ठिदिया जस्स सेसा तस्स जहण्णयं संतकम्मं।

कषाय, भय और जुगुप्साका जघन्य प्रदेशसत्कम किसके होता है ? जो अन्यतर क्षपितकर्मांशिक जीव विपरीत जाकर नारकियोंमें उत्पन्न हुआ उसके उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें उक्त प्रकृतियोंका जघन्य प्रदेशसत्कर्म होता है। इसी प्रकार पुरुषवेद, हास्य, रति, अरति और शोकके जघन्य प्रदेशसत्कर्मका स्वामी जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि उत्पन्न होनेके अन्तर्मुहूर्त बाद प्रतिपक्ष प्रकृतियोंके बन्धक कालके अन्तिम समयमें इनका जघन्य प्रदेशसत्कर्म होता है। इसी प्रकार सातवीं पृथिवीमें जानना चाहिए। पहलीसे लेकर छठी पृथिवी तक इसी प्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और नपुंसकवेद का जघन्य स्वामित्व वहाँसे निकलनेके अन्तिम समयमें कहना चाहिए।

§ ४४९. तिर्यञ्चगतिमें तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्वकी जघन्य प्रदेशविभक्ति किसके होती है ? जो अन्यतर क्षपितकर्मांशिक जीव विपरीत जाकर तीन पल्यकी आयुवाले तिर्यञ्चोंमें उत्पन्न हुआ। अतिशीघ्र सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ। अन्तर्मुहूर्तके द्वारा अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना करके वहाँ पर तीन पल्यप्रमाण भवस्थितिका पालनकर वहाँसे निकलनेके अन्तिम समयमें उसके मिथ्यात्वका जघन्य प्रदेशसत्कर्म होता है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, बारह कषाय और सात नोकषायोंका भङ्ग नारकियोंके समान है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कका जघन्य प्रदेशसत्कर्म किसके होता है ? जो अन्यतर क्षपितकर्मांशिक जीव विपरीत जाकर दीर्घ आयु स्थिति वाले तिर्यञ्चोंमें उत्पन्न हुआ। अन्तर्मुहूर्तके द्वारा सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ। पुनः अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजनाकर और संयुक्त होकर अतिशीघ्र सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ। पुनः भवस्थिति काल तक आयुका पालन कर स्तोक जीवितव्यके शेष रहने पर अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजनाके लिए उद्यत हुआ। वहाँ अन्तिम स्थितिकाण्डकके व्यतीत हो जाने पर जिसके दो समय कालप्रमाण स्थितवाली एक स्थिति शेष है उसके अनन्तानुबन्धीचतुष्कका जघन्य प्रदेशसत्कर्म होता है। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका जघन्य प्रदेशसत्कर्म

इत्थि-णउंसयवेदाणं जह० पदे० कस्स ? जो खविदकम्मंसिओ खइयसम्मादिट्ठी विवरीयं गंतूण तिपलिदोवमिएसु तिरिक्खेसु उववज्जिदूण चरिमसमए णिप्पिदमाणो तस्स जहण्णयं संतकम्मं। एवं पंचिंदियतिरिक्खपज्ज०-पंचि०तिरिक्खजोणिणीणं। णवरि जोणिणीसु इंत्थि-णउंसयवेदाणं मिच्छत्तभंगो। पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज० मिच्छत्त-सोलसकसाय-भय-दुगुच्छाणं जह० पदे०वि० कस्स ? अण्ण० जो खविदकम्मंसिओ विवरीयं गंतूण पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तएसु उववण्णो तस्स पढमसमयउववण्णस्स जहण्णयं पदेससंतकम्मं। सत्तणोकसायाणमेवं चेव। णवरि अंतोमुहुत्तुववण्णल्लयस्स सगसगपडिवक्खबंधगद्धा-चरिमसमए वट्टमाणस्स। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं पंचिंदियतिरिक्खभंगो।

§ ४५०. मणुसाणमोघं। एवं चेव मणुसपज्जत्ताणं। णवरि इत्थिवे० चरिमट्ठिदिखंडयचरिमसमयसंकामगस्स। मणुसिणीसु मणुसोघं। णवरि णउंसयवेदस्स चरिमट्ठिदिखंडए चरिमसमयवट्टमाणस्स। पुरिसवेदस्स अधापवत्तकरणचरिमसमए वट्टमाणस्स। मणुसअपज्जत्ताणं पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तभंगो।

§ ४५१. देवगदीए देवेसु मिच्छ० जह० पदेस० कस्स ? जो खविदकम्मंसिओ चउवीससंतकम्मिओ दीहाउट्ठिदिएसु देवेसु उववज्जिदूण तत्थ भवट्ठिदिमणुपालेदूण चरिमसमयणिप्पिदमाणयस्स जहण्णयं संतकम्मं। सम्मत-सम्मामिच्छत्त-बारसक०-

---

किसके होता है ? जो क्षपितकर्मांशिक क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव विपरीत जाकर तीन पल्यकी आयुवाले तिर्यञ्चोंमें उत्पन्न होकर निकलनेके अन्तिम समयमें स्थित है उसके उक्त कर्मोंका जघन्य प्रदेशसत्कर्म होता है। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च पर्याप्त और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च योनिनी जीवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि योनिनी जीवोंमें स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य प्रदेशविभक्ति किसके होती है ? जो अन्यतर क्षपितकर्मांशिक जीव विपरीत जाकर पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुआ उसके उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें उक्त कर्मोंका जघन्य प्रदेशसत्कर्म होता है। सात नोकषायोंका जघन्य स्वामित्व इसी प्रकार है। इतनी विशेषता है कि उत्पन्न होनेके अन्तर्मुहूर्त बाद अपनी अपनी प्रतिपक्ष प्रकृतियोंके बन्धककालके अन्तिम समयमें होता है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है।

§ ४५०. मनुष्योंमें ओघके समान भङ्ग है। इसी प्रकार मनुष्य पर्याप्तकोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेदके जघन्य प्रदेशसत्कर्मका स्वामित्व अन्तिम स्थितिकाण्डकका संक्रमण होनेके अन्तिम समयमें होता है। मनुष्यिनियोंमें सामान्य मनुष्योंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि नपुंसकवेदका जघन्य स्वामित्व अन्तिम स्थितिकाण्डकके अन्तिम समयमें विद्यमान मनुष्यिनीके होता है। तथा पुरुषवेदका जघन्य स्वामित्व अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें विद्यमान मनुष्यिनीके होता है। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान भङ्ग है।

§ ४५१. देवगतिमें देवोंमें मिथ्यात्वका जघन्य प्रदेशसत्कर्म किसके होता है ? जो क्षपितकर्मांशिक चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाला जीव दीर्घ आयुस्थितिवाले देवोंमें उत्पन्न होकर तथा वहां भवस्थितिका पालनकर वहांसे निकलता है तब निकलनेके अन्तिम समयमें उसके मिथ्यात्वका

णवणोकसायाणं तिरिक्खोघं। अणंताणु०चउक्क० जह० पदे०वि० कस्स। जो खविद-कम्मंसिओ वेदयसम्मादिट्ठी अट्ठावीससंतकम्मिओ दीहाउट्ठिदिएसु देवेसु उववज्जिदूण तत्थ भवट्ठिदिमणुपालेदूण त्थोवावसेसे जीविदव्वए त्ति अणंताणुबंधि० विसंजोइदु-माढत्तो। तत्थ अपच्छिमे ट्ठिदिखंडए अवगदे जस्स आवलियपविट्ठं एयं ट्ठिदिदुसमय-कालट्ठिदियं सेसं तस्स जहण्णं संतकम्मं। भवण०-वाण०-जोदिसि० विदियपुढविभंगो। सोहम्मीसाणप्पहुडि जाव णवगेवेज्जा ति देवोघं। अणुदिसादि जाव सव्वट्ठ त्ति मिच्छत्त-सम्मत्त सम्मामि० ज० पदे० कस्स? जो खविदकम्मंसिओ चदुवीससंतकम्मिओ दीहाउ-ट्ठिदिएसु उववज्जिदूण तत्थ य दीहं भवट्ठिदिमणुपालेदूण चरिमसमयणिप्पिदमाणयस्स जहण्णयं संतकम्मं। अणंताणु०चउ०-इत्थि-णउंसयवेदाणं देवोघं। बारसक०-पुरिसवेद-भय-दुगुंछाणं ज० पदेसवि० कस्स? जो खविदकम्मंसिओ खइयसम्मादिट्ठी विवरीयं गंतूण अप्पप्पणो देवेसुववण्णो तस्स पढमसमयदेवस्स जहण्णयं संतकम्मं। हस्स-रदि-अरदि-सोगाणमेवं चेव। णवरि अंतोमुहुत्तुववण्णल्लयस्स। एवं णेदव्वं जाव अणा-हार त्ति।

एवं सामित्तं समत्तं।

जघन्य प्रदेशसत्कर्म होता है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य प्रदेशविभक्ति किसके होती है? जो क्षपितकर्मांशिक अट्ठाईस प्रकृतियोंका सत्कर्मवाला वेदकसम्यग्दृष्टि जीव दीर्घ आयुस्थितिवाले देवोंमें उत्पन्न होकर और वहां भवस्थितिका पालन कर स्तोक जीवितव्यके शेष रहने पर अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना करनेके लिए उद्यत हुआ। वहां अन्तिम स्थितिकाण्डकके अपगत होने पर जिसका आवलि प्रविष्ट कर्म दो समय स्थितिवाला एक स्थितिमात्र शेष रहा उसके अनन्तानुबन्धीचतुष्कका जघन्य प्रदेशसत्कर्म होता है। भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें दूसरी पृथ्वीके समान भङ्ग है। सौधर्म और ऐशान कल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें सामान्य देवोंके समान भङ्ग है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका जघन्य प्रदेशसत्कर्म किसके होता है? जो चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाला क्षपितकर्मांशिक जीव दीर्घ आयु स्थितिवाले देवोंमें उत्पन्न होकर और वहां पर दीर्घ भवस्थितिका पालन कर वहां से निकलनेवाला है उसके वहांसे निकलनेके अन्तिम समयमें उक्त कर्मोंका जघन्य प्रदेशसत्कर्म होता है। अनन्तानुबन्धीचतुष्क, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी जघन्य प्रदेशविभक्ति किसके होती है? जो क्षायिक सम्यग्दृष्टि क्षपितकर्मांशिक जीव विपरीत जाकर अपने अपने देवोंमें उत्पन्न हुआ उस देवके उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें उक्त कर्मोंका जघन्य प्रदेशसत्कर्म होता है। हास्य, रति, अरति, और शोकके जघन्य प्रदेशसत्कर्म का स्वामित्व इसी प्रकार है। इतनी विशेषता है कि उत्पन्न होनेके बाद अन्तर्मुहूर्त होने पर इनके जघन्य प्रदेशसत्कर्मका स्वामी कहना चाहिए। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

इस प्रकार स्वामित्व समाप्त हुआ।